भूगोल
वार्षिक मूल्य ३)
विदेश में ५)
एक प्रति का ।-)
फरवरी १९३९
भूगोल-कार्यालय प्रयाग

"भूगोल"-कार्यालय

संक्षिप्त परिचय

१९२४ के मई महीने में "भूगोल" मासिक पत्र स्थापित किया गया। गत १५ वर्षों में इस पत्र ने जो भूगोल सम्बन्धी साहित्य तैयार किया है उसका पता गत १५ वर्षों की फाइलों और साथ में दिये हुए सूची-पत्र से लग सकता है। पर सच्चा भूगोल-साहित्य घर बैठे कल्पनामात्र या केवल विदेशी पुस्तकों के आधार पर नहीं लिखा जा सकता। इसके लिये भ्रमण की आवश्यकता है। इसी लिये "भूगोल" के यात्रा-विभाग की ओर से समस्त भारतवर्ष, लंका, बरमा, ईरान, इराक़, सिरिया, पैलेस्टाइन, मिस्र, यूनान, टर्की, बल्गेरिया, यूगोस्लेविया, हङ्गारी, आस्ट्रिया, चेकोस्लोवेकिया, जर्मनी, डेन्मार्क, बेल्जियम, फ्रांस, इंगलैंड, स्काटलैंड, आयरलैंड, नार्वे, स्वेडन, फिनलैंड और रूस की यात्रा की गई।

हमारा विश्वास है कि देश की आज़ादी प्राप्त करने और कायम रखने के लिये अपने देशवासियों को संसार के प्रत्येक भाग का ठीक ठीक ज्ञान रखना आवश्यक है। भावी स्वाधीन भारत के राजदूत जब दूसरे देशों में जायेंगे तो उन देशों का पूरा ज्ञान होना चाहिये। इसी लक्ष्य को सामने रखकर आपका "भूगोल" कार्यालय, भूगोलसम्बन्धी दुर्लभ, पुस्तकों और नक़शों का संग्रह करता रहा है।

आपका कर्तव्य—हम चाहते हैं कि यह काम अधिक संगठित ढंग से और अधिक तेज़ी से हो। इसलिये आप से प्रार्थना है कि आप इस राष्ट्रीय काम में हमारा हाथ बटावें।

आप स्वयं और अपने मित्रों को "भूगोल" का ग्राहक बनाकर हमारी सहायता कर सकते हैं। जितने अधिक ग्राहक होंगे उतनी ही आसानी से हम यात्राक्रम और पुस्तक संग्रह को बढ़ा सकते हैं।

जिस तरह विदेशी वस्त्र को रोकने के लिये खादी का प्रचार आवश्यक है उसी तरह हर साल लाखों रुपयों की बाहर से आने वाली भौगोलिक पुस्तकों को रोकने के लिये आवश्यक है कि हिन्दी में उनकी बराबरी करने वाली और उनसे बढ़कर पुस्तकें तैयार हों। अभी तक हिन्दी में लगभग २० पुस्तकें तैयार हैं। आप उनकी बिक्री बढ़ाकर दूसरी पुस्तकों की रचना में सहायक हो सकते हैं।

भावी कार्य-क्रम—देहाती जनता और विद्यार्थियों के लिये हमने देश-दर्शन नाम की पुस्तक-माला का आयोजन किया है। इसमें २०० पुस्तकें होंगी। एक देश पर एक पुस्तक हर महीने प्रकाशित होगी। पुस्तक चित्रों और नक़शों से खूब सुसज्जित होगी। निजी यात्रा के आधार पर रोचक ढंग से सरल भाषा में लिखी जायगी। काग़ज़ कवर, छपाई सफ़ाई में हिन्दी में एक अनूठी चीज़ होगी। फिर भी डेढ़ सौ पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य लागत मात्र ।=) होगा। साल भर का ४) और पूरी ग्रन्थमाला का केवल ४०) होगा। इस सम्बन्ध में मध्यप्रान्त के भूतपूर्व शिक्षा-मन्त्री और वर्तमान प्रधान मन्त्री पं० रविशङ्कर शुक्ल जी की सम्मति पढ़िये और देश-दर्शन के ग्राहक बनकर हिन्दी में एक नये साहित्य को लाने में श्रेय लीजिये। आशा है आप लौटती डाक से ही अपना आर्डर भेजने की कृपा करेंगे।

निवेदक—रामनारायण मिश्र

विषय-सूची

विषय		पृष्ठ
१—विदेश यात्रा के कुछ चित्र— (ले० निरंजनलाल जी शर्मा)	...	१
२—बड़ी लड़ाई का क़र्ज़	...	१०
३—पवित्र पर्वत एथास	...	११
४—कनाडा में फसल की कटाई-मड़ाई	...	१२
५—घर (कहानी)	...	१३
६—बोलीविया की तंगदस्ती	...	१९
७—आस्ट्रिया ले लेने से	...	२१
८—नेपोलियन का जन्म-भूमि	...	२२
९—नाविक नगर	...	२३
१०—माल्टा की नावें	...	२४

भूगोल

यह पत्र संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, बरार, बिहार, उड़ीसा, पंजाब प्रान्त तथा ग्वालियर, जैपुर, जोधपुर और कोटा राज्य के शिक्षा-विभाग द्वारा हाई, नार्मल और मिडिल स्कूलों में प्रयोग होने के लिये स्वीकृत है

वर्ष १५] फाल्गुन सं० १९९५, फरवरी १९३९

विदेश यात्रा के कुछ चित्र

(लेखक—श्री निरंजनलाल शर्मा)

गत नवम्बर मास के 'भूगोल' में लेखक ने योरुप के देशों के कुछ चित्र दिये थे परन्तु लेखक का अधिक समय इङ्गलैंड में ही व्यतीत हुआ था और उस देश में भी उसको लिवरपूल नगर में ही अधिक रहना पड़ा था। भारतीय विद्यार्थी अधिकतः लन्दन को ही अध्ययन के लिये पसंद करते हैं और कहावत भी है कि भारतवर्ष के विद्यार्थियों के लिये लन्दन ही मक्का है। सुना जाता है कि आजकल इस शहर में इन विद्यार्थियों के साथ उतना अच्छा व्यवहार नहीं होता जितना कुछ वर्ष पहले होता था। इस दृष्टि से इङ्गलैंड के अन्य शहरों के भारतीय विद्यार्थी भाग्यवान समझे जाते हैं। कारण इसका यह प्रतीत होता है कि लन्दन में चूंकि हिन्दुस्तानी विद्यार्थियों की संख्या सदा बहुत अधिक रहती है उनमें से कुछ विद्यार्थी अपने आचरणों से यदि किन्हीं सज्जनों को असंतुष्ट करदें तो वे लोग इससे सब भारतीयों के लिये बुरे विचार रखने लगते हैं। भारत की सभ्यता, उसकी राजनैतिक अवस्था उसके धार्मिक जीवन इत्यादि के विषय में इङ्गलैंड के वासियों को बहुत कम ज्ञान है और जो कुछ भी है वह ईसाई धर्म प्रचारकों की पुस्तकों के आधार पर है और प्रायः इन पुस्तकों में केवल हमारी बुराइयों का ही दिग्दर्शन कराया जाता है। इङ्गलैंड के दो एक समाचार पत्र के अतिरिक्त कोई भी समाचार पत्र भारत की खबर नहीं देता है और देता भी है तो बहुत अधूरी। उदाहरणतः फैजपुर कांग्रेस के अवसर पर वहां के पत्रों में महात्मा गांधीजी के व्याख्यान में से केवल एक वाक्य छपा था कि गांधी जी ने कहा कि 'यदि कोई हमको स्वराज्य का रास्ता बता दे तो मैं और जवाहरलाल नेहरू स्वराज्य के लिये फांसी पर जाने के लिये तयार हूँ' बताइये, इस वाक्य का जनता क्या अर्थ कर सकती है। मेरे विचारों में तो इस से यही मालूम होगा कि भारत के नेता अंधेरे में हैं और वे किस प्रकार स्वराज्य लें यह नहीं सोच सकते। कई सज्जनों ने मुझसे कहा कि भारत को अफ्रीका, आस्ट्रेलिया इत्यादि देशों की तरह अब स्वराज्य मिल गया है कारण कि अब तो उस देश में बहुत कम संख्या अंग्रेज अफसरों की है। एक ने कहा कि यदि ब्रिटिश इण्डिया को स्वराज्य मिल जायेगा तो सुना है देशी नरेशों के पास बड़ी भारी फौजें हैं वे उनकी मदद से ब्रिटिश इण्डिया

पर धावा बोल देंगे और उसको जीत लेंगे। एक ने कहा कि सन् १९०१ के करीब मैं भारतीय फौज में नौकर था और तब अक्सर पंजाब, यू० पी० के गावों में शाम को चला जाया करता था और गांव वालों से बातें किया करता था। गांव वाले बड़े सीधे सादे और भले आदमी थे और मुझ से बड़े प्रेम से व्यवहार करते थे। परन्तु अब सुनता हूँ कि फौज का कोई अंग्रेज इस प्रकार अकेला नहीं जा सकता क्योंकि शायद गांव वाले आजकल उसको मार डालेंगे। एक और सज्जन मुझसे कहने लगे कि क्या हिन्दुओं में ऊँच जातियों में नहाने का तरीका कोई खास होता है। कारण कि एक हिन्दू हमारे यहां आये थे, वे स्नानागार के फर्श को पानी से भिगो देते थे। उन भारतीय सज्जन के सिर पर पानी डालने को असावधानी से इन महाशय ने हिन्दुओं के नहाने के तरीके पर ही एक अपना विचार बना लिया। इस उदाहरण से प्रतीत होता है कि जो भारतीय विद्यार्थी विदेश जावें उनको क़दम क़दम पर अपने साधारण आचरणों का ध्यान रखना चाहिये। छोटी छोटी बातें भी अपना असर बना देती है। यदि वे सदा यह ध्यान रक्खें कि वे एक अति उच्च सभ्यता और महान देश के नागरिक हैं और उस देश का सच्चा ज्ञान विदेशियों में कराना उनका कर्तव्य है तो वे सदा अपने आचरण ऐसे ही रक्खेंगे जिनसे हमारे देश का नाम होगा न कि किसी प्रकार का उस पर कलंक लगे। अस्तु।

इस लेख में प्रायः लिवरपूल नगर के ही चित्र दिये गये हैं और चित्रों के वृत्तान्त उन्हीं नम्बर वाले पैरेग्राफ में दे दिये हैं :—

(१) लिवरपूल शहर में 'सालवेशन आर्मी' (Salvation Army) का होटल है। इङ्गलैंड में अधिकतः विद्यार्थी अंग्रेजी परिवारों में अतिथि बन कर रहते हैं क्योंकि इस प्रकार रहने से कुछ कम खर्चा होता है, परन्तु मैंने इस छोटे से होटल में ही अपना वर्ष बिताया। कारण कि एक तो यह होटल युनिवर्सिटी के पास है और दूसरे यहां के मैनेजर, उनकी धर्मपत्नी और अन्य कार्यकर्ता बड़े भले सज्जन थे। 'सालवेशन आर्मी' के अफसर भारत में प्रायः मद्रास, ट्रावनकोर इत्यादि स्थानों पर दलित जातियों में अपने धर्म का प्रचार करते हैं। इँगलैंड में इस संस्था का बड़ा आदर है। कारण कि वहां पर भी इस के प्रचारक गरीब मोहल्लों में कार्य करते हैं और उन मोहल्लों के लोगों में शराब छोड़ने, जुआ न खेलने तथा स्वच्छता से रहने का उपदेश सदा करते रहते हैं। यहां भी जब इस आर्मी की जनरल (मिस बूथ) सन् १९३६ में आई थीं तो वे कई प्रान्तों
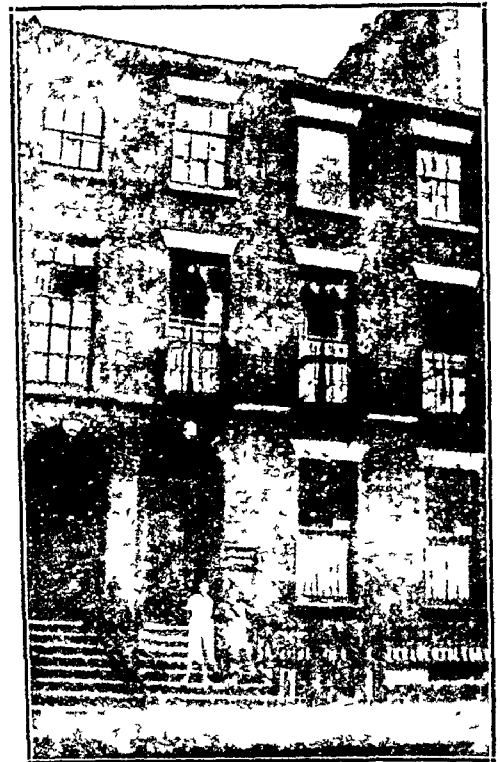
चित्र न० १

के गवर्नर की महमान रही थीं। विलायत लौटकर उन्होंने भारतीय गावों की सफाई और गांव वालों के प्रेम की बड़ी प्रशन्सा की थी और दक्षिण भारत में कोढ़ियो के लिये अस्पताल बनाने के लिये अंग्रेजी जनता से दान देने को अपील निकाली थी। 'सालवेशन आर्मी' के मेम्बर बड़े धार्मिक विचारों के होते है। सिनेमा वे प्रायः नहीं देखते कारण कि फिल्में प्रायः झूठ और कुछ अश्लील होती है। यदि धार्मिक फिलम कोई हुई तो देख भी लेते है। शराब वे बिलकुल नहीं पीते। बहुत से भारतीय विद्यार्थी यहां आकर

कहा करते हैं कि इंगलैंड में शराब और गोश्त खाये बिना काम नहीं चल सकता यदि कोई न खाये तो उसका स्वास्थ खराब हो जाने का डर है। उनको शराब के बारे में इस आर्मी के अफसरों से सबक लेना चाहिये। शाकाहारी संस्थाएँ (Vegetarian Societies) भी अब इंगलैंड के प्रत्येक शहर में मौजूद हैं और लन्दन की संस्था ने एक पुस्तक प्रकाशित की है जिसमें इंगलैंड तथा योरुप के अन्य देशों के शाकाहारी होटलों की सूची दी है। पाठकों को यह जानकर अचरज होगा कि इंगलैंड के पक्के शाकाहारी दूध और मक्खन का भी भोजन में प्रयोग नहीं करते। वे कहते हैं कि ये चीजें भी जानवरों से उत्पन्न होती हैं और दूध पीना गाय के बच्चे को भूखा रखना है। मक्खन की जगह वे बादाम या मूंगफली से बना नकली मक्खन इस्तैमाल करते हैं। मुझे दो एक सज्जन ऐसे मिले जो गत ४० वर्षों से इस प्रकार के शाकाहारी हैं।

चित्र नं० २

(२) लिवरपूल युनिवर्सिटी की मुख्य इमारत—इस इमारत में आर्ट्स कोर्स के विषय पढ़ाये जाते हैं और इसी में सीनेट हाल और युनिवर्सिटी का मुख्य पुस्तकालय है। पुस्तकालय में एक लाख से अधिक पुस्तकें हैं। इस इमारत के पीछे साइन्स व इन्जीनियरिंग की प्रयोगशालाएँ हैं और पास ही डाक्टरी संस्थाएँ हैं। लिवरपूल का 'स्कूल आफ् ट्रापीकल मैडीसन' बहुत प्रसिद्ध है। युनिवर्सिटी की इमारत के पास ही विद्यार्थियों की यूनियन (Union) का विशाल भवन है जिसमें उनका वाचनालय, घरेलू (in door) खेलों के कमरे, नाचघर और नाश्ता व दोपहर के भोजन करने के लिये कमरे हैं। इन सब का प्रबन्ध स्वयं विद्यार्थी ही करते हैं। इस संस्था के द्वारा विद्यार्थियों में सामूहिक जीवन व्यतीत करने का ज्ञान हो जाता है। हमारे स्कूल व कालिजों में इस प्रकार के जीवन की कमी है। अखिल भारतवर्षीय संस्थाओं में यह देखा जाता है कि विद्यार्थीगण प्रायः प्रान्तीय दृष्टि से अपना गुट्ट बनाकर संस्थाएँ चलाते हैं। ऐसी संस्थाओं में रसोईघरों की तो संख्या ही नहीं। क्या यह सम्भव नहीं कि भारत के प्रत्येक स्कूल और कालिज में केवल दो बड़े भोजनालय हों—एक शाकाहारी और दूसरा मांसाहारी? यह बात अभी तो केवल स्वप्न ही मालूम पड़ती है। लिवरपूल में यूनियन के विद्यार्थी गत कई वर्षों से प्रतिवर्ष जब वे अपना वार्षिक दिन मनाते हैं तो चार पाँच रात को कोई ड्रामा या खेल करते हैं जिनमें जनता के लिये टिकट रखते हैं। इस सप्ताह में उनको जितनी आमदनी होती है उसे वे स्थानीय अस्पतालों को दान देते हैं। सन् १९२३ में इस प्रकार उन्होंने ६० हजार रुपये से अधिक एकत्रित करके लिवरपूल के ३० या ३२ अस्पतालों में रुपया बांटा था। भारतीय विश्वविद्यालय में इस प्रकार का सार्वजनिक कार्य बहुत कम किया जाता है। विद्या के प्रचार का प्रयत्न जो आजकल कुछ कांग्रेस सरकारें कर रही हैं उसके लिये इस प्रकार से धन एकत्रित करके भारतीय विश्वविद्यालय बहुत कुछ गवर्नमेन्ट को सहायता दे सकते हैं।
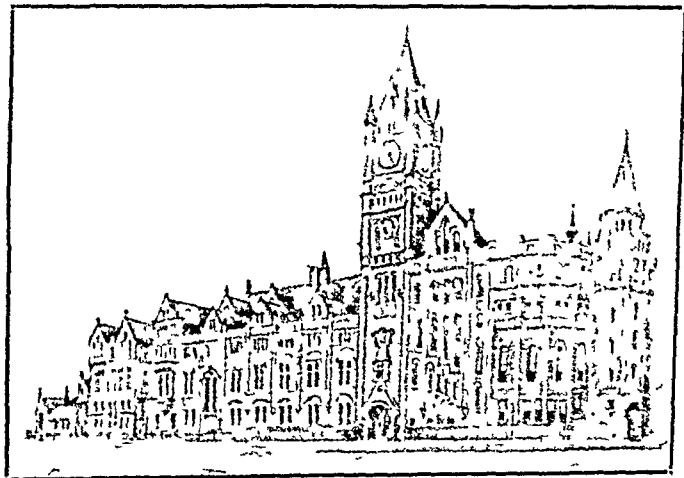
(३) लिवरपूल का म्यूजियम, कला-भवन तथा पुस्तकालय—इङ्गलैंड में प्रायः प्रत्येक नगर में ये संस्थाएँ पाई जाती हैं। हमारे देश में केवल बड़े बड़े

नगरों में ही म्यूजियम हैं। विदेशों में यह सब सँस्थाएँ प्रायः रात तक खुली रहती हैं जिससे शाम को दफ़्तर व स्कूल इत्यादि बन्द होने के पश्चात भी लोग वहां जा सकें। रविवार को ये सँस्थाएँ खास तौर से खुली रहती हैं जिससे छुट्टी के दिन लोगों को आने का सुभीता रहे। इङ्गलैंड के अनेक नगरों में नालय के हाल का व्यास १०० फीट है और यह हाल ६० फीट ऊँचा है। इस पुस्तकालय की १५ शाखाएँ शहर के भिन्न भिन्न स्थानों में है। इन शाखाओं में शहर के तिजारती मोहल्ले में एक तिजारती बातें जानने की लाइब्रेरी (Commercial reference library) है जो ब्रिटिश राज्य में सब
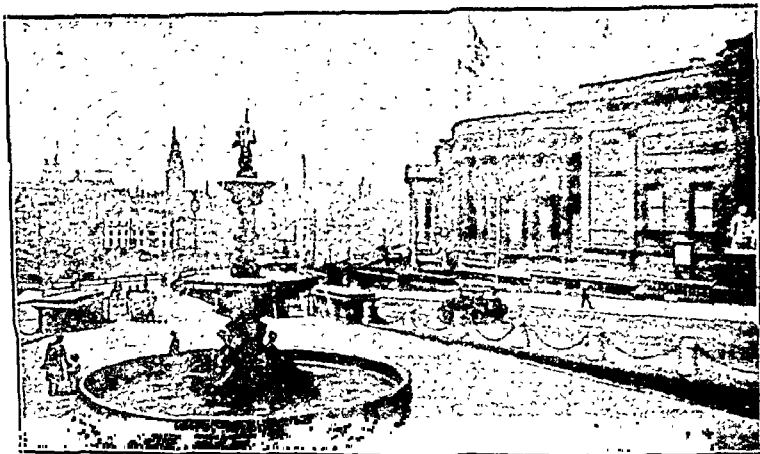
चित्र नं० ३
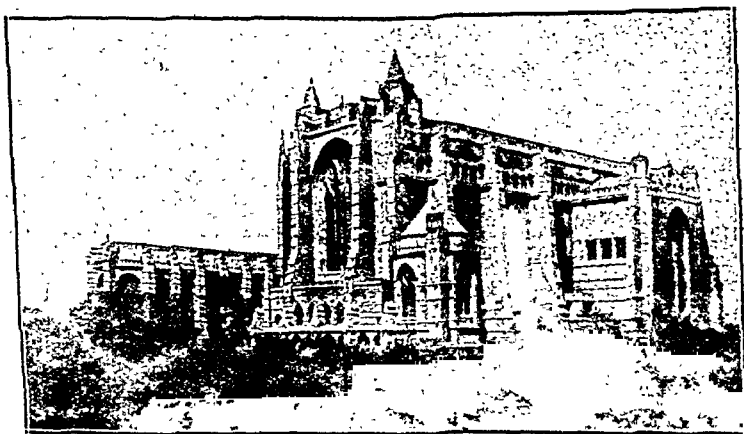
चित्र नं० ४

रविवार को सिनेमा घर बन्द रहते हैं और बाजार में दुकानें भी (भोजन सामग्री और दवाओं की दुकानों को छोड़ कर) बन्द रहती हैं। रविवार को स्कूलों से अनेक लड़के और लड़कियां उपरोक्त संस्थाओं का उपयोग करते हैं। लिवरपूल का मुख्य पुस्तकालय एक बड़े विशाल भवन में है इसमें वाच-से अच्छी बताई जाती है। भारतीय लेखकों की भी बहुत सी पुस्तकें इस पुस्तकालय में है। श्री जवाहरलालजी व श्री सुभाषचन्द्रजी की लिखी हुई पुस्तकों की भी प्रतियाँ यहाँ देखीं।

(४) लिवरपूल का विशाल गिरजाघर—यह गिरजाघर सन् १९०५ से बनाया जा रहा है और

कदाचित इस के पूरा होने में अभी २० वर्ष लगेंगे। यह गिरजाघर शहर में एक ऊँची भूमि पर बन रहा है और बहुत दूर से दिखाई देता है। बीच की मीनार जब तयार हो जायेगी तब वह ३०८ फीट ऊँची होगी और वह समुद्र से आने वाले यात्रियों को कई मीलों से दिखाई देने लगा करेगी। इस गिरजाघर के बनाने

चित्र नं० ५

चित्र नं० ६

वालों का विचार है कि उनके देश में खेल तमाशों के स्थान तो बड़े बड़े अनेक हैं और हो जायँगे परन्तु इस गिरजाघर से धार्मिक स्थान भी एक अद्वितीय उस देश में हो जायगा जिसमें एक समय में २० हजार से अधिक सज्जन प्रार्थना कर सकेंगे।

(५) लिवरपूल की 'मर्सी' नदी और उसके किनारे की विशाल इमारत—लिवरपूल ब्रिटिश राज्य में दूसरा शहर गिना जाता था। परन्तु अब आबादी के अनुसार कलकत्ता ही का स्थान दूसरा है। तब भी लन्दन के बाद बन्दरगाहों में लिवरपूल का स्थान ब्रिटिश राज्य में द्वितीय है। इसको 'जहाजों का शहर' भी कहते हैं। मर्सी नदी के किनारे सात मील तक एक ओवरलैण्ड इलेक्ट्रिक रेलवे (Overland Electric Railway) चली गई है जिसमें यात्रा करने से यहां के जहाजों का अच्छा दृश्य दिखाई दे जाता है। मर्सी नदी से जहाज आइरिश समुद्र में होकर संसार के अनेक देशों को माल ले जाते हैं। इस नदी के किनारे रायल लिवर (Royal Liver)

नामक विशाल इमारत बहुत प्रसिद्ध है। यह इमारत १७ या १८ मंजिल की है और ३६० फीट ऊँची है। इस इमारत का वजन ८० हजार टन है और इसमें २५ मील लम्बाई के बिजली के तार रोशनी के लिये और ५० मील लम्बाई के नल गर्मी पहुँचाने के लिये व्यय हुये हैं। इस इमारत के ऊपर लिवर चिड़िया का चित्र बना हुआ है। दन्त कथा है कि लिवर चिड़िया एक मनहूस चिड़िया समझी जाती है। और एक चिड़िया इस स्थान के पास तालाब में रहती थी। लोगों ने जब उसे मार दिया तब से ही इस नगर की उन्नति दिन पर दिन होने लगी और इस नगर का नाम लिवरपूल (Liverpool) पड़ गया।

(६) मर्सीनदी के नीचे की सुरङ्ग (tunnel) के अन्दर का दृश्य—यह सुरङ्ग इंजीनियरिंग का एक उच्च नमूना है। मर्सीनदी के उस पार कई शहर हैं और वहाँ से उत्तरीय वेल्स (wales) को जाने का सीधा रास्ता है। इस कारण इस नदी पर हर समय आर पार जाने वालों की भीड़ रहती है और सामान भी जहाजों द्वारा जाता रहता है। इसी कारण प्रायः प्रति दस मिनट बाद दूसरे किनारे के शहरों के लिये जहाज आते जाते रहते हैं। इसके अतिरिक्त नदी के नीचे होकर दूसरे किनारे को रेल भी गई है। फिर भी आमदरफ़ इतनी है कि उसका प्रश्न हल करने के लिये शहर में से नदी के नीचे होकर एक सुरङ्ग बनाई गई है जो नदी के दूसरी पार जाकर निकलती है। यह सुरङ्ग पहले बहुत ढलवाँ गई है फिर नदी के नीचे पहुँच कर करीब १७०० फीट तक समतल है और फिर ढलवाँ होकर ऊपर चली गई है। इस सुरंग को बनाने में करीब ८ करोड़ रुपया लगा है। नदी के नीचे सुरङ्ग का व्यास ४४ फीट है और उसकी दीवारों पर उस स्थान पर ७५ हजार टन लोहे की चादरें जड़ी गई हैं। इस वक्त इस सुरङ्ग में होकर प्राइवेट कार और सामान की लारी ही को जाने की इजाजत है। अभी इस सुरङ्ग का ऊपरी आधा हिस्सा ही खोला गया है नीचे का बंद है। आवश्यकता पड़ने पर नीचे का भी हिस्सा खुल जावेगा उस समय आमदरफ़ (Traffic) दुगनी हो जायगी। सुरङ्ग में चार सड़कें हैं, दो जाने के लिये और दो आने के लिये।

(७) मर्सीनदी के उस पार 'सनलाइट' साबुन के कारखाने के दफ़्तर का एक भाग—लीवर ब्रदर्स लि० का 'सनलाइट' साबुन का मशहूर कारखाना लिवरपूल के पास ही है और संसार के साबुन के कारखानों मे अद्वितीय है। इस कारखाने के कार्यकर्त्ताओं के रहने के लिये कम्पनी की तरफ से एक आदर्श नगर बसा हुआ है जिसका नाम ही

चित्र नं० ७

'पोर्ट सनलाइट' है। सन् १८८५ में मिस्टर लीवर ने साबुन का एक छोटा सा कारखाना खोला था जिसमें २० टन साबुन प्रति सप्ताह निकला था और आज वह इतना विशाल हो गया है कि यहाँ से ४००० टन साबुन प्रति सप्ताह निकाला जाता है। इस कारखाने में आजकल करीब ११ हजार पुरुष और स्त्रियाँ कार्य करते हैं और २ हजार के करीब तो केवल क्लर्क ही हैं। इस दृश्य में एक विशाल 'हाल' में क्लर्क अपना अपना कार्य कर रहे हैं।

(८) 'सनलाइट साबुन' के कारखाने का दूसरा दृश्य—इस कारखाने में साबुन बनाने का

पदार्थ कढ़ाइयों में औटाये जाते हैं। प्रत्येक कढ़ाई को एक छोटे कमरे के आकार के समान समझिये और उसमें ६० टन साबुन का मसाला आता है। इन कढ़ाइयों में से द्रव साबुन वहकर एक ठंडे कमरे में बक्सों में जमा हो जाता है और जमने पर उससे साबुन की टिकियाँ बनाई जाती हैं। साबुन का कढ़ाई से आना, उसका जमना तथा उसकी बड़ी बड़ी सिल्लियों से काट काट कर टिकियाँ बनना ये सब क्रियाएँ मशीन द्वारा ही होती हैं। मशीनों से ही उस प्रत्येक कार्यकर्त्ता को हर समय सावधानी से अपने हिस्से का कार्य करना पड़ता है। कम्पनी ने कार्यकर्त्ताओं के लिये सिनेमा घर तथा खेल कूद के स्थान अनेक बनाये हैं। परन्तु ६ या ७ घंटा इस कारखाने में मशीन की तरह काम करने के पश्चात् कार्यकर्त्ताओं में काफ़ी थकान आ जाती होगी और केवल रविवार की छुट्टियों में ही वे उन स्थानों का उपयोग करते होंगे। आधुनिक मशीन युग की उन्नति यदि देखना हो तो यह कारखाना एक नमूना है। कारखाने

चित्र नं० ८
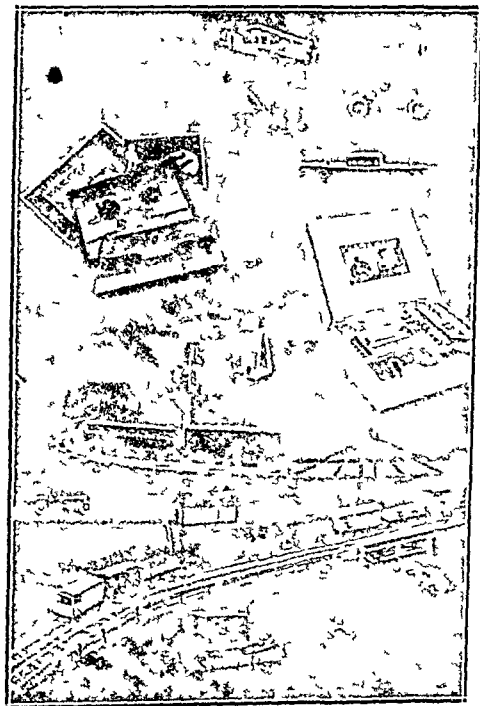
चित्र नं० ९

पर मोहर लग जाती है और मशीनों से ही काग़ज़ में लिपट कर वे टिकियाँ बक्सों में बन्द हो जाती हैं, पुरुष और स्त्री कार्यकर्त्ता स्वयं एक प्रकार से मशीन का हिस्सा बन जाते हैं और प्रत्येक ग्रूप (टोली) को केवल एक ही प्रकार का कार्य हर घड़ी मशीन के साथ करना पड़ता है। साबुन को काटा छांट करने वाली मशीनें और उन पर मोहर देने वाली प्रत्येक मशीनें एक घंटे में १० हज़ार टिकिया निकाल सकती हैं। इस चित्र में ऐसी मशीनों के स्थान का एक दृश्य है। में निजी प्रेम भी है। संसार के प्रत्येक देश में यहाँ से साबुन जाता है। भारतवर्ष में तो कलकत्ता में इस कारखाने की एक शाखा खुले बहुत वर्ष हो गये और पाठकों ने देखा होगा कि 'सनलाइट साबुन' पर Made in India लिखा हुआ रहता है। उसका यही कारण है। भारत में असली स्वदेशी साबुन के बड़े कारखानों की तो अभी बहुत कमी है।

(९) लिवरपूल के 'मैकैनो' नामक कारखाने

नामक विशाल इमारत वहुत प्रसिद्ध है। यह इमारत १७ या १८ मंजिल की है और ३६० फ़ीट ऊँची है। इस इमारत का वजन ८० हजार टन है और इसमें २५ मील लम्बाई के विजली के तार रोशनी के लिये और ५० मील लम्बाई के नल गर्मी पहुँचाने के लिये व्यय हुये हैं। इस इमारत के ऊपर लिवर चिड़िया का चित्र वना हुआ है। दन्त कथा है कि लिवर चिड़िया एक मनहूस चिड़िया समझी जाती है। और एक चिड़िया इस स्थान के पास तालाव में रहती थी। लोगों ने जब उसे मार दिया तव से ही इस नगर की उन्नति दिन पर दिन होने लगी और इस नगर का नाम लिवरपूल (Liverpool) पड़ गया।

(६) मर्सीनदी के नीचे की सुरङ्ग (tunnel) के अन्दर का दृश्य—यह सुरङ्ग इंजीनियरिंग का एक उच्च नमूना है। मर्सीनदी के उस पार कई शहर हैं और वहाँ से उत्तरीय वेल्स (wales) को जाने का सीधा रास्ता है। इस कारण इस नदी पर हर समय आर पार जाने वालों की भीड़ रहती है और सामान भी जहाजों द्वारा जाता रहता है। इसी कारण प्रायः प्रति दस मिनट वाद दूसरे किनारे के शहरों के लिये जहाज़ आते जाते रहते हैं। इसके अतिरिक्त नदी के नीचे होकर दूसरे किनारे को रेल भी गई है। फिर भी आमदरफ़ इतनी है कि उसका प्रश्न हल करने के लिये शहर में से नदी के नीचे होकर एक सुरङ्ग वनाई गई है जो नदी के दूसरी पार जाकर निकलती है। यह सुरङ्ग पहले वहुत ढलवाँ गई है फिर नदी के नीचे पहुँच कर करीव १७०० फीट तक समतल है और फिर ढलवाँ होकर ऊपर चली गई है। इस सुरंग को वनाने में करीव ८ क़रोड़ रुपया लगा है। नदी के नीचे सुरङ्ग का व्यास ४४ फीट है और उसकी दीवारों पर उस स्थान पर ७५ हजार टन लोहे की चादरें जड़ी गई हैं। इस वक्त इस सुरङ्ग में होकर प्राइवेट कार और सामान की लारी ही को जाने की इजाज़त है। अभी इस सुरङ्ग का ऊपरी आधा हिस्सा ही खोला गया है नीचे का वंद है। आवश्यकता पड़ने पर नीचे का भी हिस्सा खुल जायेगा उस समय आमदरफ़ (Traffic) दुगनी हो जायगी। सुरङ्ग में चार सड़कें हैं, दो जाने के लिये और दो आने के लिये।

(७) मर्सीनदी के उस पार 'सनलाइट' सावुन के कारखाने के दफ़्तर का एक भाग—लेवर ब्रादर्स लि० का 'सनलाइट' सावुन का मशहूर कारखाना लिवरपूल के पास ही है और संसार के सावुन के कारखानों में अद्वितीय है। इस कारखाने के कार्यकर्त्ताओं के रहने के लिये कम्पनी की तरफ़ से एक आदर्श नगर वसा हुआ है जिसका नाम ही

चित्र नं० ७

'पोर्ट सनलाइट' है। सन् १८८५ में मिस्टर लेवर ने सावुन का एक छोटा सा कारखाना खोला था जिसमें २० टन सावुन प्रति सप्ताह निकला था और आज वह इतना विशाल हो गया है कि यहाँ पर ४००० टन सावुन प्रति सप्ताह निकाला जाता है। इस कारखाने में आजकल क़रीव ११ हज़ार पुरुष और स्त्रियाँ कार्य करते हैं और २ हजार के करीब तो केवल क्लर्क ही हैं। इस दृश्य में एक विशाल 'हाल' में क्लर्क अपना अपना कार्य कर रहे हैं।

(८) 'सनलाइट सावुन' के कारखाने का दूसरा दृश्य—इस कारखाने में सावुन वनाने वाले

पदार्थ कढ़ाइयों में औटाये जाते है। प्रत्येक कढ़ाई को एक छोटे कमरे के आकार के समान समझिये और उसमें ६० टन साबुन का मसाला आता है। इन कढ़ाइयों में से द्रव साबुन बहकर एक ठंडे कमरे में बक्सों में जमा हो जाता है और जमने पर उससे साबुन की टिकियाँ बनाई जाती हैं। साबुन का कढ़ाई से आना, उसका जमना तथा उसकी बड़ी बड़ी सिल्लियों से काट काट कर टिकियाँ बनना ये सब क्रियाएँ मशीन द्वारा ही होती है। मशीनों से ही उस

चित्र नं० ८

पर मोहर लग जाती है और मशीनों से ही काग़ज में लिपट कर वे टिकियाँ बक्सों में बन्द हो जाती हैं, पुरुष और स्त्री कार्यकर्त्ता स्वयं एक प्रकार से मशीन का हिस्सा बन जाते है और प्रत्येक ग्रूप (टोली) को केवल एक ही प्रकार का कार्य हर घड़ी मशीन के साथ करना पड़ता है। साबुन को काटा छांट करने वाली मशीनें और उन पर मोहर देने वाली प्रत्येक मशीनें एक घंटे में १० हज़ार टिकिया निकाल सकती हैं। इस चित्र में ऐसी मशीनों के स्थान का एक दृश्य है।

प्रत्येक कार्यकर्त्ता को हर समय सावधानी से अपने हिस्से का कार्य करना पड़ता है। कम्पनी ने कार्यकर्त्ताओं के लिये सिनेमा घर तथा खेल कूद के स्थान अनेक बनाये है। परन्तु ६ या ७ घंटा इस कारखाने में मशीन की तरह काम करने के पश्चात् कार्यकर्त्ताओं मे काफ़ी थकान आ जाती होगी और केवल रविवार की छुट्टियों में ही वे उन स्थानों का उपयोग करते होंगे। आधुनिक मशीन युग की उन्नति यदि देखना हो तो यह कारखाना एक नमूना है। कारखाने

चित्र नं० ९

में निजी प्रेम भी है। संसार के प्रत्येक देश में यहाँ से साबुन जाता है। भारतवर्ष मे तो कलकत्ता में इस कारखाने की एक शाखा खुले बहुत वर्ष हो गये और पाठकों ने देखा होगा कि 'सनलाइट साबुन' पर Made in India लिखा हुआ रहता है। उसका यही कारण है। भारत मे असली स्वदेशी साबुन के बड़े कारखानों की तो अभी बहुत कमी है।

(९) लिवरपूल के 'मैकैनो' नामक कारखाने

के मशहूर खिलौने—'मैकैनो' कम्पनी का खिलौनों का कारखाना देखने योग्य है। यहां पर बच्चों के लिये अनेक प्रकार के खिलौने बनाये जाते हैं। इन खिलौनों से खेलते खेलते बच्चे सैकड़ों बातें इंजीनियरिंग की सीख जाते हैं। उदाहरणतः १ बक्स में अनेक छोटे छोटे पुरजे होते हैं जिनको इधर उधर फिट करने पर ६०० प्रकार के मौडिल बन सकते हैं जिनमें समुद्रीय जहाज, रेल तथा हवाई जहाज भी सम्मिलित हैं। मोटरकार को उसके भिन्न भिन्न पुरजों से किस तरह बनाया जाये ऐसा भी सिखाने के पुरजे बक्स में मिलते है, विलायत के भिन्न भिन्न टाइप के रेल के इंजनों के नमूने मिलते है और मैकैनो रेलवे ट्रेन सेट छोटे से बड़ा तक मिलता है जिसमें रेलवे ट्रेन का मौडिल बिजली से चालू किया जा सकता है। इङ्गलैण्ड के बड़े बड़े वायुयानों और समुद्रीय जहाजों के मौडिल (स्केल पर बने हुए) मिलते हैं। इन खिलौनो से खेल ही खेल में बच्चे मशीनो के पुर्जे तथा उनका चलाना सीख जा सकते है। हमारे देश के तो बच्चे क्या बड़े बड़े आदमियों से भी यह खिलौना ठीक तरह से पुर्जा मिलाकर न बनेंगे। भारतीय बच्चों में इस प्रकार के खेलों का प्रचार करने की बहुत आवश्यकता है।

(१०) उत्तरीय वेल्स की पहाड़ियों पर लिवरपूल की ज्योलाजी पार्टी—मौसम के लिहाज से हम भारतीयों को इङ्गलैण्ड बहुत ही बुरा लगता है कारण कि वर्ष में नौ या दस महीने वहां पर सूर्य के बहुत कम दर्शन होते हैं और हर समय पानी पड़ता रहता है। यद्यपि भारतवर्ष की तरह मूसलाधार पानी तो कम पड़ता है लेकिन बरसाती कोट लिये बिना बाहर निकलना बहुत कम होता है। उस पर जाड़ों में बरफ और हर समय कुहरा पड़ना। कालिज में तथा घरों में दिन भर बिजली के प्रकाश में कार्य करना पड़ता है। ऐसे मौसम में भी शनिश्चर तथा रविवार को बहुत कम लोग घर पर रहते हैं। वे प्रायः बाहर सैर करने निकल पड़ते हैं। जुलाई अगस्त में जब वहां पर गर्मी पड़ती है तब तो अनेक मनुष्य सैर को निकला करते हैं। पहाड़ियों और देहातों की सुन्दरता बनाये रखने को हर समय ध्यान रक्खा जाता है जिससे लोग उससे आकर्षित हों। उदाहरणतः पहाड़ियों पर या खेतों पर खाना खाकर फलों के छिलके या रद्दी कागज इधर उधर फेंकता हुआ कोई पाया जाय तो उस पर 'केस' चलाया जा सकता है। कानून है कि इस प्रकार कोई कूड़ा कचड़ा न करे। प्रायः फलों के छिलके या रद्दी कागज़ ज़मीन में करके गाड़ देना

चित्र नं० १०

होता है या उनको एक भारी पत्थर के नीचे दबा देते हैं जिससे हवा में इधर उधर न उड़ें और हरियाली पर दिखाई देकर बुरे न मालूम हों। हम भारतवासियों को इस मामले में अभी पश्चिमीय देशों से काफी सीखना है। अपने निजी घर की सफाई तो हम खूब रखते हैं लेकिन पड़ोसी के घर के सामने कूड़ा फेंक देने में कुछ ख्याल नहीं करते। तीर्थ स्थानों मे जब मेला होता है तब तो जो गंदगी फैलती है उसका तो कहना ही क्या है। प्रायः मेला समाप्त होते ही उस स्थान पर हैजा इत्यादि महामारी इसी कारण से फैल जाया करती है।

(११) लन्दन में 'सोसाइटी आफ फ्रेन्ड्स' (Society of Friends) का विशाल भवन—

अंग्रेज जाति के लोग अन्य लोगों के मुकाबिले स्वभाव से ही कुछ (reserved)* होते हैं और आपस में भी प्रायः बेमतलब कम ही बोलते हैं। हम भारत-वासियों को (जो स्वभाव से ही राह चलते आदमी से भी बोल उठने के आदी हैं) इङ्गलैण्ड में यह बात कुछ अखरती है। लन्दन एडिनबरा इत्यादि शहरों के अतिरिक्त जिन शहरों में हिन्दुस्तानी विद्यार्थी कम हैं वहाँ भारतवासी कुछ अकेलापन महसूस करते हैं। यह खुशी की बात है कि प्रत्येक शहर में कुछ अंग्रेज पुरुष और महिलाएँ ऐसे अवश्य मिल जाते हैं जो अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में तथा भिन्न भिन्न देशों के

चित्र नं० ११

वासियों से मिलने जुलने में दिलचस्पी लेते हैं। अन्तर्राष्ट्रीय क्लब ऐसे प्रायः हर एक नगर में ही मौजूद हैं जहाँ सप्ताह में एक दो दिन जाकर कई देश के विद्यार्थी मिल सकते हैं। इन क्लबों में जाकर अनेक देशों की रीति रिवाजें मालूम होती हैं तथा एक दूसरे का दृष्टिकोण मालूम होता है। 'सोसाइटी आफ फ्रेण्ड्स' एक बड़ी भारी अन्तर्राष्ट्रीय संस्था है जो मनुष्य मनुष्य में भेद-भाव नहीं रखना चाहती। यह संस्था लड़ाई के सदा खिलाफ है। गत जर्मन युद्ध में इसके अनेक मेम्बर जेल में बन्द कर दिये गये थे। सन् १९३७ में इस सोसाइटी ने भारत के वाइसराय के पास मेमोरियल भेजा था जिसमें उनसे भारतीय राजनैतिक कैदियों को छोड़ देने की प्रार्थना की थी। उनका एक मेम्बर भी यहाँ घूमने आया था और सब नेताओं से यहाँ मिला था। कहते हैं असहयोग के दिनों में भी इस सोसाइटी ने गवर्नमेन्ट व कांग्रेस के नेताओं में समझौता कराने का प्रयत्न किया था और महात्मा जी ने एक समय इस सोसाइटी को शान्ति रक्षक संघ कहा था। यह सोसाइटी भारत में मध्यप्रदेश में आश्रम, अस्पताल व स्कूल खोल कर जंगली जातियों में कार्य कर रही है। लन्दन के इनके भवन में प्रायः अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर व्याख्यान हुआ करते हैं। लन्दन से बाहर भी इस सोसाइटी की शाखाएँ हैं। लिवरपूल में सौभाग्य से इसी सोसाइटी के एक परिवार से मेरा भी परिचय हो गया था जिससे मुझे उनके अनेक सिद्धान्त मालूम हुए। संसार में इस सोसाइटी के लाखों मेम्बर हैं। खेद है इस सोसाइटी के अतिरिक्त और भी बहुत सी लड़ाई के खिलाफ "शान्ति संघ" योरुप में होते हुए भी वहाँ के देशों में लड़ाई का वातावरण कम होने के बजाय दिन पर दिन बढ़ रहा है।

* ना मिलनसार।

बड़ी लड़ाई का कर्ज

बड़ी लड़ाई के समय संयुक्तराष्ट्र अमरीका ने मित्र राष्ट्रों को कर्ज दिया था। उसके वापस होने में कई अड़चनें पड़ रही हैं। सन् १९३२ से करीब करीब कुछ भी वसूल नहीं हुआ। खाते में कर्ज की रकम ११,२०,००,००,००० डालर और उस पर १५ नवम्बर १९३७ तक १२,००,००,००,०० व्याज चढ़ा हुआ है।

सोलह देशों को नकद कर्ज दिया गया था। कुछ देशों को लड़ाई का सामान तथा और चीजें उधार दी गई थीं। इस प्रकार कुल ९०,००,००,०,०० डालर कर्ज दिया गया था। हंगारी को १६,८५,००० डालर दिया गया था। १९२४ में यह व्याज मिलाकर १९,८२,००० डालर हो गया। इसके बाद हंगारी ने कुछ रकम अदा की। सन् १९३८ में हंगारी पर १९,०८,००० डालर मूल और २७४,०००पिछला व्याज देना बाकी था। इस पर हंगारी ने कहा कि अब पिछला समझौता रद्द कर दिया जाय और शुरू में जितनी रकम उसने ली थी उसमें से जितनी वह दे चुका है वह निकाल दी जाय। जो बाकी बचे वह हंगारी थोड़ा थोड़ा करके बिना व्याज लगाये ३० वर्ष में अदा करेगा। संयुक्त राष्ट्र अगर यह बात मान ले तो सब देशों से उसे कुल ७४,००,००,००.००० डालर मिलने शेष रहेंगे। इसलिये संयुक्त राष्ट्र की कांग्रेस इस बात को मनाने को तैयार नहीं। कल को ब्रिटेन और फ्रांस भी कोई नई बात पेश करेंगे।

ब्रिटेन पर अमेरिका का ४,०७,५०,००.००० डालर चाहिये था। १५ नवम्बर १९३७ तक ब्रिटेन पर ४,३६,८०,००,००० डालर मिश्रधन तथा ८१,८०,००,००० डालर अलग व्याज चढ़ा था। फ्रांस को ३४७०००००० डालर दिये गये थे। १५ नवम्बर १९३७ को फ्रांस पर ३,८६,४०,००,००० डालर मिश्रधन तथा २,२८,००,००० व्याज अलग से चढ़ा था। फ्रांस और ब्रिटेन के साथ अगर इटली और बेल्जियम का कर्ज भी जोड़ दिया जाय तो सब कर्ज का ९६ फी सदी भाग इन्हीं चारों पर पड़ेगा। इटली को १,६४,८०,००,००० डालर दिये गये थे। बेल्जियम को ३७,७०,००,००० डालर दिये गये थे। १५ नवम्बर १९३७ को दोनों का हिसाब इस प्रकार था। इटली को मिश्रधन २००,५०,००,००० डालर और पिछला व्याज १,४०,००,००० डालर देना था। बेल्जियम को मिश्रधन ४०,१०,००,००० डालर और ३,६०,००,००० डालर पिछला व्याज देना था।

ब्रिटेन की कर्ज अदा करने की समस्या समझने के पहले यह भी बता देना ठीक होगा कि और किन किन देशों को कितनी रकम कर्ज में दी गई थी।

देश	रकम	
रूस	१९,२६,००,०००	डालर
आर्मीनिया	१,२०,००,०००	,,
पोलैंड	१५९७,००,०००	,,
चेकोस्लोवेकिया	९,१९,००,०००	,,
यूगोस्लेविया	१,५०,००,०००	,,
रूमानिया	३,६१,००,०००	,,
आस्ट्रिया	२४१,००,०००	,,
यूनान	१,५०,००,०००	,,
एस्थोनिया	१,४०,००,०००	,,
फिनलैंड	८३,००,०००	,,
लैटविया	५१,००,०००	,,
लिथुएनिया	५०,००,०००	,,
निकारेगुआ	३,००,०००	,,

इन देशों में से रूस और आर्मीनिया का हिसाब निकाल कर संयुक्तराष्ट्र के खजाने के रजिस्टर में १९३७ में कुल मिश्रधन ५९,४०,००,००० डालर और पिछला व्याज ५,२०,००,००० डालर चढ़ा था।

अब ब्रिटेन की तरफ आइये। कर्ज अदा करने में ब्रिटेन आनाकानी करता है और उसका कारण यह देता है कि युद्ध काल के कर्ज में और व्यापारी कर्ज में फर्क होना चाहिये। अमेरिकनों का कहना है कि युद्ध कालीन होने के कारण ये कर्ज और भी अधिक महत्व रखते हैं। ये कर्ज कैसर की फौजों को ब्रिटिश चैनल से दूर रखने के लिये दिये गये थे इसी महत्व को समझ कर ही तत्कालीन अङ्गरेज राजनितिज्ञों ने कर्ज की शर्तों पर हस्ताक्षर

किये थे। पर अमेरिकन लोग यह भी समझते हैं कि अब की बार योरुप में जो लड़ाई होगी उसमें अमेरिका बहुत देर तक चुप न बैठ सकेगा। इसलिये कुछ कमी (जो उचित कारण बताकर तै की गई हो) करके सारे कर्ज का खाता भावी युद्ध के पहले ही समाप्त कर दिया जाय।

इस कमी करने की बात सुनकर अंग्रेजों ने कुछ नई बातें कहीं। इनमें दो मुख्य तथा विचार पूर्ण हैं। एक तो यह कि अंग्रेजों को जो कर्ज दिया गया था उसका अधिकांश भाग व्यापार के द्वारा या लड़ाई का सामान पहुँचाकर अमेरिका ने ही वापस ले लिया। अंग्रेजों ने अमेरिकन सामान खरीद कर अमेरिकन मजदूर और पूंजीपति को कर्ज का काफी हिस्सा लौटा दिया। दूसरी बात यह कि लड़ाई के बाद अङ्गरेजों ने भी कुछ दूसरे राज्यों को कर्ज दिया उस कर्ज में से उन्होंने काफी रकम सहृदयता से या मजबूर होकर माफ कर दी। इस लिये अमेरिका को भी कुछ छूट देनी चाहिये। इस बात की पुष्टि के लिये एक दलील और पेश की जाती है कि जिस समय कर्ज लिया गया था उस समय और आजकल के बाजार भाव में बहुत फर्क है। उस समय सब चीजें तेज थीं अब सस्ती हैं। पर अमेरिका की जनता (जिससे अमेरिका की सरकार ने कर्ज लिया था) पर बाजार भाव की कमी या बढ़ती से क्या मतलब? उनका तो कहना यह है कि ब्रिटेन का व्यापार दुनिया भर में है। ब्रिटेन से बाहर अंग्रेज लोग लगभग २०,००,००,००,००० डालर लगाये हुये हैं। इतने बड़े व्यापार में से अगर अङ्गरेज चाहें तो क्या थोड़ा थोड़ा करके हमारा पैसा अदा नहीं कर सकते?

पवित्र पर्वत एथास

आदमी छः हजार और औरत एक भी नहीं यह एथास पर्वत की सबसे बड़ी विचित्रता है। भूमध्य सागर में यूनान प्रायद्वीप श्रेणी में एथास पर्वत इसाई धर्म के पादरियों का निवास स्थान है। मुर्गी और बिल्ली को छोड़कर और कोई स्त्रीलिंग जीवधारी भी वहाँ पहुँचने नहीं दिया जाता।

सन् ९६३ में पहले पहल एथास पर्वत पर इसाई पादरियों का मठ बना। बढ़ते बढ़ते आजकल वहां बीस मठ हो गये है। इनमें से कुछ साम्प्रदायिक ढंग से चलाये जाते हैं और कुछ में थोड़ी व्यक्तिगत स्वतंत्रता है। साम्प्रदायिक मठों में बड़ी मुसीबत का जीवन व्यतीत होता है। हर एक चीज पर सबका अधिकार है। जो चाहे जिसका कपड़ा पहन सकता है। गिरजाघर में देर तक होने वाले उपदेशों में हाजिर रहना अनिवार्य है। खाना कम मिलता है। उपवास अधिक करना पड़ता है। मादा जीवधारी हैं ही नहीं; इसलिये दूध मक्खन इत्यादि भी नहीं मिलता गोस्त खाना मना है। अगर डाक्टर दवाई के तौर पर गोस्त खाने के लिये बताता है तो मठों की चहार दीवारो के बाहर गोश्त पका कर रोगी को दिया जाता है। क्रिसमस (बड़ा दिन) और ईस्टर के अलावा प्रति सोमवार, बुधवार और शुक्रवार को व्रत रखना पड़ता है। उपवास के दिन सिर्फ एक बार दोपहर को उबाला हुआ भोजन मिलता है। बिल्लियां भी एक ही बार खाना पाती हैं। जो मठ साम्प्रदायिक नहीं हैं उनमें पादरी लोग गोश्त अलग बनवा कर खा सकते हैं और उपवास के नियम इतने कड़े नहीं हैं।

एक मठ को छोड़कर बाकी सब में पुराना कलेंडर चालू है। नये कलेंडर मानने वाले मठ को दूसरे सब मठ घृणा की दृष्टि से देखते हैं। इन मठों के अनुसार दोपहर शाम मानी जाती है और उसी समय दूसरा दिन शुरू होता है।

मठों के अनुयायी इस पर्वत पर गुफा बनाकर रहते हैं। कुछ अनुयाइयों ने गुफा के बाहर थोड़ी सी टीन छा ली है। इन लोगों का मुख्य भोजन रोटी और चाय है। इस कठिन जीवन व्यतीत करने के

कारण ये लोग सौ सवा सौ वर्ष तक जीते हैं।

बाहरी दुनिया की खबरें वहां शायद ही कभी पहुँचती हैं। इसका अन्दाजा इस बात से लग जायगा कि वहां के पादरियों ने भविष्य वाणी की है कि जर्मनी बहुत शीघ्र ईश्वर को सत्ता मानने वाला देश होगा। इसका कारण वे यह बतलाते हैं कि जर्मनी में एक ऐसा बादशाह आ गया है जो बोल्शेविकों और यहूदियों को एक दम खत्म किये डालता है उन लोगों की शांति न भंग हो इसलिये कोई उनको सच बात बताता भी नहीं।

कनाडा में फसल की कटाई-मड़ाई

प्रेरी में आजकल कटाई और मड़ाई का छोटी मशीनों की जगह बड़ी बड़ी मशीनें लगाई गई हैं। कटाई और मड़ाई जल्दी से जल्दी खत्म करने के लिये मशीनों को अक्सर दिन में सोलह घंटे काम में लगाये रहना पड़ता है। कटाई के दिनों में कनाडा में मजदूरों की भरमार रहती है। फसल को कनाडा से बाहर ले जाने के लिए फसल तयार होने से पहले ही रेलवे कम्पनी खाली गाड़ियां फसल की खास मण्डियों पर भेजती है। इन्हीं खाली गाड़ियों में दूर दूर से आने वाले मजदूर भी बिना किराया दिए ही बैठ जाते हैं और जिस स्टेशन पर काम लग जाता है वहां उतर जाते हैं।

कोवेक, आन्टेरिओ, मेनीटोवा और सस्कचवान नगरों की तरफ़ से बहुत से मजदूर इसी तरह बिना किराया दिए खाली मालगाड़ियों पर चढ़ जाते हैं। जो मजदूर हर साल आते रहते हैं वे अनुभवी होने के कारण अपने साथ धूप का चश्मा रखते हैं। कभी कभी चार पांच मजदूर मिलकर एक मोटरकार खरीद लेते हैं। ये लोग उन जगहों में भी जल्दी जल्दी पहुँचते जाते हैं जहां रेल नहीं गई है। इस तरह काफी रकम पैदा करने के बाद वे मोटर बेंच डालते हैं और अपने घरों का लौटते हैं।

विश्वविद्यालयों के विद्यार्थी तथा थोड़ी तनखाह पाने वाले शिक्षक भी फसल की कटाई और मड़ाई में मजदूरी करने आते हैं। इस प्रकार काम करके वे अपने साल के खर्च का पूरा कर लेते हैं। इसके अलावा बीमा कम्पनी के एजेन्ट, दलाल, व्यापारी लाग और डाक्टर भी वहां पहुँचते हैं। और अपने निजी पेशे से फुरसत रहने पर मजदूरी करके दुगनी आमदनी करते हैं।

इसका पूरा ख्याल रक्खा जाता है कि समय व्यर्थ न बीतने पाये। सूर्योदय से अँधेरा होने तक खाना खाने तथा प्राकृतिक शारीरिक आवश्यकताओं को छोड़ कर शेष सब समय काम में लगा रहता है। अँधेरा होने पर मशीनों को बन्द करके घोड़ों को पानी पिलाने तथा मशीनों को दूसरे दिन के लिये ठीक करने के बाद ही मजदूर सोने जाते हैं। साधारणतः कनाडा के लोग अङ्गरेजों की तरह शाम को चार बजे चाय पानी नहीं करते। पर इस कड़ी मेहनत के दिनों उनकी स्त्रियां चार बजे कुछ नास्ते के लिये लाती हैं और वे क्रमवार नाश्ता करते हैं क्रमवार इसलिये कि काम बन्द न हो।

मौसम अच्छा रहा तो सुबह ६ बजे से रात को ९ बजे तक मड़ाई और उड़ाई होती रहती है। इस रफ्तार से काम करने पर तीन दिन में लगभग २०० एकड़ की फसल उड़ाई जाती है।

घर

अब से कई हज़ार वर्ष पहले के स्त्री-पुरुष और बच्चे घरों में नहीं रहते थे। वे घर बनाना जानते ही न थे। जब पानी बरसता या बरफ गिरती तो वे खोहों (गुफाओं) के भीतर रहते थे। उस समय तरह तरह के जंगली खूँख्वार जानवर उनके पड़ोस में रहते थे। इन जानवरों से बचने के लिये वे गुफाओं के दरवाज़ों पर भारी पत्थर रख देते थे। इस समय के लोग पत्थर के हथियारों से शिकार करते थे। जिन जानवरों का वे शिकार करते थे उनके चित्र वे गुफाओं के भीतर बनाते थे इन्होंने रेनडियर, बिसन, अरना भैंसा और विशाल हाथी (मैमथ) के चित्र बनाये हैं। स्पेन और फ्रांस में इस तरह की पुरानी गुफायें मिली हैं। हर रोज़ मां बाप जंगली फल इकट्टा करने, मछली पकड़ने और जंगली जानवरों का शिकार करने के लिये बाहर जाते थे। छोटे छोटे लड़के गुफा के भीतर पत्थर और सीप के खिलौनों से खेलते थे। जब बाप घर लौट आता था तब वह अपना पत्थर का भाला या लकड़ी का भारी गदा भी लड़कों को खेलने के लिये दे देता था।

१—प्राचीन (गुफाओं का) घर

२—झील के किनारे वाले पुराने समय के घर

बहुत समय तक खोहों में रहने के बाद मनुष्य झीलों के किनारे घर बनाने लगे। पानी के किनारे से इन घरों में जंगली जानवर अचानक हमला नहीं कर सकते थे। घर बनाने के पहले पानी और कीचड़ में लट्ठे गाड़े जाते थे। फिर इन लट्ठों के ऊपर लकड़ी का फर्श बनाया जाता था। ऊपर से छप्पर

छा लिया जाता था। छप्पर के लिये पड़ोस में सिरकी और ऊँची घास बहुत होती थी। घर वाले एक पुल के ऊपर से घर के भीतर आते थे। यह पुल भी लकड़ी गाड़कर बनाया जाता था। मां घास की चटाई और टोकरी बना लेती थी। बाप गीली चिकनी मिट्टी के बर्तन बनाता था। घर के एक भाग में पालतू गाय और बकरियां रहती थीं। दूसरे भाग में घर के सब लोग रहते थे।

आयरलैंड और स्विज़रलैंड में इस तरह के बहुत से घरों का पता अजीब ढंग से लगा है। पहले यह घर पानी में डूबे हुए थे। किसी को अनुमान भी न था कि यहां घर है। फिर सूखा पड़ा। हफ़्तों तक पानी न बरसा। झील सूखने लगी। पानी के घटने पर गड़े हुये लट्टे और लकड़ी का चबूतरा दिखाई देने लगा। यहीं पुराने समय के घर थे।

एक समय जब लोग पेड़ों पर घर बनाते थे। आजकल भी कुछ लोग जानवरों और शत्रुओं से बचने के लिये पेड़ों पर रहते हैं। पेड़ों के ऊपर बने हुये घरों में रहने वाले बच्चों को बड़ा आनन्द आता है। घर के भीतर पहुँचने में उन्हें सीढ़ी के ऊपर चढ़ना पड़ता है। जब उनको जमीन पर खेलने की इच्छा होती है तो वे सीढ़ी से नीचे उतर आते हैं। इन घरों का फर्श लकड़ी का बना होता है। ऊपर छप्पर छाया रहता है। जिस घास से छप्पर छाया रहता है उसी तरह की घास से माँ टोकरी बनाती है। एक टोकरी में मिट्टी तोप तोप कर वह अंगीठी बनाती है। इसी अंगीठी में वह घास रखती है। इसी घास से वह अपने सब से छोटे बच्चे के लिये पलना, झूला बनाती है।

टीले के घर

कुछ लोग चिकनी मिट्टी के बहुत ऊंचे टीलों में घर बना कर रहते हैं। वे इन पर

३—वृक्षों के ऊपर बना हुआ घर

रस्सी की सहायता से चढ़ते हैं। अमरीका के कई भागों में कोलम्बस के आने के पहले इसी तरह के रेड इण्डियन लोग रहते थे।

कुछ भागों में कच्चे घर मिट्टी या कच्ची ईंट के बनते हैं। इनके ऊपर अक्सर पीली मिट्टी का लेप कर दिया जाता है। इनमें छत के ऊपर चढ़ने के लिये जीना बना होता है। रेड इण्डियन बालक छत के ऊपर चढ़ कर तरह तरह के खेल खेलते हैं। इस तरह के

गांवों में रहने वाले इंडियन लोग प्यूब्लो इंडियन कहलाते हैं। प्यूब्लो स्पैनिश भाषा का शब्द है। इसका अर्थ गांव है।

४—दक्खिनी अमरीका के पुराने ढंग के घर

बहुत दूर उत्तर की ओर बहुत जाड़ा पड़ता है। सब कहीं बरफ दिखाई देती है। यहीं एस्किमो लोग खुशी से रहते हैं। वे इस जाड़े की कुछ भी परवाह नहीं करते हैं। सरदी में रहने के लिये एस्किमो लोग बरफ के बड़े बड़े टुकड़ों को काट कर गोल गुम्बद-दार बरफ़ के घर बनाते हैं। इनके भीतर जाने के लिये सुरंगदार तंग रास्ता होता है। इससे उन्हें पेट के बल रेंग कर भीतर जाना होता है। घर के भीतर कुछ अंधेरा, दुर्गन्ध और धुआं रहता है। एस्किमो लोग बरफ के ही चबूतरे पर सोते हैं। गरमी के लिये वे गरम खालें बिछाते और ओढ़ते हैं।
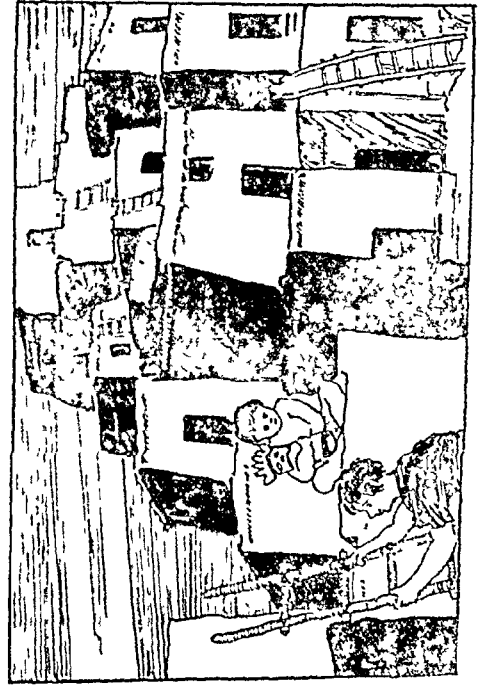
५—एस्किमो लोगों का घर (इग्लू)

सरदी की ऋतु में वह घर काफी गरम रहता है। इसके भीतर सील या ह्वेल मछली की चरबी जलती है। गरमी में जब बरफ पिघलने लगती है तब एस्किमो लोग इस घर को छोड़ कर खाल के डेरों में रहने लगते हैं। दूसरे वर्ष फिर वे बरफ का नया घर बनाते हैं।
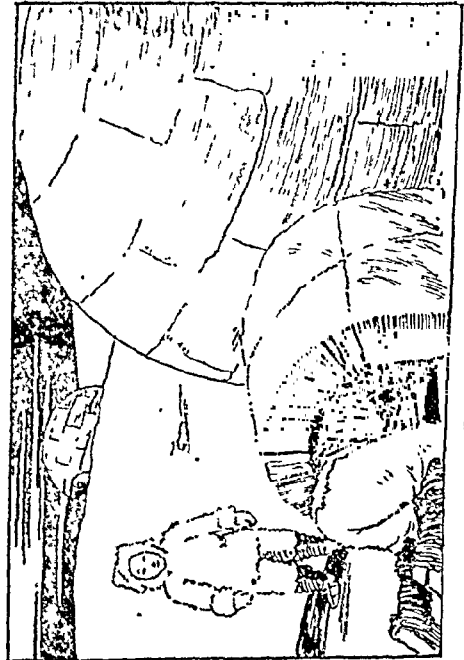
अफ्रीका के गरम भागों में लोग बड़ी बड़ी घास के गोल घर बनाते हैं। इन घरों में कड़ी धूप से बचने के लिये ठंडी छाँह रहती है। प्रबल वर्षा में भी यह घर नहीं चूते हैं। इन घरों में छप्पर की छत ही छत दिखाई देती है। चटाई या मिट्टी की छोटी छोटी दीवारें छिप सी जाती हैं। अरबी लोग ऊंट

या भेड़, की ऊन के बने हुए डेरों में रहते हैं। एक में मां और लड़कियां रहती हैं। दूसरे में बड़े लड़कों के साथ बाप रहता है।

अरबी लोग जानवर पालते हैं। रेगिस्तान में जब एक जगह की घास समाप्त हो जाती है तब वे घास की तलाश में दूसरे स्थान में पहुँचते हैं। वहाँ वे अपने डेरों को भी उखाड़ कर लगा लेते हैं। बंजारों की तरह घूमने फिरने वाले अरबी लोग बद्दू कहलाते हैं।

अमरीका में कुछ रेड इंडियन लोग भी इसी तरह का घुमक्कड़ जीवन बिताते थे। वे मछली मारते या दूसरे जानवरों का शिकार करते थे। वे लकड़ी के ढांचों के ऊपर खाल बांध कर अपने घर या टेपी बनाते थे। वे अपनी खालों पर अक्सर बढ़िया रंगीन तस्वीरें भी बना लेते थे। बनों में कुछ लोग लकड़ी के लट्ठों का घर बनाते हैं। ठंडी हवा चलने पर वे सन्धियों को घास या मिट्टी से बन्द कर लेते हैं। घर बनाने से पहले लट्ठों की छाल छुड़ा ली जाती है। घर को गरम रखने के लिये भीतर आग जलती रहती है।

देहाती घर कच्चा बना होता है। वह मिट्टी का बना होता है। किसी किसी त्योहार के दिन मां और बहिनें बाहर की ओर चूने और रंग से तरह तरह की तस्वीरें बना लेती हैं योरुप और अमरीका के देहाती घरों में अधिक सजावट होती है।

राजा और बहुत धनी लोग मज़बूत किलों में रहते हैं। किले अक्सर ऊँचे स्थान

६—अफ्रीका का घर

७—अरबी घर

पर बने होते हैं। उनके चारों ओर गहरी खाई पानी से भरी होती है। बाहर आने जाने के लिये लकड़ी का पुल बना होता है। दुश्मन के हमला करने पर वे लोग इस पुल को भीतर खींच लेते हैं। दीवारों में इस तरह

८—नार्मन किला

के तिरछे छेद बने होते हैं कि भीतर वाले आसानी से दुश्मन पर गोली छोड़ सकें।

चीनी लोग अजब तरह की नाव के घरों में रहते हैं। इन्हीं पर चढ़ कर वे एक स्थान से दूसरे स्थान को जाते हैं। बालकों की कमर में एक रस्सी से लकड़ी का टुकड़ा बंधा रहता है। यदि वे अचानक पानी में गिर पड़ें तो वे इस लकड़ी के कारण कुछ देर तक ऊपर तैरते रहते हैं। इतने में मां या बाप पानी में कूद कर उन्हें
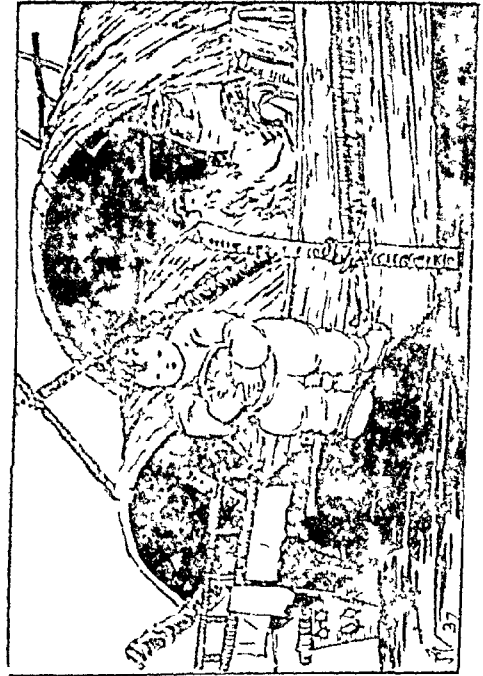
९—चीनी (नाव का) घर
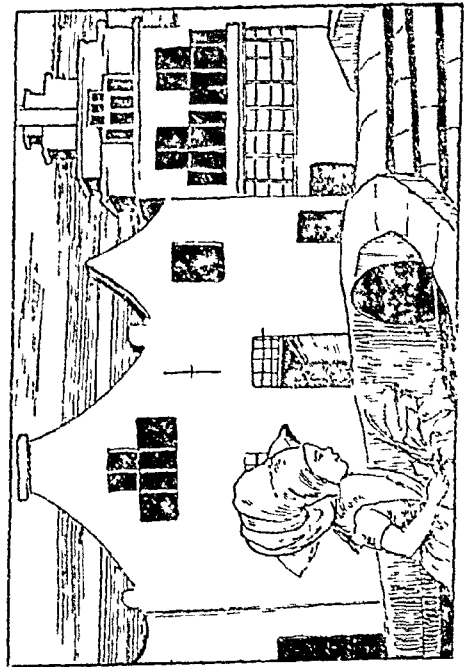
१०—हालैंड का घर

निकाल लाता है। हालैंड वालों के घर भी अजीब तरह के बने होते हैं। सबसे आगे वाले भाग में बनाने की साल लिखी रहती है। हालैंड की ज़मीन बहुत नीची है। यहाँ नदियां और नहरों की भरमार है। यहाँ के लोग सारस को शुभ मानते हैं। इस लिये वे सारस

१२—स्पेन की गुफाओं में इन जानवरों के चित्र खिंचे हुए मिले हैं।

१४—स्पेन का घर

के घोंसलों को नहीं छेड़ते हैं। इन घरों में रहने वाले लकड़ी के जूते (पौले) पहनते हैं। लेकिन वे अपने घरों को बहुत ही साफ और चमकीला रखते हैं।

आजकल के शहरी मानदार घर बहुत खुले हवादार बनते हैं। उनमें फुलवारी लगी रहती है। बहुतों में बिजली लगी रहती है जो रोशनी करने और पंखा चलाने के काम आती है। सरदी में वह घरों को गरम रखने के लिये

१३—अमरीका में लट्ठों का घर

बिजली की अँगीठी को तपाती रहती है। घर में मेज़, कुरसी, परदे और सजावट का दूसरा सामान रहता है।

अमरीका के गगनचुम्बी घरों का ढांचा फौलाद का बना होता है। ऊपर से ईंट, पत्थर या क्रांक्रीट रहता है। यह कई मंजिल का होता है। कोई कोई घर ८० मंजिल के बने होते हैं। किसी किसी घर में दो-तीन हजार कुटुम्ब या सब मिला कर आठ-दस हज़ार मनुष्य रहते हैं। इनमें ऊपर से नीचे या नीचे से ऊपर जाने के लिये थोड़ी थोड़ी देर में लिफ्ट या एलीवेटर चला करते हैं। यह एलीवेटर बिजली के ज़ोर से चला करते हैं।
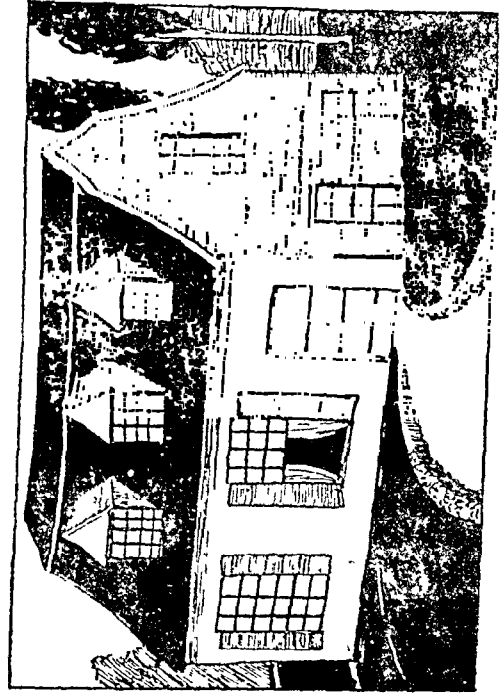
१४—आलीशान घर

बोलीविया की तंगदस्ती

स्थिति की दृष्टि से बोलीविया की तरह संसार का कोई भी देश नहीं है। भौगोलिक दृष्टि से बोलीविया महाद्वीप के प्रायः मध्य में स्थित है। राजनैतिक दृष्टि से वह चार कुत्तों के बीच एक हड्डी का टुकड़ा है। आर्जेन्टाइना, ब्रेजील, चिली और पीरू इन चारों राज्यों के केन्द्रीभूत होने के कारण ये चारों राज्य बोलीविया की राजनैतिक और आर्थिक हलचलों में दिलचस्पी लेते हैं। बोलीविया के चारों ओर स्थल है उसे चाहिये एक बन्दरगाह। अपना निजी बन्दरगाह न होने की वजह से पड़ोसी लोग आयात-निर्यात तथा गमनागमन पर मनमानी टैक्स लेते हैं। पिछली ग्रेनचाको की लड़ाई का मुख्य कारण यही था।

तिब्बत के बाद बोलीविया ही ऐसा देश है जिसके व्यापार पर उसकी भौगोलिक स्थिति के कारण धक्का पहुँचता है। बोलीविया का पठार औसत से १२ हजार फुट है और इसके चारों ओर एण्डीज पर्वत की दो श्रेणियाँ बीस हजार से २४ हजार फुट तक ऊंची हैं। सबसे सुगम दर्रों की ऊंचाई भी १२,००० से १४,००० फुट तक है। बोलीविया इतना धनी राज्य नहीं कि उस कठिन मार्ग में रेल बना सकता। इसलिये रेल बनाने का खर्च दूसरे देशों ने दिया है।

बोलीविया का पूर्वी हिस्सा यद्यपि समस्त क्षेत्रफल का ⅔ है पर उसकी आबादी समस्त आबादी की ¼ है। इस भाग में कपास, पेट्रोल, लकड़ी चमड़ा, खाने का सामान अधिकता से पैदा किया जा सकता है। पर पहाड़ों की रुकावट के कारण उस प्रदेश की उन्नति नहीं हो सकी।

सन् १८२५ में जब बोलीविया राष्ट्र का निर्माण हुआ था, उसके पास प्रशान्त महासागर तक पहुँचने की निजी जमीन थी। यह जमीन अटाकामा रेगिस्तान

में थी। बोलीविया राष्ट्र की नींव डालने वाले बोलीवर और सूकर महोदयों ने पीरू से एरिका खरीदने की कोशिश की थी। एरिका बोलीविया के लिये प्राकृतिक बन्दर है। पर पीरू ने बेचने से इन्कार किया। इसलिये बोलीविया ने अपना राष्ट्रीय जीवन पड़ोसियों की कृपा का भरोसा रख कर शुरू किया। जैसे जैसे समय बीतता गया बोलीविया के पड़ोसियों से मदद के बदले रुकावटें ही मिलीं। सन् १८७९-८४ की पेसिफिक युद्ध में चिली ने बोलीविया का अटाकामा का समुद्र-तट और तारापका, टकना तथा एरिका प्रान्त छीन लिया। सन् १८९१ में चिली और आर्जेन्टाइना में झगड़ा खड़ा हुआ। इसमें बोलीविया आर्जेन्टाइना की तरफ रहा। इस सहानुभूति के बदले आर्जेन्टाइना ने बोलीविया को प्रशान्त महासागर पर एक बन्दरगाह दिलाने का वादा किया। यह देखकर चिली ने बोलीविया को विश्वास दिलाया कि चिली बोलीविया को शीघ्र बन्दरगाह दिलायेगा। इस प्रकार बोलीविया को अपनी तरफ करके आर्जेन्टाइना का झगड़ा खत्म करके बोलीविया को धोखा दिया और अपना वचन पूरा न किया। हां इतना फायदा हुआ कि एरिका से लापाज तक चिली ने एक रेलवे बनवा दी और उस पर चुंगी की दर कम रक्खी। इस व्यवस्था से बोलीविया को कुछ आसानी जरूर हुई पर आयात निर्यात पर विदेशियों का अधिकार उसके लिये हितकर न हुआ। पिछली ग्रीनचाको युद्ध में बोलीविया की हार का मुख्य कारण यही था कि उसका समुद्र से सम्बन्ध न होने के कारण युद्ध के अस्त्र उसको उचित रूप में न पहुँच सके।

सन् १९२० में बोलीविया ने अन्तर्राष्ट्रीय सभा में प्रशान्त महासागर पर एक बन्दर मिलने का सवाल पेश किया था। पर उसे निराश होना पड़ा। तब उसने अमेरिका के संयुक्तराष्ट्र से मदद मांगी। संयुक्तराष्ट्र ने यह तजवीज की कि एरिका प्रान्त या तो बोलीविया को मिल जाय या उस पर किसी का अधिकार न रहे। यह मसला सन् १९२९ ई० तक चला और अन्त में एरिका पर चिली का प्रभुत्व रहा।

लगभग एक शताब्दी से बोलीविया कोशिश कर रहा है कि पेरेग्वे और मेडीरा नदियों को व्यापार का रास्ता बनावें। पर १८८९ में ब्रजील और आर्जेन्टाइना ने उसको ऐसा करने से रोक दिया। इसके बाद सन् १८९४ तक बोलीविया ने पेरेग्वे के साथ तीन सन्धियां की जिनसे उसको पेरेग्वे नदी द्वारा बाहिया नेग्रा तक खुला रास्ता मिल जाता था। पर पेरेग्वे ने यह देख कर अपनी फौजें उधर भेजीं और चाको प्रान्त तक कब्जा कर लिया। इससे बोलीविया ने कोशिश की कि ब्रजील से बाहिया नेग्रा के कुछ प्रान्त लेकर रेलवे द्वारा एमेज़ान नदी से व्यापार करे। पर पेरेग्वे ने इसमें भी अड़चन डाली और लड़ाई होते होते बच गई।

इसी साल स्टैंडर्ड आयल कम्पनी ने चाको प्रदेश के पश्चिम में तेल के कुओं का ठेका लिया। यह तेल रेलवे अथवा पाइप लाइन द्वारा आर्जेन्टाइना की सीमा में से होकर बाहर भेजा जाता। आर्जेन्टाइना ने पाइप लाइन लगाने नहीं दी और चुंगी की दर इतनी ज्यादा लगाई कि बोलीविया का तेल बाहर के तेलों से बहुत महँगा पड़ा। इसलिये स्टैंडर्ड आयल कम्पनी को काम बन्द करना पड़ा। और बोलीविया को भारी आर्थिक धक्का पहुँचा।

इस प्रकार हैरान होकर बोलीविया को समय समय पर अपनी वैदेशिक नीति बदलनी पड़ी और कभी इसको एक राष्ट्र को मित्र बनाना पड़ा और फिर उसी का दुश्मन। अपने पड़ोस के चारों राष्ट्रों से एक एक करके उसने दूसरे पड़ोसी राष्ट्रों से मिल कर लड़ाई की पर सफलता प्राप्त न हुई। अन्त में सन् १९३२ में चाको की लड़ाई शुरू हुई। इसमें बोलीविया को अपनी जर्मनी द्वारा सिखाई हुई सेना पर पूरा भरोसा था और सफलता की पूरी उम्मीद थी। पर लड़ाई के अस्त्र न पहुँच सकने के कारण उसे हारना पड़ा।

अब बोलीविया ने फिर अपने पड़ोसी देशों की आपस की खटपट से फायदा उठाने की नीति अख्तियार की है। चिली, पीरू, ब्रजील और आर्जेन्टाइना सब के सब बोलीविया को व्यापार के मामले में रियायती दर दे रहे हैं। चिली एरिका-लापाज रेलवे पर दोनों को एक सा अधिकार देने को तैयार है और आयात-निर्यात पर कर माफ कर रहा है। बदले में बोलीविया को चिली के माल पर कर कम करना पड़ेगा। पीरू भी नई सड़कें बनवाने का वचन दे रहा है और जो पुराने गमनागमन के साधन हैं

उन्हें और सुगम तथा उपयोगी बनाने का विचार करता है। ब्रजील ने निम्नलिखित ६ रेलवे लाइन बनवाने को कहा है:—

(१) पोर्टो एस्पेरेन्का (पेरेग्वे नदीपर) से कोरुम्वा तक
(२) सेएटा क्रूज डेला सियरा से पोर्टो एस्पेरेन्का लाइन तक
(३) सेएटा क्रूज से कामिरी तक
(४) कामरी से सूकर (पठार) तक
(५) कोचावम्वा से सेएटा क्रज तक
(६) सेएटा क्रूज से इचलो नदी तक

इन रेलवे लाइनों के बनजाने से ब्रेजील और बोलीविया के व्यापार की बड़ी उन्नति होगी। सान्टोज से एरिका तक २७३५ मील तक रेलवे द्वारा सफर आसान हो जायगा और अटलांटिक महासागर से प्रशान्त महासागर रेल द्वारा पहुँचने में तीन दिन की बचत हो जायगी।

आर्जेन्टाइना ने भी अब बोलीविया के तेल पर कर माफ कर दिया है। स्टैंडर्ड आयल कम्पनी की एक शाखा आर्जेन्टाइना में है जो अर्जेन्टाइना के तेल से होड़ करती थी। इसी लिये जब स्टैंडर्ड आयल कम्पनी ने बोलीविया के तेल का ठेका लिया तो आर्जेन्टाइना ने अधिक कर लगाया था। अब आर्जेन्टाइना और बोलीविया की इस प्रकार मित्रता होने से पेरेग्वे को दबना पड़ेगा।

आस्ट्रिया ले लेने से

आस्ट्रिया ले लेने से जर्मनी के भीतरी व्यापार में दस प्रतिशत उन्नति हुई। कच्चे सामान में उसे आस्ट्रिया से कच्चा लोहा और लकड़ी मिली। दक्षिणी आस्ट्रिया में लगभग ३७५० लाख टन कच्चा लोहा खोदने को पड़ा है। सन् १९९० तक लोहे के मामले में जर्मनी किसी के भरोसे न रहेगा। आस्ट्रिया में ७० लाख एकड़ जंगल है। सन् १९२७ में जर्मनी ने २६०० लाख मार्क को इमारती लकड़ी बाहर से मँगाई। अब इसमें २५ फ़ीसदी आस्ट्रिया में ही मिल जायगी। खाने पीने की चीजों में आस्ट्रिया और जर्मनी दोनों की करीब करीब एक ही हालत थी। आस्ट्रिया अपनी जरूरत का ७६ फीसदी खाना पैदा करता है और जर्मनी ८१ फी सदी। इसलिये खाने पीने के मामले में कुछ फायदा न हुआ।

आस्ट्रिया नेशनल बैङ्क तथा सिक्यूरिटी इत्यादि मिलाकर जर्मनी को करीब आधा खरब मार्क का सोना मिला। आस्ट्रिया के ऊपर जो कर्ज था यदि उसे जर्मनी दे तो उसे १३००० लाख मार्क देने पड़ेंगे।

आस्ट्रिया की आर्थिक स्थिति में एक दम परिवर्तन हो जायगा। अभी तक व्यक्तिगत कारबार तथा भोजन और कच्चा माल इत्यादि की पैदावार में सरकार का कब्जा न था सिर्फ देखरेख थी। पर नाजी लोगों की शासन व्यवस्था दूसरी ही है। आयात के भरोसे रहना शर्म की बात है। सारा व्यापार सरकारी हो जायगा। पैदावार और खपत पर सरकारी नियंत्रण रहेगा। सड़कें बनेंगी फौजी काम की सहूलियत के लिये। सरहद पर नये किले बनेंगे। राइन-डेन्यूब नहर पर काम तेजी से होगा। नई रेलवे और नई सरकारी इमारतें बनेंगी। इन सब कामों से बेकारी की समस्या काफी हल हो जायगी। १९३७ में औसत से ३२,००,०० बेकार थे। साल के भीतर इनकी संख्या ज्यादा से ज्यादा ४,००,००० और कम से कम २,६०,००० थी। नाजी शासन के पहले तीन महीनों में ही १,५०,००० से ज्यादा बेकारों को काम मिल गया। लोहे तथा अन्य मशीनरी के कारखाने तेजी से बन रहे हैं।

अभी तक आस्ट्रिया से सूती सामान तथा अन्य सुन्दर सजावट की चीजें बाहर भेजी जाती थीं। लोगों का ख्याल है कि नाजी शासन हो जाने से उसकी निर्यात की चीजों का बहिष्कार होगा। पर जर्मनी अब आस्ट्रिया से दिल खोल कर खरीदेगा। अभी तक जर्मनी आस्ट्रिया के वैदेशिक व्यापार का सिर्फ १५

फीसदी खरीदता था और आस्ट्रिया को सारी आयात का १६ फीसदी देता था। सन् १९३७ में आस्ट्रिया का वैदेशिक व्यापार इस प्रकार था।

देश	आस्ट्रिया में भेजा (दस लाख शिलिंग)	आस्ट्रिया से लिया (दस लाख शिलिंग)
जर्मनी	२३३	१८०
इटली	८०	१७२
चेकोस्लोवेकिया	१६०	८७
हंगारी	१३१	१११
रूमानिया	८७	६९
पोलैण्ड	·६७	५३
युगोस्लैविया	११५	६६
ग्रेटब्रिटेन	६६	६६
संयुक्तराष्ट्र अमेरिका	८७	३०

आस्ट्रिया के वैदेशिक व्यापार को नये रूप से संगठित करने में बड़ी कठिनाई होगी। जर्मनी को इमारती लकड़ी देने के लिये उसे इटली, हंगारी तथा ब्रिटेन को लकड़ी देना बन्द करना पड़ेगा। पिछले कई वर्षों से आस्ट्रिया के वैदेशिक व्यापार को तराजू का पल्ला बराबर नहीं रहता था। सन् १९३७ में निर्यात से आयात २३७० लाख शिलिंग अधिक का हुआ था। पर यह घाटा विदेशी यात्रियों द्वारा लाए हुये विदेशी सिक्कों से पूरा हो जाता था। लोगों का ख्याल है कि नाज़ी शासन का आस्ट्रिया विदेशी यात्रियों को इतना आकर्षक नहीं लगेगा जितना पहले था।

आस्ट्रिया में अब कर लगभग ५० प्रतिशत अधिक कर दिये गये हैं। जर्मनी में मिलाये जाने से पहले आस्ट्रिया का मार्क १·२ शिलिंग के बराबर होता था पर अब मार्क १½ शिलिंग के बराबर रक्खा गया है। इससे आस्ट्रिया की वर्तमान स्थिति को बड़ा लाभ होगा।

डाक्टर शाक्ट के अर्थ मंत्री होने से जर्मनी और साथ ही आस्ट्रिया का व्यापार पड़ोस के पांच छोटे देशों में काफी बढ़ रहा है। हंगारी का गेहूँ रूमानिया का तेल और युगोस्लैविया के खनिज पदार्थ जर्मनी के लिये आकर्षक हैं और ये छोटे देश जर्मनी को अपना कच्चा माल बेचने का अच्छा बाजार समझते हैं।

नेपोलियन की जन्मभूमि

जो नेपोलियन को जानते हैं वे उसकी जन्मभूमि को भी जानते होंगे या जानना चाहते होंगे। भूमध्य सागर में फ्रांस और इटली के बीच दो द्वीप हैं। एक कार्सिका जो फ्रांस के आधीन है और दूसरा सार्डीनिया जो इटली के आधीन है। कार्सिका नेपोलियन की जन्मभूमि है।

मुख्य बन्दरगाह और रजधानी अजाक्शियो से नगर में जाने के लिये छः सात सड़कें पार करनी पड़ती हैं। इन सड़कों के नाम सबसे पहले राजदूत के माता, पिता, भाई इत्यादि के नाम से रक्खे गये हैं। माता के नाम की सड़क को लोग आदर की दृष्टि से देखते हैं। कार्सिका की मशहूर शराब 'लाटीटिया' भी उसी के नाम से प्रसिद्ध है।

अजाक्शियो में आप को चारों तरफ मस्ती दिखाई देगी। लोगों को या तो कोई काम ही नहीं है या वे करते ही नहीं हैं। ऐसा मालूम पड़ता है कि वहां की सारी आबादी ऐसे लोगों की है जिनको महीने महीने मनीआर्डर पहुँच जाता है या वे कोई लाटरी का इनाम जीत कर मौज कर रहे हैं। पर भोजनालय के नौकर शायद चौबीस में से तेईस घंटे काम करते हैं। आप उनको सदा इधर उधर आते जाते देखेगें।

गरमी काफी पड़ती है। भूमध्य सागर की जलवायु की यह खूबी ही है। गरमी में इतनी गरमी पड़ती है कि शौकीन लोग पसीने के डर से पैदल चलना पसन्द करेंगे। इसलिये किराये की मोटरबस पर बैठना चाहिये। मोटरबस द्वारा आप कार्सिका के सब हिस्सों में घूम सकते हैं। अधिकतर मोटरें नगर

से समुद्र तट के स्नानागारों तक जाती हैं। मोटर में हफ़्तेवारी वापसी टिकट मिलते हैं। रोजाना टिकट लेने के बदले हफ्तेवारी टिकट लेना ही अच्छा है। इससे और सब फायदे तो हैं ही जो आप जानते हैं पर सब से बड़ा फायदा यह है कि आप टिकट बेचने वाले की झकझक से बच जाते हैं। वे लोग बड़े पक्के सौदागर हैं। इतनी नम्रता, विनय तथा चतुरता से बात करेंगे कि आप को हफ्ते के आखिरी दिन भी टिकट खरीदने पर मजबूर होना पड़ता है। यदि आप पहले ही वापसी टिकट खरीद लेंगे तो इस ड्योढ़े खर्च से बच जायँगे। और सबसे अच्छा यह है कि आप चार आदमी मिलकर एक मोटरकार किराये की मँगवा लें तो दिन भर का तेरह या चौदह रुपया लगेगा।

धूप से बचने के लिये एक टोपी लगा लीजिये और मोटर में बैठ जाइये। आप को मोटर के दोनों तरफ तम्बाकू के खेत दिखाई देंगे। अजाश्कियो से बोनीफेशियो तक समतल जमीन पर चारों ओर तम्बाकू की खेती होती है। इसके बाद पहाड़ियां शुरू होती हैं। इन पहाड़ियों पर चढ़ने से आप को चारों ओर हरियाली दिखाई देगी। कहीं कहीं घास इतनी ऊँची है कि उनके पीछे का गांव मुश्किल से दिखाई देता है। इन्हीं पहाड़ियों से आप दूरी पर सार्डीनिया का समुद्र तट देख सकते हैं। पर कार्सिका में सार्डीनिया का कोई नाम भी नहीं लेता। मामूली लोगों का विश्वाश है कि सार्डीनिया है ही नहीं।

बोनिफेशियो में करीब दो पैसे की एक औंस अच्छी तम्बाकू मिलती है। अजाक्शियो से उत्तर पश्चिम की ओर पियाना नगर है यहां समुद्र से उठती हुई पहाड़ों की लाल लाल चोटियां संसार के सुन्दर दृश्यों में अपना स्थान रखती हैं। योरुप और अमेरिका के स्थानों की अपेक्षा कार्सिका का रहन-सहन सस्ता है। तम्बाकू और शराब पर कर नहीं है। योरुप और अमेरिका के यात्री खूब तबियत भर कर तम्बाकू और शराब पीते हैं। भोजनालयों में प्रति दस आदमियों में से नौ के सामने शराब की बोतल दिखाई देगी।

अजाक्शियो में एक सिनेमा है। यह सिनेमा मैदान में होता है। पास ही थोड़ी दूरी से नाचने गाने की आवाज़ आती है। नाच प्रायः अर्धनग्न होता है।

नाविक नगर

छोटा हो या बड़ा हर एक बन्दरगाह पर एक बस्ती ऐसी होती है जो 'नाविक नगर' कहलानी चाहिये, क्योंकि वहां की बाजार आबादी सब नाविकों की जेब से निकली हुई रकम से पलती है। ब्यूनोज आयर्स में यह बस्ती 'बोका' कहलाती है। वहीं का एक दृश्य आपके सामने उपस्थित करता हूँ।

अंधेरा था—अटलांटिक महासागर से साफ हवा चली आ रही थी। बाईं ओर जहाजों की चिमनियां और खम्भे एक विचित्र जङ्गल के रूप में खड़े थे। पेरेग्वे के फल के जहाज और तरह तरह की छोटी बड़ी नावें खड़ी थीं। सामने सड़क पर भोजनालय की खिड़कियों से रोशनी चमक रही थी और कुछ दूरी पर स्थानों पर गाना हो रहा था।

गल्फस्ट्रीम टेवल वे जाते बाधे बोरा बस्ता।
केप हार्न होकर आ जाते, नाविक का यह रस्ता॥

प्रायः सभी मुख्य जातियों के भोजनालय यहाँ पाये जाते हैं। अंग्रेजी स्केन्डिनेवियन, अमेरिकन ब्रजीलियन और आर्जेन्टाइनियन इत्यादि सभी खास देशों के होटल हैं। हम लोग एक अंग्रेजी भोजनालय में गये। इसका मालिक यूनानी था। जैसे पूर्वी देशों के राजा लोग अपने नौकरों को बुलाने के लिये ताली बजाते हैं उसी प्रकार हमने भी ताली बजाई। मालिक खुद आया और हम लोगों को विस्की लेने की सलाह दी। हम लोग राजी हो गये।

दूसरे किनारे पर कुछ अङ्गरेज नाविक बैठे थे। एक कुछ भुनभुना रहा था, दूसरा जोर जोर से गा रहा था। एक अङ्गरेज नाविक एक कहानी सुना रहा था जिसे हिन्दुस्तानी में चण्डूखाने की गप्प कहना चाहिये। दो स्केण्डिनेवियन भी थे इनमें से एक जहाज का बढ़ई था। ये दोनों राटरडम से लाई हुई सिगार पी रहे थे। बढ़ई के घर पर शायद एक स्त्री और दो बच्चे थे और वह अपने सुखी घर की कहानी सुना रहा था।

इतने में एक आरमीनिया की दरी बेचने वाला आया। यह अपने स्वाभाविक रूप से ग्वीम निकाले रहता था। आप सौदा लीजिये या न लीजिये पर उसको आशा बनी ही रहेगी और वह ग्वीम निकाले ही रहेगा। एक अङ्गरेज नाविक ने आरमीनियन फेरी वाले को बुलाया और उससे पूछा कि तुम दरी के अलावा और भी कुछ बेचते हो, उसने कहा 'जी हां' और फौरन बाहर जाकर कुछ चांदी की नक्काशी पर चम्मच तथा पेरेग्वे के फोन ले आया इतने में एक तरफ से टेवल उलटने की आवाज आई। एक मवेशी के जहाज के दो चीनी कुली आपस में लड़ गये थे। इनमें से एक योरोपियन पोशाक में था दूसरा अपनी चीनी पोशाक में। योरोपियन पोशाक वाला दूसरे को उठाकर बाहर फेंक देना चाहता था। झगड़ा थोड़े से पैसों के बटवारे का था। अङ्गरेजी नाविक इस झगड़े के नतीजे पर शर्त लगाने लगे। पांच नाविकों ने योरोपियन पोशाक वाले की तरफ से दांव लगाया और एक ने अपनी चीनी पोशाक वाले की तरफ से। सब लोग खड़े हो गये। जो ज्यादा मजा लूटना चाहते थे वे सीढ़ों पर चढ़ गये। अङ्गरेज स्केण्डिनेवियन, चीनी, आर्जेन्टाइना वाले सब अपनी अपनी भाषा में बढ़ावा (cheers) दे रहे थे। तब मालिक आया। अङ्गरेज नाविक ने अर्ज की कि मैच पूरा होने दिया जाय। पर मालिक के लिये वह मनोरंजन की चीज न थी। उसने दोनों को पकड़कर अकेमादान सहित बाहर निकाल दिया। मालिक अन्दर आकर आराम से मुस्कुराता हुआ बैठ गया। उसके लिये यह रोज की एक मामूली बात थी उसके बाद कुछ फौजी नाविक आये और शराब पीकर चले गये। रात काफी हो चली थी। अपने ग्राहकों के इशारा करने के लिये मालिक ने दो बत्तियां बुझा दीं। लोग समझ गये और एक एक करके खिसकने लगे। जैसे जैसे लोग उठते गये बत्तियां बुझती गईं।

माल्टा की नावें

माल्टा भूमध्यसागर में अङ्गरेजी उपनिवेश है। सागर के मध्य में स्थित उपनिवेशों की रक्षा जङ्गी जहाजों द्वारा होती है। माल्टा में हर एक जङ्गी जहाज के साथ एक छोटी बोट भी रहती है। इस बोट को माल्टा के लोग डिसा कहते हैं। ये डिसा दोनों सिरों पर उठी हुई और बीच में खाली (golonda) की शकल की होती है। बोट को मल्लाह लोग खड़े होकर चलाते हैं। इसका कारण यह है कि उनका विश्वाश है कि एक बार रात को भूतों ने एक नाविक को मार डाला था। तब से वे जिस ओर खेते हैं उसी ओर मुंह करके खड़े होते हैं जिससे भूतों का मुकाबला कर सकें।

सफाई में ये नावें जहाज के क्रीटर डेक से कम नहीं होतीं। पीछे की ओर एक गद्दा लगा रहता है और उस पर सफेद केनवस छाया रहता है। गद्दा के पीछे टेक लगाने के लिये जो तख्ता रहता है उसमें तरह तरह की नक्काशी का काम रहता है। हर एक मल्लाह अपनी नाव ज्यादा से ज्यादा खूबसूरत रखना चाहता है। वह उसको चमकती हुई पीतल और तरह तरह के रंगों से रङ्ग कर सजाता है। पतवार बड़े तथा भारी होते हैं। वे नाव में कड़ों के द्वारा बंधे रहते हैं और खड़े होकर मेहनत के साथ ही चलाये जा सकते हैं। जङ्गी जहाजों के साथ जो मल्लाह ऐसी नावों पर नौकर रहते हैं उनको खाना तथा अन्य जरूरत के सामान जहाज से मिलते हैं।

हर साल इन नावों की एक दौड़ होती है। उस समय प्रायः हर एक मल्लाह अपनी सबसे अच्छी नाव लेकर प्रतियोगिता में शामिल होता है। अपनी अपनी नाव पर खड़े होकर उनका एक दूसरे को हराने की कोशिश का दृश्य बड़ा सुहावना होता है। पर कभी कभी वे मल्लाह खूंख्वार भी हो जाते हैं। एक बार नौकरी से भाग जाने वाले मल्लाहों को पकड़ने का काम इन्हीं लोगों को सौंपा गया। जो कोई एक भागा हुआ मल्लाह पकड़ लाता था उसे इनाम मिलता था। इससे कुछ अशान्ति फैल गई। भागे हुये मल्लाह पकड़ तो गये पर नौकरी करते हुये भी मौका पाने पर अपने पकड़ने वाले की नाव को डुबो देते थे। और कभी कभी उसे वहीं खत्म भी कर डालते थे।

हिन्दी-सामयिक पत्र जगत में मासिक "भूगोल" का एक मुख्य स्थान है। अपने विषय की सुन्दर सामग्री देने में वह सदैव अग्रगामी रहा है। प्रस्तुत विशेषांक में एबीसीनिया का इतिहास, भौगोलिक-विवरण आदि सभी बातें दी गई हैं। इस एक पुस्तक के पढ़ लेने से एबीसीनिया के नर-नारी और भूमि, जंगल, नदी, पहाड़ आदि के विषय में काफी ज्ञान हो जाता है। यह अंक विद्यार्थियों के तो काम का है ही, परन्तु साधारण पाठक भी इससे लाभ उठा सकते हैं। इस अंक का मूल्य ॥) है। भूगोल-कार्यालय, इलाहाबाद से प्राप्य। "स्वराज"

इस भूगोल-एटलस से संसार के विभिन्न देशों की राजनैतिक सीमा और विभागों के सिवा उनकी पैदावार, आयात और निर्यात, जलवायु, मिट्टी, स्थल की ऊँचाई और निचाई, वर्षा का परिमाण, जन-संख्या, वहाँ के निवासियों का भोजन और वस्त्र, व्यापार आदि सैकड़ों विषयों का ज्ञान हो जाता है। अन्त में कुछ नक्शे ऐसे भी दिये गये हैं जिन से विदित होता है कि पिछले डेढ़ हज़ार वर्षों में किस शताब्दी में संसार के कितने भूभाग का पता लोगों को था। इन तमाम दृष्टियों से यह एटलस सभी भूगोलप्रेमियों के लिये संग्रहयोग्य है। स्कूल के विद्यार्थियों के लिये तो यह एक अमूल्य भेंट है। इसके द्वारा भूगोल का ज्ञान ऐसी सरलता से हो जाता है कि तनिक भी परिश्रम नहीं जान पड़ता।—"चाँद"

शिक्षा विभाग द्वारा स्कूलों के लिये स्वीकृत, पृष्ठ संख्या [illegible]१२ मूल्य १)

"भूगोल" कार्यालय, प्रयाग।

बाल-संसार

बाल-संसार की एक प्रति देकर अपने बालकों को दूसरे देशों के बालकों का हाल बताइये और उनमें नया जीवन डालिये।

संक्षेप में बाल-संसार में १११ बालकों के घर, भोजन, वस्त्र, खेल-कूद, काम-काज और रहन-सहन द्वारा उनके देशों के जीवन की झांकी दिखलाई गई है। भाषा एकदम सरल है जिसे छोटे बच्चे बड़ी आसानी से समझ लेते हैं। नामों का बोझ बिल्कुल अलग कर दिया गया है। इस अंक में लगभग तीन सौ चित्र हैं। जिनसे इस अंक की रोचकता और भी अधिक बढ़ गई है। बाल-संसार में पांच भाग हैं। पहले भाग में अफ्रीदी, नेपाली, सिन्धी, बर्मी सिंहाली आदि भारतवर्ष के बच्चों का वर्णन है। दूसरे भाग में चीनी, जापानी, स्यामी, अफ़ग़ानी, ईरानी, अरबी, तुर्की, आदि एशिया के बालकों पर प्रकाश डाला गया है। तीसरे भाग में अंग्रेज़ी, जर्मन, रूसी, फ्रांसीसी आदि योरप के बालकों के रहन सहन का वर्णन है। चौथे भाग में एस्किमो, रेड इंडियन, कनाडा, संयुक्त राष्ट्र अमरीका, मेक्सिको, ब्रेज़ील, पीरू, अर्जेन्टाइना आदि उत्तरी और दक्षिणी अमरीका के बालकों का वर्णन है। पांचवें भाग में अफ्रीका, आस्ट्रेलिया और प्रशान्त महासागर के कुछ द्वीपों में रहने वाले बालकों का वर्णन किया गया है। बाल-संसार के प्रत्येक लेख में आप आश्चर्य और आनन्द में डालने वाली नवीनता देखेंगे। रोचकता की दृष्टि से भौगोलिक बाल-साहित्य पर यह प्रथम और अपूर्व प्रयास है।

तीन सौ चुने हुए चित्रों के अतिरिक्त प्रत्येक लेख में एक शीर्षक चित्र है।

बड़े आकार (१०×७½) के २६० पृष्ठ, मूल्य १।।) सजिल्द १।।।), प्रत्येक भाग का अलग मूल्य।=)

मैनेजर, "भूगोल" इलाहाबाद।

चीन-अंक

चीन अंक के दो भाग हैं। पहले भाग में चीन की स्थिति, भूरचना, जलवायु, वनस्पति, पशु-पालन, कारबार, शिक्षा, समाचारपत्र, कहावतें। मनोरंजन, खेलकूद हवाई डाक और हवाई सेना, मार्शल च्यांगकाई शेक, मेडम च्यांगकाई शेक, हुइशी (चीन के गान्धी), डा० सनयातसेन, धार्मिक व्यवस्था, चित्रकला, चीन के पड़ोस में विदेशी शक्तियों का जमघट, जापानी साम्राज्य, चीन में घुसने के मार्ग, मङ्गोल लोगों का देश चीनविच्छेद, नानकिंग की सरकार रूस का पूर्वी प्रदेश, चीन और जापान, मन्चूकुओ की स्थापना, आधुनिक परिस्थिति राजनैतिक रूप रेखा, चीन का साम्यवादी दल, चीन जापान संघर्ष और जनरल चूतेह की अपील है। इसमें कई नक़शे और चित्र हैं। बड़े आकार की पृष्ठ संख्या ८८, मूल्य ॥)।

दूसरे भाग में चीन की एटलस है। प्रत्येक प्रान्त के पूरे (बड़े) पृष्ठ के २४ नक़शे। चीन देश का बड़ा नक़शा (दो पृष्ठों पर)। इसी भाग में नक़शों की व्याख्या और प्रान्तों का वर्णन है। इसके अतिरिक्त १६ ऐतिहासिक नक़शे, ऐतिहासिक घटनाओं की सूची, और चीनी इतिहास के चुने हुए चित्र हैं। अन्त में संसार में चीन का आर्थिक स्थान प्रदर्शित करने के लिये ८ आर्थिक नक़शे और कई डायाग्राम (खाके) हैं। मूल्य ॥) दोनों भागों का एक साथ मूल्य बारह आना।

"भूगोल" कार्यालय, प्रयाग।

क्षमा-याचना

हमें खेद है कि गंगा-एटलस के नक़शे तैयार न हो सकने के कारण इस महीने "भूगोल" का साधारण अंक ही निकालना पड़ा। अगले मास में गंगा-एटलस प्रकाशित होगी। आशा है पाठक इस परिवर्तन के लिये क्षमा करेंगे।

—मैनेजर

"भूगोल" के सोलहवें वर्ष के उपलक्ष में

"भूगोल"

का

देशी राज्य-अङ्क

पृष्ठ-संख्या लगभग २००, चित्र-संख्या लगभग १००, नक़शों की संख्या लगभग २०, मूल्य साधारण संस्करण २) रु०, राज-संस्करण ५) रु०।

आगामी जुलाई (१९३९) में "भूगोल" का देशी राज्य-अङ्क प्रकाशित होगा। फेडरेशन योजना के सिर पर आने से प्रत्येक हिन्दुस्तानी को देशी राज्यों का ज्ञान होना आवश्यक है। इसी आवश्यकता को ध्यान में रख कर देशी राज्य-अंक का प्रकाशन हो रहा है।

इस विशाल अंक में हिन्दुस्तान के छोटे बड़े सभी राज्यों का समावेश रहेगा। सम्पूर्ण सूची अगले मास के "भूगोल" में देखिये। काश्मीर, हैदराबाद, मैसूर, बड़ौदा, ग्वालियर, इन्दौर, जोधपुर, बीकानेर, उदयपुर, जैपुर, कोटा, रीवाँ आदि अधिक प्रसिद्ध लगभग १०० राज्यों का पूरा परिचय रहेगा।

प्रत्येक राज्य की स्थिति, विस्तार, संक्षिप्त इतिहास, जन-संख्या, कारबार, आर्थिक महत्व, भारत सरकार से सम्बन्ध, शासन-प्रणाली, राजा और प्रजा का सम्बन्ध आदि सभी जानने योग्य विषय रहेंगे।

यह देशी राज्य-अंक आवश्यक नक़शों और चित्रों से सुसज्जित रहेगा। "भूगोल" के आकार की पृष्ठ-संख्या लगभग २०० होगी। मूल्य साधारण संस्करण का २) रु०, राज-संस्करण का ५) रु०। राज-संस्करण बढ़िया आर्ट पेपर पर छपेगा। जिल्द भी आकर्षक और मजबूत रहेगी।

जिन नये या पुराने ग्राहकों का चन्दा मई सन् १९३९ से अप्रैल सन् १९४० तक आगया है या १९३९ के मई महीने के पहले आ जायगा उनको देशी राज्य-अंक का साधारण संस्करण उनके चन्दे में ही मिलेगा। यदि वे साधारण के बदले राज-संस्करण चाहेंगे तो उन्हें "भूगोल" के वार्षिक मूल्य के साथ ३) रु० अधिक अर्थात् ६) रु० मनीआर्डर द्वारा भेजना चाहिये।

देशी राज्य-अंक परिमित संख्या में ही छपेगा। अतः यथा शीघ्र वार्षिक मूल्य ३) अथवा इस विशेषांक का मूल्य २) या ५) भेज कर अपनी प्रति सुरक्षित कर लीजिये।

मैनेजर, भूगोल-कार्यालय, प्रयाग।

भूगोल
वार्षिक मूल्य ३)
विदेश में ५)
एकप्रति का ।=)
मार्च १९३८
भूगोल-कार्यालय प्रयाग

विषय-सूची

विषय

१—चीन जापान युद्ध की प्रगति ...

२—चीन की प्राचीन राजधानियाँ ... ...

३—पूर्वी बङ्गाल का एक सुन्दर स्थान (श्री सौदामिनी गुप्त) ...

४—क्या आप जानते हैं (श्री आदित्य राम बंशल) ...

५—रामायण-कालीन भौगोलिक दिग्दर्शन (श्री अनन्त प्रसाद गौड़) ... ...

६—मध्य भारत की भौगोलिक स्थिति एवं उसका प्रभाव (लाल भानुसिंह बाघेल) ...
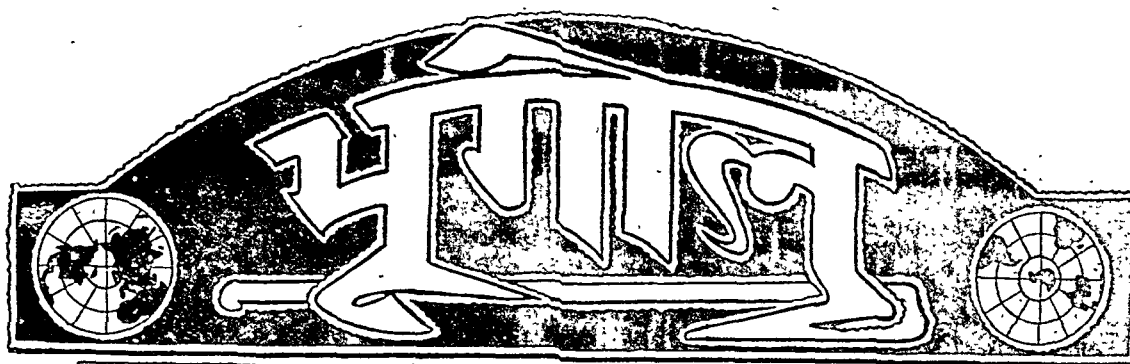
यह पत्र संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, वरार, विहार, उड़ीसा, पंजाब प्रान्त तथा ग्वालियर, जैपुर, जोधपुर और कोटा राज्य के शिक्षा-विभागों द्वारा हाई, नार्मल और मिडिल स्कूलों में प्रयोग होने के लिये स्वीकृत है।

वर्ष १४] चैत्र सं० १९९५, मार्च १९३८ [सं० ११

चीन-जापान युद्ध की प्रगति

जुलाई को जब पेपिंग (पेकिंग) के बाहर एक छोटी सी दुर्घटना हुई उस समय किसी को विश्वास न था कि चीन जापान की लड़ाई इस बड़े पैमाने पर छिड़ जायगी। उस समय उत्तरी चीन में केवल १०००० जापानी सिपाही थे। इस समय चीन का प्रदेश लेने की वात अलग रह गई। इस समय तो जापान च्यांग-काई-शेक की नई सेना को नष्ट करने और चीन की संगठित शक्ति को एक दम विध्वंस करने पर उतारू है। जापान के निम्न उद्देश्य मालूम पड़ते हैं। (१) इस समय जापान चाहता है कि कालगन और उत्तरी चीन पर उसका इस प्रकार अधिकार हो जावे कि स्थल मार्ग से चीन में रूस से सैनिक सहायता न आ सके। (२) चीन के समुद्र तट पर इस प्रकार घेरा पड़ा रहे कि चीन की सरकार की आमदनी का जो तिहाई भाग समुद्री व्यापार की चुंगी से आता है वह एक दम वन्द हो जावे और समुद्री मार्ग से चीन में गोला वारूद न आ सके। (३) दूर दूर फैले हुए प्रान्तीय नगरों पर इस प्रकार हवाई गोला वारी को जावे कि वहाँ से केन्द्रीय सरकार को सहायता न मिल सके और जनसाधारण में ऐसा आतंक विठा दिया जावे कि उनमें विरोध करने की हिम्मत ही न रहे। (४) उत्तरी पांचों प्रान्तों (होपे, चाहार, सुइयुआन, शान्सी और शांटंग) पर यथाशीघ्र अधिकार कर लिया जावे जिस से जापान को अपार लोहा और कपास मिलती रहे।

गत ६ महीनों में जापान ने बहुत कुछ सफलता भी इन उद्देश्यों में प्राप्त कर ली है। लड़ाई उत्तरी भाग में आरम्भ हुई। २७ जुलाई को जापान की एक फौजी टुकड़ी पेपिंग शहर के दरवाज़े के भीतर घिर गई और भीतरी और वाहरी दीवारों के वीच में काट डाली गई। २९ जुलाई को चीनी सिपाही वड़ी होशियारी से जापानी लाइनों में घुस आये और उन्होंने टियन्टसिन पर अचानक छापा मारा। उत्तरी चीन में यहीं पर जापानी फौज का प्रधान अड्डा था। चीनियों ने रेलवे स्टेशन छीन ली और जापानी कन्सेशन में घुस आये। उधर

पूर्वी होपे प्रान्त की जिस सेना को जापानियों ने सिखाकर तैयार किया था उसमें वगावत हो गई। उस सेना ने तुंगचाओ के जापानियों को क़त्ल कर डाला और चीनी सेना से मिल गई। दूसरी अगस्त तक इधर जापानी सेना सिर्फ ३५००० थी। फिर भी उन्होंने नानकिंग की फौज के युद्ध स्थल में पहुँचने के पहले ही स्थिति को संभाल लिया। पेपिंग और टियन्टसिन के प्रदेश पर जापानियों का अधिकार हो गया। कालगन से चीनी फौजें सुइयुआन रेल मार्ग से आकर जापानी पृष्ट भाग को खतरे में डालने लगीं। इसी समय दक्षिणी मंचूरिया में एक भयानक तूफ़ान आया। रेल की लाइन बिगड़ गई और जापानी फौज को रसद मिलने में बाधा पड़ने लगी। इस समय
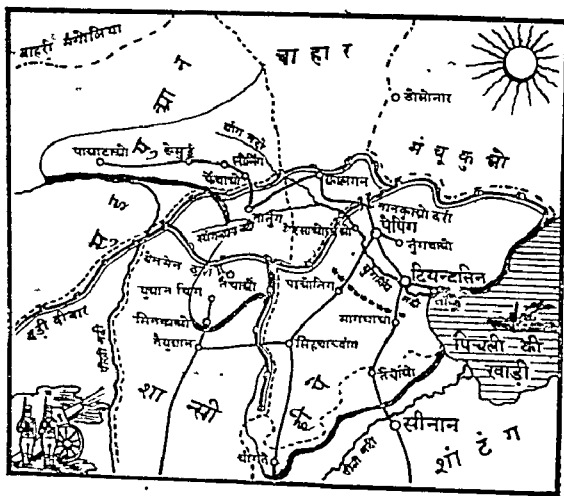
चीना सेना ने अच्छा अवसर खो दिया। उनकी संख्या बहुत अधिक थी। लेकिन वे धावा बोलने में हिचकिचाते रहे। उधर जापान ने ८ अगस्त को पेपिंग की सड़कों पर प्रदर्शन करके प्राचीन राजधानी पर अधिकार कर लिया। उत्तरी हमले को रोकने के लिये जापानियों ने पेकिंग से ३० मील उत्तर की ओर नानकाओ दर्रे के लिये ३,००० सुसज्जित (Mechanised) सिपाही भेजे। पीछे से बढ़ाकर उन्होंने वहाँ १५,००० सिपाही कर दिये। यहां से वे कालगन की ओर बढ़े। तीन सप्ताह तक समाचार पत्र जापान की इस चाल को जापानी आक्रमण शीर्षक देकर छापते रहे। वास्तव में यहाँ जापानियों को अपनी रक्षा की पड़ी थी। इस नानकाओ दर्रे के घेरने में जापानियों का यह उद्देश्य था कि चीनी लोग अपनी अधिक संख्या से लाभ न उठा सकें। मोटरों की सुविधा न होने के कारण चीनी सिपाहियों को रेल मार्ग का ही अनुसरण करना पड़ा। एक जापानी फौज मंचूकुओ के डोलोनार स्थान से बढ़ी। उत्तरी चाहार के २०० मील चपटे मार्ग में उसे चीनी फौज से कहीं भी मुठभेड़ नहीं करनी पड़ी। इस प्रकार जापानियों ने बड़ी आसानी से कालगन पर अधिकार कर लिया। दो फौजों के बीच घिर जाने पर चीनी फौज दक्षिण की ओर शान्सी के पर्वतीय प्रदेश में लौटी।

इसके बाद जापानी फौजें तीन दिशाओं में बड़ी तेजी से बढ़ीं। उनकी एक फौज बड़ी दीवार की दक्षिणी पहाड़ी के किनारे किनारे चीन की लौटती हुई सेना को होपे की प्रधान चीनी फौज में मिलने से रोकती रही। दूसरी जापानी फौज ने सोवियट से शासित बाहरी मंगोलिया की सीमा के पास से बढ़ कर सुइयुआन प्रान्त की राजधानी क्वेसुई नगर को ले लिया। वहाँ से वे जापानी सुइयुआन रेल की अन्तिम स्टेशन पाओटाओ पहुँचे। पाओटाओ पेपिंग से ५०७ मील दूर है। जापान की तीसरी फौज ने १४ सितम्बर को तातुंग जीत लिया। यहाँ से प्रधान मार्ग द्वारा दक्षिण की ओर बढ़कर शान्सी प्रान्त की राजधानी तैयुआन नगर को ले लिया। तैयुआन पहुँचने के लिये येनमेन का पहाड़ी दर्रा रास्ते में पड़ता था। यहां ३ करोड़ रुपये लगाकर चीनियों ने मजबूत क़िलेबन्दी की थी। यहीं पर चीनी फौज से टक्कर होने की आशा थी। लेकिन जापानियों ने इस प्रधान रास्ते को छोड़ कर दूसरे कुछ दुर्गम दर्रों में होकर पहाड़ों को पार कर लिया। इस प्रकार येनमेन के क़िले बेकार हो गये। चीनियों ने इन्हें छोड़ दिया। दूसरी अक्तूबर को उन पर जापानियों का अधिकार हो गया। ९ अक्तूबर को जापानी फौज ने युआनपिंग नगर ले लिया। यही उस रेल का सिरा है जो ७० मील दक्षिण की ओर तैयुआन को गई है। इस प्रदेश में जापानी फौज को पहली बार चीन के साम्यवादी नेता और प्रसिद्ध सैनिक जनरल चू ते की फौज से भिड़ना पड़ा। पहले जनरल चू ते जनरल च्यांग-काई-शेक के कट्टर दुश्मन थे। इस लड़ाई ने दोनों में

मेल करा दिया। इधर जनरल चू ते की फौजें छोटी छोटी टुकड़ियों में बँट कर और पहाड़ियों की आड़ लेकर पीछे से जापानी फौज पर हमला करती हैं, इससे इस ओर जापानी फौज का आगे बढ़ना रुक गया है।
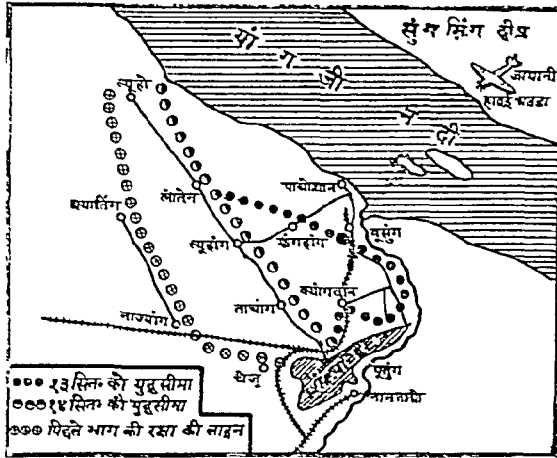
प्रधान युद्ध क्षेत्र पेपिंग-टियन्टसिन रेल के पड़ोस का है। यहाँ सितम्बर के आरम्भ तक शान्ति रही। जापानी सेना जापान से आने वाली नई सेना की राह देखती रही। मूसलाधार वर्षा ने उनको सुसज्जित सेना को वहीं रोक दिया। उनके हवाई जहाज़ ज़मीन पर ठहरे रहे। चीनियों ने पेकिङ्ग को फिर से जीतने की अधूरी कोशिश की। मेन्ताओकाओ में उनकी हार हुई। पेकिंग-हांगकाओ और टियन्टसिन नानकिंग रेल मार्गों से जापानी फौज को दक्षिण की ओर बढ़ने से रोकने के लिये चीन ने यहाँ ४ लाख सिपाही इकट्ठे किये। जापान ने यहाँ ३ लाख सिपाही इकट्ठे कर दिये। वे भागों में बढ़े। १४ सितम्बर को उन्होंने युङ्गतिङ्ग नदी पार की। जापानी फौज को दलदली रास्ते से आगे बढ़ना था। फिर भी चीनी फौजों ने अच्छा अवसर खो दिया। जापानी फौजें इस तरह बढ़ने लगीं मानो उनके रास्ते में कोई दुश्मन है ही नहीं। स्टेशनों को जीतते हुए जापानी सिपाही उस किलेबन्द लाइन के पास पहुँचे जिसको जर्मन सेना के विशेषज्ञों ने १९३५ ई० में च्यांगकाई के आदेश से बनाया था। यह लाइन होपे प्रान्त की राजधानी पाओतिंग नगर (जो पेकिंग से ८५ मील दक्षिण की ओर है) से सांगचाओ (जो टियन्टसिन से ६५ मील दूर है और नानकिंग जाने वाली सड़क का प्रधान स्टेशन है) तक चली गई है। यह लाइन क्रांकीट के पिल बाक्सों (सन्दूकों) से बनाई गई थी। यहाँ चीनी फौजें ठहर कर जापानियों का मुक़ाबिला कर सकती थीं। लेकिन २४ सितम्बर को जापानी फौज पाओतिंग के पड़ोस में पहुँच गई। दूसरे दिन छापा मार कर यह नगर उन्होंने ले लिया। इसी समय सांगचाओ भी जापानियों के हाथ लगा। इससे सारी लाइन बेकार हो गई। १० अक्तूबर को शिःक्याच्वांग जापानियों के हाथ लगा। नये ढंग के हथियारों से शुसजित न होने के कारण चीनी फौज बुरी तरह से हारी और तितर बितर हो गई। जापानी सेना ह्वांग हो (पीली नदी) के पास पहुँच गई। विदेशियों से मुठभेड़ बचाने के लिये जापानी लोग शांगटंग प्रायद्वीप में नहीं घुसे। फिर भी उन्होंने प्रायः सारा उत्तरी चीन छीन लिया। उत्तरी चीन की की २ लाख वर्ग मील जमीन और ४ करोड़ आबादी पर जापानी फौजों का शासन है।

मध्य चीन का युद्ध स्थल

९ अगस्त को दो जापानी मल्लाह शंघाई शहर के बाहर हुँग्जाओ हवाई स्टेशन के पास मार डाले गये। इससे खलबली मच गई जापानियों ने बालू के थैलों की आड़ करके जल सेना के ५००० सिपाही इकट्ठे कर लिये। चीनियों ने ३५००० सिपाही इकट्ठे किये। १३ अगस्त को बन्दूक़ की एक गोली छूटते ही लड़ाई शुरू हो गई। इसी प्रकार १९३२ में यहाँ लड़ाई छिड़ गई थी। जापानी लोग यांगजी डेल्टा में हवाई जहाज़ और जल सेना का अड्डा बनाने लगे। यहाँ से वे चीन के २७०० मील लम्बे समुद्र तट को घेर सकते थे और चीन के भीतरी भागों पर बम्ब बरसाने लगे। यहीं से उन्होंने १५० मील भीतर की ओर नानकिंग पर चढ़ाई की। जापानी लोग इस ओर युद्ध छेड़ कर शंघाई के बाहरी व्यापार को नष्ट करना चाहते थे। इसी अकेले बन्दरगाह से चीन का ५१ फीसदी समुद्री व्यापार होता था। यहीं से चीन की सरकार को सारी आमदनी का ⅓ भाग मिलता था। यहीं से वे चीन में बाहर से युद्ध सामग्री का आना

वन्द कर सकते थे। अगर वे इस ओर युद्ध न छेड़ते तो उत्तर की ओर से चीनी सेना को धीरे धीरे खदेड़ना पड़ता। युद्ध की लाइन वहुत लम्वी हो जाती। उन पर कई ओर से हमले हो सकते थे। अन्त में उनकी सेना थक जाती और च्यांगकाई शेक की सुरक्षित सेना से मुक़ाविला करना पड़ता।

पांच वर्ष पहले से चीन की सैनिक शक्ति आत्म-रक्षा के लिये वहुत वढ़ गई थी। उनकी संख्या जापानियों की अपेक्षा दसगुनी अधिक थी पर वे सुसज्जित न थे। उनमें वीरता की कमी न थी। जापानी तोपों ने वड़ी आसानी से उन्हें भून डाला। जापानी फौज को लाने वाले जहाज़ों को रोकने के लिये चीनियों ने कोई प्रयत्न नहीं किया। न उन्होंने वूसुङ्ग के पास ह्वांगपू नदी के जल मार्ग को वन्द किया। इसके वदले उन्होंने प्रदर्शन के लिये जापानी झंडे के जहाज़ पर हवाई जहाज से हमला किया। इससे अत्यन्त घने वसे हुए सेटिलमेंट के १००० मनुष्य मरे।

जब जापानी फौज उतर गई तव उन्होंने पूटुंग के किनारे पर वैटरी लगाई। लेकिन चीनी लोग एक भी जापानी जहाज को डुवा न सके। गोली की वौछार होने पर भी स्यूहो में जापानी फौज उतर गई। य... पाँच वर्ष पहले जापानी फौज उतरी थी। यहाँ ... जापानी फौज कीचड़, तालावों और नालों को ... कर के आठ मील भीतर की ओर लोतीन में पहुँची ... चीनी फौज अधिक संख्या में थी। वह राह ... ही रह गई। इस में कोई सन्देह नहीं कि चीनी ... ने इधर की लड़ाई में वड़ा साहस और धैर्य दि... लाया। लेकिन फौज सुसज्जित न थी। सेन ... में अनुभव की कमी थी। जापान की भीषण संहा... शक्ति के सामने उसे झुकना पड़ा। १३ सितम्वर क... यांगजी के किनारे और ह्वांग पू को छोड़ कर चीन... फौज भीतर की ओर लौटी। पीछे हटने में भी क्रम वरावर वना रहा। इस चाल से जापानियों ने चीन...

की ५ लाख फौज को इधर खींच लिया। उन्होंने सुंगमिंग द्वीप में हवाई अड्डा वना लिया। और पार्कर द्वीपों में कांक्रीट के पक्के क़िले वनाकर यांगज़ी का मुहाना स्थायी रूप से चीनी व्यापार के लिये वन्द कर दिया।

शंघाई में चीनी सेना ने मोर्चा लेने का स्थान बहुत सावधानी से चुना। सामने कांक्रीट के पिल-बाक्सों का घेरा था। इसकी आड़ में उन्होंने लड़ने के लिये खाइयाँ खोद ली थीं। उनकी दाहिनी ओर इन्टरनेशनल सेटिलमेन्ट होकर जापानी फौज नहीं आ सकती थी। बाईं ओर धान के गीले खेतों में होकर तोप गाड़ियों और टैंकों का लाना कठिन था। इसी से जापानी फौज को जितनी जल्द जीतने की आशा थी उससे तिगुना अधिक समय आगे बढ़ने में लगा। नानकिंग में वे दिसम्बर मास में पहुँच सके।

युद्ध की कुछ घटनायें

११ सितम्बर—जापानियों ने टियन्टसिन के दक्षिण में माचांग पर अधिकार कर लिया और शंघाई से २ मील भीतर की ओर बढ़े।

१३ सित०—जापान ने १ लाख और चीन ने ४ लाख सिपाही शंघाई के पास इकट्ठे किये। उत्तर में १,८०,००० सिपाही जापान ने और ४,००,००० चीन ने इकट्ठे किये।

१५ सित०—जापानी सेना पेपिंग से १० मील दक्षिण की ओर बढ़ आई।

१६ सित०—जापानी लोग दक्षिण में शान्सी प्रान्त में और अधिक बढ़े।

२२ सित०—जापानी हवाई जहाजों ने नानकिंग में गोले गिराये।

२३ सित०—एक सुसज्जित जापानी फौजी टोली सुइयुआन की ओर बढ़ी।

२४ सित०—पेपिंग—हानकाओ मार्ग में जापानियों को आगे बढ़ने से रोका गया।

२५ सित०—जापानियों ने ७ घंटे तक नानकिंग पर गोले बरसाये।

२७ सित०—जापानी पनडुब्बी नावों ने चीनी मछली मारने वालों की नावों को डुबाया।

२९ सित०—शंघाई पर गोले गिराकर जापानी चेपे की ओर बढ़े।

३० सित०—शंघाई की ओर जापानियों का बढ़ना रुक गया। लेकिन येनमेन दर्रे का चक्कर काट कर वे शान्सी प्रान्त में आगे बढ़े।

२ अक्तूबर—चीनियों ने शंघाई को बड़ी वीरता से बचाया।

५ अक्तू०—जापानियों ने शंघाई पर खूब गोले बरसाये लेकिन वे बहुत कम आगे बढ़ सके।

१० अक्तू०—९० मील की लम्बी लाइन में जापानियों ने दक्षिणी होपे में आक्रमण किया।

११ अक्तू०—चीनी फौज दक्षिणी होपे में पीछे हटी। शंघाई के पास हांगचाओ की खाड़ी में जापानी सेना उतरने में सफल न हो सकी।

१३ अक्तू०—मंचूरिया में खलबली। शंघाई के पड़ोस में घनघोर लड़ाई से ब्रिटेन में बेचैनी

१४ अक्तू०—चेपे में चीनी फौज ने जापानी फौज पर छापा मारने की कोशिश की। जापानियों ने सुइयान की राजधानी पर अधिकार कर लिया। शान्सी में चीनी साम्यवादी सेनापति ने जापानियों को पीछे हटाया।

१५ अक्तू०—शंघाई में लड़ाई से लगभग १६० करोड़ रुपये की क्षति हुई।

१६ अक्तू०—चीनियों ने येन मेन दर्रे पर अधिकार करके उत्तरी शान्सी में ५०,००० जापानियों को फँसा लिया

१७ अक्तू०—चीनी हवाई जहाजों ने जापानी जहाजों पर गोले बरसाये

१८ अक्तू०—शंघाई के पास १४०० चीनी सिपाही उड़ा दिये गये। जापानी होनान प्रान्त में बढ़े।

२० अक्तू०—दो जापानी फौजें होपे और चहार में घिर गईं। चीनियों ने शंघाई पर ७ हमले किये।

२१ अक्तू०—सभी ओर घमासान लड़ाई।

२२ अक्तू०—शान्सी में जापानी विजय।

२४ अक्तू०—४ दिन की लड़ाई के बाद शंघाई में जापान की विजय

२६ अक्तू०—मंचूकुओ में विद्रोह दबाने के लिये जापान ने फौजें भेजीं।

२८ अक्तू०—होपे और शंघाई में जापानी बढ़े

२९ अक्तू०—जापानी शांसी की राजधानी तैयुआन की ओर बढ़े। चीनी फौज ने हमले को रोकने के लिये ह्वांगहो नदी को पार किया।

वन्द कर सकते थे। अगर वे इस ओर युद्ध न छेड़ते तो उत्तर की ओर से चीनी सेना को धीरे धीरे खदेड़ना पड़ता। युद्ध की लाइन बहुत लम्बी हो जाती। उन पर कई ओर से हमले हो सकते थे। अन्त में उनकी सेना थक जाती और च्यांगकाई शेक की सुरक्षित सेना से मुक़ाबिला करना पड़ता।

पांच वर्ष पहले से चीन की सैनिक शक्ति आत्म-रक्षा के लिये बहुत बढ़ गई थी। उनकी संख्या जापानियों की अपेक्षा दसगुनी अधिक थी पर वे सुसज्जित न थे। उनमें बीरता की कमी न थी। जापानी तोपों ने बड़ी आसानी से उन्हें भून डाला। जापानी फौज को लाने वाले जहाजों को रोकने के लिये चीनियों ने कोई प्रयत्न नहीं किया। न उन्होंने वूसुङ्ग के पास ह्वांगपू नदी के जल मार्ग को वन्द किया। इसके वदले उन्होंने प्रदर्शन के लिये जापानी झंडे के जहाज पर हवाई जहाज से हमला किया। इससे अत्यन्त घने बसे हुए सेटिलमेंट के १००० मनुष्य मरे।

जब जापानी फौज उतर गई तब उन्होंने पू टुंग के किनारे पर बैटरी लगाई। लेकिन चीनी लोग एक भी जापानी जहाज को डुबा न सके। गोली की बौछार होने पर भी ल्यूहो में जापानी फौज उतर गई। यहीं पाँच वर्ष पहले जापानी फौज उतरी थी। यहाँ से जापानी फौज कीचड़, तालावों और नालों को पार कर के आठ मील भीतर की ओर लोतीन में पहुँची। चीनी फौज अधिक संख्या में थी। वह राह देखती ही रह गई। इस में कोई सन्देह नहीं कि चीनी फौज ने इधर की लड़ाई में बड़ा साहस और धैर्य दिखलाया। लेकिन फौज सुसज्जित न थी। सेनानायकों में अनुभव की कमी थी। जापान की भीषण संहार शक्ति के सामने उसे झुकना पड़ा। १३ सितम्बर को यांगजी के किनारे और ह्वांग पू को छोड़ कर चीनी फौज भीतर की ओर लौटी। पीछे हटने में भी क्रम बराबर बना रहा। इस चाल से जापानियों ने चीन
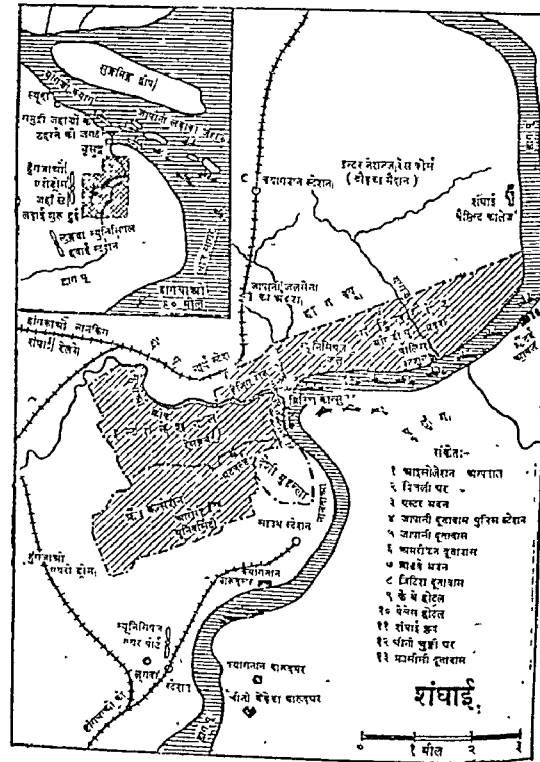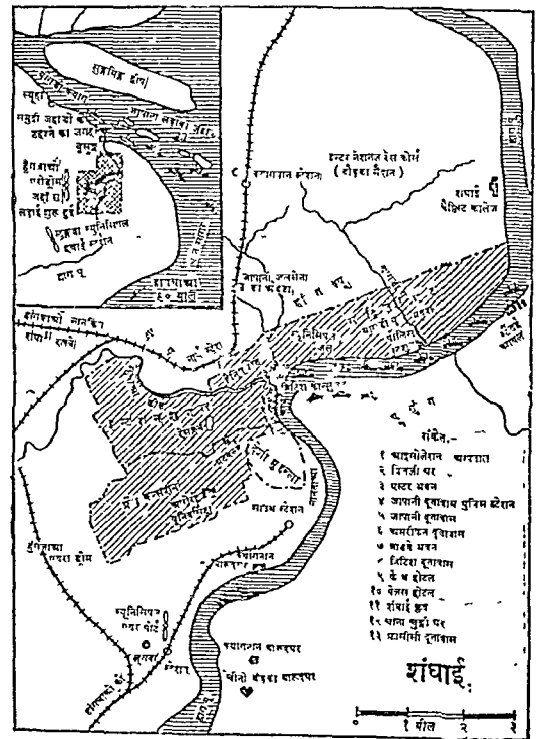
की ५ लाख फौज को इधर खींच लिया। उन्होंने सुंगमिंग द्वीप में हवाई अड्डा बना लिया। और पार्कर द्वीपों में कांक्रीट के पक्के क़िले बनाकर यांगजी का मुहाना स्थायी रूप से चीनी व्यापार के लिये वन्द कर दिया।

शंघाई में चीनी सेना ने मोर्चा लेने का स्थान बहुत सावधानी से चुना। सामने कांक्रीट के पिल-बाक्सों का घेरा था। इसकी आड़ में उन्होंने लड़ने के लिये खाइयाँ खोद ली थीं। उनकी दाहिनी ओर इन्टरनेशनल सेटिलमेन्ट होकर जापानी फौज नहीं आ सकती थी। बाईं ओर धान के गीले खेतों में होकर तोप गाड़ियों और टैंकों का लाना कठिन था। इसी से जापानी फौज को जितनी जल्द जीतने की आशा थी उससे तिगुना अधिक समय आगे बढ़ने में लगा। नानकिंग में वे दिसम्बर मास में पहुँच सके।

युद्ध की कुछ घटनायें

११ सितम्बर—जापानियों ने टियन्टसिन के दक्षिण में माचांग पर अधिकार कर लिया और शंघाई से २ मील भीतर की ओर बढ़े।

१३ सित०—जापान ने १ लाख और चीन ने ४ लाख सिपाही शंघाई के पास इकट्ठे किये। उत्तर में १,८०,००० सिपाही जापान ने और ४,००,००० चीन ने इकट्ठे किये।

१५ सित०—जापानी सेना पेपिंग से १० मील दक्षिण की ओर बढ़ आई।

१६ सित०—जापानी लोग दक्षिण में शान्सी प्रान्त में और अधिक बढ़े।

२२ सित०—जापानी हवाई जहाजों ने नानकिंग में गोले गिराये।

२३ सित०—एक सुसज्जित जापानी फौजी टोली सुइयुआन की ओर बढ़ी।

२४ सित०—पेपिंग—हानकाओ मार्ग में जापानियों को आगे बढ़ने से रोका गया।

२५ सित०—जापानियों ने ७ घंटे तक नानकिंग पर गोले बरसाये।

२७ सित०—जापानी पनडुब्बी नावों ने चीनी मछली मारने वालों की नावों को डुबाया।

२९ सित०—शंघाई पर गोले गिराकर जापानी चेपे की ओर बढ़े।

३० सित०—शंघाई की ओर जापानियों का बढ़ना रुक गया। लेकिन येनमेन दर्रे का चक्कर काट कर वे शान्सी प्रान्त में आगे बढ़े।

२ अक्तूबर—चीनियों ने शंघाई को बड़ी वीरता से बचाया।

५ अक्तू०—जापानियों ने शंघाई पर खूब गोले बरसाये लेकिन वे बहुत कम आगे बढ़ सके।

१० अक्तू०—९० मील की लम्बी लाइन में जापानियों ने दक्षिणी होपे में आक्रमण किया।

११ अक्तू०—चीनी फौज दक्षिणी होपे में पीछे हटी। शंघाई के पास हांगचाओ की खाड़ी में जापानी सेना उतरने में सफल न हो सकी।

१३ अक्तू०—मंचूरिया में खलबली। शंघाई के पड़ोस में घनघोर लड़ाई से ब्रिटेन में बैचैनी

१४ अक्तू०—चेपे में चीनी फौज ने जापानी फौज पर छापा मारने की कोशिश की। जापानियों ने सुइयान की राजधानी पर अधिकार कर लिया। शान्सी में चीनी साम्यवादी सेनापति ने जापानियों को पीछे हटाया।

१५ अक्तू०—शंघाई में लड़ाई से लगभग १६० करोड़ रुपये की क्षति हुई।

१६ अक्तू०—चीनियों ने येन मेन दर्रे पर अधिकार करके उत्तरी शान्सी में ५०,००० जापानियों को फँसा लिया

१७ अक्तू०—चीनी हवाई जहाजों ने जापानी जहाजों पर गोले बरसाये

१८ अक्तू०—शंघाई के पास १४०० चीनी सिपाही उड़ा दिये गये। जापानी होनान प्रान्त में बढ़े।

२० अक्तू०—दो जापानी फौजें होपे और चहार में घिर गईं। चीनियों ने शंघाई पर ७ हमले किये।

२१ अक्तू०—सभी ओर घमासान लड़ाई।

२२ अक्तू०—शान्सी में जापानी विजय।

२४ अक्तू०—४ दिन की लड़ाई के बाद शंघाई में जापान की विजय

२६ अक्तू०—मंचूकुओ में विद्रोह दबाने के लिये जापान ने फौजें भेजीं।

२८ अक्तू०—होपे और शंघाई में जापानी बढ़े

२९ अक्तू०—जापानी शांसी की राजधानी तैयुआन की ओर बढ़े। चीनी फौज ने हमले को रोकने के लिये ह्वांगहो नदी को पार किया।

३० अक्तू०—जापानियों ने इन्टरनेशनल सेटिलमेंट और फ्रेंच कन्सेशन पर गोले गिराये।

१ नवम्बर—जापानी फौज ने इन्टर नेशनल सेटिलमेंट के पश्चिम में सूचाओ क्रीक को बल पूर्वक पार किया।

३ नव०—चीनी शंघाई से पीछे हटे।

४ नव०—शान्सी में जापान की विजय

५ नव०—जापान ने साइबेरिया की सीमा के पास फौजें इकट्ठी कीं। तैयुआनफू के पास घमासान लड़ाई।

९ नव०—विकराल घेरे के बाद जापानियों ने तैयुआनफू पर अधिकार कर लिया।*

इस लड़ाई में चीन की परवशता स्पष्ट ही है। जापान का लड़ाई का सारा सामान जापान में ही बनता है। इन कारखानों पर फौजी नियन्त्रण है। जापानी जहाज़ इसे ढोकर चीन में अपनी फौज को देते रहते हैं। चीन को फौजी सामान के लिये दूसरे देशों का मुँह ताकना पड़ता है। उसके तट पर जापानी बेड़े का घेरा पड़ा हुआ है। हांगकांग, क्वांगचाओवा और मेकाओ के बन्दरगाह जो चीन के और विदेशियों के अधिकार में हैं वहाँ से फौजी सामान का मंगाना विदेशियों की इच्छा पर निर्भर है। ये बन्दरगाह प्रधान युद्धस्थल से बहुत दूर हैं। इधर की एक मात्र केन्टन-हांकाओ रेलवे लाइन पर फौज और घायलों को ढोने की बड़ी भीड़ रहती है। फ्रांसीसी टांगकिंग और रूमी प्रदेश से सहायता पहुँचाने वाले मार्ग भी दुर्गम हैं। चीन की प्रधान शक्ति यहाँ की भारी जनसंख्या है। चीन में लगभग १७ लाख फौज है। इन में केवल डेढ़ दो लाख सिपाही नये ढंग से सुसज्जित हैं जिन्हें जर्मनों ने सैनिक शिक्षा दी है। अधिकतर सेना अलग अलग प्रान्तीय शासकों के हाथ में है। उसे नये ढंग की शिक्षा नहीं मिली है। चीन और जापान की तुलनात्मक जनसंख्या इस प्रकार है:—

कोरिया, फारमूसा, साखालिन और लीग से मिले हुए द्वीपों को मिलाकर जापानी साम्राज्य की जन संख्या लगभग १० करोड़ है। मंचूरिया और उत्तरी चीन जापान के हाथ में आ जाने से जापान के अधिकार में लगभग १७ करोड़ जन संख्या हो गई है। स्वतन्त्र चीन की जनसंख्या लगभग ३० करोड़ रह गई है। इस में कुछ दूर वाले प्रान्त हैं जहां केवल नाम मात्र को चीन का शासन है। फिर भी चीन में नई जागृति है। जैसे जैसे जापानी सेना चीन के दुर्गम भागों में प्रवेश करेगी वैसे वैसे नये ढंग के हथियार व्यर्थ हो जायंगे। यदि विदेशों से चीन को सहायता न भी मिली तो भी चीन वाले अन्त तक लड़ने को तैयार है।

*इसके आगे की घटनाएँ अगले अंक मे दी जायगी।

चीन की प्राचीन राजधानियाँ

प्राचीन चीन की घनी आवादी ह्वांग हो की सहायक वी हो और फेनहो (नदियों) की घाटियों, पीहो के विस्तृत मैदान, निचली ह्वांगहो और मध्ययांगटिसीक्यांग और हान नदी के संगम और तुंगतिंग झील के पास बसी हुई थी। वी नदी चीन के सबसे अधिक पश्चिमी प्रान्त (कान्सू) से निकलती है और तुङ्कान के पास ह्वांग हो नदी से मिलती है। इसी वी नदी की घाटी का प्राचीन चीन की सभ्यता से घनिष्ट सम्बन्ध है। शान्सी प्रान्त में फेनहो को उपजाऊ घाटी में तीन प्राचीन सम्राटों की राजधानियाँ बनीं। आज कल चीन के वर्तमान प्रान्त शेन्सी में वी हो की घाटी और शान्सी में फेनहो की घाटी बड़ी उपजाऊ हैं। यहाँ हवा ने अपने साथ बारीक मिट्टी ला ला कर उपजाऊ लोयस ज़मीन बनाई है। काफी पानी बरस जाने से यहाँ खूब उपज होती है। आरम्भ में यहाँ की बारीक मिट्टी में पेड़ नहीं उगते थे। इसलिये किसानों को खेत साफ करने में जङ्गल काटने की जरूरत ही नहीं पड़ी। ह्वांग हो नदी के निचले भाग की लोयस मिट्टी भी बड़ी उपजाऊ है। ईसा से ११०० वर्ष पूर्व चीनी लोगों ने अपनी राजधानियाँ होनान प्रान्त के इसी उपजाऊ भाग में बनाईं। यहां शत्रु से रक्षा या जलमार्ग की अधिक सुविधा न थी। यहां का सबसे बड़ा भाग ह्वांगहो के डेल्टा और बीच वाले मार्ग से बना है। वीहो और फेनहो ने अपनी छोटी छोटी घाटियां इसी में जोड़ दी हैं। ह्वांगहो के डेल्टा के सिरे पर वर्तमान कैफांग शहर के पास चीन की राजधानी बनी। लेकिन ह्वांगहो नदी अपना मार्ग अक्सर बदलती रही। उसी के अनुसार राजधानी की स्थिति भी बदलती रही। डेल्टा के सिरे पर उत्तर-पूर्व, पूर्व और दक्षिण-पूर्व के जलमार्ग मिलते हैं। डेल्टा के ऊपर बहुत दूर तक ह्वांगहो में नाव चल सकती थीं। डेल्टा में होकर स्थल मार्ग का निकालना कठिन था। लेकिन डेल्टा से पश्चिम की ओर सड़क का निकालना आसान है। पेकिंग से ह्वांगकाओ जाने वाली रेलवे ने इसी मार्ग का अनुसरण किया है।

चाओ वंश के समय में राजधानी की स्थिति फिर बदल गई। चाओ वंश के संस्थापक वूवांग ने वी घाटी में सिनानफू के पास अपनी राजधानी बनाई थी। इस प्रकार कैफांग के पड़ोस (डेल्टा) से तुंगक्वान कन्दरा के पास शेन्सी (दर्रे के पश्चिम) प्रान्त के सिनानफू में राजधानी आ गई। फिर भी वूवांग यी और लो नदियों के संगम के पास होनान प्रान्त में होनानफू या लोयांग नगर में राजधानी बनाने की धुन में लगा रहा। ह्वांगहो डेल्टा की लगातार बाढ़ ने उसे इस नये और ५०० फुट ऊँचे स्थान में राजधानी बनाने के लिये बाध्य किया। तुंग क्वांग दर्रे के पास लोयांग दर्रे की स्थिति बड़े मार्के की है। यहाँ कई रास्ते भी मिलते हैं। दक्षिण की ओर यहाँ से निचले मैदान की ओर रास्ता आता है। उत्तर की ओर जाने वाले मार्ग तैहान शान को पार करके शान्सी प्रान्त में पहुँचते हैं। मार्गों की सुविधा होने से लोयांग शहर ९ सदियों (ईसा से पूर्व ११२५ से २२० तक) चीन की राजधानी बना रहा। चीनी लोगों ने इस समय दक्षिण-पश्चिम और पश्चिम के बहुत बड़े प्रदेश को जीत कर अपने साम्राज्य को बढ़ाया और अपनी सभ्यता फैलाई। एक बार चीनी साम्राज्य कास्पियन सागर तक पहुँच गया। ईसा से पूर्व २०६ वर्ष से २५ ईस्वी तक चीन की राजधानी कभी लोयांग और कभी सिनानफू रही।

लगभग २००० वर्ष से मध्य याँगटिसीक्यांग चीन साम्राज्य में शामिल हैं। यहीं सुंग वंश के राजाओं ने पहले नानकिंग में फिर मुहाने के सिरे पर हाङ्चाओ में अपनी राजधानी बनाई। हाङ्चाओ नगर याँगटिसी क्यांग के मुहाने पर उस स्थान पर स्थिति है जहां ग्रांड (विशाल) नहर का दक्षिणी सिरा है। यहां से उत्तरी सिरे पर स्थित पेकिंग नगर को नावें जाया करती हैं। इसका पड़ोस उपजाऊ है। रेशम यहाँ की प्रधान उपज है। यहाँ अत्यन्त घनी आवादी है और नहरों का जाल फैला हुआ है। मार्को पोलो ने हांग-चाओ को अपने समय का अत्यन्त मनोहर शहर बताया है। एक समय था जब चीन के सम्राट प्रधान चीन चीनी तुर्किस्तान (सिनक्यांग) के अतिरिक्त योरुप और एशिया के विशाल मैदान पर राज्य करते थे।

प्रशान्त महासागर से नीस्टर नदी तक उनका राज्य फैला हुआ था। नीस्टर नदी से खिंगन पर्वत तक ४००० मील खुला हुआ मैदान है। इस मैदान के उत्तर में वन और दक्षिण में पर्वत श्रेणियां हैं। यहीं घोड़े पालने वाले लोग रहते थे जो घोड़ी दुहने वाले कहलाते थे। सिंगन पर्वत के पूर्व में फिर वन शुरू हो जाता है। यही तारतारी कहलाती थी जो मंचूरिया का अंग है। स्टेपी मैदान और मंगोलिया के घुड़ सवार लोग चीनी सम्राटों के रिसाले में भरती होते थे। अकेले मंगोलिया का क्षेत्रफल १३ लाख वर्ग मील है जो अरब देश से बड़ा और हिन्दुस्तान से कुछ छोटा है। मंगोलिया चार प्राकृतिक प्रदेशों में बंटा हुआ है। चीन से मिले हुए दक्षिणी भाग में चरागाह है। बीच वाला भाग रेगिस्तान है। इस से ऊपर उपजाऊ भाग हैं जहां खेती हो सकती है। अन्त में उत्तरी भाग जंगल से घिरा हुआ है। मंगोलिया में ही चिंगेज, कुबलई और दूसरे शक्ति शाली सम्राटों ने कराकोरम स्थान पर (सारे साम्राज्य की) अपनी राजधानी बनाई थी। उरगा नगर मे उनकी प्रान्तीय राजधानी थी। उरगा में साल भर में नौ इंच पानी बरस जाता है। छोटी छोटी नदियों की घाटियों में जंगल नहीं उग पाता है। घास काफी अच्छी होती है। इन्हीं छोटी नदियों में एक नदी ओरचीन है। इसी नदी के किनारे चिंगेज ने अपनी राजधानी करा कोरम नगर में बसाई। यहां कई और छोटी छोटी घाटियों के चरागाह मिलते हैं। यहीं चिंगेज ने उत्तरी चीन, सर दरिया और ऊपरी सिन्ध नदी तक हमले किये। पहले उसने कान्सू और शेंसी के ह्या राज्य को जीता। फिर उसने मंचूरिया (उत्तरी पूर्वी चीन) के कीन राज्य को जीता। अन्त में उसने चीन के सुंग राजाओं को जीता जो यांग्टिसी की घाटी और दक्षिण के प्रदेश में राज्य करते थे। कुबलई खां ने १२६४ में पेपिंग नगर में राजधानी बनाई। १२६७ ईस्वी तक तारतार लोगों ने नये महल बना दिये। यहीं से तारतार लोग सारे चीन पर १३६८ ई० तक राज्य करते रहे। पेकिंग नगर के पास एक ओर मैदान और दूसरी ओर लगभग ४००० फुट ऊँचा मंगोलिया का पठार है। पठार और मैदान के बीच में स्थित पहाड़ की चौड़ाई केवल १०० मील है। पठार के ऊपर पहाड़ की चोटियों की ऊँचाई लगभग २००० हजार फुट है। हून हो या वाहो नदी पठार और मैदान के बीच में सीधा मार्ग बनाती है। कालगन के पास नदी अपना पानी इकट्ठा कर लेती है फिर वह पश्चिम की ओर बह कर पेकिंग नगर के पास पहुँचती है। यही नानकाओ दर्रे में होकर एक रेलवे लाइन कालगन से पेकिंग को आती है। रेल की लम्बाई १२० मील और दर्रे की उंचाई २००० फुट है। आगे तंग मैदान की ओर केवल एक दरवाज़ा शान हाईक्वान (पहाड़ और समुद्र के बीच का दरवाज़ा) है। बड़ी दीवार इस को बन्द कर देती है। इसी तटीय मार्ग से जाने वाली एक रेलवे चीन को कोरिया से और मंचूरिया को साइबेरिया से जोड़ती है।

लगभग ग्यारहवीं सदी में मांचू लोगों ने मुकडन में राजधानी बनाई। यह नगर पेकिंग से ३४० मील दूर है। मंचूरिया में मंगोलिया से कहीं अधिक पानी बरसता है। यहां के लोग घोड़े पालने के बदले खेती करते हैं। जंगल में शिकार करने की सुविधा है। आरम्भ के बादशाह पक्के शिकारी थे।

कैन्टन

समस्त चीन के विस्तृत २००० मील लम्बे तट पर कैन्टन नगर भी अपनी निराली शोभा रखता है। १८ वीं शताब्दी के पश्चात् समस्त चीन में एक प्रकार से उन्नति की भावना जागृत हो गई है। इस देश की उन्नति इतनी जल्दी होते हुए देख कर आश्चर्य हुए विना नहीं रहता। यहाँ सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक......आदि सभी क्षेत्रों में प्रगतिशील उन्नति हो रही है। वड़ी २ धार्मिक संस्थाएँ भी वदल कर पाठशालाएँ वना दी गई हैं। हम यह भी नहीं कह सकते हैं कि सभी प्राचीन वातें वदल दी गई हैं। अव भी सड़क पर लोग साँप का पका हुआ गोश्त वेचते हुए देखे जाते हैं। अव भी लड़के और लड़कियां क्षीण प्रकाश वाली कोठरियों में वैठे सिलाई और नक्काशी का काम करते और छोटे वच्चे टिमटिमाते हुए दीपकों के पास वैठे अपने पुराने और ढीले ढाले करघों पर काम करते हुए देखे जाते हैं।

कैन्टन अपनी कला-कौशल के लिये प्रसिद्ध रहा है और अव भी है। भारतवर्ष के काश्मीरियों की तरह ये लोग भी वैठे वैठे जेड पत्थर तथा हाथी-दाँत का वारीक काम करते हैं। महीनों तक लगातार काम करते रहने पर वड़ी कठिनाई से ये लोग जेड पत्थर की चूड़ियाँ तथा अन्य वस्तुएँ वनाते हैं। अपनी मेहनत और वारीकी के ही कारण यहाँ के लोगों की वनाई हुई चीजें संसार में ख्याति प्राप्त कर चुकी हैं। हाथ के वने हुए पुराने और भोंड़े औजारों से तैयार की हुई हाथी-दाँत की चीजें संसार के अन्य भागों में वनी हुई हाथी-दाँत की चीजें से अपना पूरा टक्कर रखती हैं।

चीन की प्रसिद्ध वस्तु "चीनी मिट्टी" के वर्तन भी यहीं वनते हैं। शहर से दूर कुम्हार लोग, वैठे हुए मिट्टी के प्याले और तश्तरियाँ वनाते हुए मिलते हैं। संसार के समस्त पोर्सलीन के वने हुए वर्तनों के व्यापार का लगभग ४० प्रतिशत यहीं होता है।

कैन्टन में सव से अनोखी वात है लोगों का नावों पर रहना। इन्हीं नावों पर कितने ही वच्चे पैदा होते, पलते और वड़े होते हैं और वूढ़े होकर मर भी जाते हैं। घरों में रहना शायद ये जान भी न पाते होंगे। नावों पर वसे हुए लोगों की आवादी लगभग १५०००० है जो किसी साधारण नगर की जन संख्या से किसी कदर कम नहीं है। पहले नावों में वसने वालों की आवादी और भी अधिक थी पर कभी कभी आने वाले भयंकर तूफानों से इनकी आवादी घटती रहती है। ये लोग अपने वच्चों तथा पालतू-जानवरों आदि को भी लम्वे लम्वे रस्सों से वाँधकर रखते हैं जिससे वे अपने छोटे छोटे डेकों पर खेलते हुए पानी में न गिर जाँय। नावों पर ही इनके रोज की आवश्यक चीजों के वेचने वाले दूकानदार भी फिरा करते हैं। जीवन की प्रायः प्रत्येक आवश्यक वस्तु इन्हें नावों पर ही उपलव्ध हो जाती है।

वन्दरगाह से दूर वसे हुए गावों तक अव अच्छी सड़कों के वन जाने से पुरानी गाड़ियों के वजाय अच्छी मोटर वसें भी चलने लग गई हैं। और अव सिउचो से लेकर चांगशा तक (२८० मील) रेल वन गई है। जो कि सन् १९०३ में अमेरिकन इन्जीनियरों द्वारा आरम्भ की गई थी। और दो वर्ष तक लगातार उन्नति के वाद यह रेलवे हांकांग से लेकर, साइवेरिया होते हुये, पेरिस तक को मिला देगी। इसकी पूरी लम्वाई लगभग ९००० मील होगी और तमाम सफर १६ दिन में पूरा हो सकेगा। कैन्टन चीन के प्रमुख हवाई अड्डों में से भी है।

× × ×

हांगकांग

सिंगापुर की तरह हांगकांग भी अव चीन के सामुद्रिक व्यापार का एक प्रमुख केन्द्र वन गया है। कुछ वर्ष पहले यह स्थान विल्कुल निर्जन था। कुछ मछुए और समुद्री डाकुओं को छोड़कर यहां पर कोई रहता भी न था। किसी दिन हांगकांग वढ़कर इतना महत्व पूर्ण हो जायगा इसकी कोई आशा भी

नहीं रखता था। अब समुद्रतट पर ऊँचे ऊँचे मकान, होटल, यूनिवर्सिटी, जहाज बनाने के डाक, सीमेन्ट और शक्कर की मिलें तथा बड़े बड़े व्यापारी केन्द्र बन गये हैं। यहाँ से प्रतिवर्ष लगभग ४०,०००,००० टन माल करीब ५०,००० जहाजों में भरकर आता और जाता है। यहाँ पर कभी कभी बड़े भयंकर तूफान आया करते हैं। इन तूफानों में वायु की गति कभी कभी १२० से १२५ मील प्रति घंटे की रहती है। फलस्वरूप किनारे पर खड़े हुये जहाज तक उलट जाया करते हैं। अब इन तूफानों से बचने के लिये स्थान स्थान पर सिगनल लग गए हैं जो पहले से ही जहाजों को ऐसे तूफानों की सूचना दे दिया करते हैं।

× × ×

एमाय (Amoy)

उत्तरी चीन में चाय के लिये सुप्रसिद्ध एमाय नगर स्थित है जो किसी समय में अपनी गंदगी तथा ध्वंसावस्था के लिये प्रसिद्ध था। पिछले कुछ वर्षों से यह नगर पर्याप्त उन्नति कर रहा है। यहां पुरानी और तंग गलियों को काटकर चौड़ी और अच्छी सड़कें बना दी गई हैं। औरत और मर्द पहाड़ों की चट्टानों को काटकर जगह निकाल रहे हैं। हाल में वहां समस्त दक्षिण चीन का सब से सुन्दर पार्क निर्मित किया गया है। यहां के लोगों का कदाचित् यह भी विचार है कि वे इसे हांकांग से भी अच्छा नगर बना सकेंगे। एक प्रश्न यह भी उठ सकता है कि इन सब कामों के लिये रुपया आता कहां से है? अनुमानतः यहां के निवासी फिलीपाइन, मलाया और उत्तरी भारतवर्ष आदि देशों से धन कमा कर प्रतिवर्ष लगभग २००,०००,००० इन्हीं कामों में व्यय होने के लिये भेजते हैं। उदारता की कितनी बड़ी मिसाल है।

पूर्वी बंगाल का एक सुन्दर स्थान

(श्री सौदामिनी गुप्त)

चिटगाँव पूर्वी बंगाल में एक प्रसिद्ध बन्दरगाह है। उसके दक्षिण में "काक्स बाज़ार" एक सब डिवीज़न है। यह समुद्र के किनारे बसा हुआ है। चिटगाँव से यह समुद्र के रास्ते से लगभग अट्ठासी मील दूर है। स्टीमर द्वारा वहाँ से आना होता है। एक सप्ताह में चार बार स्टीमर चिटगाँव जाता है और उतनी ही बार वहां से आता है।

काक्स बाज़ार का नाम "लेफ्टिनेन्ट काक्स" के नाम से पड़ा है। 'अकयाब' (Akyab) में जब वहाँ के कुछ निवासियों पर बागी होने का सन्देह किया गया, और जब ब्रह्मा के बादशाह ने उन पर जोर डालना आरम्भ किया तो वे वहां से भाग कर 'ब्रिटिश गवर्नमेन्ट' की शरण में आये, और "लेफ्टिनेन्ट काक्स" ने उन्हें यहां बसा लिया। तभी से इस
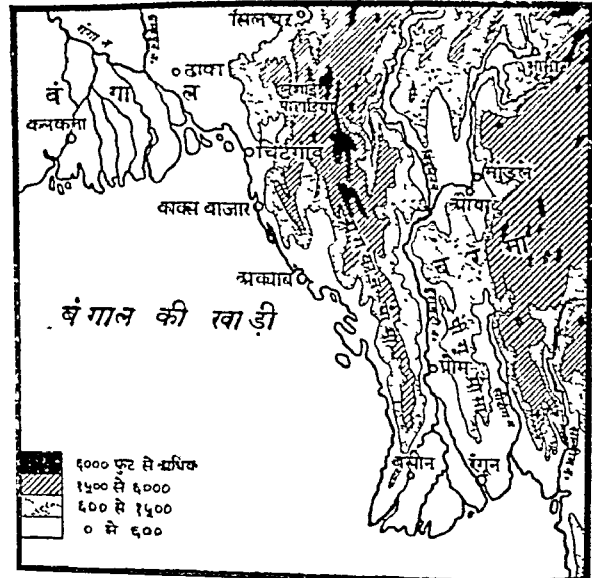
काक्स बाज़ार और समीपवर्ती प्रदेश

स्थान का नाम 'Cox's Bazar' (काक्स बाजार) पड़ गया। लेफ्टिनेन्ट काक्स का देहान्त १७९८ ई० में हुआ। खास 'काक्स बाजार' में लगभग दो तिहाई ब्रह्मा के लोग हैं। ये चार पुश्त से चले आ रहे हैं। पूरे सब डिवीजन में तो ९० फ़ी सदी बंगाली मुसलमान हैं।

यह स्थान बड़ा रमणीक है। चारों ओर ऊँची नीची पहाड़ियां सघन हरे जंगलों से ढकी हैं। उनमें निर्मल जल के झरने भी अपनी शोभा दिखाते हैं। ये पहाड़ियाँ उत्तर से दक्षिण को जाती हैं, और
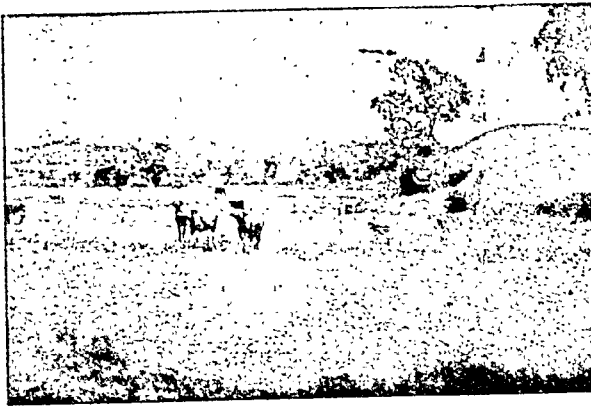
पहाड़ी दृश्य

इनकी लम्बी चौड़ी श्रेणी काक्स बाजार को ब्रह्मा से अलग करती हैं।

इन पहाड़ियों से बहुत सी नदियाँ निकलती हैं जो अधिक तर पश्चिम को बहती हैं। दो नदियाँ दक्षिण को भी बहती हैं। नदियों का तो यहाँ जाल सा बिछा है। विशेष कर वर्षा ऋतु में अगणित नदी नाले बहने लगते हैं। पहाड़ी स्थान होने के कारण उनका वेग बहुत तेज़ होता है। जब तक वर्षा होती है वे भरे रहते हैं, किन्तु वर्षा बन्द होने पर वे फिर सूखने लगते हैं। यदि कोई मनुष्य बहती नदी में गिर जाय तो उसका पता भी न चले।

बरसाती नालों पर जो बड़ी तेजी से बहते हैं एक या दो बाँस रख कर पुल बनाया जाता है। अक्सर तो हाथों के लिये पकड़ने को भी कुछ नहीं होता है। नीचे वेगवती धारा बह रही है और ऊपर एक दो बाँस पर बिना किसी सहारे के जाना बड़ा भयानक मालूम होता है, किन्तु यहाँ के मनुष्य उस पर बेधड़क चले जाते हैं। बच्चे तक नहीं डरते।

यहाँ की नदियों में एक बड़ी मजेदार बात यह है कि उनका पानी दिन में घटता बढ़ता रहता है। इसका कारण समुद्र का 'ज्वार-भाटा' है। इसका असर नदियों पर पड़ता है। यहाँ का आना जाना
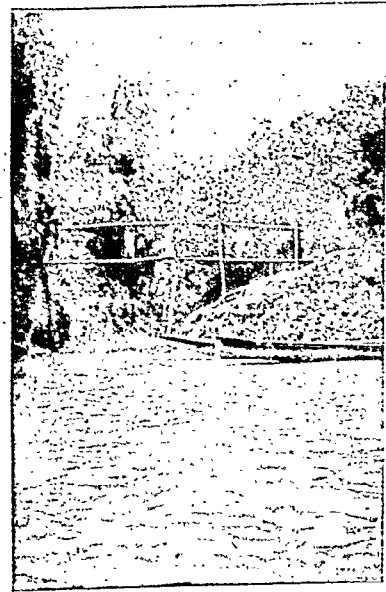
जङ्गल में बाँस का एक पुल। नीचे वेगवती धारा बह रही है।

नदियों और समुद्र के 'ज्वार-भाटे' पर बहुत निर्भर है। नाव वाले ज्वार के समय नदी में ऊपर की ओर सरलता से चले जाते हैं। और 'भाटा' के साथ ऊपर से नीचे की तरफ़ आते हैं। इससे समय और परिश्रम दोनों की बचत होती है।

गंभीर समुद्र अपने में मस्त है। संसार में चाहे कुछ ही हुआ करे उसे तो अपने ज्वार भाटे से, अपनी छोटी बड़ी लहरों से, अपनी दहाड़ती हुई आवाज़ से और अपने रात दिन के परिश्रम से मतलब है। उसमें एक प्रकार की ध्वनि सदा होती रहती है।

कारण यह है कि असंख्य लहरें आ आ कर एक दूसरे पर कुछ शब्द के साथ गिरती और

टूटती हैं जिन से यह ध्वनि उत्पन्न होती है। कभी कभी जब अन्धेरी रात में सन्नाटा छाया रहता है तो यह आवाज़ अपना चमत्कार दिखाती है। उस समय मालूम होता कि संसार में कोई बड़ी शक्ति अब भी चैतन्य है जब कि वह सुप्त अवस्था में है। समुद्र के गहरे पेट में मालूम नहीं क्या क्या छिपा हुआ है। उसके किनारे बड़ी सुन्दर सुन्दर सीपियाँ और शंख मिलते हैं।

समुद्र-स्नान स्वास्थ्य के लिये बहुत उपयोगी है। उसके किनारे कई लाल टीन के घर हैं जिनमें जाड़े में परदेशी आकर ठहरते हैं। कुछ तो स्वास्थ्य लाभ के लिये और कुछ लोग छुट्टी बिताने के लिये।

कई प्रकार की मछलियाँ भी समुद्र में पाई जाती हैं। 'स्टार फ़िश' (Star fish) और जेली फ़िश तो किनारे पर आ जाती हैं। समुद्र में दूर जाने पर बहुत बड़ी बड़ी और अधिक दाम वाली मछलियाँ मिलती हैं।
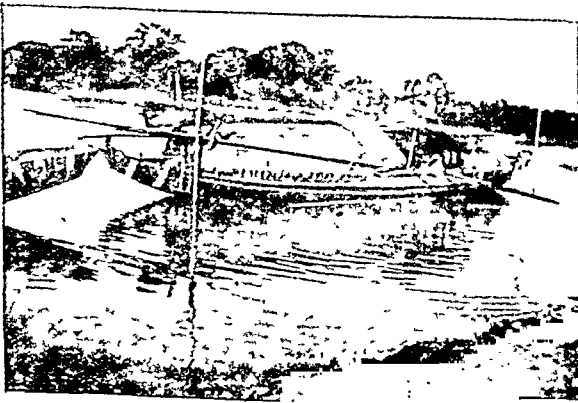
३—मछली पकड़ने की बड़ी नाव। जाड़े के दिनों में यह समुद्र में दूर तक चली जाती है।

इस स्थान में वर्षा अधिक होने के कारण जंगल बहुत हैं। ये बड़े घने हैं। इनमें बाँस, गरजन (खूब लम्बा और मोटा पेड़, जिसमें केवल एक तना होता है शाखायें नहीं होती हैं) साल इत्यादि बहुतायत से होते हैं। बहुमूल्य लट्ठे भी पाये जाते हैं, जो नाव बनाने, घर में खंभे और छत बनाने के काम में आते हैं। बेंत भी खूब होता है, जिससे बहुत सी वस्तुयें तैयार की जाती हैं। झाऊ की भी अधिकता है किन्तु यहां उसका उपयोग कम होता है।

इन घने जंगलों में बड़े भयानक जानवर रहते हैं। जंगली हाथी झुंड के झुंड इधर उधर घूमा करते हैं। जंगलों के बीच से रास्ते भी बनाये गये हैं जो दूसरे थानों (Police Stations) को जाते हैं। इन रास्तों से बाजार हाट के दिन लोग आते जाते हैं। रास्ता अधिक चौड़ा नहीं है और दोनों ओर घने जंगलों से घिरा है। अचानक हाथी निकल कर कभी कभी इन पर धावा करते हैं। कभी कभी जानें भी चली जाती हैं, ऐसी घटनायें आये दिन सुनने में आती हैं। हाथी धान के खेतों को भी हानि पहुँचाते हैं। जंगल और पहाड़ों के समीप जब धान पकने लगता है, तो ये सैकड़ों की संख्या में उतर कर आते हैं और धान खाते हैं। जंगली हाथी मारने का प्रबन्ध किया गया है। शेर, चीते, जंगली सुअर, भैंसे, हिरन और बारहसिंहे भी हैं। शेर अधिक हैं, वे 'Royal Bengal Tiger' के नाम से प्रसिद्ध हैं। ये अक्सर जंगलों से मैदान में आ जाते हैं और गाँव में उत्पात मचाते हैं। अभी हाल में दो शेर गाँव में आ गये थे उन्होंने आठ आदमियों को घायल किया, और दो को मार डाला। बाद में वे शेर मार डाले गये।

यहाँ के जंगल रक्षित (Reserve) हैं, बिना आज्ञा के कोई लकड़ी आदि नहीं ले सकता।

इतने जंगल और वृष्टि के कारण यहाँ की आबहवा बड़ी नम है। किन्तु समुद्र के समीप होने के कारण ज्यादा गरमी या सर्दी नहीं होती है। अप्रैल से अगस्त तक बेहद पानी बरसता है। और कभी कभी आठ दस इंच तक एक दिन में बरस जाता है।

चेरापूँजी में सब से अधिक वर्षा होती है और उसके बाद काक्स बाजार (Cox's Bazar) का नम्बर आता है। कभी कभी लगातार पन्द्रह दिन तक पानी बरसता रहता है। इस साल भयानक वृष्टि हुई। दस वर्षों से ऐसी वर्षा कभी नहीं हुई थी। इससे बड़ी हानि हुई, कितने घर बह गये। चावल

के खेतों को बड़ा नुक़सान पहुँचा। क़रीब बीस हज़ार रुपये सरकार की तरफ़ से कर्ज़ दिये गये।

यहाँ की मिट्टी बालूदार है इसलिये वर्षा बन्द होने के बाद जमीन सूख जाती है। कहीं कहीं पहाड़ की लाल मिट्टी भी मिलती है।

प्रकृति का कोप भी यहाँ अधिक है। साइक्लोन (चक्रवात), हरीकेन (तूफ़ान), भूकम्प और समुद्री लहरें अक्सर अपनी शक्ति का दुरुपयोग किया करती हैं। इनकी अधिकता 'सितम्बर' से 'नवम्बर' तक रहती है। एक टापू में कई बार बड़े भीषण तूफ़ान आये। उनमें से एक २४ अक्टूबर सन् १८९७ में आया था। पहिले तूफ़ान आया फिर उसके ज़ोर से समुद्र का पानी उस टापू पर इस पार से उस पार बह गया और क़रीब चौदह हज़ार मनुष्य बहा ले गया। कूएँ तालाब आदि नमकीन पानी से भर गये। बचे लोगों को पानी पीने को न मिला, इससे हैज़ा फैल गया और उसमें भी लगभग अठारह हज़ार मनुष्यों की बलि चढ़ी। यह दुर्घटना "कुतुबदिया" नामक टापू में हुई थी, वह इस सब डिवीज़ का एक थाना है। वहाँ एक लाइट हाउस (Light house) है जो स्टीमरों को चट्टानों और छिछली भूमि से बचाता है। इसे देखने के लिये बहुत से लोग वहां जाते हैं। वहां मलेरिया भी बहुत होता है। क़रीब तीन लाख रुपये की 'कुनीन' प्रत्येक साल बंगाल से ख़रीदी जाती है।

यहाँ पशुओं की एक ख़ास प्रकार की बीमारी बहुत होती है। वह छूत से फैलती है। इससे तीन-चार दिन के अन्दर में गाय बैल मर जाते हैं। इसे रोकने के लिये प्रबन्ध किया गया है। उन्हें 'सूई' (Injection) दी जाती है। नदियों में बाढ़ आने से और ज्यादा पानी बरसने से ग़रीबों को बड़ा कष्ट होता है।

मनुष्य

काक्स बाज़ार (Cox's Bazar) और ब्रह्मा के बीच केवल पहाड़ियों का अन्तर है। यहाँ के मनुष्यों में कई जातियाँ हैं। एक तो ब्रह्मा के लोग हैं जो लेफ़्टेनेंट काक्स के बसाये हुये हैं। ये 'मुग' कहलाते हैं। दूसरे मुसलमान हैं। तीसरे बंगाली, और चौथे मुग और मुसलमान जाति के बीच के हैं। जिन्हें 'शाम बनी' कहते हैं।

'मुगों' की आखें छोटी होती हैं, माथा बड़ा और चौड़ा, नाक चौड़ी और चिपटी होती है। रंग अधिकतर साफ होता है। ये स्वस्थ होते हैं। और इनके चेहरे से गम्भीरता टपकती है। ये कपड़े विचित्र ढंग से पहिनते हैं। आदमी और औरत का पहिनाव क़रीब क़रीब एक सा है किन्तु औरतें सिर पर ओढ़नी डालती हैं और आदमी एक रंगीन पगड़ी बाँधते हैं। ये खूब तेज रंग के तहमद (लुङ्गी) पहिनते हैं। लाल और हरा रंग ज्यादे तर देखने में आते हैं। ऊपर छोटा कुरता सा या बहुत ऊँची कमीज पहिनते हैं। सिर की पगड़ी गुलाबी या हरे रंग की होती है। स्त्रियों की ओढ़नी गुलाबी, पीली या और किसी रंग की होती हैं। ये अपने बालों को फूल से सजाती हैं। इनमें आभूषण पहिनने की रीति नहीं है। केवल झूठे मोती और पोत के गहने पहिनती हैं। पर्दा नहीं करती हैं। और क़रीब क़रीब सब के पास छाता रहता है। ये धूप नहीं सह सकती हैं।

'मुग' पुरुषों से ये अधिक काम करती हैं। घर का काम और कपड़ा बुनना इनका कार्य है। ये लुंगी, ओढ़नी आदि बुन कर बेचती हैं। 'मुग' जाति की बड़े घराने की स्त्रियाँ भी अपने उपयोग के लिये घर में ही कपड़े तैयार करती हैं। इससे मालूम होता है कि स्त्रियों का कपड़ा बुनना इनमें एक रिवाज है। 'मुग' पुरुष बड़े आरामतलब होते हैं। एक प्रकार का ऊँचा सा काठ का मचान होता है। टीन या फूस की छत होती है। बस उसी में दिन भर पड़े रहते हैं और "सिगार" या "पाइप" पीते रहते हैं। इस "मचान" को वे 'चेराङ्ग' अर्थात् "विश्राम गृह" कहते हैं।

इनका घर बड़ा सुन्दर होता है। वह ज्यादा तर लकड़ी का बना होता है, और टीन की छत होती है। कुछ मकान दुमंजिले भी होते हैं। बहुत से घर खंभो पर भी बने हैं। ये लोग मछली, केकड़े, कछुये और उनके अंडे चावल और तरकारियें खाते हैं। इन्हें सूखी मछली बहुत पसन्द हैं। इनकी भाषा "बर्मी" से मिलती है, जो सुनने में मधुर मालूम होती है।

ये 'मुग' बुद्ध देव की पूजन करते हैं। यहाँ बुद्ध जी के कई बड़े बड़े सुन्दर मन्दिर हैं, जिन्हें ये "क्यांग" कहते हैं। इन "पगोडाओं" में बुद्ध जी
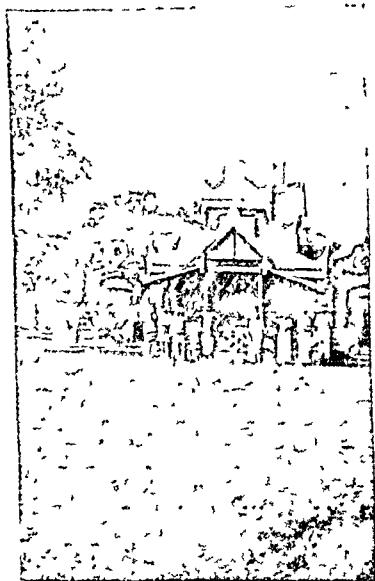
बुद्ध देव का मन्दिर।

की कई अवस्थाओं की मूर्तियाँ बनी हैं। दो तीन में तो सोने की मूर्ति है। ये मन्दिर बड़े सुन्दर और स्वच्छ हैं। प्रतिदिन चढ़े हुये फूल हटा दिये जाते हैं। फर्श पर पानी का कहीं नाम नहीं। बहुत से स्थानों पर, हिन्दुओं में, मूर्ति पर जल चढ़ाने का रिवाज है किन्तु बुद्ध देव की मूर्ति पर जल अक्षत या फूल भी नहीं चढ़ाया जाता है। पैसा नहीं चढ़ाया जाता। पूजा करने वाले मिट्टी के फूल-दान में प्रतिदिन फूल लाते हैं और मूर्ति के सामने रख देते है।

यहाँ बुद्ध 'मठ' भी हैं, जिनमें बुद्ध देव के अनुयायी सन्यासी रहते है। स्त्रियों के लिये, जो सन्यासिनी हैं, अलग प्रबन्ध है। दोनों सिर मुंडा लेते है। और पीला या गेरुआ वस्त्र धारण करते हैं। सवेरे भिक्षा लेने निकलते हैं, और सिर्फ एक बार खाना खाते हैं।

"मुग" लोग अतिथि-सत्कार करना अच्छी तरह जानते हैं। शहर के जिस भाग में वे रहते हैं। वहाँ जगह जगह पर "पिआऊ" है। छोटे छोटे मचानों पर घड़ों में शीतल जल और नारियल के कटोरे रहते हैं, जिन्हें प्यास लगती है, पानी पी लेते हैं। बंगालियों के विपरीत ये कुंए का पानी अधिक पसन्द करते हैं। प्रधानतः पीने और खाना पकाने के लिये। इनकी स्त्रियां सब काम से छुट्टी हो जाने पर दोपहर को पहाड़ियों से निकले झरनों पर कपड़े धोने जाती हैं।

इन लोगों में शव ले जाने की विचित्र प्रथा है। एक रथ पर शव रखते हैं, और उसे बहुत से लोग खींचते हैं। रथ के दोनों तरफ दो हंस होते हैं। उनमें दो रस्सी बंधी होती हैं। एक तो देवताओं का समूह (काल्पनिक) और दूसरा यमदूतों का समूह होता है। दोनों दल एक एक रस्सी खींचते हैं। देवताओं का जीतना आवश्यक है, जिससे समझा जाता है कि मृतक को स्वर्ग मिलेगा। बड़ा गाना बजाना होता है। इसमें रुपया बहुत खर्च करते हैं और सैकड़ों मुग
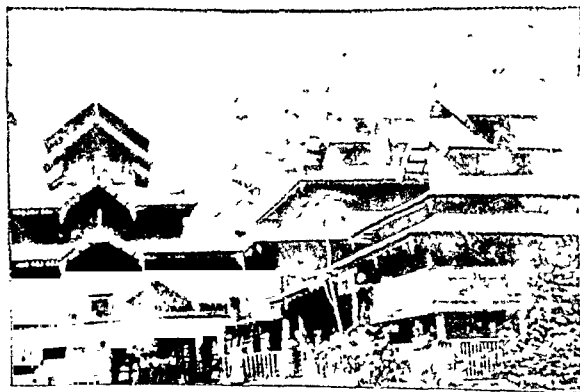
बुद्ध देव का मन्दिर और 'मुग' पुजारियों के रहने का स्थान। यह लकड़ी का बना है और छत टीन की है।

स्त्री पुरुष काले कपड़े पहने रथ के पीछे पीछे चलते हैं।

यहाँ के दूसरे निवासी मुसलमान और बंगाली हैं। ये लोग देखने में अधिक बलवान नहीं हैं ये दुर्बल भी होते हैं। उनकी भाषा 'चिट्टागोनियन' (Chittagonian) है। यह बड़ी कठिन है, और बंगाली भी मुश्किल से समझ पाते हैं। उनका प्रधान पेशा कृषि है। बच्चे गाय बकरी चराते हैं, और स्त्रियां घर का काम करती हैं। कपड़ा बुनना इनमें प्रचलित नहीं है।

इनके घर अधिकतर बाँसों की चटाई के बने होते हैं। छत फूस या टीन की होती है। आग से बड़ी सावधानी रखनी होती है। इन लोगों का रहन सहन सादा

जङ्गलों से बाँस काट कर, एक साथ बाँध कर, नदी में बहा देते हैं। और उसपर रहने का भी प्रबन्ध कर लेते हैं।

है। जो बंगाली हैं वे धोती कुरता पहिनते हैं, जो मुसलमान हैं 'लुङ्गी' या 'तहमद' और कमीज पहिनते हैं। मुसलमान स्त्रियां भी 'तहमद' पहिनती हैं। खाने में मछली, चावल, तरकारी और मिर्च प्रधान हैं। ये लोग दाल कम खाते हैं। इस सब डिवीजन में ९० फी सदी मुसलमान हैं।

तीसरी जाति के लोग, जो 'मुग' और मुसलमान के बीच के हैं, "शामपनी" नाम से पुकारे जाते हैं। इनकी जाति अलग हो गई है। इनकी शादी मुसलमान या 'मुग' जाति में नहीं हो सकती। इनका घर बार नहीं है। ये अपनी बड़ी बड़ी मछली मारने की नावों पर रहते हैं। इनका व्यवसाय केवल मछली मारना है। उन्हें बेच कर जो मिलता है उससे और खर्च चलता है। ये लोग मछली बाँसों पर सुखाते हैं, और वर्षा ऋतु में मुनाफे के साथ बेचते हैं। जिन्होंने ज्यादा रुपया कमा लिया है उन्होंने घर भी बना लिया है। यहाँ के मनुष्यों का घर बहुत नीचा होता है। खिड़की अक्सर नहीं होती। सिर्फ अन्दर जाने के लिये एक दरवाजा होता है। उसमें सिर झुका कर घुसना होता है। घर इतना नीचा होने का कारण यह है कि यहाँ तूफान (आँधी) बहुत जोर का आता है, जिससे छप्पर उड़ जाने का डर रहता है। इन मकानों की छत बहुत ढालू होती है, और गोल भी, जिससे पानी शीघ्र बह जावे। यहाँ के मनुष्य तैरने में प्रवीण होते हैं। छोटे बच्चे भी खूब तैरते हैं।

उपज—उपज में सुपारी और नारियल बहुत प्रसिद्ध है। एक सुपारी के पेड़ से क़रीब छः सात सेर सुपारी फलती है। इसकी फसल एक साल में दो बार होती है, और खूब खाने में आती है। पान की खेती खूब होती है। दो तरह के पान ज्यादा मशहूर हैं, पहला मीठा पान दूसरा बंगाली पान। पान का व्यापार खूब होता है। ज्यादातर चटगांव को भेजा जाता है।

उल्टी सम्पन (नाव) धूप में सुखाई जा रही है। पीछे मछली सुखाने के बाँस लगे हैं।

कटहल, केला, आम, लीची, अनन्नास, चकोतरा, मीठे नींबू आदि बहुत अधिक होते हैं। अनन्नास

(Pineapple) जो कलकत्ता में एक रुपये या बारह आने में पाया जाता है, वह यहाँ दो पैसे से दो आने तक में मिलता है। बाँस, बेत और प्रत्येक तरह के लट्ठे भी पाये जाते हैं। बाँस की अधिकता है, उससे घर बनाये जाते हैं और बहुत किस्म की वस्तुयें तैयार की जाती हैं।

व्यवसाय—यहाँ मनुष्यों का खास व्यवसाय कृषि है। उसमें धान प्रधान है। मिर्च, तम्बाकू, गन्ना, सरसों, जूट और कहीं कहीं कपास, ये सब बोये जाते हैं। गन्ने की और मिर्च (लाल) की खेती खूब होती है। वर्षा अधिक होती है, इसलिये सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। इसके बाद मछली मारना प्रधान पेशा है। "शामरनी" जाति के मनुष्यों की यही एक मात्र जीविका है। मछली सुखा कर बाहर भेजी जाती है।

यहाँ एक 'सोनदिया' नामक टापू है, जहाँ जाड़ों के महीने में ये लोग मछली मारने जाते हैं। मछली पकड़ने के जाल बहुत बड़े-बड़े होते हैं। वे यहीं के बनाये हैं। उन्हें मजबूत रखने के लिये मछुये पेड़ की छाल पकाते हैं और जालों को उसमें रङ्ग देते हैं। इससे वह पानी में कई दिन तक बिना किसी हानि के रह सकता है। कभी-कभी तो दो हजार रुपये तक की मछली, एक मछुओं का झुण्ड, एक मास में बेच लेता है। 'मुग' सूखी मछली बहुत पसन्द करते हैं।

इसके बाद बाँस से बनाई वस्तुयें प्रधान हैं। नाव की छत, मछुओं की टोपी, छाता जो पानी और धूप दोनों से बचाता है, शीतल पाटी, टोकरियाँ, घरों के चारों तरफ की 'चहारदीवारी' आदि बाँस से तैयार होती हैं।

अक्टूबर से दिसम्बर तक बहुत से मजदूर "अकयाब" जाते हैं और वहाँ धान काटने का कार्य करते हैं। क्योंकि ब्रह्मा के मनुष्य काम नहीं करते। मजदूरों को अच्छी आमदनी हो जाती है।

कपड़ा बुनना यहाँ 'मुग' स्त्रियों का प्रधान कार्य्य है। लगभग प्रत्येक 'मुग' घर में, चरखा करघा आदि रखता है। रेशम की लच्छियाँ कभी-कभी रंगून से मँगानी पड़ती हैं और घर में उससे 'तहमद' जिसे यहाँ 'लुङ्गी' कहते हैं, बनाई जाती हैं। स्त्रियों के लिये ओढ़नी भी तैयार की जाती हैं। सूत घर में रंगा जाता है।

नावों के लिये छोटे-बड़े 'पाल', जालों की रस्सी मुसलमान मनुष्य स्वयं तैयार करते हैं। ये जाल बहुत मजबूत होते हैं।

मिट्टी के बर्तनों में घड़ा प्रधान है। क्योंकि गरीबों का चावल उसी में पकता है और पानी भरने के काम आता है। जंगलों से लट्ठे लाकर 'सम्पन' (नाव) तैयार की जाती हैं। जाड़े में, जब समुद्र शान्त रहता है। बहुत से व्यापारी बड़े बड़े बजड़े (बड़ी नाव) ले

"ज्वार" के समय नदी में जल अधिक है। स्टीमर घाट पर आ गया है। यहाँ की विचित्र सम्पनों (नावों) को देखिये।

कर "सुन्दर वन" जाते हैं, और वहाँ से छप्पर छाने की पत्ती लाकर यहाँ बेचते हैं।

आने जाने के मार्ग—आना जाना यहाँ बहुत कष्टप्रद है। वर्षा ऋतु में इन्द्र अपना पानी का घड़ा यहाँ बेधड़क उलट देते हैं। नदी नालों की कोई गिनती नहीं है। जिसके कारण सड़क बनाने में बड़ी कठिनाई होती है। गिनी चुनी सड़कें भी हैं। मगर कहीं कहीं दस मील में दो सौ पुल पड़ते हैं। ये बाँस या

लट्ठों के सहारे पार किये जाते हैं। इसलिये मोटर आदि यहाँ चल नहीं सकतीं। साईकिल, घोड़ा हाथी पर या पैदल जाना होता है। ज्यादातर लोग एक गाँव से दूसरे गाँव को सम्पन (नाव) से जाते हैं। यहाँ बाजार दो पहर को लगता है, और लोग नावों पर चीज लाकर बेचते हैं।

डाक आने का प्रबन्ध दौड़ने वाले डाकिये (हरकारे) द्वारा होता है। उनके पास एक घन्टी और 'बिगुल' होता है। जंगल में वे इन्हें बजाते जाते हैं जिससे जानवर भाग जावें। डाकिये के साथ एक और आदमी होता है। दोनों के पास एक बड़ी छूरी (खुखरी) होती है। रास्ते में डाकुओं का भी डर रहता है।

इनकी बदली प्रत्येक ६ मील पर होती है। दो दिन में चटगाँव पहुँचते हैं। रास्ते में 'डाक' (जहाँ पोस्ट आफिस है) बँटती भी है।

'काक्स बाजार' में और बंगाल के दूसरे शहर में बहुत फर्क है। यह बंगाल का 'शहर' न होकर ब्रह्मा का मालूम होता है। यहाँ के मुर्गों के खुशहाल जीवन से चारों तरफ़ बड़ी शान्ति और सन्तोष दिखाई पड़ता है।

क्या आप जानते हैं ?

[संग्रह-कर्ता श्री आदित्य राम बंसल]

१—एक पाउण्ड चिड़िया के पर एक पाउण्ड सोने से अधिक भारी होते हैं, क्योंकि चिड़ियों के पर एवॉयूर्डुपाइज़ (Avoirdupois) तोले से तोले जाते हैं, जिसमें पाउण्ड १६ आउन्स का माना जाता है तथा सोना ट्रॉय (Troy) तोल से जिसमें एक पाउण्ड में केवल बारह ही आउन्स होते हैं।

२—संसार में ६८ मृत्यु प्रति मिनट, ९७,९२० मृत्यु प्रति दिन तथा ३,५७,४०,८०० मृत्यु प्रति वर्ष होती है।

३—ध्रुवदर्शक यन्त्र की सुई उत्तरी ध्रुव की ओर इशारा नहीं करती वरन् यह चुम्बक ध्रुव की ओर इशारा करती है, जो उत्तरी ध्रुव से १५०० मील पश्चिम की ओर है।

४—यदि संसार के सब चीनी लोग ४-४ की लाइन बना कर एक स्थान से निकलने लगें तो वह कभी निकलना खतम न होंगे, परन्तु वे चलते ही रहें।

५—Malaysia द्वीप में एक ऐसी मछली होती है जो पेड़ों पर चढ़ सकती हैं। इसका नाम पेरिथॉथेमो श्लौसी (Periopthalmus Schlössex) है। यह अच्छे ऊँचे पेड़ों पर चढ़ जाती है। इसकी आँखें बड़ी भयानक होती हैं, जिनको पेड़ के ऊपर से निकाल कर नीचे चलने वालों को डरा देती है।

६—जापान में लाल बर्फ गिरती है।

७—जापान में उत्पन्न होते ही बच्चे की आयु एक वर्ष मानी जाती है।

८—जापान में बेर का एक पेड़ ५०० वर्ष पुराना है जो केवल १ गज़ ऊँचा है।

९—संसार का सब से छोटा गिरजाघर Kentucky में Lotonia के पास है। इसमें केवल तीन मनुष्य बैठ सकते हैं।

१०—दक्षिण अमरीका में एक मछली होती है जो बड़े बड़े मगरों को मार डालती है। इसे अर्चिन फ़िश (Urchin Fish) या सी हैजहाग (Sea Hedgehog) कहते हैं। यह लम्बाई में १ फुट से भी कम होती है। यह गेंडुली मार सकती है जिससे इसके कांटे निकल आते हैं। जब कोई मगर इसे निगल लेता है तो यह उसके पेट में गेंडुली मार के खूब इधर उधर दौड़ती है। इससे मगर का शरीर जर्जर हो जाता है। तब यह उसे खाने लगती है और बाहर निकल आती है। इस प्रकार मगर मर जाता है।

रामायण-कालीन भौगोलिक दिग्दर्शन*

[ले० श्री अनन्त प्रसाद गौड़]

राष्ट्र विभाग

प्राचीन समय में आज कल की तरह विस्तृत राष्ट्र स्थापित करने की शैली नहीं थी। देश छोटे-छोटे राष्ट्रों में विभाजित था और हर एक राष्ट्र एक राजा के आधीन था, जिसका शासन वह सुगमता से अपनी देख-रेख में कर सकता था। राष्ट्रों में परस्पर मित्रता का व्यवहार था। जो राज्य प्रभावशाली हुआ करता था, अन्य राज्य उसके अधिपत्य को स्वीकार करते थे और इसके अतिरिक्त अन्य विषयों में वे बिल्कुल स्वतन्त्र रहते थे। महाभारत काल तक भारत वर्ष तथा यूनान में राष्ट्र विभार्जन की यही प्रथा थी।

पुत्रेष्टि यज्ञ के समय जिन राष्ट्रों को दशरथ महाराज ने निमन्त्रित किया था, उनकी सूची इस प्रकार है:—

१—मिथिला, २—काशी, ३—कैकय, ४—अङ्ग, ५—कोशल, ६—मगध, ७—सिन्धु, ८—सौवीर, ९—सौराष्ट्र।

—बाल-काण्ड सर्ग १३ श्लोक २१ से २९।

इसमें बहुत से राष्ट्रों की स्वतन्त्रता और स्थिति तो यवनों के आने के पूर्व तक वर्तमान थी। अतः उनकी स्थिति के सम्बन्ध में विशेष शङ्का और खोज की आवश्यकता नहीं है। केवल कैकेय के सम्बन्ध में विद्वानों के भिन्न-भिन्न विचार हैं। उनमें दो मुख्य हैं (१) कुछ लोगों का विचार है कि कैकय का राज्य भारत के पश्चिमोत्तर प्रदेश में, जहाँ इस समय कीचा है, था। फाह्यान चीनी यात्री ने अपनी यात्रा में इसका वर्णन किया है और उसके मार्ग का विवरण करीब-करीब इस विवरण से मिलता है जो भरत ने अपने ननिहाल के मार्ग का किया है। (२) परन्तु कुछ लोगों का विचार है कि काकेशिया के नजदीक एशिया माइनर में कहीं था।

सब बातों पर विचार करते हुए यही अनुमान किया जाता है कि कैकय काकेशश के समीप ही रहा होगा। चीनी यात्री फाह्यान और भरत जी के मार्गों की तुलना करने पर यह विदित होता है कि भरत जी का मार्ग अधिक विस्तृत था और जिन नदियों और प्रदेशों का नाम उनकी यात्रा में आया है उनका समावेश फाह्यान के मार्ग में किसी प्रकार नहीं हो सकता। जैसा कि निम्नलिखित तुलनात्मक सूची से विदित है।

भरत जी का मार्ग

राजगृह से पूर्व की ओर
सुदामा नदी
ह्लादनी नदी (चौड़ी और पश्चिम बहने वाली)
शतद्रू नदी
एलाधन
अपर पर्वत
शिला नदी
आग्नेय और शल्य वर्ष
शिलावह नदी
चैत्ररथवन
सरस्वती और गङ्गा के सङ्गम पर वीरमत्य
मारण्डनामक वन
कुलिगा और यमुना
अंशुधान नगर और महानदी गङ्गा
प्रागवट नगर
कुटिकोष्ठिका नदी
धर्मवर्धन नगर
भरत तोरण गाँव
जम्बूप्रस्थ नगर
वर्थ गाँव
वन
उज्जिहाना नगरी
सर्व तीर्थ नगर
उत्तर वाहिनी पहाड़ी नदी (घोड़े पर)
कुटिका नदी
लौहित्य नगर
कपिवती नदी
स्थाणुमती नदी
गोमती नदी
कलिंग नगर व वन
राजा मनु की बसाई अयोध्या

* क्रम मिलाने के लिये कृपया नवम्बर ३७ का अंक देखें।

फाह्यान का मार्ग

याशकन्द
कवन्ध
सागा लङ्ग पर्वत
फुहाई पर्वत माला
साङ्ग लिंग पर्वत
नदी
पोहो प्रदेश
इसके दक्षिण हिसातदाद
बहुत सी नदियाँ
पोसी देश
सिमिजनपद (पहाड़ी घोड़ेपर)
उद्यान प्रदेश

प्रथम प्रश्न यह है कि यह राज-गृह कौन सा नगर है जहाँ से भरत जी ने प्रस्थान किया। राज-गृह का जिक्र महाभारत में आया है और बाल-काण्ड में भी। मगर इन दोनों स्थलों के राजगृह और इस राजगृह में बहुत अन्तर है। महाभारत सभा पर्व में जो राजगृह है वह मगध देश के शासक राजा जरासन्ध की राजधानी थी और रामायण और महाभारत के वर्णन से राजगृह और गिरिव्रज एक ही मालूम होते हैं।

एप पार्थ महान भाति पशुमात्रित्य स्वमान।
निरामयः सुवे श्याधा निवोशीः मागधः शुभः ॥
वैहारो विपुलः शैलो वराहो वृषभस्तथा।
तथा ऋषि गिरि स्तात शुभा दैत्येक पंञ्चमाः॥
एते पञ्च महा श्रृङ्ग प्रर्वतोः शति ल मुद्रमाः।
रक्षन्ती वार्मे सहंताहा गिरिव्रजम्॥

(सभा पर्व २१३ पृष्ठ १—३)

प्राचीन समय में पश्चिमोत्तर नगर बलख बड़ा प्रभावशाली और विख्यात था और इस बहुलता के कारण उसका नाम भी राजगृह था। बहुत सम्भव है कि बलख ही भरत जी का राजगृह हो। फाह्यान याशकन्द (३६—७६) से प्रस्थान करता है और भरत जी बलख (३६—६७) से। यह नगर अक्षु (Oxus) नदी के समीप है और काकेशश प्रदेश के अन्तर्गत है। इस नगर से राज-गृह सम्बन्धी और बातें भी ठीक बैठ जाती हैं जैसे देवासुर संग्राम क्षेत्र के समीपवर्ती होना, क्योंकि एक घोर संग्राम देव और असुरों के बीच काबुल के नजदीक हुआ था जिसमें राजा दशरथ ने कैकेय नरेश की सहायता की थी। परन्तु जब खरोष्टी लिपि के इतिहास पर विचार किया जाता है तो कीचा (जिसको फाह्यान कैकेय कहता है) का होना दारदिस्तान और एशिया माइनर के बीच में पाया जाता है।

कैकय के सम्बन्ध में कुछ विद्वानों के विचार नीचे उद्धृत किये जाते हैं।

१—श्रीयुत हरिचन्द्र ओझा का अनुमान है कि कैकेय देश सिन्ध नदी के समीपवर्ती कोई देश था।

२—हिन्दी विश्वकोश में कैकेय को काश्मीर या राजौली प्रदेश का प्राचीन नाम लिखा है।

३—कांगड़ा और कैकय की तुलना करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि कागड़ा ही कैकय था।

अतः यह निश्चित तौर से नहीं कहा जा सकता कि कैकेय प्रदेश कहाँतक फैला हुआ था और राज-गृह कौन सा स्थान था। परन्तु यह तो प्रगट है कि कैकय सिन्धु के बाद का प्रदेश था और सम्भवतः यह काकेशश तक फैला हुआ था और राज-गृह उसकी राजधानी था। राज-गृह और गिरिव्रज दो स्थान थे क्योंकि जब दूत गिरिव्रज पहुँचे तो दूसरे दिन पूरा चलने के बाद सवेरे राजगृह पहुँचे। अन्वेषण से तो यह तै हो चुका है कि जलालाबाद ही प्राचीन गिरिव्रज था और यहीं पोरस और सिकन्दर से लड़ाई हुई थी। इसके अनुसार गिरिव्रज झेलम के किनारे पर रावलपिण्डी के नजदीक होगा। वहाँ से आगे बढ़कर राजगृह होगा।

किष्किन्धा-काण्ड में भी कुछ राष्ट्रों का उल्लेख है। सुग्रीव ने अपने दूतों को हर दिशा में सीता जी की खोज में भेजा। उनको पूर्व दिशा में निम्नलिखित राष्ट्र मिले।

ब्रह्ममाला, विदेह, मालव, काशी, कोशल, मगध, पुण्ड्र, अङ्ग।

दक्षिण दिशा में पाए गए राष्ट्र—मेखल, उत्कल, दशार्ण, अवन्ती, विदर्भ, अष्टिक, महीपक, मत्स्य, कलिङ्ग, कौशिक, आन्ध्र, पुण्ड्र, चोल, पांड्य।

पश्चिम दिशा में पाए गए राष्ट्र—सौराष्ट्र, वाह्लीक, चन्द्रचित्र, कुक्षि, मुरचीपत्तन, जटापुर, अवन्ती, अङ्गलेपा।

उत्तर दिशा में पाए गए राष्ट्र—म्लेक्ष, पुलिन्द, शूरसेन, प्रस्थल, भरत, मद्र देश, कुरु, काम्बोज, यवन, वरद, उत्तर कुरु।

उपरोक्त राष्ट्रों की स्थिति का अन्दाजा इस प्रकार किया जा सकता है।

विदेह—गराडक नदी के पूर्व और गङ्गा नदी के उत्तर का भाग।

मालवा—वर्तमान मालवा, नर्मदा नदी के उत्तर-पूर्व का देश।

काशी—वर्तमान काशी और उसके आस-पास का देश

कोशल—सरजू और राप्ती नदी के बीच का देश, राजा दशरथ का राज्य।

मगध—विहार प्रदेश।

पुराड्र—विहार के नीचे का देश

अङ्ग—गङ्गा और ब्रह्मपुत्र की तरहटी [ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय अङ्ग और वङ्ग दो भिन्न राष्ट्र नहीं थे]

कलिङ्ग—उड़ीसा-प्रान्त।

आन्ध्र – वर्तमान आन्ध्र-प्रदेश।

चोल और पांड्य—दक्षिण के राष्ट्र, जिनकी स्थिति अभी मुसलमानों के समय तक वर्तमान थी।

सौराष्ट्र—वर्तमान गुजरात प्रदेश।

सिन्धु—सिन्धु नदी के तरहटी का देश।

सूरसेन—मथुरा के आस-पास का प्रदेश।

सौवीर—काठियावाड़ के उत्तर का प्रदेश।

कुछ राष्ट्रों का उल्लेख कल्यान माला ने अपनी पुस्तक अनङ्ग रङ्ग में किया है। सम्भव है ये राष्ट्र प्राचीन राष्ट्रों के अवशेष मात्र हों।

उत्कल—उड़ीसा प्रदेश का ऊपरी भाग।

अवन्ति—उज्जैन और उसके आस-पास का देश।

वाह्लीक—व्यास और सतलज के बीच का प्रदेश।

म्लेक्ष—वर्तमान मुलतान के उत्तर पश्चिम रावी और सतलज के बीच का देश।

काम्बोज—वर्तमान अफगानिस्तान और उसके उत्तर पश्चिम का देश।

मद्र देश—रावी और चनाव नदी के बीच का देश।

महाभारत में पाराडव दिग्विजय के समय पाराडव लोग चारो दिशाओं में गए थे। उनके अनुसार दर्शाण राष्ट्र विदेह के पूर्व और मत्स्य राष्ट्र सौरसेन के दक्षिण पश्चिम होता है। महाभारत का वर्णन अधिक विस्तृत है अतः उसमें भूल का समावेश कम है। इससे मालूम होता है कि या तो यह सब राष्ट्र सुग्रीव के दूतों को बजाय दक्षिण के उत्तर या पूर्व दिशा में मिले होंगे या समय के परिवर्तन से उन जातियों ने अपने राष्ट्रों को स्थानांतरित किया हो।

कुरु और उत्तर कुरु बड़े साफ शब्दों में लिखा हुआ है। कुरुसे अभिप्राय भारतवर्ष के कुरुक्षेत्र से है परन्तु उत्तर कुरु दूसरा प्रदेश है। उत्तर कुरु का एक स्वयं इतिहास है। कुरु दरअसल उत्तर ध्रुव के निकटवर्ती प्रदेश में कुछ दिनों के लिये बस गए थे तब उसका नाम कुरु रखा गया। भारतवर्षीय आर्य्यों ने भी उसी की यादगार में पञ्जाब के बीच के भाग का नाम कुरु रखा तो दोनों में भेद रखने के लिए उस कुरु का नाम उत्तर कुरु रखा गया।

वायु पुराण के अनुसार कुरु उत्तरतम प्रदेश माना गया है।

रम्यात परम श्वेतं विश्रुतं तत् हरिरामयम्।
हरि रामयात परं चापि श्रृंग वाख्जं कुरु सम्मृतम्॥

ब्रह्माराड पुराण इसे उत्तर समुद्र के तट पर ही दक्षिण की ओर मानता है।

उत्तरस्य समुद्रस्य समुद्रान्ते च दक्षिणे।
कुरु वः तत्र तद्वर्षः पुरायं सिद्ध निषेवितम्॥

पद्म पुराण कुरु के बदले एरावत को उत्तर समुद्र के दक्षिण और श्रृङ्गवान पर्वत के उत्तर स्थित करता है।

त्तरेण तु श्रृङ्गस्य समुद्रान्ते द्विजोत्तमा।
वर्ष मेरावतं नाम तस्मात श्रृङ्गवतः परम्॥

इससे यह विदित होता है कि रामायण काल के समय उत्तर कुरु हिन्दू कुश के उत्तरीय प्रदेश में रहा होगा और देवता उत्तर ध्रुव से उतर कर इधर बस गये होंगे।

———

मध्यभारत की भौगोलिक स्थिति एवं उसका प्रभाव

[ले० लाल भानुसिंह बाघेल]

पर्वत राज हिमालय की नन्दा देवी, धवलागिरि तथा गौरी शंकर चोटियों से सीधे दक्षिण की यात्रा में गंगा के विस्तृत मैदान के बाद पैरों को धीरे धीरे पुनः उंचाई का अनुभव होने लगता है। फिर एकाएक एक और भूधर का दर्शन होता है। यह उंचाई एवं विस्तार में पर्वतराज का बच्चा भी नहीं; किन्तु अवस्था में उसका पिता हो सकता है। इसकी श्रेणियाँ पूर्व-पश्चिम बिहार से बम्बई प्रान्त तक दण्डायमान उत्तरी एवं दक्षिणी भारत को अलग करती हैं। यही विन्ध्याचल है। इसकी अधित्यका एवं उपत्यकाएं समतल, पठार का रूप धारण करती हैं। वे सैकड़ों मील विस्तृत हैं। यही विन्ध्यपृष्ठ है। बघेल खण्ड (रीवा राज्य) के पूर्व से इसकी पूर्वी सीमा प्रारम्भ होती है। यहाँ इस पर्वत को एक और भुजा उत्तर-पश्चिम की ओर बढ़ कर गंगा के मैदान से इसे अलग ही नहीं करती; किन्तु अपनी खड़ी दीवार से एकदम इसे ऊपर उठा कर मध्यभारत की मातृभूमि का श्रीगणेश भी करती है।

बुन्देलखण्ड में यही श्रेणी छिन्न-भिन्न होकर वहाँ के वृहत् तालाबों का आधार बनती है। ग्वालियर में इस श्रेणी की न्यूनता के कारण ही मध्यभारत की पश्चिमोत्तरी सीमा यमुना-चम्बल तक पहुँच जाती है। दक्षिणी श्रेणी बघेलखण्ड से मालवा तक समान रूप से खड़ी हुई पश्चिम की ओर ढालू होकर नर्मदा जल-धारा उत्पन्न करती है। विन्ध्याचल के इस प्रकार विस्तार एवं आकार के कारण ही जो प्रान्त रीवा राज्य के उत्तरी भाग में एक संकीर्ण उच्चसम भूमि (प्लेटो) देख पड़ता है वही पश्चिम की ओर क्रमशः चौड़ा होता हुआ चम्बल के बराबर हो जाता है। इसके उत्तर में अत्यन्त उपजाऊ और विस्तृत गंगा का मैदान है। पश्चिम में गुजरात का सुन्दर प्रान्त और पश्चिमोत्तर में राजपूताना का अगम्य रेगिस्तान है। पूर्व में छोटा नागपुर का जंगली प्रान्त और दक्षिण में विन्ध्य और सतपुड़ा पर्वत की अगम्य श्रेणियाँ तथा नर्मदा एवं ताप्ती की जलधाराएं बहती हैं।

सारा प्रान्त एक हजार से तीन हजार फुट की ऊँचाई में कर्क रेखा के उत्तर और दक्षिण फैला हुआ है। नर्मदा की घाटी को छोड़ कर प्रान्त भर का ढाल गंगा की ओर है। इसमें कई बड़ी बड़ी नदियाँ बहती हैं। वर्षा में वे उमड़ पड़ती हैं, पर ग्रीष्म में उनका पानी पाताल पहुँचने का प्रयत्न करता है। उनके दोनों किनारे प्राय: पहाड़ी नदियों के किनारों की तरह ऊँचे हैं। न उनमें नावें चल सकती हैं न उनसे नहरें निकल सकती हैं। इस प्रकार सजल होने पर भी प्रान्त शुष्क है, किन्तु सारी भूमि पर्वतों की अधित्यका, उपत्यका एवं नदियों के बेसिन से बनी होने के कारण उपजाऊ है। ऊँचाई के कारण समशीतोष्ण एवं उष्ण कटिबन्ध के ताप के उत्ताप का दुःख नहीं है। अगम श्रेणियों, घाटियों और रक्षित बनों के अतिरिक्त शेष भाग का जल-वायु विशेष कर मालवा का बहुत ही उत्तम है। औसत आबादी १२० प्रतिवर्ग मील पड़ती है।

मध्यभारत की ऐसी भौगोलिक स्थिति के कारण भारतवर्ष के अन्य प्रान्तों की तरह मध्यभारत में भी प्राचीन काल से पश्चिमोत्तर से ही आने-जाने का मार्ग प्रशस्त रहा है। अतएव, गंगा का उपजाऊ मैदान, राजपूताना का अगम्य रेगिस्तान एवं गुजरात का सुन्दर प्रदेश विदेशी लुटेरे डाकुओं के रोकने में मध्यभारत के लिये ढाल का काम करते आये हैं; किन्तु अपने उन्मुक्त मार्ग एवं अपनी उर्वरता के कारण मालवा उतना सुरक्षित नहीं रह सका जितना बुन्देलखण्ड और बघेलखण्ड सुरक्षित रहे हैं।

पर्वतीय प्रदेश होने के कारण ही प्राचीन काल से उत्तर और दक्षिण भारत के मार्ग में होने पर भी आवागमन का यहाँ से कोई प्रशस्त मार्ग नहीं रहा। मालवा से पश्चिम समुद्र निकट होने के कारण वहाँ का व्यापार यद्यपि गुजरात से कुछ होता था,

पर शेष प्रान्त अपनी स्थिति के कारण कभी व्यापारिक नहीं रहा। किन्तु जीवनोपयोगी वस्तुओं के लिये उसे कभी परमुखापेक्षी भी नहीं रहना पड़ा। २० से ४० इंच की औसत वर्षा कपास, गेहूँ एवं धान इत्यादि पर्याप्त परिमाण में उत्पन्न करती है। चरखों के समय में बुन्देल खण्ड एवं चन्देरी (ग्वालियर) अपने वस्त्रों के लिये बहुत प्रसिद्ध थे। बुन्देल-खण्ड के अस्त्र-शस्त्र अब भी प्रसिद्ध हैं*। साहित्य (धारानगरी) संगीत (ग्वालियर) एवं कला-कौशल (सांची, भिलसा, भरहुत, खजुराहो कालिंजर इत्यादि) की यहाँ उत्तरोत्तर उन्नति होती गयी है। स्वाधीन-जीवी प्रदेश होने के कारण ही यहाँ के शासकगण सदा से स्वतन्त्र होते आये हैं और शुष्क किन्तु अधिक उष्ण प्रान्त न होने के कारण यहाँ भी मनुष्य जाति सदा से बहादुर जाति रही है। करचुली, परमार, चन्देल, बुन्देला एवं बाघेला वीर सदैव से स्वतन्त्रता के लिये लड़ते रहे हैं। मनुष्य-जीवनोपयोगी सब सामग्री सम्पन्न होने पर भी व्यापारिक प्रान्त न होने के कारण ही आबादी १२० प्रति वर्ग मील से अधिक नहीं बढ़ी है। उज्जैन आदि में जहाँ कहीं प्रान्तीय व्यापार होता था वहाँ की आबादी भी अधिक थी; किन्तु आज कल रेलों के समय में अब वह दशा नहीं रही। अब किसी देश की भौगोलिक स्थिति में रेल-मार्ग का भी पर्याप्त भाग होता है। यद्यपि मध्यभारत की प्रान्तीय स्थिति रेल मार्ग में भी बाधक हुई है; किन्तु रेलों की रेलापेली में इन्दौर, उज्जैन, रतलाम, ग्वालियर भोपाल और सतना यहाँ के व्यापार के केन्द्र हो रहे हैं। इनमें इन्दौर ही सबसे प्रमुख है; क्योंकि एक तो यह मध्यभारत के सबसे उपजाऊ प्रान्त मालवा में स्थित है, दूसरे भारत के फाटक बम्बई से, इटारसी द्वारा, जुड़ा हुआ है और तीसरे प्रान्त की यह राजधानी भी है।
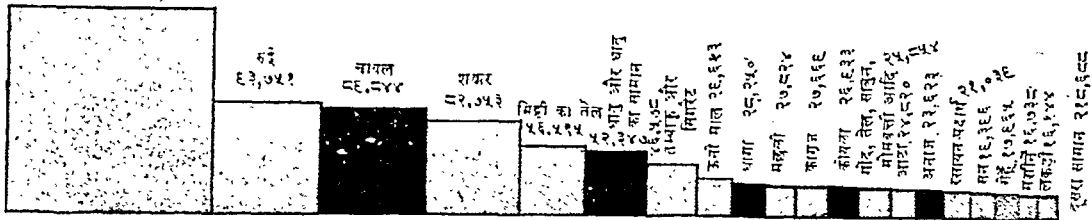
*स्वाधीन भारत के समय में यहाँ भी उत्तमोत्तम शस्त्रास्त्र बनाये जाते थे। उनमें तलवारें विशेष उत्तम होती थीं। और वे खास स्थानों की अपने अपने ढंग की होती थीं। जैसे, सूरत की सूधी, गुजरात की तलवार, हुगली और वर्दवान (बंगाल) का तेगा, बूंदी की कटार इत्यादि। किन्तु बुन्देलखण्ड इन सब की नकल करके अपने यहाँ सब प्रकार की तलवारें तैयार करता था।

—लेखक
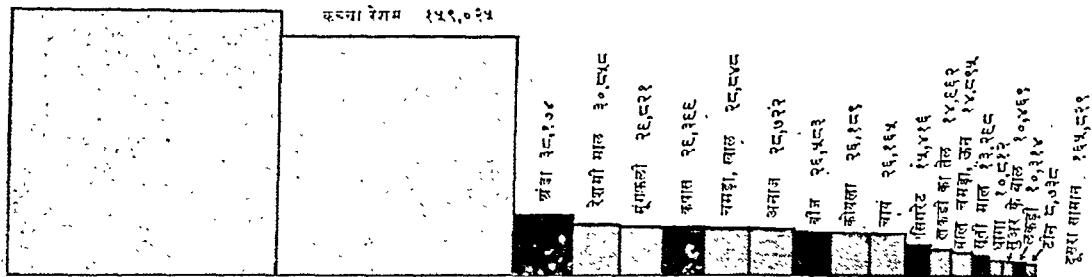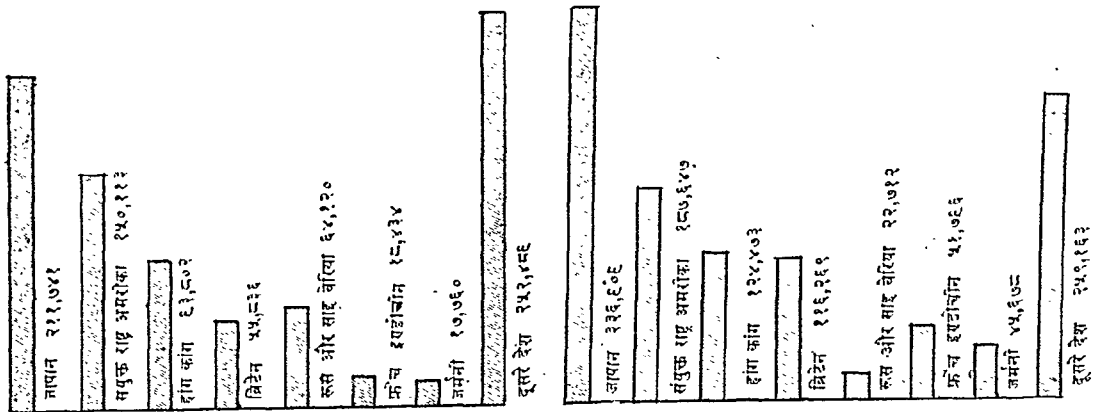
जापान ने कब और कितना भाग लिया
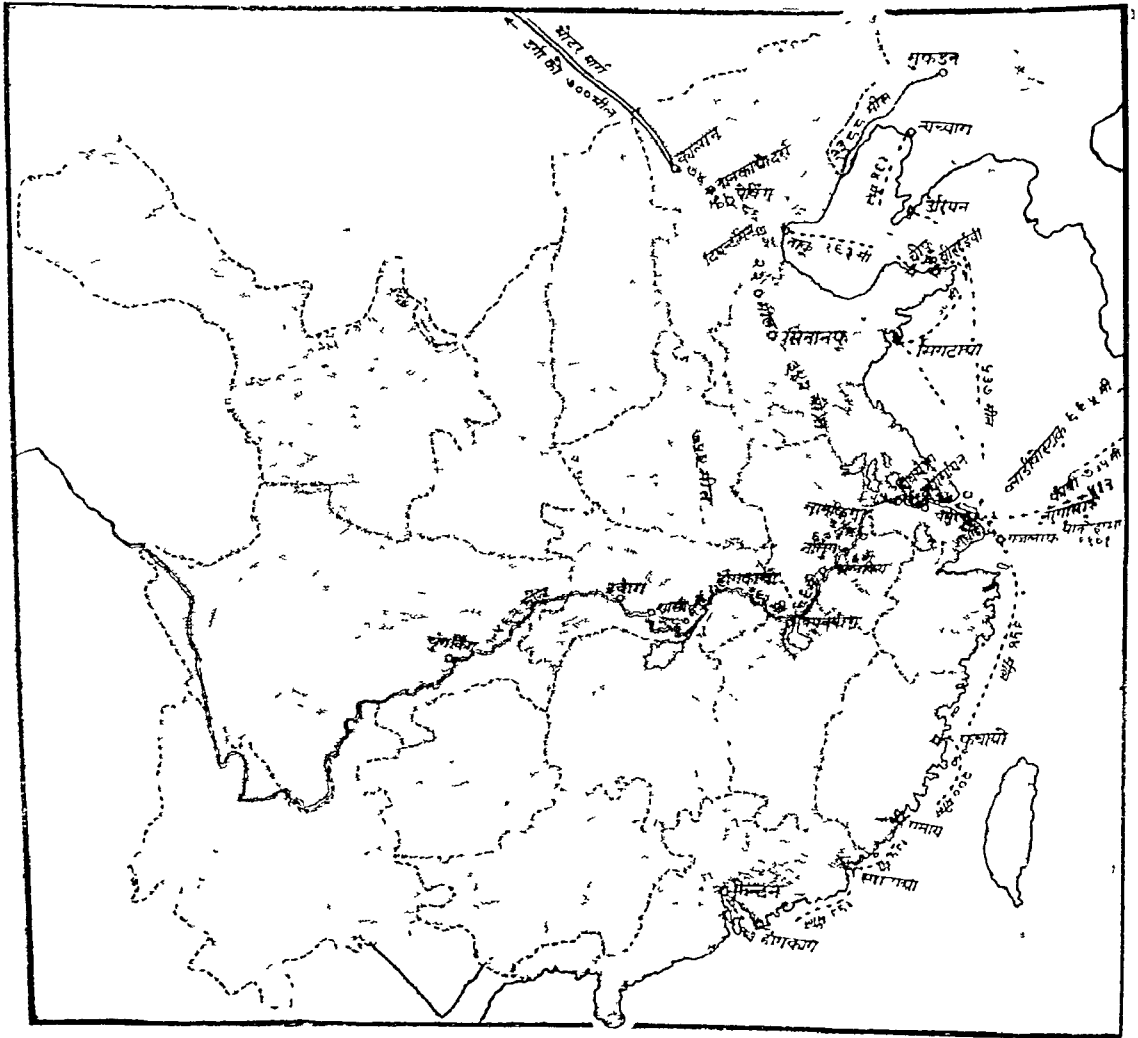
चीन के भिन्न भिन्न स्थानों की दूरी।

नोट—पृष्ठ ५७-५८ के नक्शे चीनो-एटलस के हैं। चूंकि उस समय व्लाक तैयार नहीं थे इसलिये इस अंक में दे दिये गये हैं।

Published by the Editor (Pt Ram Narain Misra, B. A.) and Printed by Sheopal at the Bhugol Press, 306, Jamuna Road, Allahabad.

भूगोल
वार्षिक मूल्य ३)
विदेश में ५)
एक प्रति का ।-)
अप्रैल १९३९
ANNUAL SUBSCRIPTION
Indian : Rs. 3/-
Foreign : Rs. 5/-
Single Copy: As. 5
सम्पादक- रामनारायण मिश्र बी०ए०
भूगोल-कार्यालय प्रयाग

"BHUGOL"

The only Geographical Monthly published in India

Purpose : "Bhugol" aims to enrich the geographical section of Hindi literature and to stimulate geographical instruction in the Hindi language.

Contents : Articles are published on varied topics of geographical interest : Current History, Astronomy, Industry and Trade, Surveys, Travel and Exploration, Fairs and Exhibitions, Plant and Animal Life. Climatic charts, a brief diary of the month, and questions and answers are regular features. Successive numbers contain serial articles on regional and topical subjects so that by preserving file of Bhugol any teacher of geography can accumulate invaluable reference material.

Travel Department : The Travel Department of "Bhugol" annually arranges tours which provide an excellent opportunity for geography teachers and students to visit regions of special interest in India, Burma and Ceylon. Full information will be supplied on application (with a stamped and addressed envelope).

Use in Schools : The use of "Bhugol" in connection with the geography instruction in high schools, normal schools and middle schools, is specially sanctioned by the Educational Departments of the United Provinces, Berar, the Central Provinces, the Punjab, Bihar and Orissa, Gwalior, Jaipur, Kotah and Jodhpur.

Remittances : Make all remittances , cheque, money order or British Postal Order, payable to the manager, **"Bhugol".**

Rates for Advertisements · Ordinary full

one page	Rs. 10/-
3rd page of the cover	„ 12/-
4th page of the cover	„ 15/-

Write to the Manager,

"BHUGOL",

ALLAHABAD.

Published by the Editor (Pt Ram Narain Misra, B. A) and Printed by Sheopal at the Bhugol Press, 306, Jamuna Road, Allahabad

भूगोल-कार्यालय प्रयाग

पर कुछ प्रतिष्ठित सम्मतियाँ

पुस्तकाकार सचित्र मासिक पत्र "देश-दर्शन" भूगोल-कार्यालय, प्रयाग से श्री० रामनारायण मिश्र के सम्पादकत्व में नवीन प्रगट होना प्रारम्भ हुआ है। इसका प्रथमांक 'लंका' के नाम से प्रगट हुआ है। पृष्ठ-संख्या १४४ और २ रंगीन तथा ५० सादे चित्र हैं। लेखों में लंका की भूरचना, जल-वायु, वन, हाथी, रबर, नारियल, मोती, रत्न, नगर, स्त्री, पुरुष, भारत से सम्बन्ध आदि पर बहुत खोजपूर्ण प्रत्यक्ष देखा हुआ प्रामाणिक वर्णन है। चित्रों में लंका का जुलूस, वहां के स्त्री-पुरुष, वस्त्राभूषण, श्रमजीवी, बौद्धभिक्षु, बौद्ध मूर्तियां, चित्रकला, मन्दिर तथा अनेक नकशे देखने योग्य हैं। इस अंक को पढ़ कर लंका का प्रत्यक्ष दर्शन सा हो जाता है। इसी प्रकार अप्रैल में 'इराक' और मई में 'पेलेस्टाइन' अंक निकलने वाला है। यह पत्र बाल-वृद्ध सभी के पढ़ने योग्य है। वार्षिक मूल्य ४) एक अंक का ।=) है। ऐसा सर्वांग सुन्दर नवीन पत्र प्रकट करने के लिये प्रकाशकगण अतीव धन्यवाद के पात्र हैं।

—दिगम्बर जैन, सूरत

देश-दर्शन—पुस्तकाकार सचित्र मासिक पत्र। सम्पादक पं० रामनारायण मिश्र बी० ए०, वार्षिक मूल्य ४) एक प्रति का ।=) भूगोल-कार्यालय, इलाहाबाद से प्राप्त।

पं० रामनारायण जी मिश्र ने अपनी भूगोल पत्रिका द्वारा हिन्दी संसार की जिस कमी को पूर्ति कर रहे हैं, वह प्रायः सभी हिन्दी भाषा भाषी जानते हैं। उन्हीं के सम्पादन में 'देश-दर्शन' का जन्म हुआ है। हिन्दी के लिये यह बिल्कुल नवीन चीज है। अँग्रेजी साहित्य तो इस तरह की सामग्रियों से भरा पड़ा है। किन्तु उनके लिये क्या, जो केवल हिन्दी ही जानते हैं। बड़ी प्रसन्नता है कि पंडित जी का ध्यान इस अभाव की पूर्ति की ओर भी गया। पत्र का एक अंक केवल एक देश के सम्बन्ध की पूर्ण जानकारी सरल सुबोध भाषा में भेंट करना है। भूगोल के प्रेमियों के लिए सुन्दर चीज है।

—"प्रकाश", रीवाँ।

विषय-सूची

विषय		पृष्ठ
१—मेरी जन्म-कथा में भ्रान्ति—(पं० कर्ण सिंह सब डि० इ० आबू स्कूल, सौंधा)	...	१
२—१९२८ की हलचलें—(ले० केशवप्रसाद मिश्र)	... ...	३
३—सुमेरपुर से सिरोही—(ले० वी० पी० शर्मा, सुमेरपुर)	... ...	५
४—क्या पृथ्वी वास्तव में अचला है ?—(ले० रामनारायण मिश्र 'विशारद')	... ...	८
५—एटलांटिक महासागर पर हवाई मार्ग—(ले० केशवप्रसाद मिश्र)	... ...	१०
६—चीन और तिब्बत की सीमा	" " "	१२
७—खनिज पदार्थ और विश्व शान्ति	" " "	१७
८—पहियेवाली गाड़ियाँ	... ...	१९
बेतवा के उद्गम पर—(बनारसीदास चतुर्वेदी)	... ...	२१
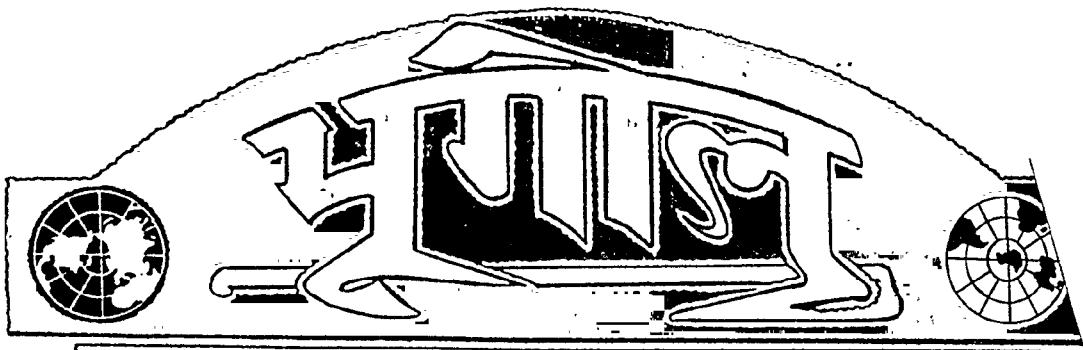
यह पत्र संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, बरार, बिहार, उड़ीसा, पंजाब प्रान्त तथा ग्वालियर, जैपुर, जोधपुर और कोटा राज्य के शिक्षा-विभाग द्वारा हाई, नार्मल और मिडिल स्कूलों में प्रयोग होने के लिये स्वीकृत है।

वर्ष १५] वैशाख सं० १९९६, अप्रैल १९३९ [सं० १२

मेरी जन्म कथा में भ्रान्ति

१—गंगा जी

(ठा० कर्णसिंह सब डि० इ० आव् स्कूल बांदा)

"मेरी जन्म कथा में चिरकाल से जो भ्रान्ति चली आ रही है वह दिन बदिन दृढ़ होती जा रही है। मेरी इच्छा थी कि इस विषय में वास्तविकता को जन साधारण के समक्ष रखूं। बहुत दिनों की इस साध को आज 'भूगोल' के प्रसिद्ध पृष्ठों द्वारा आप पर प्रकट कर पूर्ण कर रही हूँ। आशा है कि इस से जनता का पर्य्याप्त समाधान होगा। कम से कम अपना सत्य परिचय दे कर मैं अपने कर्तव्य का पालन कर रही हूँ।"

"प्रायः सर्वत्र लिखा है कि मेरा जन्म ब्रह्मा के कमण्डल से हुआ है वहां से शिव जी की अलकों में आना हुआ और अलकों से भूमण्डल पर !! वह भी सब हुआ है श्री भगीरथ जी के अथक तप से।"

"बात नितान्त सत्य है, मुझे केवल इस बात में आपत्ति है कि जनता उल्लिखित अलंकारमय वर्णन को सत्य मान बैठी है। उसका अनुमान है कि यह ब्रह्मा नहीं है जो ब्रह्म लोक में—इस लोक से सुदूर-रहते हैं। जिनके चार मुख बतलाये जाते हैं तथा जिनसे सृष्टि का जन्म हुआ है। शिव जी भी तीन नेत्र वाले, पार्वती सर्वस्व महादेव समझे जाते हैं। उन्हीं की अलकों-शिर मात्र की जटाओं-में वर्षों घूमती, विचरती और रमती रहीं।"

"महाराज भगीरथ के अथक तप से मैं भारत-भूमि पर आ सकी इस में तो कोई सन्देह नहीं है। महाराज का परिचय देना सूर्य को दीपक दिखलाना है। सत्य बात यों थी, महाराज भगीरथ ने सोचा कि उत्तरी भारत में अनेकानेक समृद्धियों के भरने हिमालय से एक ऐसा जल-स्रोत प्रवाहित

२

ये जो केवल अन्तर्वेद को ही नहीं पर विदेह, थेला, अंग-वंग इत्यादि अनेक देश-प्रदेशों को न-धन्य तथा अन्यान्य सभी सुपासों से परिपूर्ण कर दे। प्रातः स्मरणीय महाराज ने यह भी विचार किया कि इस प्रवाह में केवल विशुद्ध सर्वगुणालंकृत, मन-वचन कर्म को पवित्र बनाने वाले स्वास्थ्य मूलक सोतों का सम्मेलन हो। स्थान नियत करते समय यह समस्या सपक्ष में थी कि जल के स्वाभाविक गुण निम्न वादी-का भी ध्यान रखा जाय और उसे उन स्थानों में होकर प्रवाहित किया जाय कि युग युगान्तर कभी धार के इधर-उधर होने का भय न रहे।"

"यह कार्य जिस परिमाण में सत् था उतने ही परिमाण में महान! हिमालय की दुर्गम-नहीं अगम घाटियों में वर्षों सहस्रों विश्व कर्माओं, रसायन-विद-विशारदों सहित भगवान भगीरथ भ्रमते फिरे। उस महोद्योग का आज कोई अनुमान भी नहीं लगा सकता। यही कारण है कि आज प्रत्येक महान प्रयत्न का नाम भगीरथ-प्रयत्न पड़ गया है।"

"इस सुप्रयत्न के जो जो महान सुफल हुये हैं उनका अपनी लेखनी से वर्णन कर मैं 'अपने मुँह-मिया मिट्ठू' नहीं बनना चाहती। फिर वह सारे सुफल जग-विख्यात हैं। मेरा इतना ही कहना पर्य्याप्त होगा कि भारत की सारी सम्पत्ति, उसकी सभ्यता, उसके ज्ञान का विकास, वेदों का मनन, उस के ऋषियों की तपस्या, देवाधिप-दुर्लभ सभी शक्तियों का आविर्भाव और अभ्युदय केवल मेरी गोद में हुआ है।

"ऐसे महान कार्यों और कर्त्ताओं की ओर श्रद्धा का होना स्वाभाविक ही है। सरस्वती पुत्र कवियों ने इस का काव्यमय वर्णन किया, चित्रकारों ने अपनी कूँची से उसे चित्राकार कर दिखलाया तथा मूर्तिकारों ने इस घटना को मूर्ति रूप दिया और सभी ने अपने को धन्य समझा। महाराज भगीरथ के ऐसे महान् प्रयत्न का सम्मान प्रदर्शन और किसी प्रकार हो भी क्या सकता था।

उन बेचारे रसिक शिरोमणि कवियों, चित्रकारों और शिल्पकारों को क्या पता था कि केवल चर्म चक्षुओं से ब्रह्माण्ड के तारों, ग्रहों, उपग्रहों, नक्षत्रों के स्थान, आकार-प्रकार, गति और वेगों तथा उनके परिणामों का पता लगाने वाले, चराचर में व्याप्त नियमों का उद्घाटन करने वालों, आत्म-परमात्मा सम्बन्धी गूढ़ अध्यात्म विद्याओं का दिव्य चक्षुओं से रहस्योद्घाटन करने वालों, वेद के उपदेष्टाओं, उपनिषदों के रचयिताओं, दर्शन शास्त्र में वर्णित अगाध तत्त्वों द्रष्टाओं की सन्तान भविष्यत काल में ऐसी मन्द बुद्धि उत्पन्न होगी जो विशुद्ध काव्यालङ्कारों को भी न समझ सकेगी। वरन् 'बाबा वाक्यं प्रमाणम्' के आधार पर 'कौवा कान ले गया' मात्र सुन कर अपने कानों के सुनिकटस्थानों को न देख कौवा की जात के पीछे पड़ जायेंगे।

हिमाचल-नगाधिराज हिमाचल ने भारत को क्या क्या नहीं दिया? यही कारण है कि किसी ने उसे 'शिव' कहा था किसी ने कुबेर'। सारा हिमालय शिव है; कैलाश शिर है और अन्यान्य श्रेणियां उस (शिव) की अलकें। देहरादून के समीपस्थ शिवालक की श्रेणियों (शिव की अलकों) से भूगोल के सभी विद्यार्थी परिचित हैं। वास्तव में मेरा उद्गम कैलाश के निकटस्थ भाग से है; जिसका प्रमाण साम्प्रतिक पर्य्यटक भी देते हैं।

मेरे आदिम स्रोत भिन्न भिन्न स्थानों में स्थित ग्लेशियरों से प्रवाहित हैं। सब के लिये समुचित मार्ग बनाने में एक को दूसरे से मिलाने में और हरद्वार (शिव के द्वार) तक लाने में शिव-अलकों में भ्रमते भ्रमते अतिकाल लग गया।

इसी का काव्य मय वर्णन यों किया है:—

> विचरन लागी गंग जटा गहर बन बीथिन।
> लहत शम्भु सामीप्य, परम-सुख दिननि निसीथिन॥
>
> इहि विधि आनन्द में अनेक घाते सम्वत्सर।
> छोड़त छुटत न बनत, ठनत नव नेह परस्पर॥

निस्सन्देह भगवान भगीरथ जी कोई ऐसा सीधा मार्ग खोज निकालते जो शीघ्र ही मैदान पहुँचा देता तो अवश्य ही मिट्टी मात्र से निर्मित मृदुल मैदान में अगाध गहरा छिद्र हो जाता। अतः वर्षों अलकों में घुमाकर शनैः शनैः सकुशल ले आना जहां भगीरथ

जी की कुशाग्रबुद्धि और दूर दर्शिता को प्रगट करता है वहां अपार उमङ्गों से परिपूर्ण मुझे अपने में भुला रखना भी शिव जी का ही काम था।

समय समय पर सरस्वती पुत्रों ने आमरावत हो कर जो जो श्रद्धांजलियां प्रकट की हैं उन सब को यदि एक किया जाय और उनके आधार पर एक सक्रम जीवन चरित्र प्रस्तुत किया जाय तो उसकी रूप-रेखा के स्मरण मात्र से मैं सिहर जाती हूँ।

आशा है कि विज्ञ और दयालु पाठकों का इस कथन से कुछ सन्तोष होगा।"

१९३८ की हलचलें

जनवरी—रूस की राजधानी मास्को में स्टैलिन की अध्यक्षता में पहली सोवियट पार्लियामेन्ट का उद्घाटन हुआ। —आस्ट्रिया और हंगारी ने जेनरल फ्रैङ्को को स्पेन का शासक बाजाब्ता मान लिया। —यूनान में जेनरल मेटाक्साज की अध्यक्षता में पूर्ण डिक्टेटरशिप कायम हो गई।

फरवरी—जर्मनी के हिटलर ने सारी फौज की अध्यक्षता अख्तियार की। —जापान ने अन्य-राष्ट्रों की इच्छा के विरुद्ध निश्चय किया कि वह १९३६ की जहाजी संधि को नहीं मानेगा। —रूमानिया में गोगा के मन्त्रिमण्डल ने स्तीफा दे दिया। —ब्रिटिश साम्राज्य में हवाई जहाज से डाक ले जाने की एक व्यवस्था कायम हुई। —लार्ड हेली फैक्स ब्रिटेन के परराष्ट्र मन्त्री नियुक्त हुए। —अंग्रेजों के इटली के साथ एक सन्धि के कारण ईडन ने स्तीफा दे दिया।

मार्च—यूनान और टर्की में एक समझौता हुआ जो दस वर्ष तक कायम रहेगा। —रूस के षड्यंत्रकारी मुकदमे के २१ में से १८ को मृत्यु-दण्ड दिया गया। —इङ्गलैण्ड के नये परराष्ट्र मन्त्री लार्ड हेली फैक्स ने इटली के साथ एक सन्धि की। —जर्मनी की फौजें आस्ट्रिया में घुस गईं और उस पर नाजी शासन कायम हो गया। —मध्य चीन में जापानियों द्वारा निर्मित नया शासन विधान जारी किया गया।

अप्रैल—जर्मनी, इटली और जापान में एक व्यापारी समझौता हुआ। जिसके द्वारा वे आपस में सामान बदल कर व्यापार करेंगे। —फ्रान्स में डेलेडियर ने नया साम्यवादी मन्त्रिमण्डल कायम किया। —आस्ट्रिया में जनमत लिया गया और ९९.७५ फी सदी ने जर्मनी में मिल जाने पर सन्तोष प्रगट किया। —इङ्गलैण्ड और आयरलैण्ड में खजाना तथा देश-रक्षण सम्बन्धी एक समझौता हुआ।

मई—हिटलर मुसोलिनी से मिलने रोम गये। १७९ (फ्रान्स का सिक्का) फ्रैन्क बराबर एक पौण्ड के करार दिया गया। —बेल्जियम में पाल स्पाक ने सम्मिलित मन्त्रिमण्डल बनाया। —चेकोस्लोवेकिया के सूडेटन जर्मन प्रान्त में निर्वाचन के झगड़े से एक विकट समस्या उत्पन्न हुई। —फिलिस्तीन के यरूशलम में कुछ आतङ्कवादी काण्ड होने से सारे शहर में करफ्यू आर्डर जारी हुआ।

जून—चीन की सरकार ने हांकाओ खाली कर दिया। —चीन की पीली नदी की बाढ़ में हजारों मरे। —आयरलैण्ड में डि वेलरा को निर्वाचन में आधे से ज्यादा बहुमत मिला। —जापान द्वारा शासित चीन में विदेशियों को विशेष अधिकार मिले।

जुलाई—ग्रेट ब्रिटेन ने टर्की को लड़ाई का सामान खरीदने को ६०,००,००० पौंड इस शर्त पर दिये कि टर्की वह सामान ब्रिटेन से ही खरीदे। —ब्रिटेन और रूस ने "लन्दन जहाजी बेड़ा को सन्धि" पर दस्तखत किये। —फिलिस्तीन में आतङ्कवादी आन्दोलन बढ़ने से दशा शोचनीय हो गई। —बर्मा में साम्प्रदायिक झगड़ा शुरू हो गया।

अगस्त—चेकोस्लोवेकिया और जर्मन लोगों के झगड़े में बीचबचाव करने के लिये इंगलैण्ड से लार्ड

रन्सिमेन जर्मनी में गये। —मंचूकुओ की सीमा पर रूसियों और जापानियों में भिड़न्त हुई। —चेकोस्लोवेकिया, रूमानिया तथा युगोस्लेविया ने हंगारी पर हमला न करने का इकरार किया और हंगारी के अस्त्र शस्त्र बढ़ाने के हक को माना। —फिलिस्तीन में फिर झगड़ा शुरू हुआ। चेकोस्लोवेकिया के प्रधान मंत्री डाक्टर होड्जा ने पार्लियामेन्ट में सूडेटन जर्मनों का स्थानीय शासन कबूल किया।

सितम्बर—हिटलर ने सूडेटन जर्मनों की खुद-मुख्तारी की घोषणा की। ब्रिटेन के प्रधान सचिव नेविल चेम्बरलेन हिटलर से मिलने दो बार जर्मनी गये। —चेकोस्लोवेकिया ने एँग्लो फ्रेञ्च मसौदे के अनुसार जर्मन सीमा को फिर से दुहराने की बात मान ली। —हिटलर ने २४ घंटे के अन्दर शर्त न मानी जाने पर फौज आगे बढ़ाने का हुक्म दे दिया। —सारी दुनिया में फिर बड़ी लड़ाई का अन्देशा। —नेविल चेम्बरलेन डेलेडियर, मुसोलिनी और हिटलर म्यूनिक में मिले और चेकोस्लोवेकिया को सूडेटन प्रान्त जर्मनी के हवाले करना पड़ा।

अक्टूबर—जर्मन सेना ने सूडेटन प्रान्त में प्रवेश किया। चेकोस्लोवेकिया ने पोलैंड की बात मान कर टस्चेन प्रान्त में पोलैंड की सेना का आधिपत्य कबूल किया। —हंगारी और चेकोस्लोवेकिया में एक सुलह-नामा हुआ जिसके द्वारा हंगारी ने चेकोस्लोवेकिया के इंपोलोसाग और सटोरल जफेली नामक नगरों पर अधिकार कर लिया। —कैन्टन शहर पर जापानियों का पूर्ण अधिकार हो गया। —चेकोस्लोवेकिया ने हंगारी की सीमा सम्बन्धी शर्त मान लिया।

नवम्बर—इटली और जर्मनी ने मिलकर यह तय किया कि चेकोस्लोवेकिया में जिन प्रान्तों में हंगारी के लोगों की अधिकता हो उन पर हंगारी का अधिकार माना जाय। —फिलिस्तीन के कमीशन की रिपोर्ट प्रकाशित हुई और ब्रिटिश सरकार ने तय किया कि लन्दन में अरब और यहूदियों की एक बैठक बुलाई जाय। —संयुक्त राज्य अमरीका में निर्वाचन में प्रजातंत्रवादियों की विजय हुई। —टर्की के डिक्टेटर मुस्तफा कमाल अतातुर्क की मृत्यु हो गई। —पेरिस में जर्मनी के राजदूत हरवान राथ के मार डाले जाने के कारण जर्मनी में यहूदियों का घोर विरोध और दमन शुरू हुआ। —इंगलैंड और इटली में जो संधि हुई थी उसको अमल में लाने का निश्चय हुआ। —जर्मनी में अमेरिका का जो राजदूत रहता था उस से यहूदियों की समस्या के बारे में बातचीत करने के लिये उसे अमेरिका बुलाया गया।

दिसम्बर—फ्रान्स में मजदूरों की एक सार्वजनिक हड़ताल करने की कोशिश विफल हुई। —इटली के लोगों ने रोम में फ्रांस से ट्यूनिस, कार्सिका और नाइस वापस मिलने के लिये प्रदर्शन किया। —१५ दिसम्बर से स्वेज नहर के कर में कमी का एलान हुआ।

सुमेरपुर से सिरोही

(साइकिल द्वारा)

[लेखक—बी० पी० शर्मा, सुमेरपुर]

राजपूताने का ध्यान आते ही प्रायः आबू पहाड़ की याद आ ही जाया करती है। सिरोही राज्य आबू को चारों तरफ से घेरे हुए है। अरावली की तलहटी में यह एक छोटा सा पुरातन राज्य है जिसके शासक देवड़ा राजपूत हैं।

जिस जगह जवाई नदी सिरोही और जोधपुर की राज्य-सीमा बांधती हुई निकली है ठीक वहीं एरनपुर रोड स्टेशन से ५ मील दूरी पर जोधपुर स्थान है। सुमेरपुर की प्रसिद्धि उस समय से विशेष हुई जब यहां पर गत महायुद्ध के समय रूसी और तुर्की (लड़ाई के कैदी) का केम्प रहा।

भारतवर्ष की सब से पुरानी सड़क ग्रांडट्रङ्क रोड का एक टुकड़ा जो देहली और आगरा को अजमेर और अहमदाबाद से मिलाता है सुमेरपुर स्कूल के ठीक सामने से निकलता है और यहीं पर पी० डब्लू० डी० का बोर्ड लगा है जिसपर "जोधपुर ९९ मील" सिरोही २४ मील लगा है।

इस २४ मील की दूरी को साइकिलों द्वारा पूरा करके सिरोही नगर को देखने की हम कुछ अध्यापकों में लालसा उत्पन्न हुई। फिर क्या था ? विचार हुआ! प्रोग्राम बना!! सिरोही स्कूल के स्काउट मास्टर साहब को प्रोग्राम भेजा गया और फर्वरी १९३७ को सुबह ७ बजे प्रस्थान करने का निश्चय कर लिया।

आबू की तलहटी वाले प्रदेश में हमें कैसे दृश्य देखने को मिलेंगे इसकी कल्पना करते करते हम रात को सोये। प्रातःकाल उठने पर हमने देखा कि आकाश बादलों से घिरा हुआ है और कुछ हल्की हल्की फुहार भी आ रही है इस पर भी निराश होने का कोई कारण न था पर बाहर आकर देखा तो हवा हमारे प्रतिकूल दिशा में चल रही है। कुछ परामर्श करने के बाद हम लोग अपने हवाई घोड़ों पर सवार हो गये। मित्रों ने विदा दी! छात्रों ने उत्सुकता से हमारी तरफ देखा !!

यहां से करीब दो फर्लाङ्ग पर ही जवाई नदी है। इसे पार कर हम सिरोही स्टेट में घुसे। घुसते ही "ऐरनपुर कन्टोमेंट" आया। यहां का दृश्य बड़ा सुन्दर है। साफ सुथरी सड़कें, अच्छे अच्छे बँगले और बगीचे और सड़क के दोनों तरफ नीम के विशाल पेड़ हैं। यहां ऐरनपुर में करीब १०० वर्ष अंग्रेजों की छावनी थी जो गतवर्ष अक्टूबर में तोड़ दी गई है अब यह स्थान सिरोही राज्य को सौंप दिया गया है। ठीक छावनी से मिला हुआ ही सिरोही राज्य का गांव शिवगंज है जिसकी जन संख्या करीब ५ हजार की है।

ऐरनपुर से रवाना होकर हम फिर जोधपुर राज्य में घुस गये। हम लोग सड़क पर चल रहे थे। यहां पर जोधपुर राज्य का घास का मैदान है जिसे 'जोड' कहते हैं। करीब ३ मील पर घास के मैदान के मालिक का बङ्गला मिला जहां पर कुछ जोधपुर स्टेट के आदमी घास की व्यवस्था के लिये हैं। इन लोगों ने चाय पानी से हमारा स्वागत किया।

यहाँ से फिर ३ मील की दूरी पर सूकडी नदी मिली जिसका पाट करीब ३ फर्लाङ्ग चौड़ा था।

यहां पर एक बात ध्यान देने योग्य है। जब घास के मैदान से रवाना हों उस समय आपको इस बात की सूचना सड़क ही दे देगी कि अब जोधपुर राज्य से फिर सिरोही के राज्य में आप घुस रहे हैं। यह कैसे ? सड़क पर कोई पत्थर या और कोई निशान देखने की आपको आवश्यकता नहीं। जब चलते चलते सड़क पर बड़े बड़े पत्थर पड़े हुए मिलें और आपको सड़क छोड़कर पगडन्डी का सहारा लेना पड़े तो समझिये अब सिरोही राज्य का आरम्भ हो गया। ऐसी बुरी सड़क तो अब तक कहीं भी देखने को नहीं मिली थी। अशोक और शेरशाह की प्यारी ग्रांडट्रङ्क रोड की यहां पर इस प्रकार मट्टी पलीद होते देखकर दुख हुआ। गनीमत होती अगर

जोधपुर शहर का एक दृश्य

सिरोही स्टेट से इसके ऊपर मिट्टी पड़ती रहती। पूछने पर मालूम हुआ कि स्टेट की आर्थिक अवस्था ठीक नहीं है। खैर—

रास्ते में कहीं कहीं पर कुएँ और हरे खेत दिखाई देते थे जिस पर अरट द्वारा सिंचाई हो रही थी। हम लोग कभी पगडन्डी पर और कभी उजाड़ रास्ते पर सड़क के पास पास चल रहे थे पर सड़क पर चलने की हमारी हिम्मत ही नहीं होती थी। करीब १० बजे हम सिरोही स्टेट के पालडी गांव में पहुँचे। यह सुमेरपुर के बीच कहीं पर भी कोई कुआँ नज़र न आया। जहां तक नजर जाती थी कहीं हरा खेत भी तो दिखाई नहीं देता था। हम लोग प्यासे थे। यह सोचकर हमने पानी साथ में नहीं लिया था कि सड़क के किनारे किनारे कम से कम सुमेरपुर की तरह खेत तो होवेंगे। धीरे धीरे हम आगे बढ़ रहे थे। चारों तरफ बैर की सूखी झाड़ी के सिवाय कोई हरा वृक्ष भी तो नहीं था जिसकी साया में कुछ आराम किया जावे।
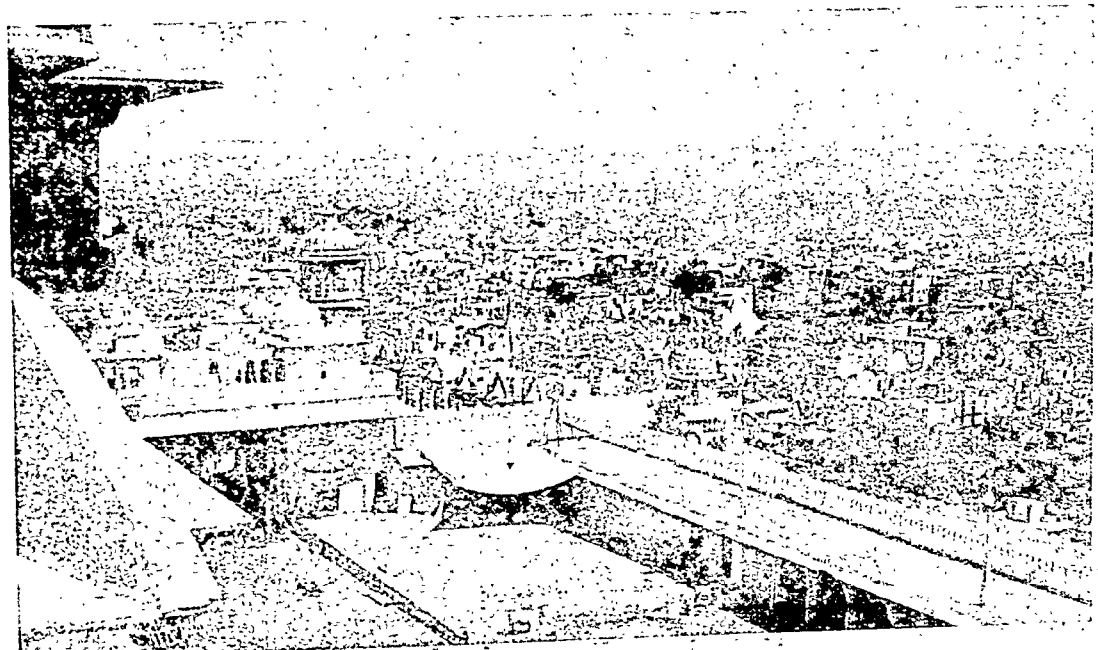
जोधपुर का एक दृश्य

से १२ मील है पर इस १२ मील में हमे तीन घंटे लग गये। यहां खेत में कुएँ के पास बैठकर हमलोगों ने भोजन किया। कुछ देर आराम करने के बाद फिर शेष १२ मील की यात्रा की तैयारी हुई। रास्ते भर इस बुरी सड़क और हवा का सामना करना पड़ा।

पुस्तकीय ज्ञान और वास्तविक ज्ञान में क्या अन्तर होता है इसकी पोल यहां पर खुल गई। बचपन से पढ़ते रहे थे और अध्यापक के नाते पढ़ा रहे थे कि अरावली के तलहटी के प्रदेश हरे भरे हैं। यहाँ पानी कहीं नज़र भी नहीं आ रहा था। पालडी से सिरोही

करीब २ बजे हमें पहाड़ में कुछ मकानात से नज़र आये। हमने सोचा सिरोही आगया। कुछ रफतार और बढ़ाई। कुछ आगे चलने पर ज्ञात हुआ कि आगे पहाड़ पर महल इत्यादि हैं। एक सड़क बाईं तरफ को जा रही थी। हम लोग इधर नहीं मुड़े। पूछने पर मालूम हुआ यह सारणेश्वर का बड़ा मन्दिर और कुछ घर थे।

सारणेश्वर जो से आगे सड़क अच्छी है। २ मील और चलने पर सिरोही का हवाई जहाजों का अड्डा

आया। यहाँ पर योरुपियन गेस्ट-हाउस है जिसमें कुछ बगीचे सा भी नजर आया।

चारों तरफ नजर दौड़ाने पर भी कोई पानी का नल नजर नहीं आया। यहां पर हमको कालविन हाई स्कूल सिरोही के कुछ स्काउट मास्टर मिले। उन्होंने हमारा खूब स्वागत किया। हमारा पहिला सवाल यही था, पहिले कहीं पानी का इन्तजाम कीजिये फिर आपके स्कूल चला जायगा। वे इसपर हँसे और बोले "स्कूल बिल्कुल करीब ही है"।

स्कूल पहुँचे, स्काउटों ने स्वागत किया। हमें एक कमरे में बिठाया गया। ठंडे जल की मटकियें भरी थीं, हमने खूब पानी पिया। आज पानी की कीमत का विचार आया। कुछ देर में मिठाई और चाय भी आ गई। हमलोग फिर ताजे हो गये।

स्काउट मास्टर हमें मातृ माता दिखाने ले गये। यह स्थान पहाड़ों के बीच में है और विकट चढ़ाव उतार है। कहते हैं पहिले सिरोही महाराजा साहिब किसी जमाने में यहाँ आया जाया करते थे। इसी वास्ते एक सड़क सी बनी हुई है पर अब तो भग्नावशेष ही रह गये हैं। यहां पर पानी का झरना और देवी का मन्दिर है।

शिक्षा प्रचार में सिरोही अभी बहुत पीछे है। सब रियासत का एजुकेशन बजट सिर्फ ४० हजार सालाना है जिस में से आधा करीब राजधानी में ही खर्च हो जाता है। शिक्षा-प्रचार की नई स्कीम तैयार हो रही है।

भोजन के पीछे हम शहर के अन्दर का भाग देखने निकले। शहर भर में बिजली की रोशनी है और सड़क पत्थर की बनी हुई है। सफाई भी ठीक ही है। पर पानी की कमी यहां भी नजर आई। कहीं भी हरियाली नहीं दीख रही थी। अगर थी तो सिर्फ कुछ बेल बूटे। राजधानी होते हुए भी यहाँ पर कोई सिनेमा हाउस वगैरह नहीं है। आमोद प्रमोद के नूतन साधनों की भी कमी नजर आई। शहर भर में ढूंढने पर कोई भोजनालय नहीं मिला।

जब कि भारतवर्ष के सब प्रान्त और रियासतें बहुत संकीर्ण विचार रखती हैं और राजकीय नौकरियों के लिये अपने यहाँ के खास खास आदमी ही लेती हैं। सिरोही बड़ी उदार रियासत नजर आई। वह पहिले बाहर वालों को नौकरी देती है फिर कहीं अपने आदमियों को। देखने लायक स्थानों में कोई भी उल्लेखनीय नहीं है।

२२-२-२७ को करीब १२ बजे हम लोग स्काउटों व स्काउट मास्टर साहिब से विदा लेकर वापिस सुमेरपुर की तरफ रवाना हुए।

आश्चर्य! हवा फिर सामने से चलने लगी।

क्या पृथ्वी वास्तव में अचला है?

महाभारत के युद्ध के पश्चात् विज्ञान को जनपद-ध्वंसकारी समझे जाने के कारण लोगों को उसके अध्ययन की रुचि कम हो गई। फलतः अविद्यान्धकार में पड़ कर भूमण्डलवासी पृथ्वी को अचला और इस दृश्य-संसार का केन्द्र समझने लगे। जैसा कि नीचे के अवतरणों से सिद्ध है—

१—योरप में सब से पहले कोपरनिकस नामक विद्वान ने यह बतलाया कि ग्रहों की नाना गति-विधि का मूल कारण भूमि-भ्रमण है, परन्तु उसकी इस बात का घोर विरोध किया गया।

२—भारतवर्ष में जिस समय स्वामी दयानन्द सरस्वती ने ऋग्वेदादि भाष्य-भूमिका में वेद-मन्त्रों से निरुक्तादि के अर्थ के आधार पर पृथ्वी का घूमना सिद्ध किया, तो बड़ा कोलाहल मचा और उनके सिद्धान्त का घोर विरोध किया गया।

हमारे संस्कृत-साहित्य में पृथ्वी के घूमने की चर्चा यत्र-तत्र पाई जाती है। वेदों के अतिरिक्त निरुक्त ब्राह्मण, आरण्यक और उपनिषद आदि में "दूरंगता भवतीति" और "नायमुदेति नायमस्तमेति" इत्यादि भाव वाले प्रवचन मिलते हैं। कविकुल-शिरोमणि माघ ने भी कहा है—

'उदयति विततोर्ध्व रश्मिरज्जावहिम
रुचौ हिमधाम्नि याति चास्तम्।
वहति गिरिरयं विलम्बि घटाद्वयपरिवारित
वारणेन्द्र लीलाम्॥

इस पद्य में कवि ने 'उदयति' कह कर सूर्य के वास्तविक उदय से इनकार किया है और परोक्ष रूप से पृथ्वी को गतिमान् माना है। अज्ञानान्धकार फैलने के बाद सब से पहले पृथ्वी के घूमने की चर्चा आर्यभट्ट ने चलाई, परन्तु लल्ल और श्रीपति ने इस पर आपत्ति की। सुतराम् के उस समय ज्योतिष-शास्त्र के अवनति-ग्रस्त होने के कारण उनके आक्षेप का ठीक-ठीक उत्तर नहीं दिया जा सका।

श्रीयुत भास्कराचार्य ने यद्यपि अपने ग्रन्थों में पृथ्वी को केन्द्र मानने की प्रणाली का ही अनुसरण किया है, तथापि उन्होंने पृथ्वी के घूमने का खण्डन भी कहीं नहीं किया। 'सूर्य सिद्धान्त' में भी ग्रहों की गति का कारण भूमि-भ्रमण ही बतलाया गया है। 'सूर्य सिद्धान्त' के रचयिता ने सौर-जगत् का केन्द्र सूर्य ही को माना है।

इस से स्पष्ट है कि 'सूर्य सिद्धान्त' कार भास्कराचार्य आदि इस बात को मानते थे कि पृथ्वी अचला नहीं है। वह परिभ्रमण करती है।

अब सवाल यह है कि यदि विद्वानों को मालूम था कि पृथ्वी अचला नहीं है तो उन्होंने अपने शिष्यों को उसके अचलत्व का निरूपण करते हुये ग्रह-गणित क्यों सिखाया ?

इसका कारण यह प्रतीत होता है कि उन्हें जिस प्रकार के शिष्यों को ग्रह-गणित पढ़ाना था, उनके लिये यह भूमिका-सापेक्ष (संबंध) भूमि-अचलत्व ही सर्वोत्तम आधार था। डाक्टर हावसन कहते हैं कि "छोटी कक्षाओं में बच्चों को भिन्न की जो परिभाषा बताई जाती है, वह वैज्ञानिक नहीं होती; क्योंकि उनके मस्तिष्क कोमल और अपरिपक्व होते हैं। इसलिये उनके लिये अवैज्ञानिक और अशास्त्रीय परिभाषायें और रीतियाँ बतलाना ही पर्य्याप्त है। मानसिक परिपक्वता होने पर वे शास्त्रीय परिभाषायें स्वयं निकाल लेंगे।"

अतः सिद्ध है कि 'सूर्य सिद्धान्त' के रचयिता ने यदि पृथ्वी के अचलत्व को मान कर व्यतिरेकयुक्त साधन से काम लिया, तो इसका अर्थ यह नहीं है कि पृथ्वी अचला है। नहीं, वह भ्रमणकारिणी और गतिशीला है।

यह तो हुई प्राचीन खास ज्योतिषियों की बात; किन्तु इनके बहुत पीछे अभी मध्य युग के आरम्भ में दक्षिण के ज्ञानेश्वर महाराज ने गीता पर ज्ञानेश्वर टीका मराठी भाषा में लिखी है। उसके चौथे अध्याय की ९९ वीं 'ओवी' में लिखा है कि—"आणि उदो अस्ताचेनि प्रमाणे जैसे न चलतां सूर्याचें चालणें, जैसें नैष्कर्म्य तत्व जाणे कर्मी चि असतां।" अर्थात् "और उदय-अस्त के प्रमाण से जैसे न चलते हुये सूर्य का चलना प्रतीत होता है। वैसे ही कर्म में रहकर निष्कर्म के तत्त्व को जानना चाहिए।" कितना स्पष्ट उल्लेख है। इससे सिद्ध है कि भारत के मध्यकालीन सामान्य विद्वान भी पृथ्वी को अचला नहीं मानते थे।

ऊपर दिये हुये कतिपय प्रमाणों और उल्लेखों से ही पृथ्वी के अचलत्व का खण्डन और निराकरण हो जाता है एवम् उसके गतिशीला होने में कोई सन्देह नहीं रहता।

भूमि की गतियां कई तरह की हैं, पर उनमें से दो मुख्य हैं—

(१) अक्ष परिभ्रमण—अर्थात् पृथ्वी उत्तरी और दक्षिणी ध्रुवों को मिलाने वाली सरल रेखा पर चौबीस घण्टे में एक बार घूम जाती है। इस गति से दिन-रात होते हैं। इसीलिये इसे दैनिक-गति भी कहते हैं।

(२) सूर्यपरिक्रमण—ब्रह्माण्डमध्ये परिधिर्व्योमकक्षाभिधीयते—पृथ्वी के चलने के मार्ग को कक्षा (Arbit) कहते हैं। इस कक्षा या क्रान्ति वृत्त को किसी सड़क का मार्ग न जानना चाहिये। यह एक कल्पित आकाश मार्ग है जिससे पृथिवी सूर्य की प्रदक्षिणा करती है।

इसको 'वृत्ताभ' भी कहते हैं। लगभग ३६५¼ दिन में पृथ्वी सूर्य की एक परिक्रमा कर लेती है। इससे वर्ष और ऋतुयें होती हैं।

सम्भवतः पाठकगण दिन रात का घटना बढ़ना और ऋतुओं का परिवर्त्तन एवं उसका कारण जानते हैं। इसलिये इसकी विशेष व्याख्या न करके लेख यहीं समाप्त किया जाता है।

रामनारायण मिश्र 'विशारद'

———

एटलांटिक महासागर पर हवाई मार्ग

(श्री केशवप्रसाद मिश्र)

बड़ी लड़ाई से पहले वैज्ञानिक इस बात की कोशिश कर रहे थे कि एक महाद्वीप से दूसरे महाद्वीप में पहुँचने के लिये हवाई जहाज सुगम साधन बन सके। बड़ी लड़ाई शुरू होने के कुछ पहले अमेरिकन लोग उत्तरी एटलांटिक पार करने की पूरी तैयारी भी कर चुके थे। वार्सलस की संधि होने के समय तक लार्ड नार्थक्लिफ द्वारा घोषित दस हजार पौंड का इनाम जीतने की कोशिश करने वाले उड़ाकों ने न्यूफाउण्डलैण्ड में लगभग ६ कैम्प भी बना लिये थे। पर सबसे पहले लिन्डबर्ग ने सन् १९२७ में एटलांटिक सागर को हवाई जहाज द्वारा पार कर पाया।

आजकल अन्तर्राष्ट्रीय हवाई मार्ग दो भागों में बांटा जा सकता है। एक तो राजनैतिक दूसरा इन्जीनियरिंग। पहले तो यह देखना पड़ेगा कि क्या हमेशा एटलांटिक सागर पर से जहाज आ जा सकते हैं या सिर्फ एक बार इनाम जीतने की वजह से अधिक से अधिक रकम खर्च करके सिर्फ वाह वाही की जा सकती है? अगर जहाज बराबर आते जाते रहें तो उन पर इतना सामान ढोया जा सकता है कि उनके चलाने का खर्च निकल आवे? इन सब बातों के हो जाने पर भी भिन्न भिन्न सरकारें इस हवाई मार्ग में कोई आपत्ति तो नहीं करेंगी।

सन् १९१९ में सिर्फ यही अड़चन थी कि क्या ऐसा जहाज बन सकता है जो लम्बी दौड़ कर सके। यह कोई न सोचता था कि राजनैतिक अड़चन और भी कठिन होगी। पेरिस में एक अन्तर्राष्ट्रीय हवाई सभा हुई थी जिसमें बत्तीस देशों ने इस बात का वादा किया कि निर्दोष हवाई जहाज (जो लड़ाई से अलग हों) उनके देशों के ऊपर से उड़ सकते हैं। इस शर्त में योरुप के जर्मनी हङ्गारी बाल्टिक रियासतें और रूस नहीं शामिल थे।

पर इस शर्तनामे से भी कुछ विशेष लाभ नहीं। शर्त के नियम १५ में लिखा है कि उड़ने के पहले उड़ाकों को जिस देश पर से उड़ना है उसकी स्वीकृति हासिल करनी होगी। सन् १००० में संसार के मुख्य देशों की एक सभा हुई। इसमें यह प्रस्ताव रक्खा गया कि हवाई जहाजों के आमदरफ्त में पुलिस के नियंत्रण को छोड़ कर और कोई बाधा न डाली जाय। इस प्रस्ताव के पक्ष में सिर्फ चार वोट आये। ये चार वोट संयुक्तराज अमेरिका, ब्रिटेन, स्वीडन और हालैण्ड के थे। फ्रांस, जरमनी, इटली, पुर्तगाल और ब्रजील ने इसका विरोध किया। इसलिये सन् १९२९ से यह अन्तर्राष्ट्रीय हवाई जहाजों की समस्या उलझी पड़ी है। एक राज्य को दूसरे राज्य के ऊपर से जहाज ले जाने की आज्ञा मिल जाती है यह एक विशेष रियायत की बात है।

इस सिलसिले में एक बात विचारणीय है। समुद्र सब के लिये खुला है पर हवा पर कैद है। पानी में जहाज चलाने वाले बड़े बड़े राष्ट्रों को यह बहुत पहले ही अनुभव हो गया था कि समुद्र में दूसरे देशों को जहाज चलाने की आज्ञा न देने से अपने व्यापार की ही हानि होगी। इस अनुभव का नतीजा यह हुआ कि न सिर्फ समुद्र पर हर देश के बन्दरगाह भी सब देशों के जहाजों के लिये खुले रहते हैं। किसी खास जहाज का कोई खास सामान देश में मना किया जा सकता है। पर वह जहाज जिस पर रोक का सामान लदा है बन्दरगाह में आ सकता है।

उपरोक्त उदाहरण को सामने रखते हुये इसमें आश्चर्य मालूम होता है कि संसार के राष्ट्र हवा को भी उसी प्रकार स्वतंत्र क्यों नहीं कर देते जिस प्रकार समुद्र है। पर इसके तीन मुख्य कारण हैं—एक तो यह कि सब राष्ट्र डरते हैं कि शांति के समय व्यापारी जहाजों पर आने वाले उड़ाके युद्ध के समय जङ्गी हवाई जहाज लेकर देश और मार्ग के अपने पिछले अनुभव से फायदा उठा कर दूसरे देशों को नुकसान पहुँचायेंगे। दूसरा कारण यह है कि अन्तर्राष्ट्रीय हवाई मार्ग कई देशों के ऊपर से है एक राष्ट्र को अपने जहाज पर पूरा नियंत्रण रखना पड़ता है। यह नियंत्रण किसी खास मौके पर ऐसा भी हो सकता है जो दूसरे देश वाले उस समय गवारा न करें जब हवाई जहाज उनके देश के ऊपर या सीमा में है।

दूसरे देशों के अपने निजी जहाजों के नियंत्रण के सिलसिले में विदेशों के साधारण नियमों का उल्लंघन होना सम्भव है। तीसरा और सबसे बड़ा कारण है व्यापारिक प्रतियोगिता! व्यापार में एक दूसरे से ईमानदारी से या बेईमानी से बढ़ने की प्रवृत्ति आजकल राष्ट्रों में बड़ी तेज़ी से बढ़ गई है। किसी किसी देश में रहन सहन का खर्च बहुत कम है वहां जो चीजें बनाई जाती हैं वे बहुत सस्ती बनती है इसलिये स्वाभाविक रीति से वे दूसरे देशों की चीजों के मुकाबले सस्ती बिकती ही हैं। यदि हवाई मार्ग पर बाधा न डाली जाय तो यह व्यापार की चढ़ा बढ़ी की समस्या और भी विकट हो जाय। इसी विषय को ध्यान में रखकर जहां कहीं हवाई जहाज़ द्वारा व्यापार को थोड़ा बहुत सुविधा मिली है वह इस रूप से नियमित की गई है कि एक दिये हुये समय में ज्यादा से ज्यादा दी हुई संख्या में ही जहाज उड़ाये जा सकते हैं अर्थात् एक महीने में जितने जहाज की आज्ञा हो उससे अधिक नहीं उड़ाये जा सकते।

व्यापार के लाभ और हानि की इस असमानता के कारण ही बड़े बड़े राष्ट्रों में भी कोई निश्चित समझौता नहीं हो पाता! एक राष्ट्र दूसरे से कुछ रिआयत चाहता है—छोटी रिआयत ही सही, पर अक्सर ऐसा होता है कि रिआयत माँगने वाले राष्ट्र के पास उसी हैसियत की कोई रिआयत या चीज़ नहीं पाई जाती जो वह बदले में दे सके। इसी बदले के सवाल के कारण जब अमेरिका ने केरेबियन के ऊपर से आने जाने में रियायत चाही तो ब्रिटेन और फ्रान्स ने उसमे आनाकानी की। संयुक्त राज्य अमेरिका भी यद्यपि दूसरों से रियायत मांगता रहा है पर दूसरों को आज्ञा देने में उसी रीति से काम लिया है जिससे अन्य देश लेते रहे हैं। एटलांटिक को पार करने वाले ज़ेपलिन और हिन्डेन्बर्ग नामक जहाजों के लिये सिर्फ थोड़े दिनों के लिये नियंत्रित आज्ञा दी गई थी।

व्यापारिक बाधायें किसी न किसी रूप में हल हो सकती हैं। पर समस्या यह है कि हवाई मार्ग कुछ ऐसे देशों के ऊपर से हैं जिन देशों में कुछ अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की चीज ही नहीं इसलिये उन देशों को हवाई जहाजों से ज्यादा से ज्यादा टैक्स वसूल करने के सिवाय और कोई लालच नहीं है। ऐसे देशों की यह उदासीनता तथा ज्यादा से ज्यादा कर की नीति हवाई जहाजों से व्यापार के लिये अन्तर्राष्ट्रीय बड़ा घातक है। करों के अलावा पश्चिमी एशिया के मध्यवर्ती देशों में से कुछ ने जिनके ऊपर से हवाई जहाजों का मार्ग है यह भी कहा कि हवाई जहाजों में हमारे देश के लोगों को नौकर रक्खो; कुछ ऐसे स्थानों पर जहाजों के रोकने के स्टेशन बनाने की शर्तें जहां रुकने से कोई लाभ नहीं और एक देश ने तो यह भी कहा कि जितनी

देश के ऊपर उड़ कर कमाई जावे वह इसी देश के हवाई जहाज सम्बन्धी कामों को उन्नति में खर्च की जाय।

अब उपरोक्त सब बातों को ध्यान में रख कर एटलांटिक सागर के ऊपर से व्यापारी हवाई जहाजों का मार्ग बनाने की समस्या पर गौर करना चाहिये। योरुप और दक्षिणी अमेरिका में आपस में योरुप और संयुक्त राज्य के मुकाबले व्यापार कम होता है पर फ्रान्सीसियों और जर्मनों ने अपने व्यापारी जहाज दक्षिणी अमेरिका भेजना शुरू किया। इससे दो फायदे हुये! एक दक्षिणी अमेरिका में फ्रान्स और जर्मनी की शक्ति के साथ उन देशों के कारबार की भी धाक जमी दूसरे जर्मनी को अपने सुन्दर देश-निवासी जर्मनों से अधिक सम्पर्क करने की सुविधा मिली।

अभी तक सिर्फ दक्षिणी एटलांटिक सागर पर ही स्थायी रूप से हवाई जहाज चलते रहे हैं। दक्षिणी एटलांटिक पर जहाज उड़ाने वालों में अभी दो देश हैं अर्थात् जर्मनी और फ्रांस इन दोनों देशों में जर्मनी को अधिक सफलता मिली है। दक्षिणी एटलांटिक पर हवाई जहाज उड़ाने का काम पहले शुरू किया इसका एक कारण यह है कि उत्तरी एटलांटिक सागर पर तेज पछुआ हवाएँ चलती हैं। ये कभी कभी पचास मील की रफ्तार से चलती हैं दक्षिणी एटलांटिक पर विषुवत् रेखा प्रदेश की शांत हवाएँ जहाजों की प्रगति में बाधा नहीं डालतीं. दूसरा कारण यह है कि दक्षिणी एटलांटिक में टापू उत्तरी एटलांटिक के मुकाबले अधिक नजदीक मिलते जाते हैं। लिसबन से नेटाल जाने में केनारी, केप वर्ड तथा सेण्ट पोल क्रमश: ७००. ९०० और १००० मील की दूरी पर मिलते हैं। अफ्रीका में स्थित डाकर से नेटाल बिना किसी ठहरने का स्थान होते हुये १८६५ मील है।

उत्तरी एटलांटिक में लिसबन से न्यूयार्क जाने में अजोर्स नामक द्वीप लिसबन से १०५० मील की दूरी पर स्थित है। अजोर्स से न्यूयार्क २३८० मील की दूरी पर है। अजोर्स के अलावा उत्तरी एटलांटिक में और कोई टापू नहीं है। धुर उत्तर में ग्रीनलैण्ड और आइसलैण्ड हैं। यदि न्यूफाउन्डलैण्ड से ग्रीनलैण्ड और आइसलैण्ड होकर जहाज चलाये जायँ तो साल के कई महीने यह गमनागमन बन्द रखना पड़ेगा क्योंकि यह द्वीप बहुत ठण्डे हैं और जिनमें ज्यादातर समय जमीन बर्फ से ढकी रहती है। एक बार कुछ वैज्ञानिकों ने एक तरकीब सोची थी कि समुद्र पर तैरता हुआ हवाई जहाज का स्टेशन बनाया जाय। यह तरकीब फ्रान्स तथा अन्य सरकारों को इतनी पसन्द हुई थी कि उस समय ऐसा प्रतीत होता था कि स्टेशन बनने ही वाला है पर सवाल खड़ा हुआ कि उस स्टेशन पर किसका अधिकार माना जायगा। एटलांटिक सागर किसका है? स्टेशन कौन बनायेगा? उसका नियंत्रण किस प्रकार होगा? इसलिये वह ख्याल छोड़ दिया गया।

अब एक ही भरोसा बच गया। ऐसे जहाज बनें जो बिना रुके एटलांटिक पार कर सकें। जर्मनी ने ऐसे दो जहाज बनाये। पहला जेपलीन था। इसने साल में दो बार एटलांटिक को पार किया। इसके बाद जर्मनी सवारी और डाक ले जाने का हिन्डेन्बर्ग नामक दूसरा जहाज बनाया जो बराबर एटलांटिक को पार करता रहा। इस जहाज को परीक्षा के तौर पर अमेरिका ने एक साल की स्वीकृति दे दी थी। पर अभाग्यवश जब हिन्डेन्बर्ग दस बार एटलांटिक के एक तरफ से दूसरी तरफ आ जा चुका था तो एक बार गिर कर वह चकनाचूर हो गया। यह सन् १९३६ की बात है। तब से अभी तक किसी देश ने एटलांटिक पार करने की कोशिश उस रूप से नहीं की जैसी जर्मनी कर चुका है पर अब अमेरिका और इङ्गलैंड में इस विषय में कुछ कोशिश हो रही है।

चीन और तिब्बत की सीमा

[राजा महेन्द्रप्रताप भारत के निवासियों में से एक हैं। धार्मिक तथा राजनैतिक विचारों के नेता तो वे माने ही जाते हैं पर हमारे लिये वह भौगोलिक अनुसन्धान के भी नेता हैं। भूमण्डल के दुर्गम से दुर्गम भागों की आपने कभी अकेले कभी साथियों सहित यात्रा की है। आजकल आपको भारत वापस बुलाने की कोशिश हो रही है। हमारी प्रबल इच्छा है कि वह दिन शीघ्र आवे कि आप हमारे बीच में आ जावें और हमें आपके अनुभवों को पढ़ने तथा सुनने का अवसर मिले।]

चीन के कन्सू प्रान्त की राजधानी लन्चाऊ है। यहां मैंने वहां के गवर्नर से मुलाकात की और इसके बाद सिनिनफू होकर तिब्बत की ओर चलने का विचार किया। कन्सू प्रान्त के पोस्टमास्टर जनरल मिस्टर टोटा हिन्दुस्तानी पारसी हैं। उन्होंने अपने यहां ले जाकर मुझे भोजन कराया और एक अङ्गरेज़ पादरी से जान पहचान कराई।

हमारे साथ का एक स्वयंसेवक बीमार हो गया। घोड़े पर चलना उसके लिये असम्भव था। मजबूर होकर उसे वहीं छोड़ना पड़ा। उसके साथ उसके दो साथियों को रख दिया जिससे उसके अच्छे हो जाने पर उसे पेकिंग पहुँचा दें। जो चीनी दुभाषिया मेरे साथ था वह तिब्बत की सर्दी से बहुत घबड़ाता था। इसलिये मैंने उसको भी साथ में न लिया।

यह लिखते समय एक मामूली सी बात मालूम पड़ती है पर उस समय मामला काफी संगीन था। बात यह थी कि मैंने एक सौदागर के पास सात हजार डालर पहले से भेज दिये थे। यहां आने पर जब उससे मांगा तो उसने सिर्फ चार हजार डालर दिखाये और बाकी के लिये आनाकानी करके जरूरी क्षमा मांगने लगा। उसकी इस हरकत पर मुझे कुछ करना जरूरी था। मैंने स्थानीय अफसरों का ध्यान उस ओर आकर्षित किया और कलगान के अफसर

अपनी दो स्त्रियों के साथ पूर्वी तिब्बत के खाम प्रान्त का सब से बड़ा लामा। इन लोगों को स्त्री रखने की आज्ञा नहीं है। पर इन लामा महोदय के विचार भिन्न हैं। राजा महेन्द्रप्रताप लामा के दाहिनी ओर खड़े हैं। उनके दाहिनी ओर उनके एक हिन्दुस्तानी साथी हैं।

को भी एक तार भेजा। बाद में रकम मुझे मिल गई।

पेकिंग की सड़क पर से मैंने एक रिक्शा चलाने वाले लड़के को अपने साथ ले लिया था। यह मेरे साथ तिब्बत जाने को तयार था। इस समय मेरे साथ यही चीनी दुभाषिया बचा था। उसने खच्चरों का किराया तय कराने में मदद दी। एक खच्चर का किराया सोलह डालर और पचास सेन्ट था। हम लोगों ने ग्यारह खच्चर लिये। उन पर जीन नहीं थी। सामान लादने के लिये काठी थी। लन्चाऊ से सिनिनफू तक सामान ले जाने के लिये एक सड़क है पर वह लम्बा रास्ता है। हम लोगों को जल्दी थी। जाड़े की ऋतु शुरू होने वाली थी और हम लोग जा रहे थे तिब्बत! १६ अक्टूबर को हम लोग कन्सू की

राजधानी से रवाना हुये और पांच दिन बाद २१ तारीख को सिघाई की राजधानी सिनिन में पहुँचे। इस रास्ते में दृश्य बड़े रम्य थे मैंने अपनी डायरी में लिखा है—तीसरे दिन हमने एक भोजनालय में खाना खाया। यह भोजनालय ऊंचे स्थान पर है। सामने बर्फ से ढके हुये सफेद पर्वत हैं और नीचे सुन्दर फूलों से भरी घाटियां। सिनिन का गवर्नर जेनरल मा ची था। चीन में मुसलमानों के नाम के आगे मा लगता है। यहाँ असल में मोहम्मद से लिया गया है पर चीनी भाषण में इसके माने होते हैं "घोड़ा"। गवर्नर ने हमारा राजसी स्वागत किया। बैण्ड बजाते हुये सिपाहियों ने हमें अभिवादन किया। जेनरल मा ची दीनदार मुसलमान हैं। मेरा टर्की और अफगानिस्तान के अनुभवों से उन्हें बड़ी दिलचस्पी हुई। धार्मिक मामलों में मेरे विचारों पर भी उन्हें बड़ी सहानुभूति थी। उनके प्रान्त में अधिकता बुद्ध लोगों की है। वे मुसलमान हैं और उनका सरकारी सहायक ईसाई है। यही लोग राजकाज चलाते हैं।

ग्यारह दिन आगे की यात्रा की तयारी करने में बीत गये। हमने २१ घोड़े और ३ खच्चर मोल लिये। इसका दाम कम से कम ८० डालर और सिर्फ एक को छोड़कर ज्यादा से ज्यादा १०० डालर तक था। एक का दाम हमें १६० डालर देना पड़ा घोड़ा की जीन, बिछौने तथा पेड़ की खाल के कपड़े भी खरीदने जरूरी थे। खाना पकाने के लिये बरतन भी लेना पड़ा। जेनरल मा ने हमारे साथ एक रहनुमा सईस तथा ६ सिपाही कर दिये। पहली नवम्बर को हम लोगों ने सिनिनफू से प्रस्थान किया। कुम्बम के मन्दिर का चक्करदार रास्ता तय करके हम लोग ३ नवम्बर को टन्गार (पहाड़ी नगर) में पहुँचे। यहां कुछ जरूरी सामान खरीदा गया। यहां से आगे एक घाटी को पार करके दूसरे दिन हम लोग तिब्बत के पठार पर पहुँच गये।

तिब्बत के प्रथम दर्शन में हमें उठा पठार कुछ पहाड़ियां और चौड़ी घाटियां दिखाई दीं। सरदी बहुत ज्यादा थी। तीन दिन तक हमको तिब्बत के डिब्बानुमा बन्द घरों में रात बितानी पड़ी। पास के खेतों में हमारे घोड़ों को सूखा चारा मिल जाता था। ९ तारीख को बर्फ पड़ने लगी। सारी जमीन सफेद हो गई। इसके बाद दो रातें हमने एक उजाड़ निवासस्थान (होटल) में बिताईं। यह निवासस्थान चीन के तलटोगा नामक किले के निकट है। चीनी अफसरों ने हमारे रास्ते के लिये रोटियाँ बनवा कर भेज दीं।

स्याम प्रान्त की राजधानी चियाग्डो का साधारण दृश्य

यहाँ से आगे बढ़ने पर ऐसा प्रतीत होता था कि अब मनुष्यों की पहुँच समाप्त हो गई। पहाड़ियों मैदानों और कभी कभी बर्फ से ढकी झीलों के किनारे होते हुये हम लोग आगे बढ़ रहे थे। रात को आसमान के नीचे सोना पडता था। भेड़ का चमड़ा ओढ़ने से काफी गरमी रहती थी। हमारी श्वास बाहर निकलते ही जम जाती थी, मूछों पर सफेद बर्फ के टुकड़े लटकते थे। खाने का सामान घोड़ों पर लदा था, वहीं निकालकर हम लोग खाते थे। घोड़ों को थोड़ा जौ मिलता था लेकिन ज्यादातर उन्हें पहाड़ों की सूखी घास से ही सन्तोष करना पड़ता था।

एक दिन रात को हम लोग एक चट्टान की साया

में सो रहे थे। एक तरफ कुछ शोर हुआ और बन्दूकों की आवाज आई। हम लोग चौंक कर उठ बैठे। बाहर जाना ठीक न था। मैं अपने माल के पास रहा और मेरे साथी मेरे बगल में। चीनी सिपाही जो घोड़ों के पास घाटी के निकट थे दौड़ते हुये आये और बताया कि डाकुओं ने हमारे घोड़ों को चुराने की कोशिश की थी। सवेरे मालूम हुआ कि एक घोड़ा गायब था। उस वीरान जगह की यात्रा में कुछ तबीयत बहलाने के लिये होना जरूरी था और मैंने सोचा कि डाकुओं ने हमारी तबीयत काफी बदल दी।

और शक्कर सैकड़ों-मील दूरी से लाई जाती हैं इसलिये महँगी मिलती हैं।

सड़क बहुत खराब थी। उसपर भी वर्फ गिरी थी। एक घोड़ा इतना थक गया था कि आगे या पीछे हट ही न सकता था। मारना पीटना फिजूल था। इसलिये उसे वहीं छोड़ कर हम लोग आगे बढ़े। हमलोग एक गाँव में पहुँचे। यह उस प्रान्त में है जिसे तिब्बती भाषा में जेगुण्डो कहते हैं और चीनी में चेकू। गाँव का नाम है टुजासे। उनदिनों चीनी जनरल वहाँ दौरे पर आया था। इसके बाद खानासे के मन्दिर होते हुये हम लोगों को एक बार

कन्दासा का मन्दिर

तिब्बत के प्रान्त का यह हिस्सा डाकुओं का केन्द्र है इसलिये हम लोग रातोरात आगे बढ़े। एक तो रात दूसरे वर्फ पर चलना और न चलो तो डाकुओं का मुकाबला—हमारे एक साथी के पैर के अंगूठे वर्फ से जम गये। पर रास्ता पार हो गया। उसी मुसीबत के बाद अर्थात् ८ दिन चलने के बाद हमें तिब्बती काले डेरे दिखाई दिये। कुत्तों का भोंकना उतना ही स्वागतप्रद मालूम हुआ जितना सिपाहियों का बैण्ड बाजा स्वागत कर सकता है। गरम दूध, मलाई, और तिब्बती भोजन से हम लोग फिर ताजे हो गये। चूल्हे की आग में ताप कर हम लोग बरफ पर की चलाई को भूल जाने की कोशिश की। अब तिब्बती भोजन सुन लीजिये। वे लोग भुने हुये जौ को पीस कर* तैयार रखते हैं। जरूरत पर चाय या मक्खन के साथ मिलाकर खाते हैं। इसके साथ वर्फीले हवाओं में सुखाया हुआ कच्चा मांस भी खाया जाता है। अमीर लोग सूखे फल और शक्कर का भी प्रयोग करते हैं। फल
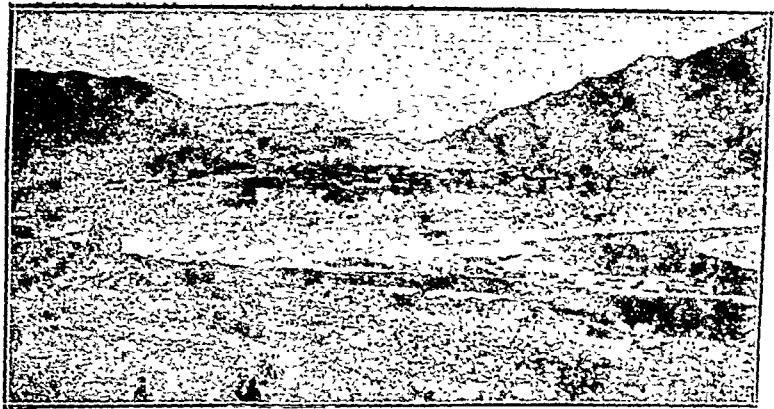
फिर खेत दिखाई दिये। मन्दिर काला, लाल और सफेद रंग से बड़ी खूबसूरती से रंगा है। दूसरे दिन हम लोगों ने याँगटीजी नदी पार की यह काफी चौड़ी और शानदार नदी है पर सरदी के कारण वर्फ के प्राकृतिक पुलों ने पार करने में बड़ी सहायता दी। अब पेड़ दिखाई देने लगे। आगे चलकर छोटा सा जंगल मिला। २५ नवम्बर को हम लोग मान की राजधानी में पहुँच गये। वहाँ के सरकारी अफसर ने हमारी दावत की। उसके बाद हमलोग उस प्रान्त के सबसे बड़े लामा से मिलने गये। पहाड़ी के ऊपर काले, लाल और सफेद रंग से रंगे हुए सुन्दर मन्दिर में लामा का निवास है।

४ दिसम्बर को हम लोग फिर चल पड़े। वहां के जनरल ने हमको खास आज्ञा पत्र दिया था कि

---

* हिन्दुस्तान में इसी में भुने चने पीस कर मिलाते हैं और सत्तू बनाकर खाते हैं।

रास्ते में हमलोग जरूरत के मुताबिक घोड़े या गाय ले सकते हैं। हमारे घोड़े तो थक गये थे पर हम लोग रोशी-राशी नामक मन्दिर होते हुये आगे बढ़े। रास्ता सुहावना था। छोटे छोटे जंगल और नीली चमकती हुई जल धाराएं। १२ दिसम्बर को हम लोग कन्दासा (चित्र २) के मन्दिर पर ठहरे। तिब्बत और चीन के बीच यह छोटी सी सीमान्त आबादी (Buffer) है। हमारे साथ के चीनी सिपाही यहां से आगे नहीं जा सकते थे। १३ तारीख को हम लोगों ने उस सीमा में प्रवेश किया जो सर्वस्व तिब्बत के आधीन थी। सदाबहार वन और विशाल ओप चू नदी के तट की वायु से हमारे घोड़े भी खुश मालूम होते थे। लम्डा पहुँचने पर हम लोग नम्रता पर गम्भीरता के साथ रोक दिये गये। चिआम्डो से आये हुये दो तिब्बती सिपाहियों ने हमें आटा और भेड़ें दी पर आगे बढ़ने से मना किया। गवर्नर के पास खबर भेजी गई। उसने आज्ञा दी कि हम लोग लौट जाँय। मैं कम से कम गवर्नर से मिल लेना जरूरी समझता था। इसलिये मैंने जवाब भेजा कि हम लोगों को उठा कर फेकवा दीजिये अपने से हम लोग न लौटेंगे। बड़ी मुश्किल से हम लोगों को चिआम्डो तक जाने की आज्ञा मिली। यह खाम प्रान्त की राजधानी है। हम लोग एक अमीर चीनी के घर ठहराये गये। दूसरे दिन गवर्नर की ओर से दो उच्च पदाधिकारी हमसे मिलने आये।

मैंने तिब्बत के सबसे बड़े लामा (डलाई लामा जो ल्हासा में रहते हैं) को पत्र लिखकर तिब्बत में जाने की आज्ञा मांगी उसका उत्तर मुझे इस प्रकार मिला :—

पत्र तिब्बती भाषा में था। उसका अनुवाद यह है—

नेकनियत बुद्धिमान और विद्वान महेन्द्र प्रताप (राजा), चिआम्डो।

३ फरवरी को लिखे हुये आपके दो पत्र, एक पीली रेशम (होच्छू) पर हिन्दी भाषा में लिखा हुआ और दूसरा सफेद कपड़े पर अंगरेजी भाषा में लिखा हुआ और दो नवीन प्रकाशित पुस्तकें कुछ चित्र तथा उनके परिचय, दो राइफलें और ४०० कारतूस तिब्बती सिंह अग्नि वर्ष के पहले महीने के बारहवें दिन* खाम प्रान्त के गवर्नर द्वारा प्राप्त हुये। रेशम और कपड़े पर के दोनों पत्रों के अनुवाद का सार पूर्णरीति से समझा गया और धन्यवाद दिया जाता है। जैसा कि पत्रों से भी प्रतीत होता है आप भगवान बुद्ध का अनुसरण कर अपने धन धाम, परिवार तथा मित्रों के सुख को थूक के समान त्याग कर मानव जाति के लाभ और सुख के लिये चेष्टा करने के लिये तकलीफों की परवाह न करके कठिन यात्रायें करते हैं तथा धार्मिक पुस्तकें प्रकाशित करते हैं यह जानकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई। नियम और दस्तूर के अनुसार सभी विदेशी मामले (सिर्फ राजा तथा मन्त्री ही न तय करके) बड़े मन्त्रिमंडल के पास भेजे जाते हैं। इसलिये बड़े मन्त्रिमंडल से सलाह लेने को आज्ञा दी गई थी और उन्होंने यह सोचा कि अभी तिब्बत और चीन का वह झगड़ा तय नहीं हुआ है जिसमें अंगरेज बिचवानी थे इसलिए कोई विदेशी तिब्बत में न आने दिया जाय। अलावा इसके तिब्बत और अंगरेजीराज की सीमा मिली हुई है और व्यापारी आते जाते रहते हैं। इसलिये यह असम्भव है कि अंगरेजी सरकार यह बात न जानने पावे। अतः बड़ा मन्त्रिमण्डल आपका ल्हासा आना उचित नहीं समझता। मुझे आशा है कि आप जो कि सबका भला चाहते हैं समस्या की जटिलता को समझ कर हमारी असमर्थता पर असन्तुष्ट न होंगे। तिब्बत की वर्तमान स्थिति पर आपकी चिन्ता तथा आपकी नेक सलाहों को हम लोग याद रक्खेंगे। आप जहां कहीं भी रहें तिब्बत से नजदीक या दूर मैं चाहता हूँ कि आप तिब्बत के प्रति यही सद्भावना रक्खें। आपके लिये एक रेशमी दुपट्टा, एक पैकट सोना, दो नाल की शकल के चांदी के टुकड़े, ८ रंग बिरंगे ऊनी शाल भेजे जाते हैं। तिब्बती सिंह अग्निवर्ष के दूसरे महीने के २२ वें शुभ दिन पर लिखा गया।

* अंगरेज़ी २४ फरवरी १९२६।

खनिज पदार्थ और विश्व शान्ति

आजकल के शक्तिशाली राष्ट्र कुछ बाहरी देशों पर राज्य कायम रखना या करना जरूरी समझते हैं। इसका कारण यह तो साफ ही है कि दूसरे देशों पर उनका प्रभुत्व बढ़ता है पर मुख्य कारण यह है कि उन के उद्योग-धन्धों की उन्नति के लिये शासित देशों का कच्चा माल तथा खनिज पदार्थ जरूरी होते हैं। शांति के समय इस सामान से उपयोगी वस्तुयें बना कर बाहर भेजी जाती हैं और लड़ाई के समय, बन्दूकें, जहाज़ यातायात के साधन इत्यादि में खर्च होता है। सभी उन्नतिशील देश खनिज पदार्थ चाहते हैं। पर संसार में खनिज पदार्थों की एक हद है। उस से अधिक कहां से आयेंगे। यदि उनकी नकल कर के उनके समान और लगभग उतने ही उपयोगी धातु मनुष्य विज्ञान की सहायता से बनाता है तो खर्च बहुत बढ़ जाता है।

कोई देश ऐसा नहीं है जहां सब प्रकार के खनिज-पदार्थ पाये जाते हों। बड़ी लड़ाई तक राष्ट्रों का साधारणतः यह विश्वास था कि जो खनिज अपने देश में नहीं है वह व्यापार द्वारा विदेशों से आ जावेगी। पर बड़ी लड़ाई में जब व्यापार रुका और आने जाने के साधनों में गड़बड़ी फैली तो हर एक देश ने महसूस किया कि खनिज पदार्थों की ओर पूरा ध्यान दिया जाय। जिन शासित देशों में शासक के-अलावा किसी विदेशी महाजन का ठेका किसी खान पर था वह निकाल दिया गया और हर एक देश अपने नीचे के सभी देशों की सम्पूर्ण खनिज तथा खेत की पैदावार पर पूरा कब्जा व्यापार द्वारा या अन्य रीति से कर बैठा।

अब सभी शक्तिशाली राष्ट्रों का यही उद्देश्य है कि आर्थिक मामलों में उनको किसी दूसरे शक्तिशाली राष्ट्र का मुँह न ताकना पड़े। वे स्वयं अपने देश में या अपने शासित देश में सब प्रकार की खनिज तथा कचा माल असली या नकली पैदा कर सकें या बना सकें। हाल में जरमनी ने जो उपनिवेशों की मांग पेश की है उसका मुख्य कारण यही है कि और बातों में तो जर्मनी ने अपने को बड़ी लड़ाई से पहले की हालत पर कर लिया है पर बड़ी लड़ाई के बाद जो खनिज तथा कचा माल सम्बन्धी हर देश की नीति हुई है उस के लिये उसके पास स्वयं तो इतने खनिज हैं नहीं इसलिये उपनिवेशों की ओर दृष्टि जाना स्वाभाविक है।

जरमनी, जापान और इटली यही तीन ऐसे बड़े राष्ट्र हैं जो खनिज पदार्थ तथा कच्चा माल की तलाश में उपनिवेश बनाना चाहते हैं अथवा अपना राज्य दूसरे की जमीन पर कायम करना चाहते हैं। संयुक्त राष्ट्र अमेरिका और ब्रिटिश साम्राज्य मिलकर दुनिया की तीन चौथाई खनिज पर कब्जा किये हैं। इसके साथ ही समुद्रों पर भी उनका कब्जा है। समुद्र पर जहाज चलते हैं जो माल एक देश से दूसरे देश को पहुँचाते हैं। इसके बाद फ्रान्स रूस है। फ्रान्स के पास भी काफी उपनिवेश है और रूस स्वयं ही इतना बड़ा है कि दूसरे राष्ट्रों के कितने ही उपनिवेश उस में समा जायँ।

उपरोक्त तीन देश जो उपनिवेश बनाना चाहते हैं उनमें तानाशाही शासन व्यवस्था है। संयुक्तराष्ट्र, ब्रिटेन फ्रान्स और रूस में प्रजातंत्र राज्य है।

बड़ी लड़ाई से पहले लारेन प्रदेश जरमनी का था। लारेन प्रदेश के हाथ से निकल जाने से जरमनी की जरूरत भर का ८२ फी सदी कच्चा लोहा जो वहां की खानों से निकलता था फ्रान्स को मिलने लगा। तब जरमनी ने अपने देश की रही सही खानों को खोदना शुरू किया। पर इस से उसे सारी जरूरत का सिर्फ एक तिहाई लोहा मिलता है। और इस खनिज से पक्का लोहा बनाने में जितना खर्च पड़ता है कि उसके आधे दाम में बाहर से अच्छा लोहा आ सकता है। अगर जर्मनी ज़िद से अपने मुल्क की कची धातु का ही लोहा लाने पर तुला रहेगा और मामूली जाति की खनिज से भी लोहा बनायेगा तो शायद उसको चौगुना खर्च भी पड़ेगा। सारांश यह कि जरमनी हर तरह से यह कोशिश कर रहा है कि लोहे के लिये उसको दूसरे के भरोसे न रहना पड़े। फिर भी उसको अपनी जरूरत के ६० फीसदी लोहे के लिये स्वीडन के भरोसे पर रहना ही पड़ता है। इस ६० फीसदी लोहे के खान की जगह पर युद्ध के समय भी वही प्रगति रहनी चाहिये जो शांति के समय है। बाहर का तेल भी अब जरमनी नहीं खरीदना चाहता। वह कोयले से एक प्रकार का तेल बनाता है जो मिटी के तेल के मुकाबले का है पर उसके बनाने में खर्च मामूली तेल से लगभग दुगना होता है। फिर भी कोशिश हो रही है कि खर्च कम किया जाय और जर्मनी के खर्च का सारा तेल जर्मनी में ही पैदा किया जाय या बनाया जाय।

तांबा जर्मनी में मेन्सफील्ड प्रान्त में निकलता है यह तांबा उनकी जरूरत का १४ फीसदी होता है। अब खानों में और तेजी से काम होगा और तब जरूरत का २५ फीसदी तांबा निकला करेगा। जर्मन सरकार खुद इन खानों में काम कर रही है और कानून बना दिया है कि जहां तांबे की जगह अलमिनियम का मेगनीशियम से काम चल सके वहां तांबा हरगिज न लगाया जाय। अलमिनियम और मेंगनीशियम दुनिया में सब से ज्यादा जर्मनी में होता है। व्यापार के योग मेगनीज जर्मनी में बिल्कुल नहीं पाया जाता पर वे लोग लोहे की कच्ची धातु में जो मेगनीज पाई जाती है उसी से अपनी जरूरत का ४० फी सदी हिस्सा पूरा कर लेते हैं। जस्ता जर्मनी में काफी पाया जाता था। और हाल ही में हर प्रान्त में एक और जस्ते की खान मिली है। इससे जस्ता के लिये जर्मनी को दूसरे देशों के भरोसे बिल्कुल न रहना पड़ेगा। सीसा सारी जरूरत का २५ फीसदी देश में पाया जाता है। सरकार की ओर से मामूली सीसे की धातु को बाजार में प्रोत्साहन मिलता है इसलिये बाहर आने वाले सीसे में लगभग आधे का आना वे लोग बन्द कर देंगे। निकल बहुत थोड़ी पाई जाती है। इसकी जगह तरह तरह की अन्य चीजें काम में लाने की कोशिश हो रही है पर १० फीसदी निकल के लिये दूसरे देशों के ही भरोसे रहना पड़ेगा।

उपरोक्त बातों को देखते हुये यह साफ मालूम पड़ जाता है कि अभी तक तमाम कोशिशें करते हुये भी एन्टिमनी, क्रोमाइट, ताँबा, लोहा, सीसा, मेगनीसाइट, मेगनीज, माइका, निकल, पेट्रोल, फास्फेट, क्विकसिल्वर, गंधक, टीन तथा टङ्गस्टन के लिये जरमनी को दूसरे देशों के भरोसे ही रहना पड़ेगा। युद्ध के समय बहुत सी वे धातुयें भी कम पड़ जायंगी जो अभी काफी हैं। खासकर लोहा, तेल और तांबा की कमी युद्धकाल में बड़ी विकट समस्या उत्पन्न कर देगी।

जर्मनी ने अपनी औद्योगिक उन्नति के लिये जहां नकली खनिजें बनाकर तथा कानून बनाकर उपयोगी कार्य किये हैं वहां उसने दो अड़चन भी पैदा कर दी हैं। एक तो नकली सामान बनाने में दुगुना तिगुना खर्च दूसरे विदेशी सिक्के की दर में बढ़ गया। विदेशी सिक्के की कमी होने के कारण विदेशी खनिज पदार्थ उतनी आसानी से नहीं खरीदे जा सकते जितनी आसानी से खुले व्यापार में अर्थात् सिक्कों के बदलने की उचित दर होने में। वेनेज्वेला के तेल का दाम देने तथा पोलैण्ड और टर्की की खनिज पदार्थों का दाम देने में जर्मनी इसलिये समर्थ है कि ये देश बदले में जरमनी की मशीनें खरीदते हैं।। जर्मनी ने बाहर कई देशों में भी खानों का ठेका ले रक्खा है जैसे पोलैण्ड में जस्ता का टर्की और युगोस्लेविया में क्रोमाइट और यूनान में बाक्साइट का।

अब इटली को लीजिये। इटली अपनी जरूरत का २० फी सदी लोहा पैदा करता है। कोयला सारी जरूरत का सिर्फ ८ फीसदी पाया जाता है। यह कोशिश हो रही है कि कोयले की जगह बिजली से काम लिया जाय। फिर भी सब काम बिजली से नहीं चलाया जा सकता। कोयला और लोहा बाहर से मँगाना ही पड़ेगा। मिट्टी का तेल सारी जरूरत का ७ फी सदी पाया जाता है और तांबा सारी जरूरत का १ फी सदी के आधे से भी कम पाया जाता है नकली तांबा बनाने में एक तो ज्यादा खर्च होता है दूसरे जिन धातुओं से नकली तांबा बनाते हैं वह भी बाहर से ही मँगानी पड़ती हैं। अबीसीनिया को लेकर इटली खनिज पदार्थ न पा सका। लोगों का ख्याल है कि आगे को भी अबीसीनिया में खनिज पाने की उम्मेद नहीं।

जापान अपनी जरूरत का २५ फीसदी लोहा बनाता है। मन्चूरिया को जीत कर उसमें से लोहा निकालने की युक्ति अधिक सफल न हुई क्योंकि मन्चूरिया का लोहा अच्छी जाति का नहीं होता। चीन को जीत कर भी उसे कुछ अधिक लोहा नहीं मिलेगा। पर जापान ने फिलीपाइन, मलाया, आस्ट्रेलिया और ब्रिटिश कोलम्बिया में खानों का ठेका लिया है। जापान को अपने देश में भी काफी कोयला मिलता है पर उस में कुछ अच्छी जात का नहीं होता। अब मन्चूरिया और उत्तरी चीन के कोयला पर अधिकार हो जाने से उसकी कोयला सम्बन्धी सब जरूरत पूरी हो जायगी।

तेल के लिये जापान को दूसरों के भरोसे रहना पड़ता है। अगर सिर्फ जापान द्वीप की तेल की खनिज को लें तो वह सारी जरूरत का ७ फीसदी होता है। इस भारी कमी को पूरा करने के लिये मन्चूरिया में तेल निकालने की कोशिश हो रही है। साखालिन और डच द्वीपों में उसने ठेका ले लिया है। और कोयले से तेल निकालने का यन्त्र तैयार किया गया है। इसके बाद जरूरत का तेल

संयुक्त राष्ट्र अमेरिका से और हालैण्ड के अधिकार के पूर्वी द्वीपों से खरीदा जाता है।

एशिया महाद्वीप में सबसे ज्यादा तांबा जापान में पाया जाता है फिर भी उसे बाहर से खरीदने की जरूरत पड़ती है। युद्ध की प्रधान सामग्री में जापान लोहा और तेल के लिये दूसरों के भरोसे है। अल्यूमिनियम, एन्टिमनी क्रोमाइट सीसा, निकल, मेन्गेनीज़ सारफेट, पोटाश, टिन, टङ्गस्टन और जस्ता भी उसको बाहर से ही मंगानापड़ता है।

पहियेवाली गाड़ियाँ

बहुत पुराने समय में किसी तरह की गाड़ियां नहीं थीं। लेकिन पुराने लोगों ने अनुभव से यह जान लिया कि भारी बोझे को सिर पर रख कर ले जाने से ज़मीन पर घसीटने में आसानी होती है। इसी से सब से पुराने समय के चित्र ऐसी गाड़ियों के मिलते हैं जिनमें किसी तरह के पहिये नहीं थे। वे एस्किमो लोगों की स्लेज की तरह बिना पहिये की गाड़ियां थीं।

मिस्र देश के पिरेमिड के भीतर कई ऐसे चित्र हैं जिनमें भारी भारी बोझा बिना पहिये की गाड़ियों पर खींचा जा रहा है। गाड़ी के अगले भाग में रस्सी बांध कर कई गुलाम (दास) इसको खींचते थे। फिर लोगों ने देखा कि इनके नीचे लकड़ी के गोल लट्ठे (टेक) डाल देने से बोझा आसानी से खिंचता है। इसलिये कुछ गुलाम कड़ी धूप में ज़ोर लगा कर बोझा खींचते थे कुछ गाड़ियों के नीचे लकड़ी के टुकड़े रखते जाते थे। कुछ लोग पीछे से ठेलते थे। एक आदमी पत्थर पर खड़ा होकर ताली बजाता था। उसकी ताली की आवाज़ सुनते ही लोग एक साथ ज़ोर लगाते थे।

इसके बाद अब से लगभग ६००० वर्ष पहले मनुष्यों ने पहिये बनाने सीखे। पहले पहल पहिये लकड़ी के दो टुकड़ों को जोड़ कर बनाये जाते थे। वे ठोस होते थे। धुरी और पहिया साथ साथ घूमता था। वे एक जगह
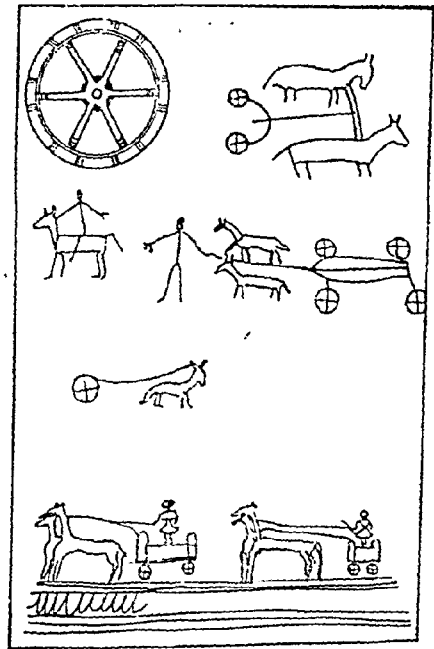
१—प्राचीन समय के पहिये (इनके चित्र गुफाओं में खिंचे मिले हैं)

पर बंधे रहते थे। इससे वे अलग नहीं होते थे। इसके बाद लोग धुरी को गाड़ी की तली में बांधने लगे। इससे सिर्फ पहिया घूमते थे। कभी

कभी तख्तों को जोड़ कर पहिया वनाया जाता था। पीछे से वह काटकर गोल कर लिया जाता था।

ठोस पहिये के वाद फिर लोगों ने (स्पोक) घेर वाले पहियों का वनाना सीखा इससे पहिये के वीच वीच में वहुत खाली जगह रहती थी। लकड़ी भी कम लगती थी और पहिया हलका रहता था।

२—पुराने भद्दे ढंग के लकड़ी के वने हुए पहिये

आगे चल कर रथों के सुन्दर पहिये वनने लगे। इनके ऊपर लोहे का टायर (परत) भी मढ़ा रहता था। मिस्र देश के पहियों के ऊपर लोहे के वदले वटा हुआ चमड़ा चढ़ाया जाता था। आजकल लोग साइकिल, मोटर, और गाड़ियों के पहियों में रवर का टायर लगाते हैं।
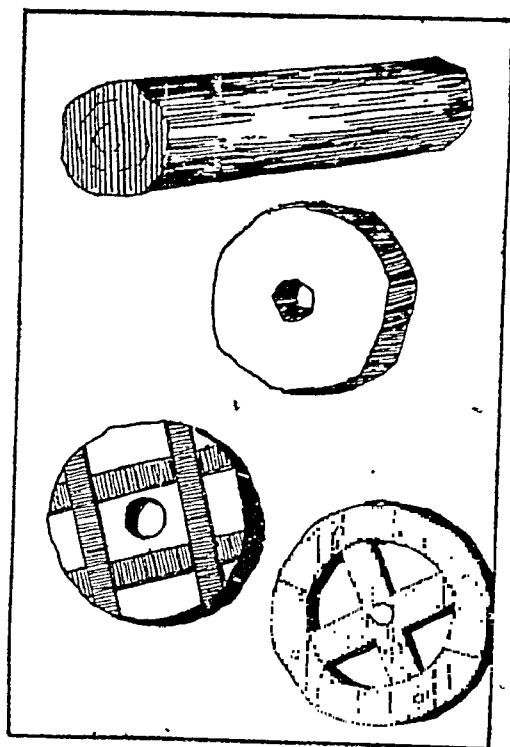
पुराने रथों में चढ़ने वाले को आराम कम मिलता था। पर रथ वहुत तेज़ चलते थे। उनमें घोड़े जुतते थे। रथ पर तरह तरह के सुन्दर रंगीन चित्र वनाये जाते थे। कुछ रथों में सोने चांदी के परत जड़े रहते थे। जिस रथ पर एक ही मनुष्य चढ़ता था उसके घोड़ों की लगाम उसकी कमर से वंधी रहती थी। इससे उसके हाथ हथियार चलाने के लिये खाली रहते थे। वहुत से रथों में दो मनुष्य चढ़ते थे। एक (सारथी) रथ हांकता था और रथ की रक्षा करता था। दूसरा वाण छोड़ता था। रथ के ऊपर से वहुत से लोग सिंह का शिकार करते थे।

३—पहिये का विकास

सवसे पुराना रथ एक शहर के खंडहरों में गड़ा मिला है। इसके पहिये लकड़ी के वने हैं। सामने तांवे की ही लगाम है।
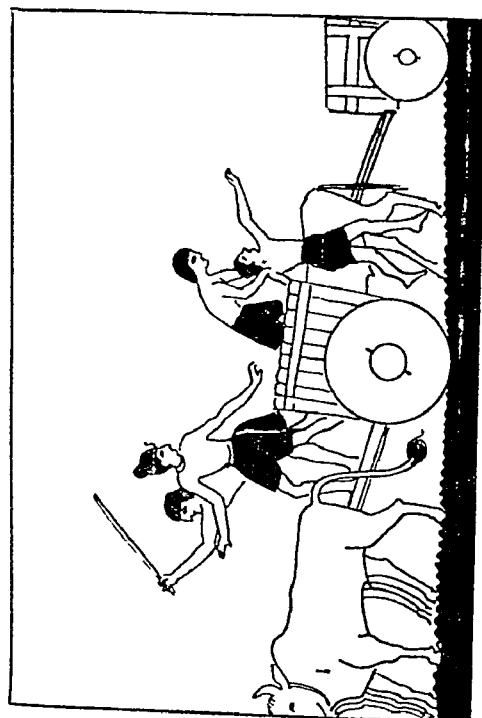
बैलगाड़ी भी बहुत पुरानी है। कुछ लोग बैलगाड़ी को चलाने के लिये कच्ची सड़कें बनाते थे।

प्राचीन सिदियन लोग जानवर पालते थे। वे बनजारों की तरह कभी कहीं और कभी कहीं रहते थे। उनकी बैलगाड़ी चमड़े के गोल घेर या परदे से ढकी रहती थी। मर्द लोग घोड़ों पर सवार होते थे। स्त्री और बच्चे इसी बन्द गाड़ी में चढ़ते थे। जब वे किसी जगह अधिक दिन तक ठहरते थे तो गाड़ी का गोल घेर उतार लिया जाता था और डेरे की तरह ज़मीन पर गाड़ लिया जाता था। चीनी लोगों की (रिकशा) गाड़ी अक्सर मनुष्य खींचते थे। वे एक ऐसी गाड़ी बनाते हैं जिसमें एक ही पहिया लगता है।

बहुत समय तक दो पहिये वाली गाड़ी चलती रही। फिर कुछ लोगों ने चार पहिये वाली बड़ी गाड़ी चलाई। इसमें कई घोड़े जुतते थे। फ्रांस वालों की पहले धारणा थी कि मनुष्य गाड़ी में सवारी करते करते दुर्बल हो जाता है। इसलिये उन्होंने एक क़ानून (नियम) बनाया जिसके अनुसार गाड़ी में सिर्फ स्त्री और बच्चे सवार हो सकते थे। मनुष्य घोड़ों पर चढ़ते थे। बड़ी गाड़ियों में अधिक आराम न था। लेकिन वे तरह तरह की रंगीन तस्वीरों से सजी रहती थीं। पहियों पर बढ़िया नक्काशी होती थी। उनमें परदे भी लगे रहते थे। पहले पहल बनी हुई बढ़िया घोड़ा गाड़ियों में सिर्फ राजा और रानी सवार हो सकते थे। हंगारी के राजा ने एक ऐसी गाड़ी बनवाई जो धुरी पर नहीं सधी

४—पहियेवाली गाड़ी (पुराना रथ)

५—बैलगाड़ी
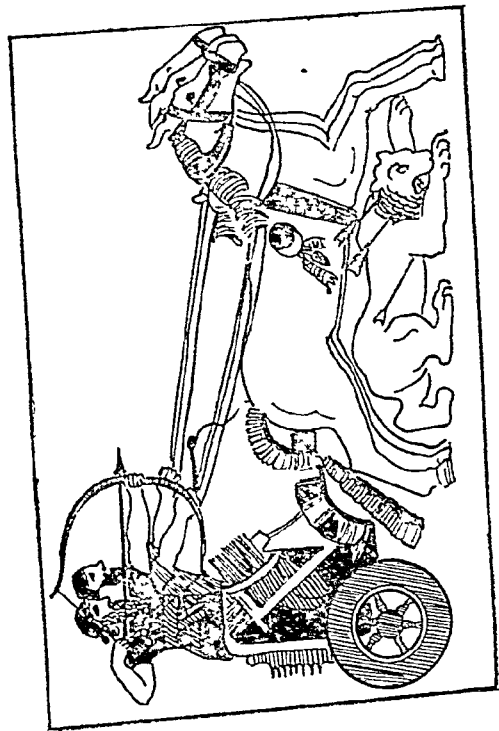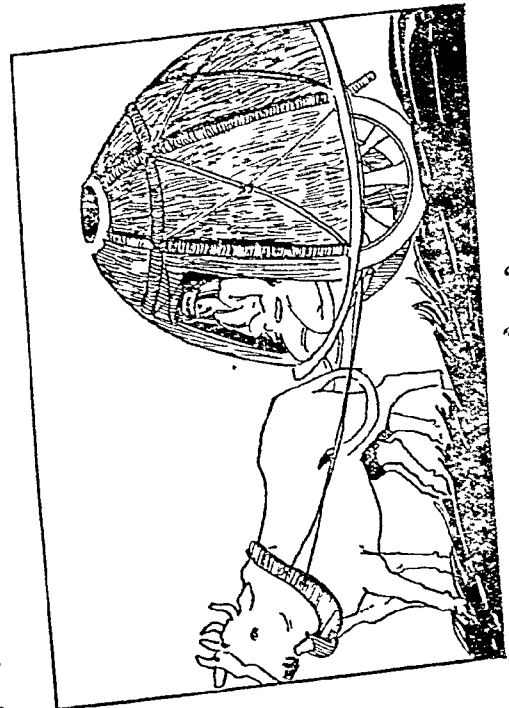
थी। इङ्गलैंड की रानी एलिज़बेथ पहले पहल बढ़िया घोड़ागाड़ी पर चढ़ी। पर इस गाड़ी में रानी को बहुत हचके और धक्के लगते थे। फिर दूसरे सरदारों ने भी वहां गाड़ियां बनवाईं।

पुराने समय में सिपाहियों को छोड़कर दूसरे लोग कम सफर करते थे। फिर कहीं कहीं घोड़ागाड़ी और ऊंटगाड़ी चलने लगीं। इनमें मुसाफिर भी किराया देकर सफर कर सकते थे। जिस तरह आजकल मोटर लारियों पर सफर करते हैं। इनमें धक्के बहुत लगते थे कहीं लुट जाने का भी डर रहता था। अमरीका के रेडइंडियन लोग गाड़ी बनाना नहीं जानते थे। वे पैदल या नाव पर सफर करते थे। जब योरुप से गोरे लोग आकर यहां बस गये तो शुरू में उन्हें भी इस तरह सफर करना पड़ता था। जंगलों में बहुत तंग पगडंडियां थीं। सड़कों का नाम नहीं था। फिर कुछ लोग योरुप से घोड़ागाड़ी अपने साथ ले आये। इससे अमरीका में भी सड़कें बनने लगीं। कुछ समय बाद अमरीका में कहीं बड़े शहरों के बीच में एक मंजिल से दूसरी मंजिल को जाने के लिये घोड़ागाड़ियां किराये पर मिलने लगीं। मुसाफिरों का सामान गाड़ियों की छत पर लादा जाता था कुछ लोग गाड़ी के भीतर और कुछ लोग बाहर बैठते थे। गाड़ी की खिड़कियों में शीशा नहीं रहता था। तूफान आने पर परदा डाल दिया जाता था। पहिये बहुत चौड़े रहते थे। इससे वे कीचड़ में जल्द नहीं फँसते थे। गाड़ी की तली में जानवरों को पानी पिलाने के लिये
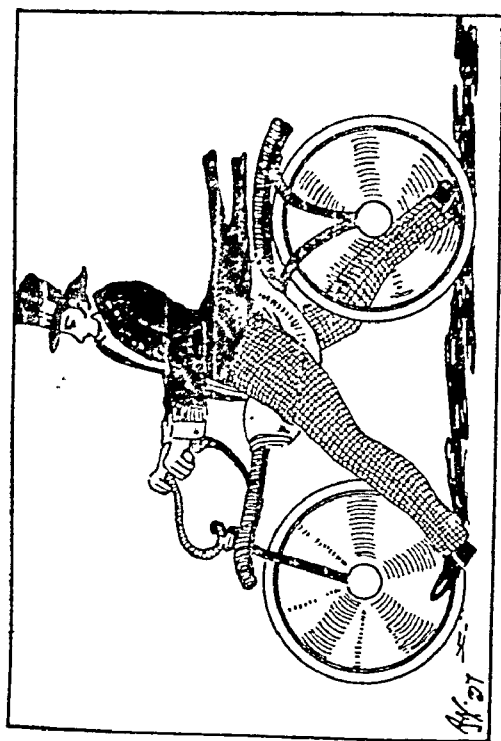
६—पहली पैरगाड़ी
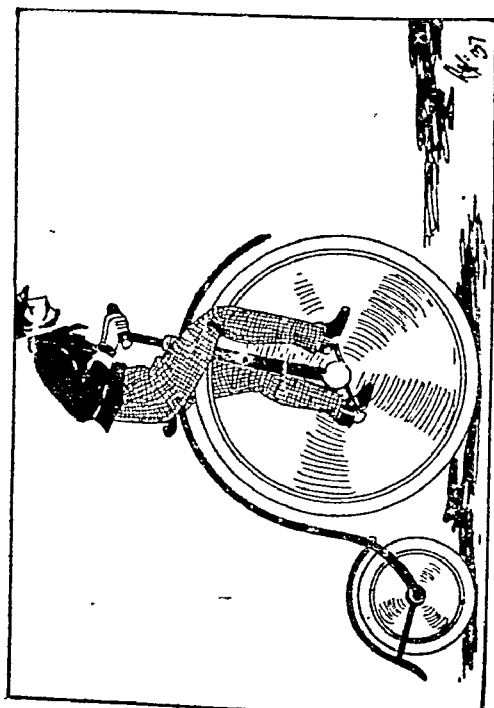
७—पुरानी पैरगाड़ी

वाल्टियाँ वंधी रहती थीं। दुश्मनों से वचने के लिये वहुत सी गाड़ियां साथ साथ चलती थीं। मर्द लोग घोड़ों पर सवार होकर दाहिनी या वाईं ओर से चलते हैं।

जव वहुत से लोग सफर करने लगे तव ऐसी गाड़ी की ज़रूरत पड़ी जिसे सवार अपने आप चला ले। यही साइकिल या पैरगाड़ी थी। इसमें एक पहिया दूसरे पहिये के पीछे होता है। इस वाइसिकिल में पैडिल नहीं होता था। यह इतनी नीची होती थी कि चढ़ने वाले ज़मीन पर पैर लगा कर पैरगाड़ी चलाता था।लोग इन गाड़ियों की वड़ी हंसी उड़ाते थे। कुछ ही समय में इनका रिवाज उठ गया।

इसके वाद वाइसिकिल में पैडिल लगने लगे। फिर भी उस समय की वाइसिकिल चलाने में वड़ी तकलीफ होती थी। वे ठोस लोहे की वनी थीं। उनमें लकड़ी के पहिये और लकड़ी के टायर लगे थे। इनके चलाने में इतना ज़ोर पड़ता था कि हड्डियां हिल जाती थीं। इसीलिये इन्हें वोनशेकर कहते थे। पीछे से तार के स्पोक वाली और रवर के टायर वाली साइकिलें वनने लगीं।

पहले की साइकिलों में अगला पहिया वहुत वड़ा होता था। यह साइकिल वड़ी जल्दी जल्दी उलटती थी। इसी से लोगों के चोट लगने का डर लगा रहता था। अन्त में आजकल की साइकिल वनकर तयार हो गई। इस समय वहुत से लोग इसी साइकिल पर चढ़ा करते हैं।

पहले विना पहिये की गाड़ियों को आदमी अपने आप चलाते थे। फिर उन्होंने पालतू जानवरों से गाड़ियां खिचवाई। कहीं कुत्ते, कहीं गधे, कहीं वकरे, कहीं ऊँट, कहीं वैल, कहीं भैंसे, कहीं खच्चर, कहीं घोड़े गाड़ी खींचने लगे।

अवसे २०० वर्ष पहले मनुष्यों ने देखा कि जानवरों की जगह भाप से गाड़ियों के पहिये चलाये जा सकते हैं। पहले नावें और
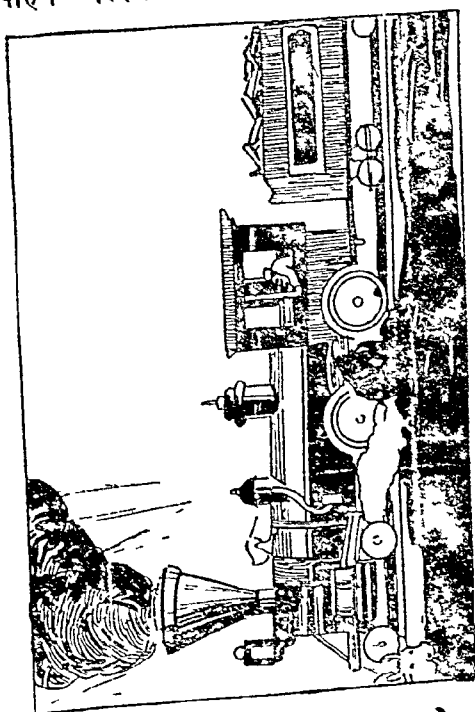
८—रेलगाड़ी

फिर तीन पहिये की गाड़ियां भाप के ज़ोर से खिचने लगीं। तीन पहिये की गाड़ी फ्रांस में वनी थी। यह गाड़ी लोगों को वहुत पसन्द न आई। लेकिन इसने यह सिद्ध कर दिया कि भाप भली भांति गाड़ी खींच सकती है। इंगलैंड में लोहे का घोड़ा या भाप का इंजिन १५ मील फी घंटे की चाल से रेलगाड़ी के डव्वों को खींचते थे।

इन नई गाड़ियों को चलाने के लिये लोहे की पटरियां विछाई जाती थीं। इनमें वहुत शोर होता था। इनको देखकर पहले पहल मनुष्य और जानवर डर जाते थे। वे खेतों में भाग जाते थे। इंगलैंड में आम सड़कों पर इनके चलाने की मनाई हो गई। इससे सौ वर्ष तक इनकी वृद्धि में वड़ी वाधा पड़ी। १८६१ में जर्मनी के एक मनुष्य ने ऐसा इंजिन तयार किया जिसमें कोयले की जगह मिट्टी का तेल जलता था। फिर लोगों ने देखा कि विजली के ज़ोर से भी रेलगाड़ी या इंजिन चल सकता है। आगे चलकर इतना छोटा इंजिन वनने लगा कि वह मामूली गाड़ी में भी लग सकता था। इस तरह से विना वैल या घोड़े की मदद से मोटरकार चलने लगा। पहले यह एक अनोखी चीज़ समझी जाती थी। अव लोग उसे एक साधारण चीज़ समझने लगे हैं। पहले की रेलगाड़ी और मोटर गाड़ी धीमी चाल से चलती थी अव वे वहुत तेज़ी से चलने लगी हैं। आजकल कई तरह के इंजिन कारखानों में तरह तरह की चीज़ें वनाते हैं। उनको चलाने में कहीं कोयला, कहीं तेल, कहीं विजली, कहीं तेल, पानी, और कहीं हवा से काम लिया जाता है।

९—पहिये का विकास

१०—हवाई चक्की

बेतवा के उद्गम पर

(बनारसीदास चतुर्वेदी)

सन् १९२५

युगाण्डा के सुप्रसिद्ध भारतीय व्यापारी श्री नानजी भाई कालिदास मेहता के यहाँ जिंजा में ठहरा हुआ था। प्रातःकाल में किसी प्रकृति-प्रेमी सज्जन ने कहा—'रिपन फॉल देखने के लिए न चलियेगा?' मैंने कहा, 'अवश्य'। आध घंटे पैदल चलने के बाद हम लोग विक्टोरिया न्यांज़ा नामक झील के निकट रिपन फाल पर पहुँचे। वहीं से नील नदी निकलती है। भूगोल में इस झील तथा नील का नाम पढ़ रखा था; पर स्वप्न में भी इस बात की कल्पना नहीं की थी कि कभी हमें नील के उद्गम-स्थान पर जाने का सौभाग्य प्राप्त होगा। नील के द्वारा मिस्र देश का उतना ही हित हुआ है, जितना अपने यहाँ गंगा-जमुना द्वारा उत्तर-भारत का। रिपन जलप्रपात का सौंदर्य अद्भुत प्रतीत हुआ, और अब भी वह आँखों के सामने उपस्थित है।

सन् १९३६

किसी अंगरेज़ी अख़बार में पढ़ा कि सुप्रसिद्ध जीवनी-लेखक लुडविग ने नील नदी का जीवन-चरित लिखा है। पढ़ने की प्रबल लालसा हुई, और तुलसी लाइब्रेरी की कृपा से वह ग्रन्थ पढ़ने को मिल भी गया। इधर-उधर से पन्ने पलटकर देखा। रिपन फ़ाल का चित्र देखकर पुरानी स्मृति जागृत हो गई। मैंने बन्धुवर श्रीराम शर्मा को उसी वक्त एक पत्र लिखा—"जर्मन लेखक Emil Ludwig ने आपको बुरी तरह पछाड़ दिया। आप तो गंगाजी का जीवन-चरित लिखने की सोचते ही रहे और 'विशाल भारत' में लेख द्वारा प्रस्ताव उपस्थित करके चुप हो गए और वहाँ लुडविग ने नील का जीवन-चरित लिखकर प्रकाशित भी कर दिया! पुस्तक मँगाइये तो सही।" श्रीरामजी ने लिखा—"आपके पत्र के आने के पहले ही मैंने उक्त पुस्तक के लिए आर्डर भेज दिया है। आपका व्यंग्य ठीक ही है; पर यह भी आपने ख़याल किया कि लुडविग को जो सुविधायें मिली हैं, उनका शतांश भी क्या किसी हिन्दी-लेखक को प्राप्त हो सकता है? ऐसा प्रतीत होता है कि हमारी कितनी ही आकांक्षायें साथ ही चली जायेंगी; पर अब भी मैंने हिम्मत नहीं हारी है। अवसर मिलते ही इस काम को हाथ में लूँगा।"

श्रीरामजी का कहना अनुचित न था। लुडविग की मदद मिस्र, सूडान, अबीसीनिया तथा ब्रिटेन के उच्च पदाधिकारियों और विशेषज्ञों ने की थी, तभी वह गौरवपूर्ण ग्रन्थ रचा जा सका; और अपने यहाँ? अपने यहाँ कोई इस प्रकार के कार्य का महत्व ही नहीं समझता, सहायता की बात तो बहुत दूर रही।

सन् १९२८

कुण्डेश्वर (टीकमगढ़) पर भोपाल की संस्कृत पाठशाला के अध्यापक पं० लक्ष्मण अय्या शास्त्री आये हुये थे। यों ही बातचीत हो रही थी। बेतवा का जिक्र आया। मैंने कहा, "बेतवा के सुन्दर दृश्य देखने की मेरी इच्छा है। ओरछा के निकट बेतवा की जो मनोहर छटा है, उसे मैं देख चुका हूँ, अन्य स्थानों को भी देखना चाहता हूँ।" शास्त्रीजी ने कहा "बेतवा का उद्गम स्थान तो हमारे यहाँ है। वहाँ की तीर्थ-यात्रा कीजिए।" मुझे उस समय नील के जीवन-चरित की याद आ गई और मन में सोचा कि बेतवा का स्केच क्यों न लिखा जाय। हमारे साहित्य-सेवी पोस्टमास्टर साहब श्री गौरीशंकर द्विवेदी को यह विचार बहुत पसन्द आया, और उन्होंने बेतवा के विषय में मसाला इकट्ठा करने का निश्चय भी कर लिया; पर द्विवेदी तब तक कालपी के लिए बदल गए थे और मुझे अकेले ही भोपाल की यात्रा करनी पड़ी।

भोपाल में

भोपाल राज्य के शिक्षा-विभाग के मंत्री श्रीमान श्वैब कुरैसी साहब का नाम पहले से सुन रखा था। साबरमती में उनके दर्शन भी किये थे। महात्माजी के जेल जाने पर कुछ दिनों तक उन्होंने 'यंग इण्डिया' का सम्पादन किया था। उनकी कृपा से स्टेट गेस्ट हाउस (राजकीय अतिथिशाला) में ठहरने का अवसर मिल गया। इसी गेस्ट हाउस में कभी उर्दू-फ़ारसी के महाकवि सर मुहम्मद इक़बाल साहब ठहरा करते थे, और वहाँ आने वाले

सज्जनों ने इकबाल साहब का जिक्र बड़े प्रेम और गौरव के साथ किया। कविवर के दर्शन करने का सौभाग्य मुझे पानीपत में हाली-शताब्दी के अवसर पर मौलवी अब्दुल हक साहब की कृपा से प्राप्त हुआ था। मुझे, इस बात से बड़ी लज्जा आई कि मैंने उनकी कविताओं का अध्ययन नहीं किया था, यद्यपि उनकी दो-चार कवितायें "विशाल भारत में उर्दू से ले कर नागरी लिपि में छाप चुका था। यदि हिन्दी-साहित्य-सेवी उर्दू-कवियों का और उर्दू वाले हिन्दी शायरों का विधिवत् अध्ययन करें, तो दोनों साहित्यों को बड़ा लाभ पहुँच सकता है।

उद्गम की ओर

दूसरे दिन श्री लक्ष्मण अय्या शास्त्री और उन के एक शिष्य श्री बालाप्रसाद के साथ बेतवा के उद्गम-स्थान को देखने के लिए रवाना हो गया। यह स्थान भोपाल से २३-२४ मील की दूरी पर है। यह सुनकर आश्चर्य हुआ कि भोपाल में ऐसे व्यक्ति बहुत कम हैं, जो बेतवा के उद्गम पर गए हों। कई महानुभावों से पूछ-ताछ की, पर किसी से निश्चय पूर्वक पता नहीं लग सका कि बेतवा के उद्गम-स्थान की यात्रा कहाँ से करनी पड़ती है और वह कितनी दूरी पर है? वैसे कहने को तो हिन्दू लोग कहा करते हैं, "कलौ वेत्रवती गंगा"—यानी कलियुग में बेतवा ही गंगा के समान पुण्य दात्री है पर यह सब शास्त्रों की बातें हैं, सच्ची श्रद्धा शिक्षित हिन्दुओं में तो बहुत कम पाई जाती है, और जिस अशिक्षित जन-समुदाय में अन्ध-श्रद्धा अब भी विद्यमान है, वे उसे कोई क्रियात्मक रूप नहीं दे सकते। कई सज्जनों ने हमारी यात्रा का उद्देश्य पूछा। उन के लिए हमने जवाब सोच लिया था "बेतवा जमना की सखी है, इसलिए 'जमना मैया' के सपूत चौबे के लिए बेतवा मौसी हुई। हम अपनी खाला के घर जा रहे हैं।

मोटर से हम लोग दीप नामक स्थान पर पहुँचे और बैलगाड़ी का इन्तजार करने लगे। बड़ी मुश्किल से गाड़ी मिली और उस में भी एक बैल इतना अधिक 'उग्रपथावलम्बी' तथा 'प्रगतिशील' था कि हम लोगों की हड्डियों का सही सलामत बच जाना सचमुच बड़े आश्चर्य की बात थी। कई रंगों से उसे उतनी ही चिढ़ थी जितनी ब्रिटिश सरकार को लाल झंडे से, और आखिरकार उसने गाड़ी की धुरी को तोड़ ही डाला। ज्यों-त्यों कर के हम लोग गोल पहुँचे, तब तक शाम के ४ बज चुके थे। वहां जाकर पता लगा कि बेतवा का उद्गम ४५ मील पर है। फिर भी हम लोगों ने उसी वक्त चलने की ठानी।

गोल में देवीराम जी ने हम लोगों का बड़ा आतिथ्य किया। ग्राम में इनकी छोटी सी दूकान है। जाति के ये तेली हैं। बड़े सज्जन हैं। उसी वक्त बैलगाड़ी ले चलने के लिये तयार हो गये। बड़े ऊबड़-खाबड़ पथरीली रास्ते से हम लोग २½ मील दूर तूम्बड़ा खेड़ा नामक ग्राम पर पहुँचे। मार्ग में गाड़ी में इतने दचके लगे कि कमर टूटने में थोड़ी ही कसर बाकी रह गई। इन दचकों का नाम मैंने आ० शु० क० प्र० (आमाशय शुद्ध करण प्रयोगः) रख दिया था। शास्त्री जी को यह नामकरण-संस्कार बहुत प्रिय लगा, यद्यपि आ० शु० क० प्रयोग उन के लिए बहुत अप्रिय सिद्ध हुए। तूम्बडाखेड़ा पहुँचते पहुँचते शाम हो चुकी थी। बेतवा का उद्गम, जो झिरी के नाम से प्रसिद्ध है, वहां से २½ मील आगे था। रास्ता जंगल में हो कर था और जंगली जानवरों का डर था। कोई आदमी उस वक्त जंगल में साथ चलने के लिए तैयार न हुआ, इसलिए निराश होकर हमें लौटना पड़ा और दूसरे दिन प्रातःकाल के लिए यात्रा स्थगित करनी पड़ी। रात-भर हमने देवीराम जी के घर पर विश्राम किया। जाड़े के दिन थे, कड़ाके की सर्दी थी और हम लोगों के पास बिस्तरों की कमी थी, या यों कहिये कि अभाव था। हम लोगों का अन्दाज था कि बेतवा के उद्गम-स्थान के दर्शन कर के हम उसी रात को भोपाल लौट आवेंगे! वह तो खैरियत हुई कि शास्त्री जी के शिष्य का परिचय देवीराम जी से निकल आया। देवीराम को उन शिष्य महाशय के ग्राम की लड़की ब्याही थी, और उदारतापूर्ण ग्रामीण दृष्टिकोण से यह रिश्ता काफी था। शिष्य महानुभाव का छोटा लड़का नर्मदा भी हमारे साथ था। दर असल बेतवा दर्शन के पुण्य का ५० फी सदी श्रेय चिरंजीव नर्मदा की बुआ तथा फूफा (देवीराम) को मिलना चाहिए।

दूसरे दिन प्रातःकाल हम लोग चाय पान करके झिरी के लिए पैदल ही रवाना हुए। तूम्बड़ाखेड़ा पहुँच कर वहाँ से मिट्ठू बलाई को लिया। वह हमारा पथ-प्रदर्शक बना। उसने हमें बतलाया कि उस जंगल में रीछ और कभी-कभी शेर भी पाये जाते हैं। यह जंगल भोपाल के श्रीमान् नवाब साहब के बड़े भाई साहब की ज़मींदारी में है और यह सुरक्षित है, यानी यहाँ कोई शिकार नहीं

पं० लक्ष्मण अय्या शास्त्री, हमारे साथी

बार देखा है, और वह दृश्य भी किसी हालत में कम मनो-
रंजक नहीं है॥ पर हम तो तुलनात्मक अध्ययन करने के
इच्छुक थे। शास्त्री जी हमारी मौसी की उन वन्य सन्तानों
के दर्शन के लिए बिल्कुल उत्सुक नहीं थे। लौटते समय
मार्ग में जब कभी कटीले वृक्षों की डालें शरीर पर उलझतीं
तो वे यही कहते—'देखिये, चौबेजी, आपकी मौसी का
यह स्वागत तो अब अखरने लगा है।'

झिरी पर, जहाँ बेतवा का उद्गम है, भगवान शिव
जी की मूर्ति बनी हुई है। उस सुनसान बियाबान जंगल
में रहने की हिम्मत भला और किस देवता की पड़ सकती
है? शिव जी का चबूतरा बहुत ही छोटा और बिल्कुल
जीर्णशीर्ण अवस्था में है। शास्त्री जी में धार्मिक श्रद्धा का
प्राबल्य है, और उन्होंने उस तीर्थ-स्थान पर यह प्रतिज्ञा
की कि यहाँ पर एक सुन्दर चबूतरा अवश्य बनवा दिया
जायगा।

खेलने पाता। मिट्ठू ने यह भी बतलाया कि पिछले
वर्ष रीछ ने उसके ग्राम के एक आदमी की जाँघ ही
खा डाली और रात के वक्त अक्सर रीछ घूमते हुए
मिल जाते हैं।

घंटे-भर जंगल में चलने के बाद हम लोग झिरी
पहुँच गये। मार्ग में कहीं-कहीं यह बन सघन भी हो
गया था और झिरी के निकट का पहाड़ी दृश्य तो
बड़ा ही मनोहर था। एक बार दूर पर खड़खड़ाहट
की कुछ आवाज़ भी हुई जिसमें मिट्ठू को यह शक
हुआ कि कहीं रीछ न आ रहा हो! वह तुरन्त
सावधान हो गया। हम लोगों के लिए यह नया
अनुभव था। शास्त्री जी भी सतर्क हो गये। भीतर
से कुछ डर तो हमें लगा; पर ऊपर से हमने यही
कहा—"शास्त्री जी, अगर रीछ को आक्रमण करना होगा,
तो वह जीवन में बस एक ही बार हमला करेगा, और यह
कैसे निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि उसने आज की
ही तिथि इस शुभ कार्य के लिए निश्चित की है?" पर
सौभाग्य से या दुर्भाग्य से कोई रीछ नहीं आया और हमारे
मन की यह लालसा कि कभी जंगल में स्वतन्त्र रीछ को
देखें, मन की मन में रह गई। वैसे 'सैनिक'-सम्पादक श्री
श्रीकृष्णदत्त पालीवाल को उत्तेजित अवस्था में हमने

बेतवा-उद्गम से मील-भर इधर ही

बेतवा के उद्गम स्थान पर पहुँच कर निस्सन्देह बड़ा
आत्मिक सन्तोष हुआ। सघन वृक्षों की छाया, शीतल जल,
शान्त एकान्त, पक्षियों का कलरव और प्रकृति की गोद में
चारों ओर पहाड़ी दृश्य के बीच बेतवा की यह जन्मभूमि
वस्तुतः हमारे जैसे श्रान्त पथिक के लिए एक अद्भुत

॥ आशा है कि हमारे कृपालु पाठक इस वाक्य को
पालीवाल जी की नज़रों से बचा लेंगे। वैसे अब 'साहित्य-
... पालीवाल जी को इतनी फुर्सत कहाँ कि ... [illegible]
... एक पत्र-पत्रिका को पढ़ें!

आनन्दप्रद दृश्य था। स्नायु-तन्तुओं को अभीष्ट विश्राम मिला और दिल को एक अजीब राहत हुई। मन में बार-बार यही ख्याल आता था कि साहित्य-सेवियों की मंडली कभी कभी ऐसे स्थानों की यात्रा क्यों नहीं करती।

वहाँ बैठ कर हमने पाँच-सात कार्ड लिखे और यथोचित अभिमानपूर्वक बन्धुवर श्रीराम शर्मा तथा सियारामशरण गुप्त को यह शुभ समाचार सुना दिया कि आखिर हम बेतवा के उद्गम पर पहुँच गए हैं। उम्र में छोटे, पर अकल में बड़े, इन भाइयों पर रोब गांठने का यह मौका क्यों हाथ से जाने देता!

बेतवा वहाँ पर तीन छोटे-छोटे नालों के रूप में पाई जाती है, जो भिन्न भिन्न दिशाओं से आते हैं और वहाँ मिल कर एक हो गये हैं। मिट्ठू बलाई ने हमें बतलाया कि गर्मी के दिनों में ये नाले बिलकुल सूख जाते हैं और पानी सिर्फ एक गड्ढे में ही रह जाता है, जिसका व्यास एक गज़ से अधिक न होगा, और वह गढ़ा कभी नहीं सूखता। जंगल के जानवर उस वक्त उसी गढ़े के पानी से अपनी प्यास बुझाते हैं। सम्भवतः उसके नीचे कोई स्रोत होगा, नहीं तो यह कैसे सम्भव हो सकता है? कहाँ तो एक वर्गगज़ का वह गड्ढा और कहाँ बेतवा नदी का ओर छोर वाला दृश्य! उस समय श्रद्धापूर्वक हमने उसी गड्ढे से कई अंजलि जल पान किया और सोचा कि यदि हम अपनी शक्तियों का संचय कर सकते तो जनता की कुछ-न-कुछ सेवा कर पाते। खेद है कि हमारे जैसे निर्बलात्मा व्यक्तियों के संकल्प क्षण स्थायी ही होते हैं और वे प्रमादवश अपनी पुरानी बेढंगी रफ़्तार पर ही चलने लगते हैं। पर 'जब तक स्वासा तब तक आशा' के सिद्धान्तानुसार हमें हिम्मत न हारनी चाहिए। नदियाँ हमें प्रगति शीलता की शिक्षा देती हैं, और यही उनकी सजीवता का कारण है।

पहले-पहल हमने बेतवा के दर्शन बन्धुवर सियारामशरण जी के साथ किये थे। चिरगाँव के निकट बेतवा का बांध है और वहाँ से नहर निकाली गई है। सियारामशरण जी ने हमसे कहा था कि वह स्थान स्वर्गीय गणेशशङ्कर जी को अत्यन्त प्रिय था। तब से बेतवा हमें श्रद्धेय गणेश जी की याद दिलाती रही है। गणेश जी के चरित्र की खूबी यही थी कि उन्होंने अनेक कठिनाइयों का सामना किया था और बेतवा का सौन्दर्य भी दुर्गम स्थानों में बहने और चट्टानों से टकराने के कारण और भी अधिक बढ़ गया है।

फिर श्रीमन् ओरछेश के साथ बेतवा तट के अनेक सुन्दर स्थल देखे। कालिदास ने मेघदूत में वेत्रवती का उल्लेख किया है। सुना है कि किसी पुराण में उसका माहात्म्य भी मिलता है, पर वह हमारे देखने में नहीं आया।

बेतवा के उद्गम पर हमारा पथ-प्रदर्शक मिट्ठू बलाई

हमने यह बेतवा-यात्रा यद्यपि धार्मिक दृष्टि से नहीं की थी, फिर भी उसके पीछे एक साहित्यिक भावना अवश्य थी। हम सोचते थे कि क्या यह सम्भव नहीं कि ३६० मील लम्बी बेतवा का एक सुन्दर जीवन-चरित लिखा जाय? बेतवा के द्वारा भोपाल, ग्वालियर, ओरछा तथा युक्त प्रान्त के कई ज़िलों के लाखों व्यक्तियों का हित होता है। क्या इन चारों राज्यों की जनता तथा शासकों के सहयोग से यह कार्य नहीं हो सकता? बेतवा-तट के सुन्दर दृश्यों के फोटो क्या इन राज्यों के द्वारा नहीं मिल सकते? जिस प्रकार बेतवा भोपाल, ग्वालियर, ओरछा और ब्रिटिश भारत को मिलाती है, क्या उसी प्रकार कोई सांस्कृतिक धारा इन प्रान्तों के निवासियों को नहीं मिला सकती? राज्यों के शासन की मशीन बहुत धीरे-धीरे चलती है और बेहतर यही होगा कि भिन्न-भिन्न स्थानों के कुछ चुने हुए व्यक्ति इस कार्य को अपने हाथ में ले लें। अधिकारी व्यक्तियों द्वारा शिक्षाप्रद व्याख्यानों का प्रबन्ध कराना कोई कठिन काम नहीं है, यदि हम लोग पारस्परिक सहयोग की भावना से काम करें। जब मैंने यह सवाल जनाब श्वैब कुरैसी साहब के सामने रखा, तो उन्होंने कहा—"You

are trying to convert the converted." यानी 'आप तो समझे हुए को समझाने की कोशिश कर रहे हैं।'

श्री लक्ष्मण अय्या शास्त्री, शिवाजी के चबूतरे पर

हमें विश्वास है कि किसी भी सांस्कृतिक (Cultural) प्रोग्राम में आलीमर्तबा जनाब रबैब कुरैसी साहब एजुकेशन मिनिस्टर तथा उनके सुयोग्य सेक्रेटरी मि० ममनून हसन खां से काफ़ी सहायता मिलेगी ; पर यह सरकारी तौर पर शुरू न होना चाहिये, क्योंकि इससे जनता में व्यर्थ ही भ्रम फैल सकता है। यदि सर रास मसूद साहब ज़िन्दा होते, तब तो कहना ही क्या था। वे संस्कृत के बड़े प्रेमी थे, और उन्होंने कई संस्कृत-ग्रन्थों का उर्दू में अनुवाद कराना प्रारम्भ कर दिया था। इन पंक्तियों के लेखक का पानीपत में सर रास साहब से पन्द्रह मिनट तक बातचीत करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। जिस सहानुभूति के साथ उन्होंने वार्तालाप किया, उसकी याद ज़िन्दगी भर नहीं भूलने की। हर्ष की बात है कि श्रीमान् लक्ष्मण अय्या शास्त्री उनका जीवन-चरित लिख रहे हैं।

* * *

क्या ही अच्छा हो, यदि कविवर श्री मैथिली शरण गुप्त, डाक्टर सुनीतिकुमार चटर्जी, श्री सुन्दर-लाल जी, श्री क्षितिमोहन सेन, श्री हज़ारीप्रसाद जी द्विवेदी इत्यादि महानुभाव समय-समय पर इस सांस्कृतिक धारा को आगे बढ़ाने के लिए ग्वालियर, झांसी, चिरगाँव, टीकमगढ़, भोपाल इत्यादि की यात्रा करें। कविवर गुप्त जी तथा श्री सुनीति बाबू हिन्दू-संस्कृति के सुयोग्य प्रतिनिधि हैं और सुन्दरलाल जी तथा क्षिति बाबू हिन्दू और मुसलिम संस्कृति के मेल के विषय में विशेषज्ञ हैं, और श्री हज़ारीप्रसाद जी बङ्गला-साहित्य तथा हिन्दी-साहित्य की सगाई कराने के लिये पुरोहित का काम कर सकते हैं। इनके सिवाय बिस्मिल जी, बच्चन जी, दिनकर जी इत्यादि को भी न्यौता जा सकता है। ऐसे अवसर पर बार-बार स्वर्गीय मुन्शी अजमेरी जी की याद आती है। यदि कहीं वे जीवित होते !

साहित्य, संगीत तथा विविध कलाओं की भागीरथी को इस बेतवा प्रदेश के मुख्य-मुख्य स्थानों तक ले जाना अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य है। ओरछा राज्य यदि चाहे, तो इस बारे में पथ प्रदर्शक का काम कर सकता है, इस महान यज्ञ का होता बन सकता है।

जहाँ तीन नाले मिलते हैं

पिछले १८ महीनों में जब-जब मुझे बेतवा के दर्शन हुए हैं, मेरे मन में यही विचार आया है कि बेतवा तट पर साहित्यिक और सांस्कृतिक आश्रम बनाने के लिए कितने अच्छे स्थान हैं। बुन्देलखण्ड के साहित्य-सेवियों से इस विषय में ईर्ष्या की जा सकती है। शान्ति-निकेतन का प्राकृतिक सौन्दर्य बुन्देलखण्ड की छटा के सामने पानी भरता है ; पर कहाँ है कवीन्द्र रवीन्द्र की वह प्रगति-शीलता, वह दानशीलता, वह लिखने तक साहित्य

आनन्द भोगने की वृत्ति ? अयोध्या में भगवान राम के जन्मस्थान की दुर्दशा देखकर जो ग्लानि और पश्चात्ताप हुआ था और करोड़ों रूढ़िवादी हिन्दुओं की अक्ल पर जो तरस आया था, वह प्रगतिशील सरयू में स्नान करने के बाद ही दूर हुआ। सरयू और बेतवा अब भी जीवित हैं इसलिए कि वे दानशील और प्रगतिशील रही हैं। लेखकों और कवियों के व्यक्तित्व को सजीव बनाये रखने के लिए यही नुसखा है।

यदि प्राचीन काल में बेतवा का सौन्दर्य कालिदास को प्रभावित कर सकता है, तो आधुनिक काल में वह कविवर गुप्त जी को स्फूर्ति तथा प्रेरणा प्रदान कर सकता है। हम उन प्राचीनतावादियों में नहीं हैं, जो यह समझते हैं कि तीर्थ स्थानों का निर्माण भूतकाल में ही सम्भव था, अब नये तीर्थ नहीं बन सकते। साबरमती तीर्थ था, वारधा तीर्थ है और शान्ति निकेतन ने भी तीर्थ का रूप धारण कर लिया है। यदि हमारे प्रतिभाशाली हिन्दी लेखकों तथा कवियों में कल्पना शक्ति हो, तो गंगा और जमुना, नर्मदा और ताप्ती, चम्बल तथा बेतवा के निकट अनेक साहित्यिक तीर्थ बन सकते हैं।

यदि प्राचीन गौरव से संयुक्त वेत्रवती का सम्मिलन आधुनिक सांस्कृतिक धारा से करा दिया जाय, तो यह संगम साहित्यिक दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण बन सकता है।

क्या हम आशा करें कि वेत्रवती के अन्य भक्त इस विषय पर अपने विचार प्रकट करेंगे ?

"भूगोल"-कार्यालय, प्रयाग

प्रिय महाशय जी :—

आप "भूगोल" के पुराने ग्राहक हैं। गत १५ वर्षों से आपके "भूगोल" ने हिन्दी-संसार की जो कुछ सेवा की है उसका अधिकांश श्रेय आपको है।

आप जैसे हिन्दी प्रेमियों के सहयोग से प्रोत्साहित होकर हमने इसी मार्च से "देश-दर्शन" नाम का पुस्तकाकार सचित्र मासिक पत्र का प्रकाशन आरम्भ किया है। प्रत्येक अंक में किसी एक देश का आँखों देखा सचित्र और रोचक वर्णन रहता है। पृष्ठ-संख्या १०० से ऊपर, वार्षिक मूल्य ४) रु०, एक प्रति का छः आना।

"भूगोल" के ग्राहकों को एक और सुविधा है। भूगोल और देश-दर्शन को एक साथ मंगाने से आठ आने का लाभ होगा। "भूगोल" का वार्षिक मूल्य ३) रु० है, "देश-दर्शन" का वार्षिक मूल्य ४) है। दोनों का एक साथ वार्षिक मूल्य केवल ६॥) रहेगा।

आशा है आप "देश-दर्शन" का भी आर्डर भेजने की कृपा करेंगे। नीचे का आर्डर फार्म भर कर यदि आप खुले लिफाफे में भेज दें तो दो पैसे का ही टिकट पर्याप्त होगा।

निवेदक—

रामनारायण मिश्र

आर्डर फार्म

श्री मैनेजर, भूगोल-कार्यालय,

इलाहाबाद।

ता०..................१९

कृपया मेरा नाम "देश-दर्शन" के ग्राहकों में भी लिख लें और प्रथम (लंका) अंक रियायती वी० पी० द्वारा भेज दें।

भवदीय

नाम.................................

पूरा पता.................................

....

(कृपया उधर भी देखिये)

ग्राहकों के सहयोग की आवश्यकता

हिन्दी-संसार में इस तरह के पत्र का होना कितना आवश्यक था, यह आप 'देश-दर्शन' का प्रथम अंक 'लङ्का-दर्शन' देख कर अनुमान कर सकते हैं। लेकिन इस विराट साहित्यिक आयोजन को हम ग्राहकों की सहायता से ही सफल बना सकते हैं।

"भूगोल" के कई शुभचिन्तकों ने 'देश-दर्शन' की इकट्ठी दस दस, पांच पांच प्रतियाँ मंगाई हैं और माहवार भेजने के लिए वचन दिया है। कई ग्राहकों ने दो-दो, चार-चार, और पांच-पांच (जिससे जितना हो सका है) नये ग्राहक "भूगोल" और 'देश-दर्शन' के साथ साथ बनाये हैं। हम आशा करते हैं कि आप 'देश-दर्शन' और "भूगोल" के नये ग्राहक बनाकर हमारा उत्साह बढ़ायेंगे।

जो सज्जन जनवरी से "भूगोल" के ग्राहक बनेंगे उन्हें गंगा-अंक १) गंगा-एटलस ।।) और देशी राज्य अंक मूल्य २) जो जुलाई में प्रकाशित होगा मिलेगा। इसके अतिरिक्त साधारण अंक भी पूरे वर्ष भर मिलते रहेंगे।

"भूगोल" का वार्षिक मूल्य ३) और 'देश-दर्शन' का वार्षिक मूल्य ४) रु० है। दोनों के ग्राहक होने में रियायती चन्दा ६।।) होगा। 'भूगोल' और देश-दर्शन दोनों में किसी एक का ग्राहक होने पर क्रमशः ३।) और ४।) की वी० पी० भेजी जायगी।

निवेदक—
मैनेजर

प्रिय महाशय,

आपकी आज्ञानुसार निम्नलिखित सज्जनों के नाम भेज रहा हूँ। "भूगोल" और 'देश-दर्शन' के ग्राहकों की श्रेणी में इनका नाम लिख लीजिये और प्रथम अंक से वी० पी० भेजकर चन्दा वसूल कर लीजिए।

हस्ताक्षर........................ ग्राहक नं०........

१ ________________________________

____

२ ________________________________

____

३ ________________________________

____

४ ________________________________

____

"भूगोल" के सोलहवें वर्ष के उपलक्ष में

"भूगोल"

देशी राज्य-अङ्क

पृष्ठ-संख्या लगभग २००, चित्र-संख्या लगभग १००, नक्शों की संख्या लगभग ५०,
मूल्य साधारण संस्करण २) रु०, राज-संस्करण ५) रु०।

आगामी जुलाई (१९३९) में "भूगोल" का देशी राज्य-अङ्क प्रकाशित होगा। फ़ेडरेशन योजना के सिर पर आने से प्रत्येक हिन्दुस्तानी को देशी राज्यों का ज्ञान होना आवश्यक है। इसी आवश्यकता को ध्यान में रख कर देशी राज्य-अंक का प्रकाशन हो रहा है।

इस विशाल अंक में हिन्दुस्तान के छोटे बड़े सभी राज्यों का समावेश रहेगा। सम्पूर्ण सूची अगले मास के "भूगोल" में देखिये। काश्मीर, हैदराबाद, मैसूर, बड़ौदा, ग्वालियर, इन्दौर, जोधपुर, बीकानेर, उदयपुर, जैपुर, कोटा, रीवाँ आदि अधिक प्रसिद्ध लगभग १०० राज्यों का पूरा परिचय रहेगा।

प्रत्येक राज्य की स्थिति, विस्तार, संक्षिप्त इतिहास, जन-संख्या, कारबार, आर्थिक महत्व, भारत सरकार से सम्बन्ध, शासन-प्रणाली, राजा और प्रजा का सम्बन्ध आदि सभी जानने योग्य विषय रहेंगे।

यह देशी राज्य-अंक आवश्यक नक़शों और चित्रों से सुसज्जित रहेगा। "भूगोल" के आकार की पृष्ठ-संख्या लगभग २०० होगी। मूल्य साधारण संस्करण का २) रु०, राज-संस्करण का ५) रु०। राज-संस्करण बढ़िया आर्ट पेपर पर छपेगा। जिल्द भी आकर्षक और मजबूत रहेगी।

जिन नये या पुराने ग्राहकों का चन्दा मई सन् १९३९ से अप्रैल सन् १९४० तक आगया है या १९३९ के मई महीने के पहले आ जायगा उनको देशी राज्य-अंक का साधारण संस्करण उनके चन्दे में ही मिलेगा। यदि वे साधारण के बदले राज-संस्करण चाहेंगे तो उन्हें "भूगोल" के वार्षिक मूल्य के साथ ३) रु० अधिक अर्थात् ६) रु० मनीआर्डर द्वारा भेजना चाहिये।

देशी राज्य-अंक परिमित संख्या में ही छपेगा। अतः यथा शीघ्र वार्षिक मूल्य ३) अथवा इस विशेषांक का मूल्य २) या ५) भेज कर अपनी प्रति सुरक्षित कर लीजिये।

मैनेजर, भूगोल-कार्यालय, प्रयाग।

Published by the Editor (Pt. Ram Narain Misra, B. A.) and Printed by K. P. Misra at the Bhugol Press; 306, Jamuna Road, Allahabad

ANNUAL
SUBSCRIPTION
Indian Rs. 3/-
Foreign : Rs. 5/-
Single Copy: As. 5.
सम्पादक—रामनारायण मिश्र बी० ए०
भूगोल-कार्यालय प्रयाग

देशी राज्य

"भूगोल" के सोलहवें वर्ष का विशेषांक

"भूगोल" के आकार के २४४ पृष्ठ, कई नकशे और लगभग १०० चित्र

देशी राज्य में भारतवर्ष के प्रधान राज्यों का विस्तृत वर्णन है। भारतवर्ष के छोटे बड़े सभी देशी राज्यों का समावेश है। अन्त के लगभग ५० पृष्ठों में देशी राज्यों की अकारादि क्रमानुसार अनुक्रमणिका है। इस अनुक्रमणिका में सभी राज्यों का संक्षिप्त परिचय है। सभी बड़े राजाओं के चित्र और प्रधान राज्यों के नकशे हैं।

देशी राज्य हिन्दी साहित्य में सचमुच अनोखा है। मूल्य केवल २) रु०। ३) रु० भेज कर इस वर्ष के ग्राहक बनने वालों को यह विशाल और अद्वितीय अंक उनके चन्दे ही में मिलेगा।

यह अंक परिमित संख्या में ही छपा है। अतः ग्राहकों को मूल्य भेजने में शीघ्रता करनी चाहिये।

मैनेजर, भूगोल-कार्यालय,
इलाहाबाद।

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१—राम-चरित-मानस में प्रान्त बांदा का भौगोलिक वर्णन ...	१
२—नारियल	४
३—भूगोल के पठन का उपयोग और उद्देश्य	५
४—देहरादून	११
५—पाला	१४
६—टिन प्लेट कम्पनी	१७
७—सिकुड़ कर छोटी हो जाने वाली चिड़िया ...	१८
८—एक लैप (लैण्ड) की कहानी	२०
९—केप आफ गुडहोप	२१
१०—सूर्य	२४
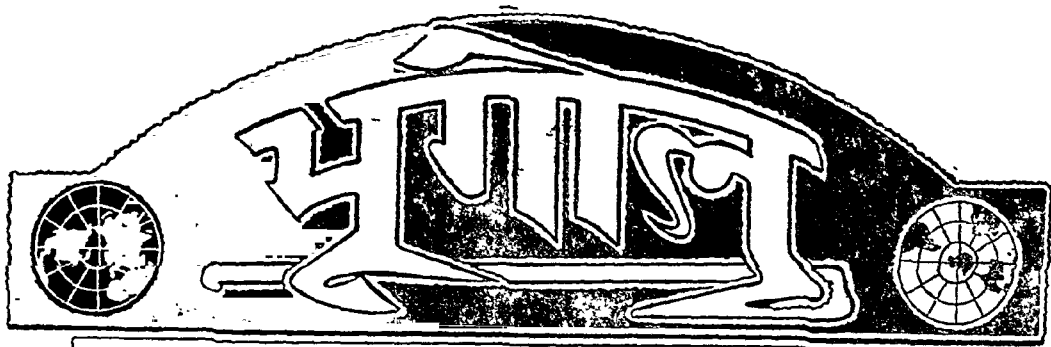
यह पत्र संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, बरार, बिहार, उड़ीसा, पंजाब प्रान्त तथा ग्वालियर, जैपुर, जोधपुर और कोटा राज्य के शिक्षा-विभाग द्वारा हाई, नार्मल और मिडिल स्कूलों में प्रयोग होने के लिये स्वीकृत है।

वर्ष १६] आश्विन सं० १९९६, अक्टूबर १९३९ [अङ्क ६

राम-चरित-मानस में प्रान्त बांदा का भौगोलिक वर्णन

(ले० ठा० कर्णसिंह सब डि० इं० आव् स्कूल्स, बांदा)

भगवान राम ने दस बारह वर्ष चित्रकूट में व्यतीत किये थे। परन्तु वह चित्रकूट कहां है? यह बात अभी तक निश्चित नहीं हुई। जब तक मनुष्य में कल्पना शक्ति और तर्क शक्ति कार्य करती रहेंगी तब तक यही क्या कोई भी बात अन्तिम रूप से तै होजाना असम्भव ही है। परन्तु एक बात तै है वह यह कि गोस्वामी जी ने रामायण में जिस चित्रकूट का वर्णन किया है वह बांदा प्रान्त के अन्तर्गत ही है। हां एक बात अवश्य विचारणीय है, रामायण में प्रदर्शित चित्र-कूट में कई स्थानों पर जङ्गली हाथियों का पाया जाना दिखलाया गया है। यह बात बांदा या बुन्देल खण्ड की जलवायु इत्यादि के लिये अनुकूल नहीं बैठती।

रामायण में वर्षा और शरद् ऋतु की तो वर्णन विशद रूप से हुआ है, बसन्त का भी अच्छी खासी कथा है। "मशक दंश बीते हिमत्रासा" चरण में हिमर्तु का भी वर्णन आ जाता है परन्तु ग्रीष्म ऋतु का कहीं नाम को भी वर्णन नहीं है।

गुसाईं जी ने ग्रीष्मऋतु का वर्णन क्यों नहीं किया? इस का कारण एक महाशय ने बतलाया। 'गोस्वामी जी को 'वात रोग था' अतः ग्रीष्म में अत्यन्त ही सुचित रहते थे। यह तो निश्चय है कि कवि सहानुभूति से ही प्रेरित होकर लिखता है न कि सुन सुनाकर। गुसाईं जी को यह पता ही न चलता था कि ग्रीष्म ऋतु कब आई और कब चली गयी। कठिनाई कष्ट की घड़ियों में अनुभव होती है और सुखद घड़ियां सुविधा जनक प्रतीत होती हैं। परन्तु अनुकूल घड़ियां और स्वस्थावस्था की घड़ियां आते जाते प्रतीत ही नहीं होतीं। इस ऋतु में उनके लिये कोई विशेषता न थी।

राम चरित मानस में किया गया वर्णन सारे बुन्देल खण्ड पर घटित होता है। परन्तु बांदा प्रान्त पर विशेष रूप से।

पाठक देखें कि किस ख़ूबी से और अत्यन्त ही संक्षेप में बांदा प्रान्त का भूगोल वतला गये हैं।

धरातल:—

"सरिता, वन, गिरि अवघट घाटा।"
"मारग अगम, भूमि धर भारे।"
"कंदर, खोह, नदी, नद, नारे।
अगम अगाध न जायं निहारे।"
"कुश, कंटक मग कंकर नाना।"
"कुश कंटक कांकरी कुराई।"

कोलों को इन कठिनाइयों का अच्छा पता था। उन्होंने भगवान से स्पष्ट शब्दों में निवेदन किया कि यहां पर भगवन्! प्रत्येक स्थान रहने योग्य नहीं है! अत: "कीन्ह बास भल ठांव निहारी।" फिर भी हम जो स्थान आप को वतला रहे हैं वहां पर आप "सकल ऋतु-रहव सुखारी"। क्योंकि 'हम सव भांति करव सेवकाई।"

"करि केहरि अहि बाघ वराई।"

अन्यत्र रहने से आपको अनेक असुविधायें होंगी परन्तु

"वन, वेहड़, गिरि, कंदर, खोहा।
सब हमार प्रभु पग पग जोहा।"

इस के अतिरिक्त हम सदैव साथ में रहेंगे; और

"जहँ तहँ तुमहिं अहेर खिलाउब,
सर, निर्झर, भल ठांव दिखाउब।"

ऋषिवर वालमीकि जी की मनोवृत्ति दूसरी थी। उन के लिये यह सब असुविधायें ही तप में सुविधा पहुँचाती थीं। इसीसे उन्हों ने उल्लिखित परिस्थिति को दूसरे ही शब्दों में कहा था।

"सैल सुहावन कानन चारू,
करि केहरि बहु विहंग विहारू।"
"नदी पुनीत पुरान बखानी;
अत्रि तिया निज तपु वल आनी।
"सुर सरि धाम नांव मंदाकिनि,"।
"अत्रि आदि मुनिवर बहु वसहीं,
करहिं जोग जप तप तनु करुहीं।"

स्पष्ट है कि मुनिवर कठिनाइयों को कम नहीं समझते इसीसे उनको स्वीकारते हुये कुछ अन्य प्रकार आकर्षण भी वतलाये हैं। अब भी चित्रकूट के वन में आकर्षण केवल जलाशयों के समीपस्थ ही हैं। जो किसी न किसी रूप में मिलते ही हैं।

"वापी, तड़ाग, अनूप, कूप मनोहरायत सोहहीं;
सोपान सुंदर, नीर निर्मल......।"
बहुरंग कञ्ज, अनेक खग कूजहिं;
मधुप गुंजारहीं।
आराम रम्य, पिकादि खग रव,
जनु पथिक हङ्कारहीं॥"

वैसे साधारणत: जंगल में कोई आकर्षण नहीं है। तभी तो गोस्वामी जी ने वतलाया है कि राम जी के आने के कारण—

"फूलहिं, फलहिं विटप विधि नाना;
मंजु वलित वर वेलि विताना।"
"सुर तरु सरिस सुभाय सुहाये;
मनहुँ विविधि वन परिहर आये।"
"गुंज मंजु तर, मधुकर श्रेणी
त्रिविध वयारि वहहि सुख देनी।"
"नील कण्ठ, कलकण्ठ, चातक, चक्क, चकोर;
भांति २ वोलहिं विहँग, श्रवण सुखद चितचोर।"
"कपि केहरि, करि, कोल कुरंगा;
विगत वैर, विचरहिं सब संगा।"

इस वर्णन से भी चित्रकूट की स्थिति का पूरा पूरा पता स्पष्ट रूप से लग जाता है। क्योंकि यह मन मोहक वर्णन तो पुकार पुकार कर कह रहा है कि यह सव विशेप रूप से प्रकृति देवी ने प्रवन्ध किया था; वरना इस का विपरीत। हां वर्षा काल में कुछेक घने जंगल अपनी सघनता के कारण ही पर्याप्त रूप से आकर्षणयुक्त हो जाते हैं। वांके सिद्ध, कोटि तीर्थ, देवांगना, हनुमान धारा, अनुसूइया जी, गुप्त गोदावरी, जानकी कुण्ड, विराध कुण्ड, धारकुण्डो और कालींजर के पहाड़ में सरगुहा के सरोवर पर जाते ही तवियत शेर हो जाती है। पठार की दीवार, वन की सघनता, झरने और अनेक पक्षियों का कलख देख कर और सुन कर कोई यह नहीं कह सकता कि गोस्वामी जी ने उल्लिखित चौपाइयों या छन्दों में कहीं

अत्युक्ति से काम लिया है। बात केवल इतनी ही है कि यह बात जुलाई से नवम्बर तक ही रहती है। मार्च से जून तक तो आग बरसती है।

ऋतु वर्णन। वर्षाः—
"घन घमण्ड नभ गरजत घोरा।"
"दामिनि दमक रही घन माहीं।"
"भूमि परत भा ढावर पानी।"
"बरसहिं जलद भूमि नियराये।"
छुद्र नदी भरि चली उतराई।"
"सिमिट सिमिट जल भरे तलावा।"
"सरिता-जल, जलनिधि में जाई।"
"खोजत पंथ मिलहि नहिं धूरी।"
"महा कष्ट चलि फूटि कियारी।"
"ऊसर बरसे, तृण नहिं जामा।"
"अर्क जवास पात बिन भयऊ।"
"नव पल्लव भये विटप अनेका।"

"हरित भूमि तृण संकुल समुझि परे नहिं पंथ।"
"ससि सम्पन्न सोह महि कैसे।"

"कृषि निरावहिं चतुर किसाना।" यहाँ बहुत कम किसान खेती निराते हैं।

"दिखियत चक्रवाक खग नाहीं।"
' निशि तम घन खद्योत बिराजा।"
' विवधि जन्तु संकुल महि भ्राजा।"

"जहँ तहँ रहे पथिक थकि नाना।" किसी किसी भाग में सर्वथा रास्ते बन्द हो जाते हैं। शौचादि तक को बाहर जाना दूभर हो जाता है। कहीं कहीं तो कमर से ऊपर पानी में घुसकर शौच के लिये जाना होता है। 'मार' और सिंगवा' मिट्टी में पैर चले जाते हैं. बैठना असंभव हो जाता है। इसी से प्रान्त भर में ठीक रास्ते पर शौच के लिये बैठने की आदत पड़ी हुई है। क्योंकि अन्यत्र की अपेक्षा रास्ते कुछ दब जाने से कड़े रहते हैं। जूहर भाग में कुछ मन चले नव युवक तो पेड़ों की शाख पर बैठकर शौच किया करते हैं। इस भाग के कुछ गावों में सोना बड़ा ही मुश्किल है। मच्छरों के 'पाल के पाल' गिरते हैं। नगनेधी हास्तन इत्यादि गावों में बरसात में सामान्यतः लोग दिन में सोकर नींद पूरी करते हैं। खैर!

आपने गोस्वामी जी के वर्णन को देखा? कैसा सिखाये हुये मास्टर के समान क्रमशः और संक्षेप में, परन्तु पूरा वर्णन किया है!! कोई बात छूट तो नहीं गयी? क्या वर्षा-ऋतु का वर्णन करते समय किसी अध्यापक को इस से कम पढ़ाना चाहिये।

"अब शरद की बहार देखिये!
"बरसा बिगत शरद ऋतु आई।"
"भूमि जीव संकुल रहे, गये सरद ऋतु पाय।"
"जानि सरद ऋतु खंजन आये।"
"उदित अगस्त पंथ जल सोखा।"
"सरिता सर निर्मल जल सोहा।"
"रस-रस सूखि सरित सर पानी।"
"सुखी मनी जहँ नीर आगाधा।"
' पंक न रेणु सोह अस धरनी।"

"फूले कांस सकल महि छाई। जनु बरसा कृत प्रकट बुढ़ाई।" इस चौपाई का अर्थ वास्तव में उसी को दृष्टि गोचर हो सकता है जिसने बुन्देलखंड में फूला हुआ कांस देखा है।

आकाश—"बिनु घन निर्मल सोह अकासा।" वर्षा गत निर्मल ऋतु आई।"
"कहुँ कहुँ दृष्टि शारदी थोरी।"
"फूले कमल सोह सर कैसे।"
"गुंजत मधुकर मधुर अनूपा!"

जब कि वर्षा काल में दिखियत चक्रवाक खग नाहीं" अब वहीं चक्रवाक लौट आये हैं और शरद ऋतु की निर्मल चांदनी रात में—"चक्रवाक मन दुख निशि पेखी।" किन्तु 'देखहिं इन्दु, चकोर समुदायी"
चातत रटत तृषा अति ओही।
"शरद ताप, निशि-शशि अपहरई।"
"पंक न रेणु सोह अरु धरनी।"
"भूमि जीव संकुल रहे, गये सरद ऋतु पाय।"
"मसक दंस बीते हिम त्रासा।" अतः

"चले हरषि तजि नगर नृप, तापस बनिक भिखारि।"

"जरा गौर से देखिये कोई बात छूट तो नहीं गयी? सर्वांग पूर्ण और क्रमशः पाठ का नोट तैयार होगया या नहीं? यदि अध्यापक चाहे [illegible] बात की एक एक पंक्ति में तुलना करा"

हो गुरुवर ! आपने जो भी विषय पढ़ाया, खूब पढ़ाया ! आपका प्रत्येक पाठ 'मास्टर पीस' है !

वसंत ऋतु में तेंदू के पेड़ पर नये पत्ते आ जाते हैं, महुआ फूल जाता है, चिरोंजी फलती है। परन्तु धूप में तेजी आ जाती है और बहार का सारा मजा किरकिरा कर देती है। यहाँ पर गाँव गाँव तालाब हैं, चिकनी मिट्टी के कारण सदैव पानी से भरे रहते हैं। कमल और कुमुद भी खिलते हैं। पुरइन के पत्ते सारे जल को ढक लेते हैं। परन्तु सभी तालाबों को नहीं। केवल उन्हीं को जो आबादी से दूर हैं। चक्रवाकों के जोड़े तो प्रायः सभी में पाये जाते हैं।

गोस्वामी जी इसी दृश्य को निम्न लिखित शब्दों में वर्णन करते हैं।

"विकसे सरसिज नाना रंगा, मधुर मुखर, गुंजत बहु भृंगा।"

'बोलत जल कुक्कुट, कल हंसा।"

"चक्र वाक, बक, खग समुदायी; देखत बनइ बरनि नहिं जायी।"

"सुन्दर खग गन गिरा सुहाई।"

"कुहू कुहू कोकिल धुनि करहीं।"

गोस्वामी जी का उद्देश्य, बांदा प्रान्तों या अन्यत्र की भौगोलिक दशा का वर्णन करना न था। फिर भी उस विशाद ग्रंथ में पर्याप्त मात्रा में वर्णन आगया है। आशा है कि प्रिय पाठकों का इससे कुछ विनोद अवश्य होगा।

✱✱✱✱

नारियल

गरी या खोपरा प्रायः सब बड़े लड़कों ने देखा होगा। यह नारियल के कड़े फल का भीतरी गूदा है। नारियल का पेड़ सूरत में कुछ कुछ खजूर के पेड़ से मिलता है। लेकिन नारियल का पेड़ बहुत ऊंचा होता है। कोई कोई पेड़ तीस या पैंतीस गज ऊंचे होते हैं। खजूर की तरह नारियल के पेड़ में भी टहनियां नहीं होतीं हैं। इसकी चोटी पर बहुत ही लम्बो और सुन्दर पत्तियों का गुच्छा होता है। जब यह लम्बी पत्तियां हवा में हिलती हैं। तो यह और भी अधिक सुन्दर मालूम होती हैं। जड़ के पास जो पत्ते निकलते हैं वे गिरते जाते हैं दूसरे पत्ते उन से ऊपर कुछ अधिक ऊंचाई पर निकलते हैं। इन निशानों को देख कर चतुर लोग पेड़ की उम्र जान सकते हैं। फल तोड़ने वाले लोग इन्हीं निशानों के ऊपर अपना पैर जमा कर रस्सी की सहायता से छलांगते हुये ऊपर चढ़ते हैं।

चोटियों की पत्तियां लगभग दो गज लम्बी होती है। अधिक लम्बाई के कारण वे नीचे की ओर लटकी रहती हैं। पत्तियों के बीच वाली पंखुड़ियों में फूल लगते हैं। इन्हीं की जगह पर फलों के गुच्छे निकल आते हैं। एक पेड़ में लगभग ५० फल हर साल लगते हैं। नारियल का फल १२ इञ्च से अठारह इञ्च तक लम्बा होता है। यह फल ६ इंच से ८ इंच तक चौड़ा होता है। फल का घेरा कुछ विषम रूप से गोल होता है। इस का बीच वाला भाग अधिक मोटा होता है। निचला भाग सब से कम मोटा होता है।

फल का ऊपरी छिलका पहले हरा होता है। पक जाने और पेड़ से अलग होने पर यह कुछ पीला हो जाता है। एक दम सूख जाने और कुछ पुराना हो जाने पर यह ताँबे के रंग का हो जाता है। इस को छीलने से पहले जटादार रेशा निकालते हैं। इन से बड़ी मजबूत रस्सी बनती है जो पानी में कभी नहीं सड़ती है। इन रेशों के नीचे बहुत ही कड़ा छिलका मिलता है। इस से लोग चम्मच और प्याले बनाते हैं। तम्बाकू पीने वाले कुछ लोग इससे हुक्का बनाते हैं। इसी कड़े छिलके के भीतर मुलायम और स्वादिष्ट गूदा होता है जिसे गरी या खोपरा कहते हैं। पहले यह बहुत पतला और मुलायम होता है। इस के भीतर पानी (रस) भरा रहता है। यह पानी बड़ा अच्छा होता है। जब नारियल का हरा फल टूट पड़ता है तब इस का रस ही पीने के

काम आता है।

नारियल का पेड़ गरम और तर देशों में बहुत होता है। अपने देश लङ्का, मद्रास-प्रान्त, उड़ीसा बंगाल और मलाबार में बहुत होता है। नारियल के पेड़ को नमकीन और उपजाऊ मिट्टी बड़ी अनुकूल पड़ती है। समुद्र के पास हवा भी कुछ नमकीन होती है। इस लिये प्रायः समुद्र तट के पास नारियल के अच्छे बगीचे उगते हैं। लंका में नारियल इतने अधिक उगते हैं कि स्टेशनों पर बेचने वाले लड़के "कुरुम्बा, कुरुम्बा" अथवा नारियल, नारियल की आवाज़ लगाते रहते हैं। बहुत से गरम और तर देशों में नारियल अवश्य उगता है लेकिन लोगों का कहना है कि नारियल वहीं उगता है जहाँ तक मनुष्य की आवाज पहुँच सकती है। यह ठीक भी है। क्योंकि नारियल को सींचने जोड़ने और खाद देने का काम समय से न किया जावे तो नारियल का पेड़ सूख जाता है।

नारियल का पेड़ बहुत धीरे धीरे उगता है। लगभग छः महीने में अँकुर फूटता है। अप्रैल (वैशाख) के महीने में पके फल समुद्र-तट की मुलायम कीचड़ और समुद्री पौधों को लाकर बगीचे की क्यारियों में गाड़ देते हैं। इन्हें रोज पानी दिया जाता है। जब पौधे कुछ बढ़ते हैं तब इन्हें उखाड़ कर दूर दूर लगा देते हैं। पहले दो वर्ष तक इन्हें कड़ी धूप से बचने के लिये पत्तों की टट्टियों की छाया कर दी जाती है।

नारियल का पेड़ बड़े काम का होता है। इसकी लकड़ी से घर, नाव, और हल बनाये जाते हैं। लम्बी पत्तियों से छप्पर छाया जाता है और घरों का घेरा बनाया जाता है। कुछ लोग इन से चटाई और टोकरी भी बुनते हैं। इन के रेशों से रस्सी और कड़े छिलके से प्याले चम्मच और तरह तरह के बर्तन बनाये जाते हैं। नारियल की गरी बड़ी स्वादिष्ट होती है। इस में ६० फी सदी तेल होता है। समुद्र-तट के प्रदेश में दूध देने वाले जानवरों की कमी होती है। इस लिये यहां के लोगों के लिये यह फल बड़े काम का होता है। वे इसे कच्चा खाते हैं और इससे तरह तरह की मिठाई और तरकारी बनाते हैं। इस का तेल खाने लगाने, जलाने और साबुन आदि कई चीजों के बनाने के काम आता है।

भूगोल के पठन का उपयोग और उद्देश्य

१—भूगोल से सब को परिचित होना ही पड़ता है—बहुधा लोग प्रश्न किया करते हैं कि भूगोल के पढ़ने से लाभ ही क्या है? क्यों व्यर्थ अपने सिर में पर्वतों और शिखरों के, नदियों और झीलों के, अन्तरीपों और खाड़ियों के, शहरों और उपजों के आवागमन के साधन और उद्योग धन्धे तथा व्यापार की वस्तुओं के नाम ठूंसें? इनसे हमें वास्ता ही क्या पड़ता है जो इतनी बातें सिर में भरी जाय और उन्हें याद रखने के लिये मगज़-पची की जाय?

इसका सब से प्रधान और प्रथम उत्तर यही है कि भूगोल के थोड़े बहुत ज्ञान के बिना किसी का भी, नितान्त अपढ़ का भी काम नहीं चल सकता चाहे किसी पाठशाला में पढ़े या न पढ़े, वह थोड़ा बहुत भूगोल जानता अवश्य है। जिस दिन वह इस संसार की वस्तुओं को समझने लगता है उसी दिन से वह भूगोल का ज्ञान प्राप्त करने लगता है। एक अपने निजी घर को जान लेना और उसके सुभीते-गैरसुभीते जान लेना, भोजन तथा आच्छादन की वस्तुओं को जान समझ लेना दिन और रात के परिवर्तन को, ठंड और गर्मी के परिवर्तन को और उस प्रकार अपने जीवन में परिवर्तन करना, आसपास की ज़मीन को, नदियों और नालों को, ऊंचाई और निचाई को, पर्वत और नदियों को, समुद्र तट और उसमें होने वाले परिवर्तनों को, समुद्र और वायु की गतियों को, जान समझ लेना और उनके अपने जीवन पर होने वाले परिणामों को जान लेना, भूगोल जानना नहीं है तो क्या है? क्या कोई कह सकता है कि अपनी भौतिक

परिस्थिति की ऐसी प्रधानबातों से कोई अनभिज्ञ रह सकता है और अनभिज्ञ रह कर अपना जीवन कुशलतापूर्वक और सफलता पूर्वक बिता सकता है? परन्तु हमारा ज्ञान इतने में ही नहीं समाप्त और अनेक भौगोलिक बातें अनुभव से सीखते जाते हैं। ज़िले का और प्रान्त का नाम, उनके प्रधान शहर, रास्ते, लोगों की रहन सहन भिन्न भिन्न भागों की भूमि जलवायु, भोजन, आच्छादन आदि से परिचित होते जाते हैं और होना भी पड़ता है। अपने सब अनुभवों को कोई कैसे भूल सकता है और विशेष कर जब उनका उसके जीवन पर परिणाम हो, उनके कारण अपने जीवन में उसे परिवर्तन करना पड़ा हो, उनसे होने वाले सुख या दुख को भोगना ही पड़े। इससे यह स्पष्ट है कि कोई मनुष्य भूगोल पढ़े या न पढ़े और चाहे या न चाहे उसे अपने जीवन के कार्यों के कारण भूगोल का ज्ञान अनुभव से होता ही जाता है।

२—भूगोल का शिक्षित मनुष्यों के लिये अधिक व्यवहारिक उपयोग—भूगोल से यदि प्रत्येक को कम अधिक प्रमाण में परिचित होना ही पड़ता है तब उसका क्रमबद्ध ज्ञान प्राप्त कर लेने से अधिकतर ही लाभ होने की सम्भावना है। भूगोल से यह समझ में आ सकता है कि भिन्न भिन्न लोग भिन्न भिन्न प्रकार के भोजन-आच्छादन-निवास का उपयोग क्यों करते हैं उनकी रीति भांति, रहन सहन, भिन्न क्यों है। जब हम पर यह स्पष्ट हो जाता है कि मनुष्य पर उसकी परिस्थिति के बहुत अधिक परिणाम होते हैं-तब हम पहिले जैसे अनुदार असहिष्णु नहीं रह जाते। भिन्नता का कारण मालूम हो जाने पर और यह समझ में आजाने पर कि वह अपने काबू के बाहर है। मनुष्य उदार और सहिष्णु हुए बिना नहीं रहता। यह लाभ कुछ छोटा मोटा नहीं है, किन्तु काफी भारी है। मनुष्य का परस्पर से उदारता और सहिष्णुता का वर्ताव होना, परस्पर में मेल बढ़ना भाईचारे का सम्बन्ध होना, सब से अधिक वांछनीय है और भूगोल के ज्ञान से यह बहुत कुछ सिद्ध हो सकता है।

३—भूगोल के ज्ञान से राष्ट्रीय भाव की वृद्धि—भूगोल से तीसरा सामान्य व्यवहारिक लाभ यह हुआ है और होता है कि उससे राष्ट्रीय भाव की वृद्धि होती है। हम भारतवासियों को अपने इतिहास में परस्पर झगड़े देख कर आश्चर्य होता है। यह समझ में नहीं आता कि एक ही देश के निवासी, एक ही सभ्यता और धर्म में पाले पोशे लोग परस्पर का विनाश करने को क्यों कर कटिबद्ध होते रहे। परन्तु यदि हम यह स्मरण रक्खें कि उनको देश की भावना बड़ी अन्धुक थी, उन्हें अपने देश की और परस्पर विलंबन की कल्पना बहुत कम थी, समस्त देश का और उसके हित के लिये कभी उनकी आंखों के सामने नहीं आया तो हम समझ सकते हैं कि वे परस्पर से क्यों लड़ते रहे। उस समय आज जैसे एकीकरण के आज जैसे आवागमन के, साधन न थे। एक भाग के लोगों का दूसरे भाग के लोगों से सभ्यता और धर्म के सिवा दूसरा कोई सम्बन्ध न था, हमारा स्वार्थ परस्पर मेल पर अवलम्बित है इसकी कल्पना ही न थी, देश में अनेक राजा और राज्य थे, ये सदैव आपस में लड़ते रहे और लोग भी अज्ञान के कारण उनका अनुकरण करते रहे और उनका साथ देते रहे फिर हिन्दुस्तान के इतिहास में लड़ाई-झगड़े वैर वैमनस्य, फूट और परस्पर के विनाश का प्रयत्न देख पड़े तो आश्चर्य ही क्या है? आधुनिक राष्ट्रीय भाव हिन्दुस्तान के एक देश होने की कल्पना से, हमारे हानि लाभ परस्परावलम्बी होने की कल्पना से, आवागमन की बढ़ती से परस्पर मिलने-जुलने से, बढ़ा है। यदि हम अपने देश के ज्ञान को यानी अपने देश के भूगोल को भूल जायें और आवागमन के आधुनिक साधन निकाल लिये जायँ तो हम मे आज के राष्ट्रीय भाव भी इनके साथ ही नष्ट हो जावेंगे एक शिक्षित मनुष्य जिस भाव से अपने देश का विचार करता है और वही एक अशिक्षित भाई कैसा आत्म सन्तुष्ट स्वार्थ पर और संकुचित बना रहता है इसका भेद भूगोल ज्ञान पर ही अवलंबित है। जो कोई भूगोल का थोड़ा भी ज्ञान रखता है वह अपने देश के सम्बन्ध में अपने अशिक्षित भाई से भिन्न ही ढंग से विचार करेगा। इस अशिक्षित भाई का दोष ही क्या है? उसके सामने होगा। हम अपने जीवन के कार्यों के कारण एक गांव से दूसरे गांव को एक शहर से दूसरे शहर को जाते आते हैं। देश का चित्रपट है नहीं, उसे सारे भारतवर्ष की कल्पना है नहीं, उसे तो भरपूर खाने पीने को और बिना कष्ट के रहने को मिला तो उसे जीवन का सर्वस्व मिल गया। इससे आगे उसकी कल्पना जहाँ हो सकती। यदि वह हिन्दू हुआ तो बनारस, बद्रीनाथ, गया, द्वारका, सेतबन्धुरामेश्वर, लंका, जगन्नाथपुरी जैसे नाम सुन लेता है और कभी कभी वहां हो भी आता है। कभी कलकत्ता, बम्बई जैसे नाम

भी सुन लेता है पर सारे देश की, उसके हानि लाभ की भिन्न भिन्न लोगों की, उनकी भिन्नता की, उसे कल्पना ही क्या है? जो वह सब के हानि लाभ के प्रश्नों पर भी कभी विचार करे। देश के भूगोल के जानने के सिवा ऐसे विचार आना सम्भव ही नहीं है। सारांश राष्ट्रीय भाव की वृद्धि के लिये देश का भूगोल जानना नितान्त आवश्यक है।

४—भूगोल के ज्ञान की अन्य विषय समझने के लिये आवश्यक :—

शिक्षित मनुष्य को भूगोल के इतने ही उपयोग नहीं हैं। ज्यों ज्यों वह अधिकाधिक शिक्षा पाता जाता है त्यों त्यों उसे कई अन्य विषय पढ़ने पड़ते हैं। भूगोल का सम्बन्ध बहुतेरे भौतिक विषयों से जैसे पदार्थ विज्ञान, प्राणिशास्त्र, वनस्पति शास्त्र, भूगोल शास्त्र, वायुशास्त्र, रसायन शास्त्र आदि से—तो है ही, पर इतिहास, अर्थशास्त्र, राज्य विज्ञान, साहित्य मानवविज्ञान, धर्म आदि जैसे मनुष्य जीवन सम्बन्धी शास्त्रों से भी है। पहिले वर्ग के यानी भौतिक शास्त्रों के आधार पर भूगोल यह बतलाता है कि किसी देश की आर्थिक या राजकीय नीति या घटना जैसी है वैसी वह क्यों बनी। साहित्य के अमुक भौगोलिक उल्लेख क्यों आये और उनका क्या मतलब है, धर्म में अमुक विश्वास या मत या आचार क्यों घुसे, मनुष्य के शरीर या मन की रचना और रहन-सहन मे अमुक बात क्यों देख पड़ती है, इन बातों का वह स्पष्टीकरण करता है। यानी भूगोल भौतिक और मानवी शास्त्रों की बिचली कड़ी है। एक का उपयोग कर दूसरे का अर्थ और कारण वह समझाता है। जो कोई मानवी शास्त्रों का अभ्यास करता है उसे आगे चलकर यह स्पष्ट हो जाता है कि भूगोल जाने बिना उन्हें भलीभांति समझ लेना कठिन है।

परन्तु इन सब से भी भूगोल का उपयोग इतिहास समझने में अधिक होता है। किसी भी देश और काल के इतिहास पर भूगोल का बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है। एक दृष्टि से इतिहास प्रकृति और मनुष्य की परस्पर क्रिया प्रतिक्रिया ही है। मनुष्य प्रकृति को अपने लिये उपयोग करना चाहता है पर वह बहुतांश में प्रकृति से बँधा भी है। इन्हीं घटनाओं का सिलसिला इतिहास का अधिकांश है। काल और भूगोल नामक दो पैरों पर ही इतिहास चलता है। इसलिये इतिहास की धारा को समझने के लिये भूगोल की पद पद पर आवश्यकता है। जो इतिहास को भूगोल की सहायता के बिना पढ़ना चाहता है वह उसे समझ ही नहीं सकता है। आर्य लोग वायव्य दिशा से क्यों आये? तदनंतर गंगस्थली की ओर क्यों बढ़े, बहुत वर्षों तक दक्षिण में उनका प्रवेश क्यों न हुआ या योरुपीय लोग भारतवर्ष के तट पर ही क्यों बसे? वे वहां क्यों कर बलवान हो सके? हिन्दुस्तान को अंग्रेजों ने क्रमशः कैसे जीता और इसमें वे क्यों सफल हो सके इत्यादि बातों को भूगोल के ही आधार पर हम समझ सकते हैं। इतिहास के करोड़ों भौगोलिक परिणामों में से ये केवल दो चार महत्वपूर्ण उदाहरण हैं। जो कोई इतिहास समझ के साथ पढ़ता है उसे ऐसा ही जान पड़ता है कि भूगोल ने सारे इतिहास की रचना की है। इसलिये भूगोल जाने बिना इतिहास का समझना कठिन है।

५—व्यापार और उद्योग धन्धों के लिये भूगोल का उपयोग—अब तक हमने सर्वसाधारण की दृष्टि से भूगोल के उपयोग बतलाये परन्तु विशिष्ट लोगों को भी इसके कुछ विशिष्ट उपयोग हैं। इनमें से व्यापार और उद्योग धन्धे के लिये जो उपयोग हैं वह अब बहुत ही महत्वपूर्ण हैं। जो कोई थोड़े बहुत भी विशालरूप में व्यापार या उद्योग धन्धा करना चाहता है उसे यह जानना पड़ता है कि अमुक वस्तु कहां कहां और कितनी कितनी पैदा होती है और वह कहां कहां खपती है, किस मार्ग से या किस प्रकार उसका लेन देन होता है! उसकी उत्पत्तिका परिमाण क्या है? उसकी खपत कहां होती है? सारांश किसी कच्चे या बने माल की उत्पत्ति के सम्बन्ध में सब आवश्यक ज्ञान प्राप्त कर लेना प्रत्येक व्यापारी या व्यवसायी के लिये आवश्यक है। अन्यथा, उसे हानि उठानी पड़ेगी। जिस समय आजकल की तरह आवागमन का साधन न था उस समय हम दूसरे देशों के सम्बन्ध में अनभिज्ञ रहकर अपना काम कुशलता पूर्वक कर सकते थे। पर आज तो व्यापार और उद्योग धन्धे की दृष्टि से सारा संसार इतना अभिन्न हो गया है, इतना एक होगया है कि हम दूसरे भागों के सम्बन्ध में अनभिज्ञ रह कर अपना काम कर नहीं सकते। हमारे भारतवर्ष के कृषिकार जर्मनी की कृत्रिम नील के सम्बन्ध में बहुत समय तक अनभिज्ञ रहे और उनकी नील की माँग न होने पर भी कुछ समय तक नील पैदा करते ही रहे। परिणाम यह हुआ कि उन्हें बहुत हानि उठानी पड़ी और कटु अनुभव के बाद ही उन्होंने अपनी कृषि बदली। यही हाल हमारे कपास का भी होगा।

हमारी पुरानी रफ्तार चली आती है, क्योंकि हम भारतवासी संसार के सम्बन्ध में अनभिज्ञ रहते हैं। परिणाम यह होता है कि कटु अनुभव आने पर ही हम अपनी रफ्तार बदलते हैं। परन्तु योरप, अमेरिका और आस्ट्रेलिया के लोग शिक्षित होने के कारण अपने व्यवसाय दुनिया की रफ्तार देख कर करते हैं इस लिये हानि नहीं उठाते। परन्तु खेद है कि हमारे शिक्षित भारतवासी भी भूगोल के इस उपयोग को नहीं समझते। जब हमें इस संसार में रहना है तो उससे अनभिज्ञ रहकर हम कुशलतापूर्वक अपना कोई भी काम नहीं कर सकते हैं, फिर व्यापार और उद्योग धन्धे करना क्योंकर सम्भव हो सकता है?

६—शासनकार्य के लिये भूगोल ज्ञान की आवश्यकता—उपर्युक्त प्रकार का ही भूगोल का दूसरा बड़ा भारी उपयोग शासन कार्य के लिये है। जो कोई शासनकार्य करता है उसे यह मालूम है कि अपने अधिकार क्षेत्र की स्थिति उसका दूसरे से सम्बन्ध उसकी भूरचना (ऊँचाई-निचाई यानी पर्वत, सम भूमि नदी, नाले आदि) स्वाभाविक और कृत्रिम उपज, आवागमन के साधन, उद्योग धन्धे और व्यापार लोगों के भेद, उनकी रहनसहन, रस्म रिवाज, नीति और धर्म आदि से परिचय पाये बिना शासन का काम ठीक नहीं हो सकता। जिसे यह ज्ञान पहिले से नहीं है उसे अपने कार्य के साथ अनुभव द्वारा यह ज्ञान प्राप्त करना ही होता है, उसकी इच्छा हो या न हो वह यह ज्ञान अनुभव के साथ पाता ही जाता है और वह पाने की आवश्यकता भी उसे जँचती जाती है। इस लिये यथा सम्भव पूछताछ कर या तद्विषयक पुस्तकें पढ़ कर यह ज्ञान वह प्राप्त करता ही है। किसी अधिकारी के अधिकार जितने अधिक होते हैं और उसे अपने अधिकार-क्षेत्र की भूमि और लोगों से जितना अधिक सम्बन्ध पड़ता है उतना ही अधिक उसे उपर्युक्त प्रकार का भौगोलिक ज्ञान प्राप्त करना पड़ता है। इसलिये कोई आश्चर्य नहीं कि अंग्रेज सरकार ने समस्त भारतवर्ष के भिन्न भिन्न प्रांतों के और भिन्न भिन्न जिलों के गजेटीयर अपने अधिकारियों के लिये बहुत श्रम से तैयार करवा कर बहुत खर्च कर के भी छपवाये हैं। उनमें जो कुछ वर्णन रहता है वह या तो ऐतिहासिक रहता है या भौगोलिक। दोनों प्रकार के वर्णन लोगों से परिचित होने के लिये नितान्त आवश्यक हैं। खेद है कि हम भारतवासियों ने इन विषयों का व्यवहारिक उपयोग अभी भी नहीं समझ पाया है। इस कारण हम अपने कार्य में भली भांति सफल भी नहीं होते। प्रत्येक अँग्रेज अधिकारी अपने अधिकारक्षेत्र की सर्व आवश्यक भौगोलिक और ऐतिहासिक बातों से परिचित रहता है और इसलिये वह अपना कार्य भलीभांति चला सकता है।

हम ऊपर कह ही चुके हैं कि जिसको जितने भाग का शासन करना पड़ता है उतने भाग से तथा उसके आस पास के भाग से उसे परिचित होना ही चाहिये। परन्तु किसी भी समस्त देश के शासक को सारे संसार से भली भाँति परिचित रहना ही चाहिये। क्योंकि राजकीय दृष्टि से एक देश का शेष देशों से सम्बन्ध पड़ता है। इसलिये समस्त देशों के भूगोल से सारे संसार के भूगोल से उसे परिचित रहना पड़ता है। किसी भी देश की आर्थिक नीति भीतरी और बाहरी भौगोलिक स्थिति पर अवलंबित रहती है। और देश की आर्थिक नीति का प्रश्न राजकीय है। यानी एक देश की दूसरे देशों के साथ जो कुछ नीति रहती है वह देश के तथा शेष संसार की भौगोलिक दृश्य पर अवलंबित है। संसार को भूल कर कोई भी देश अपनी अन्य देशों के साथ की नीति निर्धारित नहीं कर सकता। सारांश, आज की आर्थिक और राजकीय नीति घटना और जीवन सब के सब सारे संसार में परस्परावलंबी होगये हैं। इसलिये एक देश के शासकों को दूसरे देशों की भौगोलिक स्थिति और तदनुषंगी आर्थिक और राजकीय नीति, घटना और जीवन से परिचित हुए बिना काम नहीं चल सकता। हिन्दुस्तानी अपनी नींद में मग्न हैं, इसलिये उनकी गेहूँ की खेती और उसका व्यापार गिरता जा रहा है। संसार में क्या चला है इसे न जानने से आगे चल कर और भी हानि उठानी पड़ेगी। इसलिये हिन्दुस्तानियों को संसार का भूगोल भलीभांति पढ़ और समझ लेना चाहिये।

७—कुतूहल की पूर्ति—ये तो हुए सामान्य और विशिष्ट व्यवहारिक उपयोग। परन्तु एक उपयोग ऐसा है जो व्यवहारिक तो नहीं है तथापि मनुष्य उसका ख्याल अवश्य रखता है। मनुष्य को अपनी बुद्धि के कारण इस संसार को जान और समझ लेने की स्वाभाविक इच्छा होती है। मनुष्य के सब ही कार्य व्यवहार के उपयोग की दृष्टि से नहीं होते। इस विश्व के नक्षत्र मंडल से उसे कोई सम्बन्ध नहीं है। तथापि सदैव सब सभ्य संसार ने खगोलों के जानने का प्रयत्न अवश्य किया है। खगोलों के ज्ञान की अपेक्षा कई दर्जे अधिक भूगोल के ज्ञान से उसके कुतूहल की पूर्ति होती है। इसलिये वह

इस सृष्टि के चमत्कार और लोगों के सम्बन्ध में सदैव कुछ न कुछ जानने का प्रयत्न करता है। भूगोल विद्या के भूगोल का पठन पाठन उपयोगी ही है।

७—भूगोल के उपयोगों का वर्गीकरण और इस विषय के उद्देश्य :—हमने भूगोल के जो उपयोग बतलाये हैं उनको दो भागों में बांट सकते हैं। एक तो वे उपयोग हैं जिनका हमारे सामान्य जीवन से सम्बन्ध है। भौगोलिक वर्णन का इसी दृष्टि से विशेष उपयोग है। दूसरे भेदों में वे उपयोग आते हैं कि जिनका उच्च विद्या की प्राप्ति से सम्बन्ध है। इनसे हमारी दृष्टि विस्तृत होती जाती है और हम अन्य विषयों का उच्च ज्ञान प्राप्त करने के योग्य हो सकते हैं। भौगोलिक कार्य-कारण सम्बन्ध का विचार इसी दृष्टि से विशेष उपयोगी है। अथवा भूगोल के दो प्रधान उद्देश्य हो सकते हैं। एक तो भौगोलिक बातें बताकर इस पृथिवी की भूमि-समुद्र-वायु-लोक आदि का ज्ञान देना दूसरे इन सब का परस्पर क्या सम्बन्ध है और उनका मनुष्य पर सामान्य या किसी विशेष भूभाग में किसी विशेष परिस्थिति में क्या परिणाम होता है यह समझा देना। पहिला उद्देश्य वर्णन मूलक है और दूसरा विचार मूलक। यह स्पष्ट है कि प्रारम्भ में जीवन की आवश्यकता तथा बुद्धि और ज्ञान की अपरिपक्वता के कारण हमारा उद्देश्य बहुतांश में वर्णनात्मक ही रहेगा। धीरे धीरे ही वह विचारात्मक होता जायगा। इससे यह भी स्पष्ट है कि प्राथमिक शालाओं में भूगोल का पठन-पाठन वर्णन मूलक ही रहेगा। बच्चों की बुद्धि और ज्ञान की अपरिपक्वता के कारण कार्य-कारण सम्बन्ध का विचार कम ही हो सकेगा और प्रारम्भ में सर्व सामान्य जीवन के लिये कार्य-कारण सम्बन्ध की बहुत गहराई में जाने की आवश्यकता भी नहीं है। जो कार्य-कारण-सम्बन्ध बचपन में अनुभव से ज्ञात हो सकते हैं उन्हीं का हम पठन-पाठन में समावेश कर सकते हैं।

देहरादून

देहरा दून का ज़िला उत्तर में हिमालय से और दक्षिण में शिवालिक से घिरा है। गंगा नदी पूर्व में और यमुना नदी पश्चिम में प्राकृतिक सीमा बनाती हैं। देहरादून ज़िले का क्षेत्रफल ११९३ वर्गमील है। संयुक्त प्रान्त का यह सबसे अधिक उत्तरी ज़िला है और २९,७७ अक्षांश से ३१,०८ अक्षांश तक फैला हुआ है। यह ज़िला दो प्रधान भागों में बटा हुआ है। खास दून एक खुली घाटी है। पर यह घाटी चारों ओर शिवालिक से घिरी हुई है। दूसरे भाग में जौंसर बावर का परगना है जो हिमालय के पहाड़ी भाग में स्थित है।

दून का प्रदेश एक विषम चतुर्भुज है। इसकी लम्बी भुजाएं उत्तर-पश्चिम और दक्षिण-पूर्व की ओर हैं। शिवालिक का ढाल दून की ओर क्रमशः है पर मैदान की ओर उनका ढाल एक दम सपाट है। शिवालिक की रुकावट के कारण हिमालय की घिसी हुई मिट्टी और कंकड़-पत्थर का अधिकतर भाग दून में ही रुक जाता है। इससे दून की घाटीगंगा के मैदान की अपेक्षा कहीं अधिक ऊंची हो गई है। इस ऊंची घाटी को कई पहाड़ी धाराओं ने गहरा काट दिया है जिससे धरातल पर बहुत कम पानी मिलता है। घाटी के बीच का भाग अधिक ऊंचा है। पश्चिम में यमुना की ओर पूर्व में गंगा की ओर प्रति मील ३२ फुट की चाल से ढालू हो गया है। इसकी मिट्टी कुछ कुछ चिकनी है।

दून के प्रदेश में जंगल बहुत हैं। इस प्रदेश में कोई बहुत ऊंची चोटी नहीं है। पर इस प्रदेश की ऊंची नीची ज़मीन बड़ी सुन्दर मालूम होती है। जहाँ जंगल साफ़ कर लिया गया है। वहां ज़ीनेदार खेत हैं। प्राकृतिक सुन्दरता में काश्मीर को छोड़कर इस प्रदेश की बराबरी करने वाले बहुत कम भाग हैं।

इस ओर शिवालिक पर्वत जमुना से लेकर गंगा तक चला गया है। हिमालय से दक्षिण की ओर प्रायः बीस मील पर शिवालिक स्थित है। इसकी अधिक से अधिक ऊँचाई ३००० फुट है। यह असंख्य पहाड़ियों का समूह है। कुछ लोगों का अनुमान है कि इसीसे इसका नाम शिवालिक या सवा लाख पड़ा। यह पर्वत हिमालय से अधिक पुराना है इसके ढालों पर साल का वन है। केवल ऊंची चोटियों पर देवदार के छोटे छोटे पेड़ हैं। इसमें बलुआ पत्थर बहुत है। यह पत्थर इतना मुलायम है कि पानी बरसने पर इसका ऊपरी घुल जाता है।

उत्तर की ओर मसूरी की पहाड़ी है। जो वास्तव में हिमालय का दक्षिणी निचला ढाल है। लन्धौर की ऊँचाई ७,४५९ फुट है। लाल टिब्बा ८,५६५ फुट ऊंचा है।

गंगानदी तपोवन के पास दून प्रदेश में प्रवेश करती है। और दक्षिण-पश्चिम की ओर तेजी से बहती है। ऋषिकेश के पास इसमें चन्दन वा राव (धार) मिलती है। जो बरसात को छोड़कर और दिनों में सूखी रहती है। १० मील और नीचे की ओर रायपाला के पास सुसवा नदी गंगा में आ मिलती है।

यमुना नदी यमुनोत्री से निकल कर खट बोंदर के पास दून में प्रवेश करती है। यहीं रिकनार धारा गढ़ धारा इसमें मिलती है। ८ मील और नीचे खुटनू गढ़ नदी इसमें आ मिलती है। पहले कुछ मील तक यमुना नदी दक्षिण की ओर बहती है। फिर वह पश्चिम की ओर मुड़ती है। चकराता की सड़क से

दो मील नीचे टोंस नदी अपना पानी यमुना में गिराती है। रामपुर मंडी के पास आस नदी मिलती है फिर बादशाह महल के पास यमुना नदी देहरा दून के पहाड़ी भाग को छोड़कर सहारनपुर जिले में मैदान में पहुँचती है।

खनिज

शिवालिक में चूने का कार्बनेत सेलेनाइट

और चाइराइट बहुत है। मंसूरी पर्वत पर खड़िया का पत्थर तूफा और कई तरह के पत्थर हैं। कठ पाथर के पास (यमुना पहाड़ से गिरती है)। लोहे की खाने हैं जौंसर बावर सोंसा, सुरमा, और तांबा है। मकान बनाने का पत्थर कई जगह मिलता है।

वन

जौंसर बावर के बन चार भागों में बटे हैं:—

(१) उष्ण कटिबन्ध के बन में साल बहुत है। साल और कूकट ४०० फुट की ऊंचाई तक मिलता है।

(२) शीतोष्ण कटि बन्ध का वन ३०० फुट से ६५०० फुट ऊंचाई तक मिलता है। इसमें चीड़ बन और अयार बहुत है।

(३) देवदार का वन बहुत प्रसिद्ध है। और ६५०० फुट से ९००० फुट तक मिलता है। कहीं कहीं उसके बीच में केले, खरशू और अर्जुन
के पेड़ हैं।

(४) इसके आगे ९ फुट से ऊपर खरशू या छोटी घास का प्रदेश है।

ऊँचाई के कारण इस जिले में वर्षा अधिक होती है। औसत वर्षा ८० इंच है कहीं कहीं १०० इंच भी पानी बरस जाता है। पर अक्तूबर से आगे, आस्मान साफ रहता है। दिन को काफी गरमी रहती है पर ऊँचाई के कारण गर्मी शीघ्र ही निकल जाती है और रात को ठंड पड़ती है। सवेरे को सब कहीं ओस देखाई देती है। जनवरी में अक्सर बरफ पड़ती है और तापक्रम इतना नीचा हो जाता है कि पानी जम जाता है। मार्च अप्रैल में गरमी पड़ने लगती है। जून तक पहाड़ियों पर आनन्द रहता है। ऊंचाई के कारण बहुत कम गरमी पड़ती है।

जून से प्रबल वर्षा आरम्भ होती है। वर्षा ऋतु अक्तूर तक रहती है। सब स्थानों की वर्षा एक सी नहीं होती है। राजपुर में १०८ इंच मंसूरी में ८७ इंच, चकराता में ७३ इंच देहरादून में ७० इंच और जमुना के किनारे बालसी में ६२ इंच वर्षा होती है। हिम वर्षा के बाद इस प्रदेश का दृश्य बड़ा सुन्दर हो जाता है। ऊँची चोटियों पर ही बरफ ठहरती है। निचले भागों की बरफ शीघ्र ही पिघल जाती है। ऊँचे भागों में अप्रैल तक बरफ बनी रहती है।

कृषि

देहरादून की जमीन बहुत अच्छी नहीं है। रौंसिली मिट्टी अपने यहाँ के मटियार से मिलती जुलती है। अच्छी चिकनी मिट्टी वाली जमीन डोकर कहलाती है। संकरा जमीन अच्छी नहीं होती है। गाँव के पास वाली खाद दी हुई गोंडल जमीन बड़ी उपजाऊ होती है।

इस जिले में पानी तो काफी बरसता है। पर भावर की जमीन में यह पानी ऊपर नहीं रहने पाता है। छोटी छोटी नदियाँ यहाँ लुप्त हो जाती हैं और नीचे जाकर प्रगट होती हैं। कुओं की कमी है। कुओं में ७० या ८० गज की गहराई पर पानी मिलता है। इसलिये वर्षा की अधिकता होने पर भी फसलों के उगाने में सिंचाई की बड़ी जरूरत पड़ती है। यह सिंचाई न होने से होती है। नहरें हिमालय की बरफ का पिघला हुआ पानी लाने वाली नदियों से निकाली गई हैं। इसी से इन नहरों में पानी की कमी नहीं होती यहाँ छोटी छोटी नहरें बहुत हैं।

खेती की दो फसलें होती हैं। रबी की फसल में गेहूँ, जौ सरसों और मटर उगाई जाती है। खरीफ की फसल में चावल, मंडुआ, ज्वार, बाजरा, उर्द, मूंग और मोठ उगाई जाती। तोर (अरहर) यहाँ कातिक में काटी जाती है। खास खास जगहों में ईख, हल्दी, अदरख, आलू, पोस्त, कपास तम्बाकू, और मूली आदि तरकारी की खेती होती है।

नयी चीजों में चाय मुख्य है। रेशम तयार करने के लिये भी प्रयत्न किया गया है। रेशम के कीड़ों को खिलाने के लिये शहतत आदि की पत्तियां बहुत है।

गङ्गा के मैदान और पहाड़ों के बीच में देहरादून स्थिति व्यापार के लिये बड़ी अच्छी है। मैदान में यहाँ से लकड़ी बांस, चूना, कोयला, कत्था, बसुमती चावल, आलू, चाय, बाबर घास और मूज आती है। मैदान से देहरादून में बरतन, कपड़ा, कम्बल, नमक, शक्कर, अनाज, तम्बाकू, सूखे फल और भेड़ें भेजी जाती हैं। यही सब चीजें फिर देहरादून से पहाड़ पहुँचाई जाती हैं। पहाड़ी भागों से लोई कम्बल, चावल, अदरख, मिर्च, अखरोट, आलू, शहद, लाख, लकड़ी, और गोंद भेजा जाता है।

राजपुर से तीन चार मील और देहरादून से प्राय: ९ मील की दूरी पर सहस्र धारा है। यहां का पानी कई बीमारियों के लिये अच्छा है। इस पानी को बेचने का भी प्रयत्न किया गया था। पर इस में सफलता न हुई। व्यापार माल बाजारों और मेलों में बहुत बिकता है। सहसपुर, चूहरपुर, राजपुर, डोईवाला, भोगपुर में छोटे छोटे बाजार हैं। यहीं से गांव वाले अपनी जरूरत का सामान मोल ले जाते हैं। मसूरी और चकराता में गरमी के दिनों में बहुत कुछ लेनदेन होता है। देहरादून का बाजार सब से बड़ा है। देहरादून और ऋषिकेश में मेला भी लगता है जहां दूर दूर से यात्री आते हैं।

ऊंचा नीचा प्रदेश होने पर भी इस जिले में काफी सड़कें हैं। रुड़की-देहरादून-राजपुर और मसूरी की सड़क बहुत चलती है। मोहन घाट या दर्रे में हो कर यह सड़क सिवालिक को पार करती है। सहारनपुर-चकराता की सड़क भी बड़ी प्रसिद्ध है। इन सड़कों पर मोटर गाड़ियां भी खूब चलती है। एक सड़क देहरादून को हरिद्वार से मिलती है। पर रेल के हो जाने से सड़क का आना जाना कुछ कम हो गया है। पहले ऋषिकेश रोड से ऋषिकेश तक यात्री लोग अक्सर पैदल जाते अब वहां तक रेल की एक शाखा खुल गई है।

पहाड़ी सड़कों में मंसूरी-शिमला की सड़क सर्व प्रसिद्ध है। इस रास्ते से मोटर या गाड़ी नहीं जा सकते हैं। पैदल, या घोड़े या डांडी पर जाना होता है। पर इस मार्ग का दृश्य बड़ा मनोहर है। यमुना के ऊपर एक छोटा लोहे का झूलानुमा पुल बना है। नाव से पार करने के लिये यमुना में रामपुर मंडी का और गोहरी का घाट प्रसिद्ध है।

इतिहास

दून का प्रदेश प्राचीन केदारखंड में सम्मिलित था। स्कन्दपुराण के केदार खंड अध्याय में यमुन टोन्स, बालखिल्य (सुसवा), सिद्धकूट (नागसिद्ध), ऋषिकेश और तपोवन का विवरण है। लंकाविजय के बाद श्रीरामचन्द्र जी ने ऋषिकेश में और लक्ष्मण ने तपोवन में तपस्या की थी।

द्वापर युग में द्वारगाँव के पास देहरादून से १२ मील पूर्व में देवदारु पर्वत पर तप किया था। इसीसे पास की घाटी द्रोणाश्रम कहलाती है। कलियुग के आरम्भ में पांचों पाण्डव द्रौपदी और स्वामिभक्त श्वान के साथ इधर होकर केदार के आगे महापन्थ के हिम प्रदेश को गये थे। हरिद्वार के पास भीमगोडा स्थान भी पवित्र माना जाता है।

बालखिल्य या सुसवा नदी की उत्पत्ति बड़ी विचित्र बतलाई जाती है। एक बार इन्द्र ने उधर बालखिल्य ऋषि को गाय के खुर के समान पानी से भरे हुए गढ़े में क्रीड़ा करते देखा। वह उनके छोटे शरीर की हंसी करने लगा। तिसपर बालखिल्य ऋषियों ने दूसरे इन्द्र की रचना करने के लिये तप किया। तपस्या-मग्न ऋषियों के शरीर से इतना पसीना निकला कि बालखिल्य या शोभन नदी बन गई जिसे अब सुसवा कहते हैं।

यमुना के किनारे कलसी में अशोक के शिलालेख मिले हैं। सातवीं सदी में स्रुघ्न या सुघ नगर को प्रसिद्ध चीनी यात्री ह्वांनसांग ने देखा था। कहा जाता है कि हरिपुर के पास राजा रसाल, के भग्नावशेष हैं। इसके बाद दून प्रदेश कई सदी तक प्राय: निर्जन पड़ा रहा। अब लगभग ८ सौ वर्ष पहले बंजारे लोग यहां आ बसे। बस जाने पर यह प्रदेश गढ़वाल (श्रीनगर) के राजा को कर देने लगा। कुछ समय बाद इस ओर इब्राहीम इब्न मसूद गजनवी का हमला हुआ। पर इससे भी अधिक भयानक हमला तैमूर का था। १३९८ ई० में तैमूर ने हरिद्वार के पास राजा ब्रह्मदत्त (बहरूज) से लड़ाई की। वह राज गंगा और जमुना के बीच में था। बिजनौर जिले से गंगा को पार

करके मोहन दर्रे से तैमूर ने देहरादून में प्रवेश किया था। हार जाने पर तैमूर ने बड़ी निर्दयता से क़त्ल करवाया। उसकी लूट में बहुत सा धन भी मिला था। इसके बाद फिर कई सदियों तक इधर कोई विशेष घटना न हुई। शाहजहाँ के समय में फिर एक मुसलमानी सेना इधर आई। इस समय गढ़वाल में पृथीशाह का राज्य था। इस राजा के प्रपौत्र फ़तेहशाह ने एक ओर सहारनपुर पर और दूसरी ओर तिब्बत पर चढ़ाई की थी। इसी समय से सिक्ख लोग भी यहाँ आने लगे। उनके गुरु रामराय ने देहरादून में निवास किया। वास्तव में इसी समय से देहरादून की नींव पड़ी। गूजर और राजपूतों के आ जाने से धीरे धीरे दून की आबादी बढ़ने लगी। आबादी और खेती के बढ़ने से गढ़वाल राज्य की आमदनी भी बढ़ने लगी। पर १७५७ ई० में सहेला सरदार नजीबुद्दौला ने इधर हमला किया।

कुछ ही समय में दून का प्रदेश मुसलमानों के हाथ में चला गया। पर नजबख़ाँ ने इस प्रदेश को बढ़ाने में पूरी कोशिश की। आम के पेड़ लगवाने, नहर खुदवाने और खेती को सुधारने में उसने किसानों को बड़ी सहायता पहुँचाई। नजब ख़ाँ के मरने पर किसानों की दशा फिर गिर गई। देहरादून में सिक्खों का ज़ोर बढ़ गया। पर १७८५ ई० में ग़ुलाम कादिर ने फिर इधर हमला किया। इस बार बड़ी मारकाट हुई। रामराय के गुरुद्वारे में गाय काटी गई। गुलामकादिर ने लौटते समय उमेदसिंह को यहाँ का गवर्नर बनाया। उमेदसिंह ने बड़ी स्वामिभक्ति दिखलाई। पर १७८९ ई० में गुलाम कादिर के मरने पर उसने गढ़वाल के राजा प्रद्युम्नशाह से सन्धि कर ली। कुछ ही समय बाद यहाँ गुरखों का राज्य हुआ। गुरुखों की सख्ती से यहाँ की प्रजा खुश न थी। १७९० ई० में गुरुखों ने अल्मोड़ा जीत लिया और गढ़वाल पर धावा किया। पर गढ़वाल के राजा ने गुरुखों को २५,०० रुपया वार्षिक कर के देने शुरू कर दिये। १८०३ ई० में गढ़वालियों और गुरुखों में फिर लड़ाई छिड़ गई। गुरुखों की विजय हुई और उनका अधिकार पश्चिम की ओर बढ़ने लगा १० वर्ष बाद गुरुखों और अँग्रेज़ों में लड़ाई होने लगी।

चार स्थानों से अँग्रेज़ी फ़ौज नैपाल के लिये भेजी गई। एक अँग्रेज़ी फ़ौज ने मोहन और तिमली दर्रों में दून से प्रवेश किया। गुरखों की फ़ौज देहरादून से ३½ मील पूर्व की ओर कालिंगा क़िले पर एकत्रित थी। इस क़िले में कुछ गढ़वाली और तीन चार सौ गुरखा सिपाही थे। बलभद्र सिंह थप्पा इस सेना का सेनापति था। क़िले को लेने में अँग्रेज़ी फ़ौज कई बार विफल रही। उनके कई अफ़सर और बहुत से सिपाही मारे गये। पर गुरखों के क़िले में पानी न था, पानी बाहर कुछ दूर वाले एक चश्मे से आता था। ज्योंहीं अँग्रेज़ों को इस बात का पता लगा उन्होंने गुरखों का पानी बन्द कर दिया।

क़िले के भीतर केवल ७० मनुष्य बचे थे। शत्रु के बीच में से उन्हें लेकर बलभद्र सिंह एक पास की पहाड़ी पर बने हुए जैथक के क़िले में जा डटे। अन्त में वे जैथक में गुरखों की फ़ौज से मिल गये। वे अन्त तक लड़ते रहे। पर जब नैपाल सरकार और अँग्रेज़ी सरकार में सन्धि हो गई तो वे सिक्खों की सेना में नौकरी करने लगे। कहा जाता है कि अफ़ग़ानों और सिक्खों की जो लड़ाई हुई उसी में मारे गये। पहले पहल देहरादून सहारनपुर के ज़िले में मिलाया गया।

१८२७–२८ ई० में लन्धौर और मंसूरी नगर बसाये गये। कुछ समय के लिये यह ज़िला कमायूँ कमिश्नरी में शामिल रहा। फिर वह मेरठ में मिला दिया गया।

पाला

प्रायः ठंडो रात्रि में जब कि आकाश स्वच्छ रहता है, बहुत सी वस्तुयें अपने आस पास की वस्तुओं की अपेक्षा जल्दी ठंडी हो जाती हैं। इन्हीं ठंडी वस्तुओं पर नमी जमने लगती है जिसको हम ओस कहते हैं। यदि हवा में नमी बहुत कम रहती है तो नमी उस समय तक इन ठंडी वस्तुओं पर नहीं जमती, जब तक कि उनका तापक्रम ०° सेन्टीग्रेड से नीचे नहीं हो जाता; परन्तु इस दशा में जमी हुई वस्तु ठोस रूप धारण कर लेती है जिसको हम पाला कहते हैं।

पाला प्रायः उस रात्रि में अधिक पड़ता है, जिसमें आकाश बिल्कुल स्वच्छ रहता है और उस रात्रि में बहुत कम पड़ता है जिसमें आकाश बादलों से घिरा रहता है। इसका कारण यह है कि स्वच्छ रात्रि में वस्तुओं से गर्मी बराबर शीघ्रतापूर्वक निकलती रहती है और जब ०° सेन्टीग्रेड से नीचे तापक्रम पहुँच जाता है तो पाला पड़ जाता है। परन्तु जब आकाश बादलों से घिरा रहता है तो वे बादल नीचे की वस्तुओं के लिये कम्बल का काम करते हैं—वे वस्तुओं की गर्मी को बहुत धीरे धीरे निकलने देते हैं। इस भांति पदार्थों का तापक्रम ०° सेन्टीग्रेड के नीचे पहुँचने नहीं पाता कि सूर्य्य निकल आता है और पदार्थों का तापक्रम बढ़ने लगता है।

पेड़ों के नीचे की अपेक्षा खुले मैदानों में पाला अधिक पड़ता है जिसका कारण पहले कारण के समान है।

घाटियों में पहाड़ी ढलानों की अपेक्षा पाला अधिक पड़ता है। रात्रि में घाटी के पास के पहाड़ी की अपेक्षा पहले ठंडी हो जाती है और घाटी की हवा की अपेक्षा भारी हो जाती है इसलिये ढलान की ओर से घाटी में ठंडी हवा चलने लगती है और घाटी का तापक्रम स्वतः भी कम होता रहता है इसलिये जब घाटी का तापक्रम ०° सेन्टीग्रेड से नीचे पहुँच जाता है तो वहाँ पाला पड़ता है।

उस रात को जब कि हवा नहीं चलती, पाला अधिक पड़ता है और उस रात को जब कि रात भर हवा चलती रहती है, पाला बहुत कम पड़ता है। शान्तिमय रात्रि में स्थल की निकली हुई गर्मी में कोई बाधा नहीं पड़ती, इससे जब स्थल का तापक्रम ०° सेन्टीग्रेड से कम हो जाता है तो पाला पड़ने लगता है। हवा के झोंके जो रात को चलते हैं उनका तापक्रम भिन्न भिन्न होता है और यह कोई आवश्यक बात नहीं है कि जो झोंके पीछे चलते हैं वे पहले के झोंकों से ठंडे होते हैं। इस भाँति रात्रि में चलने वाले झोंके स्थल के तापक्रम को ०° सेन्टीग्रेड के ऊपर ही रखते हैं जिससे पाला नहीं पड़ने पाता।

पाला प्रायः शीत कटिबन्ध और समशीतोष्ण कटिबन्ध में और उष्ण कटिबन्ध के पहाड़ी, पठारी और कर्क और मकर रेखा के पास के रेगिस्तानों में पड़ता है।

पाला फ़सलों के लिये प्राणघातक वस्तु है, यह फ़स्लों का पक्का साथी है। जाड़े में यह कर्क और मकर रेखा के पास की फ़सलों पर आक्रमण करता है। गर्मी में जब ध्रुवों की ओर के देशों में अर्थात् शीतोष्ण कटिबन्धों में फसलें धानी वस्त्र पहने खड़ी रहती हैं तो यह जाकर निर्ममता से उनको प्राण-विहीन कर देता है। अपने आक्रमण क्षेत्र में इसने किस कृषक को नहीं रुलाया? पुरानी दुनिया के छोटे छोटे किसानों को इसने दाने दाने के लिये तरसाया! मनुष्यता से रहित किया!! लोगों को कुमार्ग पर चलाया और बहुतों को पशुभक्षी तो क्या मनुष्य बना दिया!!! नई दुनियाँ के लोगों का रोना कुछ कम

नहीं है। यदि किसी साल नई दुनिया में अन्न की उपज कम होती है और बाज़ार में अन्न अधिक आ जाता है तो नई दुनिया के लोग अपने बढ़े हुये अन्न को जला देते हैं। पाला सरदार से उन लोगों का अमानुषिक कार्य नहीं देखा जाता। वे दूसरे साल उनकी फ़सल पर ऐसा गहरा आक्रमण करते हैं कि उनको बाज़ार में रखने के लिये अन्न मिलता ही नहीं।

पाला गेहूँ, जौ, चना, मटर, राई, ओट, रुई और क़ड्वा इत्यादि उपयोगी फ़सलों को नष्ट कर देता है, इससे बचने के कुछ उपाय भी हैं। हम लोगों को यह भली भांति ज्ञान है कि गर्मी में लू उन्हीं लोगों को लगती है जो कमज़ोर होते हैं और बिना पानी पिये हुये गर्मी की दोपहरिया की धूप में यात्रा करते हैं। ठीक इसी भांति पाला उन्हीं फ़सलों पर अधिक असर करता है जो कमज़ोर होती हैं और सींची नहीं जातीं। यह देखा गया है कि पास पास के खेतों में जिस खेत में सिंचाई हुई रहती है उसमें पाला नहीं पड़ता और ग़ैर सींचे हुये खेत में पड़ता है। ग़ैर सींचे हुये खेत की गर्मी क्रमशः निकलती जाती है और जब तापक्रम ०° सेन्टीग्रेड से नीचे पहुँचता है, पाला पड़ जाता है। सिंचाई खेतों को दो भांति से पाला से बचाती है। पहले तो पानी खेत की मिट्टी को घोल देता है जिससे पौधे सरलता से अपनी खूराक चूस लेते हैं और ठंडक सहने के लिये बलिष्ठ हो जाते हैं। दूसरे सिंचाई पाला से बचाने के लिये फ़सल के हेतु वही काम करती है जो कम्बल आदमी को जाड़े से बचाने के लिये करता है। पानी में अपने अन्दर धीरे धीरे अधिक गर्मी ले लेने की शक्ति रहती है और धीरे ही धीरे यह अपनी गर्मी निकालता भी है। रात्रि में जब आकाश स्वच्छ रहता है और हवा शान्त रहती है तो ग़ैर सींचे हुये और सींचे हुये खेतों या अन्य पौधों और वस्तुओं से गर्मी निकलने लगती है। सींचे हुये खेतों को छोड़ औरों का तापक्रम रात के दूसरे पहर में ०° सेन्टीग्रेड से नीचे पहुँच जाता है इसलिये वे पाला से प्रभावित होते हैं। सींचे हुये खेतों की नम पृथ्वी में गर्मी की मात्रा बहुत अधिक रहती है। यह गर्मी बहुत धीरे धीरे निकलती है। नम पृथ्वी की गर्मी जब कम होती है तो फ़सल के ऊपर खेत में लाखों अंश तापक्रम का एक कम्बल छा जाता है। जब तापक्रम ०° और घटता है तो वही बात फिर होती है। चूंकि यह क्रिया बहुत धीरे धीरे होती है, इसलिये फ़सल के ऊपर का तापक्रम ०° सेन्टीग्रेड से ऊपर ही रह जाता है जिससे पाला पड़ ही नहीं सकता।

पाला से प्रभावित फ़सल को सींच देना लाभकारी है क्योंकि एक तो पानी मिट्टी को घोलकर पौधों को खूराक पहुँचाता है दूसरे और अधिक पाला पड़ने से रोकता है।

एक ही अक्षांश पर उन स्थानों पर पाला का प्रभाव कम पड़ता है। जहाँ की मिट्टी में बालू का मिश्रण कम हो, काली मिट्टी अधिक हो; भूमि नम हो और हवा में नमी अधिक हो; परन्तु उन स्थानों पर पाला का प्रभाव अधिक पड़ता है जहाँ की मिट्टी में बालू की मिश्रण अधिक हो, भूमि में नमी की कमी हो और हवा शुष्क हो। इसका कारण केवल यही है कि नम स्थानों की गर्मी बहुत जल्द निकल जाती है। उदाहरण के लिये आसाम, बङ्गाल, बिहार और पूर्वी संयुक्त प्रान्त नम स्थानों के लिये उपयुक्त और पश्चिमी संयुक्त प्रान्त, राजपूताना, पञ्जाब और सिंध शुष्क स्थानों के लिये उपयुक्त हैं।

चूंकि पहाड़ी ढलवानों की अपेक्षा घाटियों में अधिक पाला पड़ता है इसीलिये वे फ़सलें जो अधिक पाला नहीं सह सकतीं, ढलवानों पर बोई व लगाई जाती हैं। क़ड्वा इस भांति की फ़सल में मुख्य है। चूंकि ढलवानों पर घाटी-हवा और पहाड़ी हवा चला करती हैं और हवा का तापक्रम बढ़ाती घटाती रहती हैं जिसस वहाँ पाला का तापक्रम-बिन्दु पहुँचने ही नहीं पाता, इसलिये वहाँ पाला बहुत कम पड़ता है।

फ़सलों को पाला से बचाने के लिये अच्छे बीज और उपजाऊ भूमि बहुत ही आवश्यकीय हैं क्योंकि बलिष्ठ पौधों पर पाला का प्रभाव कम पड़ता है।

हमारे देश के किसान प्रायः निर्धन और अनपढ़ हैं इससे वे अमरीका और योरुप के किसानों की भाँति समाचार पत्रों के जलवायु सम्बन्धी भविष्य-वाणी से लाभ नहीं उठा सकते। अमरीका और योरुप के कृषक और माली लोग अपने बहुमूल्य पौधों को पाला से बचाने के लिये पाला पड़ने से दो दिन पहले ही से घास-फूस से ढँक देते हैं। यह घास-

फूस पौधों के लिये कम्बल का काम देता है— पौधों की गर्मी जल्दी नहीं निकलने पाती जिससे पौधों का तापक्रम ०° सेन्टीग्रेड से ऊपर ही बना रहता है।

अमरीका में जहाँ खेतों के पास जंगल हैं और लकड़ी सरलता से मिल जाती है, वहाँ किसान लोग खेत के पास आग जलाते हैं और फ़सलों के ऊपर धुआँ का बादल प्रस्तुत कर देते हैं। धुआँ का बादल फ़स्लों की गर्मी को निकलने से रोकता है जिससे फ़सलों का तापक्रम ०° सेन्टीग्रेड से ऊपर रह जाता है।

ऊँचे अक्षांशों के वह स्थान जो पहाड़ पर से उतरती हुई हवा के सामने होते हैं, प्रायः पाला से सुरक्षित रहते हैं। इसका कारण यह है कि जब हवा पहाड़ की चोटी पर पहुँचती है तो वह बहुत ठंडी हो जाती है। ठंडी होने से ७° हवा में नमी धारण करने की शक्ति क्षीण हो जाती है जिससे चोटी पर खूब वर्षा होती है और बरसने में चूँकि तापक्रम वर्षा जल से अलग हो जाता है, वही हवा जब दूसरी ओर बहने लगती है तो गर्म होकर बहती है। चूँकि हवा पृष्ठ-प्रदेश की ओर नीचे उतरती रहती है, इसलिये दबाव पाकर और अधिक गर्म हो जाती है जिससे उसकी शुष्कता और भी अधिक बढ़ जाती है। यह पहाड़ी हवा अपने पृष्ठ-प्रदेश को गर्म कर देती है। यह वहाँ के तापक्रम को २०° से ७०° फ़ारेनहाइट तक बढ़ा देती है। उदाहरणार्थ चिनुक हवा का प्रभाव प्रेरी प्रदेश पर ले लीजिये। प्रेरी प्रदेश ५०° उत्तरी अक्षांश के ऊपर नीचे है। इन्हीं अक्षांशों में पूर्व की ओर जाड़े में बर्फ़ जमी रहती है। परन्तु प्रेरी में जानवर मैदानों में चरते रहते हैं और गेहूँ, राई और ओट के खेत लहराते रहते हैं।

यों तो पाला फसलों को बोने से काटने के बीच में सदैव हानि पहुँचाता है परन्तु विशेष हानि यह उस समय पहुँचाता है जब कि पौधे कोमल रहते हैं और पौधों की बालें या फल कच्चे रहते हैं। पाला से फ़सल को अधिक हानि उसी साल होती है जब कि यह अपने नियमित समय से पहले पड़ जाता है। गतवर्ष सिंध में पाला बहुत पहले पड़ गया जिससे वहाँ की रुई की फ़सल चौपट हो गई।

भारत सरकार के सरकारी गज़ट में पाला का भारी स्थान है। जिस साल गहरा पाला पड़ जाता है, सरकार के आय-व्यय में भारी परिवर्तन हो जाता है और देशवासियों की क्रिया-शीलता में शिथिलता आ जाती है क्योंकि देश का मुख्य व्यवसाय कृषि है और दूसरे व्यवसाय भी इसी पर आधारित हैं।
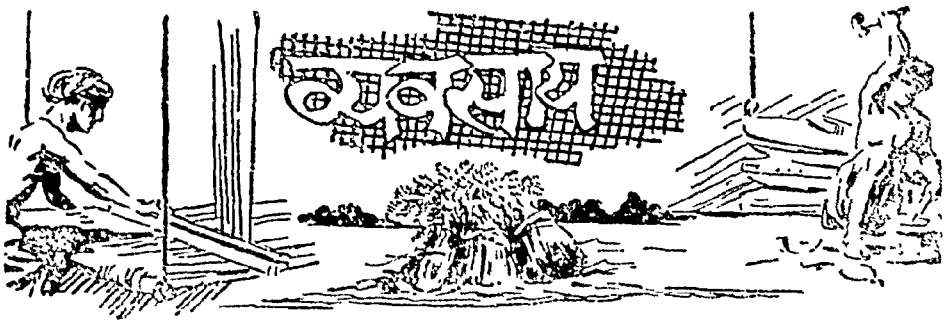
टिन प्लेट कम्पनी

मिट्टी के तेल का पीपा सब लोगों ने देखा होगा हमारे देश में लगभग ४ करोड़ पीपे हर साल नये बनते हैं। उनमें अधिकतर मिट्टी का तेल भरा जाता है। पहले वे वेल्स या संयुक्तराष्ट्र अमरीका से बनकर आते थे। १९२२ ई० से वे हमारे ही देश में बनने लगे हैं। उन के बनने के लिये गोलमुरी में एक सब से बड़ा कारखाना खोला गया है। गोलमुरी जमशेदपुर से तीन मील पूर्व की ओर है। कलकत्ते से लगभग उत्तर पश्चिम की ओर डेढ़ सौ मील दूर है। पहले यहां जङ्गल था। अब यह बड़ी तेज़ी के साथ बढ़ गया।

पीपे की चद्दर पतली होने पर भी बड़ी मजबूत होती है। वह फौलाद से बनी होती है। उसमें जंक न लगे इस लिये उस में पीछे से कलई कर दी जाती है। फौलाद की चद्दर आसानी से बराबर मिलती रहे इस लिये कम्पनी ने यह कारखाना ताता के सब से बड़े फौलादी कारखाने के पास खोला।

इस काम के लिये खास तौर की फौलादी चादरें बनती हैं। उन को मशीन के जरिये से आग की भट्टियों तक पहुँचाते हैं। जब फौलाद की छड़ें आग में लाल हो जाती हैं तब उनको बाहर निकाल कर लगभग तीन तीन सौ मन भारी रोलरों के बीच में दबाते हैं। यह काम बिजली के जोर से होता है। चादरें फैलकर दुगुनी हो जाती हैं। वे फिर कई बार गरम की जाती हैं और कई बार दबाई जाती हैं। इस तरह वे पहले से कई गुना बढ़ जाती हैं अन्त में वे लगभग ६० इञ्च लम्बी और ३० इञ्च चौड़ी नाप कर काट ली जाती हैं।

कलई करने के लिये उनको १८ घंटे तक ऐसी कोठरी में रखते हैं जिसका तापक्रम १७०० अंश फारेन हाइट होता है। फिर ठंडे रोलरों से दबा दबा कर उन को चार दिन तक ठंडा करते हैं।

अब उन्हें पीपा बनाने वाली मशीन के पास ले जाते हैं। अन्त में उनमें जस्त की जड़ाई और पालिश होती है। उम्मेद है आगे चल कर यह काम और भी अधिक बढ़ेगा। इस में कई हजार आदमी और लग सकेंगे। इस समय लगभग ३२०० आदमी काम करते हैं। इन को हफ्तेवार मजदूरी मिलती है।

सिकुड़ कर छोटी हो जाने वाली चिड़ियाँ

(ले०—एस० आर० श्रीवास्तव बी० एस० सी०)

न्यूज़ीलैण्ड के दक्षिण में स्टीवर्ड नाम का एक द्वीप है। गर्मियों की अँधेरी रात में ये चिड़ियां हजारों की तदाद में इस द्वीप के समुद्री किनारे पर अपने मोटे शरीर को छोटा करने में मशगूल रहती हैं। कई हफ़्तों तक इनके मां बाप ने इन्हें छोटी छोटी मछलियां निगला निगला कर इतना मोटा बना दिया है कि ये जमीन से ऊपर उठ नहीं सकतीं।

ये चिड़ियां बहुत लजीली होती हैं। जिस तरह यदि कोई मोटा आदमी कसरत करता हुआ देख लिया जाय तो वह शर्मा कर फ़ौरन जूते के फ़ीते बांधने या सर के बाल ठीक करने का बहाना करने लगता है इसी तरह यदि इन चिड़ियों को कोई सिकुड़ते देख ले तो फ़ौरन सिकुड़ना बन्द कर देती हैं। यही कारण है कि ये अंधेरी रात के सन्नाटे में ही सिकुड़ने का काम करती हैं। यदि उस समय ज़रा भी चाँद दिखाई दे जाय तो फ़ौरन अपने सूराखों की ओर भाग कर तुरन्त जमीन के अन्दर छिप जाती हैं। छोटी हो जाने के बाद ये समुद्र की लहरों के साथ खूब खेलती और परों को फड़फड़ाती हैं जिससे कि उनके पर मजबूत और उड़ने के काबिल हो जायं।

इन चिड़ियों में कुछ विचित्र आदतें होती हैं। एक चिड़िया बीस वर्ष बाद केवल एक ही अन्डा देती है। पैदाइश का क्रम इतना धीमा होने पर भी जब ये चिड़ियां प्रति वर्ष न्यूज़ीलैण्ड से साइबेरिया और वहां से फिर न्यूज़ीलैण्ड को वापस आती हैं तो जहां तक आँखें देख सकती हैं वहां तक सारा आसमान इन से ढक जाता है। रास्ते में सुस्ताने के लिये बिना कहीं रुके हुए लगभग ८००० माल का सफ़र तै कर के जब न्यूज़ीलैण्ड को वापस आती हैं तो करीब २००० टन छोटी मछलियां हज़म कर जाती हैं। हिसाब लगाने से पता लगता है कि अपने पहाड़ी रहने के स्थान के नीचे लहराते हुये ठंडे समुद्र में से ये चिड़ियां दस सप्ताह में लगभग १,६०,००० टन छोटी मछलियां पकड़ कर खा जाती हैं। हजारों की तदाद में होते हुए भी इन चिड़ियों का जोड़ा अपने अपने सूराखों को खूब पहिचानता है। सूराखों में पहुँच कर पहिले वे उनके भीतर का कूड़ा आदि निकाल साफ़ कर डालते हैं।

इन चिड़ियों की चरबी की महक इतनी तेज होती है कि जिस बर्तन में यह पकाई जाती हैं उसमें हफ़्तों तक महक रहती है। फिर भी लोग इसके मांस को बहुत पसन्द करते हैं और उनका गोश्त काफी ऊँचे दामों में बिकता है। इनके गोश्त का जायका भेड़ के गोश्त के जायके से बहुत कुछ मिलता जुलता है। इसी से इन चिड़ियों का नाम Hutton birds रक्खा गया है।

इन चिड़ियों के रहने के स्थान में सिर्फ समुद्र के रास्ते से ही पहुँचा जा सकता है। बड़ी बड़ी लहरें

हमेशा चट्टानी किनारों से टकराती रहती हैं इस लिये शिकारी लोग सिर्फ बोट का प्रयोग करते हैं। इन नावों के पीछे के हिस्से में एक बड़ा लंगर बांध दिया जाता है जिसके बोझ से नाव के आगे का हिस्सा उठा रहता है। फिर कई मल्लाहों को साथ लेकर वह लहर के ऊपर छोड़ दी जाती है। लहर के जोर से जब नाव किनारे के करीब आती है तो रस्सी फेंक कर नाव किनारे लगा ली जाती है। एक बार किनारे पर लगने पर फिर वह ऊपर खींच ली जाती है।

फिर चिड़ियों का पकड़ना बच्चों के खेल को तरह होता है। मल्लाह चिड़ियों को ज़मीन से खोद खोद कर निकालते हैं और उन के मुलायम सर में धीरे से उँगली मार कर उन्हें मार डालते हैं। इस प्रकार सिर्फ छोटी छोटी चिड़ियां ही पकड़ी जाती हैं और एक आदमी एक दिन में करीब पांच सौ चिड़ियां आसानी से पकड़ लेता है।

ताजी हालत में ही इन चिड़ियों को गरम पानी में डुबो कर उनके पर निकाल दिये जाते हैं और पेट चीर कर अन्दर की चीजें साफ कर दी जाती हैं।

सब से ज्यादा कठिन और खतरनाक काम इन चिड़ियों को जहाज पर भेजना है। शिकार से लदी सिर्फ बोट को जहाज तक ले जाना आसान काम नहीं है। सिर्फ एक ही तरीका काम में लाया जाता है। ऊपर किनारे पर से ये चिड़ियां नीचे लहरों पर डगमगाती हुई नावों पर फेंक दी जाती हैं। फेंकने का काम बड़ा खतरनाक होता है और इस काम के लिये खास मजबूत आदमी होते हैं। चट्टान से बंधी रस्सी द्वारा एक आदमी इन चिड़ियों से भरे थैलों को लेकर नीचे लटक जाता है और लहर के आने का इन्तजार करता है। ज्योंही लहर के उठाव के साथ साथ नाव उस आदमी के नीचे आती है वह उन थैलों को उस में फेंक देता है और वह नाव फौरन किनारे से दूर खींच ली जाती है। थोड़ी ही देर में आने वाली लहर किनारे से टकराती है और रस्सी पर लटके हुए आदमी को पानी व फ़ेन से बिलकुल ढक देती है और उस आदमी को सांस रोक कर लहर के उतार का इन्तजार करना पड़ता है। लहर के उतरते ही फिर चिड़ियों से भरे थैले को लेकर लहर के चढ़ाव का इन्तजार करता है। इस तरह से तीन या चार बार में कई सौ चिड़ियां जहाज तक पहुँचा दी जाती हैं।

यह काम इतना खतरनाक है फिर भी आज तक इस काम में किसी के मरने व घायल होने के बारे में नहीं सुना गया। मल्लाह लोग यह काम केवल मनोरंजन की तरह करते हैं। इनको इस काम के लिये बड़ी बड़ी तनख्वाहें मिलती हैं।

एक लैप (लैण्ड) की कहानी

लैप लैंड के जङ्गल में एक छोटी पहाड़ी पर लैप लैण्ड के बच्चे स्कीइंग (बरफ पर फिसलने) का अभ्यास कर रहे थे। एक दिन वहाँ के प्रसिद्ध राक्षस स्टालो ने उन बच्चों को पकड़ने के लिये जाल बिछाया। बच्चों के बाप ने यह जाल देख लिया। इस लिये उसने दुष्ट स्टालो को धोखा देने की सोची। उसने अपने कोल्टे और नमदे को पानी में भिगो कर पहन लिया। फिर उसने अपने बाप को स्टालो के फैलाये हुये जालों में फँसा लिया। ठंड से भीगा कोट जम गया। जब स्टालो जालों को देखने आया तो उसने इस लैप को जालों में बरफ से जकड़ा हुआ पाया। स्टालो उसे छुड़ा कर अपने झोपड़े में ले गया। स्टालो ने अपनी पत्नी से कहा आज बड़ा अच्छा दिन है। हम सब को आज पेट भर मनुष्य का मांस मिलेगा। दोनों बड़े प्रसन्न हुये। काटने के पहिले जमे हुये लैप को उन्होंने उस सूराख के ऊपर लटका दिया जिसमें होकर धुआँ निकलता था। धुएं की आँच से बरफ पिघलने लगी। इस बीच में स्टालो एक कटोरे पर नक़्क़ाशी करने चला गया। छोटे बच्चे ने देखा कि लैप अभी जिन्दा है। उसकी आँखें चल रही थीं। रूतगीस (स्त्री) ने कहा सब ठीक है थोड़ी देर में तुम्हारा बाप आ जायगा। लैप के कपड़े की बरफ़ पिघल गई। अब वह इधर उधर हिलडुल सकता था। ऊपर लटके हुये लैप ने देखा कि रूतगीस ने अपनी ढीली ऐनक एक तरफ रख दी। पहिले लैप ने स्टालो के लड़के को मार डाला। फिर उसने रूतगीस की ऐनक आग में डाल दी। अपने ऐनक को जलते देख कर रूतगीस लैप की ओर बढ़ी लेकिन लैप ने उसको मार डाला। फिर वह उसके लड़के की मांस पाकर खा गया। स्टालो इस बीच में नक़्क़ाशी करता ही रहा। नक़्क़ाशी करते करते उसकी कमर टेढ़ी पड़ गई। इसके बाद जब उसने दरवाज़ा खोल कर भीतर देखा तब लैप ने बड़ी हाँडी स्टालो के ऊपर डाल दी। स्टालो अन्धा हो गया। फिर दोनों में घमासान लड़ाई हुई। लेकिन लैप ने अन्धे स्टालो को सहज ही में मार डाला। फिर वह उसका सब सामान ले गया।
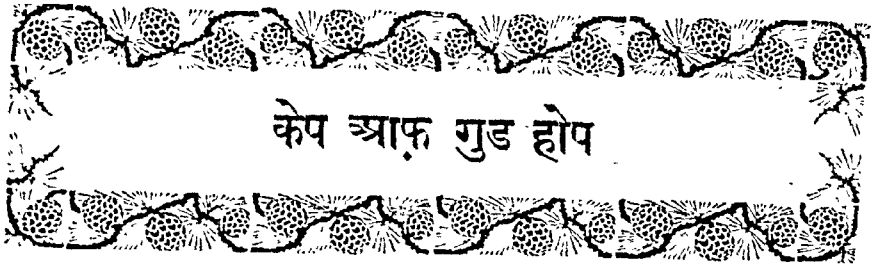
केप आफ़ गुड होप

दक्षिणी अफ्रीका के वेल्ड और Kopje

केप आफ गुड होप, जो अफ्रीका महाद्वीप का दक्षिणी सिरा है, इस समय योरुपीय मनुष्यों के वापस आने के कारण राजनैतिक प्रसार का एक साधन हो गया है। इसके मुख्य बन्दरगाह और राजधानी केपटाउन के डच और अंग्रेज़ी साम्राज्यों ने एक के बाद एक अपना प्रभाव और अपने मनुष्यों को उत्तर की ओर फैलाया। यह प्रसार उस समय तक जारी रहा जब तक इनके आधीन इतना बड़ा भूभाग न हो गया जिसकी रक्षा करने की हेतु उन्हें अधिक भूमि की लालसा त्याग देनी पड़ी।

बहुत समय तक उपरोक्त अधिकृत भूभाग की उत्तरी सीमा आरेंज नदी थी, परन्तु हीरा की बहुमूल्य खानों की प्रबल लालसा और खान खोदने वालों की रक्षा करने की आकांक्षा ने सरकार को बाध्य किया कि वह परिचम की ओर ग्रिक्वेलैंड प्रदेश को भी अपने राज्य में सम्मिलित कर ले। इस भाँति आरेंज नदी की प्राकृतिक सीमा भंग हो गई। इस नये प्रदेश के हाथ में आ जाने से अफ्रीका के विकट मध्यवर्ती प्रदेश में पहुँचने के लिये एक बढ़िया मार्ग मिल गया। पूर्व की ओर क्रूर आदमनिवासियों की घनी आबादी और ड्रेकेनबर्जेन पहाड़ी श्रेणियों के कारण प्रवासी निवासियों की आबादी का प्रसार नहीं हो रहा था। अतएव एक ऐसा समय आया जब केप-उपनिवेश का अव्यवस्थित प्रसार रुक गया। उस समय इसका क्षेत्रफल २,७७,१६६ वर्गमील था।

परन्तु यह बात कम मनोरंजन की नहीं है कि इस बड़े प्रदेश में सब कहीं जलवायु की आश्चर्यजनक समानता पाई जाती है। फिर भी उनमें कुछ विभिन्नता भी है। इस प्रदेश के दक्षिण में हिन्दमहासागर है जिसके कारण गर्मी* ऋतु में उत्तर पूर्व से आने वाली ट्रेड हवाओं द्वारा इस प्रदेश के उत्तरी पूर्वी भाग में गहरी वर्षा होती है। हिन्द महासागर का जल भी अपेक्षाकृत गर्म है और इसका प्रभाव इस प्रदेश के पूर्वी भाग की जलवायु पर बहुत पड़ता है। दक्षिणी एटलान्टिक महासागर का जल, जो इसके पश्चिम की ओर है, अतिशय ठंडा है और इसके द्वारा केप उपनिवेश में अपेक्षाकृत कम वर्षा होती है। इसके ऊपर से आने वाली हवायें अधिकतर जाड़े में उत्तर-पश्चिम की ओर से आती हैं, और इसी लिये प्रान्त के पश्चिमी और उत्तरी-पश्चिमी भाग इसी मानसून द्वारा लाई गई वर्षा पर निर्भर हैं। उत्तर-पूर्व से आने वाले मान-सून ड्रेकेनबर्जेन की श्रेणियों द्वारा रोक लिये जाते हैं। ड्रेकेनबर्जेन पहाड़ी की श्रेणियाँ एक प्लेटो के आकार में उत्तर से दक्षिण की ओर तट के समानान्तर चली गई हैं। ये श्रेणियाँ पर्वतों और घाटियों की एक चौड़ी और टूटी फूटी लम्बी कटिबंध बनाती हैं। पर्वत साधारणतः वृक्ष रहित, उजाड़ और ढालू होते हैं तथा घाटियाँ सदैव लबालब भरे रहने वाले झरनों द्वारा सिक्त होती हैं।

इन्हीं उपजाऊ पर्वती घाटियों में समुद्र के निकट डच तथा फ्रांसीसी ह्यूजॉनॉट प्रवासियों ने अपने खेत और मकान बनाये थे जिनके चिन्ह अब तक वहाँ विद्यमान हैं। उन भग्नावशेषों ने इस प्रदेश की प्राकृतिक सुन्दरता अर्थात् मनमुग्धकारी अंगूर के उद्यान तथा शाहबलूत के जङ्गलों से मिलकर यहां की छटा में चार चाँद लगा दिये हैं।

पर्वतीय श्रेणियाँ अपने प्राकृतिक सीढ़ियों के शकल में धीरे धीरे ऊँची होती चली गई हैं और अन्त में यह अपनी मध्यवर्ती सर्वोच्च श्रेणी से मिल गई। यह श्रेणी नेटाल की ड्रेकेन्सबर्ग श्रेणी का ही एक भाग है जिसकी सर्वोच्च चोटियाँ सौमर्बर्जेन में हैं। इन चोटियों की ऊँचाई ७,००० फीट से अधिक है। बीच वाली श्रेणी से प्रांत में बहने वाली अधिकांश नदियाँ निकलती हैं। अधिकतर

*यह बात याद रखनी चाहिए कि यहाँ गर्मी अक्टूबर से मार्च तक होती है। दक्षिणी अफ्रीका दक्षिणी गोलार्द्ध में है।

नदियाँ, ख़ास कर वे जो पश्चिम की ओर बहती हैं। साल के अधिकांश महीनों में सूखी पड़ी रहती हैं। परन्तु वर्षा के बाद भयानक वेगवती धारायें हो जाती हैं। जब कोई यात्री इन पर्वतीय श्रेणियों को पार करके अन्दर जाता है तो उसे भीतरी प्रदेश का दृश्य एकदम विभिन्न दृष्टिगोचर होता है। इस प्रदेश का भीतरी भाग एक पठार है जिसे 'कारू' कहते हैं। इसकी ऊँचाई २,००० फुट से लेकर ४,००० फुट तक है और भूमि सब कहीं 'कारूबुश' नामी कटीली झाड़ियों से ढकी हुई है। साल के अधिकांश महीनों में इस पौधे को छोड़कर पृथ्वी पर और कोई वनस्पति नहीं उगती। भूमि नंगी, कड़ी और उजाड़ पड़ी रहती है। भूमि का रङ्ग हलका लाल होता है। इस प्रदेश की भूमि कटी फटी है और कहीं कहीं पर उसमें चोटियाँ भी हैं जिसे कोप्स और कोज्पेस कहते हैं। धरातल बड़ी बड़ी सैन्ड-स्टोन की चट्टानों द्वारा और भी अधिक कट फट गया है। यह चट्टानें सारे प्रदेश में अव्यवस्थित रूप में वितरित हैं और इन पर किसी प्रकार की भी हरियाली नहीं होती जिससे इस प्रदेश को श्रृंगार रहित और भयानक 'सौन्दर्य' प्राप्त होता है।

जैसा ऊपर कहा जा चुका है, केप-प्रदेश में जलवायु की विचित्र समानता है; औसत तापक्रम ६३० फा० हा० है। भीतरी प्रदेश के पठार में जलवायु शीतल और स्फूर्तिदायी है। दक्षिणी तट की ओर जलवायु अधिक नम है, परन्तु अधिकतर लोगों के पसन्द के अनकूल है।

यहां की वनस्पति जलवायु से मिलती जुलती है। उत्तर और पश्चिम की ओर जहां पर वर्षा साधारण होती है। पौधों में ऐसी प्राकृतिक शक्ति होती है कि वे सूखा और धूप दोनों सह सकते हैं। दक्षिण पूर्व में वनस्पति अधिक घनी है और पेड़ पौधे दोनों कुछ कुछ योरुपीय वनस्पति से मिलते जुलते हैं। इतने पर भी केप-प्रदेश की वनस्पति अपने रूप, रङ्ग और जाति में अद्वितीय हैं।

अन्तरीप के चारों ओर दलदली प्रदेश ऐरम लिली नामक सुनहली आभा युक्त श्वेत पुष्पों से ढका हुआ है। इसके अतिरिक्त केप के हीथ और प्रांटीज़* की आश्चर्य-जनक विभिन्नता और सौन्दर्य ने इस देश को शिकार खेलने के लिये बहुत ही आकर्षक बना दिया।

इस प्रांत में प्राकृतिक जङ्गलों की न्यूनता है। उत्तर-पश्चिम के कई भाग केवल अकेशिया की कटीली झाड़ियों से आच्छादित हैं। लेकिन सीडरबर्ग का स्थानीय सीडर का पेड़ प्रायः लुप्तप्राय हो गया है। अधि कपूर्व की ओर निस्ना (Knysna) जङ्गल में दक्षिण अफ्रीका की लकड़ी अधिक मात्रा में प्राप्त होती है। इस जङ्गल की पीली लकड़ी और स्टिंकवुड नामी लकड़ी अब भी फ़रनीचर बनाने के काम में आती है। परन्तु सरकार और प्रवासियों की कृपा से इस प्रदेश में योरुपीय और आस्ट्रेलिया की लकड़ियों के पेड़ भी लगाये जाते हैं। और दक्षिणी अफ्रीका के किन्हीं किन्हीं जङ्गलों में उपरोक्त महाद्वीप के 'ब्लूगम' के ऊँचे पेड़ भी दिखलाई पड़ते हैं। दक्षिण अफ्रीका के विशेष पशु केप प्रांत से प्रायः लुप्त हो चुके हैं; परन्तु तब भी 'स्प्रिङ्गबोक' नामी पशु काफ़ी मात्रा में पाया जाता है। ये पशु अधिकतर उन प्रदेशों में पाये जाते हैं। जहाँ उनकी रक्षा हो सकती है। जैसे किंबरली के पास 'डी बियर्स' कम्पनी के चरागाहों में। यहाँ के एक प्रकार के तीतरों की बहुतायत है और उनका खूब शिकार किया जाता है। प्रायः सब बड़ी बड़ी नदियों में ट्राउट मछलियों की भरमार है।

दक्षिणी अफ्रीका में कृषि की वृद्धि यहाँ की जलवायु तथा भूमि की आवश्यकतानुसार हुई। जल के अभाव के कारण यहाँ पर सिंचाई नालियों द्वारा पानी ले जाने से अधिक आवश्यक है। दक्षिणी अफ्रीका का किसान केवल इसीलिये परिश्रम करता है कि या तो स्वयं वह दिशा के अनकूल हो जाय अथवा वहाँ की दिशा को अपने अनकूल बनाले। उसने यहाँ दूसरे देशों की भांति खेती करना और जानवरों को पालना आरम्भ किया। आस्ट्रेलिया से ये लोग ऐसे वृक्ष ले आये जो सूखा सह सकते थे; भारतवर्ष से यह लोग सिंचाई के इंजीनियर ले आए जिनकी सहायता से बाढ़ के पानी को एकत्रित किया गया। इन लोगों ने ऐरीज़ोना की सूखी खेती करने के ढंग का अनुकरण किया।

यहाँ की भूमि की प्रकृति बहुत कुछ यहाँ के उन चट्टानों के समान है जिनसे यह बनी हुई है। भूगर्भ विद्या की सहायता से जब हम इस प्रदेश का निरीक्षण करते हैं तो बहुत सी बातें इनके सम्बन्ध की अनिश्चित सी रह जाती हैं। इसका कारण एक तो समय का व्यवधान और फ़ौसिल्स की अप्राप्ति है। किम्बरली के हीरे की खान जिसके अन्तर्गत नीले हीरों से संयुक्त मिट्टी के पाइप बहुत दूर तक गहराई में चले गये हैं, भूगर्भ विद्या द्वारा किये गये निरीक्षण का फल है।

---

* विशेष प्रकार की घासें।

ख़ान खोदने का काम यहाँ पर सम्वत् १६२८ वि० से होता आ रहा है और इसके कारण यहाँ के कर में लगातार कई वर्षों तक वृद्धि होती रही है। हीरे और नमाक़ालैंड में ताँबे की खानों के अतिरिक्त केप-प्रान्त के अन्य खनिज कोई विशेष महत्व नहीं रखते; किन्तु विशेषज्ञों का विश्वास है कि कारू में अब भी कोयला की खान पाई जाती है।

यद्यपि यहाँ के प्रारम्भिक प्रवासियों को यहाँ के असली पशु जङ्गली प्रतीत होते थे किन्तु इसके अतिरिक्त वे बहुत उपयोगी इसलिये प्रतीत होते थे कि उनमें अकाल और रोग से बचने के विशेष गुण विद्यमान थे। इन लोगों ने यहाँ के जानवरों का सम्बन्ध योरुप के अच्छी नस्ल के जानवरों से करवाया जिससे एक वर्णसंकर पशु उत्पन्न हुआ जिसमें दोनों के गुण विद्यमान थे। इनके रोगों की परीक्षा की गई और इससे ज्ञात हुआ कि यहाँ के पशु किलनी के रोगों से ग्रसित थे।

यहाँ की असली भेड़ें ऐसी थीं जिनकी टाँगें अपेक्षाकृत लम्बी थी, परन्तु उनके बदन पर ऊन के स्थान पर बाल थे। यहां पर ईस्ट इंडिया कम्पनी ने डच और मेरिनो भेड़ों का प्रचार किया और फलस्वरूप ऊन इकट्ठा करना इस समय यहां का मुख्य व्यवसाय है। अङ्गोरा बकरियां यहां पर टर्की से लायी गईं जिनकी समृद्धि अफ़्रीका के चरागाहों में खूब होती है।

इस प्रदेश में जौ और जई की खेती होती है, किन्तु दक्षिण अफ़्रीका की मुख्य उपज मकई और ज्वार है। यहां की जलवायु तथा भूमि इसके लिये अतीव अनुकूल है।

दक्षिण की पर्वतीय घाटियाँ और नदी के तटवर्ती चरागाहों, अंगूर के बागीचों, नारङ्गी की झाड़ियों और फल के कुञ्जों से आच्छादित हैं। केप-प्रदेश की शराबों में से कुछ शराबें अद्वितीय हैं। यहां बेर, अंगूर, आड़ू, शफ़तालू, नाशपाती, नेकटरीन, अंजीर, खरबूजे, और बेर दुनियां के कोने कोने में बहुत प्रसिद्ध हैं। केप-प्रदेश के फल उत्तरी गोलार्द्ध में जाड़े के दिनों में बहुत बिकते हैं।

इस बात में सन्देह है कि केप-प्रदेश कभी भी एक व्यवसायिक बन सकेगा। यहां पर कोयले की भी कमी नहीं है, परन्तु आबादी के केन्द्र भी एक दूसरे से अलग हैं और उनकी जन-संख्या दूरी की अपेक्षा कम है इसलिये वह प्रदेश तैयार वस्तुओं के आयात पर निर्भर है जो उसे उसके हीरा, ऊन, मोहेर की खालों और शुतुर्मुर्ग़ के परों के बदले में मिलता है।

दक्षिण अफ़्रीका के आवागमन के साधन की सबसे बड़ी समस्या दूरी और भूमि का ढाल है। जब ग्रीकालैंड वेस्ट में हीरा की खानों का पता लगा था तब केपटाउन से वहाँ जाने वाली रेल को ६५० मील की दूरी पार करनी थी और ४,००० फ़ीट की ऊँचाई चढ़नी थी, इसके अतिरिक्त उसको ऊबड़ खाबड़ पहाड़ी दर्रों को तथा चौड़े, निर्जन कारू प्रदेश को पार करके एक ऐसे केन्द्र तक पहुँचाना था जहां से उसे कुछ यात्री मिल सकते थे जिनसे रेल को कुछ आमदनी हो। जब रैन्ड में सोने की खानों का पता लगा था तब केप-प्रदेश के तीन बन्दरगाहों केपटाउन, पोर्ट, एलिज़बेथ और ईस्ट लन्दन में ट्रान्सवाल के व्यापार के लिये प्रतियोगिता हुई थी। इस प्रकार केप-उपनिवेश की रेलों के बनाने में केन्द्र की अपेक्षा दूरी का अधिक महत्व दिया जाता है।

उपरोक्त बातें केप-प्रदेश की साधारण विशेषताओं को प्रगट करती हैं। अब यदि हम इसके सामाजिक जीवन की ओर ध्यान दें तब हमें ज्ञात होगा कि यहां नगर एक दूसरे से व्यवसाय और दूरी द्वारा अलग हैं। केपटाउन, पोर्ट एलिज़बेथ और ईस्ट लन्दन भीतरी प्रदेश के व्यापार के लिये एक दूसरे के प्रतिद्वन्दी हैं। किम्बरली इन सब बन्दरगाहों से दूर बसा हुआ खान खोदने वालों का डेरा सा लगता है और उनसे प्रवृत्ति और व्यवसाय की दृष्टि से बिलकुल उलटा है। पार्ल, इस्टेलेनबाश, ग्रेहेम्स टाउन, उइटेनहेज़ और किंग विलियम्स टाउन छोटे छोटे क़स्बे हैं और अपने चारों ओर की उपज के लिये इन क़स्बों में बाज़ार लगते हैं। इसके अतिरिक्त ये सामाजिक, धार्मिक तथा शिक्षण केन्द्र भी हैं। परन्तु नगर और गाँव दोनों ही में जनता खुली हवा में रहती है।

सूर्य

वार्षिक गरमी के निकल जाने के कारण सूर्य का व्यास २५० फुट कम हो रहा है। अनुमान लगाया गया है कि ५० लाख वर्षों में सूर्य का व्यास आधा रह जायगा। एक करोड़ वर्ष के बाद सूर्य इतना ठंडा हो जायगा कि पृथ्वी पर किसी प्रकार का जीवन न रह सकेगा।

धरातल का तापक्रम १५ हज़ार अंश फारेन हाइट है। पर भीतरी तापक्रम १० लाख अंश फारेन हाइट है।

अगर २ फुट व्यास वाली गेंद को एक मटर से ४३० फुट की दूरी पर एक ही धरातल में रक्खें तो सूर्य और पृथ्वी का ठीक ठीक अनुमान लग सकेगा।

अगर पृथ्वी और सूर्य के बीच में २¼ वर्गमील का पुल ९ करोड़ ३० लाख मील तक बन सके और अगर सूर्य से निकलने वाली समस्त गरमी इस हिम-स्तम्भ पर डाली जा सके तो वह सब का सब स्तम्भ १ सेकंड में गल जायगा। ७ या ८ सेकंड में भाप में एक रूप धारण कर लेगा।

अतिशून्यांश (Aboolute zero)—४५९ अंश फारेनहाइट पर होता है।

प्रति सेकंड १,८६,४०० मील के वेग से प्रकाश चलता है।

१८० ताप अंश पानी के उबलने के विन्दु २१२ अंश पर कर देते हैं पर ९६४·६२ ताप-अंश बढ़ाने से पानी भाप में बदल जाता है। तापक्रम २१२ अंश से अधिक नहीं होता है इसलिये भाप (ताप) का शेष परिमाण गुप्त ताप कहलाता है।

उबलने के विन्दु का तापक्रम वायु-भार पर निर्भर होता है। समुद्र-तल पर उबलने का विन्दु २१२ अंश पर होता है। दो वायु-मंडलों के दबाव से उबलने का विन्दु २५० अंश फारेन हाइट हो जाता है।

प्रति ५५५ फुट की ऊँचाई पर उबलने का विन्दु एक अंश फारेन हाइट कम हो जाता है।

सूर्य का व्यास ८,६५,००० मील है। इस प्रकार समस्त पृथ्वी, चन्द्रमा और मध्यवर्ती स्थान को घेर लेने के बाद भी २ लाख मील और आगे फैलेगा। जो गरमी सूर्य से निकलती है उसका केवल १/२,२०,००,००,००० भाग पृथ्वी पर प्राप्त होता है। पर यह गरमी भी इतनी है कि ३७,००,००,००,००० टन जमते हुए पानी को एक मिनट में उबाल सकती है।

उत्तरी ध्रुव के भीतर अनुपातिक तापक्रम—४०° फा० हा० से ऊँचा होते होते ग्रीष्म में ३५° फा० हा० हो जाता है।

प्रत्येक ६० फुट की गहराई पर तापक्रम १° फा० हा० बढ़ जाता है। ९५०० फुट की गहराई पर पानी उबलता मिलेगा। ३० मील की गहराई पर सब चट्टानें पिघली दशा में मिलेंगी। बर्लिन के पास ३४५० फुट की गहराई पर तापक्रम ११६° फा० हा० था।

कटिबन्ध	साधारण तापक्रम
केला और छुहारा	७८—८२ अंश
अंजीर और वृक्ष बेलि	७३—७८ ,,
मेंहदी और लारेल	६८—७३ ,,
सदा बहार पेड़	६०—६८ ,,
पतझड़ के पेड़	४८—६० ,,
कोणधारी पेड़	४०—४८ ,,
लिचेन और छोटी झाड़ियाँ	३२—४० ,,
माम (सिवार) और लिचेन	३२ और इससे नीचे

आर्क्टिक प्रदेश में स्लेज द्वारा एक मील दूर बोझा भेजने से प्रति टन पर ६० रुपया व्यय होते हैं।

हवाई जहाज द्वारा भी बोझा भेजने से प्रति मील

चीनी भाषा के कुछ भौगोलिक शब्द

सेचुआन (चार धारा वाला प्रदेश) चार नदियाँ वास्तव में इस प्रान्त को पार करके यांगटिसी में गिरती हैं। इस प्रान्त में इन्हीं नदियों की घाटियाँ सबसे अधिक उपजाऊ हैं। मीन, चुंगक्यांग (मध्यवर्ती नदी), फूक्यांग और क्यालिंग हैं।

ता-सिंग = महा पवित्र वंश

शिह च्वेन = पहाड़ी सोते

सिआओ हो = छोटी नदी

चुंग-या-चांग = मध्यवर्ती मैदान की मंडी।

पाट् से = विस्तार।

हुपे (प्रान्त) = झील के उत्तर इसी प्रकार हुनान (प्रान्त) का शब्दार्थ झील के दक्षिण है। यह झील टुंगटिंग (हु) है।

सिंग (नदी) = शुद्ध नदी।

शिहमेन = शिला द्वार।

जे अथवा तान (प्रपात) अनाज्य नदी।

ह्वांगशान = पीला पहाड़।

सुंग लो = देवदार-श्रेणी।

शंघाई (समुद्र पर्यन्त) यद्यपि इस समय शंघाई शहर १४ मील वूसुंग नदी के ऊपर है और समुद्र से तो यह ५८ मील दूर है, फिर भी गरमी में कभी कभी शंघाई का पानी खारी रहता है।

चीक्यांग = चक्र नदी (इसी से प्रशान्त तट के एक प्रान्त के चीनी लोगों में एक कहावत है कि स्वर्ग तो ऊपर है पर हांगचाओ और सूचाओ नीचे ही हैं"। हांगचाओ नगर ताई-मू-शान (स्वर्ग का नेत्र) पर्वत की तलहटी में।

सी-हू = पश्चिमी झील (एक कृत्रिम झील) पहले शहर के बीच में थी।

एमाय = क्येमाय से बिगड़ कर बना है। इसका अर्थ स्वर्ण-द्वार है।

यूनान शब्द का अर्थ है 'बादलों' के दक्षिण।

बादलों का तात्पर्य है सेचुआन प्रान्त से, जहाँ सदा बादल रहते हैं।

सीक्यांग = पश्चिमी नदी।

क्वेलिन = कसावा कुञ्ज।

हुँगशुई = लाल जल

मिआओट्सी = म्लेच्छ।

मीलिंग पास = बेरी दर्रा।

चू-यै = मुक्ता-तट या मोती का किनारा। मोती मिलने के कारण हैनान द्वीप का उत्तरी भाग इसी नाम से पुकारा जाता है।

टाने-र: = लटकते हुए कान—दक्षिणी भाग का नाम इसलिये पड़ा कि यहाँ के सरदार के कान बड़े बड़े थे।

तुंग-सांग-सेंग पूर्वी तीन प्रान्त (मंचूरिया के)।

लिआओतुंग = लिआओ के पूर्व।

चांग-पाई-शान = लम्बा सफेद पहाड़।

हेहो = काली नदी।

Published by the Editor (Pt. Ram Narain Misra, B. A.) and Printed by K. P. Misra at the Bhugol Press; 243, Jamuna Road, Allahabad.

भूगोल

भूगोल विषयक हिन्दी का एकमात्र सचित्र मासिक पत्र

वार्षिक मूल्य ३)
विदेश में ५)
एक प्रति का ।=)

नवम्बर १९३७

सम्पादक—रामनारायण मिश्र बी० ए०

ANNUAL SUBSCRIPTION
Indian: Rs. 3/-
Foreign: Rs. 5/-
Single Copy: As. 5.

भूगोल-कार्यालय प्रयाग

देशी राज्य

"भूगोल" के सोलहवें वर्ष का विशेषांक

"भूगोल" के आकार के २४४ पृष्ठ, कई नक़शे और लगभग १०० चित्र

देशी राज्य में भारतवर्ष के प्रधान राज्यों का विस्तृत वर्णन है। भारतवर्ष के छोटे बड़े सभी देशी राज्यों का समावेश है। अन्त के लगभग ५० पृष्ठों में देशी राज्यों की अकारादि क्रमानुसार अनुक्रमणिका है। इस अनुक्रमणिका में सभी राज्यों का संक्षिप्त परिचय है। सभी बड़े राजाओं के चित्र और प्रधान राज्यों के नक़शे हैं।

देशी राज्य हिन्दी साहित्य में सचमुच अनोखा है। मूल्य केवल २) रु०। ३) रु० भेज कर इस वर्ष के ग्राहक बनने वालों को यह विशाल और अद्वितीय अंक उनके चन्दे ही में मिलेगा।

यह अंक परिमित संख्या में ही छपा है। अतः ग्राहकों को मूल्य भेजने में शीघ्रता करनी चाहिये।

मैनेजर, भूगोल-कार्यालय,
इलाहाबाद।

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१—यूक्रेन	१
२—ग्वालियर	३
३—अफ्रीका की हीरे की खान	६
४—रूस का पुनरुत्थान	८
५—दक्षिणी भारत में सिंचाई का प्रबन्ध—(ले० रामाधीन अग्निहोत्री, बी० ए०) ...	११
६—आस्ट्रेलिया का प्लेटीपस	१५
७—परदेश की सैर—(ले० श्रीयुत श्यामाचरण)	१६
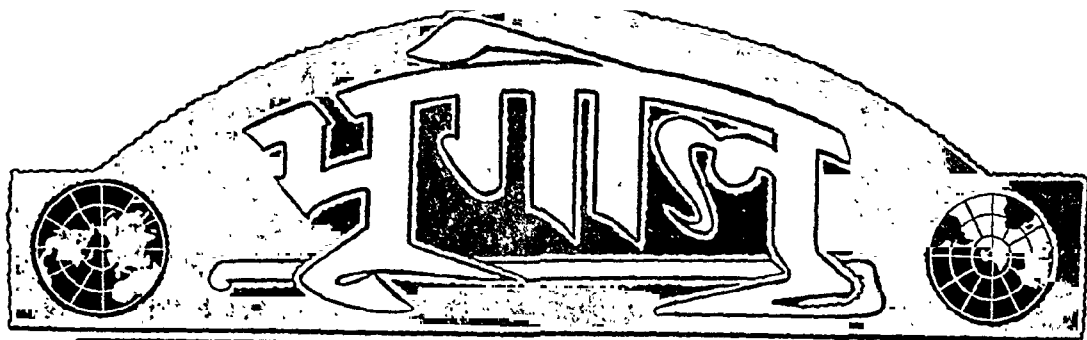
यह पत्र संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, बरार, बिहार, उड़ीसा, पंजाब प्रान्त तथा ग्वालियर, जैपुर, जोधपुर और कोटा राज्य के शिक्षा-विभाग द्वारा हाई, नार्मल और मिडिल स्कूलों में प्रयोग होने के लिये स्वीकृत है।

वर्ष १६] कार्त्तिक सं० १९९६, नवम्बर १९३९ [अङ्क ७

यूक्रेन

वर्तमान यूक्रेन चार देशों में बंटा है। इस का कुछ भाग रूस में, कुछ पोलैण्ड में और कुछ हंगरी और रूमानिया देश में सम्मिलित है। यूक्रेन जाति की जन-संख्या ४ करोड़ है। जिस भाग में यह जाति बसी हुई है वह भाग योरुप भर में बड़ा धनी और उपजाऊ है। यूक्रेन जाति अपना एक स्वतंत्र राष्ट्र बनाना चाहती है। इस बात का काफ़ी प्रचार भी किया जा रहा है कि सभी यूक्रेन लोगों की भाषा एक है। सभी एक जाति के हैं। इस लिए उन सब का स्वतंत्र राष्ट्र बना दिया जावे।

इस बात का यूक्रेन जाति दावा करती है कि नवीं और बारहवीं शताब्दी के बीच उन का एक बड़ा स्वतंत्र राज्य था। यह राज्य पूर्वी योरुप में बड़े महत्व का था। सच्ची बात तो यह है कि यह राज्य ही रूस राज्य था। इस का केन्द्र कीव था। कुछ समय के पश्चात् सुजडल नगर राजधानी बनाया गया और उस के बाद मास्को राजधानी बना।

उस समय वर्तमान यूक्रेन का नाम लघु रूस (Russia minor) था। वर्तमान रूस (बड़ा रूस) की पहचान करने के लिये छोटे रूस का नाम यूक्रेन रक्खा गया। इस प्रकार यहां के निवासी यूक्रेन जाति के नाम से विख्यात हुए।

जार का बड़ा साम्राज्य यूक्रेन और बड़े रूस के निवासियों ने मिल कर बनाया था। जार के साम्राज्य में यूक्रेन जाति के लोग बड़े बड़े पदों पर थे और कला-कौशल, विज्ञान, भाषा और कारीगरी आदि में निपुण थे। अब यह रूस के अधिकार में आ गया है। यूक्रेन प्रान्त के कारखाने उस समय योरुप के बड़े और धनी कारखानों में गिने जाते थे।

यूक्रेन निवासी रूस निवासियों से कुछ बातों में भिन्न हैं। यही बात है जिसके कारण यूक्रेन के कुछ निवासी अपने को रूस से अलग करने का दावा करते हैं।

अब तक यह ख्याल किया जाता था कि यूक्रेन भाषा रूसी भाषा की ही एक शाखा है। किन्तु १९०६ ई० में रूस की एकाडेमी ने एक मत होकर यह पास किया कि यूक्रेन भाषा एक पृथक भाषा है।

लगभग ४,५६,००० यूक्रेन लोग रूमानिया में रहते हैं और ५,००,००० लोग हंगरी के अधिकार में हैं। इन लोगों के ऊपर तरह तरह के जुल्म हो रहे हैं। इस त्रास युक्त शासन का अंत होना आवश्यक है। फिर भी फ्रांस के पत्रकारों का कहना है कि यूक्रेन स्वतंत्रतावादी केवल कुछ गिने चुने व्यक्ति हैं जिन की कोई संगठित संस्था नहीं है।

पूर्वी गैलीशिया के पोलिश यूक्रेन जाति की जन-संख्या ६०,००,००० है। इन लोगों के ऊपर मध्य योरुप का बड़ा भारी प्रभाव पड़ा है। उन में राष्ट्रीय जाग्रति आ गई है। राष्ट्रीय जाग्रति आने के कारण ही मास्को के कुछ यूक्रेनियों पर साम्यवादियों के अत्याचार हुए। और वे वहां से भाग आए हैं।

गैलीशिया के निवासी अपने को रूसी या पोल नहीं समझते। वे अपने को यूक्रेन कहते हैं। वे यूक्रेन भाषा बोलते हैं और लिखने पढ़ने में भी उसी भाषा का प्रयोग करते हैं। उनकी अपनी अलग संस्थाएं हैं। यह संस्थाएं पोल जमींदारों के अत्याचार को घृणा की दृष्टि से देखती हैं। इस प्रकार गैलीशियन निवासी एक समर्थ जाति बन गये हैं। यही लोग अपना एक बड़ा राष्ट्र-निर्माण करना चाहते हैं।

यहां के निवासी प्रान्तीय स्वतंत्रता को अधिक पसन्द करते हैं। वे रूस से अलग होना नहीं चाहते और न रूसी लोगों से घृणा ही करते हैं। वे उन्हें अपने कट्टर प्राचीन भाई समझते हैं। उन लोगों को घृणा केवल साम्यवादी से है।

रूसी यूक्रेन में रूस का राज्य २० साल से है। यहाँ की जन-संख्या लगभग ३०,०००,००० है। रूस का शासन इस काल में यूक्रेन लोगों के विरुद्ध नहीं हुआ। यहाँ के स्कूलों कचेहरियों, समाचार पत्रों, नोटिसों आदि में यूक्रेन भाषा ही का प्रयोग होता है। यहाँ के निवासी बोल चाल, लिखने पढ़ने में अपनी भाषा का ही प्रयोग कर सकते हैं। उनको किसी प्रकार की रोक नहीं है। उन को केवल मास्को की आज्ञानुसार ही करना पड़ता है।

रूसी विधानानुसार यहाँ भी खेती इकट्ठा होती है। जिससे यहाँ के किसानों को काल के गाल में पड़ना पड़ा है। इन लोगों को बेबश होकर अपने निवास स्थान छोड़ने पड़े हैं। इनको मास्को से गहरा प्रेम तो नहीं है। किन्तु लैनिन आदि के सिद्धान्तों को यह मानते हैं।

रूसी यूक्रेन में ९,५०.००.००० कुइनटल्स (लगभग ९ करोड़ मन) गेहूँ (योरुप की उपज का १८ प्रतिशत), राई, जौ, मक्का, जई की उपज लगभग १ करोड़ मन, और चुकन्दर की उपज १ करोड़ ५० लाख टन की होती है। यहां की खानों से ७ करोड़ ५० लाख टन कोयला क्रोओई रोग की खान से, ८० लाख टन कच्चा लोहा और निकोपोल की खानों से १० लाख टन मैगनीज सालाना निकाली जाती है। गैलीशिया में भी अनाज की बड़ी उपज होती है और मिट्टी का तेल निकलता है। कार्पेथियन यूक्रेन में जलाने की लकड़ी बड़ी मात्रा में पाई जाती है।

सितम्बर १९३९ में हिटलर ने पोलैण्ड पर आक्रमण किया। रूस ने भी बाद में पूर्व की ओर से लाल फौजें पोलैण्ड के अन्दर भेजी और दोनों ने मिलकर पोलैण्ड राष्ट्र को ले लिया है। और आपस में बाँट लिया है। जिससे यूक्रेन का पूर्वी तथा दक्षिणी भाग रूस को मिला और कुछ दक्षिणी तथा पश्चिमी भाग जर्मनी को मिला है।

ग्वालियर का क़िला

ताज-उल-मसीर ने सैकड़ों वर्ष हुए इस किले की प्रशंसा में लिखा था, "यह भारत के समस्त दुर्गों के हार में मोती की तरह शोभित है, भूमि की हलकी वायु वहां तक पहुँच नहीं पाती, आकाश के द्रुतगामी बादल इस पर अपनी छाया नहीं डाल सकते।" यद्यपि यह एक अतिशयोक्ति है पर इसमें सन्देह नहीं कि भारत के किलों में ग्वालियर का मानसिंह-गढ़ अपना विशेष स्थान रखता है। यह भारत के उन्नत शिल्पकला एवम् निर्माण-कौशल के अत्यन्त उत्कृष्ट उदाहरणों में से एक है। कहा जाता है कि ईसा से २०६ वर्ष बाद इस किले की स्थापना हुई थी। उस समय ग्वालियर नगर से २० मील दूर सूरजसेन नामक राजा राज्य करते थे। सूरजसेन कुष्ट रोग से ग्रसित थे। शिकार में एक दिन वह इस किले के पास पहुँचा, उस समय वह बहुत प्यासा था। वहां उसकी भेंट एक साधु से हुई जिसका नाम ग्वालिया था। ग्वालिया ने महाराज को एक कुण्ड बताया, जिसका जल पीते ही राजा का सब कुष्ट जाता रहा। उसी साधु के प्रति कृतज्ञता प्रगट करने के लिये महाराज सूरजसेन ने यह किला बनवाया और उसी साधु की स्मृति में इसका नाम ग्वालियर रक्खा।

काश वे बोल सकते तो ग्वालियर के किले का पत्थर पत्थर ऐसी दर्द भरी कहानी सुनाता कि कलेजा सौ टुकड़े हो जाता। उत्थान और पतन के झोंके इनके सामने आए और चले गए लेकिन ये पत्थर ज्यों के त्यों उसकी गवाही देने के लिये खड़े हैं। ग्वालियर जाइये तो वहां पहुँचने के पहले ही दूर से इस किले पर नजर पड़ती है, कैसा भी आदमी क्यों न हो एक बार तो उसकी नजर पकड़ ही जाती है, कोई भी भावुक हृदय उसे देखकर अतीत की स्मृति में हिलोर लेने से बच नहीं सकता।

सूरजसेन के ८३ वंशज इसी किले में बैठकर अपने राज्य की पताका फहरा गए। सन् १०२६ में महमूद गजनवी ने इस किले को जीत लिया था पर कलिंजर के राजा ने शीघ्र ही फिर इसपर कब्जा कर लिया। सन् ११९६ में कुतुबुद्दीन एहबक ने इसपर अपना अधिकार कर लिया। समय समय पर यहां रक्तपात तथा घोर अशान्ति रही और यह किला अनेकों आक्रमणों का निशाना बना रहा। इसका मूल कारण इसकी सुन्दर स्थिति है। यह किला समतल भूमि से लगभग ३०० फिट की ऊँचाई पर स्थित है, विस्तार में लगभग १ मील लम्बा तथा २८०० फीट चौड़ा है। इसके अन्दर तालाब, कुण्ड और खेत हैं जो कि काफी दिनों तक फौज को अन्दर ही जीवित रख सकने के लिये पर्याप्त हैं।

अल्तमश के हाथ में आकर ११ महीने तक यह किला बर्बरता का केन्द्र बना रहा जब कि उसने ७०० कैदियों को अपने दरवाजे पर ही कत्ल करवाया।

इसके बाद मानसिंह ने जो कि टोंवर राजपूत थे इस किले को समृद्धि को बढ़ाने में बहुत भाग लिया। उन्हीं दिनों ग्वालियर ने अपने सुनहरे दिन देखे। मानसिंह ने अपनी रानी मृगनयनी के लिये एक गुजरी महल भी बनवाया, जिसकी कारीगरी आज भी देखने योग्य है। उसी महल में मृगनयनी ने संगीत शाला भी खोली जो कुछ ही समय में सारे भारतवर्ष में विख्यात हो गई। उसी संगीत-शाला से तानसेन जैसे व्यक्ति निकले जिन्होंने अपने साथ ग्वालियर और ग्वालियर के साथ अपनी स्मृति को अमर बना दिया है। किन्तु अभी इस किले के भाग्य-चक्र का आवागमन पूर्ण नहीं हुआ था। शीघ्र ही मुसलमानों ने बाबर की संरक्षता में इसपर फिर हमला किया और बाबर के हुक्म से किले की चट्टानों पर बनी हुई विशाल जैनमूर्तियां तोड़ी जाने लगीं। सौभाग्य से उसकी आज्ञा का पालन अधिक देर तक किया जा सका। आज भी वे मूर्तियां मुगलों की पशुता की गवाही देने के लिये अपनी भग्न दशा में उपस्थित हैं। १६वीं शताब्दी में यह किला अकबर के हाथ में आया और १८वीं शताब्दी तक यवनों के हाथ में रहा जब कि मरहठों ने आकर उसे छीन लिया। सन् १७६१ मे महादाजी सिंधिया ने इस किले पर चढ़ाई की और भीषण युद्ध के बाद इसे जीत लिया, १७८० तक यह किला सिंधिया के कब्जे में रहा। इसी बीच में गोहद का राजा हार खाकर फौरन तत्कालीन गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्ज़ से जा मिला। पुनः मेजर पॉफ़ेम की अध्यक्षता में अंग्रेजी फौज ग्वालियर आ पहुँची। गोहद की फौज वहां पहले से मौजूद थी। गोहद राज्य में चोरों की एक टोली थी, जो किले में चोरी किया करती थी। मेजर पॉफ़ेम ने इन्हीं चोरों के गुप्त रास्ते से पहले किला खूब घूमा फिर अगस्त की तीसरी तारीख को उन्होंने उसी रास्ते से किले में प्रवेश करके धावा बोल दिया। गोली बरसने लगी। अकस्मात् हमले से किले की

फौज में भगदड़ मच गई। अन्ततः अँग्रेजों ने किला जीत ही लिया। फिर किला गोहद के राणा को दे दिया गया। लेकिन सिन्धिया चुप बैठने वाला आदमी न था और उसने १७८२ में किला जीत लिया। २२ वर्ष तक सिंधिया का उसपर अधिकार रहा पर १८०४ में अँग्रेजों ने पुनः उसे जीत लिया और १८४४ तक अपने कब्जे में रक्खा।

महाराजपुर की लड़ाई के बाद सिन्धिया और अँग्रेजों में जो सन्धि हुई उसके अनुसार यह फैसला हुआ कि इस किले में अँग्रेजी फौज ही रक्खी जाय, तदनुसार १८५३ तक किला अँग्रेजी फौजों की छावनी रही। सन् १८५३ में जयाजीराव ग्वालियर के शासक हुए और अँग्रेजों ने यह किला महाराज के सुपुर्द कर दिया। १८५७ के गदर में यह किला तांतिया टोपी और झांसी की प्रसिद्ध रानी लक्ष्मीबाई के कब्जे में चला गया। अँग्रेजों ने गदर के बाद फिर इसे कब्जे में कर लिया और १८८५ तक अपनी फौज उसमें रक्खी। १८८६ में सिन्धिया ने झांसी शहर अँग्रेजों को दे दिया और उसके बदले में यह किला ले लिया। तब से ही इस किले की छीन झपट का अन्त हुआ और अब तक वह ग्वालियर महाराज के आधीन है।

किले के भीतर पैर रखते ही इतिहास की झांकी आँखों के सामने झूल जाती है। पहाड़ की चटानों पर कलापूर्ण जैन मूर्तियों को देखकर कल्पना हैरान हो जाती है। ग्वालियर के लिये ही नहीं वरन् समस्त भारत के लिये यह एक गौरवपूर्ण देन है। इधर गत वर्षों में इस किले में बड़ी उन्नति की गई है जिसका श्रेय महाराज माधवराव जी को है। जिन्हें आधुनिक ग्वालियर का सृष्टिकर्ता कहा जाय तो अनुचित न होगा। वास्तव में महादाजी सिंधिया के पश्चात् और कोई ऐसा व्यक्ति हमें ध्यान में नहीं आता जिसकी ग्वालियर के हृदय पर इतनी अमिट छाया हो। किसी ने ठीक कहा है कि आधुनिक ग्वालियर और महाराज माधवराव—इन दोनों नामों में इतना सामञ्जस्य है कि वे एक दूसरे के पर्यायवाची बन गये हैं। महाराज माधवराव किसानों को "अन्नदाता" कह कर सम्बोधित किया करते थे। ग्वालियर नाम के साथ साथ महाराज माधवराव का नाम ऐसा ही चलेगा जैसे अयोध्या के साथ श्री रामचन्द्र जी का।

सिन्धिया राज्य-वंश

नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित, महामहोपाध्याय रायबहादुर श्री गौरीशंकर हीराचन्द ओझा की खोज रिपोर्ट में यह बात स्पष्ट कर दी गई है कि ग्वालियर का राज्यवंश नागवंशियों की सिंद-शाखा से निकला है। कुछ विद्वानों का कथन था कि सिन्धिया वंशवाले कुनबी हैं और कुछ लोग इन्हें शूद्र भी निर्धारित करते थे किन्तु ओझा की खोज रिपोर्ट से अब यह स्पष्ट हो गया है कि वे शुद्ध क्षत्रिय वंशी (नागवंशी) हैं, यह बात सिंद-शाखा वालों के शिलालेखों से भी स्पष्ट है। सिंधिया रक्त का प्रारम्भ दत्ताजी से होता है जैसा कि निम्नाङ्कित रेखाचित्र से स्पष्ट हो जायगा :—
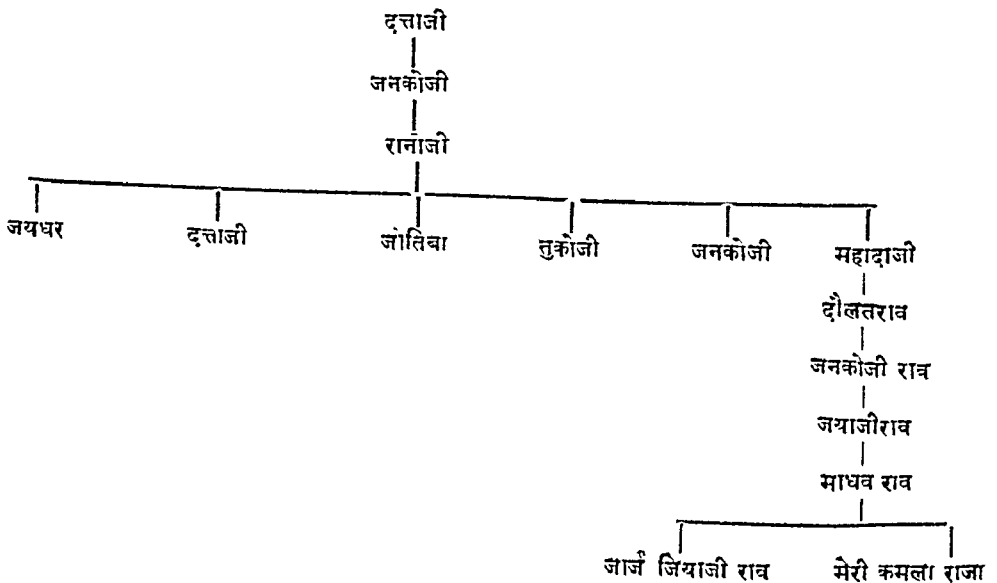
महाराजको निम्न उपाधियां प्राप्त हैं :—

हिज़ हाइनेस, मुख्तार-उल-मुल्क, अज़ीमुल-इक्तिदार, रफीउश्शान, वाला-शिकोह, मोहत्तमरामीदौरा, उमेद-तउल-उमरा, महाराजाधिराज, हिसायस-सल्तनत, आलीजाह बहादुर, मन्सरे जमां, फिदवई-हज़रते-मालिके मुअज्जमीरफीउद-दर्जाये इङ्गलिस्तान ।

पिछली २ नवम्बर १९३६ को जीवाजीराव सिंधिया ने राज्य का शासन भार अपने ऊपर ग्रहण किया था । इसके पूर्व तथा महाराज माधवरावजी के दिवंगत होने के बाद से राज्य का समस्त संचालन कौन्सिल आफ रीजेन्सी के हाथ में रहा, जिसके मेम्बरों की संख्या ११ थी ।

प्रेसीडेन्ट—हर हाइनेस सीनियर महारानी चिनइराजा सिंधिया ।

मेम्बर-सरदार अप्पाजीराव शीतोले, साहिबजादा सुलतान अहमदखान, रावबहादुर रावजी जनार्दनभिड़े, रायबहादुर गनपत राय, ले० क० कैलाश नारायण हक्सर, अब्दुल करीमखान, सरदार राजवाड़े श्रीमन्त सदाशिव राव खासे साहब पवार रायसाहब लच्मण भास्कर मुले कैप्टेन बापूराव पवार

२७ सितम्बर १९२५ को चार बजे शाम ग्वालियर में ब्रिटिश सरकार के रेसीडेन्ट मि० क्रम्प ने महाराज जीवाजीराव शिंदे को सिंहासनासीन करते हुए कहा :—"आप की नाबालिगी में रियासत का शासन कौन्सल करेगी, जोमहाराज के समय में हो थी । इस कौंसिल की सदर श्रीमती महारानी को महाराज की अनुपस्थिति में शासन चलाने का पर्याप्त अनुभव है ।

तत्पश्चात् ११ साल बाद वह अवसर भी आया जब महाराज बालिग हुए और राज्य की बागडोर उन्होंने स्वयं अपने ही हाथों में ले ली है ।
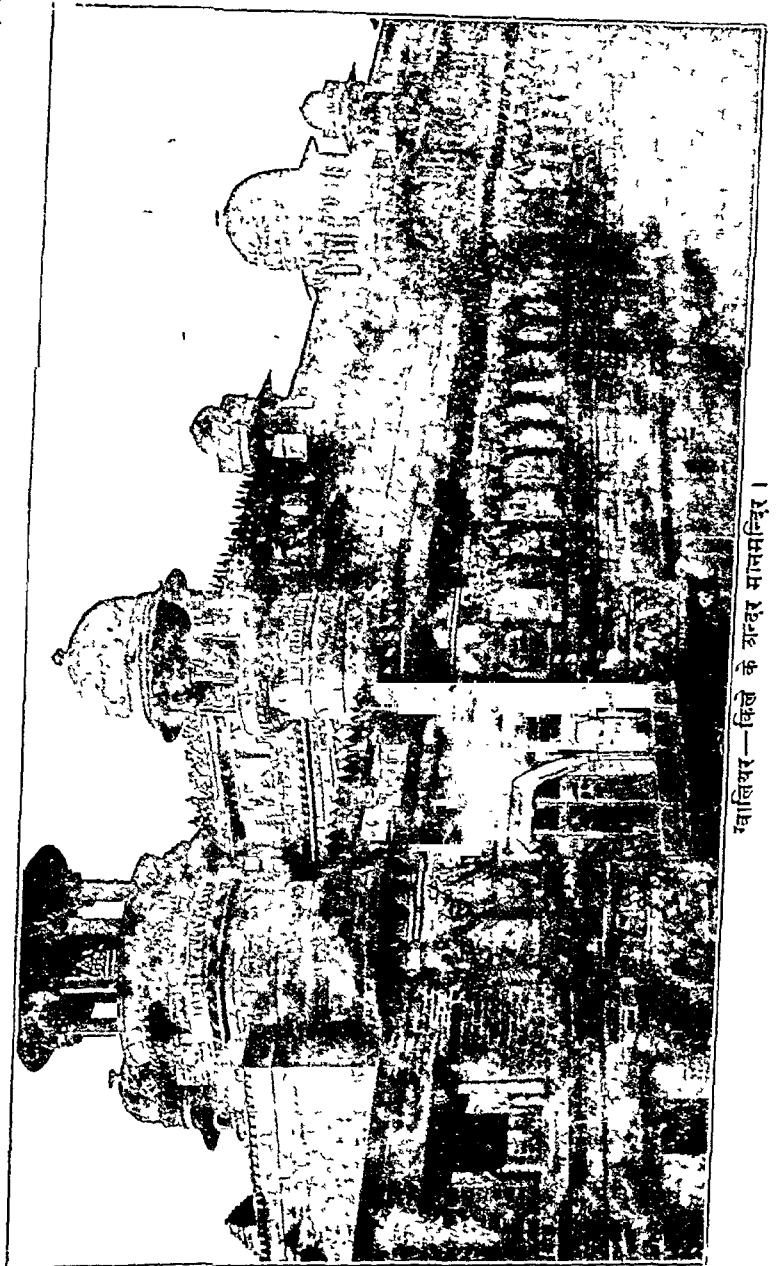
ग्वालियर—किले के अन्दर मानमन्दिर ।

* "During your minority State will be administered by the Council, which was already in existence in H. M.'S time under the presidency of Her Highness the Senior Maharani, who had in the past considerable experience of conducting state affairs during H.M'S.absence.."
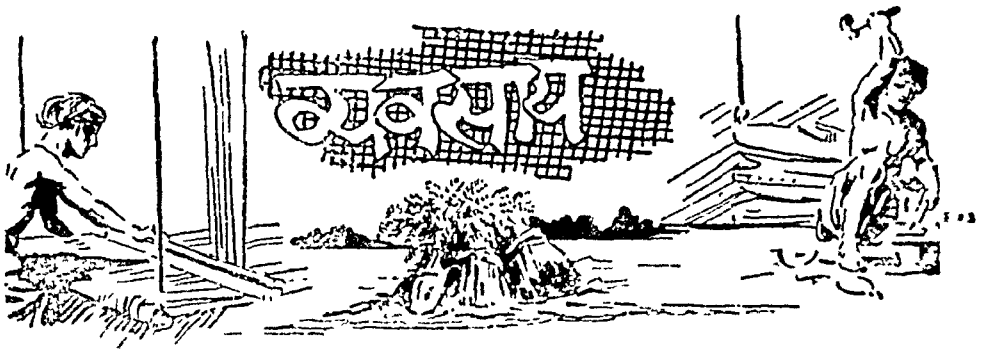
अफ्रीका की हीरे की खान

किम्बरले नगर "हीरे के नगर" के नाम से प्रसिद्ध है। यहाँ पर हीरे की खान है और यहाँ बहुत बड़ी मात्रा में हीरा निकाला जाता है।

पहले पहल जो हीरा मिला उसकी कहानी इस प्रकार है कि सन् १८६७ ई० में कुछ डच बालक अपने पिता के खेत में खेल रहे थे। खेलते खेलते उनको एक सुन्दर पत्थर का छोटा सा टुकड़ा मिला। उन बालकों ने उस सुन्दर टुकड़े को अपने पिता को दिखाया। पिता ने उस को बालकों से ले लिया, और अपने एक मित्र सौदागर को दिया कि वह उस पत्थर का नग उसे बना दे। सौदागर को उस टुकड़े की सुन्दरता पर शक हुआ और वह उसे लेकर एक जौहरी के पास गया। जौहरी ने उस को लेकर ध्यान पूर्वक देखा और फिर उसने सौदागर से कहा कि भाई यह तो हीरा है। इस का मूल्य तो हजारों रुपया है।

सौदागर ने लौट कर सारा हाल अपने मित्र किसान से कहा। किसान को यह जान कर बड़ी खुशी हुई। धीरे धीरे यह बात चारों ओर फैल गई और दूसरे किसानों ने भी अपने अपने खेतों के पथरीले टुकड़ों को ध्यान पूर्वक देखना शुरू किया, इस प्रकार बहुत से किसानों ने अपने खेतों में हीरा पाया।

ऐसी दशा देख कर और दूसरे लोगों का जी भी ललचाया और लोग बहुत बड़ी संख्या में वहाँ छोटे छोटे भूमि के टुकड़े हीरा खोदने के लिये लेने लगे। धीरे धीरे लोगों की संख्या बढ़ने लगी और वहाँ हीरा खोदने वालों का एक बड़ा समूह हो गया। वे लोग अपने झोपड़े डाल कर वहीं रहने लगे। हीरे की लालसा से लालायित होकर सभी प्रकार से लोगों ने वहाँ निवास स्थान बनाना आरम्भ किया और आज वहाँ पर किम्बरले का बड़ा नगर बसा है।

पहले पहल हीरे नदियों के किनारे कङ्कड़ों में मिले फिर नीली-हरी पथरीली चट्टानों के बीच पाए गए। यह नीली-हरी चटान आज "नीली भूमि" के नाम से प्रसिद्ध है। इस भूमि में कहीं कहीं नीली या हरी चट्टानों के टुकड़े दिखाई पड़ते हैं। यह टुकड़े हीरे की खानों के मुख हैं। इन्हीं के नीचे खानें पृथ्वी में दूर तक चली गई हैं। किम्बरले के समीप तीन मील के घेरे में ऐसे ही पाँच हरी-नीली चट्टानों के टुकड़े हैं।

पुरानी खानें एक प्रकार के खुले गढ़े थे। उन को पहले घोड़ों की मदद से खींचे जाने वाली चरखी द्वारा खोदा गया। जब ये गढ़े अधिक गहरे हो गए तो भाप के इञ्जिनों द्वारा इनकी खुदाई हुई। और हीरे निकाले गए। अब ये खानें इतनी गहरी हो गई हैं कि ऊपर से मिट्टी और चट्टानों के गिरने का भय रहता है। इस लिये पुराने गढ़ों को छोड़ दिया गया है और पृथ्वी के भीतर जाने के लिये दूसरे मार्ग बनाये गए है, जिनको शैफ्ट कहते हैं। इन्हीं शैफ्ट से होकर नीचे पृथ्वी में सुरंगे बनाई गई हैं।

इस प्रकार खोद कर हीरा निकालने में बहुत व्यय पड़ता था। इस लिये एक बड़े धनी सेसिल र्होडस (Cecil Rhods) और दूसरे कई एक सौदागर ने मिल कर सभी किम्बरले की खानों का मौल ले

लिया और एक बड़ा कारखाना खोल कर एक साथ काम करने लगे।

यदि हम वहां जाकर देखना चाहें तो हम को पहले आज्ञा लेनी पड़ेगी। खानों के चारों ओर तार द्वारा बाड़े बनाए गए हैं। आज्ञा मिलने पर हम को भीतर जाने दिया जाता है। यहाँ पर अधिकतर यहाँ के निवासी (अफरीकन) काम करते हैं। शैफ्टों से होकर रास्ता ऊपर फर्श को ओर आता है। इन्हीं फर्शों पर नीली मिट्टी को खोद कर ढेर लगा देते हैं। यह ढेर वर्षा और धूप के कारण चूर चूर हो जाती है। इन ढेरों को इस प्रकार चूर होने में कभी कभी साल भर लग जाता है। इस लिये अधिक जल्दी करने के लिये भाप के हलों का प्रयोग भी कभी कभी होता है।

इसके बाद नीली मिट्टी बेलनों पर गाड़ियों द्वारा लाकर चाली जाती है जिससे बड़े बड़े टुकड़े निकल आते हैं उन को फिर पीसा जाता है। चलो हुई मिट्टी नांदों और कड़ाहियों में मशीन द्वारा जाती हैं। इन नांदों में दन्दानेदार औजार लगे रहते है जा घूमते रहते हैं। इन के घूमने से हीरा और दूसरे पत्थरीले वजनी टुकड़े किनारे पर आ जाते हैं। शेष हलका मिट्टी नांद के बीच में बैठ जाती है।

इसके बाद हीरे वाली मिट्टी फिर से लोहे की मेज़ों पर धोई जाती है। यह मेजें ढालू होती हैं। जब धोने का काम होता है तो यह मेजें हिलती रहती हैं। इन मेजों पर चर्बी (ग्रीस) लगा दी जाती है। धुलाई का काम पानी की एक तेज धार द्वारा होता है। जब पानी के वेग से मिट्टी मेज के ऊपर फैलती है तो सारे हीरे के टुकड़े और कण ग्रीस में चिपक जाते हैं। बाक़ी मिट्टी बाहर जा गिरती है। बाहर गिरी हुई मिट्टी को फिर से कमसे कम तीन बार देखना पड़ता है कि कहीं धोके से कोई हीरा चला तो नहीं गया, लेकिन ग्रीसदार मेज़ों से धोका नहीं होता और कभी भी कोई हीरा की कण बाहर नहीं जाने पाती।

धोने का काम पहले हाथों द्वारा होता था जिसमें बहुत समय लगता था और मेहनत बरबाद होती थी। अब यह काम जल्दी और आसानी से हो जाता है।

यदि हम यहां के हीरो को देखें तो हमको शायद निराशा होगी कि यह हीरे नहीं हैं क्योंकि वे मामूली पत्थर के टुकड़ों की भांति ही होते हैं। उनको चमकीला और सुन्दर बनाने के लिये काटना और पालिश करना पड़ता है। कटाई और पालिश का काम बड़ा कठिन होता है और बड़ी सावधानी के साथ करना पड़ता है।

रूस का पुनरुत्थान

अप्रैल सन् १९१७ ई० की क्रांति के बाद रूस के पुनर्जन्म का काल आरम्भ होता है। रूस के निर्माताओं ने केवल प्राचीन शासन-प्रणाली को ही नहीं बदल डाला; वरन् अपना दृष्टि-कोण चारों ओर डाला और रूस देश में एक नये युग का निर्माण कर दिया है।

बोलशेविक नेताओं ने रूस के सभी नगरों को फिर से बनाने की योजना की है। वे अपने नगरों को आदर्श नगर बनाना चाहते हैं। उन्हों ने अपने आदर्श नगर बनाने में तीन मुख्य मुख्य बातों को ध्यान में रक्खा है।

१—शहरों की जन-संख्या कम होनी चाहिये, और उसे परिमित कर देनी चाहिये। आदर्श नगर की जन-संख्या ५ लाख होनी चाहिये और यदि यह बात असम्भव हो जाय तो अधिक से अधिक दस लाख होनी चाहिये।

२—शहरों में अधिक से अधिक खुले मैदान होने चाहिये। किसी भी जगह की भूमि का २० से ४० प्रतिशत भाग मकानों और घरों के लिये होना चाहिये शेष भाग में पार्क, वाटिकाएँ और खुला मैदान होना चाहिये।

३—नगरों के मकान बहुत ऊँचे न होना चाहिये और वे अधिक से अधिक ६ मंज़िल तक हो सकते हैं। जगह की कमी होने या शिल्प-कला के रूप प्रदर्शन करने पर और अधिक ऊँचे मकान बनाये जा सकते हैं।

रूस की क्रांति के आरम्भिक काल में (जब कि कारखाने नहीं थे) नगरों को बनावट के बारे में एक योजना तैयार की गई थी। आदर्श नगर कैसे होना चाहिये इस पर आपस में बोलशेविकों में बड़ा वाद-विवाद हुआ था। गर्डियनरूपी तथा मुद्रा-रूपी नगरों की बनावट प्राचीन थी इस लिये वैसे नगरों की सम्मति न हुई।

रूस देश को समाजतंत्रवादी राष्ट्र होने के कारण आवश्यकता यह थी कि वह ऐसे नगर भी बसाए जो समाज-साम्यवादी हों। अधिकतर समाज-साम्यवादियों तथा लेनिन की राय भी यही हुई कि आदर्श नगर पंक्तिरूपी होने चाहिये। यह नगर एक पंक्ति में लम्बे बसाए जाते हैं और दूर तक देहात में फैले रहते हैं।

किन्तु जब मशीनें चलने लगीं और कारखाने खोले गए तो बोलशेविकों ने देखा कि जैसा उन लोगों ने सोचा था। वैसा होना कठिन है। पंक्ति-रूपी नगर बसाने में उन्हें बड़ी बड़ी असुविधायें देख पड़ीं। वर्तमान समय में रूस में सभी प्रकार के नगर बसाए जा रहे हैं। रूस में गार्डियन तथा मुद्रारूपी गोलाकार, अर्ध-गोलाकार आदि तरह तरह के नगर बसाए जा रहे हैं।

यद्यपि लार्ड-कार्ल मार्क्स् के सिद्धान्त के अनुसार अब भी चलने का प्रयत्न किया जाता है। और नगरों को देहात के बहुत ही समीप रखने का प्रयत्न किया जाता है किन्तु अब इन सिद्धान्तों की उतनी विशेषता नहीं है।

रूस एक समान-साम्यवाद राष्ट्र है। देश की सभी भूमि और कारखाने राष्ट्र के हैं। इस लिये यहाँ पर न तो कारखानों के उन्नति और अवनति का भय है, न भूमि की या वस्तुओं के मूल्य की घटती बढ़ती का ही कोई भय है। व्यक्तिगत भावना

तथा राजनैतिक शक्ति के परिवर्तन होने के कारण भी यहाँ कोई खास 'गड़बड़ी नहीं हो सकती। इस लिये यहाँ पर आदर्श नगर बड़ी सुगमता से बनाये जा सकते हैं और इस योजना में किसी प्रकार की कोई खास रुकावट नहीं पैदा हो सकती।

मास्को नगर को फिर से बनाने की जो दस वर्षीय योजना की गई है उसका सभी वर्तमान नगरों पर काफी प्रभाव पड़ा है। नई योजना के अनुसार मास्को नगर बना है। प्राचीन मास्को की गलियां बड़ी घुमावदार थीं। सड़कें बड़ी तंग थीं। हवादार जगहों की बड़ी कमी थी। हर कहीं जहां पर कुछ मैदान भी थे वे सभी चहारदीवारी द्वारा घेर दिये गये थे। प्राचीन धार्मिक स्थान और गुम्बद भांति-भांति के रंगों से रँगे हुए थे।

इन सभी बातों में परिवर्तन हो गया है अब सभी सड़कें चौड़ी कर दी गई हैं। पार्क, वाटिकाएँ और खुले मैदान नगर के भीतर सब कहीं बना दिये गये हैं।

प्राचीन मास्को नगर नदी के दाहिने तट पर स्थित है। बाएँ किनारे पर नगर का बाहरी भाग तथा कारखाने हैं। नगर द्वितीया के चन्द्रमा की भांति गोलाकार है। किन्तु वर्तमान मास्को नगर नदी के बाएँ तट पर स्थित होगा। वहीं पर सोवियट राष्ट्र के महल और मकान होंगे। नागरिक लोग भी वहीं पर टिकेंगे। चौक, बड़ा बाज़ार आदि सभी बाएँ तट पर होंगे और नगर वृत्ताकार रूप में बसाया जायगा। बाएँ किनारे पर नगर का बाहरी भाग स्थित होगा। जो लोग यहां रहेंगे उनके कारबार, कारखाने इत्यादि यहीं पर होंगे।

मास्को नगर वालगा नहर का एक बन्दरगाह बना दिया जावेगा। नदी का धरातल ८ फीट ऊँचा कर दिया जावेगा, जिससे इसमें स्टीमर भली भांति चल सकें। प्राचीन कीचड़ वाले घाट साफ और पक्के बना दिये गये हैं।

वर्तमान समय में मास्को नगर बड़ा गुनजान बसा है किन्तु आशा की जाती है कि २० साल के भीतर यहां की जन-संख्या घटा दी जावेगी और १ एकड़ भूमि में केवल ४०० आदमी रह सकेंगे। और जन-संख्या घटा कर ५ लाख कर दी जावेगी। नगर के कुछ कारखाने हटा कर बाहर कर दिये जावेंगे।

यह सभी बातें केवल मास्को नगर में ही नहीं हैं किन्तु और दूसरे नगरों की भी ऐसी ही बनावट हो रही है। रोसटोव नगर में कुल भूमि का १९.२ फी सदी घरों के बनाने के लिये दिया गया है। १६.६ फी सदी भूमि कारखानों के लिये, ३.३ फीसदी भूमि आने जाने के मार्ग के लिये। ६.५ फी सदी भूमि में नदी है, १७ फी सदी भूमि गवर्नमेंट सम्बन्धी मकानों के लिये, ४८.८ फी सदी भूमि पार्क, वाटिकाओं, पेड़ों और खुले मैदानों के लिये है, शेष ३.५ फी सदी भूमि स्कूल, सिनेमा, थियेटर, स्पताल आदि के लिये है। नगरों में म्यूनीसिपैलिटी के अन्दर २४ फी सदी भूमि मकानों के लिये परिमित करने का प्रयत्न किया जा रहा है। शेष ७५ फी सदी भूमि में खुले मैदान, पार्क, वाटिकाएँ, खेलने के मैदान इत्यादि होंगे। नगर की जन-संख्या १६० प्रति वर्ग एकड़ होगी और चिकित्सालय आदि की जन-संख्या ५० प्रति शत की जावेगी।

यहाँ कारखाने ऐसे स्थानों पर रक्खे जावेंगे जो उनके लिये बड़े ही उपयोगी होंगे। इनके स्थान हवा के ऐसे रुखों की ओर रक्खे जावेंगे जिससे कारखानों का धुवाँ बस्ती की ओर न आ सके। पुतलीघरों का कटिबन्ध (घेरा) बस्ती से दूर रक्खा जावेगा और इनके बीच में एक हरियाली पट्टी होगी। इस पट्टी की चौड़ाई ५०० से २००० गज़ तक होगी। इसी फैक्ट्री कटिबन्ध में ट्रेनिंग केन्द्र, विशेष विद्या सम्बन्धी संस्थाएँ, रसायन घर और विद्यालय आदि सभी स्थान यहीं होंगे, जिससे विद्यार्थियों को यह ज्ञात होता रहे कि कारखानों आदि में क्या काम होता है।

बस्ती ऊँचे स्थानों पर बसाई जावेगी और मज़दूरों को कारखाने में आने जाने के लिये सवारियों का भी प्रबन्ध किया जावेगा। एक जाति के लोग एक भाग या मुहल्ले में रहेंगे। यह भाग या मुहल्ले १०० एकड़ से अधिक बड़े न होंगे और इनकी जन-संख्या १०,००० से अधिक न होगी। कचेहरियां और प्रबन्ध कर्ताओं के रहने के स्थान अलग होंगे। हर

एक मुहल्ले में एक क्लब, रिस्टोरेन्ट, सिनेमा घर और लड़कों के लिये खेलने के स्थान रहेंगे।

स्कूल ऐसे स्थान पर होंगे जिससे किसी भी लड़के को स्कूल जाने में आध मील से अधिक न चलना पड़े और कोई बड़ी चालू सड़क न पार करनी पड़े।

रूस-राष्ट्र को इस योजना में बड़ा भारी व्यय करना पड़ेगा। प्राचीन नगर और कारखाने जो हैं उनकी दशा बड़ी खराब है। आइवानोओ-ओजनसेंस्क बाकू, यूराल, यूक्रेन आदि नगरों के मजदूरों के रहने के स्थान बड़े गंदे और अस्वस्थ हैं। मजदूरों के रहने के लिये बैरेक हैं, जहाँ वे मौत के मुँह में अपना जीवन व्यतीत करते हैं। नगरों में पानी की भी बहुत कमी है। १९११ ई० में रूस राष्ट्र में १०६३ नगरों की जन-संख्या १०,००० से ज्यादा थी। इन में केवल २१९ नगरों में पानी का प्रबन्ध था। १९३० ई० में मास्को नगर के पानी के प्रबन्ध को निरीक्षण किया गया तो केवल ४२ फी सदी मकानों में पानी का प्रबन्ध था। बाकी घरों में पानी का कोई खास प्रबन्ध न था।

बाकू नगर में बड़ी कड़ी धूप और गरमी पड़ती है किन्तु पानी का वहां भी कोई प्रबन्ध नहीं है। वर्तमान (रूस बनाने वाले) नेताओं के दिमाग़ में सफाई, शुद्ध हवा और पानी को कमी की बात बार बार खटक रही है।

रूस के मकानात नियो-क्लासिक ढंग पर बनाये जा रहे हैं। पेरिस और बर्लिन को देखा देखी शीशे लगाने का प्रयोग मकानों में अधिक हो रहा है। यह बात रूस के लिये ठीक नहीं क्योंकि मास्को ऐसे नगरों की शीत और तिफलिस ऐसे नगरों की गर्मी और अधिक हो जाती है।

कुछ भी हो किन्तु जिस ढँग पर रूस राष्ट्र अपने नगरों को बना रहा है उससे आशा है कि रूस अपने कार्य्य में सफलता प्राप्त करेगा।

दक्षिणी भारत में सिंचाई का प्रबन्ध

[ले० रामाधीन अग्निहोत्री, बी० ए०]

सम्पूर्ण भारतवर्ष का क्षेत्रफल १,८०६,००० वर्गमील है और यहाँ की जनसंख्या ३५ करोड़ से भी अधिक है। इस विशाल जनसंख्या का ६५ प्रतिशत भाग नगरों से दूर छोटे छोटे गांवों में बसता है और अपनी जीविका कृषि द्वारा अर्जन करता है। निर्धन कृषकों का जीवन ही नहीं, वरन् समस्त देश की समृद्धि खेती की सफलता पर निर्भर है। फसलों की सफलता प्रमुखतया समयानुकूल पर्याप्त जल-वृष्टि तथा भूमि की उर्वरा शक्ति पर आश्रित है। भारतवर्ष की अधिकांश भूमि उपजाऊ है और पानी के समुचित प्रबन्ध से अनेकों प्रकार के खाद्य-पदार्थ सरलता से पैदा किये जा सकते हैं। देश की औसत जलवृष्टि ४२ इञ्च प्रतिवर्ष है परन्तु अधिकांश जल वर्षा ऋतु में अर्थात् साल के केवल ३-४ महीनों में ही बरस जाता है और फलतः वर्ष के शेष मास प्रायः शुष्क बीतते हैं। इतना ही नहीं देश के कुछ प्रदेशों में ५ इंच से भी कम पानी बरसता है और इसके प्रतिकूल कुछ भागों में ४०० इंच से भी अधिक। वार्षिक औसत जलवृष्टि में प्रति वर्ष बड़ा अन्तर पड़ता रहता है। बड़े बड़े प्रदेशों में प्रायः औसत का आधा और कभी कभी चौथाई से भी कम वर्षा होती है। दक्षिण भारत में जो पश्चिमी घाट की 'वृष्टि-छाया' में आ जाता है, कभी भी २०-३० इंच से अधिक वर्षा नहीं होती। कभी कभी वर्षा का नितान्त अभाव हो जाता है जिसके कारण फसलें नष्ट- भ्रष्ट हो जाती हैं, भीषण दुर्भिक्ष पड़ जाता है, और सहस्रों बाल, वृद्ध और नर, नारी अकाल ही काल के गाल में चले जाते हैं। यह अनिश्चित दशा भारतीय निधन कृषकों के लिये अत्यन्त गम्भीर है। अतएव भारत ऐसे कृषिप्रधान देश के लिये सिंचाई का स्थाई प्रबन्ध आवश्यक है।

भारत सरकार ने १ अरब ६७ करोड़ ३५ लाख ५० हजार रु० सिंचाई के कार्यों पर व्यय किया है। इसके फलस्वरूप ३ करोड़ १६ लाख एकड़ मरुस्थल भूमि हरी भरी हो गई है। देशी नरेशों तथा अन्य व्यक्तियों की योजनाओं द्वारा सींची जाने वाली भूमि को मिलाकर सम्पूर्ण सिंचित भूमि का क्षेत्रफल ६ करोड़ ५० लाख एकड़ है। देश के सिंचाई के प्रमुख तीन साधन हैं। सर्वोत्तम साधन नहरों का है जिनके द्वारा २ करोड़ ६० लाख एकड़ भूमि प्रति वर्ष सींची जाती है। अन्य दो साधन कुएँ और तालाब हैं जिनके द्वारा क्रमशः १ करोड़ एकड़ भूमि सींची जाती है। इसके अतिरिक्त अन्य साधनों द्वारा ८० लाख एकड़ भूमि सींची जाती है। इनको व्यापक तथा सफल बनाने में एक अच्छी खासी रक़म खर्च करनी पड़ी है, परन्तु देश का यह धन अति लाभदायक कार्य में व्यय किया गया है जिसके कारण कृषकों को तो बहुमूल्य सहायता मिलती है और साथ ही मूलधन पर लगभग ६½ प्रतिशत का लाभ हुआ है।

प्राचीन काल से भारत में सिंचाई का कार्य उपर्युक्त दोनों साधनों द्वारा होता आ रहा है। उत्तरी भारत में विशेषतया कुओं और नदियों से सिंचाई होती आ रही है क्योंकि समतल उत्तरी मैदान में पत्थरों व चट्टानों के सर्वथा अभाव के कारण कुओं का खोदना अत्यन्त सरल है। मुग़ल बादशाहों ने भी जनता के हित के लिये जमुना आदि नदियों से दिल्ली और अगरा के आस पास कुछ नहरें खुदवाई थीं। जिनसे उन प्रदेशों में सिंचाई होती थी। दक्षिणी भारत का धरातल उत्तरी भारत के मैदान के सदृश समतल नहीं है, वरन् पठारी है, जहाँ नहरों और कुँओं का बनाना यदि असम्भव नहीं, तो अत्यन्त दुष्कर, कष्टसाध्य और व्ययी है। वहाँ की प्राकृतिक बनावट के लिये तालाब ही सर्वोत्तम और सम्भव हैं।

प्राचीनकाल से ही दक्षिण भारत में सिंचाई का कार्य न्यूनाधिक मात्रा में तालाबों में संचित पानी द्वारा होता रहा है। वर्तमान समय में लगभग १ करोड़ एकड़ भूमि दीर्घकाय तालाबों द्वारा सींची जाती है। वास्तव में ये तालाब जैसा कि इनके नामकरण से प्रतीत होता है साधारण तालाब नहीं हैं। सचमुच में ये विशाल झीलें अथवा भीमकाय जलाशय हैं। मैसूर में माराकनेव (Marakanave) के निकट नदी की घाटी में १५२ फ़ीट

ऊँचा बांध है, जो २०७५ वर्गमील प्रदेश का जल संचित करता है। जब बांध के पीछे का जलाशय भर जाता है, तो इसमें ३ करोड़ घन फुट जल संचित हो जाता है। परन्तु तो भी भारतीय गणना में उसे केवल 'तालाब' ही कहते हैं। जल रोकने वाली बड़ी दीवाल की लम्बाई १३५० फीट और बाँध के निकट जल की गहराई १३० फीट है। इस बांध से उत्पन्न होने वाली झील का क्षेत्रफल ३४ वर्गमील है।

केवल मद्रास अहाता में इन तालाबों की संख्या ३० सहस्र से अधिक है। मैसूर में ३-४ तालाब प्रति वर्ग मील में पाए जाते हैं और कुल मिलाकर वहां ४० हजार तालाब हैं। भारत के बहुतेरे तालाब बहुत प्राचीन हैं। उदाहरणतया मद्रास में चिंगुलपुट के तालाब ११०० वर्षों के पुराने बताए जाते हैं और वे आज दिन भी लगभग २००० एकड़ भूमि को पानी पहुँचाते हैं। दूसरा तालाब जो दैत्य तालाब (Giants Tank) के नाम से प्रसिद्ध है ईसा की पाँचवीं शताब्दी में बनाया गया था। प्राचीन बांधों के चिन्ह आज भी १५ मील की दूरी तक जङ्गल में पाए जाते हैं। एक विशाल तड़ाग के स्मृतिपात्रों के अध्ययन करने से पता चलता है कि वह लंकाद्वीप में २४०० वर्ष पूर्व बनाया गया था।

बीसवीं शताब्दी के विज्ञानवेत्ता इंजीनियरों ने दक्षिण भारत में सिंचाई के तालाबों को जन्म देने के लिए कावेरी आदि नदियों में दीर्घकाय बांध बनाए हैं, जिनकी बनावट निस्सन्देह आश्चर्यजनक है। वैसे तो इंजीनियरों ने मिस्र देश में भी नील नदी में बड़े बड़े बांध बनाये हैं परन्तु विस्तार तथा कठिनाई में वे भारतीय बांधों से कुछ भी तुलना नहीं रखते। मैसूर रियासत में टांसा नामक एक विशाल बांध है, जिसकी लम्बाई १½ मील है, और जो ३ करोड़ गैलन पानी को धारण कर सकता है। यह बांस २० मील लम्बी बृहत् झील बनाता है। अन्य मान्य आश्चर्यजनक बांध ३००० फीट 'नीरा बांध' और पूना में एक मील लम्बा 'खाँडकवासियों' का विख्यात बाँध है। अनेकों २००-३०१ फीट ऊँचे बांध हैं। परन्तु एक नया बांध जो पञ्जाब में 'भकरा बाँध' के नाम से बनने जा रहा है [illegible]का आ[illegible]ई ५०० फीट होगी। इस प्रकार [illegible] दें। वी० पी० वाले बांधों में यह सर्वोच्च

आशा है कि अ[illegible]

[illegible]ी में एक अति सुन्दर 'मैसूर बांध' बनकर तैयार हुआ है। वर्षा के अभाव से नष्ट होने वाली सन् १९३४ की फसलों की रक्षा के लिए यह अत्यन्त वाँछनीय समय पर बन कर तैयार हुआ था। यह बृहत् बांध कावेरी नदी के मैट्टूर नामक स्थान पर बनाया गया है जो मद्रास से १० मील दक्षिण-पश्चिम की ओर त्रिचनापल्ली से १०० मील उत्तर-पश्चिम में है। यह संसार का सबसे बड़ा बांध है, दूसरा स्थान मैसूर राज्यान्तर्गत कृष्णराजसागर का है और तृतीय स्थान मिश्र के असुवान (Assuan) बांध का है। वास्तव में 'मैट्टूर बांध' ही विज्ञान की पराकाष्ठा का द्योतक और इंजीनियरों की महत्वाकांक्षाओं का परिचायक है। इस योजना की मंजूरी सर्वप्रथम १९२५ ई० में हुई थी और इसका अनुमानित तथा स्वीकृत व्यय ७३७ लाख रुपया था। कुछ कारणवश कार्यारम्भ तीन वर्ष तक न किया जा सका अतः १९२८ में नींव का शिलान्यास किया गया था। इसके बनने में पूरे ६ वर्ष लगे और २१ अगस्त सन् १९३४ को इसका उद्‌घाटन बड़े समारोह के साथ किया गया। इस योजना की सम्पूर्ति में ६८० लाख रुपया लगा जो अनुमानित व्यय से ५७ लाख कम था। इस बाँध की रचना दो प्रमुख उद्देश्यों की पूर्ति के लिये की गई थी। प्रथम कावेरी डेल्टा की १० लाख एकड़ से अधिक भूमि की सिंचाई के प्रबन्ध को पूर्णतया सुव्यवस्थित करना था। दूसरे ३,०१,००० एकड़ नवीन भूमि में सिंचाई का प्रसार करना। इस योजना में निम्नांकित बातें सन्निहित थीं।

(१) मैट्टूर नामक स्थान पर कावेरी नदी में बाँध बनाना जिसका उद्देश्य नदी के बाढ़ के जल को एकत्र करना और आवश्यकता पड़ने पर इस जल को डेल्टा पर पहुँचाना।

(२) सिंचाई के लिये 'ग्रांड एनीकट' (Grand-Anicut) नहर बनाना जो कावेरी के दाहिनी ओर से जल ग्रहण करे।

(३) कावेरी डेल्टा में वर्तमान वाडावार नहर की उन्नति और प्रसार।

ऐसा अनुमान किया जाता है कि इस योजना से सरकार को ५० लाख रुपये की अधिक वार्षिक आय होगी। ग्रांड एनीकट नहर द्वारा २,७१,००० एकड़ और वाडावार नहर द्वारा ३०,००० एकड़ भूमि की सिंचाई हो सकेगी।

इसके अतिरिक्त यह आशा की जाती है कि दूसरी फसल की खेती १,७५,००० एकड़ बढ़ जावेगी। इस बांध के निर्माण से कावेरी डेल्टा के सिंचाई के कार्य में तो उन्नति हुई ही है साथ ही इससे बिजली तैयार करने में भी आशातीत सहायता मिली है, जिससे जलशक्ति से उत्पादित सस्ती बिजली दक्षिणी मद्रास में सरलतापूर्वक वितरित की जावेगी। यहां अधिक से अधिक ४६,००० अश्व-शक्ति (H.P.) उत्पादन की जा सकेगी। आशा की जाती है कि मैटूर शीघ्र ही कलाकौशल का केन्द्र बन जायगा, क्योंकि बिजली कम दामों पर मिलेगी, पानी भी प्रचुरमात्रा में मिल सकेगा और कपास तथा मूँगफली पैदा करने वाले भूभाग के निकट होगा। साथ ही रेलवे तथा कावेरी नदी के पड़ोस में फैक्टरियों के स्थापित करने के लिये सुन्दर स्थान भी हैं।

जल के प्रवाह को रोकने के लिये नदी के मध्य विशाल दीवाल बनाना कोई सरल कार्य न था। पहिले तो कावेरी का प्रवाह ही तीव्र है और दूसरे इसमें एकाएक भयंकर बाढ़ भी आ जाया करती है। अतएव, मध्य धारा में नींव स्थापित करते समय इंजीनियरों को अनेकों कष्टों तथा घोर चिन्ताओं का सामना करना पड़ा था। ऐसे बहुतेरे अवसर आये जब एक साथ ही कई दिनों तक काम बन्द कर देना पड़ता था। ऐसे अवसर बाढ़ के समय में ही उपस्थित होते थे। ज्यों ही दीवाल पानी की सतह से ऊपर आगई त्यों ही कार्य की उन्नति अधिक होने लगी। चूँकि इस बृहत् दीवाल द्वारा जल की एक अधिक मात्रा का रोकना वाँछित था। अतः इसे बहुत दृढ़ और भीमकाय बनाना पड़ा। इसकी सम्पूर्ण लम्बाई ५३०० फुट है। और नदी के तह से १८० फुट ऊँची है। यह दीवाल नींव में १७१ फुट चौड़ी है परन्तु क्रमशः घटते घटते शिखर पर यह २० फुट चौड़ी रह गई है।

इस बांध के बनाने में १८,५२,००० घन गज़ मेमारी का कार्य हुआ है। जो तौल में ३२ लाख टन है। इसके द्वारा एक विशाल जलाशय का निर्माण हुआ है, जो नदी के चढ़ाव की ओर चालीस मील तक फैला हुआ है। इसकी परिधि १०० मील है और इसमें ६० अरब घन फुट जल संचित रहता है। इस बांध द्वारा न केवल कावेरी डेल्टा की ही दस लाख एकड़ भूमि में धान की खेती सफलता-पूर्वक होने लगी वरन् बांध से १२५ मील की दूरी पर ३ लाख एकड़ नई भूमि ७०|मील प्रमुख नहरों और ६०० मील लम्बी शाखाओं द्वारा सिंचने लगी।

कावेरी नदी में एक दूसरा विशाल बांध है, जो इतना मनोरंजक है कि वह मैसूर निवासियों तथा नवागन्तुकों के लिये एक दर्शनीय स्थान बन गया है। यह कृष्ण राजा सगर का बांध है जो मैसूर नगर से लगभग १२ मील उत्तर-पश्चिम में है और निकटतम् रेलवे स्टेशन से मोटर के आवागमन के लिये एक पक्की सड़क बना दी गई है। यहां पर भारत के एक आदर्श 'वाटर वर्क्स' का निरीक्षण किया जा सकता है जहां पानी रोकने के लिये भीमकाय पक्की दीवाल झुलसी हुई उत्तप्त भूमि को जीवनदान देने वाली विशाल नहर तथा पानी से बिजली की शक्ति उत्पन्न करने वाली मशीनें विशेष दर्शनीय हैं।

यह बाँध १३० फुट ऊँचा तथा १$\frac{3}{4}$ मील लम्बा है। इसके निर्माण में ३ करोड़ घन फुट मेमारी और ८० लाख घन फुट मिट्टी लगी है। इसमें ४४ अरब घन फुट जलसंचित रहता है। इस प्रकार यह ५० वर्ग मील विस्तार की एक विशाल झील को जन्म देता है। इसमें १६० पानी निकालने वाले फाटक हैं। बड़े बड़े फाटक इस्पात के बने हुये हैं, और प्रत्येक फाटक का वजन लगभग २$\frac{1}{2}$ टन है। बांध के शिखर पर सुन्दर निचली दीवाल बनी हुई है और यह बिजली द्वारा प्रकाशित किया जाता है। शिखर पर बांध के एक ओर से दूसरी ओर मोटर के आवागमन के लिये पक्की सड़क बनी हुई है। नदी के किनारे फव्वारों और झरनों से युक्त सीढ़ीदार वाटिकाएँ हैं। इनके ऊपर कावेरी नदी के देवता की भव्यमूर्ति है। इस विशाल झील के पानी से २० गांव से अधिक जल मग्न हो गये थे जिसमें हिन्दुओं के कुछ भव्य मन्दिर भी थे। बांध के निकट मैसूर दरबार ने पुनः इन पवित्र मन्दिरों का निर्माण करा दिया है। प्रति वर्ष इन रम्य वाटिकाओं तथा भव्य देवालयों का दर्शन करने के हेतु सहस्त्रों की संख्या में लोग यहां जाते हैं। और इन सुरम्य स्थानों को देख कर अपने नेत्रों को तृप्त कर के अपने को कृतकृत्य समझते हैं।

'मैटूर बांध' के सदृश इस बांध का निर्माण भी दो उद्देश्यों की पूर्ति के लिये किया गया है। प्रथम— माण्ड्या, मद्दूर, और मालावली के आस पास १,२०,००० एकड़ भूमि को सींचना। द्वितीय—एकत्रित

पैदा करके मैसूर, बँगलौर आदि नगरों को विद्युत-प्रकाश पहुँचाता है। वर्तमान विद्युत् उत्पादक स्टेशन की शक्ति ३६००० अश्व-शक्ति (H.P.) है। झील से सींचने के लिये जल एक नहर द्वारा ले जाया जाता है, जिसे प्रथम पच्चीस मील तक पार्वत्य प्रदेश से होकर जाना पड़ता है। एक स्थान पर इसे ६२०० फीट लम्बी सुरङ्ग से पहाड़ को पार करना पड़ता है, जिसका निर्माण पाषाणों की कठोरता के कारण अत्यधिक कष्टसाध्य सिद्ध हुआ था। प्रमुख नहर का जल ११८ मील लम्बे छोटे छोटे बम्बों द्वारा खेतों में पहुँचाया जाता है। सींची हुई भूमि के ⅙ में गन्ना, ⅙ में धान तथा अवशेष में विभिन्न प्रकार की फसलें उगाई जाती हैं।

सभ्यता के केन्द्र से दूर सघन वनों के मध्य में इन विशालकाय बांधों का बनाना कोई खिलवाड़ नहीं। ट्रावनकोर रियासत के पेरियर नदी में बांध बनाना इस बात का ज्वलंत उदाहरण है कि इंजीनियर किस धैर्य पर और विज्ञान चातुरी के साथ प्रकृति की शक्तियों के विरुद्ध अविराम युद्ध करने में संलग्न हैं और किस प्रकार भारतीय सरिताओं को मनुष्योपयोगी बनाने में दत्तचित्त हैं। यह बांध एक पहाड़ी प्रदेश में बनाया गया है जो सघन वनों द्वारा आच्छादित है। यहां शेर, चीते, जङ्गली भैंसे तथा हाथी आदि वन्य पशुओं का बाहुल्य है। साल के ६ महीने पेरियर नदी में बाढ़ बनी रहती है। ऐसी परिस्थितियों में बांध की नींव का कार्य असम्भव था। साथ ही मलेरिया ज्वर के कारण ३ मास काम बन्द करना पड़ता है। इस प्रकार साल भर में केवल तीन महीने काम हो सकता था।

'पेरियर बांध' नदी की तह से १७८ फीट ऊँचा है। नींव में इसकी दीवाल १२६ फीट चौड़ी है, और शनैः शनैः क्षीण होकर शिखर पर यह १० फीट चौड़ी रह जाती है। इसके बनाने में ५० लाख घन फुट कान्क्रीट की आवश्यकता हुई थी जिसके मिश्रण में १०० भाग गिट्टी, ३० भाग बालू और २५ भाग सीमेन्ट तथा किनारों के लिये पत्थर था। आवश्यक सामग्री का निर्जन वन में ले जाना ही असाधारण कार्य था, क्योंकि वहां से निकटतम स्टेशन ८० मील दूर था। इस बांध से बाढ़ के जल को ले जाने के लिये ठोस चट्टानों वाली पहाड़ी के मध्य से ५६०० फीट लम्बी सुरङ्ग खोदना पड़ा था। यह सुरङ्ग १२ फीट चौड़ी और ७½ फीट ऊँची है। पानी की ऊँचाई के साथ बनावटी झील के क्षेत्रफल में परिवर्तन होता रहता है। झील की दो सतह हैं। (१) साधारण सतह, (२) बाढ़ की सतह, बाढ़ के समय दूसरी सतह से आवश्यकता से अधिक जल निकल जाता है। एक लेविल दूसरे लेविल से २१ फीट ऊंचा है। 'बाढ़ की सतह' तक भर जाने पर झील का क्षेत्रफल ७४५४ एकड़ हो जाता है, और इसकी अधिक से अधिक गहराई १६२ फुट हो जाती है। 'साधारण सतह' तक भरे होने पर झील का क्षेत्रफल ३७६५ एकड़ और गहराई केवल १२१ फुट रह जाती है। बाढ़ के समय इसमें १३ लाख २६ करोड़ ६० लाख घन फुट जल रहता है। और सिंचाई के लिये जल का घनफल ६,८१,५०,००,००० घन फुट होता है। यह जल की मात्रा ६ सप्ताह की सिंचाई के लिये पर्याप्त है। इस प्रकार दीर्घ जलाशय में संचित जल नहरों द्वारा ८६ मील की दूरी पर मदूरा प्रांत में ले जाया जाता है, जहां २,५०,००० एकड़ मरुस्थल भूमि सिंचाई द्वारा कृषि करने योग्य हो गई है।

इस प्रकार मद्रास, मैसूर और ट्रावनकोर की लाखों एकड़ भूमि हरी भरी हो गई है और करोड़ों मन अनाज प्रतिवर्ष पैदा होने लगा है। अनिश्चित मानसून से उत्पन्न होने वाले दुर्भिक्षों का एक प्रकार से अन्त हो गया है और लाखों व्यक्तियों की जानें अकाल मृत्यु से सर्वथा सुरक्षित हो गई हैं।

आस्ट्रेलिया का प्लेटीपस

आस्ट्रेलिया महाद्वीप के सभी पशु विचित्र हैं। प्लेटीपस उन्हीं में से एक है। प्लेटीपस दक्षिणी-पूर्वी आस्ट्रेलिया और टस्मेनिया में रहता है। यह रात्रि को ही निकलता है। प्लेटीपस लगभग २० इंच (आध गज से कुछ ही अधिक) लम्बा होता है। इसके ऊपर छछूँदर की तरह मुलायम खाल होती है। इसके बतख की तरह चोंच होती है। लेकिन इसकी चोंच अधिक चौडी और चिपटी होती है। प्लेटीपस की यह चोंच उसकी खाल में जुड़ी होती है। सिर की हड्डी का यह अंग नहीं होती है। सींगदार तलवा रह जाता है। पैदा होते समय बच्चों के बाल वाली खाल नहीं होती। उस समय वह एकदम नंगी होती है। बच्चे और अंडों से पैदा होते हैं। वे अपनी माँ का दूध पीते हैं। प्लेटीपस एक बार में दो अंडा देता है। हर एक अंडा ¾ इंच लम्बा और ½ इंच चौड़ा होता है। प्लेटीपस के गालों में बड़ी बड़ी थैलियाँ होती हैं। उनके अंग छोटे और मजबूत होते हैं।

प्लेटीपस अपना घर किसी नदी या तालाब के किनारे बनाता है। घर के भीतर जाने के लिये दो

आस्ट्रेलिया का प्लेटीपस

इसके निचले भाग में खाल का एक उठा हुआ मोड़ होता है। मुलायम कीचड़ में खोदते समय खाल का यह उठा हुआ भाग उसकी चोंच की रक्षा करता है। प्लेटीपस के पैरों में जाली लगी रहती है। अगले पैरों की जाली पञ्जों के आगे निकली रहती है। सूराख खोदते समय यह उसे पीछे की ओर मोड़ लेता है। नर प्लेटीपस के पिछले पैरों में एड़ी का कुछ भाग उठा हुआ होता है। इन्हें वह लड़ने के समय काम में लाता है। कहते हैं कि पहले उसमें जहर भी होता था। जब प्लेटीपस बच्चा रहता है तब उसके दाँत होते हैं। फिर यह छिप जाते हैं और उनका दरवाजे होते हैं। एक दरवाजा पानी के ऊपर सूखे भाग में रहता है। ऊपर वाला दरवाजा पत्तियों और टहनियों से छिपा रहता है। पानी के भीतर वाले दरवाजे का ढाल-चढ़ाव ऊपर की ओर होता है। पार तक पहुँचने के लिये ५० फुट लम्बे सुरंग के भीतर से जाना पड़ता है। अपने शत्रुओं को धोखा देने के लिये असली सुरंग में कई झूठे सुरंग बना दिये जाते हैं। इससे प्लेटीपस का परिवार आनन्द से भीतर घर में सुरक्षित रहता है। प्लेटीपस अक्सर असली सुरंग का रास्ता भी रोक देता है। प्लेटीपस पानी के छोटे छोटे कीड़े मकोड़े खाकर अपना निर्वाह करता है।

परदेश की सैर

(आजकल का ईरान)

[ले० श्रीयुत श्यामाचरण]

पिछली गरमी की छुट्टियों में मैं ईरान एक महीने के लिये गया था। मेरा रास्ता क्वेटा से बिलोचिस्तान होकर था। ईरान के सरहद्दी शहर मीरजावा से ज़ाहिदान, मशद होता हुआ तेहरान और तेहरान एलबुर्ज़ पहाड़ पार करके कास्पियन समुद्र के दक्षिण में होता हुआ रेश्त से पहलवी पहुँचा, वहाँ से रूसी जहाज़ पर सवार हो कर बाकू गया।

ज़ाहिदान को पहिले दूजदाप कहते थे। दूजदाप के माने हैं "चोरों का ताल"। शाह से खुशामद करके यहां के रहने वालों ने अब इसका नाम ज़ाहिदान रखवा लिया है। ज़ाहिदान का मतलब है "सन्तों का वासा"।

यह हिन्दुस्तानी सरहद्दी के पास पहिला बड़ा शहर है। और यहाँ हिन्दुस्तानी व्यापारी कसरत से हैं। कुछ बरस पहिले यहाँ नार्थ वेस्टर्न रेलवे लाइन आती थी, और गाड़ियाँ हफ़्ते में एक दफे आती जाती थीं। अब गाड़ियों का आना जाना बन्द है और लाइन की हालत बहुत खराब है। रेल नौककुंडी पर ही खतम हो जाती है। नौककुंडी से ज़ाहिदान तक क़रीब डेढ़ सौ मील मोटर लारियों और बसों पर जाना पड़ता है। आमतौर से मोटर कार यहाँ नहीं मिलते हैं उनके लिये पहिले से इन्तज़ाम करना पड़ता है।

मुझे नौकुंडी से ज़ाहिदान के लिये एक दाल-चीनी से भरी लारी ही मिली। मेरे साथ हिन्दुस्तानी फौज के एक लेफ्टिनेन्ट साहब जी भी हो लिये थे। रास्ते में रात के बारह बजे के बाद हिन्दुस्तानी सरहद "सफेद किले" पर पड़ाव डाला। सोने के लिये किले के बाहर सिर्फ रेगिस्तानी ज़मीन ही थी। मैं तो लारी के अन्दर सोया लेकिन मेरे साथी और सिक्ख ड्राइवर अपना अपना होल्डाल बिछाकर ज़मीन पर ही सोये।

कुछ बरस हुये मुझे ईरान में दमश्क से बग़दाद जाते वक्त यह बतलाया गया था कि रेगिस्तान में एक तरह के साँप होते हैं जो सोने वालों के कानों में घुस जाते हैं। मगर हमारे ड्राइवर ने कहा "ईरान में नहीं होते इराक में होते होंगे"।

खैर सुबह जब सोकर उठे तो देखा कि कुछ लड़के ढेलों से एक साँप को मार रहे हैं। लेफ्टिनेन्ट साहब घबड़ाकर बोले "रात को मुझे बिस्तरों में कुछ सरसराहट सी मालूम हुई थी। आप आये थे बड़े बड़े अमान ले-कर और पहिली ही रात को एक साँप के साथ सोये।

ईरान देश का कुछ हाल न पूछिये। मीरजावा से तेहरान तक डेढ़ हज़ार मील मोटर बसों पर तै कर डाले। लेकिन रास्ता बिलकुल सुनसान बियाबान रेगिस्तानों में होकर था। न आदम न आदम जात। सूखे पहाड़ सूखा रास्ता। ईरान नहीं वीरान है। सड़कें क्या हैं हमारी कच्ची सड़कें उनसे कहीं हज़ार दरजे बेहतर हैं। रात को चलते, दिन को

सोते। जहाँ कहीं भी ज़रा सा पानी का सोता निकल आया बस वहीं आबादी नज़र आती थी। ईरानियों के मकान बाहर से देखने में कच्ची सी चहार-दिवारी ही मालूम पड़ते है, और बहुत ही भद्दे दिखलाई पड़ते हैं। लेकिन जैसे ही अन्दर पहुँचे एक नायाब नज़्ज़ारा दिखलाई पड़ता है। ईरानियों को बाग़बानी से बहुत शौक़ है। अन्दर एक हौज या छोटा सा तालाब रहता है जिसमे किसी पास के सोते से हमेशा पानी आता जाता रहता है। फूलों और फलों के पौधे बहुत ही खूबसूरती से चारों तरफ लगे होते हैं।

लोग चाय पीते रहते है और मेहमानों के लिये आते जाते वक्त चाय ही पेश करते हैं। लेकिन इन लोगों की चाय भी बड़ी अजीब होती है, बग़ैर दूध के खूब औटाई हुई चाय एक छोटे से दो औंस के गिलास में दी जाती हैं, और यह चाय शक्कर के टुकड़ों से भरी रहती है। बहुत से लोग तो मुहँ में मिश्री रखकर उसमें से चाय को सड़ोपते हैं।

ईरान में पहले लूटमार बहुत होती थी, रास्ता चलना मुश्किल था। लेकिन अब शाह के ज़बरदस्त इन्तज़ाम के सामने चोर डाकू सब ग़ायब हो गये हैं और उन्होंने गदहों पर लाद कर फल तरकारियों

गुलिस्ताँ महल में ईरानी राजसिंहासन

हाँ आपको यह जानने की फिकर पड़ी होगी कि रात को क्यों सफर करते थे। गर्मी के मौसम में सूरज की गर्मी से पथरीली सड़कें बहुत गर्म हो जाती है और ड्राइवरों को हमेशा यह डर लगा रहता है कि कहीं उनकी मोटर बसों के टायर फट न जायें।

रास्ते में जगह जगह कहवाखाने बने हुये है। इनमें खाने-पीने और सोने का इन्तज़ाम रहता है। खाने के लिये तो आमतौर से ईरानी लम्बी चौड़ी रोटियाँ, अण्डे, चावल वगैरह मिलते हैं। फल, तरकारी, गोश्त सिर्फ बड़े ही शहरों में दिखलाई पड़ते है। जिस तरह से हमारे यहाँ लोग रात दिन पान चबाते रहते हैं और खातिर तवाज़ह में भी पान ही पेश करते है, उसी तरह ईरान में रात दिन ये

का बेचना शुरू कर दिया है। तमाम ईरान में अब कोई भी सोना उछालता निकल जाय उसे कहीं भी डर नहीं है। औरतें और लड़कियाँ बेफिक्री से रात दिन अकेली घूमती फिरती है। गुण्डे बदमाशों का भी अब कहीं नाम निशान नहीं रहा। जहाँ कहीं से डाके या चोरी की खबरें आईं बस कोतवाल से तबाब तलब नौकरी से अलग या और सज़ायें कोतवाल और उसके मातहतों को हमेशा चौकन्ना रखती हैं। चोरों और डाकुओं को सज़ा भी बड़ी बेरहमी से होती है, गोली से उड़ा देना मामूली बात है।

ईरानी वैसे तो साफ नज़र आते है लेकिन पानी की कमी की वजह से बहुत ही गन्दे रहते हैं। अगर उनका मुल्क सर्द न होता तो अभी तक हैजा और

सर आँखों पर का आखिरी हिस्सा चश्म कह रहा है।

इस वक्त ईरान में अरबी अक्षर 'स्वाद' ज़्वाद से तोय, जोय, जाल भी फारसी अक्षरों से बिल्कुल निकाल दिये गये हैं। तुर्की ने रोमन हर्फों को बिल्कुल अपना लिया है और फारसी और अरबी के हर्फों के प्रयोग के लिये बिल्कुल मना कर दिया है। ईरान इसका बिल्कुल उल्टा कर रहा है। नोटिसों और शहर के साइनबोर्डों पर भी रोमन का एक अक्षर नज़र

ईरान के युवराज शापुर मुहम्मद रज़ा पहलवी

नहीं आता है। यहाँ तक कि योरुपियन सिनेमा की तस्वीरों से भी रोमन अक्षर मिटा दिये गये हैं।

ईरान आजकल बन्द देश है। मतलब कि यहाँ से रुपया बाहर नहीं जा सकता। यात्री जो कुछ साथ में ले जाते हैं वह उनके पासपोर्ट पर दर्ज करा दिया जाता है। जितना विदेशी सिक्का नोट इत्यादि वह यहाँ पर आवश्यकता के लिये भुनाएं वह सिर्फ़ सरकारी बैंकों में ही भुनाया जा सकता है। उसकी रसीदें और बाकी का बचा हुआ रुपया ईरान की सरहद छोड़ने के पहिले उन्हें कस्टम्स (चुङ्गी) अफ़सर को दिखाना पड़ता है। अगर जोड़ पासपोर्ट की रकम से नहीं मिलता है तो तीन बरस तक की सज़ा दी जा सकती है।

तिजारत के लिये बड़ी सख्त बन्दिशें हैं। जो चीज़ ईरान में बन सकती हैं बुरी बनें चाहे मैली बाहर से यहाँ नहीं लाई जा सकती हैं। इनके अलावा और चीज़ों को अन्दर लाने के लिये जब तक कि उतने ही दाम की विदेश में ईरानी चीज़ों की बिक्री की रसीदें नहीं होतीं, मुल्क में नहीं लाई जा सकती हैं।

हमारे सिक्ख व पञ्जाबी भाई वहाँ अधिक संख्या में व्यापार में लगे हैं। मोटरों का सारा कारबार लगभग उन्हीं के हाथ में है। मोटर ड्राइवर भी बहुत से सिक्ख हैं।

इन हिन्दुस्तानी व्यापारियों की सबसे बड़ी मुश्किल यह है कि वह अपनी कमाई अपने देश में मुख्यत: नहीं भेज सकते हैं चाहे जितना कमायें लेकिन खर्चा सब ईरान ही में करना है।

उत्तरी पश्चिमी ईरान और हिस्सों की अपेक्षा ज्यादा हरा भरा है। वहाँ फल मेवे बहुत होते हैं। कालीन तो तमाम ईरान में घर घर बिछे हुये हैं। ग़रीब से ग़रीब कहवे खाने में भी मट्टी के चबूतरों पर कालीन ही कालीन है। चाहे खटमल, पिस्सू क्यों न भरे हों लेकिन बैठेंगे कालीन ही पर।

मिट्टी का तेल भी यहाँ पर बहुत निकलता है। पहिले इसका व्यापार अँग्रेजों के हाथ में था लेकिन अब सब व्यापार ईरानियों ने अपने ही हाथों में ले लिया है।

ईरान में मज़ारों को छोड़ कर मसजिदों पर मीनारें नहीं होती हैं। तुर्की, इराक, मिश्र इत्यादि की मसजिदों पर एक मीनार होती है। हमारे हिन्दुस्तान में दो से चार तक मीनार होती हैं।

ईरानी अब मज़हब के बहुत कट्टर नहीं हैं। शिया, सुन्नी, हिन्दू, ईसाई सब एक साथ उठते व खाते पीते हैं वहाँ अब किसी चीज के भी खाने पीने में कोई परहेज़ नहीं है। और सबसे बड़ी बात यह है कि वहाँ हिन्दू पानी व मुसलमान रोटी का झगड़ा नहीं है। बड़े शहरों में नाच तमाशे सिनेमा इत्यादि अधिकतर योरुपियन ढंग के हैं। नाचघरों

और होटलों में दो तरह के नाच गानों का प्रबन्ध रहता है। ईरानी व अंगरेजी नाचने वाली स्त्रियाँ बारी बारी से अंगरेजी और ईरानी नाच सिखलाती हैं। इनका पहिनाव भी बिल्कुल योरुपियन होता है। जर्मन बीबी थी। जब ये दोनों नाचने लगे तो मर्द से कहा गया 'हतुख" आप बैठ जाइये आपको नाचने की इजाजत नहीं है ! लेकिन मेम साहिब ने एक योरुपियन साथी ढूँढ़कर अपना नाच जारी रक्खा।

तेहरान की नई सड़क
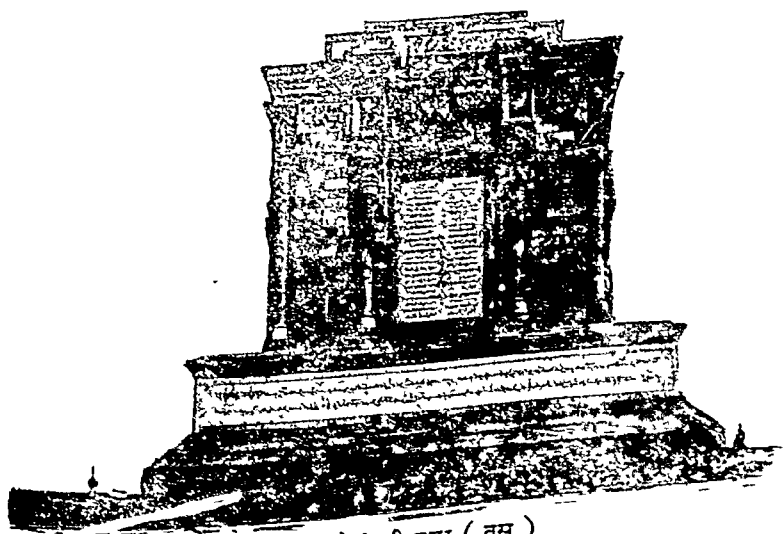
फ़रदौसी की कबर (तूस)

योरुपियन ढंग का मर्द-औरत के जोड़ों का नाच सिर्फ कुछ ऊँचे दर्जे के होटलों में रात के बारह बजे के बाद हो सकता है। और उसमें भी सिर्फ विदेशी लोग ही शामिल हो सकते हैं। एक ईरानी के एक

ईरान में जो कुछ परिवर्तन हुआ है उसमें कुछ नई बातें हुई हैं। जितनी मुल्क ने तरक्की की है वह सब सिर्फ एक आदमी रजा अलीशाह पहलवी शाहंशाह ईरानी की ही बदौलत है।

✲✲✲✲

प्लेग से खतम हो गये होते। इनके यहाँ इसी वजह से सरहद्दी कवांरीनी कायदे बहुत सख्त हैं। अगर मुसाफिर के पास हैजा चेचक वगैरह के टीके के सार्टीफिकेट नहीं होते हैं तो उसे क्वारन्टीन में ५ दिन पड़ा रहना पड़ता है।
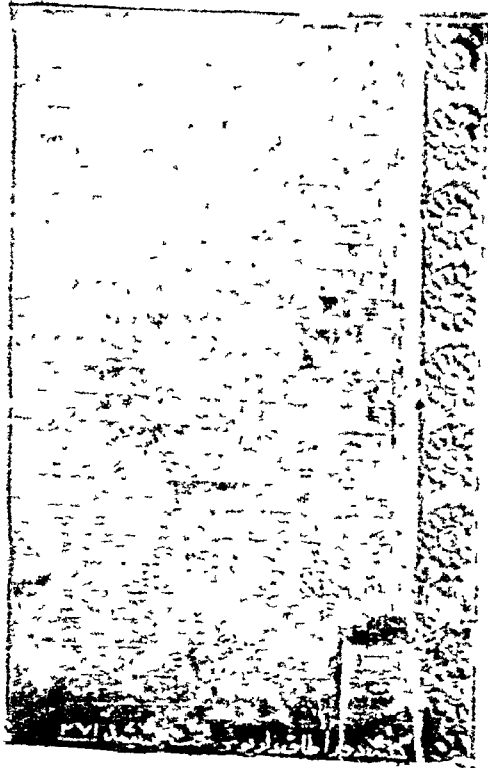
परसी पोलिस में दारा के महल के द्वार पर प्राचीन नुकीली (क्यूनीफार्म) लिपि का शिला-लेख

ईरानी अपने व्यवहार और अतिथि-सत्कार के लिये बहुत मशहूर हैं। यहाँ के निवासी बड़े प्रसन्नचित्त हैं। हमेशा अतिथि-सत्कार में लगे रहते हैं। जब कभी किसी से बहुत खुश हो जाते हैं तो उसके हाथ चूमना तो मामूली बात है कभी कभी उनके गाल तक चूम लेते हैं। खाना खाते वक्त कभी कभी अपनी जूठी अँगुलियों से तश्तरी में से लज़ीज़ टुकड़े निकाल कर अपने मेहमान के मुँह में रख देते हैं।

आज कल शाह के हुक्म से औरतें परदे से बाहर हैं और योरुपियन कपड़े पहनती हैं। आदमी भी योरुपियन कपड़े पहिनने को मजबूर किये जाते हैं। जब राजा रज़ाशाह ने योरुपियन पोशाक पहनने का हुक्म निकाला तो हैट पहनने पर बहुत एतराज़ किये गये। नमाज़ के समय सर ढका रहना जरूरी है और यह भी जरूरी है कि उस वक्त माथे को खूब अच्छी तरह छुआया जा सके। अँगरेजी हैट से पहला काम तो खूब अच्छी तरह से हो जाता है यानी सर ढका रहता है लेकिन उसकी कोर की वजह से माथा जमीन को नहीं छू सकता इसलिये अँग्रेजी हैट की जगह पहिले पहल चोंचदार पहलवी टोपी का प्रचार हुआ। यह हमारे यहां की मामूली गोल टोपी की तरह है। सिर्फ उसमें सामने की तरफ हैट की तरह एक कोर निकली रहती है। नमाज के वक्त इसको उल्टा करके पहिनने से माथा जमीन से छुआया जा सकता है। आज कल यह टोपी भी गायब हो गई है और अब चारों तरफ सिर्फ फेल्ट हैट ही नजर आते हैं। गरीब व मजदूर पेशे वाले आदमी फेल्ट हैट की जगह मामूली ईवनिङ्ग कैप इस्तैमाल करते हैं।

ईरानियों का रङ्ग बहुत गोरा होता है और योरुपियन लिबास से पूरे योरुपियन मालूम होते हैं। तेहरान की सड़कें ख्यावाने इस्तम्बोल लालाजार में ऐसा मालूम होता है कि मानों फ्रांस के किसी शहर में घूम रहे हैं। बाकी बाजार वगैरह हिन्दुस्तान ऐसे ही हैं।

इन लोगों ने अब योरुपियनों की नक़ल हर एक बात में कर ली है। रहन-सहन, खान-पान इत्यादि यहाँ तक कि उनकी खराब बातों को भी इन लोगों ने अपना लिया है। अपने पुराने नियम व सभ्यता को बिल्कुल भूले जा रहे हैं। मुझसे यह कहे बगैर न रहा गया, आप लोगों से मालूम होता है कि फिरदौसी व हाफिज की सभ्यता को बेचकर सिर्फ लोहे की मोटरें ही खरीदी हैं।

स्त्रियाँ और लड़कियाँ सिर्फ सड़कों ही पर बेपर्द दिखलाई पड़ती हैं। भले घरों में योरुपियन लेडीज की तरह से मेहमानों से मिलती जुलती नहीं हैं। एक बार मैंने वहाँ के एक रईस से जिनके रहन-सहन का ढंग किसी अङ्गरेज अमीर से कम न था। पूछा-आप के यहाँ हरएक बात की नकल योरुपियनों की होती है। लेकिन लेडीज आमतौर से न तो मेहमानों

के सामने आती हैं और न उनसे बात चीत करती हैं। उन्होंने खफा होकर बड़े मार्के का जवाब दिया है। महमानों की खातिर तवाजह करना घर की लेडीज का काम नहीं है इसके लिये बाजरू औरतें बहुत काफी हैं।

ईरान में शराब पानी का रिवाज बहुत अधिक

यहाँ के कोई कोई शब्द बड़े मजे के हैं। एक बार मुझे एक बड़े गिलास की जरूरत पड़ी। मुझे "बड़े" की फारसी मालूम न थी बड़ी मुश्किल से जब नौकर की समझ में आया तो वह बोल उठा "बुजुर्ग गिलास"। मैं चक्कर में, हमारे यहाँ तो बुजुर्ग आदमी होते हैं न कि गिलास, लोटा।
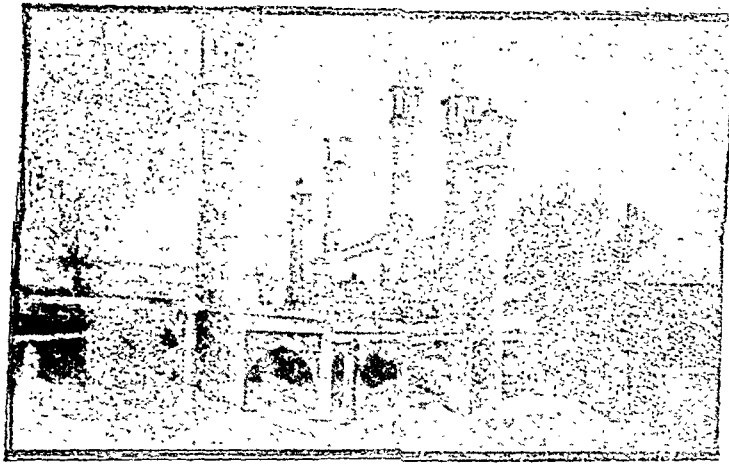
मसजिद सिपहसालार धार्मिक कालेज
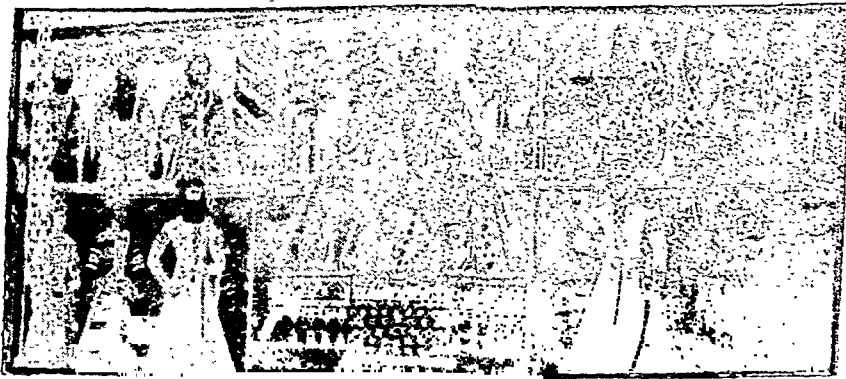
पुराना राजदरबार

है। एक बार मेरे एक ईरानी मित्र ने मुझसे 'आबेजी" [जौ का पानी] पीने का बहुत हठ किया। मैं समझा कि उसका मतलब "बार्ली वाटर से था। अब सामने आया तो बीअर की बोतल"। मालूम हुआ कि बीअर को जोकि जौ को सड़ा कर बनती है यह लोग "आबे जी" कहते हैं।

मेशद से तेहरान तक हमारी बस का ड्राइवर ईरानी था जब कभी कोई उससे बिगड़ कर कुछ कहता तो वह चिल्लाकर जवाब देता, "चश्म चश्म"। मैंने समझा कि कहता है "चश्म लगाओ क्या अंधे हो"। मालूम हुआ नहीं वो बड़ी तहज़ीब के साथ सिर्फ "बसरो चश्म" यानी आपका

"BHUGOL"

The only Geographical Monthly published in India

Purpose : "Bhugol" aims to enrich the geographical section of Hindi literature and to stimulate geographical instruction in the Hindi language.

Contents : Articles are published on varied topics of geographical interest : Current History, Astronomy, Industry and Trade, Surveys, Travel and Exploration, Fairs and Exhibitions, Plant and Animal Life. Climatic charts, a brief diary of the month, and questions and answers are regular features. Successive numbers contain serial articles on regional and topical subjects so that by preserving file of "Bhugol" any teacher of geography can accumulate invaluable reference material.

Travel Department : The Travel Department of "Bhugol" annually arranges tours which provide an excellent opportunity for geography teachers and students to visit regions of special interest in India, Burma and Ceylon. Full information will be supplied on application (with a stamped and addressed envelope).

Use in Schools : The use of "Bhugol" in connection with the geography instruction in high schools, normal schools and middle schools, is specially sanctioned by the Educational Departments of the United Provinces, the Central Provinces, Berar, the Punjab, Bihar and Orissa, Gwalior, Jaipur, Kotah and Jodhpur.

Remittances : Make all remittances, cheque, money order or British Postal Order, payable to the manager, **"Bhugol".**

Rates for Advertisements :

Ordinary full one page	...	Rs. 10/-
3rd page of the cover	...	„ 12/-
4th page of the cover	...	„ 15/-

Write to the Manager,

"BHUGOL",

ALLAHABAD.

Published by the Editor (Pt. Ram Narain Misra, B. A.) and Printed by K. P. Misra at the Bhugol Press; 243, Jamuna Road, Allahabad.

सम्पादकीय

चीन देश के प्रति हिन्दुस्तान की दिलचस्पी बहुत पुराने समय से रही है। चीन-जापान-युद्ध से यह दिलचस्पी और भी अधिक बढ़ गई। इसीलिये चीन के सभी पहलुओं पर संक्षिप्त प्रकाश डालने के लिये चीन-अंक का आयोजन किया गया। सौभाग्य से इस अंक के सम्पादन में श्रीयुक्त भगवती प्रसाद जी श्रीवास्तव का पूरा सहयोग मिल गया। आपने चीन के कई अंगों का विशेष अध्ययन किया है। भविष्य में भी चीन के सम्बन्ध में भूगोल के पाठक उनकी जानकारी से और भी अधिक लाभ उठा सकेंगे। नक़्शे समयाभाव से इस अंक के साथ प्रकाशित न हो सके वे फिर "भूगोल" के अगले अंक के साथ प्रकाशित होंगे।

विषय-सूची

विषय			पृष्ठ
१—चीन की स्थिति	...	...	१
२—पशु और वनस्पति	...	...	१०
३—कारबार	...	...	१४
४—चीन में शिक्षा का प्रबन्ध (श्री भगवती प्रसाद श्रीवास्तव एम० एस्सी)		...	१७
५—चीन की कुछ कहावतें (श्री शान्ति शरण)	...	...	२३
६—चीनी मनोरंजन और खेल कूद (श्री आनन्द मोहन जागीरदार)		...	२५
७—चीन में हवाई डाक तथा वायुयान सेना (श्री भगवती प्रसाद श्रीवास्तव एम० एस्सी)			२६
८—महात्मा कन्फ्यूशियस	...	...	३०
९—मार्शल चांगकाई शेक (कुं० माधवेन्द्र प्रसाद नारायण सिंह)		...	३४
१०—मैडम चांगकाई शेक	...	...	३७
११—हुईन्शी (श्री भगवती प्रसाद श्रीवास्तव एम० एस्सी)		...	३९
१२—डा० सनयात सेन	...	...	४१
१३—चीन की धार्मिक व्यवस्था	...	...	४३
१४—चीन के प्रदेश में विदेशी शक्तियों का जमघट	...	...	५०
१५—चीन और जापान (श्री रामशंकर अवस्थी एम० ए०)	..	...	५७
१६—चीन की राजनैतिक रूपरेखा (श्री भगवती प्रसाद श्रीवास्तव एम० एस्सी)		...	५९
१७—चीन जापान संघर्ष (श्री सीताराम अग्रवाल)	..	...	६०
१८—[illegible]	...	...	६५
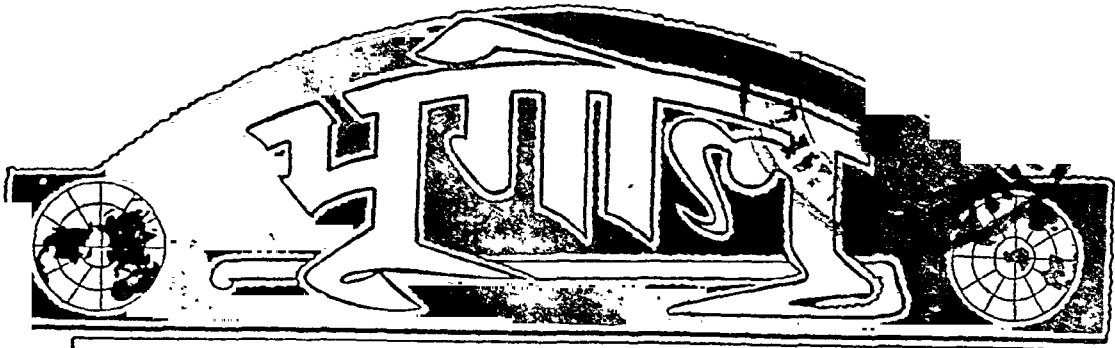
"चीन-अङ्क"

यह पत्र संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, बरार, बिहार, उड़ीसा, पंजाब प्रान्त तथा ग्वालियर, जैपुर, जोधपुर और कोटा राज्य के शिक्षा-विभागों द्वारा हाई, नार्मल और मिडिल स्कूलों में प्रयोग होने के लिये स्वीकृत है।

वर्ष १४] माघ सं० १९९४, जनवरी १९३८ [सं० ९

चीन की स्थिति

रूस को छोड़ कर चीन देश क्षेत्रफल में संसार भर में सब से बड़ा देश है। उत्तर में साइबेरिया (५३ अक्षांश) से लेकर चीन देश दक्षिण में (१८ उत्तरी अक्षांश) उष्ण कटिबन्ध तक फैला हुआ है। पश्चिम में (७४ पूर्वी देशान्तर) अफगानिस्तान से लेकर पूर्व में पीले सागर (१३४ पूर्वी देशान्तर) प्रशान्त महासागर तक चला गया है। इस विशाल देश का क्षेत्रफल लगभग ४३ लाख वर्गमील है जो सारे योरुप से कुछ बड़ा और भारतवर्ष से दुगुना है। सारे चीन देश में लगभग ४८ करोड़ मनुष्य रहते हैं। इतनी घनी आबादी संसार के किसी और देश की नहीं है। जितनी आबादी सारी दुनिया में है उसकी ¼ अकेले चीन में रहती है।

उत्तर की ओर लगभग ३००० मील तक साम्यवादी सोवियट रूस का प्रजातन्त्र प्रदेश चीन की सीमा बनाता है। प्रशान्त-महासागर चीन की पूर्वी सीमा बनाता है। दक्षिण और दक्षिण-पश्चिम की ओर चीन देश चीन-सागर, इण्डोचीन और ब्रह्मा से घिरा हुआ है। चीन का समुद्र-तट कई सौ मील लम्बा है। लेकिन तट से भीतर की ओर प्रवेश करने के लिये नदियों के मुहाने और कुछ बन्दरगाह ही अनुकूल हैं। जब से जापान ने तट को घेर लिया तब से बाहरी देशों से बारूद और दूसरा सामान मँगाने के लिये कुछ ही स्थान शेष बचे। सिंक्यांग के लम्बे स्थल मार्ग से सोवियट रूस से सामान आ सकता है। यूनान के दुर्गम पहाड़ी प्रान्त में होकर फ्रेञ्च इण्डोचीन का सामान आ सकता है।

जहाँ चीन में एक ओर अत्यन्त उपजाऊ और घनी आबादी वाले मैदान हैं वहाँ दूसरी ओर इसकी सीमा के भीतर ऐसे निर्जन और निर्जल रेगिस्तान हैं कि उधर होकर जाने की कोई मनुष्य हिम्मत नहीं करता है।
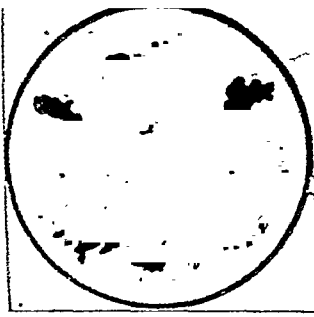
भूरचना

प्रधान चीन की संस्कृति और प्राकृतिक विभाग को समझने के लिये यहाँ की भूरचना का जानना आवश्यक है। भूरचना के अनुसार चीन कई भागों में बँटा हुआ है।

उत्तरी ऊँचे भाग का पश्चिमी प्रदेश

इस भाग में अधिकांश कान्सू प्रान्त और शेन्सी प्रान्त का उत्तरी भाग शामिल है। इसके उत्तर की पहाड़ियाँ इसे मंगोलिया के पठार से अलग करती हैं। दक्षिण में क्विनलुन पर्वत है। इस प्रदेश के निचले पूर्वी भाग में लोयस (हवा के साथ लाई हुई वारीक पीली मिट्टी) मिट्टी घिरी हुई है। इसी से इसे उत्तरी-पश्चिमी चीन का लोयस पठार कहते हैं। लेकिन इस बड़े भाग में कई पर्वत श्रेणियाँ हैं, जिनकी ऊँचाई कहीं कहीं २०००० फुट तक पहुँच गई है। इसी प्रदेश में ह्वाँगहो नदी पथरीली तली वनाकर वहती है। ह्वाँगहो नदी दक्षिण-पश्चिम से उत्तर-पूर्व की ओर वहती है। यहाँ पर ह्वाँगहो नदी का वायाँ किनारा ऊँची पर्वत-श्रेणियों से घिरा हुआ है। इन पर्वतों को अक्सर नानशान (दक्षिणी पर्वत) के नाम से पुकारते हैं। नानशान पर्वत आततीनताग पर्वत का ही सिलसिला है। दक्षिण की ओर क्विनलुन पर्वत से मिली हुई पहाड़ियाँ हैं जो अन्त में पूर्व की ओर सिंगलिंग पर्वत के नाम से विख्यात हैं। सिंगलिंग पर्वत ही उत्तरी चीन और दक्षिणी चीन के बीच में सीमा वनाता है। सिंगलिंग के उत्तर में ह्वाँगहो के दाहिने किनारे से लोयस का पठार पूर्व की ओर फैला हुआ है।

उत्तरी पर्वतों की तीन प्रधान श्रेणियाँ हैं। धुर उत्तर में शानतान पर्वत है। यह कानचाओ से ल्याँग-चाओ को जाने वाली पुरानी सड़क के उत्तर में है और मंगोलिया को चीन से अलग करता है। इसी के किनारे किनारे चीन की वड़ी दीवार का मार्ग है। ओसिस के ऊपर इन खुश्क पहाड़ों की अधिक से अधिक ऊँचाई केवल ५००० फुट है। इसलिये उत्तरी घुमक्कड़ लोगों को चीन में हमला करने से रोकने के लिये पहाड़ों की ऊँचाई काफी नहीं है। पहाड़ों की खुश्की असली वाधा डालती है। ऊँचाई की कमी को दूर करने के लिये ही वड़ी दीवार की रचना हुई। इसके दक्षिण में नानशान का वर्फीला पहाड़ है। प्रशान्त महासागर से आने वाली भाप भरी हुई हवाओं को यहाँ पहुँचते पहुँचते समुद्र तल से २०००० फुट ऊँचा चढ़ना पड़ता है। अधिक ऊँचाई पर इन हवाओं की भाप वरफ के रूप में गिरती है। इसी से नानशान पर्वत की चोटियाँ वरफ और घाटियाँ हिमागारों से घिरी हुई हैं। पहाड़ों पर वन और घाटियों में चरागाह हैं। इस पर्वत और तातुंग नदी की घाटी के बीच में लागिओवो प्रधान दर्रा है। ह्वाँगहो के दक्षिण में सीकिंगशान और मीनशान की दो पर्वत श्रेणियाँ हैं। इनका रुख उत्तर-पूर्व की ओर है। यह क्विनलुन पर्वत के ही सिलसिले हैं। इनकी चोटियाँ नंगी और खुश्क हैं। दर्रे लगभग १०,००० फुट ऊँचे हैं।

इस प्रदेश में ह्वांगहो नदी का ऊपरी भाग है। यह नदी ओ-दो-ताला के ऊंचे मैदान में ओरीन झील से निकलती है। यहां से १५० मील की दूरी पर कान्सू प्रान्त में पहुँचने पर नदी कटिया के (S) के आकार का मार्ग वनाती है और ८००० फुट से नीचे

उतर कर तानचाओ के पास केवल ५२०० फुट ऊंची रह जाती है। किनलुन की एक पहाड़ी नदी को ऊत्तर की ओर मोड़ देती है। फिर वह पूर्व की ओर घूमती है। अन्त में अचानक दक्षिण की ओर मुड़ कर तुंगक्वान (पूर्वी द्वार) शहर के पास पहुँचती है। नदी से तीन ओर घिरे हुए पठार को आर्डोस कहते हैं। लांगचाओ से तुंगक्वान का नदी का मोड़वाला मार्ग १२०० मील लम्बा है। लांगचाओ और तुंगक्वान के बीच में सीधी दूरी केवल ३०० मील है। इस लम्बे मार्ग में नदी का उतार प्रति मील औसत से केवल ४ फुट है। इसी से यहां नदी में नावें खूब चलती हैं। पहले नदी का मार्ग कुछ तंग और धारा तेज़ है। आगे बढ़ कर पीले रेगिस्तान के ऊपर ही की चौड़ाई ४०० गज़ हो जाती है। होकाओ और तुंगकान के बीच में नदी का ३७५ मील लम्बा मार्ग शेन्सी और शान्सी प्रान्तों के बीच में सीमा बनाता है। यहां नदी २००० फुट नीचे उतर आती है। इस ओर कोयला अधिक है और नदी के मार्ग से इधर उधर भेजा जाता है। कान्सू प्रान्त तक ह्वांगहो की तातुंग और दूसरी सहायक नदियां पहाड़ी धारायें हैं और नानशान या मीनशान की पिघली हुई बरफ़ के पानी को बहा लाती हैं। वीहो सहायक नदी इस भाग में प्रधान ह्वांगहो से भी अधिक उपयोगी है।

उत्तरी ऊँचे भाग का मध्यवर्ती प्रदेश

इस प्रदेश में शान्सी (पर्वत के पश्चिम का का-प्रान्त) प्रान्त का बड़ा भाग और चिली प्रान्त का उत्तरी भाग शामिल है। इस प्रदेश में लोयस के (पीली मिट्टी से ढके हुए लम्बे टीले शामिल हैं) पठार की ऊचाई २५०० फुट से ५००० फुट तक है। दक्षिण और पश्चिम की ओर ह्वांगहो नदी की घाटी है। शेष ओर ऊंचे पर्वत हैं। इस प्रदेश में कहीं कोयले की तहें और कहीं चूने के पत्थर की चट्टानें हैं। ऊपर से लोयस मिट्टी बिछी हुई है। जंगलों के कट जाने से यहां पहाड़ गहरे खड्ड हो गये हैं। इनके ढाल नंगे और वीरान हैं। दक्षिणी शान्सी में पहाड़ों का रुख कुछ उत्तर की ओर है और उत्तर की ओर वे पूर्व की ओर मुड़ गये हैं। इधर का सारा प्रदेश नंगा और पीली धूल से भरा हुआ है। हवा भी साफ नहीं मालूम होती है। नदियाँ कुछ भीतर की ओर और कुछ बाहर की ओर बहती है। ह्वांग हो की प्रधान सहायक इस प्रदेश में फेनहो नदी है। कुछ नदियां पीहो नदी में मिलती हैं। ह्वांग हो की दूसरी सहायक नदी सीन है इसी के किनारे शान्सी प्रान्त की राजधानी तैयुआन है। इधर की जमीन बड़ी उपजाऊ है। सिंचाई हो जाने से बड़ी अच्छी फसलें होती हैं। लेकिन यहां की जलवायु बड़ी विकराल है। इससे यहाँ के मजबूत किसान कड़ी मेहनत के बाद किसी तरह एक फ़सल उगाकर अपनी गुज़र कर पाते हैं। रेलवे के निकल जाने से इधर के छोटे छोटे नगर भी प्रसिद्ध हो गये हैं। केहा (जहाँ पहले मंगोलिया का प्रधान लामा रहता था) में मंगोल खाल और ऊंट के रस्से बेचने लाते हैं। तातुंग में कोयला और सोडा की खानें हैं। काल्गन में कफिला मार्गों का मेल होता है। प्रधान मार्ग यहाँ से उर्गा को जाता है। शान्सी प्रान्त के प्रधान नगर रेल के पास पिंगतिंग खनिज और व्यापार का केन्द्र है। पिंगयाओ से होनान का प्रान्त को सामान जाता है। जेहोल नगर से प्राचीन समय में सम्राट शिकार के लिये जाया करता था।

उत्तरी ऊँचे भाग का पूर्वी प्रदेश

इस प्रदेश में मंचूरिया का बड़ा भाग शामिल है। इसी में फेंगटियन (शेंकिंग) किरीन और हेलुंग क्यांग (अमूर नदी का प्रान्त, चीनी लोग अमूर नदी को हेलुंग क्यांग या काले साँप की धारा कहते हैं)। शानटंग (पहाड़ के पूर्व का प्रान्त) के पहाड़ी भाग को पिचली की खाड़ी ने मंचूरिया से और ह्वांग हो की घाटी ने शान्सी से अलग कर दिया है। फिर भी वे दोनों एक दूसरे से मिलते जुलते हैं। मंचूरिया में मैदान और पहाड़ दोनों ही हैं। मंचूरिया में पश्चिम की ओर वाले पहाड़ खिंगन पर्वत के अंग हैं। इनकी औसत ऊंचाई ४००० फुट है। चोटियाँ ५५०० फुट तक ऊँची हैं। मंगोलिया की ओर वाला ढाल क्रमशः है। पूर्व के मैदान की ओर ढाल एक दम सपाट है। उत्तर की ओर अधिक आगे यावलोनाई पर्वत है। खिंगन और यावलोनाई के बीच में अमूर नदी की घाटी है। खिंगन के उत्तरी भाग का पानी अमूर

नदी में और दक्षिणी भाग का पानी अमूर की सहायक सुंगारी नदी में जा गिरता है। २७०० फुट की उँचाई पर पहाड़ों में पेड़ मिलते हैं। मंचूरिया में खेती के लिये बड़ी अच्छी जमीन है। यहाँ कोयला, लोहा, सोना और दूसरे खनिज पदार्थों की भी अधिकता है। उत्तरी मञ्चूरिया का मैदान सुंगारी (दूधिया नदी) और उसकी सहायक नोनी नदी का अंग है। सुंगारी नदी में किरीन तक और नोनी में शिशिहर तक नावें चल सकती हैं। मञ्चूरिया के दक्षिणी मैदान में ल्याओहो और याहलुहक्यांग नदियाँ हैं। उत्तरी और दक्षिणी मैदान के बीच में वृक्ष रहित प्रेरी मैदान हैं, यहाँ चीनी लोग तेजी के साथ बढ़ रहे हैं। पहले वे बड़ी दीवार को पार करने में हिचकिचाते थे। नदियों द्वारा लाई हुई बारीक आग्नेय चट्टानों की उपजाऊ मिट्टी ने इस मैदान को बनाया है। उपजाऊ मैदान के बीच में मुकडन नगर की स्थिति रेलों के मिलने के लिये बड़ी केन्द्रवर्त्ती है। चीनी लोग मुकडन को फेंगटियन कहते हैं। वह ऊँची चारदीवारी से घिरा है। दरवाजे रात के बारह बजे बन्द हो जाते हैं और सवेरे पांच बजे खुलते हैं। दीवारों का घेरा लगभग पांच मील है। जापानी और दूसरे विदेशी लोग दीवार के बाहर नये भाग में बसे हुए हैं।

चीन का बड़ा मैदान

चीन का बड़ा मैदान चिली, शांटंग, होनान, क्यांग्सू, आनह्वे, और हूवे प्रान्तों में शामिल है। इन प्रान्तों में मैदान के अतिरिक्त दूसरे प्रदेश भी शामिल हैं। लेकिन अधिकता प्रायः मैदान की ही है। चीन का यह बड़ा मैदान दो भागों में बाँटा जा सकता है। इसके उत्तरी भाग में ह्वांग हो नदी और दक्षिणी भाग में यांग्जी नदी बहती है।

मैदान का उत्तरी भाग हवा के साथ लाई हुई लोयस और पानी के साथ बह कर आई हुई काँप मिट्टी से बना है। बहुत दूर तक यह मैदान समतल मालूम होता है। नदियों के पानी को रोकने के लिये जगह जगह पर जो बाँध बने हैं वे ही कुछ ऊँचे हैं। चीनी विद्वानों ने नदी की तली को गहरा रखने का बार बार आदेश दिया। लेकिन यहां के लोग नदी की तली को गहरा करना भूल गये। उल्टे उन्होंने बाँध को ऊँचा कर दिया है। कहा जाता है अब से ४००० वर्ष पहले चीन के प्रसिद्ध सम्राट यू ने ९ वर्ष नदी को गहरा करने में लगाये। लेकिन उसे सफलता न मिली। फिर आगे चलकर पड़ोस की पहाड़ियों और पठारों से घिस कर इतनी अधिक मिट्टी आने लगी कि नदी के पानी को बांधों के भीतर रोक रखना असम्भव हो गया। बार बार बाढ़ आने से गढ़े सब कहीं मिट्टी से भर गये इसलिये पीछे से पानी को फैलने का अवसर मिल गया। पिछली बार की बाढ़ों में मैदान एक बड़ा भीतरी समुद्र सा बन जाने लगा। ह्वांगहो की बाढ़ में असंख्य पशु, मनुष्य मर जाते हैं। बाढ़ के बाद नदी अपने पुराने मार्ग पर नहीं लौट पाती है। शांटंग की पहाड़ियों ने नदी का रुख अक्सर बदल दिया। कभी वह पीले सागर में और कभी वह पिचली की खाड़ी में गिरने लगी। लगभग ४०० मील चौड़े मार्ग में नदी कभी कहीं और कभी कहीं बहती रहती है। लेकिन बाढ़ के बाद नदी बहुत उपजाऊ मिट्टी छोड़ जाती है। बाढ़ में यह मैदान एक समुद्र सा मालूम होता है। फसल के दिनों में यह हरा भरा हो जाता है। और दिनों में यह भूरा और वीरान मालूम पड़ता है।

ह्वाँगहो का खुश्क और ठंडा मैदान यांग्जी के गरम और तर मैदान से एकदम भिन्न है। बनावट दोनों की एक सी है, लेकिन जलवायु का अन्तर होने से दोनों की उपज में भारी भेद हो गया है। ह्वाँगहो के मैदान में गेहूँ की फसल प्रधान है। दक्षिणी मैदान में गेहूँ की जगह धान पैदा होता है। यहाँ बैल की अपेक्षा भैंस से अधिक काम लिया जाता है। यह मैदान बड़ा घना बसा हुआ है। जहाँ होनाम, शांटंग और चिली के प्रान्त मिलते हैं वहाँ आबादी और भी अधिक घनी है। यांग्जी का डेल्टा अत्यन्त घना बसा हुआ है।

उत्तरी मैदान में ह्वाँगहो के अतिरिक्त और कई नदियाँ हैं। ल्वानहो मंचूरिया का पानी बहा लाती है। पीहो नदी चिली प्रान्त की प्रधान नदी है। ह्वेहो नदी बीच के जल विभाजक का पानी बहा लाती है। इसमें भी भयानक बाढ़ आती है। पहले यह

हाँगहो नदी में मिलती थी। १८५२ से यह क्यांगसू प्रान्त की हुगजे झील में अलग गिरने लगी है।

शाही नहर (ग्रांड केनाल) चीन के मैदान में विशेष उल्लेखनीय है। यह नहर चेक्यांग प्रान्त के हाँगचाओ नगर से चिली प्रान्त के टियन्ट्सिन नगर तक जाती है। इसका सब से पुराना भाग शाही नदी के नाम से प्रसिद्ध है। यह अब से ढाई हजार वर्ष पहले बना था।

इस मैदान में शहरों की संख्या अधिक है। वे प्रायः सभी पुराने हैं। पेकिंग शहर उत्तरी सिरे पर है। शांटांग में ताईशान के उत्तरी ढालों पर सीनान शहर स्थित है। सीनान और पेकिंग के बीच में चिली प्रान्त की राजधानी चाओतिंग शहर है। टियन्टसिन शहर नया है। टियन्टसिन और ताकू मिलकर पीहो नदी के मुहाने पर पेकिंग का बन्दरगाह बनाते हैं।

मैदान के मध्य में पेकिंग शहर है। यह कई बार चीन की राजधानी रह चुका है। वर्तमान चीन के लिये यांग्जी घाटी के शहर अधिक महत्व के हैं। हाँगहो में नावें केवल कहीं कहीं (सो भी कठिनता से) चल सकती हैं। यांग्जी में मुहाने (शंघाई) से १००० मील दूर इचाँग तक नावें चलती हैं। हांकाओ तक समुद्री जहाज़ चलते हैं। नानकिंग (दक्षिणी राजधानी) को छोड़ कर प्रायः सभी शहर बाहरी व्यापार के कारण बढ़ गये हैं। शंघाई इन सब में बड़ा है। इस प्रकार मैदान के उत्तरी भाग का ऐतिहासिक महत्त्व बड़ा है। दक्षिणी भाग का व्यापार और वर्तमान राजनैतिक महत्त्व अधिक है।

दक्षिणी पर्वतीय प्रदेश का पश्चिमी भाग इस प्रदेश के पहाड़ क्विनलुन पर्वत के सिलसिले हैं और पामीर से आरम्भ होकर जापान तक फैले हुए हैं। पश्चिम की ओर इन्हें सिनलिंग पर्वत कहते हैं। पूर्व में उन्हें फून्यू कहते हैं। वे पश्चिम से पूर्व को चले गये हैं। अन्त में वे कुछ दक्षिण की ओर मुड़ गये हैं। वे ह्वांग हो और यांग्जी के बीच में जल विभाजक बनाते हैं और उत्तरी चीन से दक्षिणी चीन को जाने वाले मार्गों को दुर्गम कर देते हैं। इन पर्वतों में दो ही अच्छे दर्रे हैं। एक दर्रा सिनलिंग को फून्यू शान (पर्वत) से अलग करता है। अधिक पश्चिमी दर्रा अधिक दुर्गम है। इस दर्रे में होकर वी घाटी से हान घाटी को मार्ग गया है।

इस दक्षिणी पर्वतीय प्रदेश में वेगवती नदियाँ, सपाट पहाड़ियाँ और घने वन हैं। इसके उत्तरी ढाल अधिक सपाट हैं। दक्षिण की ओर ढाल क्रमशः है और हानहो को घाटी में मिल गया है। अधिक पूर्व की ओर वन कम हो गया है। फून्यू शान में सिन्दूर के छोटे छोटे पेड़ हैं। इन की पत्तियाँ रेशम के कीड़ों को खिलाई जाती हैं।

पश्चिमी सेच्वान पठार के पूर्व का प्रदेश—पश्चिमी सेच्वान और यूनन के पूर्व में पुरानी घाटियाँ और तटीय धारायें हैं। सिनलिंग के दक्षिण में हान हो की तंग घाटी है जो दक्षिण में तापाशान पर्वत से घिरी हुई है। तापाशान के दक्षिण में सेच्वान का लाल बेसिन है। यहाँ मध्यकालीन (मेसोज़ोइक युग का) लाल बलुआ पत्थर है। इसके घिसने से जो मिट्टी बनी है वह बड़ी उपजाऊ है। मार्को पोलो ने यहाँ के चेंग्टू (सिन्दफू) शहर की बड़ी प्रशंसा की है। मीन नदी इधर की ज़मीन को भी सींचती है और यहाँ के शहर को याँग्जी घाटी से मिलाती है। यह मैदान ९० मील लम्बा और ७० मील चौड़ा है। यहाँ धान गेहूँ मकई तम्बाकू और चाय खूब होती है। शहतूत के पेड़ों की अधिकता से रेशम बहुत तैयार होता है। इसके पूर्व में नानलिंग पर्वत है। नानलिंग पर्वत इस प्रदेश को यांग्जी घाटी से अलग करता है। यहाँ मीलिंग प्रधान दर्रा है। यांगजी और सीक्यांग के बीच में पहाड़ी रुकावट है। यांगजी चीन देश में अत्यन्त उपयोगी जलमार्ग बनाती है। सीक्यांग का डेल्टा प्रसिद्ध है। यांगजी की लम्बाई लगभग २९०० मील है। पठार के सिरे (पिनशान) से समुद्र तट तक नदी की लम्बाई लगभग १७५० मील है। चीनी नावें पिनशान से ५० मोल नीचे सूईफू तक आती हैं। चुंगसिंग और इचांग के बीच में धुआँकश नावें (स्टीमर) चलती हैं। नदी के निचले मार्ग में कई झीलें हैं। पहले झीलों की संख्या और भी अधिक थी। यह झीलें नदी की बाढ़ को रोक लेती हैं। लेकिन नदी अपने साथ लाई हुई मिट्टी डाल डाल कर झीलों को भरती जा रही है। फिर भी नदी की धारा बहुत तेज़ है।
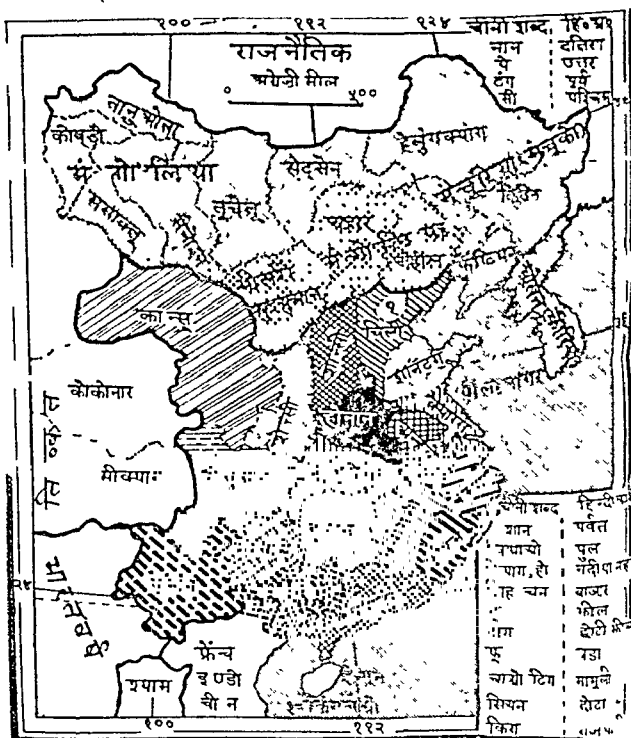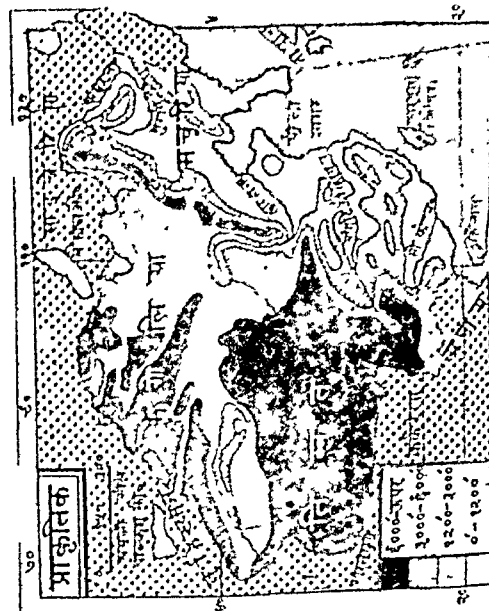
यांगजी के ऊपरी भाग में बाईं ओर से मीन क्यांग और कालिंग क्यांग नदियाँ मिलती हैं। दाहिने किनारे पर होक्यांग और वूक्यांग मिलती हैं। निचले भाग में हानक्यांग, युआन क्यांग, स्यांग क्यांग, और कानक्यांग नदियाँ यांगजी में आकर मिलती हैं। रेडवेसिन में चेंगटू के अतिरिक्त चुंगकिंग प्रधान व्यापारिक नगर है।

क्वेचाओ और समीप वर्त्ती प्रदेश

क्वेचाओ प्रान्त का ७/८ भाग पहाड़ी है। मार्ग अत्यन्त दुर्गम है। क्वेचाओ का अर्थ है मूल्यवान जिला। यहां खनिज पदार्थों की अधिकता है लेकिन अच्छे मार्गों के अभाव से यहां के खनिज और पहाड़ों के लकड़ी का पूरा उपयोग नहीं हो सका है। झीलों के उत्तर का प्रान्त हूपे और दक्षिण का प्रान्त हूनान है।

हूनान के नीचे यांगजी के दक्षिणी किनारे पर क्यांग्सी प्रान्त स्थित है। इस प्रान्त की प्रधान नदी कानक्यांग है जो कई धाराओं में बँट कर पोयोंग झील में गिरती है। यह झील लगभग ९० मील लम्बी और २० मील चौड़ी है। कानक्यांग नदी बहुत तेज बहती है। फिर भी कानचाओ नगर तक इसमें नावें चल सकती हैं। इस प्रान्त की नई पहाड़ियां वन से ढकी हैं। फिर भी यहाँ लकड़ी की कमी है और पश्चिमी प्रान्तों से बहुत सी लकड़ी मँगानी पड़ती है।

आन्हे, क्यांग्सू और चेक्यांग प्रान्त यांगजी के डेल्टा में स्थिति है। इस के उत्तर में होशान हांग हो के पानी को अलग करता है। यही किनलुन का अन्तिम सिरा है। यह डेल्टा अत्यन्त घन बसा है। इस आने जाने के मार्ग भी चीन भर में अच्छे हैं। डेल्टा का कारबारी और व्यापारिक केन्द्र शंघाई है। धान, रेशम और कपास यहां की प्रधान उपज हैं। लेकिन चीनी लोग हांगचाओ और सूचाओ नगरों को उत्तम समझते है। एक चीनी कहावत है कि "ऊपर स्वर्ग और नीचे सूचाओ और हांगचाओ है"

दक्षिणी पूर्वी तटीय प्रदेश

चीन का समस्त समुद्र तट लगभग ४५०० मील लम्बा है। लेकिन दक्षिणी चेक्यांग और फूकेन का समुद्र तट भीतरी भाग से एक दम अलग पड़ गया है। इसके पश्चिम में ऊंची पर्वत श्रेणियां हैं। भीतर पहुँचने के मार्ग बड़े दुर्गम हैं। बहुत बड़े मार्ग में न तो सड़कें हैं न जल मार्ग की सुविधा है। पहाड़ों पर केवल पगडंडियां है। नदियां छोटी हैं। समतल मैदान बहुत ही कम है। मीन और हान-क्यांग कुछ बड़ी नदियां हैं। इन्होंने अपने पीछे की पहाड़ी जमीन को भी काट लिया है। क्युलुंग क्यॉग (नदी) एमाय शहर के पास समुद्र में गिरती है। केवल इस नदी में कुछ दूर तक स्टीमर चल सकते हैं। जीने दार पहाड़ी ढालों पर जहां कहीं पानी मिल जाता है वहां धान की खेती होती है। धान के खेतों के ऊपर चाय के बगीचे हैं। तटीय प्रदेश में घनी आबादी है। अधिकतर लोग नावों पर घर बना कर रहते हैं। कुछ लोग पूर्वी डच द्वीप समूह में मजदूरी करने चले जाते हैं।

सी क्यांग बेसिन

यह बेसिन क्वेचाओ प्रान्त के दक्षिणी भाग और क्वांसी और क्वांटंग प्रान्तों में स्थित है। पश्चिमी भाग पहाड़ी है। पूर्वी में डेल्टा प्रदेश है। इधर का तट बहुत कटा फटा है। सीक्यांग नदी यूनन प्रान्त के पठार से निकलती है। समशुई के पास इसका डेल्टा आरम्भ होता है। इसकी उत्तरी शाखा कैन्टन कहलाती है। चीन की दूसरी नदियों की तरह सीक्यांग भी अपने ऊपरी भाग में बहुत तेज बहती है। उसके लम्बे मार्ग में कई सहायक नदियाँ उसमें आ मिलती हैं। युहक्यांग नदी यूनन के पठार से निकलती है और वूचाओ से लगभग १०० मील की दूरी पर सीक्यांग में मिलती है। नानिग से ऊपर सीक्यांग नदी मिलती है। ल्यूक्यांग, क्वेक्यांग और तुंगक्यांग दूसरे किनारे पर मिलती हैं। इस प्रदेश का बहुत बड़ा भाग पहाड़ी है। उत्तर मे नानलिग पर्वत सीक्यांग और यांगजी के बीच में जल विभाजक बनाते हैं। पश्चिम की ओर यूनन पठार एक ऊँची छत की तरह उठा हुआ है। तट से कुछ अलग हांग कांग द्वीप ब्रिटिश अधिकार में हैं। हैनान द्वीप चीन के हाथ में हैं।

जल-वायु

चीन देश उत्तर से दक्षिण तक २५०० मील चौड़ा और पूर्व से पश्चिम तक २००० मील लम्बा है। इस विशाल देश में कहीं नदियों के डेल्टा, कहीं ऊँचे पठार और कहीं अत्यन्त ऊँचे पहाड़ हैं। इसी से इस विशाल देश में कई प्रकार की जलवायु है।

हिन्दुस्तान की तरह चीन एक मानसूनी प्रदेश है। यहाँ मौसम मौसम में जल-वायु बदलती है। शीतकाल में मंगोलिया और तरीम बेसिन में हवा अत्यन्त ठंडी और भारी हो जाती है। इसलिये हवायें यहाँ से बाहर की ओर को चलती हैं। वे प्रायः उत्तर-पश्चिम की ओर से बड़े वेग से चलती हैं। धूल भी खुश्क और ठंडी होती है और समुद्र-तट को भी ठंडा कर देती हैं। उत्तरी चीन की बड़ी बड़ी नदियाँ जम जाती हैं। ३२ उत्तरी अक्षांश तक तापक्रम घट कर ३२ अंश फारेन हाइट हो जाता है जिससे पानी जम कर बरफ हो जाता है। शीतकाल में उत्तरी चीन खुश्क रहता है लेकिन दक्षिणी चीन में कुछ पानी बरस जाता है। ग्रीष्म ऋतु में रेगिस्तान और स्टेपी प्रदेश अत्यन्त गरम हो जाता है। गरम हवा फैलती है और हलकी हो जाती है। हवा का दवाव सब कहीं बहुत हलका हो जाता है। समुद्र को अधिक भारी हवायें इस ओर खिंच आती हैं। वे अपने साथ बहुत सी भाप लाती हैं। गरमी में प्रायः सारे चीन में हवायें दक्षिण और पूर्व की ओर से आती हैं और सितम्बर महीने तक चलती रहती हैं। लेकिन चीन में गरमी की हवाओं में शीतकाल की हवाओं का सा वेग नहीं होता है। फिर भी दक्षिणी चीन में ४० इञ्च से ऊपर पानी बरसता है। उत्तरी भाग में पहुँच कर हवायें कुछ खुश्क हो जाती हैं। पेकिंग के पड़ोस में २५ इञ्च से अधिक वर्षा नहीं होती है। जुलाई महीने में सब से अधिक वर्षा होती है। वर्षा हर रोज नहीं होती है। एक दिन पानी बरसता है तो दो तीन दिन आस्मान साफ रहता है। अगस्त के महीने में मध्य चीन के तट पर प्रबल तूफान आते हैं जो जहाजों के लिये बड़े भयानक होते हैं।

जल-वायु के विचार से चीन के तीन प्रधान भाग हैं :—

१—उत्तरी चीन—यह भाग शीतकाल में अत्यन्त ठंडा और खुश्क रहता है। जनवरी में तापक्रम सब कहीं ३२ के नीचे गिर जाता है। स्थल की ओर से आने वाली आँधियाँ बड़े जोर से चलती हैं और अपने साथ बहुत सी पीली मिट्टी उड़ा लाती हैं। ग्रीष्म ऋतु प्रायः दक्षिणी चीन के समान गरम हो जाता है। इसी ऋतु में पानी बरसता है। वर्षा सब कहीं २० इञ्च से कम होती है।

२—मध्य चीन—यह भाग शीतकाल में बहुत ठंडा रहता है। समुद्र-तल पर प्रायः पानी नहीं जमने पाता है। वर्षा प्रायः ग्रीष्म ऋतु में होती है। चक्करदार हवायें कुछ पानी सरदी में भी बरसा जाती हैं।

३—दक्षिणी चीन—यह भाग गङ्गा की घाटी की तरह गरम और नम है। शीतकाल में कुछ जाड़ा पड़ता है। लेकिन जाड़ा इतना अधिक नहीं होता है कि फसल न उग सके। इसी से दक्षिणी चीन में साल में कई फसलें उगती हैं।

वनस्पति

उत्तरी और मध्य चीन के बहुत बड़े भाग में वन ऐसे नष्ट हो गये हैं कि सब कहीं वीरान और नंगी जमीन नजर आती है। विकराल ठंड में तापने और भोजन बनाने के लिये ईंधन की सब कहीं कमी रहती है। मन्दिरों के पड़ोस को छोड़ कर और कहीं पेड़ नहीं रह पाते हैं।

नानशान, सिनलिंग पर्वतों और सेचुआन और यूनन के पठारों पर काफी घना जंगल है। ऊँचे भागों में ठंड सहने वाले देवदारु और दूसरे पेड़ हैं। दक्षिणी भाग में उष्ण कटिबन्ध के वन हैं। हैनान द्वीप और दक्षिणी-पूर्वी तट पर कपूर के पेड़ बड़े उपयोगी हैं। बाँस कई भागों में मिलता है।

कृषि

भारतवर्ष की तरह चीन भी कृषि प्रधान देश है। प्रधान चीन और भारतवर्ष का क्षेत्र-फल प्रायः बराबर है। लेकिन चीन में पहाड़ी भूमि अधिक है। इसलिये

खेती के योग्य उपजाऊ भूमि कुछ कम बची है। अच्छी भूमि का कुछ भाग कब्रों ने घेर रक्खा है। चीनी लोग अपने पूर्वजों को बहुत मानते हैं वे स्वयं कितना ही कष्ट सह लेंगे, अपने जानवरों को भी कठिनाई से रख लेंगे लेकिन वे अपने पूर्वजों की कब्रों को कभी न छेड़ेंगे। इसीलिये घाटियों में बड़ी घनी आबादी है, कहीं कहीं तो एक वर्ग मील में ३००० मनुष्य और १००० पशु किसी तरह गुजर करते हैं।

चीन की प्रधान फसल धान, गेहूँ, और ज्वार बाजरा है। धान दक्षिणी और मध्य चीन की कछारी चिकनी मिट्टी में अधिक होता है। चीन की समस्त कृषिभूमि का लगभग ३० फीसदी भाग धान में लगा हुआ है। दक्षिणी भाग में अक्सर घाटी की गरम और तर भूमि में धान और ऊपर के पहाड़ी ढालों पर चाय के बग़ीचे हैं। खेतों और बगीचों के बीच में गांव बसे हैं। स्त्रियों और बच्चों की टोलियाँ सबेरे ही गांव से टोकरियाँ लेकर पहाड़ी ढालों पर चाय के मुलायम पत्ते तोड़ने आती हैं। दिन भर पत्ते तोड़कर वे शाम को इन्हें अपने घर ले जाती हैं। जब चाय की झाड़ियाँ तीन वर्ष की हो जाती हैं तब उन के मुलायम पत्ते तोड़े जाते हैं। पत्ते साल में तीन बार अप्रैल, जून और अगस्त में तोड़े जाते हैं। आखिरी बार की पत्तियाँ इतनी अच्छी नहीं होती हैं। इस तरह चाय की झाड़ी आठ दस वर्ष तक पत्ती देती रहती है। चाय तैयार करने के चीन में कुछ कारखाने हैं। लेकिन अधिकतर चाय अलग अलग घरों में तैयार की जाती है। यांगसी नदी के पड़ोस की पहाड़ियों पर सब से अधिक चाय मिलती है। इसी घाटी में धान के असंख्यों खेत हैं। पानी भीतर भरा रहे इसलिये धान के खेत की मेंड़ें कुछ ऊँची कर दी जाती हैं। दक्षिणी चीन और दक्षिणी पूर्वी तटीय प्रदेश में जितनी खेती का क्षेत्रफल है उसके ⅔ भाग में धान होता है। चावल ही यहाँ के लोगों का प्रधान भोजन है। यांग्सी घाटी में कुछ चावल और कुछ गेहूँ होता है। उत्तरी चीन में जहाँ ३० इंच से कम पानी बरसता है वहाँ धान कम होता है। उसके स्थान में गेहूँ मिलता है। उत्तरी चीन के बड़े मैदान की उपजाऊ जमीन और खुश्क जलवायु गेहूँ की खेती के लिये बड़ी अनुकूल है। वीहो की घाटी और मंचूरिया में बहुत गेहूँ होता है। प्रतिवर्ष प्रायः डेढ़ करोड़ टन गेहूँ चीन में पैदा होता है।

जहाँ साल में ४० इंच से कम पानी बरसता है वहीं ज्वार बाजरा की खेती भी होती है। उत्तरी पूर्वी चीन और मंचूरिया में इसकी खेती अधिक होती है।

हाल में सोयाबीन की खेती भी बहुत बढ़ गई है। यह बहुत ही पुष्ट कारक भोजन होता है। मध्य चीन और उत्तरी चीन में कपास भी बहुत होती है। पोस्त (अफीम) की खेती पहले से बहुत घट गई है। उष्णार्द्र जलवायु में तम्बाकू भी बहुत होती है।
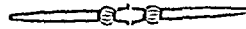
पशु-पालन

चीन के पालतू पशु

सुअर चीन का सब से प्रसिद्ध पालतू पशु है। इस पशु का प्रत्येक चीनी के जीवन के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। यह उन भागों में पाला जाता है जहाँ बौद्ध रहते हैं और उन भागों में नहीं पाला जाता है जहाँ मुसलमान रहते हैं। चीनियों में सुअर का मांस अच्छा भोजन समझा जाता है। यद्यपि यह पशु साधारणतया प्रत्येक स्थान में पाया जाता है, परन्तु कुछ ऐसे स्थान चीन में हैं जहाँ विशेष कर इसका व्यापार होता है; जैसे, उत्तरी चीन में किरीन सूबे का मध्यवर्ती भाग और सिंगटाऊ के निकटस्थ प्रदेश, दक्षिणी हेनान द्वीप और क्वांगसी प्रदेश में ऊकाऊ तक के सामने का भाग। इस प्रकार जीवित और मरे हुए सुअरों का व्यापार किया जाता है। बेचारे जानवर टोकरियों में भर कर समुद्र-यात्रा के लिये रवाना किये जाते हैं।

यह समझना कठिन नहीं है कि सुअर चीनियों का अमूल्य धन क्यों माना जाता है। इस पशु के पालने में कोई विशेष ध्यान देने की आवश्यकता नहीं पड़ती। जो वस्तु मानवीय भोजन के लिये अति तुच्छ है सूअर के प्रयोग में आती है। सूअर बहुत से बच्चे (बहुधा अठारह) देते हैं। जब फसलें कट जाती हैं, सुअर खेतों में छोड़ दिये जाते हैं और फिर बचे खुचे गिरे हुए अनाज के दानों को खाकर मोटे होते हैं। वसन्त ऋतु में सुअरों को कन्द के खेतों में घूमने और खाने की आज्ञा मिल जाती है। इसके दो कारण हैं। प्रथम, कंद खाकर सुअर मोटे पड़ें ताकि अच्छा दाम मिले और दूसरे, चीनी सुअर के मांस का कंद से अच्छा भोजन समझते हैं।

यद्यपि लगभग २५,००० घोड़े प्रति वर्ष बाहर से चीन में मँगाये जाते हैं, तिस पर भी यह पशु चीनियों में पालतू नहीं है। घोड़ा चीन के प्रत्येक स्थान में पाया जाता है। परन्तु दक्षिणी चीन में, क़स्बों में और युद्ध के कामों को छोड़ कर, इसका विशेष प्रयोग नहीं किया जाता है। उत्तरी चीन में घोड़ा कृषि सम्बन्धी कार्यों में आशा से कम प्रयोग किया जाता है। निस्सन्देह, इसका यह कारण है कि इस काम के लिये अच्छे घोड़े नहीं मिलते। चीन में कई नस्ल के घोड़े हैं जिनमें, उन नस्लों को छोड़ कर जो हाल ही में बाहर से लाये गये हैं, मंगोल और जेक्वान टट्टू (Szechwan) अति प्रसिद्ध हैं। मंगोल टट्टू बहुत मज़बूत होता है और अच्छी चरागाहों में चरना पसन्द करता है। यदि अच्छे सवार इसका प्रयोग करें और इसको उचित विश्राम दें तो यह काफी दूर तक सवारी के काम में लाया जा सकता है। यह पशु दक्षिणी चीन की गर्म जलवायु भली भाँति सहन कर सकता है। इसमें बहुत कम सन्देह है कि यह टट्टू प्रेज्वालस्की (Prjewalski's) के घोड़े की नस्ल और कई और नस्लों से मिल कर बना है। जेक्वान टट्टू मंगोल टट्टू से हलका और शानदार जानवर होता है। इसकी नस्ल के विषय में सन्देह है।

भारी शरीर होने के कारण काठी से लदा हुआ मंगोल टट्टू किसी काम में नहीं लाया जा सकता। अतएव यह सवारी के काम आता है। चीनी सरपट दौड़ने वाले जानवरों का अधिक मान करते हैं। यह

कहा जाता है कि नर घोड़ों में सरपट दौड़ने की आदत परम्परा से चली आती है। पर यह बात मादा पशुओं में नहीं पाई जाती है। स्वाभाविक सरपट जाने वाले घोड़ों का दाम सिखाये हुओं से अधिक मिलता है। चीनी घोड़ों से खच्चर पैदा करते हैं और कभी कभी गधों को मंगोल टट्टुओं के खरके में छोड़ देते हैं ताकि ये घोड़ी से बच्चे पैदा करें। खच्चरों का सब से बड़ा बाजार, जहाँ से ये पशु समस्त चीन में भेजे जाते हैं, पश्चिमी शान्टंग में है। घोड़े की तरह खच्चर बहुधा सवारी के काम में लाया है। परन्तु लम्बे पैर होने के कारण गाड़ी खींचने के काम में भी लाया जाता है। उत्तरी चीन में ऐसी गाड़ियाँ जिनमें एक से चार तक खच्चर जुते रहते हैं, बहुधा इस्तेमाल की जाती हैं। खच्चर कभी कभी टट्टू या गधे के साथ भी जोता जाता है।

गधा समस्त उत्तरी चीन में प्रयोग किया जाता है। खच्चर के साथ जोते जाने के अतिरिक्त, यह पशु बहुधा बोझा ढोने के काम आता है। ये छोटे छोटे और मजबूत जानवर कोयला से लेकर खाने की वस्तुएँ तक ढोते हैं और सवारी के काम तथा हल और गाड़ियाँ खींचने के काम भी आते हैं।

बैल चीन में खेती करने के काम आता है। यह चीन के प्रजातन्त्र-प्रदेश के अधिकतर भागों में पाया जाता है। ऊपरी प्रदेश में कृषक इसको पालते हैं। उत्तरी सूबों के बाहर जल के भैंसे (Water-buffalsoe) इसका काम देते हैं। सर्वत्र गाय बैल मांस और दूध देने के काम आते हैं। चीन के मुसलमान गाय के मांस का तो प्रयोग करते हैं परन्तु दूध का कभी नहीं। बैल चीन का मुख्य पशु है। यह वह सब काम करता है जो मनुष्य से नहीं हो सकता। बैल उत्तरी चीन की भारी से भारी गाड़ियाँ खींचता है, हल जोतता है और उस पहिये को घुमाता है जो फारस में पनचक्की उठाने के काम आता है।

चीनी अपने पशुओं पर आवश्यकता से कम ध्यान देते हैं। उत्तर में ये पशु पशुशाला में बुरी तरह अपना जीवन व्यतीत करते हैं। पशुशाला में छप्पर तक नहीं होती है। प्रातःकाल और सायंकाल पशु सड़कों के किनारे और क़ब्रिस्तान के समीपवर्ती प्रदेशों की घास चर कर अपना पेट भरते हैं और इस भोजन पर रह कर भारी से भारी काम करते हैं। चीन के पशु बीमारियों से दूर रहते हैं।

दक्षिण में पानी के भैंसे बैल का काम करते हैं। यह पशु बैल से मजबूत होता है और दलदल में काम कर सकता है। अतः बैल सूखे खेतों में हल चलाता है और भैंसे दलदली भागों में हल चलाते हैं। यह पशु बिना पानी के नहीं जीवित रह सकता। मध्य या दक्षिणी चीन के किसी गाँव के बाहर वह तालाब बहुत अच्छा लगता है जहाँ ये भैंसे दिन में काम करके जाते हैं, पानी में डुबकी लगाते हैं और जुगाली करते हैं। इस तालाब के अतिरिक्त इन भैंसों का कोई विशेष ख्याल नहीं किया जाता है। लड़के सड़कों के किनारे इन्हें चराते हैं। परन्तु दक्षिणी चीन में खूब चरागाह होने के कारण इन भैंसों को बैलों से अधिक खाने को मिल जाता है।

यद्यपि याक पश्चिमी चीन में प्रयोग किया जाता है, तो भी तिब्बत की सभ्यता के साथ इसका घनिष्ठ सम्बन्ध है और यह उन्हीं भागों में पाया जाता है जहाँ का जलवायु इसके अनुकूल है। ऊँट उत्तरी चीन का मुख्य पशु होते हुए भी मंगोल सभ्यता से अधिक सम्बन्ध रखता है। कदाचित् पेकिंग से कालगन और टाटंग (Tatung) तक को रेल ने ऊँट के प्रयोग को बन्द किया है। प्राचीन काल में कारवाँ पेकिंग में इकट्ठा होता था। अब व्यापारियों के एकत्रित होने का स्थान कालगन हो गया है। कालगन में लाकर ऊँटहारे अपने पशुओं को दक्षिण की पथरीली जमीन में कष्ट नहीं देना चाहते। दक्षिण में रेल बन्द हो जाने से ऊँट अधिक बढ़ गये हैं।

भेड़ और बकरियाँ चीन के अधिकांश भागों में पाई जाती हैं और विशेषतः उत्तरी प्रदेश के पहाड़ी भागों और कुछ तटस्थ प्रदेश के पड़ोस में पाई जाती हैं। यद्यपि प्रोफेसर शूटहिल का कथन है कि भेड़ें (यांग्जी) के दक्षिण में (उन भागों को छोड़ कर जहाँ बाहर से लाई गई हैं) नहीं पाई जाती हैं, परन्तु आज दक्षिणी चीन में इनकी बहुतायत है। यद्यपि दक्षिणी चीनी भेड़ों का माँस नहीं पसंद करते परन्तु इसमें कोई संदेह नहीं कि भेड़ों का उत्तरी चीन की प्राचीन सभ्यता के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है।

ला फ्ल्यूर (La Fleur) और फोस्क्‍ (Foscue) के अनुमानानुसार १९१८ ई० में चीन में कुल वाईस लाख भेड़े थीं। उत्तर की मुसलमान जातियों और मंगोलों के जीवन के साथ भेड़ों का घनिष्ट सम्बन्ध हो गया है और कुछ भागों में इनका माँस अच्छा भोजन समझा जाता है।

कुत्ता अधिकांश चीन में पाया जाता है। वह चौकसी करता है और सड़कें भी साफ करता है। यद्यपि सुअर सव कुछ खाने के लिये प्रसिद्ध हैं परन्तु कुत्ते इस वात में इनसे भी वाजी मार ले गए हैं।

इन पशुओं से यह प्रकट हो जाता है कि उत्तरी और दक्षिणी चीन की सभ्यता में कितना वड़ा अन्तर है। ऊसर में रहने वाले पशु जैसे ऊँट, घोड़े, गधे, भेड़ और वकरियाँ उत्तरी चीन के पशु हैं और ऊँट को छोड़ कर सव के सव अधिकांश चीन में वढ़ गए हैं। सुअर जो जंगली पशु है सर्वत्र पाया जाता है। उत्तरी और दक्षिणी चीन के वैलों में अच्छा अन्तर है। सुअर और पानी के भैंसों को छोड़ कर जो दक्षिण के पशु हैं, और सव पालतू पशु वाहर से दक्षिणी चीन में लाए गए हैं और अव भी उत्तरी चीन की सभ्यता का इतना वड़ा प्रभाव पड़ते हुए भी पशु अच्छी तरह दक्षिणी चीन में नहीं वढ़ पाए हैं।

मुर्गियाँ इत्यादि पालना

चीन में मुर्गियाँ पालने का पेशा पुराना है और अव सर्वत्र फैल गया है। चीनी मुर्गियाँ, वतक और हंस पालते हैं। ये सव के सव पक्षी चीन में लोक प्रिय हो गए हैं। पेपिंग के वतक को छोड़ कर और भांति के वतक अधिकतर दक्षिणी चीन के दलदली रास्तों में पाए जाते हैं। चीनी वैज्ञानिक रीति से और उत्साहपूर्वक पक्षी नहीं पालते। इन्हें इधर उधर दौड़ने की आज्ञा मिल जाती है, यद्यपि समयानुसार इनके पैर भी वँधे रहते हैं। कभी कभी चीन के छोटे लड़के वतक को गाँव के उस भाग में ले जाते हैं। जहाँ इस पक्षी को काफी भोजन मिल जाता है। सर्वत्र अंडों का भोजन में अधिक मान है। उत्तर में मुर्गी के अँडे और दक्षिण में वतक के अँडे पसंद किए जाते हैं। अँडे वहुत वड़ी संख्या में याँग्ज़ी के वंदरों से वाहर भेजे जाते हैं। चीनी वहुत दिन तक रक्खे हुए अँडे वहुत चाहते हैं। अतः इनको या तो चूने में या गाड़ कर रखते हैं। स्वभाव पड़ जाने ऐसे अँडे पर खाने में वहुत स्वदिष्ट लगते हैं।

चीन में कृत्रिम ढंग से अँडे सेने का वर्णन वहुत ही दिलचस्प है। आल सोल्स डे (All Soul's Day) के वाद जो अप्रैल के आरम्भ में पड़ता है, चीनी घर का एक भाग इस काम के लिए तै कर लिया जाता है और दहकती हुई अँगीठी तैयार की जाती है। जव अँडे मिलने का समय आता है, तव ताजे अँडों के आठ हिस्से जिनमें से प्रत्येक हिस्सा १३०० अंडों का होता है एकत्रित किया जाता है। प्रत्येक १३०० अँडों का समूह एक टोकरी में चार इंच मोटी गेहूँ की वालों की तह पर रक्खा जाता है और इन अँडों के ऊपर मुलायम तकियों की तीन तहें सावधानी से रखी जाती हैं। प्रत्येक दिन सवेरे और सायंकाल अँगीठी लकड़ियों से जलाई जाती है। प्रत्येक टोकरी से एक अँडा निकाल कर और हथेली या भौंहों में लगा कर चीनी ठीक गर्मी का अनुमान लगाते हैं। टोकरियों को इधर उधर हटाने से और अँडों को दिन में चार वार उलटने से गर्मी वरावर हो जाती है। छठे दिन अँडों को दरवाजे के एक सूराख के सामने रख कर चीनी देखते हैं कि अँडों का वढ़ना प्रारंभ हुआ या नहीं। सातवें दिन वहुत वड़ी सावधानी की आवश्यकता है। यदि सव जगह का तापक्रम समान न हुआ तो मुर्गी के अँधा हो जाने का डर रहता है। दसवें दिन अँडे फिर देखे जाते हैं और मरे हुए अँडे जो वहुत कम होते हैं हटा लिए जाते हैं। ये वढ़ते हुए अँडे अँगीठी की सव से ऊँची जगह पर, जहाँ गेहूँ की वालों का एक विछौना विछा रहता है, रख दिए जाते हैं। अँडों के ऊपर इस वार तकियों की एक ही परत रहती है। तव वे दिन में दो वार उलटे पलटे जाते हैं। इस वीच में खाली टोकरियाँ फिर ताजे अँडों से भर दी जाती हैं। सत्रहवें दिन अँडे अँगीठी में सव से नीची जगह काग़ज़ की एक पतली तह पर रखे जाते हैं और खुले हुए छोड़ दिए जाते हैं। वीसवें और वाईसवें दिन के वीच अँडों का सेना प्रारंभ हो जाता है। जून के प्रारंभ में जव गेहूँ की फसल आधी तैयार रहती है मुर्गियाँ

निकलने लगती हैं। वतक अठ ईस दिन में और हंस वत्तीस दिन सेए जाते हैं। यद्यपि इस प्रयत्न के लिए आरम्भ में वहुत वड़े धन की आवश्यकता होती है, परन्तु सफलीभूत हो जाने पर वहुत वड़ा आर्थिक लाभ होता है। एक अँडे का मूल्य तीन पैसा और एक दिन की मुर्गी का मूल्य छः या सात पैसा होता है।

इन पालतू पक्षियों को रखने के साथ साथ चीनी कारमोरन्ट पक्षी का वहुत अच्छा प्रयोग करते हैं। यह पक्षी अधिकांश चीन में समुद्री तटों पर और भीतर की दलदली जमीनों पर जंगली दशा में पाया जाता है। चीन और जापान में, अधिकतर चीन में, यह पक्षी मछली मारने के काम आता है। यह पक्षी अव इतनी वड़ी संख्या में पाला जाता है कि चीनी विशेषकर चिहली प्रान्त के निवासी इसे पिंजड़े में पालते हैं और अव यह वहुत स्थानों में प्रांतीय वाजारों में मछली भेजने का वहुत वड़ा जरिया वन गया है। गले के चारों ओर एक छल्ला होने के कारण ये पक्षी मछली नहीं निगल सकते। वड़ी वड़ी नावों पर इनके लिए मचान वने रहते हैं। इन मचानों पर वैठा कर ये मछली पकड़ने के स्थान पर ले जाए जाते हैं। कभी कभी कारमोरन्ट छोटी नौकाओं पर या वाँस पर वैठा कर ले जाए जाते हैं। चीन में मछली मारने के अव दो तरीके हैं। मछवाहा कुछ कारमोरन्टों को समुद्र में फेंक देता है। जव ये पक्षी वड़ी वड़ी मछलियाँ पकड़ लेते हैं और जव इनके झोले छोटी मछलियों से भर जाते हैं तव ये नाव पर लौटते हैं। मछवाहा अपने जाल की सहायता से इन्हें ऊपर उठा लेता है, और फिर मछलियाँ ले कर इन्हें पानी में फेंक देता है। दूसरे तरीके के अनुसार कई नावें काम में लाई जाती हैं। छोटी छोटी नौकाओं पर मछवाहे और कारमोरन्ट रहते हैं और वड़ी वड़ी नौकाओं पर कुछ ऐसे आदमी रहते हैं जो चिल्लाते हैं और पानी पर वड़े वड़े वाँस पटकते हैं ताकि मछलियाँ ऊपर आकर चलने लगें। दिन भर के वाद कारमोरन्ट को उसका भाग दिया जाता है। कारमोरन्ट के पैरों में रस्सी वाँध कर लोग इन्हें मचानों पर रखते हैं और यदि इनका घर पानी से दूर हुआ तो ये वाँसों पर वैठा कर लाए जाते हैं। झील और नदियों के अलावा शांत तट की खाड़ियों में भी कारमोरन्ट का प्रयोग किया जाता है। इनके पर काट लिए जाते हैं ताकि फिर ये उड़ कर भाग न सकें।

कारवार

चीन के कारवार को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं, कृषि और कल कारख़ाने। चीन के ७५ प्रतिशत लोग कृषि पर निर्वाह करते हैं। संसार के कृषि-प्रधान देशों में चीन का दूसरा नम्बर आता है, पहला रूस है, और तीसरा नम्बर भारतवर्ष का है।

कल कारख़ाने का कारवार भी भिन्न भिन्न विभागों में बँटा हुआ है। प्रायः स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार कारवार भी रूप वदलता है। कहीं ईंट वनाने के कारख़ाने हैं, तो कहीं तेल, शराव, आटे की कलें। इसी प्रकार लकड़ी के कारख़ाने, सूती रेशमी तथा ऊनी कपड़ों के करघे आदि। कारीगरी के कारवार देश के भीतरी भागों में वहुतायत से पाये जाते हैं। फ़ीते काढ़ना, दरी कालीन तैयार करना, लकड़ी पर नक्काशी के काम, ये सव चीज़ें वहाँ के कलाकार वड़े सुचारु ढंग से करते हैं।

देहात के कारख़ानों में दो तरह के मजदूर काम करते हैं, एक तो स्थायी दूसरे अस्थायी। कृषि-प्रधान प्रदेशों में अस्थायी ढंग के मज़दूर ज्यादा मिलते हैं, ताकि मौसम आने पर खेत में भी वे अपना काम कर सकें।

क्रमशः करघे और हाथ की मशीनों का चलन मिटता जा रहा है। फलस्वरूप देहात के लोगों में वेकारी और भूख का प्रश्न भी वढ़ता जा रहा है, चीन सरकार के सामने देहात के लोगों की जीविका का प्रश्न भी विकट रूप धारण किये हुए है। इस समस्या को हल करने की कोशिश में सामूहिक ढंग पर खेती करने की योजना की वात भी सोची गई। साम्यवादी इलाक़ों में तो इस ढंग पर खेती हो भी रही है। फिर भी अभी तक खेती करने वाले लोग ग़रीव काश्तकार ही ज्यादा हैं। भारत की तरह वहाँ भी मुनाफा खाने वाले अमीर ज़मींदार ज्यादा हैं, जिनके अधिकार में आधे से ज्यादा खेती की भूमि है। १९३३ के आँकड़े से पता चलता है कि कांगटंग प्रान्त की आवादी के २ प्रतिशत ज़मींदारों के हाथ में ५४ प्रतिशत खेती की भूमि है!

१९२८ के संसार व्यापी आर्थिक संकट (Economic Crisis) के समय वाहरी देशों से २० लाख चीनी मज़दूर वेकारी के कारण चीन में लौट आये। विशेषज्ञों का अन्दाज़ है कि कम से कम ६ करोड़ आदमी चीन में वेकार हैं, और कई लाख व्यक्ति ऐसे हैं जिनके पास भूमि नहीं कि वे खेती कर सकें, यद्यपि अमीर ज़मींदारों के हाथ में ज़मीनें अव भी जा रही हैं।

यूरोपियन तिजारत फैलने के पहले चीन के देहातों में रेशम और चीनी वर्तनों का काम खूव होता था। अव भी सूचो और नानकिंग का रेशम समस्त चीन में प्रतिष्ठा पाता है। रेशम का काम अव धीरे धीरे मशीनों की सहायता से होने लगा है।

चीनी वर्तनों के लिये कियांगसी प्रान्त मशहूर है। सन् १००० में सम्राट के इस्तेमाल के लिये वर्तन

तैयार करने के लिये यहाँ एक कारखाना खोला गया था! कहा जाता है इस कारखाने में उन दिनों १० लाख आदमी काम करते थे। टैपिंग विद्रोह में यह कारखाना विद्रोहियों ने नष्ट कर डाला। चीनी वर्तन के कारखाने अव आधुनिक ढंग पर खोले गये हैं, किन्तु पुराने जमाने के वर्तनों की सी आव और रंग अव उन पर नहीं आता। लगभग ६ लाख पौण्ड के वर्तन वाहर भेजे जाते हैं।

कपड़े का काम कुछ दिनों पहले तक सर्वत्र करघों पर होता था। गाँवों की ग़रीव जनता करघे पर वुने हुए सस्ते कपड़े पहनती थी। किन्तु अव जैसा कि हमने वताया, मशीनों के प्रचार से करघे वन्द होते जा रहे हैं।

जहाँ तक चीन के कारखानों का सम्वन्ध है, वे प्रायः विदेशियों द्वारा ही सञ्चालित हो रहे हैं इन विदेशियों ने कोयला और लोहा आदि कच्चा माल विशेपाधिकार के रूप में ले रक्खा है। चीन का खास कारवार कपड़े और लोहे का है। निम्नलिखित तालिका से हमें देखते हैं।

वर्ष	तकुओं की संख्या
१८९३	२०४, ७१२
१९१३	९८२, ८१२
१९२६	४,०६६, ५८०
१९३०	४,२२२, ९५६
१९३३	४,६११, ३५७

कि ४० साल के अन्दर किस तेजी से कपड़े का कारवार चीन में वढ़ा है। रुई अभी चीन के अन्दर पर्याप्त मात्रा में उगाई नहीं जाती, अतएव रुई वाहर से मँगानी पड़ती है। ४ मन वजन की २४ लाख गाठें प्रति वर्प अमेरिका और हिन्दुस्तान से चीन में जाती हैं।

उत्तर चीन में कोयले की खानें वहुतायत से हैं। शांसी सूवे का ३० हज़ार वर्ग मील करीव करीव कोयले की खानों से भरा है लोगों का अनुमान है कि अकेले शांसी में इतना कोयला है कि वह सारे संसार की आवश्यकता हजारों वर्प तक पूरा कर सकता है। ये कोयले की चट्टानें ४०, ४५ फ़ीट मोटी हैं। ये खानें अकसर पहाड़ियों में हैं, अतएव खान की खुदाई का काम भी वहुत सहल हो गया। कोयले की खान जापानियों और अंग्रेजों के हाथ में है। कोयले की उत्पत्ति का ३३ प्रतिशत चीन की पूंजी द्वारा होती है, ३० प्रतिशत जापानी पूंजी और ११ प्रतिशत अंग्रेजों की पूंजी द्वारा। कोयले वाले प्रान्त जेहोल, शान्सी, चहार, यूनन, हुनान, सिकांग हैं। १९३४ में २॥ लाख टन कोयला खानों से वाहर निकाला गया था। विशेपज्ञों का अन्दाज़ है कि चीन में कुल २॥ खरव टन कोयला खानों में है।

लोहा लियोनिंग और चहार प्रान्तों में मिलता है। वार्पिक निकासी लगभग २३ लाख टन की है। मंचूरिया में भी लोहे की खाने हैं। तांवें की खाने उत्तर चीन में हैं; पर वह गवर्नमेण्ट के अधिकार में हैं, गैर सरकारी कम्पनियों को खान से ताँवा निकालने की इजाजत नहीं है। 'टिन' भी चीन के मुख्य खनिज पदार्थों में से है। २० लाख पौण्ड की कीमत का टिन प्रति वर्प वाहर जाता है। ऐन्टमनी, पारा, नमक आदि की भी तिजारत होती है। मिट्टी के तेल के सोते शान्सी, लियोनिंग, होपाई प्रान्तों में मिलते हैं। वार्पिक निकासी २४ करोड़ गैलन की है। इस तरह मिट्टी का तेल देश की जरूरत पूरी नहीं कर सकता। विदेशों से पेट्रोल, और मिट्टी का तेल मगाँना पड़ता है।

चीन के कारवार की उन्नति के रास्ते में अनेक रुकावटें है। गृह युद्ध, समर नायकों की नादिर शाही, जापानियों का निरीह जनता का शोपण करना, ये सभी वातें ऐसी हैं जो व्यापार की उन्नति नहीं होने देतीं। एक वात और है, जनता की गरीवी जव तक दूर नहीं होती, उनकी जेव में जव तक पैसा नहीं आता, तिजारत भी नहीं वढ़ सकती। जो कुछ थोड़ा वहुत कारवार है भी, वह जापानियों या अन्य विदेशियों के हाथ में है। चीन के प्रस्तुत व्यापारी और महाजन विदेशी कम्पनियों का माल चीन में वेचते हैं। एक प्रकार की दलाली का काम उन्हें करना होता है। मुनाफे की रक़म सव की सव विदेशियों की जेव में जाती है, फिर देश की तिजारत की उन्नति किस तरह हो? विदेशी साम्राज्यवाद फरेव और दगा से भरे हुए सन्धि पत्रों की आड़ में चीन के कच्चे माल

कारबार

चीन के कारबार को हम दो भागों में विभाजित कर सकते हैं, कृषि और कल कारख़ाने। चीन के ७५ प्रतिशत लोग कृषि पर निर्वाह करते हैं। संसार के कृषि-प्रधान देशों में चीन का दूसरा नम्बर आता है, पहला रूस है, और तीसरा नम्बर भारतवर्ष का है।

कल कारख़ाने का कारबार भी भिन्न भिन्न विभागों में बँटा हुआ है। प्रायः स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार कारबार भी रूप बदलता है। कहीं ईंट बनाने के कारख़ाने हैं, तो कहीं तेल, शराब, आटे की कलें। इसी प्रकार लकड़ी के कारख़ाने, सूती रेशमी तथा ऊनी कपड़ों के करघे आदि। कारीगरी के कारबार देश के भीतरी भागों में बहुतायत से पाये जाते हैं। फ़ीते काढ़ना, दरी कालीन तैयार करना, लकड़ी पर नक्काशी के काम, ये सब चीज़ें वहाँ के कलाकार बड़े सुचारु ढंग से करते हैं।

देहात के कारख़ानों में दो तरह के मज़दूर काम करते हैं, एक तो स्थायी दूसरे अस्थायी। कृषि-प्रधान प्रदेशों में अस्थायी ढंग के मज़दूर ज्यादा मिलते हैं, ताकि मौसम आने पर खेत में भी वे अपना काम कर सकें।

क्रमशः करघे और हाथ की मशीनों का चलन मिटता जा रहा है। फलस्वरूप देहात के लोगों में बेकारी और भूख का प्रश्न भी बढ़ता जा रहा है, चीन सरकार के सामने देहात के लोगों की जीविका का प्रश्न भी विकट रूप धारण किये हुए है। इस समस्या को हल करने की कोशिश में सामूहिक ढंग पर खेती करने की योजना की बात भी सोची गई। साम्यवादी इलाक़ों में तो इस ढंग पर खेती हो भी रही है। फिर भी अभी तक खेती करने वाले लोग ग़रीब काश्तकार ही ज्यादा हैं। भारत की तरह वहाँ भी मुनाफा खाने वाले अमीर ज़मींदार ज्यादा हैं, जिनके अधिकार में आधे से ज्यादा खेती की भूमि है। १९३३ के आँकड़े से पता चलता है कि क्वांगटंग प्रान्त की आबादी के २ प्रतिशत ज़मींदारों के हाथ में ५४ प्रतिशत खेती की भूमि है!

१९२८ के संसार व्यापी आर्थिक संकट (Economic Crisis) के समय बाहरी देशों से २० लाख चीनी मज़दूर बेकारी के कारण चीन में लौट आये। विशेषज्ञों का अन्दाज़ है कि कम से कम ६ करोड़ आदमी चीन में बेकार हैं, और कई लाख व्यक्ति ऐसे हैं जिनके पास भूमि नहीं कि वे खेती कर सकें, यद्यपि अमीर ज़मींदारों के हाथ में ज़मीनें अब भी जा रही हैं।

यूरोपियन तिजारत फैलने के पहले चीन के देहातों में रेशम और चीनी बर्तनों का काम खूब होता था। अब भी सूचो और नानकिंग का रेशम समस्त चीन में प्रतिष्ठा पाता है। रेशम का काम अब धीरे धीरे मशीनों की सहायता से होने लगा है।

चीनी बर्तनों के लिये कियांगसी प्रान्त मशहूर है। सन् १००० में सम्राट के इस्तेमाल के लिये बर्तन

तैयार करने के लिये यहाँ एक कारखाना खोला गया था! कहा जाता है इस कारखाने में उन दिनों १० लाख आदमी काम करते थे। टेपिंग विद्रोह में यह कारखाना विद्रोहियों ने नष्ट कर डाला। चीनी बर्तन के कारखाने अब आधुनिक ढंग पर खोलेगये हैं, किन्तु पुराने जमाने के वर्तनों की सी आब और रंग अब उन पर नहीं आता। लगभग ६ लाख पौंड के वर्तन बाहर भेजे जाते हैं।

कपड़े का काम कुछ दिनों पहले तक सर्वत्र करघों पर होता था। गाँवों की ग़रीब जनता करघे पर बुने हुए सस्ते कपड़े पहनती थी। किन्तु अब जैसा कि हमने बताया, मशीनों के प्रचार से करघे बन्द होते जा रहे हैं।

जहाँ तक चीन के कारखानों का सम्बन्ध है, वे प्रायः विदेशियों द्वारा ही सञ्चालित हो रहे हैं इन विदेशियों ने कोयला और लोहा आदि कच्चा माल विशेषाधिकार के रूप में ले रक्खा है। चीन का खास कारबार कपड़े और लोहे का है। निम्नलिखित तालिका से हमें देखते हैं।

वर्ष	तकुओं की संख्या
१८९३	२०४, ७१२
१९१३	९८२, ८१२
१९२६	४,०६६, ५८०
१९३०	४,२२२, ९५६
१९३३	४,६११, ३५७

कि ४० साल के अन्दर किस तेजी से कपड़े का कारबार चीन में बढ़ा है। रुई अभी चीन के अन्दर पर्याप्त मात्रा में उगाई नहीं जाती, अतएव रुई बाहर से मँगानी पड़ती है। ४ मन वजन की २४ लाख गाठें प्रति वर्ष अमेरिका और हिन्दुस्तान से चीन में जाती हैं।

उत्तर चीन में कोयले की खानें बहुतायत से हैं। शांसी सूबे का ३० हजार वर्ग मील करीब करीब कोयले की खानों से भरा है लोगों का अनुमान है कि अकेले शांसी में इतना कोयला है कि वह सारे संसार की आवश्यकता हजारों वर्ष तक पूरा कर सकता है। ये कोयले की चट्टानें ४०, ४५ फ़ीट मोटी हैं। ये खानें अकसर पहाड़ियों में हैं, अतएव खान की खुदाई का काम भी बहुत सहल हो गया। कोयले की खान जापानियों और अंग्रेजों के हाथ में है। कोयले की उत्पत्ति का ३३ प्रतिशत चीन की पूंजी द्वारा होती है, ३० प्रतिशत जापानी पूंजी और ११ प्रतिशत अंग्रेजों की पूंजी द्वारा। कोयले वाले प्रान्त जेहोल, शान्सी, चहार, यूनन, हुनान, सिकांग हैं। १९३४ में २।। लाख टन कोयला खानों से बाहर निकाला गया था। विशेषज्ञों का अन्दाज़ है कि चीन में कुल २।। खरब टन कोयला खानों में है।

लोहा लियोनिंग और चहार प्रान्तों में मिलता है। वार्षिक निकासी लगभग २३ लाख टन की है। मंचूरिया में भी लोहे की खानें हैं। तांबे की खानें उत्तर चीन में हैं, पर वह गवर्नमेण्ट के अधिकार में हैं, गैर सरकारी कम्पनियों को खान से ताँबा निकालने की इजाजत नहीं है। 'टिन' भी चीन के मुख्य खनिज पदार्थों में से है। २० लाख पौण्ड की कीमत का टिन प्रति वर्ष बाहर जाता है। ऐंस्टमनी, पारा, नमक आदि की भी तिजारत होती है। मिट्टी के तेल के सोते शान्सी, लियोनिंग, होपाई प्रान्तों में मिलते हैं। वार्षिक निकासी २४ करोड़ गैलन की है। इस तरह मिट्टी का तेल देश की जरूरत पूरी नहीं कर सकता। विदेशों से पेट्रोल, और मिट्टी का तेल मगाँना पड़ता है।

चीन के कारबार की उन्नति के रास्ते में अनेक रुकावटें है। गृह युद्ध, समर नायकों की नादिर शाही, जापानियों का निरीह जनता का शोषण करना, ये सभी बातें ऐसी हैं जो व्यापार की उन्नति नहीं होने देतीं। एक बात और है, जनता की गरीबी जब तक दूर नहीं होती, उनकी जेब में जब तक पैसा नहीं आता, तिजारत भी नहीं बढ़ सकती। जो कुछ थोड़ा बहुत कारबार है भी, वह जापानियों या अन्य विदेशियों के हाथ में है। चीन के प्रस्तुत व्यापारी और महाजन विदेशी कम्पनियों का माल चीन में बेचते हैं। एक प्रकार की दलाली का काम उन्हें करना होता है। मुनाफे की रक़म सब की सब विदेशियों की जेब में जाती है, फिर देश की तिजारत की उन्नति किस तरह हो? विदेशी साम्राज्यवाद फरेब और दगा से भरे हुए सन्धि पत्रों की आड़ में चीन के कच्चे माल

और चीन की सस्ती मज़दूरी का प्रयोग अपने लाभ के लिये करता है। चीन का साम्यवादी दल इस भेद से पूर्णतया वाकिफ़ है। इसी कारण वह दल, निरन्तर साम्राज्यवाद और उसके एजेन्टों के खिलाफ़ आन्दोलन कर रहा है। यह दल चीन के शोषण को जड़ से मिटाना चाहता है। चीन की केन्द्रीय सरकार ने साम्यवादी दल के संग सहयोग कर बड़ी दूरदर्शिता का परिचय दिया है। भारत की आर्थिक समस्या भी बहुत कुछ चीन जैसी ही है। साम्यवादी दल की सहायता से चीन जिस तरह अपनी आर्थिक पहेली को सुलझाने की कोशिश कर रहा है, भारत उसे बड़े ध्यान से देख रहा है, क्योंकि भारत भी उन्हीं साधनों का अवलम्ब लेकर अपने को बृटिश साम्राज्यवाद के पञ्जे से छुड़ाना चाहता है। चीन के इस पवित्र अनुष्ठान में भारत की आशा भी निहित है।

चीन के कारवार के विभिन्न दृश्य।

चीन में शिक्षा का प्रबन्ध

[लेखक—श्री भगवती प्रसाद श्रीवास्तव एम० एस० सी०]

चीन में आधुनिक ढंग की शिक्षा का आरम्भ १९ वीं शताब्दी के मध्य से होता है। 'नानयंग मिडिल स्कूल' की स्थापना शंघाई नगर में १८६३ में हुई। १८९८ में सम्राट की ओर से फर्मान जारी हुआ कि आधुनिक पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली के आधार पर चीन के सभी प्रान्तों में प्राइमरी स्कूल खोले जायँ। परीक्षा की प्राचीन प्रणाली भी हटा दी गई। सहस्रों वर्ष पुरानी एकेडमी जो जगह जगह खुली हुई थीं, तोड़ दी गई और उनकी जगह कालेज और यूनिवर्सिटियाँ खोली गईं। उनमें चीन की राष्ट्रीय भाषा और कला के अतिरिक्त पाश्चात्य विज्ञान की शिक्षा भी दी जाने लगी। स्कूल के करिक्यूलम में धर्मशास्त्र, साहित्य, इतिहास, भूगोल, विदेशी भाषाएँ, गणित, जीवविज्ञान, पदार्थविज्ञान, भौतिकशास्त्र, ड्राइंग तथा व्यायाम भी शामिल है।

ऐतिहासिक दृष्टि

वहाँ के स्कूल के दर्जों में ५० से अधिक लड़के भर्ती नहीं किये जाते और हर स्कूल में लड़कों की संख्या ८०० से अधिक नहीं रक्खी जा सकती। १९०२ के शाही फर्मान में ये बातें बिलकुल स्पष्ट कर दी गई थीं। प्राइमरी और मिडिल स्कूलों के लिये अध्यापकों की शिक्षा का भी प्रबन्ध इन्हीं दिनों किया गया। कई एक नार्मल स्कूल १९०३ मे खोले गये। इन्हीं दिनों कारीगरी सिखाने के लिये भी स्कूल खोले गये। ये प्रायः तीन तरह के होते थे। कृषि शिक्षा के लिये, कल कारखानों की शिक्षा के लिये और तिजारत सिखाने के लिये। किन्तु १९०३ के शाही फर्मान में लड़कियों की शिक्षा का कोई आयोजन नहीं किया गया था। लड़कियों की अपर प्राइमरी शिक्षा का प्रबन्ध १९०३ में हुआ। इन स्कूलों मे ४ वर्ष का कोर्स है।

१९१२ में चीन में जब प्रजातन्त्र की स्थापना हुई तो इस नवीन शिक्षा पद्धति का और भी विकास हुआ। प्रजातन्त्र ने इस बात पर जोर दिया कि मिडिल स्कूलो मे लड़कों को अच्छे नागरिक होने की शिक्षा दी जाय। लड़के और लड़कियों की शिक्षा का अलग अलग प्रबन्ध हुआ। विदेशी भाषाओं में अँग्रेजी को सबके ऊपर स्थान मिला यद्यपि फ्रेन्च, जर्मन तथा रूसी भाषाओं के पढ़ाने का भी समुचित प्रबन्ध किया गया। लड़कियों के लिये उपरोक्त चीजों के अतिरिक्त सिलाई, बाग़बानी तथा गृह शिक्षा का भी प्रबन्ध किया गया।

तदुपरान्त शिक्षा प्रणाली बहुत कुछ इसी पद्धति के अनुसार चलती रही। १९२२ में पुनः चीन की शिक्षा प्रणाली में बहुत से सुधार हुये। शिक्षा के मुख्य उद्देशों में निम्नलिखित बातें शामिल की गईं:—

(१) समाज के लिये योग्य व्यक्ति बनाना।
(२) व्यक्तित्व का विकास।
(३) जन साधारण की शिक्षा में दिलचस्पी पैदा करना।
(४) राष्ट्रीय अर्थशास्त्र को समझाना।
(५) जनसाधारण के जीविकोपार्जन के तरीकों का अध्ययन करने में रुचि पैदा करना।
(६) निरक्षरता दूर करने के लिये प्रयत्न करना।

वर्तमान शिक्षा पद्धति

नेशनल गवर्नमेण्ट ने १९३२ में शिक्षा सम्बन्धी नये कानून बनाये, जिनके अनुसार मिडिल स्कूल, नार्मल स्कूल तथा टेक्निकल स्कूल सभी परिचालित होते हैं।

मिडिल स्कूल-

मिडिल स्कूलों में लड़कों को शिक्षा इस दृष्टिकोण से दी जाती है कि आगे चल कर वे विशेष योग्यता प्राप्त करने में समर्थ हो सकें। साथ ही साथ उन्हें अच्छे नागरिक होने की शिक्षा मिलती ही है। मिडिल स्कूल के दो भाग होते हैं। एक जूनियर और दूसरा सीनियर। जूनियर में प्राइमरी स्कूल से उत्तीर्ण लड़के भरती किये जाते हैं। जूनियर स्कूल के लड़कों की उम्र की अवधि १२ से १५ तक है, तथा सीनियर के लिये १५ से १८ तक। सीनियर स्कूल के विद्यार्थियों को फौजी शिक्षा भी दी जाती है—लड़कियों को फौज सम्बन्धी फर्स्ट-एड (प्रारम्भिक उपचार) की शिक्षा दी जाती है।

सप्ताह भर में जूनियर स्कूल के विद्यार्थियों के लिये ३६ घण्टे स्कूल में और १२ घण्टे घर पर पढ़ना आवश्यक था तथा सीनियर स्कूल वालों को ३६ घण्टे स्कूल में और २४ घंटे घर पर पढ़ना जरूरी था। इस इन्तिजाम के कारण लड़कों को बहुत ज्यादा समय पुस्तकों के संग व्यतीत करना पड़ता था। अतएव पढ़ने के समय में कमी करने के लिये शिक्षा विभाग के मंत्री ने विशेषज्ञों की एक मीटिङ्ग बुलाई और उन लोगों से परामर्श कर के सीनियर तथा जूनियर दोनों स्कूलों में पढ़ने के घण्टों में कमी करना तय किया।

टेक्निकल स्कूल भी सीनियर और जूनियर होते हैं। जूनियर में भिन्न भिन्न पेशे की कारीगरी आमतौर

टेक्निकल स्कूल

पर सिखाई जाती है, ताकि स्कूल से निकलने के बाद विद्यार्थी अपने पेशे को सुचारु रूप से चला सकने में समर्थ हो सके। सीनियर स्कूल में हर एक पेशे में गहराई तक प्रवेश करने के उद्देश्य से विद्यार्थियों को मदद दी जाती है। उन्हें कारबार चलाने की तथा कारखानों के सञ्चालन की भी शिक्षा दी जाती है।

प्राइमरी स्कूलों में पढ़े हुए लड़के जूनियर टेक्निकल स्कूल में भर्ती हो सकते हैं। उनकी आयु १२ से १८ तक होनी चाहिए। सीनियर टेक्निकल स्कूल में जूनियर मिडिल स्कूल से पास हुए लड़के भर्ती हो सकते हैं। उनकी आयु १५ और २२ वर्ष के बीच होनी चाहिये। उन स्कूलों में निम्नलिखित विषय पढ़ाये जाते हैं:—

कृषि, जंगल की रक्षा, पशु विद्या, बागवानी, दस्तकारी, लकड़ी पर नकाशी का काम, फोटोग्राफी, छापाखाने का काम, कपड़े की बुनाई, चीनी मिट्टी के खिलौने आदि तैयार करने की कला।

(१) कृषि—पशुविद्या, बागवानी, जंगल की रक्षा।
(२) दस्तकारी—लकड़ी पर नकाशी का काम फोटोग्राफी, मीनाकारी का काम, साधारण इन्जीनियरिङ्ग, चीनी मिट्टी के खिलौने बनाना, कपड़े बुनना, छपाई का काम इत्यादि।
(३) व्यापार—बहीखाता, टाइप राइटिङ्ग, हिसाब किताब का काम, बीमा, सट्टा, विज्ञापन कला इत्यादि।
(४) गृह शिक्षा—भोजन कला, सिलाई, [illegible] दाईगीरी, बीमार की सेवा सुश्रूषा

टेक्निकल स्कूल में प्रति सप्ताह ४८ घण्टे [illegible] होती है। इन स्कूलों में अमली काम पर ज्यादा जोर दिया जाता है। अतएव इन स्कूलों के साथ वर्कशाप, फार्म और फैक्टरियाँ भी रहती हैं।

१९१२ में प्रजातंत्र की स्थापना हुई। तब से २४ वर्षों के भीतर चीन में शिक्षा की आश्चर्य्यजनक उन्नति हुई है। मिडिल स्कूलों की संख्या १९१२ में ५०० थी। १९३६ में यह संख्या २००० पहुँच गई।

शिक्षा में आर्थिक समस्या

चीन में दो तरह के मिडिल स्कूल हैं। एक सरकारी और दूसरे ग़ैर सरकारी। ग़ैर सरकारी स्कूल या तो जनता के चन्दे से चलते हैं, या किसी संस्था विशेष की ओर से। मिशनरियों के स्कूल भी इसी श्रेणी में आते हैं। सरकारी स्कूल केन्द्रीय गवर्नमेण्ट, प्रान्तीय सरकार, या डिस्ट्रिक्ट बोर्ड से अपना खर्च पाते हैं। किन्तु नार्मल स्कूल, जहाँ पर अध्यापकों को शिक्षा दी जाती है, सरकार की ओर से ही खोले जा सकते हैं। किसी ग़ैर सरकारी संस्था को नार्मल स्कूल खोलने की आज्ञा नहीं मिल सकती।

मिडिल स्कूलों का १९३६ का खर्च लगभग ५ करोड़ ८ लाख डालर था। सरकारी रिपोर्ट से पता चलता है कि ग़ैर सरकारी स्कूलों की आर्थिक स्थिति कुछ अधिक सन्तोषजनक नहीं है।

विज्ञान की शिक्षा

मिडिल स्कूलों में विज्ञान की ओर रुचि पैदा कराने में अधिकारियों को काफ़ी अड़चनों का सामना करना पड़ा था। चीन की संस्कृति में साहित्य और कला का बहुत ही ऊँचा स्थान है। अतः विद्यार्थियों का झुकाव स्वभावतः साहित्य की ओर होता है और इस कारण गणित, भौतिक विज्ञान, केमिस्ट्री (रसायनशास्त्र) के प्रति उनके हृदय में अरुचि सी पैदा हो जाती है। अतः विज्ञान को लोकप्रिय बनाने के लिये काफ़ी परिश्रम करना पड़ा।

इसके अतिरिक्त और भी मुश्किलें हैं—धन की कमी से अधिक प्रयोगशालाएं इन स्कूलों में नहीं बन पातीं। विज्ञान की शिक्षा देने के लिये

योग्य अध्यापकों की भी चीन में कमी है। शिक्षा विभाग की ओर से इन स्कूलों तथा प्रयोगशालाओं में जिन यन्त्रों के रहने की आवश्यकता है, उनकी नामावली भी भेजी गई है।

कहीं कहीं तो धन की कमी से दो दो तीन तीन स्कूलों के बीच एक ही प्रयोगशाला है। शिक्षा विभाग के मंत्री ने सरकारी प्रबन्ध करके इन स्कूलों के लिये वैज्ञानिक यंत्रों के निर्माण करने का आयोजन किया है, और लागत दाम से भी कम कीमत पर ये स्कूलों के दिये जाते हैं। करीब करीब इस नई योजना के अनुसार २००० स्कूलों में प्रयोगशाला का सामान भेजा गया है।

अध्यापकों को सहायता

अध्यापकों को नवीनतम आविष्कारों से परिचित कराने तथा उन्हें शिक्षा के नये तरीकों के सम्पर्क में आने का अवसर देने के उद्देश्य से १९३३ में शिक्षा विभाग ने नियम बनाया कि गर्मी की छुट्टियों में प्रत्येक विश्वविद्यालय की ओर से दो महीने के लिये मिडिल स्कूल के अध्यापकों को उनकी आवश्यकतानुसार शिक्षा दी जायगी। कभी कभी कई एक विश्वविद्यालय मिल कर ग्रीष्म ट्रेनिङ्ग स्कूल चलाते हैं। इन स्कूलों में भर्ती होने के लिये सरकारी अफसर अध्यापकों को चुनते हैं, और उन्हें भत्ता भी दिया जाता है। प्रत्येक अध्यापक को तीन वर्ष में एक बार इस ग्रीष्म ट्रेनिङ्ग स्कूल में जाकर अवश्य व्याख्यान सुनने पड़ते हैं। ग्रीष्म ट्रेनिङ्ग स्कूलों में अंग्रेजी भाषा, इतिहास, भूगोल और विज्ञान की विशेष पढ़ाई होती है।

टेक्निकल स्कूल के अध्यापकों को भी ट्रेनिङ्ग का अवसर दिया जाता है। बड़े बड़े कारखानों तथा कृषि विश्वविद्यालय की ओर से इन अध्यापकों की ट्रेनिङ्ग का प्रबन्ध होता है।

स्कूलों में व्यायाम

जनवरी १९३७ में शिक्षा विभाग के मंत्री ने व्यायाम सम्बन्धी नये नियम बनाये। इनके अनुसार ३ बजे के बाद मिडिल स्कूलों में पढ़ाई बन्द हो जाना जरूरी है। इसके बाद लड़के खेल कूद में भाग लेते हैं। प्रत्येक स्कूल में शाम का खेल अनिवार्य बना दिया गया है। सवेरे के व्यायाम पर भी काफी जोर दिया जाता है।

स्कूलों में सफ़ाई और स्वच्छता पर भी काफी परिश्रम और धन व्यय किया जाता है। हर एक विद्यार्थी के पीछे प्रति वर्ष एक डालर के हिसाब से इसमें खर्च किया जाता है। इसमें से ४० प्रतिशत तो विद्यार्थी को अपनी फीस के साथ देना होता है और शेष ६० प्रतिशत स्कूल देता है। हाईजीन (स्वास्थ्य) और फर्स्टएड (प्रारम्भिक उपचार) की शिक्षा पर भी काफ़ी ध्यान दिया जाने लगा है।

टेक्निकल स्कूलों की आर्थिक दशा

पिछले कुछ वर्षों में टेक्निकल स्कूलों की संख्या में भारी वृद्धि हुई है, और केवल रुपये की कमी से और स्कूल नहीं खोले जा सके। १९३६ की जुलाई में शिक्षा विभाग ने ४ लाख ३० हजार डालर की एक रक़म टेक्निकल स्कूलों के लिये सामान खरीदने के लिये मंजूर किया। स्थानीय अधिकारी जिन स्कूलों के लिये सिफारिश करते हैं, केवल उन्हें ही उक्त रक़म से सहायता मिल सकती है। एक प्रान्त में तीन से अधिक स्कूलों को इस रक़म से सहायता नहीं दी जा सकती। इस रक़म के वितरण करने के लिये एक कमिटी नियुक्त की गयी है, जो इस बात का निर्णय करती है कि किस स्कूल को सहायता मिलनी चाहिए, और किसको नहीं। १९३६-३७ में ५० टेक्निकल स्कूलों को इस रक़म से सहायता दी गई है।

टेक्निकल स्कूलों की दशा सुधारने के लिये तथा भिन्न भिन्न विषयों में अनुसन्धान करने की सुविधा प्रदान करने के निमित्त नानकिङ्ग में राष्ट्रीय केन्द्रीय टेक्निकल स्कूल खोलने की योजना हो रही है। यह केन्द्रीय स्कूल उसी टक्कर का होगा जैसा लन्दन और पेरिस में है। इस स्कीम को कार्य्यरूप में परिणित करने के लिये एक कमीशन भी नियुक्त किया गया है। इस योजना को सफल बनाने के लिये ६ लाख डालर खर्च किये जाएँगे।

उपसंहार

इस छोटे से लेख में पाठकों ने देखा होगा कि चीन में आधुनिक शिक्षा को आरम्भ हुए मुश्किल से ७५ वर्ष बीते हैं। इतने समय में प्राचीन परीक्षा पद्धति हटा कर आधुनिक पद्धति का प्रयोग आरम्भ हुआ। प्राचीन विद्या मन्दिरों के स्थान पर आधुनिक यूनिवर्सिटियाँ

खुलीं। प्रजातन्त्र की स्थापना के साथ शिक्षा में भी वृद्धि हुई। नानकिङ्गमें नेशनल गवर्नमेण्ट कायम होने पर शिक्षा विभाग में नये नये सुधार हुए। पिछली पीढ़ी के विद्यार्थियों और स्कूलों की संख्या में प्रशंसनीय वृद्धि हुई है। टेक्निकल स्कूलों की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। विज्ञान पर भी अधिक ध्यान दिया जाने लगा। फौजी शिक्षा, व्यायाम, स्कूल-हाईजीन, टेक्निकल स्कूलों के सम्बन्ध में नई योजनाएँ सभी धीरे धीरे आगे आईं। आशा है शीघ्र ही चीन से निरक्षरता का पाप दूर हो जायगा।

चीन के समाचार पत्र

पाश्चात्य देशों की तरह चीन में भी मुद्रण कला का विकास सैकड़ों वर्ष में हुआ है। संसार का प्राचीनतम समाचार पत्र चीन से ही प्रकाशित हुआ था। फिर भी यहाँ के समाचार पत्रों में आप नूतमतम शैली पायेंगे।

पेकिंग गज़ेट एक प्राचीन समाचार पत्र

गजेट के नाम से चीन का सर्व प्रथम समाचार पत्र प्रकाशित हुआ था। अक्सर इसे सरकारी अफ़सर ही पढ़ते थे। शुरू शुरू में ये बड़े मंहगे दामों में मिलते थे। अफसर लोग किराये पर समाचार पत्रों को लेकर पढ़ते थे। समाचार पत्रों के प्रायः दो संस्करण हुआ करते थे। एक साधारण और एक राजसंस्करण। राजसंस्करण की प्रतियाँ केवल धनी व्यक्ति ही खरीद सकते थे। इस गजेट में सरकारी विज्ञप्तियाँ, सम्राट के फरमान तथा उसके मंत्रियों की घोषणाएँ, और चीन निवासियों तथा प्रवासी चीनियों के सम्बन्ध की घटनाएँ छपा करती थीं। इस गजेट की पुरानी प्रतियाँ पेकिंग के संग्रहालय में अब भी देखी जा सकती हैं। आधुनिक समाचार पत्रों से इनकी रूप रेखा सर्वथा भिन्न है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि साधारण जनता के लिये उन दिनों समाचार पत्र नहीं हुआ करते थे। हाँ कुछ हास्यरस की रचनाओं और दिलचस्प सामग्री से परिपूर्ण पर्चे अवश्य प्रकाशित होते थे, उनका काम मनोरंजन की सामग्री जुटाने तक सीमिति था। समाचार तो उसमें रहते ही न थे। हाँ कभी कभी किसी बड़े घराने में कुछ दिलचस्प घटना हो गई, तो सम्पादक फौरन उसे पर्चे में छाप देता था किन्तु अकसर तो ऐसा होता था कि स्वयं सम्पादक मनगढ़न्त झूठी मूठी घटनाएँ बना कर छाप देता था। इस प्रकार के मनगढ़न्त झूठे किस्से वाले पर्चों की प्रथा अब तक थोड़े बहुत अंशों में बनी हुई है, और यही कारण है कि चीनी लोग समाचार पत्रों को बड़ी अश्रद्धा की दृष्टि से देखते हैं।

इस नवीनयुग में उक्त अड़चनों के होते हुए भी, पत्रकार कला का सन्तोपजनक विकास हुआ।

आधुनिक पत्रकार कला

गवर्नमेण्ट समाचार पत्रों की सहानुभूति प्राप्त करने की चेष्टा करती है। देश के प्रमुख राजनीतिक दल अधिक से अधिक समाचार पत्रों को अपने पक्ष में कर लेना चाहते हैं। सच्ची बात तो यह है कि एक जमाना था जब चीन के करीब सभी समाचार पत्र एक न एक राजनीतिक दल द्वारा पोषित थे, तथा उस दल की नीति का प्रचार करते थे। क्रान्तिकारी दल ने भी समाचार पत्रों का मूल्य समझा और उन्होंने प्रचार के लिये क्रान्तिकारी विचार के पत्र निकाले। निस्सन्देह इन पत्रों ने चीन में नये विचारों का खूब प्रचार किया। १९११ में मंचू खान्दान के सम्राटों का नाश कर जब चीन निवासियों ने भी प्रजातन्त्र राज्य की स्थापना की तो इन समाचार पत्रों ने उस क्रान्ति आन्दोलन में महत्वपूर्ण कार्य किया था। क्रान्तिकारी विचारों का एक प्रमुख पत्र "शिह पावो" था। इस पत्र के पहले अंक में निम्नलिखित पंक्तियाँ थीं :—

"डार्विन का सिद्धान्त है कि जो अपने आसपास के वातावरण के अनुकूल अपने को नहीं बना पाता वह निश्चय ही क्षय को प्राप्त होता है। यह बिल्कुल सही बात है कि जो अपने में परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन नहीं लाते, वे असफलता की ओर पैर बढ़ाते हैं।

आज दिन चीन के अफसर, राजनीतिज्ञ संसार की बदली हुई परिस्थितियों से अनभिज्ञ अपने पुराने रास्ते पर आँख मूँद कर चलते जा रहे हैं। उन्हें नया मार्ग दिखाने की जरूरत है। "शिह पावो" इसी उद्देश्य को लेकर सामने आया है।..."

चीन का यह पहला प्रगतिशील दृष्टिकोण रखने वाला पत्र था। १९११ में जब प्रजातन्त्र कायम हो चुका, तब अनेक और भी समाचार पत्र प्रकाशित होने शुरू हुए। इस तरह का सब से पुराना पत्र जो आज कल भी प्रकाशित होता है, "शन पावो" है। यह ६५ वर्ष पुराना पत्र है। इस पत्र के सब से ज्यादा ग्राहक हैं। एक समय तो १॥ लाख से भी ऊपर इसकी ग्राहक संख्या थी। इस पत्र का वार्षिक मुनाफ़ा १५ लाख पौण्ड के लगभग होता है। जिस इमारत में यह पत्र छपता है, वह ६ मंजिला है।

रूप-रेखा

इन पत्रों के कवर पेज, अंग्रेज़ी पत्रों की तरह ही विज्ञापनों से भरे रहते हैं।

फिर पहले पृष्ठ पर दाहिनी ओर एक कहानी होती है। उसी पृष्ठ पर प्रमुख खबरें भी छापी जाती हैं। उसी पृष्ठ पर महत्वपूर्ण एकाध लेख भी रहते हैं। इसके बाद पूरा एक पृष्ठ देश की अन्य खबरों से भरा रहता है। एक दूसरा पृष्ठ अन्तर्राष्ट्रीय समाचारों के लिये रहता है—समाचारों के संग तसवीरें भी रहती हैं। बाज़ार भाव, खेल और मैच वगैरह, रेडियो ब्राडकास्ट, सिनेमा, थियेटर आदि का भी इन पत्रों में समावेश रहता है। प्रति दिन एक क्रोड़पत्र (Supplement), कला, साहित्य, शिक्षा, औषधि, विज्ञान आदि किसी एक विषय के सम्बन्ध में रहता है। इस क्रोड़पत्र का सम्पादन कोई बाहर का व्यक्ति करता है, जो उस विषय में एक विशेषज्ञ की हैसियत से जानकारी रखता है। चीन के समाचार पत्रों पर अमेरिकन शैली की एक गहरी छाप दृष्टिगोचर होती है।

१९२७ में नानकिङ्ग में कूमिङ्ग टांग पार्टी के

कूमिंग टांग दल के पत्र

संरक्षण में नेशनल गवर्नमेन्ट कायम हुई। फल स्वरूप इस पार्टी की ओर से अनेक पत्र निकलने शुरू हुए। इन पत्रों के मुद्रक, प्रकाशक और सम्पादक सभी दलों के सदस्य होते हैं। इनमें सब से प्रसिद्ध पत्र 'डेली न्यूज़' है जो नानकिङ्ग से प्रकाशित होता है। इस पत्र की सम्पादकीय टिप्पणियाँ अधिकतर सरकारी दृष्टिकोण की समर्थक होती हैं। उक्त पत्र के अतिरिक्त कूमिङ्ग टांग पार्टी की ओर से एक 'केन्द्रीय न्यूज़ एजेन्सी' भी कायम की गई है। इसका कारबार सारे चीन में फैला हुआ है। २५० समाचार पत्रों को इस एजेन्सी द्वारा समाचार पहुँचते हैं। और सभी तरह के समाचार इस एजेन्सी द्वारा मिल सकते हैं। मैच, तमाशे, बाढ़, तबाही, लड़ाई, राजनैतिक व्याख्यान इत्यादि सभी तरह की सामग्री इस एजेन्सी द्वारा आप को मिल सकती है।

यह विदेश की खबरों को अंग्रेज़ी भाषा में भिन्न

कूमिन न्यूज़ एजेन्सी

भिन्न पत्रों को पहुँचाती है। यह एजेन्सी १९२७ में स्थापित हुई।

इन दो राष्ट्रीय एजेन्सियों के अतिरिक्त और भी बीसियों एजेन्सियाँ हैं जो भिन्न भिन्न प्रान्तों में अपना कार्य्य कर रही हैं।

नेशनल गवर्नमेन्ट की ओर से चीन के समाचार

सेन्सर

पत्रों में प्रकाशित होने वाले समाचार 'सेन्सर' भी किये जाते हैं। गवर्नमेन्ट का कहना है कि देश की वर्तमान परिस्थिति उन्हें समाचार पत्रों पर सेन्सर लगाने के लिये बाध्य करती है। विशेष कर निम्नलिखित प्रकार की खबरें सेन्सर की जाती हैं:—

१. फ़ौज सम्बन्धी ऐसी खबरें जिनसे राष्ट्र की रक्षा में विघ्न पड़ने की आशंका हो।
२. चीन और विदेशी राष्ट्रों के आपस के सम्बन्ध में किये गये समझौते के बारे में अटकल से ...ना जब कि सरकारी अभी प्रका...

३. ऐसी खबरें जिनसे आर्थिक झगड़े उठने की सम्भावना हो।
४. अश्लील समाचार।
५. सरकारी अफसरों की मानहानि से सम्बन्ध रखने वाली खबरें।

अन्य अड़चनें

समाचार पत्रों के रास्ते में सेन्सर के अतिरिक्त और भी दूसरी अड़चनें हैं। चीन निवासियों में साक्षरता का सर्वथा अभाव है, और इसके साथ ही साथ साधारण जनता गरीब भी बहुत है। चीन के समाचार पत्रों के सर्वप्रिय न होने का एक और भी कारण है। ये पत्र वहाँ की साहित्यिक भाषा में अधिकतर छपते हैं, परिणाम यह होता है कि निम्न श्रेणी की जनता उस भाषा को आसानी से समझ नहीं पाती।

आर्थिक कठिनाइयों का सफलता पूर्वक सामना करने के लिये कुछ प्रकाशकों ने छोटे आकार के समाचार पत्र निकालना शुरू किया है—ये बड़े सस्ते दामों में बिकते हैं, और लोग उन्हें बड़े चाव से पढ़ते हैं। समाचार पत्रों के रास्ते में एजेन्ट भी बाधा डालते हैं। ग्राहक संख्या बढ़ाने के लिये ५० प्रतिशत कमीशन से कम पर ये राजी नहीं होते। मान लीजिये कि एक पत्र का दाम दो आना है, तो इसमें से केवल एक आना प्रकाशक को मिलेगा और इन एजेन्टों के वगैर काम भी नहीं चल सकता। इन लोगों ने अपना ऐसा संगठन कर रक्खा है कि इनकी सहायता के विना किसी भी समाचार पत्र का चलना सम्भव नहीं है।

आश्चर्यजनक उन्नति

यद्यपि चीन के समाचार पत्रों के रास्ते में अनेक अड़चनें हैं, फिर भी हाल में पत्रकार कला ने आश्चर्यजनक उन्नति की है। दैनिक पत्रों की संख्या पिछले दस वर्षों में तिगुनी बढ़ी है। १९२५ में ३५८ दैनिक समाचार पत्र निकलते थे—१९३५ में इनकी संख्या ९१० हो गई।

इन पत्रों की सामग्री भी पहले से अच्छी हो गई है। अन्तर्राष्ट्रीय समाचारों पर चीन के पत्र कम ध्यान दिया करते थे। अब मंचूरिया हरण के बाद चीन की जनता, बड़ी उत्सुक रहने लगी कि चीन के बाहर अन्य देशों में क्या हो रहा है? फलस्वरूप अन्तर्राष्ट्रीय खबरों को भी चीन के पत्रों में महत्वपूर्ण स्थान मिलने लगा।

पत्रकार शिक्षा

पढ़े लिखे योग्य व्यक्ति चीन में भी पत्रकार कला को अपना पेशा बना रहे हैं—यह एक सन्तोपजनक बात है। इनमें से कितने तो अनेक ऐसे पेशे छोड़ कर आये हैं, जहाँ उन्हें काफी रुपया मिलता था, किन्तु वे पत्रकार कला से प्रेम करते हैं, और उन्हें विश्वास है कि समाचार पत्रों के जरिये वे देश का भला कर सकेंगे।

चीन के विश्वविद्यालयों और कालेजों में पत्रकार कला की शिक्षा दी जाती है—इसके अतिरिक्त अमेरिकन ढंग पर सञ्चालित कई और स्कूल पत्रकार कला की शिक्षा के लिये खुले हुए हैं। और आशा की जाती है कि चीन की पत्रकार कला शीघ्र ही आश्चर्यजनक उन्नति कर सकेगी।

समाचार पत्रों का संगठन

आपस में प्रतियोगिता रहते हुए भी चीन के समाचार पत्रों ने अपना एक सुन्दर संगठन कर रक्खा है। गवर्नमेन्ट के दमनकारी प्रेस कानूनों का विरोध सब समाचार पत्र मिल कर करते हैं। दो वर्ष हुए, नानकिङ्ग सरकार ने 'प्रेस' पर कुछ रोक लगाते हुए एक कानून पास किया—बस समूचे चीन में होहल्ला मच गया—जगह जगह से फरियादें गईं, प्रस्ताव पास किये गये, प्रतिनिधि लोग नानकिङ्ग गये और अन्त में सरकार को वह कानून वापस लेना पड़ा। उनके संगठन के तीन मुख्य उद्देश्य हैं :—

१. प्रेस की स्वाधीनता की रक्षा करना।
२. समाचार पत्रों की उन्नति के लिये नये नये तरीके ढूँढ़ना।
३. चीन की पत्रकार कला को बहस और अनुसन्धान इत्यादि के द्वारा उन्नति के मार्ग पर ले जाना।

किसानों और मज़दूरों के पत्र

साम्यवाद और राष्ट्रीयता के प्रचार के साथ साथ चीन के समाचार पत्रों में निम्न कोटि की जनता—किसान, मजदूरों—के लिये भी प्रचुर मात्रा में सामग्री आने लगी। हाल में अनेक ऐसे समाचार पत्र प्रकाशित होने आरम्भ हुए हैं जिनकी भाषा बिल्कुल गँवारों की सी है। एक मामूली कुली भी,

जिसे अक्षर ज्ञान है, इन अखबारों को बखूबी समझ सकता है। इसमें सन्देह नहीं कि चीन की जनता में जागृति उत्पन्न करने के लिये ऐसे समाचार पत्रों की बड़ी आवश्यकता है।

नूतनतम आविष्कार

चीन के समाचार पत्र खबरों को जल्दी से जल्दी जनता में पहुँचाने के लिये वैज्ञानिक तरीकों का प्रयोग कर रहे हैं। नये ढंग की बनी हुई छापने की कलें वहाँ के प्रेसों में काम कर रही हैं।

१९३१ के बाद से शंघाई में शाम को भी समाचार पत्र प्रकाशित होने लगे। इस साल शंघाई की लड़ाई के समाचार जानने के लिये जनता ने इतनी अधिक उत्सुकता दिखाई कि शाम को भी पत्र निकालना ज़रूरी समझा गया। इस प्रकार हम देखते हैं चीन में भी यूरुप के देशों की ही भांति पत्रकार कला का विकास बिल्कुल आधुनिक ढंग पर हो रहा है।

चीन की कुछ कहावतें

[लेखक—श्री शान्तिशरण, आजमगढ़]

चीन की सभ्यता लाखों वर्ष पुरानी है। जिस समय यूरुप के निवासी असभ्य और जंगली हालत में जानवरों की खाल ओढ़े शिकार की टोह में एक स्थान से दूसरे स्थान में घूमते फिरते थे, चीन में लोग सभ्य जीवन बिता रहे थे। अतीत के उस धुंधले प्रभात में भी कलात्मक विकास चीन में हो चुका था। कला और साहित्य से चीन निवासी परिचित हो चुके थे।

उनके साहित्य में भावनाओं का पूर्ण रूप से समावेश भी हो चुका था। उद्रेक और जीवन अङ्ग अङ्ग में भरा था। तत्कालीन कहावतों में कितनी सजीवता, कितना भावावेश कितना रस था, उसका अनुभव करते ही बनता है!

आश्चर्य होता है कि सहस्रों वर्ष पहले की निर्मित कहावतों में आज भी वही ताजगी मौजूद है। इस बीसवीं शताब्दी के व्यस्त जीवन में भी वे कितनी सही उतरती हैं। इस कल और कारखाने के युग में भी ये कहावतें सजीव जान पड़ती हैं।

प्राचीन काल के साहित्यकारों ने कहावतों के बनाने में काव्य के मिठास का पूरा ध्यान रक्खा। उनकी कहावतों में कविता का मजा आता है। शब्दों की मितव्यता का ध्यान अँग्रेजी तथा यूरुप की अन्य आधुनिक भाषाओं में काफी रक्खा जाता है। विज्ञान का तकाजा भी शायद यही है। लेकिन कहावतों को जनसाधारण तक पहुँचाने के लिये जरूरी है कि उसमें काव्यात्मक कला का समावेश प्रचुरता से हो। उनका सम्बन्ध मस्तिष्क से कम और हृदय से ज्यादा हो।

हिन्दी में भी इस बात का पूरा ध्यान रक्खा गया है। गाँवों में आप चले जाइये सब जगह आपको कहावतें सुनने को मिलेंगी। बे पढ़े लोगों की ज़बान पर भी इन कहावतों को आप पायेंगे। चीन की कहावतों में साधारण बोलचाल की भाषा में गूढ़ से गूढ़ बातें कह दी गई हैं। बिना प्रयास के जन साधारण तक दर्शन और तर्क शास्त्र के गुर इन कहावतों द्वारा पहुँचाये गये हैं।

हम कुछ कहावतें पाठकों के मनोरञ्जन के लिये नीचे दे रहे हैं और साथ ही साथ हिन्दी की कहावतें भी दी जा रही हैं।

पाठक स्वयं देखेंगे कि हिन्दी की कहावतें संक्षिप्त हैं। तथा उपमाओं को उतनी प्रचुरता हिन्दी की कहावतों में नहीं है जितनी चीन की कहावतों में। चीन की कहावतों में एक पूरी तसबीर मानों खड़ी कर दी गई है। इन कहावतों से हमें पता चलता है कि प्राचीन काल में चीन वालों की कला का दुनियाँ में कितनी दूर तक प्रवेश था।

कहावतें (चीनी)	अर्थ (हिन्दी)
भिखमंगे भी टूटे हुए पुल के ऊपर से गुजरना नहीं चाहते।	जिन्दगी सबको प्यारी होती है।
फूल देखना आसान है किन्तु उन्हें काढ़ना कठिन है।	कहना सहल होता है करना मुश्किल।
घुड़सवार को साईस की तकलीफों का पता नहीं होता।	जाके पैर न जाय बेवाई सो क्या जाने पीर पराई।
तूफान के बाद सेब इकट्ठे करने को मिलते हैं।	सब दिन नहीं बराबर जात।
शेर के जुएँ न ढूँढ़ो।	आग से मत खेलो।
दो नावों में पैर मत दो।	दो नावों में पैर मत दो।
जो व्यक्ति घोड़ा खरीदता है, वही उस पर चढ़ता भी है।	जिसकी बँदरिया वही नचावे दूसर को वह काटन धावे।
अगर तुम्हारे पैसा है तो शैतान भी तुम्हारी चक्की चलायेगा।	पैसे का सब जगह जोर है।
तुम अण्डे की जगह शलजम एक ही बार रख सकते हो।	काठ की हांडी चढ़े न दूजी बार।
एक बड़ी मुर्गी नन्हे चावल के दाने नहीं खाती।	पपीहा स्वाती के जल से ही प्यास बुझाता है।
बढ़िया नगारे के लिये मोटा डण्डा नहीं चाहिये।	कर कङ्गन को आरसी क्या ?
कछुआ जानता है कब उसे अपनी गरदन समेट लेनी चाहिये।	अपना बुरा भला सभी पहचानते हैं।
योग्य मंत्री कम बोलता है।	खाली गागर ज्यादा छलकती है।
यदि तुम काले हृदय के आदमी ढूँढ़ते हो तो वहाँ जाओ जहाँ लोग बुद्ध देव की पूजा करते हों।	बगुला भगत से होशियार रहो।
चिकनी बातें, किन्तु छुरी वाला हृदय।	मुँह में राम बगल में छुरी।
चूहे की मौत पर बिल्ली रोये।	पाखण्डी का क्या एतबार।
पापी जल्द मरते हैं।	पापियों का नाश भगवान करता है।
तुम्हारे हाथ के दोनों ओर मांस होता है।	प्रत्येक सवाल के दो पहलू हुआ करते हैं।
चूहे की आँखों को रञ्च मात्र ही प्रकाश दिखाई पड़ता है।	कूप मण्डूक की दुनियाँ कुएँ तक ही सीमित है।
अगर किसान मिहनती है, तो खेत काहिल न रहेगा।	मिहनत कभी बेकार नहीं जाती।
बुद्धिमान पुरुष भगवान की मर्जी भांप लेता है।	आसमान का रंग पहचानना।
शेर का माला फेरना।	सत्तर चूहा खाकर बिल्ली हुई भगतिन।

इस तरह हम देखते हैं कि चीन की कहावतों में रूप रंग भरने का खूब प्रयत्न किया गया है। मानों कुशल चित्रकार ने अपनी तूलिका से रंग भर कर इन कहावतों में सजीवता का पुट भर दिया है। यही कारण है कि चीन के देहातों में भी कहावतें खूब प्रचलित हैं।

चीनी मनोरंजन और खेल-कूद

[लेखक—श्री आनन्दमोहन जागीरदार]

चीनी स्वभावतः इतने आलसी होते हैं कि उन्हें खेल-कूद ज्यादा नहीं भाता। उनके यहाँ न तो क्रिकेट, टेनिस, हाकी इत्यादि की पहुँच है और न इनके समान उनके निजी खेल कूद हैं। घुड़दौड़, चाँदमारी, वजन उठाना, गोला फेंकना, और दौड़ना इत्यादि चीन में मध्यम श्रेणी के मनुष्यों के खेल कूद में नहीं 'गिने जाते। उनकी गिनती है फौजी खेल कूद में

चीनी मनोरंजन में पहला स्थान है 'बटेर' लड़ाना। चीन की प्रत्येक सड़कों पर—विशेषतः कैन्टन में—बटेर लिये हुए मनुष्य बहुतायत से दिखाई देते हैं। जैसा आप जानते हैं, बटेर पक्षियों में द्वेष बहुत होता है। जहाँ दो बटेर लड़ने के लिये पिंजड़े से मुक्त किये गये फ़ौरन आपस में गुथ जाते हैं। और जब तक दो में से एक मर नहीं जाता, वे लड़ते रहते हैं।

झींगुर लड़ाना भी चीन में बड़ा प्रचलित खेल है। यह खेल पेकिंग और उसके दक्षिण कुछ दूर तक खूब प्रसिद्ध है। पेकिंग में तो सैकड़ों झींगुर-युद्ध के दृश्य दिखाई पड़ते हैं। ये झींगुर चीनी मिट्टी के बर्तन में रक्खे जाते हैं। और ये इतने लड़ाकू होते हैं कि मृत्युपर्यन्त लड़ते रहते हैं।

मुर्ग़ लड़ाना भी चीन का बड़ा पुराना खेल है, परन्तु आजकल इसका रवाज कम हो गया है। तब भी चीनी बन्दरगाहों में विदेशी नाविक अपने छुट्टी के दिन इसी खेल में बिताते हैं। लगभग १२०० वर्ष पहले, एक चीनी सम्राट—जिसने स्त्रियों के छोटे पैर रखने का रवाज शुरू किया—इस खेल को बहुत पसन्द करता था। प्रति वर्ष वसन्त ऋतु में अपने उद्यान में वह बड़ा भारी दरबार करता था जिसमें वह अपने मुर्गों के युद्ध का प्रदर्शन करता था। उसके पास एक हज़ार मुर्ग़ थे जिनकी परिचर्या के लिये पाँच सौ मनुष्य नौकर थे। इसके पहले भी मुर्ग़ लड़ाने का बड़ा प्रचार था। यत्र तत्र विजयी मुर्गों की कविताएँ चीनी साहित्य में मिलती हैं।

ऊँट लड़ाना और मेढ़ों के युद्ध भी इनके प्रिय खेल हैं। लगभग एक हज़ार वर्ष पहले कू-चे (तुरफ़ान और काशगर के मार्ग में स्थित) नामक स्थान में मेढ़े लड़ाना एक मुख्य खेल था। मेढ़े लड़ा कर पैदावार का अनुमान किया जाता था। हिउंग-नू का ख़ान प्रति वर्ष अपने डेरे में घुड़दौड़ और मेढ़े की लड़ाई करवाता था।

पेकिंग के कुछ दूर पश्चिम में घुड़दौड़ और रथ-दौड़ भी होती थी। यह खेल प्रायः मंचू फ़ौज की क़वायद के समय होते थे परन्तु जनता में यह खेल प्रचलित न हो पाये।

बाज़ पालना भी यहाँ का अच्छा मनोरंजन है। बाज पालतू बना कर चिड़िया पकड़ने के लिये उपयोग में लाये जाते थे। परन्तु अब तो ये केवल शौकिया ही पाले जाते हैं।

मङ्गोलिया में पहले वर्फ में छेद करके मछली पकड़ना बड़ा अच्छा खेल था परन्तु अब तो मङ्गो-लियन .खुद इतने आलसी हो गये हैं कि खेल कूद को पसन्द नहीं करते।

बिना व्यायाम के मनोरञ्जन चीन में बहुत सर्व-मान्य है। इन खेलों में भी सब से प्रचलित खेल जुआ है। जुआ अधिकतर ताश से खेला जाता है। चीनी ताश लम्बाई में तो भारतीय ताशों के ही बराबर होता है लेकिन चौड़ाई में वे आधे ही होते हैं। इसमें तो कोई शक है ही नहीं कि चीन में ताश का प्रचार ईसा के पूर्व से ही था परन्तु अभी तक किसी ने चीनी ताश के खेलों की गम्भीर विवेचना नहीं की है। ताश के खेलों में "मेरे पड़ोसी से माँग" खेल बड़ा प्रसिद्ध है।

चीनी शतरञ्ज का अध्ययन कई योरपीय सज्जनों ने किया है जिनमें श्रीयुत दौलिङ्गतर्थ (१८६६), अध्यापक हिमली (१८६९) और सिन्योर वोल पिसेली (१८८९) मुख्य हैं। अब तक इसका निबटारा नहीं किया जा सका है कि शतरंज का जन्म स्थान चीन है या भारतवर्ष। लेकिन यह तो सिद्ध है कि यह खेल ईसा के पूर्व चीन में खेला जाता था। चीनी शतरंज के

तख्ते में भारतवर्ष की तरह चौंसठ खाने होते हैं। लेकिन उनमें 'नदी' और होती है जिसमें ८ खाने और होते हैं। चीनी लोग शतरंज के खेल को दिमाग़ का एक अच्छा व्यायाम समझते हैं।

पाँसे का खेल तो चीन में बहुत पुराने समय से चला आ रहा है। पाँसा हाथ में लेकर एक चावल के ढेर पर फेंका जाता है। पाँसे के तीन तरह के खेल होते हैं। पहले में ६ पांसे लगते हैं। दूसरे में ३ पांसे और तीसरे में केवल २ ही पांसों की ज़रूरत होती है।

चीन में अधिकतर उपर्युक्त खेल ही खेले जाते हैं। कुश्ती लड़ना भी उनके यहाँ प्रचलित है परन्तु उसका अधिक प्रचार नहीं है।

चीन में हवाई डाक तथा वायुयान सेना

[लेखक—श्री भगवतीप्रसाद श्रीवास्तव]

सभी देशों में वायुयानों की उन्नति के पीछे देश के साहसी व्यक्तियों की दिलचस्पी रही है। शुरू शुरू में लोगों ने एक खेल तमाशे की तरह वायुयानों की दौड़ में भाग लिया। यद्यपि वायुयानों के टूर्नामेण्ट ख़तरे से खाली न थे तो भी इस खेल में मज़ा ख़ूब आता था। समय की प्रगति के साथ वायुयानों का प्रयोग खेल तमाशे के अतिरिक्त और चीज़ों के लिये भी होने लगा। पहले युद्ध के लिये ये प्रयोग में लाये गये, फिर व्यापार के निमित्त भी ये बड़े काम की चीज़ साबित हुए। आज संसार के सभी देश वायुयानों के प्रति अपनी दिलचस्पी दिखला रहे हैं। आधुनिक सेना निर्माण में या डाक के काम के लिये वायुयानों का होना एक प्रकार से अत्यन्त आवश्यक हो गया है।

चीन में मशीनों का चलन देर से आरम्भ हुआ अतएव वायुयान भी इस देश में काफ़ी देर में पहुँचे। १९०८ के पहले प्रान्तीय फ़ौजों के पास पुरानी चाल के गुब्बारे थे। १९०९ में एक फ्रान्सीसी उड़ाके ने प्रदर्शन के तौर अपना हवाई जहाज़ चीन में उड़ाया। चीन के सरकारी अफसरों की वायुयानों के प्रति अब दिलचस्पी बढ़ी। लोगों ने अनुभव किया कि लड़ाई के लिये वायुयानों के बिना पूरी तैय्यारी हो ही नहीं सकती। इसीलिये १९११ के विद्रोह में दक्षिण के के क्रान्तिकारियों ने हवाई जहाज़ों से पीपिंग पर बम बरसाने की बात सोची। आस्ट्रिया से इस काम लिये दो हवाई जहाज़ भी ख़रीदे गये। इस तरह सेना विभाग का ध्यान हवाई जहाज़ों की ओर आकर्षित हुआ। सितम्बर १९१३ में पीपिंग के विद्रोह शान्ति के बाद वायुयान सञ्चालन की शिक्षा देने के लिये एक स्कूल भी खोला गया। फ्रान्स से ३ लाख डालर में १२ हवाई जहाज़ भी ख़रीदे गये तथा फ्रान्सीसी विशेषज्ञ इस स्कूल के संचालन के लिये बुलाए गये। इस तरह कुछ वर्षों के भीतर अनेक चीनी वायुयान सञ्चालन में दक्ष हो गए। अक्टूबर १९१९ में २० लाख डालर में १०० तिजारती वायुयान ख़रीदने का प्रस्ताव पीपिंग गवर्नमेण्ट ने पास किया। किन्तु इसी बीच गृह युद्ध की ज्वाला भभक उठी, और १९२७ तक जब कि नेशनल गवर्नमेण्ट स्थापित हुई, इस दिशा में कुछ विशेष उन्नति नहीं हुई। इस गृहयुद्ध ने पीपिंग के इस वायुयान सञ्चालन स्कूल की बड़ी हानि की। स्कूल की कितनी मशीनें आदि लूट खसोट में चली गईं, कितनी हो नष्ट कर दी गईं। हाँ इस गृहयुद्ध के समय में प्रान्तीय सरकारों ने अपनी अपनी सेना को सुसंगठित बनाने के लिये कुछ वायुयान अवश्य ख़रीदे। उत्तर चीन के पास दस दस वायुयानों के कई जत्थे थे। जिनके नाम 'फ्लाइंग टाइगर' फ्लाइँग 'ड्रैगन' या 'फ्लाइंग ईगल' इत्यादि रक्खे गये थे। १९२४ में उत्तरपूर्व चीन में हवाई जहाज़ों से डाक ढोने का भी प्रबन्ध किया गया। किन्तु सच बात तो यह है कि १९२८ तक व्यापारिक दृष्टि कोण से वायुयान सम्बन्धी योजनाओं पर तो किसी

ने विचार तक नहीं किया। सब जगह अपनी अपनी सैनिक शक्ति बढ़ाने के लिये लड़ाई के जहाज़ खरीदे जा रहे थे।

नेशनल गवर्नमेन्ट ने १९२८ में इस प्रश्न को अपने हाथ में लिया और नानकिङ्ग-कैन्टन, होनान तथा वूहन में प्रथम द्वितीय, तृतीय और चतुर्थ वायुयान सञ्चालन-स्कूल खोले गये, और इन स्कूलों का काम चलाने के लिये एक केन्द्रीय बोर्ड चुना गया। इस वायुयान-संघ का प्रधान कार्यालय शंघाई में है। इस संघ की ओर से जगह जगह वायुयान क्लब खोले गये हैं। अब व्यापारिक उद्देश्य से योजनायें बनाई जाने लगीं।

मई १९२९ में चीन के रेल विभाग के मंत्री ने अमे-रिका की एक कम्पनी को चीन में डाक और मुसाफिर ढोने के लिये वायुयान सर्विस क़ायम करने का ठेका देने का प्रस्ताव एसेम्बली में पेश किया। लोगों ने इसका विरोध किया। फलस्वरूप मंत्री ने अपने पद से इस्तीफा दे दिया। नये मंत्री ने एक दूसरी योजना एसेम्बली के सामने पेश की। इसके अनुसार उक्त कम्पनी और चीन की सरकार दोनों आधी आधी पूंजी लगा का इस वायुयान सर्विस को शुरू करेंगी (चीन सरकार का यह नियम है कि चीन के किसी भी कारबार में चीन का रुपया कम से कम ५० प्रतिशत लगा होना चाहिये) उक्त स्कीम की पहली सर्विस लाइन शंघाई और शेंगटू के बीच बनी। उस लाइन पर नानकिङ्ग, एकिङ्ग, किऊकिङ्ग, हांगको, शांसी और चुगकिङ्ग आदि स्थान हैं। ये सभी तिजारती शहर यांगटिसी नदी के किनारे पर पड़ते हैं।

अक्टूबर १९२९ में शंघाई से हांगको को पहला डाक का जहाज़ रवाना हुआ। ७ घंटे में ५४० मील की दूरी इस वायुयान ने तै की। इसके बाद उत्तरोत्तर इन वायुयानों के इंजिनों की शक्ति बढ़ाई जाने लगी। १९३५ में नई क़िस्म के इंजिन लगा कर ये वायुयान इस काबिल बना दिये गये कि एक ही दिन में शंघाई से हांगको जाकर लौट भी आयें। १९३६ में और भी शक्तिशाली इंजिन लगाए गये। शंघाई से हांगको आने में केवल ३ घण्टे का समय खर्च होता था। १९३६ में शंघाई-शेङ्गट लाइन भी खोली गई। १००० मील की दूरी केवल ७ घण्टे में तै होती है। इस लाइन पर सप्ताह में तीन बार डाक आती जाती है।

शंघाई-पीपिङ्ग लाइन

इस रास्ते पर १० जनवरी १९३३ को पहला वायुयान उड़ा। शंघाई से उत्तर चीन के समुद्रतट के समृद्धशाली नगरों (हैयशू, जिंगटू, टियन्सटीन) से होता हुआ ७॥ घण्टे में वायुयान पीपिङ्ग पहुँचा। १४ मई १९३५ को इस लाइन पर एक्सप्रेस सर्विस कायम हो गई। शुरू में तो सप्ताह में दो ही बार इस लाइन पर वायुयान आते जाते थे, किन्तु बाद में आमद इतनी ज्यादा हो गई कि प्रति सप्ताह तीन सर्विस कर दी गईं।

शंघाई-कैन्टन लाइन

यह लाइन दक्षिण चीन के समुद्रतट पर स्थित नगरों को मिलाती है। २४ अक्टूबर १९३३ को इस सर्विस का उद्घाटन हुआ। शंघाई से कैन्टन तक पहुँचने में केवल ७ घण्टे लगते हैं।

यूरुप से सम्बन्ध

१३ फरवरी १९३६ को चाइनीज-नेशनल-एवियेशन कारपोरेशन की सहायता से अन्तर्राष्ट्रीय वायुयान सर्विस से चीन का भी सम्बन्ध स्थापित हो गया। अब 'एयर फ्रांस' के द्वारा हनोई का सीधा सम्बन्ध पैरिस से हो गया है।

१९३० में चीन सरकार ने बर्लिन की एक कम्पनी से तय किया कि दोनों मिल कर चीन से रूस होते हुए यूरुप तक जाने के लिये वायुयान सर्विस स्थापित करेंगे। इस योजना के अनुसार शंघाई से नानकिङ्ग-पीपिङ्ग, साइबीरिया होते हुए बर्लिन तक पहुँचने की बात थी। १९३१ में कम्पनी ने काम आरम्भ तो कर दिया, किन्तु मन्चूरिया की घटना के कारण कम्पनी सुचारु रूप से अपना काम न कर सकी। किन्तु दूसरे रास्ते की तलाश की गई, और कम्पनी ने इस दिशा में अपना प्रयत्न निरन्तर जारी रक्खा। ४ सितम्बर १९३३ को बर्लिन से एक वायुयान रवाना हुआ और मास्को, सूशोव होता हुआ ८ सितम्बर को शंघाई पहुँचा। इस लम्बी यात्रा में कुल ४ दिन लगे। ३१ अगस्त १९३४ को एक दूसरा वायुयान बर्लिन से एथेन्स, बग़दाद, कलकत्ता, कैन्टन होता हुआ ६ सितम्बर को शंघाई पहुँचा। इस घुमाव

वाले रास्ते से होकर भी शंघाई पहुँचने में कुल ७ दिन लगे।

इस कम्पनी ने चीन के भीतर वायुयान मार्गों का बहुत ही अच्छा संगठन किया है। सरकारी रिपोर्ट से पता चलता है कि १९३६ में डाक या मुसाफिरों के सम्बन्ध में किसी किस्म की दुर्घटना नहीं हुई। हां राजनैतिक और आर्थिक बखेड़ों के कारण बर्लिन-मास्को-शंघाई लाइन अभी तक स्थापित नहीं हो सकी।

केन्द्रीय सरकार ने सेना के वायुयान विभाग की वृद्धि करने की ओर काफ़ी ध्यान दिया है। सेना सम्बन्धी वायुयान सञ्चालन की शिक्षा देने के लिये मई १९२२ में हांगको में स्कूल खोला गया।

सेना सम्बन्धी वायुयान सञ्चालन

आधुनिक ढंग पर शिक्षा देने का प्रबन्ध यहां पर है। आरम्भ में अमेरिका से विशेषज्ञ स्कूल के संचालन के लिये बुलाये गये थे। १९३५ में ये विशेषज्ञ अमेरिका वापस चले गये, और अब चीनी लोग ही इस स्कूल का सञ्चालन कर रहे हैं। हां तरीक़ा अमरीकन ही बरता जाता है। होनन प्रान्त में भी वायुयान सञ्चालकों की शिक्षा के लिये स्कूल है। केन्द्रीय सरकार के अतिरिक्त प्रान्तीय सरकारों ने भी उक्त शिक्षा का प्रबन्ध किया है।

हांगको तानशंग और शिकवान में वायुयान बनाने के कारखाने भी खुल गये हैं। केवल इंजिन के पुर्जे बाहर से मंगाये जाते हैं, फिर उन्हें एकत्रित कर वायुयान में फिट कर देते हैं। पैराशूट इन्स्टीच्यूट भी कई जगह पर हैं, जहाँ पैराशूट बनाए जाते हैं, और उन्हें ठीक तरीके से इस्तेमाल करना भी सिखाया जाता है। इनके अतिरिक्त अभी हाल में चीन सरकार और कई एक विदेशी कम्पनियों में सुलह हुई है जिसके अनुसार वायुयान निर्माण के लिये कई एक कारखाने और खोले जाँयगे। इन कारखानों का सञ्चालन चीन सरकार और विदेशी कम्पनियाँ मिल कर करेंगी और चीन सरकार को यह अधिकार होगा कि एक निश्चित अवधि के उपरान्त यदि वह चाहे तो उन्हें खरीद ले।

१९३२ में चीन में केवल १५० वायुयान थे। किन्तु १९३२ की शंघाई की लड़ाई ने चीन वालों की आँखें खोल दीं। जंगी वायुयानों के बेड़े न रहने से आधुनिक लड़ाइयों में क्या दिक़तें सामने आती हैं, इसका इन्हें भली भांति अनुभव हो गया। तब से हवाई बेड़े को बढ़ाने के लिये, तथा लड़ाई के लिये वायुयान सञ्चालकों को तैय्यार करने के लिये चीन भरपूर प्रयत्न करता रहा है। १९३३-३५ में चीन ने अमेरिका के संयुक्त-राष्ट्र से २८७ वायुयान, और १०७ इंजिन खरीदा। १९३६ के पहले ६ महीनों में ११२ वायुयान और १५७ इंजिन अमेरिका से खरीदे गये। इस सिलसिले में एक मजेदार बात का उल्लेख कर देना शायद अनुपयुक्त न होगा। वह यह कि जेनरल चियाँग-काई-शेक को उनकी वर्षगाँठ के उपलक्ष में वायुयान भेंट देने की व्यवस्था की गई थी। ३५ लाख डालर इस फन्ड में चन्दे द्वारा एकत्रित हुआ था। इधर हाल में फ्रान्स और इटली से भी काफी संख्या में वायुयान खरीदे गये हैं।

हांगको एकेडमी ने अभी तक १५० नवयुवकों की सात टोली को वायुयान की युद्ध सम्बन्धी शिक्षा दी है। इनमें से १०५० को चीन की वायुसेना में उच्च पद मिले हुए हैं। चीन की इस वायुसेना में ५०० से अधिक वायुयान हैं।

शंघाई, नानकिङ्ग, और हांगको आदि में समय समय पर वायुयानों की बम वर्षा से बचने के लिये कौन सी तरकीबें काम में लाई जाँय, इस बात का अभ्यास कराया जाता है, ताकि हमले के समय नागरिक अपनी रक्षा कर सकें। गैस मास्क (एक तरह का थैला) लगा कर विषैली गैसों से अपनी रक्षा किस प्रकार करनी चाहिये, इसका भी प्रदर्शन चीन के शहरों में किया जाता है। वायुयान द्वारा सफर करने के लिये, तथा डाक भेजने के लिये जनता में सरकार की ओर से प्रचार कार्य्य भी खूब जोरों में हो रहा है।

जापान ने शुरू से ही इस बात पर जोर दिया है है कि उसे यह हक प्राप्त है कि मंचूरिया और उत्तर चीन में मुसाफिर और डाक ढोने के लिये वह हवाई मार्ग की स्थापना करे तथा वही उसका सञ्चालन भी करे। १८ अक्टूबर १९३६ को इस आशय का एक

जापानी एयर लाइन

महात्मा कन्फ्यूशियस

चीन में कन्फ्यूशियस का नाम बच्चे तक जानते हैं। चीन का सामाजिक जीवन कन्फ्यूशियस के प्रभाव से ओत-प्रोत है। कन्फ्यूशियस का महत्व समझने के लिये तत्कालीन चीन के इतिहास पर भी हमें दृष्टि डालनी होगी।

कन्फ्यूशियस के समय का चीन

ईसा से ५०० वर्ष पहले चीन में 'शो' वंश का राज्य था। इस वंश ने चीन में ईसा से १२०० वर्ष पूर्व से लेकर २५० वर्ष पूर्व तक राज्य किया, किन्तु इस वंश का भाग्य सूर्य्य ईसा से ५०० वर्ष पूर्व से ही अस्त होने लग गया था। राजा के अधिकार से दूरस्थ प्रान्त निकल गये थे। राजा की शान नाम मात्र को रह गई थी। कन्फ्यूशियस भी इन्हीं दिनों पैदा हुआ था। स्वयं कन्फ्यूशियस की लिखी हुई 'चीन का इतिहास' नामक पुस्तक से पता चलता है कि 'शो' वंश का राज्य सामंत प्रथा पर टिका हुआ था। सारा राज्य छोटे छोटे टुकड़ों में बँटा हुआ था, जिसका इन्तिजाम स्थानीय अधिकारी करते थे। अपने इलाकों के लिये एक प्रकार से ये ही स्वतंत्र मालिक थे। ये अपनी खुद की सेना भी रखते थे। हाँ शाहंशाह द्वारा आमंत्रित होने पर इन्हें अपनी सेना लेकर केन्द्रीय राजधानी में जाना पड़ता था। स्वभावतः सामन्त शाही पर टिका हुआ सब शासन दिन प्रतिदिन निर्बल होने लगा। सारी स्थिति दो शब्दों में बताई जा सकती थी :—

"समूचे चीन का कोई राजा नहीं था—छोटे छोटे सामन्त अपने इलाकों में जैसा उचित समझते थे वैसा प्रबन्ध करते थे।"

'शो' वंश के अन्तिम दिनों में तो राजा नाम मात्र के लिये होता था। चीन के अनेक सामन्त उससे कहीं ज्यादा शक्ति रखते थे, और राजा पूर्णतया उन्हीं सामन्तों के हाथ में होता था। फल यह हुआ कि चीन में सर्वत्र सामन्तों ने लूट मचा रक्खी थी। चीन की जनता इनके अत्याचार से त्राहि त्राहि कर रही थी। समाज में अनेक कुरीतियाँ फैली हुई थीं। उदाहरण के लिये बहुविवाह का जोर था। स्त्रियों की दशा समाज में बड़ी शोचनीय थी—चारों ओर षड्यंत्र, मारपीट, दुराचार का बाज़ार गर्म था। धर्म के प्रति लोगों में गहरी उदासीनता फैली हुई थी, पाखंडियों का बोलबाला था।

कन्फ्यूशियस का जन्म

चीन जिस समय एक महान संकट से होकर गुज़र रहा था, कन्फ्यूशियस मानों इसे उस संकट से उबारने के लिये आया। कन्फ्यूशियस का जन्म ईसा से ५५० वर्ष पूर्व शान्टुंग प्रान्त के 'लू' नगर में हुआ। कन्फ्यूशियस बड़े उच्च घराने के थे। आप के पिता एक ऊँचे अफसर थे। ७० वर्ष की अवस्था में आप के पिता ने जब देखा कि उनके ९ लड़कियाँ थीं, और केवल एक पुत्र, सो भी पंगुल, तो ७० वर्ष की अवस्था में उन्होंने अपना विवाह फिर किया। इस नये विवाह से कन्फ्यूशियस का जन्म हुआ। कन्फ्यूशियस जब तीन वर्ष के थे, तभी इनके पिता का देहान्त हो गया। आप के पिता खाली हाथ मरे थे, अतः कन्फ्यूशियस का बचपन तंगी में ही बीता। कहते हैं कि बड़े होने पर किसी ने महात्मा कन्फ्यूशियस से पूछा कि आप ने इतनी विद्वत्ता कैसे प्राप्त की, तो आप ने उत्तर दिया कि "ग़रीबी से होकर गुजरने में मैंने समय का मूल्य आँकना सीखा और मेहनत करने की आदत डाली"।

बचपन से ही उन्हें विद्याभ्यास का चाव था। किन्तु १९ वर्ष की अवस्था में तत्कालीन प्रथा के अनुसार उनका विवाह हो गया। विवाह के बाद ही जीविका का प्रश्न सामने आ खड़ा हुआ। निदान उन्होंने स्थानीय अफसर की मातहती में नौकरी कर ली। वह सरकारी पार्क और बग़ीचों के अध्यक्ष नियुक्त हुए। ग़रीबी के कारण उन्होंने इस प्रकार की निम्न श्रेणी की नौकरी स्वीकार की। किन्तु अपने काम को अत्यन्त परिश्रम के साथ उन्होंने निबाहा।

२२ वर्ष की अवस्था में उन्होंने एक स्कूल खोला। इस स्कूल में वह वयस्क व्यक्तियों को शुद्ध आचरण, और गवर्नमेण्ट के सञ्चालन की शिक्षा देते। अपने

शिष्यों से वह जीवन की पहेलियाँ हल कराते। और उनके दिये हुए धन पर गुजर बसर करते। उनके शिष्यों की संख्या धीरे धीरे बढ़ने लगी।

दो वर्ष पश्चात् उनकी माता का भी देहान्त हो गया। पिता की समाधि के पास उसे भी दफ़नाया, और माँ की समाधि के ऊपर एक छोटा सा स्मारक भी बनाया। उन्होंने सोचा कि मैं देश विदेश भ्रमण करता रहूँगा, अतएव स्मारक रहेगा तो जब कभी इधर मेरा आना होगा, माँ की समाधि के दर्शन तो हो ही जायँगे। इस प्रकार हम देखते हैं कि युवावस्था से ही देश पर्यटन का इरादा उन्होंने कर लिया था।

इसके बाद कन्फ्यूशियस चीन के प्राचीन इतिहास तथा उसकी संस्कृति का अध्ययन करते रहे। तीस वर्ष की अवस्था में वे कहते हैं "मैंने उन सब विषयों का खूब अध्ययन कर लिया है, जिन्हें पढ़ने का इरादा मैंने बचपन में किया था"। निदान कन्फ्यूशियस की प्रतिष्ठा तत्कालीन सभ्य समाज में खूब बढ़ गयी।

इन्हीं दिनों 'लू' नगर में विद्रोह हुआ। 'लू' के शासक को भागना पड़ा। कन्फ्यूशियस ने भी सहानुभूति वश उक्त सामन्त का साथ दिया। ये लोग पड़ोस के इलाके में अतिथि बन कर रहे। कन्फ्यूशियस को यहाँ के रीतिरिवाज न भाये, और वे फिर 'लू' लौट गये। इस बार लगभग १५ वर्ष तक 'लू' में वह रहे और अध्ययन में लगे रहे। राजकाज के कामों में भी वह परामर्श देते थे, किन्तु दरबार की गुटबन्दियों से वह बिल्कुल अलग रहते। उनकी प्रतिष्ठा खूब बढ़ी, और ५२ वर्ष की उम्र में वह न्याय विभाग के मन्त्री बना दिये गये। उनके दो शिष्य भी उन दिनों वहीं पर अफ़सर थे। उन्होंने कन्फ्यूशियस को पूरा सहयोग दिया। कन्फ्यूशियस ने अपने सुप्रबन्ध से जुर्मों की संख्या एकदम कम कर दी। अपना कर्तव्य पूरा करने में उन्होंने अपूर्व साहस और निर्भीकता दिखाई। कई उच्च अफसरों को उनकी बेईमानी के लिये उन्होंने सजा दिया। सारांश यह कि राजकाज में उन्होंने एक क्रान्ति पैदा कर दी।

'लू' के बढ़ते हुए दबदबे को देख कर पास पड़ोस के सामन्त जलने लगे। उन लोगों ने आखिर एक चाल चली। सुन्दरी वेश्याओं के एक जत्थे को राज दरबार में विलासप्रियता बढ़ाने के उद्देश्य से भेजा। उनकी मंशा पूरी हुई।

सरकारी अफसर उनके मायाजाल में फँस गये। विलासप्रियता में डूबे हुए अफसर अब कन्फ्यूशियस की सलाह पर ध्यान न देते, दिनरात वे रँगरेलियों में पड़े रहते। क्षुब्ध होकर कन्फ्यूशियस ने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया, और अलग हो गये। वह समझते थे कि ऐसा करने से उन लोगों पर बहुत बड़ा असर पड़ेगा, वे लोग उन्हें मनाने आयेंगे, किन्तु उन्हें मनाने कोई न गया। उनकी अवस्था अब ५६ वर्ष हो चुकी थी, वह देश पर्यटन के लिये चल निकले।

गवर्नमेन्ट के सम्बन्ध में उनके विचार

अच्छी गवर्नमेण्ट पर कन्फ्यूशियस बहुत जोर देते थे। उनका कहना था कि गवर्नमेण्ट तभी अच्छी हो सकती है जब शासक शासक हो, मन्त्री मन्त्री हो, पिता पिता हो और पुत्र पुत्र हो, सब अपना कर्तव्य निबाहें। समाज में मुख्य पारस्परिक सम्बन्ध चार हैं—शासक और प्रजा, पति और पत्नी, पिता और पुत्र, और बड़े भाई और छोटे भाई। कन्फ्यूशियस का ख्याल था कि शासक के योग्य होने से प्रजा भी आज्ञाकारिणी बन जाती है। वह यह भी कहते थे कि जो शासक मेरी बातों को मानेगा और उनके अनुसार चलेगा, उसके राज्य में सर्वत्र समृद्धि छा जायगी, कोई दुःखी और भूखा न रह जायगा, सर्वत्र तृप्ति नजर आयेगी। उसने तो यहाँ तक भी कहा कि यदि एक वर्ष भी शासन कार्य मेरे हाथ में सौंप दिया जाय, तो उस राज्य में आश्चर्यजनक परिवर्तन कर सकता हूँ।" किन्तु किसी सामन्त ने विलासप्रियता के सामने उनकी न सुनी।

कन्फ्यूशियस के शिष्य

इस वक्त तक कन्फ्यूशियस की प्रसिद्धि चारों ओर फैल चुकी थी। उनके शिष्यों की संख्या ३००० तक पहुँच गयी थी। इनमें कुछ तो हमेशा कन्फ्यूशियस के साथ रहते थे। उनकी एक एक बातों को वे नोट करते, वह कैसे खाते हैं, क्या खाते हैं, क्या कहते हैं, कैसे लेटते हैं, बिजली तड़पी तो उन्होंने क्या कहा, इत्यादि छोटी छोटी बातें भी उनके शिष्यों ने लिख डालीं। अपने शिष्यों से वह

शिष्यों से वह जीवन की पहेलियाँ हल कराते। और उनके दिये हुए धन पर गुजर बसर करते। उनके शिष्यों की संख्या धीरे धीरे बढ़ने लगी।

दो वर्ष पश्चात् उनकी माता का भी देहान्त हो गया। पिता की समाधि के पास उसे भी दफ़नाया, और माँ की समाधि के ऊपर एक छोटा सा स्मारक भी बनाया। उन्होंने सोचा कि मैं देश विदेश भ्रमण करता रहूँगा, अतएव स्मारक रहेगा तो जब कभी इधर मेरा आना होगा, माँ की समाधि के दर्शन तो हो ही जायँगे। इस प्रकार हम देखते हैं कि युवावस्था से ही देश पर्यटन का इरादा उन्होंने कर लिया था।

इसके बाद कन्फ्यूशियस चीन के प्राचीन इतिहास तथा उसकी संस्कृति का अध्ययन करते रहे। तीस वर्ष की अवस्था में वे कहते हैं "मैंने उन सब विषयों का खूब अध्ययन कर लिया है, जिन्हें पढ़ने का इरादा मैंने बचपन में किया था"। निदान कन्फ्यूशियस की प्रतिष्ठा तत्कालीन सभ्य समाज में खूब बढ़ गयी।

इन्हीं दिनों 'लू' नगर में विद्रोह हुआ। 'लू' के शासक को भागना पड़ा। कन्फ्यूशियस ने भी सहानुभूति वश उक्त सामन्त का साथ दिया। ये लोग पड़ोस के इलाके में अतिथि बन कर रहे। कन्फ्यूशियस को यहाँ के रीतिरिवाज न भाये, और वे फिर 'लू' लौट गये। इस बार लगभग १५ वर्ष तक 'लू' में वह रहे और अध्ययन में लगे रहे। राजकाज के कामों में भी वह परामर्श देते थे, किन्तु दरबार की गुटबन्दियों से वह बिल्कुल अलग रहते। उनकी प्रतिष्ठा खूब बढ़ी, और ५२ वर्ष की उम्र में वह न्याय विभाग के मन्त्री बना दिये गये। उनके दो शिष्य भी उन दिनों वहीं पर अफसर थे। उन्होंने कन्फ्यूशियस को पूरा सहयोग दिया। कन्फ्यूशियस ने अपने सुप्रबन्ध से जुर्मों की संख्या एकदम कम कर दी। अपना कर्तव्य पूरा करने में उन्होंने अपूर्व साहस और निर्भीकता दिखाई। कई उच्च अफसरों को उनकी बेईमानी के लिये उन्होंने सजा दिया। सारांश यह कि राजकाज में उन्होंने एक क्रान्ति पैदा कर दी।

'लू' के बढ़ते हुए दबदबे को देख कर पास पड़ोस के सामन्त जलने लगे। उन लोगों ने आखिर एक चाल चली। सुन्दरी वेश्याओं के एक जत्थे को राज दरबार में विलासप्रियता बढ़ाने के उद्देश्य से भेजा। उनकी मंशा पूरी हुई।

सरकारी अफसर उनके मायाजाल में फँस गये। विलासप्रियता में डूबे हुए अफसर अब कन्फ्यूशियस की सलाह पर ध्यान न देते, दिनरात वे रँगरेलियों में पड़े रहते। क्षुब्ध होकर कन्फ्यूशियस ने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया, और अलग हो गये। वह समझते थे कि ऐसा करने से उन लोगों पर बहुत बड़ा असर पड़ेगा, वे लोग उन्हें मनाने आयेंगे, किन्तु उन्हें मनाने कोई न गया। उनकी अवस्था अब ५६ वर्ष हो चुकी थी, वह देश पर्यटन के लिये चल निकले।

गवर्नमेन्ट के सम्बन्ध में उनके विचार

अच्छी गवर्नमेण्ट पर कन्फ्यूशियस बहुत जोर देते थे। उनका कहना था कि गवर्नमेण्ट तभी अच्छी हो सकती है जब शासक शासक हो, मन्त्री मन्त्री हो, पिता पिता हो और पुत्र पुत्र हो, सब अपना कर्तव्य निवाहें। समाज में मुख्य पारस्परिक सम्बन्ध चार हैं—शासक और प्रजा, पति और पत्नी, पिता और पुत्र, और बड़े भाई और छोटे भाई। कन्फ्यूशियस का ख्याल था कि शासक के योग्य होने से प्रजा भी आज्ञाकारिणी बन जाती है। वह यह भी कहते थे कि जो शासक मेरी बातों को मानेगा और उनके अनुसार चलेगा, उसके राज्य में सर्वत्र समृद्धि छा जायगी, कोई दुःखी और भूखा न रह जायगा, सर्वत्र तृप्ति नजर आयेगी। उसने तो यहाँ तक भी कहा कि यदि एक वर्ष भी शासन कार्य मेरे हाथ में सौंप दिया जाय, तो उस राज्य में आश्चर्यजनक परिवर्तन कर सकता हूँ।" किन्तु किसी सामन्त ने विलासप्रियता के सामने उनकी न सुनी।

कन्फ्यूशियस के शिष्य

इस वक्त तक कन्फ्यूशियस की प्रसिद्धि चारों ओर फैल चुकी थी। उनके शिष्यों की संख्या ३००० तक पहुँच गयी थी। इनमें कुछ तो हमेशा कन्फ्यूशियस के साथ रहते थे। उनकी एक एक बातों को वे नोट करते, वह कैसे खाते हैं, क्या खाते हैं, क्या कहते हैं, कैसे लेटते हैं, बिजली तड़पी तो उन्होंने क्या कहा, इत्यादि छोटी छोटी बातें भी उनके शिष्यों ने लिख डालीं। अपने शिष्यों से वह

बिना किसी संकोच के बात करते थे। उनके शिष्यों में से अनेक लोग ऐसे थे जो तत्कालीन विद्वानों में गिने जाते थे। इससे हम अन्दाज़ लगा सकते हैं कि कन्फ़्यूशियस की लोग कितनी प्रतिष्ठा करते थे। 'लू' छोड़ने के बाद १३ वर्ष तक वह पर्यटन करते रहे। वह अनेक प्रान्तों में गये कि शायद कोई ऐसा शासक मिल जाय जो उनकी सम्मति से शासन कार्य चलाना स्वीकार करे, किन्तु किसी ने भी उनकी सलाह न मानी। कई एक ने उन्हें वचन भी दिया, किन्तु वे फिर विलासप्रियता में डूब गये।

इस लम्बी अवधि की यात्राओं में अनेक विचारों के लोगों के सम्पर्क में कन्फ्यूशियस आये, लेकिन सदैव उन्होंने अपनी निर्भीकता का परिचय दिया। लोगों ने उनके पीछे गुन्डे लगाये, फिर भी वह शान्त और गम्भीर रहे। एक बार कन्फ्यूशियस और उनके साथियों को खाना न मिलने पर मरने तक की नौबत आ गई, तो उनके शिष्यों ने पूछा कि "क्या सर्व श्रेष्ट मनुष्य को इतना कष्ट सहना पड़ता है?" तो कन्फ्यूशियस ने उत्तर दिया 'अवश्य इतना कष्ट सहने पर भी वह सर्व श्रेष्ट पुरुष है, क्योंकि एक साधारण व्यक्ति ऐसी परिस्थिति में अपना धैर्य्य और समतुल्यता खो बैठता है'।

अपनी यात्राओं में कन्फ्यूशियस अक्सर 'त्यागियों' से मिले, जिन्होंने संसार के संघर्ष से भाग कर निर्जन प्रान्त में शरण लिया था। कन्फ्यूशियस इन्हें तिरस्कार भारी नजरों से देखते थे। उनका कहना था कि "संसार में जो अशान्ति और कुप्रबन्ध फैला है, उसे दूर करना तो हर एक मनुष्य का कर्त्तव्य है, इनसे दूर भागना तो कर्त्तव्य से जी चुराना है, कायरपन है"। इन शब्दों में कन्फ्यूशियस के अपूर्व साहसिकता का हमें परिचय मिलता है।

देशपर्यटन के बाद जब कन्फ़्यूशियस 'लू' लौटे तो उनकी अवस्था ६९ वर्ष की थी। पुराने सामन्त का पुत्र अब राजा था, उसका प्रधान सेनापति कन्फ़्यूशियस के शिष्यों में से था, उसकी सलाह से नये सामन्त ने कन्फ्यूशियस से प्रार्थना की कि वह राज्य प्रबन्ध में उसकी सहायता करें और प्रधान मंत्री का पद स्वीकार करें। किन्तु कन्फ़्यूशियस ने ऐसा करना स्वीकार न किया। जीवन के शेष दिन उन्होंने अपने शिष्यों को उपदेश देने में बिताए। इन्हीं दिनों उन्होंने साहित्य का भी अध्ययन किया।

उनकी मृत्यु ईसा से ४७८ वर्ष पूर्व हुई। कहा जाता है कि एक दिन प्रातःकाल वह उठे, हाथ में लाठी टेकते हुआ गुनगुनाने लगे, "विशाल पर्वत के टुकड़े टुकड़े हो जाते हैं, मजबूत शहतीर भी टूट ही जाती है, बुद्धिमान व्यक्ति भी क्षय को प्राप्त होगा"। उनका गुनगुनाना सुन कर उनका एक शिष्य दौड़ा हुआ उनके पास गया। कन्फ़्यूशियस ने उससे कहा 'कोई शासक मुझे अपना मंत्री बनाना नहीं चाहता। मेरे मरने का समय आ गया है।' वह बिस्तर पर पड़ गये और सातवें दिन उनका देहान्त हो गया। मृत्यु के समय उनका कोई निजी सम्बन्धी उनके पास न था। उनकी पत्नी पहले ही मर चुकी थीं। मरते समय उन्होंने ईश प्रार्थना भी न की।

मृत्यु के उपरान्त बड़ी शान और शौकत के साथ उनके शव को समाधि दी गई। कितने शिष्य तो उनकी समाधि के पास झोपड़ी बना कर रहने लगे थे। कन्फ़्यूशियस की मृत्यु का समाचार बिजली की तरह चारो ओर फैल गया। जीवन में जिस व्यक्ति की चीन ने कदर न की, उसी की मृत्यु पर प्रशंसा के गाने गाये गये। उनकी विचार धारा का स्रोत यकायक सम्पूर्ण चीन में वह निकला। आज २४०० वर्ष के बाद भी वह स्रोत हरा है।

साहित्य पर कन्फ़्यूशियस का प्रभाव

कन्फ़्यूशियस ने स्वयं अपने उपदेशों को लेख बद्ध नहीं किया। वह कहते थे "मैं सृजन करने नहीं आया हूँ वरन् मैं अपने विचारों को औरों तक पहुँचाने आया हूँ"। स्वयं उन्होंने इस बात का कभी दावा नहीं किया कि ईश्वरीय प्रेरणा या इलहाम से ये उपदेश उन्हें मिले हैं। वह कहते थे "मैं ज्ञान लेकर पैदा नहीं हुआ, मैं तो ज्ञान का खोजी हूँ"। तदनुसार वह प्रायः प्राचीन पुस्तकों में ज्ञान ढूँढ़ते फिरते। कन्फ़्यूशियस के जमाने में भी चीन में प्राचीन साहित्य पर्य्याप्त मात्रा में था। किन्तु प्राचीन लेखकों की कृतियाँ नष्ट प्राय हो रही थीं। कन्फ़्यूशियस का ध्यान इस ओर गया, उन्होंने फौरन इन पुस्तकों का पुनरोद्धार किया। उनका संकलन किया, उन पर स्वयं टीका टिप्पणी की। (प्राचीन इतिहास, कविता और

सामाजिक रूपरेखा पर वह अक्सर व्याख्यान देते थे) कन्फ्यूशियस ने 'ऐतिहासिक पुस्तक' की भूमिका लिखी थी। इसके अतिरिक्त कन्फ्यूशियस ने प्राचीन कविताओं का संग्रह किया, तथा 'चीन के प्राचीन रस्म व रिवाज' नाम की किताब का भी संग्रह लिखा था। इस संग्रह में खूब टीका टिप्पणी उन्होंने की थी। कन्फ्यूशियस की स्वयं लिखी हुई पुस्तक जो अब भी चीन में मिलती है, वह है 'लू का इतिहास'।

कन्फ्यूशियस के उपदेश

जैसा कि हमने देखा है कि कन्फ्यूशियस राज्य के कुप्रबन्ध को न सुधार सके। उन्हें ऐसा करने का किसी ने मौका ही न दिया। किन्तु व्यक्तिगत आचरण के सुधारने का उन्होंने प्रशंसनीय प्रयत्न किया। उनके उपदेशों में सब से उत्तम उपदेश था 'जिस बात को तुम नहीं चाहते कि लोग तुम्हारे संग करें, उसे तुम भी औरों के संग न करो" वह इस पर भी बहुत जोर देते थे कि उच्च पद पर आसीन व्यक्तियों को अपना आचरण निर्मल और शुद्ध रखना चाहिये, ऐसा होने से उस पदाधिकारी के नीचे जितने लोग होते हैं, उनके आचरण में भी निर्मलता आती है। कन्फ्यूशियस की बहुत सी कहावतें प्रसिद्ध हैं। कुछ हम नीचे दे रहे हैं:—

'एक गरीब आदमी जो चापलूसी नहीं करता और धनी व्यक्ति जो मद से चूर न हो, हमें प्रायः मिल जाते हैं। किन्तु गरीब आदमी, जो अब भी प्रसन्नचित्त हो, और धनी व्यक्ति जो शिष्ठाचार अब भी निवाहता हो, विरले ही मिलते हैं'।

'ज्ञान जिस पर मनन न किया गया हो व्यर्थ है, और ज्ञान के बिना मनन करना खतरनाक है'।

'सतर्क मनुष्य गलतियाँ बहुत कम करता है'।

कन्फ्यूशियस का धर्म और उनकी फिलासफी

हम पहले कह चुके हैं कि कन्फ्यूशियस ने कभी यह नहीं कहा कि उसे ईश्वरीय प्रेरणा मिली है। उनके उपदेशों में बाह्य जीवन के सुखी बनाने का संदेश हम पाते हैं। मनुष्य और समाज के प्रति हमारे कर्त्तव्य क्या हैं, इन्हीं गुत्थियों को उन्होंने सुलझाने का प्रयत्न किया। मनुष्य ईश्वर की प्रतिमूर्त्ति है। मनुष्य के प्रति अपने कर्त्तव्य पालन से विमुख होने के अर्थ हैं ईश्वर के प्रति कर्त्तव्यच्युत होना। कन्फ्यूशियस के उपदेशों में हम चार चीजों का वर्णन कहीं भी नहीं पाते—चमत्कार पूर्ण अद्‌भुत् चीजें, बहादुरी के काम, विद्रोह, और भूत प्रेत तथा मृत आत्माएँ।

वह प्राचीन रीति रिवाज के अनुसार मृत आत्माओं के प्रति सभी रस्मों को पूरा करते, किन्तु एक बार प्रश्न किये जाने पर उन्होंने उत्तर दिया। "मनुष्य को मनुष्य के प्रति अपने कर्त्तव्य पूरे करने चाहियें, मृत आत्माओं के झंझट में पड़ने की कोई आवश्यकता नहीं। मनुष्य के ही प्रति जब तुम अपने कर्त्तव्य नहीं निवाह सकते, तो मृतात्माओं के लिये तुम क्या कर सकते हो"? कन्फ्यूशियस से पूछा गया "मरने के बाद मनुष्य की आत्मा कहाँ जाती है"? उन्होंने उत्तर दिया "जब जिन्दगी के बारे में ही हम इतना कम जानते हैं, तो मृत्यु के बारे में सब बातें कैसे जान सकते हैं"।

इस प्रकार हम देखते हैं कन्फ्यूशियस के विचार सांसारिक वस्तुओं तक ही सीमित थे। उन्होंने मनुष्य को समाज का अंग माना, उसे खूब ऊँचा स्थान दिया, किन्तु समाज से बाहर, मृत्यु के बाद उसका क्या होता है, इस प्रश्न पर उन्होंने अधिक ध्यान नहीं दिया। पुण्य और पाप के सम्बन्ध में ईश्वर क्या करता है, इस पर भी ध्यान नहीं दिया, वरन् अच्छे और बुरे कामों का असर समाज पर पड़े बिना नहीं रहता, इस पर खूब जोर दिया। कन्फ्यूशियस ने बहुविवाह की कुप्रथा पर भी ध्यान नहीं दिया, और न समाजिक रूपरेखा को बदलने की ओर ही ध्यान दिया। प्राचीन और पुरातत्व की ओर ही वह देखते रहे, नवीनता का संदेश वह न दे सके। चीन में फिर भी सर्वत्र उनका मान है। प्रगतिशील विचारों के लोग कन्फ्यूशियस की रुढ़िवादिता से घबराते हैं। उनका ऐसा सोचना बहुत अंशों में ठीक भी है।

मार्शल—चियांग-काई-शेक

(कुंवर माधवेन्द्र प्रताप नारायण सिंह)

किसी देश के राजनैतिक जीवन का दृश्य उतना ही मनोरंजक और शिक्षा-पूर्ण होता है जैसा कि उसके कार्यसञ्चालकों का जीवन। क्योंकि इन दोनों वस्तुओं में एक घनिष्ठ सम्बन्ध पाया जाता है। क्रान्ति के समय अपने देश और जाति के लिये अपनी जान को अपनी हथेली पर रख कर काम करने वालों का जीवन और भी नियन्त्रित हो जाता है। चीन की बीसवीं शताब्दी का इतिहास डा० सनयाटसेन (Dr. Sunyat-sen) और मार्शल चियांग काई शेक (Marshal Chiang-kai-shek) के अपूर्व साहस और राजनीतिकता का एक प्रशंसनीय कारनामा है।

मार्शल—चियांग-काई-शेक।

चीनी प्रजातन्त्र के संस्थापक ने चीनियों के राजनैतिक तथा सामाजिक जीवन पर वह प्रभाव डाला है जिसकी तुलना विल्सन, लेनिन और महात्मा गांधी के देशव्यापी प्रभाव से की जाती है। जिस योग्यता, कार्यपटुता तथा महान शान्ति के साथ जनरल चियांग-काई-शेक ने अपनी जाति की रक्षा की है वह अद्वितीय है। उसी की बदौलत वह आज चीन के समाज में अग्रगण्य हैं। और अपने उन गुणों से जिनसे कि इन्होंने लड़ाई के मैदानों में और शासकों की गद्दी पर बराबर दृढ़ता, चतुरता तथा कार्यपटुता के साथ काम किया है वह 'चीन की बुद्धि' कहे जाते हैं।

डा० सन (Dr. Sun-yat-sen) की मृत्यु के पश्चात् जनरल चियांग ने उनके कार्यक्रम को सँभाला और "जाति के तीन सिद्धान्त" और डा० सन की इच्छाओं की पूर्ति के हेतु इन्होंने जाति को ऊँचा उठाने का बीड़ा लिया। उन स्वार्थी लोगों के चंगुलों से, जो कि भिन्न भिन्न भागों में शासक बने बैठे थे और जिन्हें अपने स्वार्थ के अतिरिक्त और किसी बात का ध्यान न था, अपने देश को उबारने का प्रयत्न करते हुए दस वर्ष में उन्होंने समस्त चीन को एक सूत्र में बांध दिया। इन्होंने देश की आर्थिक तथा सामाजिक दशाओं को सुधारा और इन कार्यों की बदौलत वह न केवल जनता का विश्वासपात्र बने, बल्कि अन्य बाह्य शक्तियों के प्रशंसा-पात्र भी।

महान् व्यक्ति प्रायः मध्यम-श्रेणी से आते हैं, इसका इतिहास साक्षी है। जनरल चियॉग-काई-शेक भी मध्यम श्रेणी से आते हैं। सन् १८८६ ई० के अक्तूबर महीने में चिक्यांग (Chekiang) के फेंग्हुआ (Fenghua) नामक स्थान पर एक मध्यम वर्ग के वंश में पैदा हुए थे। थोड़ी ही उम्र में इनके पिता का देहान्त हो गया, मगर इनकी माता ने जो एक सुयोग्य रमणी थी, इनको उचित शिक्षा दी। माता ने ही इन्हें आत्मविश्वास, आत्मसमर्पण और देशसेवा का पाठ पढ़ाया। जैसा कि इन्होंने स्वयं ३१ अक्टूबर सन् १९३६ को अपनी पचासवीं सालगिरह के अवसर पर कहा था, "......मैं दो बातों पर सदैव विचार करता रहता हूँ और उन्हीं को सोचा करता हूँ—कि जब तक हमारे देशवासी आफत में फँसे हैं, तब तक मै समझता हूँ मैंने अपनी माता की इच्छा की पूर्ति नहीं की। जब तक देश को मुक्ति नहीं मिल जाती तब तक अपने आप को मैं इसके लिये जिम्मेदार समझता हूँ।"

सत्रह वर्ष की उम्र में यह फौज के इन्फैंट्री स्कूल में भर्ती हुए और वहाँ से निकल कर टोकियो मिलिटरी एकेडेमी में चार वर्ष तक फौजी शिक्षा ग्रहण को। अभी जब कि यह जापान ही में थे अपना जीवन क्रान्ति के लिये अर्पण कर दिया और डा० सन की स्थापित की हुई टुंगमेन्घुई (Tungmenghui) सोसाइटी के सदस्य हो गये और चीन में प्रजातन्त्र की स्थापना का स्वप्न तभी से देखने लगे।

इस तरह ज्योंही सन् १९११ ई० में क्रान्ति आरम्भ हुई यह चीन में आये और शंघाई में सेनापति बने। इन्होंने शंघाई को मंचू लोगों (Manchus) से ले लिया।

इन विजयों के पश्चात् क्रान्ति सफल होने पर यह दस वर्ष तक इन सब कार्यों से अलग रहे और इस प्रकार सन् १९२३-२४ ई० से इनके जीवन का एक दूसरा अध्याय प्रारम्भ होता है और यह फिर कैन्टन के क्रान्तिकारी आन्दोलन में हिस्सा लेते हैं।

डा० सनयात सेन को इनकी योग्यता ने अपनी ओर आकर्षित किया और क्रमशः यह स्टाफ अफसर से ह्वाम्पोआ मिलिटरी एकेडेमी के सभापति नियुक्त हुये; और जब डा० सन के विरुद्ध उनके एक साथी ने बलवा किया तो मार्शल चियांग ने अपनी एक छोटी सी फौज द्वारा उस बलवाई को हरा दिया और इस तरह अपनी योग्यता तथा वीरता का परिचय दिया। अपनी इस प्रकार की बहादुरी द्वारा सन् १९२५ ई० तक इन्होंने क्वांगटंग (Kwangtung) को कोमिंगटांग दल के अधीन कर लिया, और सन् १९२६ ई० में इन्होंने देश को छोटे छोटे टुकड़ों में विभाजित होने से बचाया। सारा देश स्वार्थी शासकों द्वारा चूसा जा रहा था, और नष्ट व बर्बाद हो रहा था—उन सब से बचाने के लिये चीन का एक बहुत बड़ा हिस्सा इन्होंने अपने प्रयत्न द्वारा कोमिंगटांग के अधीनस्थ किया। उसी समय से मार्शल चियांग चीन देश के चतुर नाविक बने।

वास्तव में चीन में एकता पैदा करने का श्रेय यदि किसी को दिया जा सकता है, तो चियांग-काई-शेक को।

इन्होंने फौज की शक्ति से देश को एकता के सूत्र में नहीं बाँधा, किन्तु न्याय और शान्ति की शक्ति से, अपनी योग्यता तथा कार्यपटुता के बल से। किसी ने कहा है, "केवल छः महीने फौज में काम करने से मनुष्य जंगली हो जाता है। ठीक है, परन्तु उस मनुष्य को हम कितना बड़ा कहेंगे जिसको लड़कपन से ही फौजी शिक्षा मिली, फौजी काम ही जिस के जीवन का अधिकतर भाग रहा, और इस पर भी वह-जंगली नहीं निकला, उसमें देश प्रेम तथा कर्तव्य शेष रहे? मार्शल चियांग-काई-शेक के मस्तिष्क का जो विकास हो रहा था वह न तो सिकुड़ा और न उसकी वृद्धि ही रुकी। उसने संसार को दिखा दिया कि यद्यपि वह एक फौजी आदमी है मगर उसने अन्य शक्तियों को तिलांजलि नहीं दिया है। उसने संसार को दिखा दिया कि ज़बान और शब्दों में वह शक्ति है कि वह इस्पात को भी भी मोम बना सकती है। चियांग-काई-शेक की बड़ाई इस बात में है कि इन्होंने चीन से गृह कलह दूर किया। सारे चीन को एकता के सूत्र में बाँधा। किसी ने ठीक कहा है, "अगर चीन के इस काल का इतिहास लिखा जायगा तो उसमें एक सुनहरा पृष्ठ होगा जिसमें लिखा जायगा कि चीन की राजनैतिक एकता, आत्मशक्ति, वैयक्तिक योग्यता के बल पर हुई, फौज के बल पर नहीं। वह पुरुष जो ऐसा करने में समर्थ हुआ, निस्सन्देह हमारी प्रशंसा का पात्र है। ये ही कारण हैं जिनकी वजह से चियांग-कई-शेक के लिये चीन निवासियों के दिल में भक्ति है, श्रद्धा है और है प्रेम।

पूर्ण जातीय कार्यक्रम ने, जो कि आम जनता की शिक्षा के विषय में उनकी आर्थिक समस्या के सुलझाने के विषय में, तथा उनकी एकता तथा संगठन के विषय में थे, चीन के अमन चैन का मार्ग साफ किया। वहाँ के आर्थिक सुधार, स्वास्थोन्नति, व्यापार मार्ग के सुधार और उनमें वृद्धि और नये होने वाले आविष्कारों का प्रोत्साहन आदि कार्यों ने मार्शल चियांग-काई-शेक के शासन को बहुत ही महत्वपूर्ण बना दिया।

चियांग-काई-शेक का एक शासनकर्ता तथा 'पब्लिक मैन' के रूप में बहुत नाम है, मगर एक

साधारण मनुष्य की हैसियत से इन्हें लोग बहुत कम जानते हैं। वास्तव में इन्होंने सिवा साहस भरे तथा देश सुधार के कामों के और किसी काम के बारे में सोचा भी नहीं। यही नहीं, जैसा कि हर एक शासक के लिए आवश्यक होता है कि वह निरन्तर अध्ययन करता रहे, चियांग-काई-शेक भी डा० सन (Dr. Sun) की पुस्तकों, तथा तर्क शास्त्र, फिलासफी राजनीति, भूगोल, सामाजिक और फौज सम्बन्धी पुस्तकों का बराबर अध्ययन करते रहे हैं।

उन्होंने कूमिंगटांग (Kuomingtong) के लिए अपने को सदा के लिए समर्पित कर दिया है, साथ ही साथ अपने शिक्षा सम्बन्धी और सामाजिक कार्यक्रम में अपनी जातीयता और देश प्रेम का बहुत बड़ा ध्यान रक्खा है। वह लोगों की दैनिक आय को विस्तृत आर्थिक व्यापार मार्ग तथा सामाजिक सुधारों के बल पर बढ़ाना चाहते हैं।

१९२६ में नेशनल गवर्नमेण्ट कायम होने के बाद से देश का शासन सूत्र कूमिङ्गटांग पार्टी के हाथ में आया। इस पार्टी के सर्वेसर्वा चियांग-काई-शेक हैं। खेद की बात है कि यह पार्टी क्रमशः चीन के धनिक वर्ग के प्रभाव में आ गई। नतीजा यह हुआ कि नेशनल गवर्नमेण्ट को यह बात बुरी मालूम हुई कि किसान और मजदूर अपना संगठन करें। किसानों के संगठन का समर्थक साम्यवादी दल नेशनलिस्ट सरकार की आखों में खटकने लगा। जेनरल चियांग-काई-शेक को अपने दल के निर्णय के अनुसार साम्यवादी दल का दमन करने के लिए बाध्य होना पड़ा। लगातार ८ वर्ष तक कोशिश करने पर भी साम्यवादी दल कुचला न जा सका। दिसम्बर १९३६ में शान्सी प्रान्त में साम्यवादियों के दमन के लिये स्वयं चियांग-काई-शेक गये, किन्तु वहाँ आप साम्यवादियों के शिविर में बन्दी हो गये। फिर आप की पत्नी मैडम चियांग-काई-शेक के प्रयत्न से दोनों पक्ष के बीच समझौता हुआ, जिसके अनुसार चियांग-काई-शेक ने साम्यवादियों के संग एक संयुक्त मोर्चा कायम करने की बात स्वीकार की। इस तरह देश के दो प्रभावशाली दलों ने जापान के विरुद्ध अपना मोर्चा दृढ़ किया। साम्यवादी दल ने अपनी सुसंगठित 'लाल सेना को' चियांग-काई-शेक के नायकत्व में दी।

चीन जापान के इस युद्ध में इस संयुक्त मोर्चा के कायम होने से चियांग-काई-शेक की योग्यता और राजनीतिज्ञता के प्रदर्शन के लिये पूरा मौका मिल सका है। यह ठीक है कि जापान के पास नूतनतम ढंग पर सञ्चालित सेना है, किन्तु फिर भी चीन के लिये हतोत्साह होने की जरूरत नहीं है। उसके पास भी चियांग-काई शेक जैसे देशभक्त बहादुर हैं*।

---

* अमृत बाज़ार पत्रिका मे प्रकाशित एक अंग्रेज़ी लेख के आधार पर —सम्पादक

मैडम—चियांग-काई-शेक

चीन के स्वातन्त्र्य-संग्राम में व्यस्त जेनरल चियांग-काई-शेक की अर्द्धाङ्गिनी आज चीन की रक्षा करने में जो जान से जुटी हुई है। आज वह चियांग-काई-शेक का दाहिना हाथ बनी हुई है।

मैडम चियांग काई शेक का नाम विवाह के पूर्व कुमारी मिलिग-सुंग था। इनके पिता गरीबी के कारण अमेरिका के संयुक्त राष्ट्र में जीवन यापन के लिये चले गये थे। वहाँ पर उन्होंने ईसाई धर्म ग्रहण कर लिया था। अमेरिका में उन्होंने खूब धन कमाया। आप के कई सन्तानें हुईं। अपनी लड़कियों को आप ने उच्च शिक्षा दी, और बड़े उच्च घरानों में उनकी शादी की। सबसे बड़ी लड़की ए-लिंग की शादी डा० सन्यातसेन से हुई और छोटी लड़की कुमारी मिलिग-सुंग की शादी जेनरल चियांग-काई-शेक से हुई। कुमारी मिलिंग ने अमेरिका के कालेज से ग्रेजुएट की डिग्री प्राप्त की है।

मैडम—चियाग-काई-शेक

मैडम चियांग-काई-शेक एक चरित्रवान तथा आदर्श महिला हैं। आप निष्ठा और सच्चरित्रता में विश्वास रखती हैं। विवाह के बाद अपने घर में उन्होंने सादगी और सदाचार का एक अपूर्व वातावरण उत्पन्न किया। शराब, तम्बाकू, अफीम आदि दुर्व्यसनों का प्रवेश एक दम रोक दिया। जेनरल चियांग-काई-शेक ने भी तम्बाकू आदि का त्याग कर दिया।

मैडम-चियांग-काई शेक का कार्य्यक्षेत्र घर तक ही सीमित न रहा। उसने सारे देश में 'नव-जीवन आन्दोलन' [Newlife Movement] इन्हीं महत्वाकांक्षाओं को लेकर चलाया। यह आन्दोलन राजनैतिक सिद्धान्तों पर अवलम्बित है। स्त्रियों की उन्नति के लिये इस आन्दोलन में विशेष महत्व प्रदान किया गया है। स्त्रियों के लिये आठ कर्त्तव्य इस आन्दोलन में निर्धारित किये गये है। ये कर्त्तव्य हैं, भक्ति, पवित्रता, प्रेम, पितृभक्ति, पतिव्रत धर्म, शान्ति-प्रियता, न्यायप्रियता और निर्भीकता।

साथ ही स्त्रियों के लिये निम्नलिखित वस्तुएँ आवश्यक हैं:—

बदन को ढकने वाले वस्त्र पहनना, सड़क पर पाजामे पहन कर न निकलना, चुम्बन न करना, सिगरेट कभी न पीना और न अफीम का प्रयोग करना।

इस आन्दोलन के आरम्भ होते ही चीन में मानों एक तूफान सा आ गया। जगह जगह सिपाही यह देखने के लिये नियुक्त किये गये कि चीनी स्त्रियाँ पर्य्याप्त मात्रा में वस्त्र पहने हैं या नहीं? मर्द और स्त्रियों के स्नान के स्थान अलग अलग बनाये गये। चरित्र की निर्मलता पर खूब जोर दिया गया। दर्जियों की दूकानों पर तथा पोशाक बेचने वालों के यहाँ राज कर्मचारी यह देखने के लिए तैनात थे कि किस प्रकार के कपड़े यहाँ तैय्यार किये जाते है। फैशन की लहर में बहने वाली युवतियों को एक कड़ी चेतावनी मिली। चीन के नैतिक उत्थान का सारा श्रेय मैडम चियांग-काई-शेक को मिलना चाहिये। इसमें दो मत तो हो ही नहीं सकते।

लड़ाई छिड़ने के पहले तक मैडम चियांग-काई-शेक अपने पति के लिये व्याख्यान तैय्यार करतीं, उनकी चिट्ठियाँ टाइप करतीं और उन्हें राजकीय मामलों में परामर्श भी देतीं। मैडम चियांग-काई अंग्रेजी और फ्रेन्च भी बखूबी जानती हैं, अतः जेनरल चियांग-काई-शेक से जब कोई अँग्रेज या फ्रेन्च मिलने

आता है, तो आप ही उनके लिये दुभाषिये का भी काम करती हैं।

लड़ाई छिड़ने के साथ ही मैडम चियांग काई का उत्तरदायित्व भी बढ़ गया है। चीन के स्वातन्त्र्य संग्राम में आप भी पूरा सहयोग दे रही हैं। वायुयान सेना विभाग की देख रेख आप ही कर रही हैं। इस विभाग की आप मंत्री हैं।

चीन के सम्बन्ध में मैडम चियांग-काई-शेक ने अनेक पुस्तकें भी अँग्रेजी भाषा में लिखी हैं। आप की पुस्तक 'China At Cross Roads' बड़ी उच्च श्रेणी की है। इस पुस्तक में चीन के सामाजिक जीवन का आप ने बहुत ही सजीव चित्र खींचा है। इस पुस्तक में आपने अनेक- समस्याओं का समाधान किया है। चीन में पश्चिमी सभ्यता अपनी जड़ क्यों न जमा सकी ? चीन निवासी युद्ध को घृणा की दृष्टि से क्यों देखते हैं ? इन सभी प्रश्नों पर आप ने प्रकाश डाला है।

इस वर्तमान संकटावस्था में चीन के लिये मैडम चियांग-काई-शेक अन्य देशों में सहायता के लिये पुस्तकों और समाचार पत्रों के द्वारा आन्दोलन कर रही हैं। आये दिन मैडम चियांग-काई-शेक की ओर से विज्ञप्तियाँ प्रकाशित होती हैं। इङ्गलैण्ड में चीन सहायक संस्था हाल में स्थापित हुई है। मैडम चियांग-काई-शेक का इस संस्था से घनिष्ट सम्बन्ध है। इस संस्था की ओर से युद्ध स्थल के घायल सैनिकों की मरहम पट्टी के लिये हर प्रकार की सामग्री इकट्ठी की जाती है।

शंघाई के निकटवर्त्ती प्रदेशों में युद्ध के कारण मुसीबत में पड़े हुए स्त्रियों, बच्चे तथा बूढ़ों के लिये लगभग २० टन खाद्य सामग्री तथा वस्त्रादि इङ्गलैण्ड से उक्त संस्था ने मैडम-चियांग-काई-शेक के पास भेजा है। आप की कार्य्यक्षमता देख कर दांतों तले उंगली दबानी पड़ती है! अभी आफ़िस में हैं तो अभी क्षण भर बाद रणस्थली में वायुयान द्वारा पहुँच गयीं। चीन देश की इस साहसी महिला को रण-चण्डी का अवतार कहें तो कोई अतिशयोक्ति न होगी।

साल भर हुए शान्सी में जब जेनरल चियांग-काई शेक साम्यवादियों के हाथ बन्दी हो गये थे, तो आप फौरन वायुयान द्वारा वहाँ पहुँचीं, और साम्यवादी नेताओं से बात चीत कर उभय पक्ष में समझौता कराया, और जेनरल चियांग-काई-शेक को छुड़ा कर साथ ले आईं। चीन की वर्त्तमान राजनीति में मैडम चियांग-काई-शेक का एक महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें किसे सन्देह हो सकता है ?

हुइ-शी

चीन के गांधी

डा० हुइ-शी चीन की महान आत्माओं में से हैं। जिस प्रकार भारतवर्ष में महात्मा गांधी चौबीसों घण्टे भारत के हित साधना में लीन रहते हैं, उसी प्रकार डा० हुइ-शी भी चीन की उन्नति के लिये दिन रात परिश्रम करते रहते हैं।

अमेरिका में आपने शिक्षा ग्रहण की, पश्चिमी सभ्यता और विचारधारा का खूब ध्यान पूर्वक मनन किया। आप ने देखा कि पश्चिम के यथार्थवाद में ही चीन की उन्नति निहित है। पूर्वीय विचारधारा और फिलासफी में 'विराग' और अकर्मण्यता को अधिक प्रोत्साहन मिलता है, उसे हुइ-शी ने अच्छी तरह भाँप लिया था। अतएव आपने प्रण किया कि वह चीन में नई विचारधारा के प्रवर्त्तक बनेंगे, चीन को वह कर्मशील बनायेंगे। हुइ-शी चीन में आशा और नवजीवन का सन्देश ले कर आये।

चीन की प्राचीन सभ्यता से हुइ-शी विमुख हो गये हों, सो बात नहीं है। वे चाहते हैं कि चीन की प्राचीन कला और वर्त्तमान जीवन को सम्पर्क में लाया जाय—चीन की प्राचीन कला एक अलग सी अछूती, अजायब घर की वस्तु न बनी रह जाय। डा० हुइ-शी चीन के अतीत से प्राणशक्ति प्राप्त करना चाहते हैं। इन्होंने चीन के शानदार अतीत का भी मनोयोग पूर्वक अध्ययन किया है—हर एक बातों को आलोचनात्मक दृष्टि से देखा है। अतीत काल की वस्तुओं को महत्व तो यह देते हैं, किन्तु उसकी उतनी ही इज्जत की जाय जितनी अतीत काल में उसकी इज्जत थी, इस विचार से वह सहमत नहीं हैं। प्राचीन चित्रकला, चीनी बर्तनों में मीनाकारी के काम, इन सब की प्रशंसा करने के लिये वह राजी हैं, किन्तु उनका कहना है, आधुनिक युग में जरूरत इस बात की है कि चीन कुछ और कर दिखाये—अन्तर्राष्ट्रीय मैदान में चीन तभी टिक सकता है जब आधुनिक युग की चीजें वह पैदा कर सके। पश्चिम के राष्ट्रों के संग ... भी भाग लेना है—अलग अतीत की गोद में पड़े रहने से तो हम कोसों दूर पीछे छूट जायँगे। अतीत के सामाजिक और धार्मिक बन्धनों को तोड़ कर चीन को स्वतन्त्रता पूर्वक आगे बढ़ना है। अन्तर्मुखी होने से इसका काम नहीं चलने का—कूप-मण्डूक को गुजर इस बीसवीं सदी में नहीं हो सकती।

१८९८ का विद्रोह असफल क्यों रहा? इसलिये कि चीन की जनता रूढ़ियों की शृङ्खला में बुरी तरह से जकड़ी हुई थी—शान्ति, धर्म और सभ्यता के झूठे नारे लगा कर चीन की जनता को स्वार्थी लोगों ने धोके में डाल रक्खा—फल यह हुआ कि चीन विदेशियों के शिकंजे में और भी जकड़ गया। डा० हुइ-शी इसी लिये बड़े बेचैन थे—वे चाहते थे कि रूढ़िवादिता से चीन को जल्द से जल्द छुटकारा मिले।

चीन की प्राचीन शिक्षा पद्धति कुछ इने गिने धनिकों और विद्वानों के काम की चीज है। भाषा क्लिष्ट और दुरूह। डा० हुइ-शी ने देखा कि चीन की साधारण जनता इस शिक्षा पद्धति से कोई लाभ नहीं उठा सकती। और साधारण जनता को शिक्षित बनाये बिना चीन की सामाजिक या राजनीतिक उन्नति के स्वप्न देखना एक भारी भूल होगी। अतएव पहला काम जो हुइ-शी ने किया, वह था भाषा को सरल और सुगम्य बनाना। इसके ये अर्थ नहीं है कि चीन की प्राचीन संस्कृति की ओर से लोगों का ध्यान हट गया। लेकिन इतना जरूर है कि अब विशेषज्ञ लोग ही प्राचीन शिक्षा पद्धति ग्रहण करते हैं। डा० हुइ-शी इस बात से भी वाकिफ हैं कि आधुनिक काल में चीन के लोग धर्म के पचड़े में ज्यादा नहीं पड़ते। वे अपने दैनिक जीवन में धर्म को अधिक महत्वपूर्ण स्थान नहीं देते। ईसाई मिशनरी लोग गाँवों में प्रचार कार्य करते घूमते हैं। बच्चों को शिक्षा देते हैं—गाँव का कृषक देखता है कि ईसाई होने से पढ़ने लिखने की सुविधा मिलेगी। उसके बच्चों को बपतिस्मा मिलता है। स्कूल की शिक्षा पाने पर उसके लड़के स्वभावतः

औरों से अधिक बुद्धिमान होते हैं। तिजारत और अन्य पेशों में वह ज्यादा धन कमा सकते हैं। इस तरह ईसाई धर्म का आलिंगन लोग ऐश्वर्य और धन के लालच से करते हैं—कुछ धार्मिक भावनाओं से प्रेरित होकर नहीं। हुड-शी ने देखा कि चीन की जनता में धर्म और उच्च सिद्धान्तों के प्रति एक विचित्र उदासीनता भरी हुई है।

थोड़े से पढ़े लिखे लोग वन्ध्या फिलासफी में दिन रात पड़े रहते। उन्हें परवाह न थी कि उनकी फिलासफी से चीन की निरीह जनता का कहाँ तक उपकार हो सकता है—उनके ज्ञान से चीन में कहाँ तक जागृति उत्पन्न की जा सकती है। नतीजा यह हुआ कि धर्म कुछ थोड़े से मूर्ख और धोकेबाज़ पाखण्डियों के हाथ में चला गया—मन्दिरों में केवल वे ही लोग जाया करते जो शकुन निकलवाना, या शायत मालूम करना चाहते। यही नहीं, इन मुट्ठी भर विद्वानों ने अपने यहाँ के महान पुरुषों की जीवनियाँ तक नहीं लिखीं—आने वाली पीढ़ी के लिये पथ प्रदीप का काम करने वाली जीवनियों से आज का चीन वञ्चित है। डा० हुड-शी के मस्तिष्क में ये ही विचार दिन रात चक्कर लगाते रहे, और चीन की इन्हीं समस्याओं को सुलझाने के लिये इन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन लगाने का प्रण कर लिया। नाटक, ग्राम्यगीत इत्यादि सभी चीज़ों के प्रति चीन के दार्शनिक उदासीन रहे। इस तरह ये चीजें भी पुराने पेशेवर नाचने-गाने वालों के हाथ में चली गई। कला के विकास की जगह उसकी अवनति ही होती गई। डा० हुड-शी ने चीन की जनता का ध्यान उक्त प्रश्नों की ओर आकर्षित किया।

हुड-शी ने देखा कि चीन की दशा आज शोचनीय है। चारों ओर दारिद्रय छाया हुआ है। कला और सभ्यता की ओर ध्यान देने के पहले जरूरी है कि जनता की रोटी का सवाल हल किया जाय। अतएव हुड-शी ने इस बात पर सब से ज्यादा जोर दिया कि कला और प्राचीन संस्कृति का अध्ययन करना आज हमारे लिये मूर्खता होगी। हमें विज्ञान के नूतनतम आविष्कारों की सहायता से चीन को समृद्धिशाली बनाना है। नंगे और भूखे चीननिवासियों की आवश्यकताओं को पहले पूरा करना होगा।

डा० हुड-शी एक यथार्थवादी हैं। इसी कारण कला और प्राचीन संस्कृति के प्रति इस तरह की विमुखता दिखा रहे हैं। इसके यह अर्थ कदापि नहीं हैं कि वे चीन की कला और संस्कृति की उन्नति नहीं चाहते किन्तु वे इस बात को महसूस करते हैं कि चीन आज आर्थिक संकट में पड़ा हुआ है, विदेशी ताक़तें उसका गला घोंट रही हैं। चीन को और समूचे चीन को एक साथ उठ खड़ा होना है।

———

डा० सन्यात सेन

डा० सन्यात सेन को यदि हम चीन का निर्माता कहें तो अतिशयोक्ति न होगी। चीन की वर्तमान प्रजातन्त्र शासन प्रणाली डा० सन्यात सेन के ही अथक परिश्रम का फल है।

इनके पिता छोटी हैसियत के व्यक्ति थे और इन्होंने इसाई धर्म की दीक्षा ले ली थी। डा० सन्यात सेन का जन्म १८६७ ई० में हुआ था। वचपन से ही ये वड़े प्रतिभाशाली और होनहार थे। आपने हांग-कांग के मेडिकल कालेज से डाक्टरी की परीक्षा १८९४ ई० में पास की थी। जिन दिनों आप मेडिकल कालेज में शिक्षा पा रहे थे आप क्रान्तिकारियों के संसर्ग में आये और गुप्त रूप से उनके साथ ग़ैर कानूनी कार्यवाहियों में भाग भी लेते रहे—१८९५ ई० में एक क्रान्तिकारी षड्यन्त्र में आपका भी हाथ था। उस षड्यन्त्र में आपके अन्य साथी पकड़े गये और उन्हें फाँसी की सजा मिली। भाग्यवश आप वच गये।

स्वदेश में रहना आपके लिये खतरे से खाली न था अतएव इटली के सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी नेता मेजनी की भाँति आप ने भी विदेशों में अड्डा जमाया और वहीं से क्रान्ति की तैयारियाँ करने लगे। योरुप और जापान के प्रवासी चीनियों की मदद से आपने स्थान स्थान में क्रान्तिकारी दल स्थापित किये। इस वीच में आप ने चीन में गुप्त कमेटियाँ कायम करने के लिये वाहर के देशों में खूब रुपये भी इकट्ठा किये। जिन दिनों विदेशियों की ज्यादतियों से तंग आकर उत्तर चीन में १९०० का वाक्सर विद्रोह हुआ, डा० सन्यात सेन ने इस सुअवसर का उपयोग मंचू खान्दान की वादशाहत को खतम करके प्रजातन्त्र राज्य स्थापित करने के लिये किया किन्तु इस प्रयत्न में आप सफल न हो सके। हाँ क्रान्तकारियों का घोर दमन सरकारी कर्मचारियों द्वारा जरूर होने लगा।

डा० सन्यात सेन ने इन्हीं दिनों राजनीतिक क्षेत्र में अपने तीन सिद्धान्त लोगों के सामने रक्खे। राष्ट्रीयता, प्रजातन्त्र और समाजवाद। आपका कहना था कि किसी आदर्श गवर्नमेण्ट के लिये आवश्यक है कि इन्हीं तीनों सिद्धान्तों को वह अपना स्तम्भ वनाये। आप ने स्वयम् विस्तार पूर्वक इन सिद्धान्तों का प्रतिपादन भी किया। उदाहरण के लिये आप ने उक्त सिद्धान्तों की रक्षा के लिये गवर्नमेण्ट के पाँच विभाग वनाये। शासन विभाग, व्यवस्थापिका विभाग, न्याय विभाग, सिविल सर्विस परीक्षा विभाग और सेन्सर विभाग। सारांश यह कि आपका प्रभाव इतना वढ़ा कि चीन के सम्राट की ओर से डा० सन्यात सेन के सिर के लिये एक लाख पौंड का इनाम घोषित किया गया। १८९६ ई० का जिक्र है, उन दिनों आप लन्दन में थे, चीन के राजदूत निवास में आप वन्द कर दिये गये। किसी को कुछ पता न था। सारी कार्यवाही चुपके चुपके चीन सरकार की ओर से हुई थी। डा० सन्यात सेन ने चुपके से वहाँ के एक वार्डर के हाथ एक चिट्ठी अपने मित्र के पास भेजी। इसी मित्र की कोशिशों की वजह से आप कई दिनों वाद रिहा हुए।

चीन में क्रान्ति की खूब जोरों में तैयारियाँ हो रही थीं। चीन के तत्कालीन सम्राट की कायरता से लोग तंग आ गये थे। जब तक सम्राज्ञी डवाजर जीवित थी उसने देश के गर्म नेताओं को सुधार के फन्दों में फँसा रक्खा था, किन्तु उसकी मृत्यु के वाद मन्चू खान्दान में और कोई ऐसा न रहा जो उसकी तरह कूटनीति से काम लेता। अतएव देश के भीतर राजनीतिक अशान्ति वढ़ती ही गई। इस क्रान्तिकारी आन्दोलन में प्रमुख भाग लेने वाला कूमिंगटांग दल था जिसकी स्थापना डा० सन्यात सेन ने कुछ दिनों पूर्व की थी। हजारों मील दूर से डा० सन्यात सेन चीन की क्रान्ति की तैयारियों का संचालन करते रहे। मानों दूर पर वैठा हुआ इञ्जीनियर विजली के वटन दवा रहा हो। जिस समय १९११ ई० की क्रान्ति हुई, डा० सन्यात सेन लन्दन में थे। पाँचवीं जनवरी १९११ ई० को आप चीन लौटे और राष्ट्रीय समिति के अनुरोध से आपने नानकिंग में नई प्रजातन्त्र का अस्थायी प्रेसीडेन्ट वनना स्वीकार किया।

अभी क्रान्ति का सिलसिला जारी ही था। आपके चीन में आ जाने से जनता का उत्साह और भी वढ़ा।

निदान १२वीं फरवरी को चीन के तत्कालीन सम्राट ने स्वयम् राजगद्दी का त्याग किया और उसने घोषणा की कि चीन की हुकूमत की बागडोर प्रजातन्त्र के हाथों में दी जाय। शाही जमाने का एक मन्त्री, युवान-शी-काई जिसने क्रान्तकारियों का पक्ष लिया था गवर्नमेण्ट के पुनरनिर्माण के लिये चुना गया, और डा० सन्यात सेन कुछ दिनों के लिये प्रेसीडेन्ट पद से अलग हो गये। प्रजातन्त्र की अध्यक्षता का भार यूवान को सौंपा गया और डा० सन्यात सेन ने स्वयम् व्यापार विभाग के डाइरेक्टर जनरल के पद को ग्रहण किया। विशेषज्ञों का विचार है कि डा० सन्यात सेन हुकूमत और इन्तिजाम का काम ठीक तौर से सम्हाल नहीं सकते थे, यद्यपि आप राजनीति में पूर्ण पण्डित थे और आपके राजनीति सम्बन्धी सिद्धान्त सर्वथा दोषरहित थे।

यूवान-शी-काई के हाथों में प्रजातन्त्र के मूल सिद्धान्तों का विकास ठीक रूप से न हो पाया। यूवान-शी-काई यश लालसा के पीछे कूमिंगटांग पार्टी के मूल सिद्धान्तों को भूल गए। डा० सन्यात सेन भला इसे कब सह सकते थे, उन्होंने यूवान-शी-काई का तीव्र विरोध किया और यूवान-शी काई की मृत्यु के बाद १९१७ ई० में नानकिंग की प्रजातन्त्र सरकार की सत्ता न मान कर डा० सन्यात सेन ने दक्षिण चीन में एक स्वतन्त्र प्रजातन्त्र गवर्नमेण्ट स्थापति की। अपना प्रधान कार्यालय उन्होंने कैन्टन में बनाया। लेकिन यहाँ पर भी फौजी अफसरों ने धीरे धीरे हुकूमत की शक्ति अपने हाथ में लेनी शुरू की। और कोई चारा न देख कर डा० सन्यात सेन ने इस प्रजा-तन्त्र की अध्यक्षता से इस्तीफा दे दिया। किन्तु १९२१ ई० में दक्षिण चीन की इस प्रजातन्त्र गवर्न-मेण्ट ने डा० सन्यात सेन को अध्यक्ष के पद पर फिर बुलाया। उस उग्र दल के प्रजातन्त्र का जोर दिन प्रति दिन बढ़ता ही गया और नानकिंग की गवर्नमेण्ट को अपने हाथ में करने की तैयारियाँ होने लगीं।

जैसा कि हम कह आए हैं डा० सन्यात सेन का तीसरा सिद्धान्त समाजवाद का था। पूँजीपतियों से डा० सन्यात सेन की पार्टी की सदा अनबन रही। किन्तु इस समाजवाद ही के कारण किसान और मजदूरों की पूर्ण सहानुभूति आप के साथ थी। आप का आन्दोलन सामूहिक आन्दोलन था। कैन्टन के मजदूरों को मजदूरी बढ़ाने के लिये आपने कई बार सफल प्रयत्न किये।

आपकी मृत्यु पेकिंग में १२ मार्च १९२५ ई० में हुई। आप कैन्सर की बीमारी से मरे। आपकी अस्थियाँ १९२९ में पेकिंग से नानकिंग ले आई गईं और एक भव्य स्मारक भवन में रक्खी गईं।

डा० सन्यात सेन ने चीन में एक जान फूंकी थी। उनके राजनीति सम्बन्धी तीन सिद्धान्तों पर १९२७ में नानकिङ्ग की नेशनल गवर्नमेण्ट ने अपना प्रजातन्त्र शासन विधान बनाया। मृत्यु के उपरान्त डा० सन्यात सेन की प्रतिष्ठा एक देवता के तुल्य होने लगी। जीते जी चीन की जनता के हाथों में गवर्नमेण्ट की सत्ता को ले आने की आप कोशिश करते रहे। मरने के समय भी आप की यही एक मात्र इच्छा रही। मृत्यु के कुछ समय पहले आप ने राष्ट्र के नाम जो वसीयत की थी, उसे हम यहाँ देकर यह लेख समाप्त करते हैं।

डा० सन्यात सेन का वसीयत-नामा

"पिछले ४० वर्षों से लगातार मैं जन क्रान्ति के लिये उद्योग करता रहा हूँ। इस लम्बी अवधि में मेरी एक मात्र कामना यह रही है कि हमारा देश भी अन्य राष्ट्रों की तरह स्वतंत्र और समृद्धिशाली बन सके।

इन पिछले ४० वर्षों के अनुभव से मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचता हूँ कि मेरी यह कामना तभी पूरी हो सकती है जब जनसाधारण अब पूर्णरूप से जागृति पैदा कर सकें, और शोषित वर्ग के साथ कंधे से कंधा मिलाएं।

क्रान्ति का काम अभी पूरा नहीं हो सका है। हम अपने साथियों से अनुरोध करते हैं कि कूमिङ्ग-टांग पार्टी के आदेश और उसके प्रस्तावों पर वे अमल करें। हमें भरसक प्रयत्न करना है कि विदेशी राष्ट्रों से वञ्चनामय जो सन्धियाँ चीन की पिछली गवर्न-मेण्ट ने की हैं, उन्हें हम भंग करायें। हम नहीं चाहते कि विदेशी राष्ट्र जबर्दस्ती चीन का शोषण करें। तुम्हारे लिये यही मेरी हार्दिक प्रेरणा है"।

सन्यात सेन

डा० सन्यात सेन

डा० सन्यात सेन को यदि हम चीन का निर्माता कहें तो अतिशयोक्ति न होगी। चीन की वर्तमान प्रजातन्त्र शासन प्रणाली डा० सन्यात सेन के ही अथक परिश्रम का फल है।

इनके पिता छोटी हैसियत के व्यक्ति थे और इन्होंने इसाई धर्म की दीक्षा ले ली थी। डा० सन्यात सेन का जन्म १८६७ ई० में हुआ था। बचपन से ही ये बड़े प्रतिभाशाली और होनहार थे। आपने हांग-कांग के मेडिकल कालेज से डाक्टरी की परीक्षा १८९४ ई० में पास की थी। जिन दिनों आप मेडिकल कालेज में शिक्षा पा रहे थे आप क्रान्तिकारियों के संसर्ग में आये और गुप्त रूप से उनके साथ ग़ैर कानूनी कार्यवाहियों में भाग भी लेते रहे—१८९५ ई० में एक क्रान्तिकारी षड्यन्त्र में आपका भी हाथ था। उस षड्यन्त्र में आपके अन्य साथी पकड़े गये और उन्हें फाँसी की सजा मिली। भाग्यवश आप बच गये।

स्वदेश में रहना आपके लिये खतरे से खाली न था अतएव इटली के सुप्रसिद्ध क्रान्तिकारी नेता मेजनी की भाँति आप ने भी विदेशों में अड्डा जमाया और वहीं से क्रान्ति की तैयारियाँ करने लगे। योरुप और जापान के प्रवासी चीनियों की मदद से आपने स्थान स्थान में क्रान्तिकारी दल स्थापित किये। इस बीच में आप ने चीन में गुप्त कमेटियाँ कायम करने के लिये बाहर के देशों में खूब रुपये भी इकट्ठा किये। जिन दिनों विदेशियों की ज्यादतियों से तंग आकर उत्तर चीन में १९०० का बाक्सर विद्रोह हुआ, डा० सन्यात सेन ने इस सुअवसर का उपयोग मंचू खान्दान की बादशाहत को खतम करके प्रजातन्त्र राज्य स्थापित करने के लिये किया किन्तु इस प्रयत्न में आप सफल न हो सके। हाँ क्रान्तकारियों का घोर दमन सरकारी कर्मचारियों द्वारा जरूर होने लगा।

डा० सन्यात सेन ने इन्हीं दिनों राजनीतिक क्षेत्र में अपने तीन सिद्धान्त लोगों के सामने रक्खे। राष्ट्रीयता, प्रजातन्त्र और समाजवाद। आपका कहना था कि किसी आदर्श गवर्नमेण्ट के लिये आवश्यक है कि इन्हीं तीनों सिद्धान्तों को वह अपना स्तम्भ बनाये। आप ने स्वयम विस्तार पूर्वक इन सिद्धान्तों का प्रतिपादन भी किया। उदाहरण के लिये आप ने उक्त सिद्धान्तों की रक्षा के लिये गवर्नमेण्ट के पाँच विभाग बनाये। शासन विभाग, व्यवस्थापिका विभाग, न्याय विभाग, सिविल सर्विस परीक्षा विभाग और सेन्सर विभाग। सारांश यह कि आपका प्रभाव इतना बढ़ा कि चीन के सम्राट की ओर से डा० सन्यात सेन के सिर के लिये एक लाख पौंड का इनाम घोषित किया गया। १८९६ ई० का जिक्र है, उन दिनों आप लन्दन में थे, चीन के राजदूत निवास में आप बन्द कर दिये गये। सारी कार्यवाही चुपके चुपके चीन सरकार की ओर से हुई थी। किसी को कुछ पता न था। डा० सन्यात सेन ने चुपके से वहाँ के एक वार्डर के हाथ एक चिट्ठी अपने मित्र के पास भेजी। इसी मित्र की कोशिशों की वजह से आप कई दिनों बाद रिहा हुए।

चीन में क्रान्ति की खूब जोरों में तैयारियाँ हो रही थीं। चीन के तत्कालीन सम्राट की कायरता से लोग तंग आ गये थे। जब तक सम्राज्ञी डवाजर जीवित थी उसने देश के गर्म नेताओं को सुधार के फन्दों में फँसा रक्खा था, किन्तु उसकी मृत्यु के बाद मन्चू खान्दान में और कोई ऐसा न रहा जो उसकी तरह कूटनीति से काम लेता। अतएव देश के भीतर राजनीतिक अशान्ति बढ़ती ही गई। इस क्रान्तिकारी आन्दोलन में प्रमुख भाग लेने वाला कूमिंगटांग दल था जिसकी स्थापना डा० सन्यात सेन ने कुछ दिनों पूर्व की थी। हजारों मील दूर से डा० सन्यात सेन चीन की क्रान्ति की तैयारियों का संचालन करते रहे। मानों दूर पर बैठा हुआ इञ्जीनियर बिजली के बटन दबा रहा हो। जिस समय १९११ ई० की क्रान्ति हुई, डा० सन्यात सेन लन्दन में थे। पाँचवीं जनवरी १९११ ई० को आप चीन लौटे और राष्ट्रीय समिति के अनुरोध से आपने नानकिंग में नई प्रजातन्त्र का अस्थायी प्रेसीडेन्ट बनना स्वीकार किया।

अभी क्रान्ति का सिलसिला जारी ही था। आपके चीन में आ जाने से जनता का उत्साह और भी बढ़ा।

निदान १२वीं फरवरी को चीन के तत्कालीन सम्राट ने स्वयम् राजगद्दी का त्याग किया और उसने घोषणा की कि चीन की हुकूमत की वागडोर प्रजातन्त्र के हाथों में दी जाय। शाही ज़माने का एक मन्त्री, युवान-शी-काई जिसने क्रान्तकारियों का पक्ष लिया था गवर्नमेण्ट के पुनरनिर्माण के लिये चुना गया, और डा० सन्यात सेन कुछ दिनो के लिये प्रेसीडेन्ट पद से अलग हो गये। प्रजातन्त्र की अध्यक्षता का भार यूवान को सौंपा गया और डा० सन्यात सेन ने स्वयम् व्यापार विभाग के डाइरेक्टर जनरल के पद को ग्रहण किया। विशेषज्ञों का विचार है कि डा० सन्यात सेन हुकूमत और इन्तिजाम का काम ठीक तौर से सम्हाल नही सकते थे, यद्यपि आप राजनीति में पूर्ण पण्डित थे और आपके राजनीति सम्वन्धी सिद्धान्त सर्वथा दोषरहित थे।

यूवान-शी-काई के हाथों में प्रजातन्त्र के मूल सिद्धान्तों का विकास ठीक रूप से न हो पाया। यूवान-शी-काई यश् लालसा के पीछे कूमिंगटांग पार्टी के मूल सिद्धान्तों को भूल गए। डा० सन्यात सेन भला इसे कव सह सकते थे, उन्होंने यूवान-शी-काई का तीव्र विरोध किया और यूवान-शी काई की मृत्यु के वाद १९१७ ई० में नानकिंग की प्रजातन्त्र सरकार की सत्ता न मान कर डा० सन्यात सेन ने दक्षिण चीन में एक स्वतन्त्र प्रजातन्त्र गवर्नमेण्ट स्थापति की। अपना प्रधान कार्यालय उन्होंने कैन्टन में बनाया। लेकिन यहाँ पर भी फौजी अफसरों ने धीरे धीरे हुकूमत की शक्ति अपने हाथ में लेनी शुरू की। और कोई चारा न देख कर डा० सन्यात सेन ने इस प्रजातन्त्र की अध्यक्षता से इस्तीफा दे दिया। किन्तु १९२१ ई० में दक्षिण चीन की इस प्रजातन्त्र गवर्नमेण्ट ने डा० सन्यात सेन को अध्यक्ष के पद पर फिर बुलाया। उस उग्र दल के प्रजातन्त्र का जोर दिन प्रति दिन वढ़ता ही गया और नानकिंग की गवर्नमेण्ट को अपने हाथ में करने की तैयारियाँ होने लगीं।

जैसा कि हम कह आए हैं डा० सन्यात सेन का तीसरा सिद्धान्त समाजवाद का था। पूँजीपतियों से डा० सन्यात सेन की पार्टी की सदा अनवन रही। किन्तु इस समाजवाद ही के कारण किसान और मजदूरों की पूर्ण सहानुभूति आप के साथ थी। आप का आन्दोलन सामूहिक आन्दोलन था। कैन्टन के मजदूरों की मजदूरी वढ़ाने के लिये आपने कई वार सफल प्रयत्न किये।

आपकी मृत्यु पेकिंग में १२ मार्च १९२५ ई० में हुई। आप कैन्सर की वीमारी से मरे। आपकी अस्थियाँ १९२९ में पेकिंग से नानकिंग ले आई गईं और एक भव्य स्मारक भवन में रक्खी गईं।

डा० सन्यात सेन ने चीन में एक जान फूंकी थी। उनके राजनीति सम्बन्धी तीन सिद्धान्तों पर १९२७ में नानकिङ्ग की नेशनल गवर्नमेण्ट ने अपना प्रजातन्त्र शासन विधान बनाया। मृत्यु के उपरान्त डा० सन्यात सेन की प्रतिष्ठा एक देवता के तुल्य होने लगी। जीते जी चीन की जनता के हाथों में गवर्नमेण्ट की सत्ता को ले आने की आप कोशिश करते रहे। मरने के समय भी आप की यही एक मात्र इच्छा रही। मृत्यु के कुछ समय पहले आप ने राष्ट्र के नाम जो वसीयत की थी, उसे हम यहाँ देकर यह लेख समाप्त करते है।

डा० सन्यात सेन का वसीयत-नामा

"पिछले ४० वर्षों से लगातार मैं जन क्रान्ति के लिये उद्योग करता रहा हूँ। इस लम्वी अवधि में मेरी एक मात्र कामना यह रही है कि हमारा देश भी अन्य राष्ट्रों की तरह स्वतंत्र और समृद्धिशाली वन सके।

इन पिछले ४० वर्षों के अनुभव से मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचता हूँ कि मेरी यह कामना तभी पूरी हो सकती है जव जनसाधारण अव पूर्णरूप से जागृति पैदा कर सकें, और शोषित वर्ग के साथ कंधे से कंधा मिलाएं।

क्रान्ति का काम अभी पूरा नहीं हो सका है। हम अपने साथियों से अनुरोध करते हैं कि कूमिङ्ग-टांग पार्टी के आदेश और उसके प्रस्तावों पर वे अमल करें। हमें भरसक प्रयत्न करना है कि विदेशी राष्ट्रों से वञ्चनामय जो सन्धियाँ चीन की पिछली गवर्नमेण्ट ने की हैं, उन्हें हम भंग करायें। हम नहीं चाहते कि विदेशी राष्ट्र जवर्दस्ती चीन का शोषण करें। तुम्हारे लिये यही मेरी हार्दिक प्रेरणा है"।

सन्यात सेन

चीन की धार्मिक व्यवस्था

चीन का प्राचीनतम धर्म 'एक ईश्वरवाद' था ! किन्तु इस ईश्वर का रूप भिन्न था। मनुष्य की पहुँच के बाहर, दूर, ऊँचे आसमान पर वह सर्व शक्तिमान ईश्वर चराचर सब जीवों के ऊपर हुकूमत करता था। सृष्टि-कर्त्ता की उपाधि इस ईश्वर को अभी नहीं मिली थी। न्याय की तुला हाथ में लिये हुए दया और रहम के बगैर पापियों को दण्ड देता और धर्मात्माओं को पुरस्कार। उसे इसकी इच्छा न थी कि मनुष्य उसकी भक्ति या उससे प्यार करें। उन दिनों के धर्म में शैतान लोगों को पाप के रास्ते पर ले जाने के लिये बहकाता न था। शैतान नाम की चीज ही न थी। मोक्ष की भी भावना का जन्म तब तक नहीं हुआ था। अच्छे कर्म करने से मरने पर ईश्वर में लीन हो सकेंगे, इस प्रकार की कोई बात उन दिनों न थी। इस ईश्वर को चीनी भाषा में 'ति-अन' कहते हैं। बोल चाल की भाषा में इसका अर्थ होता है 'आसमान'। किन्तु समय को प्रगति के संग धीरे धीरे 'ति-अन' का चित्र एक मनुष्य के आकार का बनाया जाने लगा।

मूल धर्म ऐतिहासिक काल से पूर्व

चीन के मूल धर्म की उक्त व्याख्या के साथ साथ और भी भावनाएँ उत्पन्न होने लगीं। सूर्य्य, चन्द्रमा, पाचों ग्रह ये सब देवता का स्वरूप धारण करने लगे। इनकी पूजा होने लगी। माता धरती ने भी देवी देव-ताओं की सूची में स्थान पाया। आँधी, वर्षा, ग्रीष्म की भीषणता, विद्युत आदि सभी में किसी न किसी देवता की इच्छा विदित होती। यहाँ तक कि घर के चौखट और आँगन में भी देवी देवताओं का वास माना जाने लगा। इन देवताओं की विधि पूर्वक पूजा होती—बलिदान और निछावरें चढ़तीं।

इन देवी देवताओं की पूजा के साथ साथ पुरखों की पूजा का भी चलन बढ़ता गया। ठीक देवताओं की तरह विधि पूर्वक इनकी भी पूजा होती। सच्ची बात तो यह है कि साधारण जनता का धर्म पुरखों की पूजा तक ही सीमित था। देवताओं की पूजा केवल राजा या बड़े बड़े सामन्त ही कर सकते थे।

धर्म पुस्तकें भी अब तक नहीं बन पाई थीं। धीरे धीरे उपदेशकों और ऋषि महात्माओं के वाक्यों को खूब महत्व दिया जाने लगा। ईसा से सहस्रों वर्ष पूर्व उक्त वाक्यों के संग्रह लिखे जा चुके थे। इन्हें धर्म पुस्तक का स्थान मिला। ईसा से ५०० वर्ष पूर्व चीन का सुप्रसिद्ध दार्शनिक 'कनफ्यूशियस' हो गुजरा है। उसने प्राचीन कृतियों का संग्रह किया। चीन में उसे महात्मा की उपाधि मिली है। उसके धार्मिक उपदेशों को लोग बड़े चाव से सुनते थे। मरने के उपरान्त देवता की भांति उसकी पूजा होने लगी। चीन में कोई ऐसा शहर न बचा जहाँ कनफ्यूशियस की मूर्ति स्थापना के लिये मन्दिर न बने हों। निदान कनफ्यूशियस का भी एक धार्मिक मत चल निकला। कनफ्यूशियस ने धर्म को समाज के कल्याण की दृष्टि से देखा। मनुष्य का समाज के प्रति क्या दृष्टिकोण होना चाहिये, इस प्रश्न की उसने विस्तृत विवेचना की। धर्म के गूढ़ सिद्धान्तों की तह तक पहुँचने का उसने प्रयास नहीं किया है। समाज में मनुष्य का आदर्श आचरण क्या होना चहिये। कौन से नियमों का उसे पालन करना चाहिये, इन्हीं की विवेकपूर्ण व्याख्या उसने की है। उसका मत एक से प्रकार सच्चरित्रता की नियमावली है। पर-लोक के बारे में कनफ्यूशियस के धर्म में आपको कुछ नहीं मिलेगा। कनफ्यूशियस का कहना था कि हम जिन्दगी के बारे में जब इतना कम जानते हैं तो मृत्यु के उपरान्त हमारा क्या होता है इस प्रश्न का उत्तर तो और भी कठिन है। उसके विचार कुछ विचित्र ढंग के थे। उसका कहना था कि मनुष्य जन्मता तो है पुण्यात्मा होकर, किन्तु अपने आस पास के वाता-वरण की जगह से वह धीरे धीरे दुष्टात्मा होने लगता है। कनफ्यूशियस ने बार बार उपदेश दिया है कि राजभक्ति और पितृभक्ति मनुष्य का सर्वोच्च धर्म है। ईश्वर के बारे में गोल मटोल शब्दों में कुछ इधर उधर की बातें उसने बताई हैं किन्तु पाप का दण्ड मिलेगा, या परलोक में हमारे सुकर्मों का अच्छा फल मिलेगा इस प्रकार की कोई व्यवस्था कनफ्यूशियस के धर्म में नहीं मिलती। उसने मनुष्य को भला बनने

कनफ्यूशियस का धर्म

का उपदेश दिया इस लिये कि सुकर्म करना अच्छा है, न कि इसलिए कि सुकर्म का अच्छा फल मिलेगा। इस अर्थ में कन्फ्यूशियस का सिद्धान्त भगवान् कृष्ण के

'कर्मण्ये वा धिकारस्ते मा फलेषु कदाचिन्'

से मिलता है।

कन्फ्यूशियस ने पुरातत्व की बराबर प्रतिष्ठा की है और इसी कारण उसके बाद के कुछ दार्शनिकों ने कन्फ्यूशियस का विरोध भी किया। अतीत की गोद में पड़े रहने की प्रेरणा तो कन्फ्यूशियस धर्म में खूब मिलती है, किन्तु भविष्य के लिये मौलिक मार्ग ढूँढ़ने के लिये प्रोत्साहन कन्फ्यूशियस नहीं देता। रूढ़िवादिता की ओर वह हमें बरबस खींचता है। क्रान्ति के लिये कन्फ्यूशियस धर्म में उद्बोधन नहीं है। यही कारण है कि सहस्रों वर्ष से पूज्य कन्फ्यूशियस के प्रति १९२७ की क्रान्ति में तीव्र तिरस्कार का प्रदर्शन क्रान्तिकारियों ने किया। राजभक्ति और आज्ञाकारिता प्रजातन्त्र के मूल नियमों के विरुद्ध है और कन्फ्यूशियस के धर्म में ये ही बातें कूट कूट कर भरी गई थीं। स्वभावतः कन्फ्यूशियस का धर्म क्रान्ति के पुजारियों को कभी प्रिय नहीं हो सकता था।

मेन्शियस

मेन्शियस कन्फ्यूशियस का शिष्य था। मेन्शियस का जन्म ईसा से ३०० वर्ष पूर्व हुआ था। अपने समय का यह एक सुप्रसिद्ध फिलासफर (दार्शनिक) था। उसने अपने गुरु कन्फ्यूशियस के उपदेशों का सर्वत्र प्रचार किया। विशेषज्ञों का कहना है कि यह मेन्शियस के ही परिश्रम का फल है कि कन्फ्यूशियस के सिद्धान्तों का सारे चीन में प्रचार हुआ।

टाओइज्म

कन्फ्यूशियस के मत में धार्मिक सिद्धान्तों का समावेश बड़ी प्रचुर मात्रा में है, किन्तु यह स्वयं 'धर्म' के नाम से नहीं पुकारा जा सकता। कन्फ्यूशियनिज्म आदि का अध्ययन कर अन्य दार्शनिकों ने आदर्श आचरण के लिये नियम बनाये। सदाचरण का रास्ता बताया—चीनी भाषा में 'रास्ता' को 'टाओ कहते हैं। इस लिये इन नियमों का नाम 'टाओ' पड़ा और बाद में इससे 'टाओइज्म' (टाओ धर्म) शब्द मिला।

समय की प्रगति के संग 'टाओ' के बड़े बड़े गंभीर अर्थ लगाये जाने लगे। शिष्यों ने 'टाओ' का अर्थ लगाया 'पूर्ण'—'अद्वैत' जिसमें काल और देश दोनों निहित हैं। 'आदि पुरुष' का नाम भी 'टाओ' को दिया गया। इसे सृष्टि से परे अगोचर माना गया। मृत्यु के उपरान्त आत्माएँ 'टाओ' के पास जाती हैं। यदि वे पाप से रहित हैं तो जाकर 'टाओ' में मिल जायगी, मोक्ष प्राप्त कर लेंगी और आवागमन के कष्ट से उन्हें छुट्टी मिल जायगी।

कुछ काल और बीतने पर इस 'टाओ' की सगुण कल्पना भी की जाने लगी। 'टाओ' एक दीप्तिमान प्रकाश का पिण्ड बहुत दूर आकाश में है जिसके चारों ओर मृत आत्माएँ परिक्रमा करती रहती हैं। परलोक की इन धारणाओं के संग स्वार्थी लोगों ने अपने मतलब की बातें भी गढ़ ली थीं। किसी ने अमृत की कल्पना की तो किसी ने वरदान से पारस पत्थर प्राप्त करने की कहानी गढ़ डाली। समय की प्रगति के साथ 'टाओ' धर्म में भी रीति और रस्मों की चलन हुई। तरह तरह की पूजा करने की विधियाँ निकाली गईं। अनेक कुरीतियाँ और बुराइयाँ भी इसमें आ गईं। किन्तु तो भी धर्म योंही चलता रहा—'टाओ' धर्म आज भी चीन में फूल फल रहा है और सच्ची बात तो यह है कि जहाँ तक रीति रवाज का प्रश्न है, 'टाओ' धर्म और दूसरे धर्मों में अधिक अन्तर नहीं दिखाई देता।

बौद्ध धर्म

बौद्ध धर्म चीन में पहले पहल कब आया, इसका ऐतिहासिक प्रमाण ठीक ठीक नहीं मिलता। कहा जाता है कि ईसा से २०० वर्ष पहले भारत से कुछ भिक्षुगण बुद्ध भगवान का सन्देश सुनाने चीन में गये। यहाँ ये लोग जेल में बन्द कर दिये गये। स्वर्ण आभा से परिपूर्ण एक व्यक्ति ने आधी रात को आकर जेल के दरवाजे को खोल दिया, इस प्रकार उन्हें छुटकारा मिला। चाहे यह घटना सच न हो, किन्तु इससे इतना पता तो चलता ही है कि ईसा के जन्म से कुछ वर्ष पूर्व चीन वालों को बौद्ध धर्म के बारे में खबर मिल चुकी थी।

ऐतिहासिक प्रमाण मिलता है कि सन् ५८ में सम्राट मिंगटी ने स्वप्न देखा कि स्वर्ण ज्योति से घिरा हुआ एक व्यक्ति उसे दर्शन देने आया है। उक्त स्वप्न को भगवान बुद्धदेव की कृपा करके माना गया। सम्राट मिंगटी के समय से ही चीन में बौद्ध धर्म का

चीन की धार्मिक व्यवस्था

चीन का प्राचीनतम धर्म 'एक ईश्वरवाद' था! किन्तु इस ईश्वर का रूप भिन्न था। मनुष्य की पहुँच के बाहर, दूर, ऊँचे आसमान पर वह सर्व शक्तिमान ईश्वर चराचर सब जीवों के ऊपर हुकूमत करता था। सृष्टि-कर्त्ता की उपाधि इस ईश्वर को अभी नहीं मिली थी। न्याय की तुला हाथ में लिये हुए दया और रहम के बग़ैर पापियों को दण्ड देता और धर्मात्माओं को पुरस्कार। उसे इसकी इच्छा न थी कि मनुष्य उसकी भक्ति या उससे प्यार करें। उन दिनों के धर्म में शैतान लोगों को पाप के रास्ते पर ले जाने के लिये बहकाता न था। शैतान नाम की चीज़ ही न थी। मोक्ष की भी भावना का जन्म तब तक नहीं हुआ था। अच्छे कर्म करने से मरने पर ईश्वर में लीन हो सकेंगे, इस प्रकार की कोई बात उन दिनों न थी। इस ईश्वर को चीनी भाषा में 'ति-अन' कहते हैं। बोल चाल की भाषा में इसका अर्थ होता है 'आसमान'। किन्तु समय को प्रगति के संग धीरे धीरे 'ति-अन' का चित्र एक मनुष्य के आकार का बनाया जाने लगा।

मूल धर्म ऐतिहासिक काल से पूर्व

चीन के मूल धर्म की उक्त व्याख्या के साथ साथ और भी भावनाएँ उत्पन्न होने लगीं। सूर्य्य, चन्द्रमा, पाचों ग्रह ये सब देवता का स्वरूप धारण करने लगे। इनकी पूजा होने लगी। माता धरती ने भी देवी देवताओं की सूची में स्थान पाया। आँधी, वर्षा, ग्रीष्म की भीषणता, विद्युत आदि सभी में किसी न किसी देवता की इच्छा विदित होती। यहाँ तक कि घर के चौखट और आँगन में भी देवी देवताओं का वास माना जाने लगा। इन देवताओं की विधि पूर्वक पूजा होती—बलिदान और निछावरें चढ़तीं।

इन देवी देवताओं की पूजा के साथ साथ पुरखों की पूजा का भी चलन बढ़ता गया। ठीक देवताओं की तरह विधि पूर्वक इनकी भी पूजा होती। सच्ची बात तो यह है कि साधारण जनता का धर्म पुरखों की पूजा तक ही सीमित था। देवताओं की पूजा केवल राजा या बड़े बड़े सामन्त ही कर सकते थे।

धर्म पुस्तकें भी अब तक नहीं बन पाई थीं। धीरे धीरे उपदेशकों और ऋषि महात्माओं के वाक्यों को खूब महत्व दिया जाने लगा। ईसा से सहस्रों वर्ष पूर्व उक्त वाक्यों के संग्रह लिखे जा चुके थे। इन्हें धर्म पुस्तक का स्थान मिला। ईसा से ५०० वर्ष पूर्व चीन का सुप्रसिद्ध दार्शनिक 'कनफ्यूशियस' हो गुजरा है। उसने प्राचीन कृतियों का संग्रह किया। चीन में उसे महात्मा की उपाधि मिली है। उसके धार्मिक उपदेशों को लोग बड़े चाव से सुनते थे। मरने के उपरान्त देवता की भांति उसकी पूजा होने लगी। चीन में कोई ऐसा शहर न बचा जहाँ कन्फ्यूशियस की मूर्ति स्थापना के लिये मन्दिर न बने हों। निदान कन्फ्यूशियस का भी एक धार्मिक मत चल निकला। कन्फ्यूशियस ने धर्म को समाज के कल्याण की दृष्टि से देखा। मनुष्य का समाज के प्रति क्या दृष्टिकोण होना चाहिये, इस प्रश्न की उसने विस्तृत विवेचना की। धर्म के गूढ़ सिद्धान्तों की तह तक पहुँचने का उसने प्रयास नहीं किया है। समाज में मनुष्य का आदर्श आचरण क्या होना चहिये। कौन से नियमों का उसे पालन करना चाहिये, इन्हीं की विवेकपूर्ण व्याख्या उसने की है। उसका मत एक से प्रकार सच्चरित्रता की नियमावली है। पर-लोक के बारे में कन्फ्यूशियस के धर्म में आपको कुछ नहीं मिलेगा। कन्फ्यूशियस का कहना था कि हम जिन्दगी के बारे में जब इतना कम जानते हैं तो मृत्यु के उपरान्त हमारा क्या होता है इस प्रश्न का उत्तर तो और भी कठिन है। उसके विचार कुछ विचित्र ढंग के थे। उसका कहना था कि मनुष्य जन्मता तो है पुण्यात्मा होकर, किन्तु अपने आस पास के वातावरण की जगह से वह धीरे धीरे दुष्टात्मा होने लगता है। कन्फ्यूशियस ने बार बार उपदेश दिया है कि राजभक्ति और पितृभक्ति मनुष्य का सर्व्वोच्च धर्म है। ईश्वर के बारे में गोल मटोल शब्दों में कुछ इधर उधर की बातें उसने बताई हैं किन्तु पाप का दण्ड मिलेगा, या परलोक में हमारे सुकर्मों का अच्छा फल मिलेगा इस प्रकार की कोई व्यवस्था कन्फ्यूशियस के धर्म में नहीं मिलती। उसने मनुष्य को भला बनने

कन्फ्यूशियस का धर्म

का उपदेश दिया इस लिये कि सुकर्म करना अच्छा है न कि इसलिए कि सुकर्म का अच्छा फल मिलेगा। इस अर्थ में कन्फ्यूशियस का सिद्धान्त भगवान् कृष्ण के

'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचिन्'

से मिलता है।

कन्फ्यूशियस ने पुरातत्व की बराबर प्रतिष्ठा की है और इसी कारण उसके बाद के कुछ दार्शनिकों ने कन्फ्यूशियस का विरोध भी किया। अतीत की गोद में पड़े रहने की प्रेरणा तो कन्फ्यूशियस धर्म में खूब मिलती है, किन्तु भविष्य के लिये मौलिक मार्ग ढूँढ़ने के लिये प्रोत्साहन कन्फ्यूशियस नहीं देता। रूढ़िवादिता की ओर वह हमें बरबस खींचता है। क्रान्ति के लिये कन्फ्यूशियस धर्म में उद्‌बोधन नहीं है। यही कारण है कि सहस्रों वर्ष से पूज्य कन्फ्यूशियस के प्रति १९२७ की क्रान्ति में तीव्र तिरस्कार का प्रदर्शन क्रान्तिकारियों ने किया। राजभक्ति और आज्ञाकारिता प्रजातन्त्र के मूल नियमों के विरुद्ध है और कन्फ्यूशियस के धर्म में ये ही बातें कूट कूट कर भरी गई थीं। स्वभावतः कन्फ्यूशियस का धर्म क्रान्ति के पुजारियों को कभी प्रिय नहीं हो सकता था।

मेन्शियस कन्फ्यूशियस का शिष्य था। मेन्शियस का जन्म ईसा से ३०० वर्ष पूर्व हुआ था। अपने समय

मेन्शियस

का यह एक सुप्रसिद्ध फिलासफर (दार्शनिक) था। उसने अपने गुरु कन्फ्यूशियस के उपदेशों का सर्वत्र प्रचार किया। विशेषज्ञों का कहना है कि यह मेन्शियस के ही परिश्रम का फल है कि कन्फ्यूशियस के सिद्धान्तों का सारे चीन में प्रचार हुआ।

कन्फ्यूशियस के मत में धार्मिक सिद्धान्तों का समावेश बड़ी प्रचुर मात्रा में है, किन्तु यह स्वयं 'धर्म' के नाम से नहीं पुकारा जा सकता।

टाओइज्म

कन्फ्यूशियनिज्म आदि का अध्ययन कर अन्य दार्शनिकों ने आदर्श आचरण के लिये नियम बनाये। सदाचरण का रास्ता बताया—चीनी भाषा में 'रास्ता' को 'टाओ' कहते हैं। इस लिये इन नियमों का नाम 'टाओ' पड़ा और बाद में इससे 'टाओइज्म' (टाओ धर्म) शब्द मिला।

समय की प्रगति के संग 'टाओ' के बड़े बड़े गंभीर अर्थ लगाये जाने लगे। शिष्यों ने 'टाओ' का अर्थ लगाया 'पूर्ण'—'अद्वैत' जिसमें काल और देश दोनों निहित हैं। 'आदि पुरुष' का नाम भी 'टाओ' को दिया गया। इसे सृष्टि से परे अगोचर माना गया। मृत्यु के उपरान्त आत्माएँ 'टाओ' के पास जाती हैं। यदि वे पाप से रहित हैं तो जाकर 'टाओ' में मिल जायगी, मोक्ष प्राप्त कर लेंगी और आवागमन के कष्ट से उन्हें छुट्टी मिल जायगी।

कुछ काल और बीतने पर इस 'टाओ' की सगुण कल्पना भी की जाने लगी। 'टाओ' एक दीप्तिमान प्रकाश का पिण्ड बहुत दूर आकाश में है जिसके चारों ओर मृत आत्माएँ परिक्रमा करती रहती हैं। परलोक की इन धारणाओं के संग स्वार्थी लोगों ने अपने मतलब की बातें भी गढ़ ली थीं। किसी ने अमृत की कल्पना की तो किसी ने वरदान से पारस पत्थर प्राप्त करने की कहानी गढ़ डाली। समय की प्रगति के साथ 'टाओ' धर्म में भी रीति और रस्मों की चलन हुई। तरह तरह की पूजा करने की विधियाँ निकाली गई। अनेक कुरीतियाँ और बुराइयाँ भी इसमें आ गई। किन्तु तो भी धर्म योंही चलता रहा—'टाओ' धर्म आज भी चीन में फूल फल रहा है और सच्ची बात तो यह है कि जहाँ तक रीति रवाज का प्रश्न है, 'टाओ' धर्म और दूसरे धर्मों में अधिक अन्तर नहीं दिखाई देता।

बौद्ध धर्म चीन में पहले पहल कब आया, इसका

बौद्ध धर्म

ऐतिहासिक प्रमाण ठीक ठीक नहीं मिलता। कहा जाता है कि ईसा से २०० वर्ष पहले भारत से कुछ भिक्षुगण बुद्ध भगवान का सन्देश सुनाने चीन में गये। यहाँ ये लोग जेल में बन्द कर दिये गये। स्वर्ण आभा से परिपूर्ण एक व्यक्ति ने आधी रात को आकर जेल के दरवाजे को खोल दिया, इस प्रकार उन्हें छुटकारा मिला। चाहे यह घटना सच न हो, किन्तु इससे इतना पता तो चलता ही है कि ईसा के जन्म से कुछ वर्ष पूर्व चीन वालों को बौद्ध धर्म के बारे में खबर मिल चुकी थी।

ऐतिहासिक प्रमाण मिलता है कि सन् ५८ में सम्राट मिंगटी ने स्वप्न देखा कि स्वर्ण ज्योति से घिरा हुआ एक व्यक्ति उसे दर्शन देने आया है। उक्त स्वप्न को भगवान बुद्धदेव की कृपा करके माना गया। सम्राट मिंगटी के समय से ही चीन में बौद्ध धर्म का

प्रचार होना शुरू हुआ। इस बात के भी ऐतिहासिक प्रमाण मौजूद हैं कि सन् ६५ में सम्राट ने तिब्बत में कुछ आदमी भेजे कि वहाँ से बौद्ध धर्म सम्बन्धी पुस्तकें और मूर्त्तियाँ वे अपने साथ ले आयें। यह दल ६७ ई० में लौटा। साथ में अनेक पुस्तकों और मूर्त्तियों के अतिरिक्त वे लोग एक भारतीय विद्वान भिक्षुक कश्यपमदंग को भी ले गये। कश्यपमदंग के लिये एक सुन्दर भव्य मन्दिर बनाया गया। वहाँ रह कर वह उक्त पुस्तकों का चीनी भाषा में अनुवाद करने लगा। कश्यपमदंग की अनुवादित धर्म पुस्तकें दो एक अब भी मिलती हैं। शेष एक सम्राट ने, जो बौद्ध धर्म का कट्टर विरोधी था, जलवा डालीं।

इसके बाद सैकड़ों वर्ष तक भारत से भिक्षुगण बुद्ध भगवान का सन्देश सुनाने आते रहे। चीन से भी भक्त जनों का ताँता भारत तक लगा ही रहा। ये लोग भगवान बुद्ध का जन्म-स्थान देखना चाहते थे—बौद्ध धर्म के ऐतिहासिक स्थानों का स्वयं निरीक्षण करने की लालसा इनके मन में थी। इन चीनी यात्रियों में अनेक योग्य व्यक्ति भी थे—फाह्यान और ह्वानसांग के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं। बौद्ध धर्म का सारे चीन में खूब प्रचार हुआ। बौद्ध धर्म के अनुयायी बहुत से सम्राट भी थे। सम्राट की वजह से बौद्ध धर्म को प्रतिष्ठा भी खूब बढ़ी, और इसके अनुयायियों को भी प्रोत्साहन मिला। एक सम्राट ने तो राजसी ठाठ का त्याग कर भिक्षु का बाना धारण कर लिया था। किन्तु कुछ सम्राटों ने 'कन्फ्यूशियस' मत के प्रभाव में पड़ कर बौद्ध धर्म का तीव्र विरोध किया। भिक्षुओं के विहार जबर्दस्ती जलवा दिये ताकि भिक्षु बाहर आकर संसार के संघर्ष में भाग लें, क्योंकि 'कन्फ्यूशियस' के मतानुसार प्रत्येक मनुष्य का कर्तव्य है कि मनुष्य संसार में लिप्त रह कर संसार की बुराइयों को दूर करने का प्रयत्न करे।

किन्तु ११वीं शताब्दी के बाद से बौद्ध धर्म पर किसी प्रकार की रुकावट इन सम्राटों ने नहीं डाली। चीन के एक सिरे से दूसरे सिरे तक बौद्ध धर्म फैल गया। इस लम्बी अवधि में बौद्ध धर्म की रूप रेखा में भी बहुत कुछ परिवर्तन हुए। चीन निवासियों ने इसमें काट छाँट भी की। धीरे धीरे बौद्ध धर्म में भी पौराणिक कहानियों की तरह अनेक देवी देवताओं का समावेश हुआ—बुद्धदेव के नये नये अवतार, बोधिसत्व आदि की रचना हुई। चीन के दार्शनिकों ने धार्मिक सिद्धान्तों में दर्शनशास्त्र का भी पुट जहाँ तहाँ दिया। फल स्वरूप चीन का बौद्ध धर्म भारत के बौद्ध धर्म से बहुत कुछ अंशों में भिन्न है।

किन्तु आज चीन के जनसाधारण मन्दिरों में जाते हैं। पूजा की सामग्री जुटा कर पुरोहित की सहायता से पूजा समाप्त कर वापस जाते हैं—गहराई तक न तो उन्हें सोचने की फुर्सत होती है, न इच्छा।

मंदिर के भीतर पूजा हो रही है और सामने अगर बत्ती जल रही हैं।

मन्दिर के अहाते में गये, अगरबत्ती जलाई, मूर्त्ति के सामने घुटने टेके और पुजारी से शकुन निकलवाये। अपने लिये पुजारी से मन्त्र पढ़वाये और पुजारी को दक्षिणा देकर चलते हुए—अपना कर्तव्य पूरा कर दिया।

चीन के मन्दिर प्रायः एक ऊँची चहारदीवारी से घिरे होते हैं। उसी घेरे में अन्य देवी देवताओं के छोटे छोटे मन्दिर भी रहते हैं। ये छोटे देवतागण प्रायः बड़ी भयानक शक्ल के होते हैं, कोई दाँत निकाले क्रोध से देख रहा है, तो कोई काल स्वरूप डरा रहा है। कहीं कहीं 'दया' के देवता भी दिखाई पड़ते हैं। इन मन्दिरों की इमारतें अत्यन्त सुन्दर होती हैं, और इनके पुजारी भी बड़े हंस मुख होते

हैं। ये रेशमी वस्त्र पहनते हैं, किन्तु बौद्ध धर्म में सादगी पर बहुत जोर डाला गया है, अतएव इनकी

मंदिर के आंगन में धूप और अगरबत्ती जलाने का धूपदान।

पोशाक रेशमी कपड़ों के कई टुकड़ों से सिली रहती है, मानों यह प्रगट करने के लिये गरीबी के कारण पोशाक में पेवन्द लगा रक्खे हैं।

मज्डाधर्म — मज्डाधर्म पारसी धर्म का ही एक रूपान्तर है। ईसा की सातवीं शताब्दी में अग्निपूजकों का धर्म चीन में आया, किन्तु चीन में यह पनप न सका। २०० वर्ष के अन्दर ही इस की जड़ें सूख गईं।

मुहम्मद साहब के मामू वहाब-अबी-काबा के संग एक टोली चीन में ६२८ ई० में पहुँची थी। ये

मुस्लिम धर्म — लोग समुद्री रास्ते से गये। कैन्टन में जहाज लगा, और यहीं ये लोग उतरे। ये लोग सम्राट के लिये भेंट लेकर आये थे; सम्राट की ओर से इनकी आव भगत हुई। चीन की पहली मसजिद कैन्टन में बनी, जो अब भी मौजूद है (इसमें कई बार मरम्मत का काम हो चुका है)। इसके बाद भी मुसलमान लोग आये, किन्तु ये तिजारत के उद्देश्य से आते थे, और फिर वापस चले जाते थे। सन् ७५५ में अबूगफर ने ४००० अरब के वाशिन्दों की एक फौज विद्रोह दबाने के लिये भेजा। ये ही अरब सिपाही चीन में बस गये, यहीं पर उन्होंने शादियाँ भी कीं, और अपने घर बसा लिये। लगभग ४०० वर्ष बाद चगेज खाँ के हमले के बाद मुसलमान सरदार चीन में काफी संख्या में आये। इस तरह यहाँ मुसलमानों की संख्या बढ़ी।

यहूदी धर्म — ईसा से ७०० वर्ष पूर्व यहूदी धर्म के प्रवर्त्तक भी चीन में पहुँचे थे, किन्तु पारसी धर्म की तरह यह भी चीन में पनप न सका।

ईसाई धर्म — चीन के प्रत्येक प्रान्त में रोमन कैथोलिक और प्रोटेस्टैण्ट धर्म के गिरजेघर बने हुए हैं। १८६० में चीन सरकार की ओर से फरमान जारी हुआ था कि कोई भी अपनी इच्छा से ईसाई धर्म ले सकता है। पादरियों को भी धर्म प्रचार की पूरी आजादी है।

चीन में चित्रकला का विकास

चीन का अतीत बहुत ही शानदार रहा है। दर्शन, साहित्य, कला सभी क्षेत्रों में प्राचीन काल के चीन ने प्रशंसनीय उन्नति की थी। चीन निवासियों की एक अपनी अलग ही शैली थी। सहस्रों वर्ष पहले कला की जिस चरम सीमा तक वे पहुँच चुके थे, यूरुप उस ऊँचाई तक बहुत काल उपरान्त भी नहीं पहुँच पाया।

चीन की चित्रकारी का अन्तर्राष्ट्रीय-कला-जगत् में एक विशिष्ट स्थान है। चीन का पिछले १२०० वर्षों का इतिहास सुप्रसिद्ध चित्रकारों की कृतियों से विभूषित है। चीन के चित्रकारों और साहित्यकारों में एक घनिष्ठ सम्बन्ध रहा है—इसका पर्याप्त कारण भी है। चीन में लेखनकला और चित्रकारी में इतना गहरा सम्बन्ध इसलिये है कि लिखने में भी वहाँ लेखनी की जगह ब्रुश का प्रयोग होता है। अतएव चीन की लेखनकला भी एक प्रकार की चित्रकारी है।

चीन की चित्रकारी में रेखाङ्कित चित्र का ही सर्वोपरि स्थान है। यद्यपि चटकीले रंगों का भी प्रयोग चीन के चित्रकारों ने कहीं कहीं पर किया है, फिर भी चीन के चित्रों में यह मुख्य बात देखने में आती है कि वे अधिकांश काले रंग में तैयार किये गये हैं—चीन के इन चित्रकारों ने केवल एक रंग का सहारा लेकर ब्रुश की सहायता से रंग देकर कमाल कर दिखाया है। इन चित्रों की बारीकी के कायल यूरुप के कुशल चित्रकार भी आज दिन हो रहे हैं। रेखाओं की सहायता से भावप्रदर्शन में चीन के कलाकारों ने समूचे संसार को मात कर दिया है।

चटकीले और सुनहले रंग का प्रयोग बौद्धकालीन चीन में चित्रों के निर्माण के लिये खूब हुआ, तो भी धार्मिक चित्रों में रेखाङ्कित भाग का महत्व कम नहीं हुआ।

आदर्श

चीन के चित्रकारों का एकमात्र उद्देश्य भाव-चित्रण का था। बाह्यरूप के वे उतने कायल न थे। प्राचीन चित्रों में अनेक चित्र तो प्रमुख कविताओं के आधार पर बनाये गये। चीन की एक कहावत है कि चित्र एक मूक कविता है। यही कारण है कि चीन के कुशल चित्रकार ऊँचे दर्जे के कवि भी होते हैं। भावों की प्रधानता चीन के चित्रों में मुख्य चीज़ होती है, चित्र की बनावट और उसमें रंग भरने की ओर चित्रकार कम ध्यान देते हैं। हल्के हल्के रंग से चित्र तैयार किये जाते हैं। बाह्य वस्तुओं पर हमारी निगाह जाकर अटक न जाय, यही विचार चीन के चित्रकारों के मस्तिष्क में रहता है। भारत की प्राचीन चित्रकला में भी इस मनोवृत्ति की हमें झलक मिलती है। अजन्ता के चित्र इसके साक्षी हैं।

चीन के चित्रों में और यूरुप के चित्रों में हम एक और अन्तर पाते हैं। वह यह कि यूरुप के चित्र-कारों ने अपने चित्रों में मनुष्य के व्यक्तित्व को एक प्रमुख स्थान दिया है, उसके शरीर की रचना, उसके रूप रंग का प्रदर्शन बड़े चाव और दक्षता से इन चित्रकारों ने किया। इस सिलसिले में इटली के चित्र-कारों का नाम लिया जा सकता है। यूरुप के चित्र-कारों ने मानव शरीर को इतना महत्व प्रदान किया है कि अक्सर नग्न चित्र बनाये गये जिसमें सुन्दर सुडौल शरीर व्यक्त करने में चित्रकार ने अपना कौशल और अपना परिश्रम दिखाया है। व्यक्तियों को भिन्न भिन्न दशाओं में दिखाया गया। सारांश यह कि मनुष्य के शरीर को चित्रकारों ने भिन्न भिन्न दृष्टिकोण से देखा, और उसी तरह से उन्हें व्यक्त किया।

चीनी चित्रकार रूप भरने में, और सुडौल चित्र गढ़ने में कच्चा है, क्योंकि उसका तो आदर्श ही कुछ और है। वह तो मनुष्य के मनोभावों को अधिक मूल्य प्रदान करता है, और उन्हीं का वह अपनी तूलिका की सहायता से चित्रण भी करता है। उसे इसकी परवाह नहीं कि चित्र में उसके पात्र की उंग-लियां सुडौल हैं या नहीं, किन्तु वह इस बात पर जरूर ध्यान देगा कि उसकी उंगलियां किस तरह मुड़ी हुई हैं? उंगलियों के ढंग से किस प्रकार का भाव झलकता है? सूक्ष्मता मानो चीन के चित्रकारों के नस नस में निहित थी। उजाड़ प्रदेश, सुनसान पर्वत, आँधी तूफ़ान में भी वे सौन्दर्य्य भावना की

अनुभूति करते थे, और इसमें गजब का कमाल भी उन्होंने हासिल किया था। प्रकृति का आदर करना वे जानते थे। निर्जीव वस्तुओं के सौन्दर्य्य की क़द्र वे इस ख्याल से नहीं करते थे कि वे मनुष्य के काम की हैं, वरन् इसलिये कि वे स्वयं ही सुन्दर हैं। आज से सहस्रों वर्ष पहले चीन के चित्रकारों ने प्राकृतिक दृश्यों को अपने चित्रों में स्थान देना सीखा था, और इस दृष्टि कोण से चीन की चित्रकला का सारे संसार में सब से ऊँचा स्थान है। इन चित्रकारों ने मनुष्य और प्रकृति के बीच एक बहुत ही घनिष्ट सम्बन्ध स्थापित किया था, और उसे उन्होंने सदैव ही निबाहा है। किसी महान पुरुष का चित्र बनाना हुआ तो चित्र के पीछे ऊँचे ऊँचे हिमाच्छादित पर्वत अवश्य होंगे।

इतिहास

ऐतिहासिक काल के पूर्व से लेकर ६१८ ई० तक

यद्यपि चीन की चित्रकला का इतिहास बहुत ही प्राचीन है, फिर भी चित्रकला का आरम्भ कब हुआ? इस प्रश्न का उत्तर हमें ऐतिहासिक ग्रन्थों में नहीं, वरन् किंवदन्तियों में मिलता है। साहित्य के ग्रन्थों से पता चलता है कि ईसा से तीन शताब्दी पूर्व चित्रकारी ने कला की हैसियत प्राप्त कर ली थी। इन्हीं दिनों ब्रुश का भी आविष्कार हुआ था, जिसके प्रयोग में चीन निवासियों ने अपूर्व दक्षता दिखाई है। उन दिनों चित्र प्रायः रेशम की लम्बी चादरों पर बनाये जाते थे। फिर चूने से पुती हुई दीवारों पर भी चित्र बनाने की प्रथा निकली। कागज़ के लम्बे टुकड़ों पर भी बाद में चित्र बनाये जाने लगे। ये चित्र आयताकार और लम्बे हुआ करते थे, और पूरा चित्र जन्मपत्री के कागज की तरह लपेटा हुआ रहता था। लन्दन के ब्रिटिश म्यूज़ियम में इस तरह के जन्मपत्री की भाँति लपेटे हुए लम्बे कागज पर बने हुए चीन के कुछ प्राचीन चित्र रक्खे हैं।

उन दिनों के चित्रों में मुखाकृति (Portraits) और ऐतिहासिक घटनाओं के व्यक्त करने का प्रयत्न किया गया है। तत्कालीन चित्रकला पर, ऐसा जान पड़ता है, कनफ्यूशियस मत का खूब प्रभाव पड़ा था, इसी कारण वाह्य वस्तुओं पर चित्रकारों ने अधिक ध्यान दिया। इस काल से पहले के चित्रों में शेर और अजगर का सृजन भी चीन के चित्रकार कर चुके थे—शेर प्रकृति की शक्तियों का प्रतीक था, और अजगर प्रेतात्माओं की शक्ति का। इस तरह इन चित्रकारों की कल्पना शक्ति का क्षेत्र क्रमशः विस्तृत होने लगा। और बाद में बौद्ध धर्म के ज़माने में तो चित्रकारों के लिये प्रचुर मात्रा में सामग्री मिली।

दूसरी शताब्दी में आने पर प्रमुख चित्रकारों के नाम हमें मिलते हैं। कू-कि-चाई (चौथी शताब्दी) का नाम चीन की चित्रकला के इतिहास में एक विशिष्ट स्थान रखता है। इसके हाथ का बना हुआ एक चित्र लन्दन के ब्रिटिश म्यूज़ियम में रक्खा है। कू-कि-चाई मुखाकृति बनाने में पूर्ण दक्ष था।

टांग वंश ६१८ ई० से ९०७ तक

टांग वंश का विस्तार फारस की खाड़ी तक फैला हुआ था। भारत से अनेकों बौद्ध भिक्षु चीन में बुद्ध भगवान का सन्देश सुनाने आया करते थे। चीन में बौद्ध धर्म सर्वत्र फैल चुका था। चीन निवासियों की संस्कृति में बौद्ध आदर्श और भावनाएँ भली भाँति प्रवेश कर चुकी थीं। अतएव टांग वंश के समय की चित्रकला बौद्ध आदर्श के प्रभाव से ओतप्रोत है। इस काल का प्रमुख चित्रकार वू-ताओज़ू चीन का सर्वश्रेष्ठ कलाकार समझा जाता है। चित्रकला के प्रत्येक विभाग में उसे पूर्णता प्राप्त थी। वू-ताओज़ू जिस ब्रुश से चित्र बनाता था, वह ब्रिटिश म्यूज़ियम में रक्खा हुआ है। इन्हीं दिनों चीन की चित्रकारी में दो विचारधाराएँ निकलीं। एक ने चित्रों में प्राकृतिक दृश्यों को खूब महत्व दिया और दूसरी ने वाह्य रूप रंग का तिरस्कार कर भावों को प्रधानता पर जोर दिया।

संग वंश ९०७ से १२८० ई० तक

संग बादशाहों का युग कला का युग था। प्रत्येक व्यक्ति को पूर्ण स्वतन्त्रता हर मामले में मिली थी। कला, साहित्य, दर्शन सभी क्षेत्रों में महत्वपूर्ण अनुसन्धान हुए। इस युग के धार्मिक चित्र अपने ढंग के बेजोड़ हैं। किन्तु इस युग के चित्रों में मुख्य बात है प्रकृति चित्रण। प्रकृति चित्रण में इन कलाकारों ने जिस कल्पना शक्ति का परिचय दिया है, उसकी

झलक इङ्गलैण्ड के सुप्रसिद्ध प्रकृति पुजारी वर्ड्सवर्थ में हमें मिलती है। संग काल के चित्रकारों ने अपने

चीन की प्राचीन चित्रकारी का एक नमूना।

हृदय का आह्लाद निर्जन पर्वत, कुहसा, झरने, चिड़ियों और चन्द्रमा की स्निग्ध चाँदनी का चित्र खींच कर प्रगट किया है। इन चित्रों में कल्पनाशक्ति के लिये उद्बोधन की भी प्रचुर मात्रा में सामग्री है।

१२८० से १६४४ तक

'संग' काल के भावोत्पादक चित्रों में धीरे धीरे शिथिलता आने लगी। इन चित्रों में अब छोटी छोटी चीजों का भी समावेश होने लगा। चित्रों में पहले जैसी सादगी न रही। चीजों को सजाधजा कर चित्र में व्यक्त करने की प्रथा निकली।

यद्यपि यूरुपीय कलाकारों के स्पर्श में चीन के चित्रकार आये, फिर भी चीन की चित्रकला ने अपनी

१६४४ से वर्त्तमान समय

निज की शैली जारी रक्खी। हां वाह्य वस्तुओं को ये चित्रकार भी अब ज्यादा महत्व देने लगे, किन्तु प्रकृति के प्रति उनका स्नेह पहले जैसा ही बना रहा। प्राकृतिक दृश्यों को वहां के चित्रों में अब भी महत्वपूर्ण स्थान मिलता है। चीन के आधुनिक चित्रों में अब रेखाओं और काले रंग की ही प्रधानता रहती है।

चीन के प्राचीन चित्र बहुत कम मिलते हैं। विदेशियों के आक्रमण ने चीन के पुस्तकालयों को जलाया, उनके संग्रहालयों को नष्ट किया। आये दिन इन आफतों का सामना करना पड़ा। भला ऐतिहासिक सम्पत्ति सुरक्षित कैसे रहती?

आज भी, इस २० वीं शताब्दी के सभ्ययुग में जापान चीन के विश्वविद्यालयों पर बम गिरा कर सभ्यता और कला का गला घोंट रहा है। चीन ने इससे भी बड़े पाशविक हमले सहे हैं, और इस बार भी जापान को ही मुँह की खानी पड़ेगी।

चीन के पड़ोस में विदेशी शक्तियों का जमघट

अगर चीन का देश योरुप से अधिक दूर न होता तो भारतवर्ष की तरह चीन भी बहुत पहले ही अपनी आज़ादी खो बैठता। जब धुआंकश जहाज़ (स्टीमर) तेज़ी से चलने लगे तब योरुपीय शक्तियां धीरे धीरे चीन में घुसने का प्रयत्न करने लगीं। चीन में समुद्रीय रास्ते से ही आसानी से घुसना हो सकता है। पश्चिम की ओर ऊँचे पहाड़ चीन को एशिया के दूसरे भागों से अलग करते हैं। उत्तर की ओर से रूस का प्रभाव पड़ता है। अतः योरुपीय शक्तियां उन्नीसवीं सदी के अन्त में और बीसवीं सदी के आरम्भ में जलमार्गों द्वारा चीन में प्रवेश करने लगीं। उन्होंने अपने व्यापार को बढ़ाने के लिये चीन में स्वतन्त्र सन्धि-सम्बन्धी बन्दरगाह (Treaty Ports) स्थापित किये।
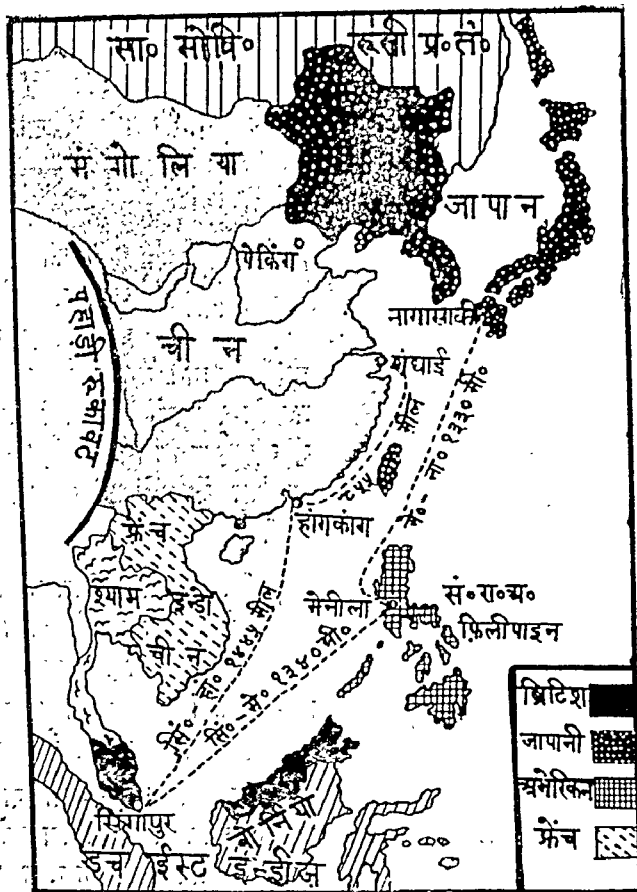
चीन के पड़ोस में विदेशी पूर्वी राज्य

जापान ने कोरिया और मंचूकुओ (मंचूरिया) में अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया। अब वह उत्तरी चीन में बढ़ रहा है। ब्रिटेन ने हांगकांग पर अधिकार कर के कैन्टन और दक्षिणी चीन के व्यापार को अपनाया। सिंगापुर का ब्रिटिश जहाज़ी अड्डा चीन से केवल १५०० मील दूर है। इंडोचीन में फ्रांस का अधिकार है। संयुक्तराष्ट्र अमरीका फिलीपायन द्वीप में डटा हुआ है। मंचूरिया में जापानी अधिकार हो जाने के कारण रूस का चीन से सीधा सवन्ध नहीं रह सका है। डच लोग अधिक दक्षिण की ओर पड़ गये हैं। वे अधिक बलवान भी नहीं हैं।

जापानी साम्राज्य

जापान ने योरुपीय शक्तियों की तरह नये हथियारों से सुसज्जित होकर हाल में फैलने का प्रयत्न किया है। पर आगे बढ़ने का काम मज़बूती के साथ हो रहा है। १८९४-९५ में चीन को हरा कर उसने फारमूसा पर अधिकार कर लिया। १९०४-५ में रूस को हरा कर जापान ने अपना अधिकार कर लिया। बड़ी लड़ाई के समाप्त होने पर क्याओचाओ नाम मात्र के लिये चीन को लौटा दिया गया लेकिन प्रशान्त महासागर के जिन द्वीपों पर जर्मनी का अधिकार था, उन पर राष्ट्र-संघ की ओर से जापान राज्य करने
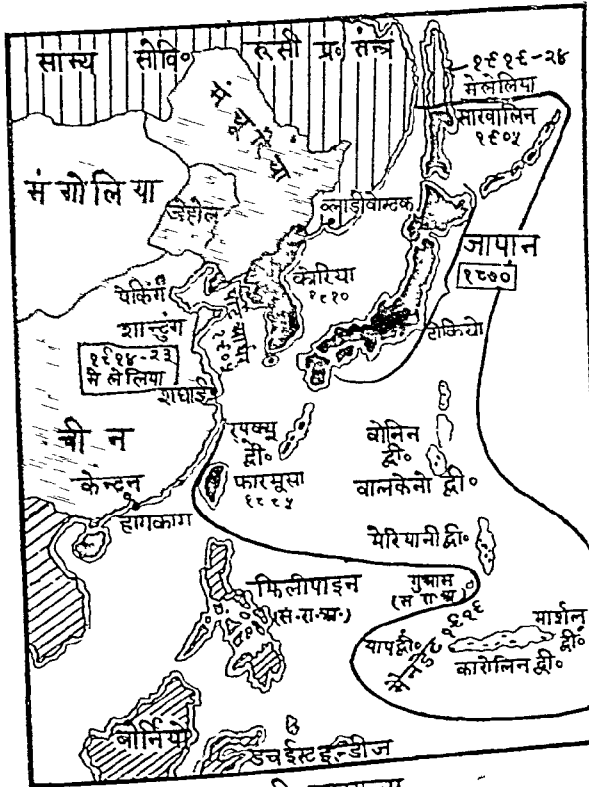
जापानी साम्राज्य

कर जापान ने कोरिया और पोर्टआर्थर पर अधिकार कर लिया। १९१० में कोरिया देश खुल्लमखुल्ला जापानी साम्राज्य में मिला लिया गया। साथ ही साथ दक्षिणी मंचूरिया में जापान अपनी स्थिति को मजबूत करता गया।

बड़ी लड़ाई में क्याओचाओ से जर्मनों को भगा लगा। मंचूरिया पर हमला करने के समय राष्ट्रसंघ की सदस्यता से जापान ने इस्तीफा दे दिया। लेकिन प्रशान्त महासागर के भूतपूर्व जर्मन प्रदेशों पर जापान पूर्ववत् शासन करता है। मंचूरिया में प्रबल हो जाने के बाद जापान ने उत्तरी चीन को अपनाने का निश्चय किया।

चीन में घुसने के मार्ग

बाहर से चीन में प्रवेश करने के लिये तीन प्रधान जल-मार्ग वहाँ की नदियों ने बनाये हैं। ह्वांगहो उत्तर चीन में, यांगटिसीक्यांग मध्यचीन में और सीक्यांग दक्षिणी चीन में प्रवेश करने के लिये प्रधान मार्ग बनाती हैं। इन नदियों के मुहानों पर विदेशियों का अड्डा है। हांग कांग द्वीप और पड़ोस की जमीन पर अँग्रेजी अधिकार होने के कारण दक्षिणी प्रवेश मार्ग की कुंजी ब्रिटेन के हाथ में हैं।

चीन में घुसने के मार्ग

यांगटिसीक्यांग के मुहाने पर बसे हुए शंघाई शहर में कई विदेशी शक्तियों का अड्डा है। इन में संयुक्त-राष्ट्र अमरीका और ब्रिटेन प्रधान हैं। यांगटिसी क्यांग में सैकड़ों मील तक जहाज चल सकते हैं। लेकिन इसका मुहाना विदेशियों के अधिकार में होने के कारण विदेशी शत्रु इस नदी के मार्ग में लड़ाका जहाज भेज कर चीन के हृदय में छुरी भोंक सकते हैं। कोरिया पर जापानी अधिकार होने से चीन का उत्तरी जल-मार्ग जापान के अधिकार में है। सर्वोत्तम सुगम स्थल मार्ग उत्तर की ओर से है। यहाँ पहले रूस का प्रभाव था। आजकल मंचूरिया में जापान का अधिकार होने से उत्तरी स्थलमार्ग की कुंजी जापान के हाथ में है। इसी ओर से जापान ने चीन पर आक्रमण करने का निश्चय किया है।

मंगोल लोगों का देश

रूसी-जापानी लड़ाई के वाद जापान ने रूस और चीन के वीच वाले प्रदेश में वढ़ने की जी तोड़ कोशिश की है। मंचूरिया पर अधिकार करने के वाद जापान ने रूस और चीन के वीच में नई स्थलीय रुकावट डाल दी है। इस से इन दोनों के वीच में स्थल मार्ग द्वारा आसानी से आना जाना नहीं हो सकता। मंचूरिया में जापान का फौजी अड्डा स्थापित हो जाने से उसे उत्तर, दक्षिण और पूर्व की ओर आक्रमण करने का अवसर मिल गया है।

मंगोल लोगों का प्रदेश

जापानी सिपाही और एजेन्ट वड़ी तेजी से हाल में भीतरी (Inner) मंगोलिया में वढ़ रहे हैं। मंचूकुओ के सिंगन प्रान्त में रहने वाले २० लाख मंगोल लोग उसके शासन में पहले से ही आ गये हैं। वचे हुए ३० लाख मंगोलों में से १० लाख वाहरी (Outer) मंगोलिया के रेगिस्तान में, १० लाख भीतरी मंगोलिया में और १० लाख चीनी तुर्किस्तान, तिव्वत के कोकोनार प्रान्त और एशियाई रूस के वुरियत प्रजातन्त्र में रहते हैं।

नानकिंग की सरकार

नानकिंग की सरकार च्यांग काई शेक की अध्यक्षता में मध्य चीन के उन प्रान्तों पर राज्य करती है जो यांग्टिसीक्यांग के उत्तर और दक्षिण में स्थित हैं। उत्तर की पुरानी राजधानी पेकिंग या पेपिंग में जापानी प्रभुत्व है। च्यांग काई शेक की शक्ति का केन्द्र कैन्टन था। यहीं चीनी प्रजातन्त्र के संस्थापक सनयातसेन का प्रभुत्व था। हांगकाओ-कैन्टन रेलवे के बन जाने से यांग्टिसीक्यांग और कैन्टन प्रदेश एक हो गये हैं। इसी भाग में कारबार की अधिकता है और इसी भाग में चीन की सब से घनी आबादी बसी हुई है।

नानकिंग की सरकार

चीन और जापान (१)

[लेखक—श्री रामशङ्कर अवस्थी एम० ए०]

अभी स्पेन देश में युद्ध के काले काले बादल अग्निवर्षा कर ही रहे थे कि एकाएक पूर्व दिशा में घोर चीत्कार हुआ और देखते ही देखते चीन देश पर भी युद्ध का बवण्डर छा गया। वहाँ भी गोलियाँ सनसनाने लगीं, तोपें धुवाँ और आग उगलने लगीं और आकाश से हवाई यमदूत बमवर्षा करने लगे। सभी लोग अवाक् रह गये क्योंकि उसके पहले न वहाँ के नैतिक आकाश-मण्डल में देखने को बदली ही थी, न बादलों की घटा या बिजली। फिर यह एकाएक गड़गड़ाहट कैसी !!

उसी दिन से देश और विदेश के दैनिक समाचार पत्र चीन की करुण कहानी सुना रहे हैं, वहाँ के निवासियों की कुछ पिछले वर्षों की दुःखगाथा पर प्रकाश डाल रहे हैं। हम उसे पढ़ते हैं और पढ़ते पढ़ते उसमें तन्मय हो जाते हैं, और क्यों न हो जाँय जब हमारे पास भी चीनियों की तरह एक व्यथित हृदय है और एक लम्बी करुण कहानी। आइये, पाठकगण ! हम आपको चीन और जापान की कहानी सुनाएँ।

हमारे देश के उत्तर-पूर्व चीन नाम का एक बड़ा विस्तृत देश है। उसमें पहाड़ियाँ भी हैं, मैदान और रेगिस्तान भी हैं। बड़ी बड़ी नदियाँ पश्चिम से पूर्व की ओर बहती हैं और देश को श्यामल शस्य खेतों की हरियाली से रंजित कर देती हैं। पहाड़ियों में कोयले, लोहे इत्यादि की खदानें हैं जिससे देश में किसी प्रकार की कमी नहीं। कदाचित् इसी कारण से वहाँ की जनसंख्या संसार के सब देशों से अधिक है। साथ साथ वहाँ के निवासी परिश्रमी हैं।

चीन के निवासियों को अपनी सभ्यता तथा संस्कृति की प्राचीनता और उत्कृष्टता पर गर्व है। ईसा से लगभग ३००० वर्ष पूर्व फूहसी नामक व्यक्ति के समय से उनके देश का इतिहास यथेष्ट रूप से प्राप्य है। तदनन्तर 'शेनतुंग' और 'हाँगटी' नामक शासकों के अन्तर्गत चीन राज्य की सीमा बढ़ी और वहाँ की संस्कृति का विस्फूर्जन हुआ। इसके बाद वहाँ बहुत से राजवंशों का आवागमन हुआ। यहाँ तक कि ईसा की तेरहवीं शताब्दी में चीन वंश का ह्रास हुआ और देश तिमूजिन या चंगेज खाँ के चंगुल में आ फँसा।

चीन के इतिहास में इस मंगोल शासनकाल का एक विशेष स्थान है। इस समय में चीन देश के वैभव तथा सम्पन्नता से लालायित होकर देश देशान्तर के निवासी यहाँ आए और उनमें से कुछ यहाँ बस गये। इसका एक कारण और था। योरुप में यह 'क्रूसेड्स' (ईसाई और मुसलमानों का फ़िलस्तीन के लिये युद्ध) का समय था और धार्मिक उत्साह अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच चुका था। साथ साथ इटली के निवासी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में बहुत बढ़े चढ़े थे। मंगोलों के इस अभ्युदय काल में एशिया के व्यापारी मार्ग सुरक्षित थे। इस प्रकार ईसाई-धर्म प्रचार तथा नई नई बाजारों की आवश्यकता से प्रेरित होकर योरुप निवासी मंगोल राज्य की पश्चिमी सीमा तक आ चुके थे और अब समय पाकर चीन में भी घुस आये। मुसलमानों के विषय में भी ठीक यहीं कहा जा सकता है।

१३६८ ई० में चीनियों ने मंगोलों को मार भगाया परन्तु इससे विदेशियों के आने जाने का ताँता न टूटा। पन्द्रहवीं शताब्दी के अन्त में और सोलहवीं शताब्दी के आरम्भ में योरुप में नवीन सभ्यता तथा संस्कृति का प्रादुर्भाव हुआ और उस महाद्वीप ने उन्नति के शिखर पर चढ़ने के लिये लम्बे लम्बे डग भरना आरम्भ किये। वहाँ के वीर युवक अपने अपने जहाज लेकर 'नये संसार' को खोजने के लिये निकले और स्पेन, पुर्तगाल, डच इत्यादि चीन में अधिक संख्या में आ पहुँचे। रूस भी अपने पड़ोसी चीन के यहाँ अतिथि हुआ। यद्यपि उसका मित्र के यहाँ जाने का अभिप्राय था एक पिघले हुए समुद्र की खोज। इसके लगभग दो सौ वर्ष बाद योरुप में व्यवसायिक क्रान्ति हुई। अनेकानेक आविष्कार हुए, भाप ने अपनी जादूगरी दिखाई और संसार की काया पलट

के क़ानून के अनुसार विदेशी कचहरी में किया
जायगा और चीन के निवासी को उस कचहरी
का फैसला स्वीकार करना होगा।

(व) Open Door Policy (खुले द्वार की नीति)
चीन देश में प्रत्येक राष्ट्र विना किसी भेद भाव के
व्यापार कर सके। चीन की सरकार किसी देश या
राष्ट्र को चीन में व्यापार करने से नहीं रोक सकती
है और न किसी एक के साथ कोई विशेष रिआयत
ही कर सकती है।

(स) चीन में वहाँ की सरकार से विदेशी शक्तियों
ने निन्नानवे वर्षों के लिये कुछ स्थान लिये जिनका
कि वे कुछ भी लगान वहाँ की सरकार को नहीं देते।
इसके अतिरिक्त अम्वाय, कैन्टन, चिंगकियांग, हांग-
चाऊ, हाङ्को, किउकियाँग, न्यूचाँग शाँघाई, सूचाऊ,
टिंटसिन में विदेशी शासन थे, परन्तु शासक-शक्तियाँ
चीन सरकार को वार्षिक कर देती थीं (Concessions
and Settlement)।

चीन और जापान का प्रारम्भिक सम्बन्ध

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में चीन का
साम्राज्य वहुत विस्तृत था। उसमें दो प्रकार के देश
थे। एक तो वे जो पूर्णरूप से चीन के आधीन थे,
दूसरे वे जो चीन को वार्षिक कर देते थे जैसे
कोरिया, फ़ार्मोसा और र्यूकू टापू इत्यादि।

हम पहले कह चुके हैं कि सत्रहवीं और अठा-
रहवीं शताब्दियों में चीन के निवासियों को जापान
के साथ व्यापार करने का विशेष अधिकार था।
उन्नीसवीं शताव्दी में जव जापान की सरकार को
पार्थक्यता का नियम हटा लेना पड़ा, तव अन्य राष्ट्रों
के समान जापान की इच्छा हुई कि वह भी अपनी
अन्तर्राष्ट्रीय सत्ता को वढ़ावे। परिणामतः उसने
भी अन्य राष्ट्रों के समान चीन से व्यापारिक सन्धि
की वातचीत आरम्भ की। जापान का मुख्य अभिप्राय
था कि उसे भी चीन से वही अधिकार मिल जाय जो
वहाँ अन्य राष्ट्रों को प्राप्त थे। चीन की सरकार ने
जापान में चीन के लिये भी उसी प्रकार के अधिकार
की मांग रक्खी। फलतः १३ सितवंर १८७१ ई० को
चीन जापानमें 'समता तथा पारस्परिकता' (Equa-
lity and Reciprocity) के सिद्धान्तों के आधार पर
सन्धि हो गई। जापान में इस सन्धि के विरुद्ध अस-
न्तोप की लहर फैली इसके मुख्य दो कारण थे—एक
तो यह कि चीन में जापानी लोग विना रोक हथियार
लेकर नहीं चल सकते थे। अस्तु जापानी सरकार ने
दो साल तक सन्धि पर हस्ताक्षर न किये परन्तु सन्
१८७३ में कोरिया, फार्मोसा और र्यूकू की समस्याओं
के कारण उन्होंने सन्धि स्वीकार कर ली।

र्यूकू द्वीप

हम कह चुके हैं। कि र्यूकू द्वीप के
शासक चीन को वार्षिक कर
देते थे। परन्तु जापानी सरकार का कहना था कि
वहाँ के शासक एक जापानी घराने के हैं।
और र्यूकू जापानी सरकार के आधीन होना
चाहिये। १८७१ ई० में र्यूकू के कुछ निवासियों की
फार्मोसा वालों ने हत्या कर डाली। चीन सरकार ने
इसमें कुछ हस्तक्षेप न किया। जापान भला इस
अवसर को कव जाने देने वाला था। १८७२ ई० में
जापानी सरकार ने र्यूकू के शासक 'शो टाई' को
लार्ड की पदवी दी और र्यूकू पर अपनी संरक्षता का
अधिकार घोषित किया और यों धीरे धीरे सन्
१८७५ ई० में 'र्यूकू' के शासक को आज्ञा दी कि वह
चीन को कर देना वन्द कर दे। इसके चार वर्ष उपरांत
जापान की सरकार ने मार्च १८७९ ई० में वहाँ के
शासक से सव अधिकार ले लिये।

चीन ने इस घोर अन्याय का विरोध किया।
जापान ने 'र्यूकू' के दो दक्षिणी टापू चीन
को देना स्वीकार किया यदि चीन सरकार चीन में
जापानियों को वही अधिकार दे दे जो वहाँ अन्य
राष्ट्रों को प्राप्त थे। चीन सरकार ने उसे स्वीकार कर
लिया परन्तु वाद में जापान ने इसमें भी आनाकानी
की। चीन इस समय आन्तरिक कठिनाइयों और
दक्षिण में फ्रांस और उत्तर में रूस से टक्करें ले रहा
था और जापानियों की मित्रता का कांक्षी था। अतः
उसने जापान को चीन में व्यापारिक अधिकार भी
दे दिये और 'र्यूकू' पर जापान का शाब्दिक आधिपत्य
भी स्वीकार कर लिया। इस घटना से जापान की
उस कूटनीति का श्रीगणेश होता है जिसके द्वारा उसने
एक ओर चीन को अपने व्यापारिक शिकंजों में
कसना आरम्भ किया और दूसरी ओर उसके राज्य
को निगलने में प्रयत्नशील हुआ।

दी। अब कोयला, लोहा इत्यादि अत्यावश्यकीय तथा बहुमूल्य वस्तुएँ हो गई। चीन में सभी पदार्थ प्राप्य थे, भला फिर विदेशी इससे लाभ उठाने में कैसे चूक सकते थे।

चीनियों ने समय समय पर विदेशियों को निकालने के लिये नियम बनाये, परन्तु परिस्थितियों ने उनका साथ न दिया। इसके अतिरिक्त चीनियों ने भारी भूल की। उन्होंने परिवर्तनशील समय की इस तीव्र प्रगति के साथ क़दम न रक्खा और न पाश्चात्य संस्कृति की अच्छी बातों को अपनाया और न वहाँ के आविष्कारों से लाभ उठाने में उस तत्परता तथा पटुता का परिचय ही दिया जैसा जापान ने किया।

अब जापान पर भी एक दृष्टि डाल लीजिये, और फिर चीन और जापान की कहानी सुनिये। चीन के पूर्व में टापुओं की एक रेखा है। इनका नाम जापान है। यह न तो चीन के समान बड़ा ही है न वैसा उपजाऊ ही। परन्तु यहाँ की जनसंख्या इतनी अधिक है कि उसका निर्वाह यथेष्ट रूप में यहाँ नहीं हो सकता। पहले पहल चीन की तरह यहाँ भी पुर्तगाल और स्पेन के लोग आये और उन्होंने व्यापार और ईसाई-धर्म प्रचार करना आरम्भ किया। इसके बाद डच और अंगरेज़ आये।

पहले पहल ईसाई धर्म जापानियों को बहुत अच्छा लगा और दिन दिन उसका प्रचार बढ़ने लगा। उनके गिरजेघर बन गये, परन्तु ईसाईयों ने धैर्य्य तथा धार्मिक सहिष्णुता से काम न लिया। उन्होंने बौद्ध धर्म के मन्दिरों के ध्वंस की आज्ञा दी। 'ह्योटोमी हिडेयोशी' ने इससे असन्तोष प्रकट किया। उसने 'जेजूट मिशन' के नेताओं के सम्मुख अपने पाँच प्रश्न रक्खे—(१) जापान में ईसाई धर्म प्रचार करने के कारण (२) बुद्ध मूर्तियाँ और मन्दिर तोड़ने का अभिप्राय (३) पशु हिंसा का कारण (४) बौद्ध उपदेशकों के वध करने का कारण (५) जापानियों को गुलाम बना कर बेचने का कारण और उनके उत्तर से असन्तुष्ट होकर १५८७ ई० में ईसाई धर्म के प्रचार को रोक दिया, परन्तु उस समय स्पेन के निवासियों को अपनी सामुद्रिक शक्ति का घमण्ड था। वे बेधड़क ईसाई मत के प्रचार में दत्तचित्त रहे। १६३६ ई० में जापान की सरकार ने 'पार्थक्यतानियम' बनाये (Seclusion Decree of 17 Articles) जिसके अनुसार न विदेशी पादरी जापान में आ सकते थे और न जापानी बाहर जा सकते थे, परन्तु चीनी और डच व्यापारियों को जापान के साथ व्यापार करने का अधिकार रहा इसका एक प्रभाव यह हुआ कि डच लोगों ने जापान के विद्वानों को पाश्चात्य संस्कृति से परिचित किया और यूरुप के इतिहास, दर्शन शास्त्र, शासन प्रणाली, विज्ञान तथा युद्ध-कला कौशल के महत्व से उन्हें इतना मुग्ध कर लिया कि वे स्वयम् जापान की सरकार की पार्थक्यता नीति का विरोध करने लगे। परिणामतः जापानी सरकार ने ईसाई धर्म की पुस्तकों को छोड़ कर अन्य पुस्तकों पर से निषेध आज्ञा हटा ली और योरुप की ऐतिहासिक सामग्री और विज्ञान इत्यादि से जापान का ज्ञान भण्डार विस्तृत होने लगा। जापान भी अपनी सेना को विदेशी ढँग पर साजने लगा।

इसके बाद योरुप में व्यवसायिक क्रान्ति हुई और योरुप के राष्ट्रों के सामने जापानियों की एक न चली और उन्हें अपने देश के द्वार खोलने पड़े। जापानियों ने योरुप के आविष्कारों को, वहाँ की संस्कृति को, यथेष्ट रूप से अपनाया और अपनी शक्ति को संगठित कर भावी अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों के लिये तैयार किया जिससे धीरे धीरे जापान भी संसार के एक शक्तिशाली राष्ट्र में परिणत हो गया।

विषय प्रवेश करने के पूर्व आवश्यक है कि हम इस प्रकरण में प्रयुक्त गोलमोल सङ्केतों का परिचय दे दें क्योंकि चीन की गाथा अन्तर्राष्ट्रीय चालबाज़ी की गाथा है। चीन में विदेशियों की सत्ता दिन दूनी रात चौगुनी बलवती होती गई। उन्होंने अपनी शक्ति संगठित कर चीन में कुछ विशेष अधिकार प्राप्त किये और फिर उनकी आड़ में चीन का शिकार करने लगे। यहाँ हम उनमें से कुछ अधिकारों का संक्षिप्त विवरण देंगे।

(अ) Extra-territoriality (चीन में विदेशियों के साथ विशेष व्यवहार) इसके अनुसार विदेशी चीन में भी अपने विदेश के क़ानून के अनुसार आचरण कर सकता है। उसे चीन में चीन के नियम मानने की आवश्यकता न थी। यदि वह चीन में, चीनी के विरुद्ध अपराध करे तो उसका न्याय उसी के देश

के क़ानून के अनुसार विदेशी कचहरी में किया जायगा और चीन के निवासी को उस कचहरी का फैसला स्वीकार करना होगा।

(व) Open Door Policy (खुले द्वार की नीति) चीन देश में प्रत्येक राष्ट्र बिना किसी भेद भाव के व्यापार कर सके। चीन की सरकार किसी देश या राष्ट्र को चीन में व्यापार करने से नहीं रोक सकती है और न किसी एक के साथ कोई विशेष रिआयत ही कर सकती है।

(स) चीन में वहाँ की सरकार से विदेशी शक्तियों ने निन्नानवे वर्षों के लिये कुछ स्थान लिये जिनका कि वे कुछ भी लगान वहाँ की सरकार को नहीं देते। इसके अतिरिक्त अम्वाय, कैन्टन, चिंगकियांग, हांग-चाऊ, हाङ्को. किउकियाँग, न्यूचाँग शाँघाई, सूचाऊ, टिंटसिन में विदेशी शासन थे, परन्तु शासक-शक्तियाँ चीन सरकार को वार्षिक कर देती थीं (Concessions and Settlement)।

चीन और जापान का प्रारम्भिक सम्बन्ध

उन्नीसवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में चीन का साम्राज्य वहुत विस्तृत था। उसमें दो प्रकार के देश थे। एक तो वे जो पूर्णरूप से चीन के आधीन थे, दूसरे वे जो चीन को वार्षिक कर देते थे जैसे कोरिया, फ़ार्मोसा और र्यूकू टापू इत्यादि।

हम पहले कह चुके हैं कि सत्रहवीं और अठारहवीं शताब्दियों में चीन के निवासियों को जापान के साथ व्यापार करने का विशेष अधिकार था। उन्नीसवीं शताब्दी में जब जापान की सरकार को पार्थक्यता का नियम हटा लेना पड़ा, तब अन्य राष्ट्रों के समान जापान की इच्छा हुई कि वह भी अपनी अन्तर्राष्ट्रीय सत्ता को वढ़ावे। परिणामतः उसने भी अन्य राष्ट्रों के समान चीन से व्यापारिक सन्धि की वातचीत आरम्भ की। जापान का मुख्य अभिप्राय था कि उसे भी चीन से वही अधिकार मिल जाय जो वहाँ अन्य राष्ट्रों को प्राप्त थे। चीन की सरकार ने जापान में चीन के लिये भी उसी प्रकार के अधिकार की मांग रक्खी। फलतः १३ सितवंर १८७१ ई० को चीन जापानमें 'समता तथा पारस्परिकता' (Equality and Reciprocity) के सिद्धान्तों के आधार पर सन्धि हो गई। जापान में इस सन्धि के विरुद्ध असन्तोष की लहर फैली इसके मुख्य दो कारण थे—एक तो यह कि चीन में जापानी लोग बिना रोक हथियार लेकर नहीं चल सकते थे। अस्तु जापानी सरकार ने दो साल तक सन्धि पर हस्ताक्षर न किये परन्तु सन् १८७३ में कोरिया, फार्मोसा और र्यूकू की समस्याओं के कारण उन्होंने सन्धि स्वीकार कर ली।

र्यूकू द्वीप हम कह चुके हैं। कि र्यूकू द्वीप के शासक चीन को वार्षिक कर देते थे। परन्तु जापानी सरकार का कहना था कि वहाँ के शासक एक जापानी घराने के हैं। और र्यूकू जापानी सरकार के आधीन होना चाहिये। १८७१ ई० में र्यूकू के कुछ निवासियों की फार्मोसा वालों ने हत्या कर डाली। चीन सरकार ने इसमें कुछ हस्तक्षेप न किया। जापान भला इस अवसर को कव जाने देने वाला था। १८७२ ई० में जापानी सरकार ने र्यूकू के शासक 'शो टाई' को लार्ड की पदवी दी और र्यूकू पर अपनी संरक्षता का अधिकार घोषित किया और यों धीरे धीरे सन् १८७५ ई० में 'र्यूकू' के शासक को आज्ञा दी कि वह चीन को कर देना वन्द कर दे। इसके चार वर्ष उपरांत जापान की सरकार ने मार्च १८७९ ई० में वहाँ के शासक से सव अधिकार ले लिये।

चीन ने इस घोर अन्याय का विरोध किया। जापान ने 'र्यूकू' के दो दक्षिणी टापू चीन को देना स्वीकार किया यदि चीन सरकार चीन में जापानियों को वही अधिकार दे दे जो वहाँ अन्य राष्ट्रों को प्राप्त थे। चीन सरकार ने उसे स्वीकार कर लिया परन्तु वाद में जापान ने इसमें भी आनाकानी की। चीन इस समय आन्तरिक कठिनाइयों और दक्षिण में फ्रांस और उत्तर में रूस से टक्करें ले रहा था और जापानियों की मित्रता का कांक्षी था। अतः उसने जापान को चीन में व्यापारिक अधिकार भी दे दिये और 'र्यूकू' पर जापान का शाब्दिक आधिपत्य भी स्वीकार कर लिया। इस घटना से जापान की उस कूटनीति का श्रीगणेश होता है जिसके द्वारा उसने एक ओर चीन को अपने व्यापारिक शिकंजों में कसना आरम्भ किया और दूसरी ओर उसके राज्य को निगलने में प्रयत्नशील हुआ।

"र्यूकू" का यह हाल हुआ, अब फार्मोसा पर दृष्टिपात कीजिये। जापान की दयालुता की पराकाष्ठा तो देखिये कि फार्मोसा के असभ्य निवासियों ने "र्यूकू" के ५४ मनुष्यों की हत्या कर डाली, इससे जापानी सरकार का हृदय विदीर्ण हो गया। उसने फार्मोसा पर आक्रमण करने के लिये एक सेना भेज दी। अमेरिका और ग्रेट बृटेन ने इसका विरोध किया, परन्तु जापान कब सुनने वाला था। उसने फार्मोसा में बड़ी मारकाट मचाई। चीन ने अपने साम्राज्य पर इस जापानी आक्रमण को न्याय विरुद्ध बताया। जापान का कहना था कि इस आक्रमण में चीन सरकार की सम्मति थी। बहुत वाद विवाद के बाद चीन को जापान के आगे मस्तक नवाना पड़ा, क्योंकि वह युद्ध के लिये तैयार न था। ३१ अक्टूबर १८७४ ई० में पीकिंग की सन्धि हुई जिसके अनुसार चीन ने जापान को ५००,००० टेल तावान दिया और आक्रमण को न्यायपूर्ण स्वीकार किया और दोनों राष्ट्रों ने वादा किया कि वे फार्मोसा सम्बन्धी द्वेष-पूर्ण चिट्ठी-पत्री जला देंगे जिससे भविष्य में उनमें पारस्परिक वैमनस्य न रहे।

फार्मोसा

साथ साथ कोरिया का हाल भी सुन लीजिये। सन् १३९२ ई० से कोरिया 'यो' नामक राजवंश के शासन में था। सन् १८६४ ई० में इस वंश के 'चुन चॉग' नामक शासक की मृत्यु के उपरान्त कोरिया के सिंहासन पर 'मिंग वाक्स' नामक राजकुमार बैठा। उसने 'मिन' वंश की राजकुमारी से विवाह किया

कोरिया

कोरिया का राज्य चीन देश के अधीन था। यों तो कोरिया की नीति सदा से अलग रहने की थी जिस कारण उसे 'संन्यासी राज्य' (Hermit kingdom) कहते हैं, परन्तु इस समय चीन की विदेशी-विरोध की भावना का प्रभाव कोरिया पर भी पड़ा और वहाँ प्रथकता तथा विदेशी-विरोध के भाव जागृत हुए। जापान इस समय चीन का विरोध 'र्यूकू' और फार्मोसा में कर रहा था। उसने कोरिया में भी उसी नीति का अनुसरण किया। उसका कथन था कि 'जापान पर जितने आक्रमण हुए हैं वे या तो कोरिया ने किये हैं या कोरिया में होकर हुए हैं। यदि कोरिया किसी अन्य शक्ति के आधीन रहेगा तो जापान को कोरिया के निकट होने के कारण भय रहेगा अतः कोरिया को स्वतन्त्र होना चाहिये। इसके अतिरिक्त १८६८ ई० में जापानी सरकार ने कोरिया के द्वार अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिये खोलने के अभिप्राय से अपने एक राजदूत को कोरिया भेजा परन्तु वहाँ की सरकार ने राजदूत के सन्देश को सुनने तक से इन्कार कर दिया। १८७२ ई० में जापान ने फिर इसी अभिप्राय से व्यापारिक सन्धि करने का प्रयत्न किया, परन्तु कोई सफलता प्राप्त न हुई।

जापान में कोरिया की इस नीति से असन्तोष की भावना फैली। कुछ लोगों ने यह सम्मति दी कि कोरिया के द्वार खोलने के लिये युद्ध किया जाए, परन्तु इस मत के विरोधियों का पक्ष बली रहा। चीन-जापान में इस विषय पर वाद-विवाद हुआ। परन्तु वहाँ की सरकार ने यह बात स्पष्ट कर दी कि यद्यपि चीन कोरिया को अधीन-राज्य अवश्य समझता है, परन्तु वहाँ की अन्दरूनी नीति, तथा युद्ध और शान्ति के प्रश्न पर हस्तक्षेप नहीं करना चाहता। जापान की सरकार चीन के इस उत्तर से बहुत असन्तुष्ट हुई, फिर भी वह कोरिया से सन्धि करने में प्रयत्नशील रही।

इसी समय कोरिया में दो दल हो गये। 'टैयान-कुन' का दल विदेशियों से सन्धि करने का कट्टर विरोधी था और तलवार की नोक पर इस नीति का विरोध करने को उद्यत था, परन्तु इसके विपरीत एक दूसरा पक्ष था जिसकी प्रधान नेत्री कोरिया की 'मिन' रानी स्वयम् थीं। यह दल कोरिया के द्वार विदेशियों के लिये खोलने को उद्यत था। जापान के सौभाग्य से इस समय रानी के दल की विजय हुई और जापान और कोरिया में २७ फरवरी सन् १८७६ ई० में 'यॉवत्रा' नामक स्थान पर सन्धि हुई। उसकी शर्तें निम्नलिखित थीं :—

(१) जापान कोरिया की पूर्ण स्वतन्त्रता स्वीकार करता है।

(२) कोरिया के जेन्ज़न और चिमल्पो नामक बन्दर व्यापार के लिये खोल दिये जाएँ और 'फ्यूजन' में जापान को ज़मीन मिले।

(३) जापानियों को कोरिया में 'एक्स्ट्रा टेरिटोरियलिटी' का अधिकार दे दिया गया, परन्तु कोरिया वालों को जापान में इसी प्रकार के अधिकार मिलने को कोई चर्चा न हुई।

(४) जापानियों को कोरिया का सामुद्रिक किनारा नापने का अधिकार मिल गया।

(५) जापान को कोरिया में व्यापारिक स्वतन्त्रता मिल गई।

हमारे पाठक स्वयम् बड़े विज्ञ हैं। वे इस सन्धि जापान की कूटनीति का परिचय पा गये होंगे। [ज]ापान ने कोरिया का मार्ग सभी राष्ट्रों के डाके के [ल]िये खोल दिया। १८८२ ई० में अमरीका, १८८३ में [अ]ँगरेज़ और जर्मन, १८८४ में रूस और इटली और [१]८८६ में फ्रांस ने भी इसी प्रकार के अधिकार प्राप्त [कि]ये। इसके अतिरिक्त कोरिया को स्वतन्त्र देश [स्]वीकार किया और उसको निगल जाने के लिये [त]ैयारी की।

इसके बाद कोरिया में जापान और चीन ने अपना अपना सिक्का जमाना चाहा और वहाँ की अशान्ति और दलबन्दियों से पूरा लाभ उठाने का [प्र]यत्न किया। वे अपने इस उद्देश्य को सिद्ध करने के लिये कभी कूटनीति का प्रयोग करते थे और कभी रणभेरियाँ भी बजा देते थे। हम स्थानाभाव से इस लम्बी गाथा को यहाँ नहीं दे सकते।

कुछ समय योंही टक्करें लेने के बाद १८ अप्रैल १८८५ ई० में दोनों राष्ट्रों में टेन्टसिन की सन्धि हो गई। चीनी और जापानी सरकारों ने कोरिया से चार महीनों के अन्दर अपनी अपनी सेनाएँ लौटा लेने का वचन दिया। दूसरे जब चीन या जापान कोरिया में सेना भेजना आवश्यक समझेंगे तो वे एक दूसरे को सूचना दे देंगे। चीन को यद्यपि इस सन्धि के मानने में आपत्ति थी क्योंकि इसे स्वीकार करने का अर्थ था कोरिया की स्वतन्त्रता स्वीकार कर लेना, परन्तु उसकी बेचारे की 'मरता क्या न करता' की दशा थी। दक्षिण में उसे फ्रांसीसियों से टक्कर लेनी थी और उत्तर में रूसियों का सामना करना था। इस प्रकार की एक पक्ष की सन्धि चीन और जापान के प्रश्नों को सुलझा न सकी। उनमें पारस्परिक विद्वेष की आग धधकती रही जो किसी भी समय प्रज्ज्वलित हो सकती थी।

चीन और जापान की पहली लड़ाई

सन् १८८५-१८९४ ई० तक के समय में कोरिया में चीन का प्रभुत्व बहुत बढ़ गया और उसके सामने जापान की एक न चली जिससे उसका वैमनस्य चीन के प्रति बढ़ता जाता था और वह किसी ऐसे अवसर की खोज में था कि चीन से बदला ले।

टाँगहक का विद्रोह

जो लड़ने पर उतारू हो उसके लिये अवसर दूर नहीं होता। नितान्त १८९४ ई० में कोरिया में 'टाँगहक' लोगों ने विद्रोह की पताका फहराई। यह विद्वानों की एक संस्था थी जो कोरिया को विदेशी सत्ता की ज़ंजीरों से विमुक्त करना चाहती थी। १८९३ ई० में उन्होंने सियोल पर अपना अधिकार जमाया परन्तु शीघ्र ही विद्रोह-दमन हुआ। दूसरे वर्ष 'टाँगहक' ने फिर जोर मारा और अपनी शक्ति को संगठित कर उन्होंने कोरिया सरकार की सेना पर विजय पाई और कोरिया की राजधानी पर आ टूटे।

चीन भी जापान की भाँति इसी प्रकार के अवसर की खोज में था। भाग्य से कोरिया की सरकार इसी समय उस से सहायता भी माँग बैठी। फिर क्या था, चीन सरकार ने जापान को सूचना दी कि वह अपने 'कर देने वाले' कोरिया के राज्य में शान्ति स्थापित करने के लिये सेना भेज रही है और वहाँ की अराजकता को दमन करके वह अपनी सेना वापस बुला लेगी। सेना भेजने की सूचना से जापानी सरकार इतना असन्तुष्ट न हुई जितना कि कोरिया को आधीन-राज्य बतलाने से। जापान के मंत्री 'मत्सू' ने चीन की सरकार को लिख भेजा कि 'जापान कोरिया को चीन का आधीन राज्य मानने में उससे कभी सहमत नहीं हो सकता'। साथ ही 'मत्सू' ने यह भी लिख भेजा कि जापान भी कोरिया में जापानियों के रक्षार्थ एक छोटी सी सेना भेज रहा है।

इस प्रकार चीन और जापान की सेनाएँ कोरिया पहुँच गईं। उनके पास अस्त्र शस्त्र थे और लड़ने के लिये उत्साही हृदय भी थे। दूसरी ओर दोनों देशों में सन्धि की बात चीत भी हो रही थी।

'वाइकाउन्ट मत्सू' ने चीन के सामने जापान की कुछ शर्तें रक्खीं—(१) कोरिया के विद्रोहियों को चीन और जापान की सेनाएँ मिल कर पराजित करें। (२) चीन और जापान का एक कमीशन कोरिया में आर्थिक, फ़ौजी तथा शासन सम्बन्धी सुधारों की आयोजना करे। (३) यदि चीन इन्हें मानने में सहमत न हो तो जापान अकेले कोरिया की शोचनीय दशा का सुधार करे। चीन ने इसके उत्तर में कहा कि कोरिया में चीन-जापान सहयोग की आवश्यकता नहीं क्योंकि कोरिया में अब कोई अशान्ति नहीं है। दूसरे यदि कोरिया सरकार सुधार करना चाहती है तो वह स्वयम् सुधार करे। जापान को इस में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं। बात ठीक थी, परन्तु जापान ने एक न सुनी। चाहे कोरिया के निवासी चाहें या न चाहें, वहाँ की सरकार जापान के एहसान को माने या न माने परन्तु कोरिया का हितू जापान उसका उद्धार करने और बेड़ा भवसागर के पार लगाने पर कमर कस चुका था। पाठको, ज़रा इस निस्पृहता, इस निष्काम कर्म तथा इस सेवा-भाव की ओर ध्यान तो दीजिये।

चीन और जापान का यह मतभेद बलवान होता गया। २८ जून को 'ओटोरी' ने कोरिया की सरकार से पूछा कि कोरिया चीन का आधीन-राज्य है या स्वतन्त्र। दांतों के मध्य जिह्वा के समान कोरिया-सरकार की स्थिति थी। यदि वह कहती 'आधीन' तो जापान असन्तुष्ट होता था, यदि कहती स्वतन्त्र तो उसे चीन से भय था। उसने भी गोलमोल उत्तर दिया। जापान ने कोरिया के सुधार के लिये एक कमीशन नियुक्त कर दिया।

कोरिया में चीन और जापान की सेनाएँ डटी रहीं, यहाँ तक कोरिया की सरकार ने विदेशी शक्तियों से विनय किया कि वे अपनी सेनाओं को साथ साथ जाने की सम्मति दें, परन्तु उनमें कोई हटने के लिए तैयार नहीं था। जापान कहता था कि चीन की सेना पहले जाए और चीन कहता था कि जापान। अन्त में जापान का धैर्य्य जाता रहा। उसने १९ जुलाई को कोरिया सरकार के सामने यह मांगे रक्खीं (१) सियोल और फ्यूजन के बीच जापान को एक बिजली से चलने वाली रेल बनाने की आज्ञा मिले। (२) १८८२ ई० की जापान-कोरिया सन्धि के अनुसार जापानी सेना को रहने का स्थान दिया जाए। (३) कोरिया से चीन की सेना बाहर निकाल दी जाए। उत्तर के लिये कोरिया को तीन दिन की अवधि मिली। कोरिया का गोलमोल उत्तर पाकर २३ जुलाई को जापानी सेना ने राजधानी में प्रवेश किया, राज महल पर अधिकार कर लिया और 'टै वान् कुन' को वहाँ का प्रधान मंत्री बनाया। ओटोरी की सम्मति से सुधार होने लगे। चीन-कोरिया की वे सन्धियां रद कर दी गईं जिनमें कोरिया ने चीन का आधिपत्य स्वीकार किया था और जापान की सरकार के पास प्रार्थना-पत्र भेजा गया कि कोरिया से चीन की सेना निकाल भगाने के लिये उसकी सहायता दे। अब युद्ध के अतिरिक्त और कोई साधन न था।

पहली अगस्त को दोनों राष्ट्रों ने एक दूसरे के प्रति युद्ध की घोषणा कर दी। सभी विदेशियों ने युद्ध की ओर अपनी उदासीनता की भावना प्रकट की। लग भग एक वर्ष तक युद्ध हुआ। कभी चीन की विजय हुई कभी जापान की, परन्तु अन्त में जापान का प्राबल्य रहा और जरमनी रूस और फ्रांस के प्रयत्नों के बाद १७ अप्रैल १८९६ ई० को दोनों राष्ट्रों में शिमोनीस्की नामक स्थान पर समझौता हुआ। शर्तें निम्नलिखित थीं—(१) चीन ने जापान की तरह कोरिया की स्वतन्त्रता स्वीकार की। (२) चीन ने फ़ार्मोसा और 'पेस्कैडोरेस' जापान को दे दिये। (३) चीन ने सात वर्षों के अन्दर २००,०००,००० टेल तावान देना और ५ प्रतिशत व्याज देना स्वीकार किया और 'वो हाइवी' जमानत के रूप में ७ वर्ष के लिये दिया। (४) चीन ने 'शिआइ' सूचाऊ, और हांगचाऊ में जापान को व्यापार करने का अधिकार दे दिया और यॉगटिसी नदी के कुछ भाग में जापान को नाव चलाने का अधिकार दे दिया। (५) ऊपर बताए गए बन्दरों में जापान को हर प्रकार की व्यवसायिक स्वतन्त्रता तथा 'एक्स्ट्रा टेरिटोरियालिटी' के अधिकार मिल गये। इस के बाद रूस की कूटनीति से जापान ने 'लियोटंग' का देश चीन को दे दिया। इस सन्धि से चीन को कोरिया की स्वतन्त्रता स्वीकार करनी पड़ी। जापान ने कोरिया में अपने पैर मज़बूती से जमा लिये और अन्य राष्ट्रों

को पहली चुनौती दी, परन्तु इस सन्धि ने जापान का कोरिया में सुधार करने का अधिकार निश्चित नहीं किया।

इस सन्धि के बाद चीन तो कोरिया से सदा के लिये चला गया परन्तु जापान भी शान्त पूर्वक वहाँ अपना प्रभुत्व स्थापित न कर सका। चीन की विदाई के साथ रूस का आगमन हुआ। जापान ने देखा कि रूस के मित्र रहने में कल्याण है और दोनों में पीटर्सबर्ग की सन्धि हो गई। तत्पश्चात् रूस-जापान में वैमनस्य भी बढ़ता गया और अन्त में उन दोनों राष्ट्रों में भी युद्ध हुआ। बड़ा-लोमहर्षण युद्ध हुआ और लगभग १२०,००० जापानी काम आए। फिर उनमें पोर्टस माउथ की सन्धि (१९०५) में हो गई, जिससे कोरिया में जापान की स्थिति अधिक दृढ़ हो गई और धीरे धीरे १९१० में जापान ने कोरिया को निगल ही लिया। जिसका हम आगे वर्णन करेंगे।

मंचुको की स्थापना (२)

शिमोनीस्की की सन्धि से चीन की शक्ति बहुत क्षीण हो गई। उसके सम्मुख एक बहुत उत्कट समस्या उपस्थित हुई—शीघ्रातिशीघ्र जापान का समस्त तावान अदा कर देना। जापानी फौजें अभी 'लियोटंग' में पड़ी थीं और तावान अदा होने पर ही हट सकती थीं, परन्तु चीन के पास देश को मुक्त करने के लिये धन न था और ऋण लेने की आवश्यकता थी।

ऋण देने वाले महाजनों की कमी न थी। योरुप के चार महान राष्ट्र ऐसे अवसर की प्रतीक्षा में थे। चीन को विवश होकर उनकी ओर हाथ फैलाना पड़ा। हाथ बढ़ाते ही रूस, फ्रांस, ग्रेट ब्रिटेन और जर्मनी ने चीन पर धन की वर्षा की और चीन ने जापान का ऋण पटा दिया।

अब कृपणता की करामात देखिये। चीन की छाती पर से जापान तो हटा पर अब एक के स्थान में चार महाजन-राष्ट्र उस पर आकर सवार हुये। उन्होंने चीन के सामने अपने अपने विशेष अधिकार और रियायतों की माँगें रक्खीं और अनुभवी महाजनों के समान उससे चालबाजी और चाटुकारी की बातें करने लगे। बेचारे चीन को चारों को सन्तुष्ट करना पड़ा।

रूस इनका अगुवा बना। पीकिंग के रूसी मन्त्री ने चीनी नेताओं से कहा कि चीन रूस की सहायता से ही जापान से बदला ले सकता है और इसके लिये सब से बड़ी आवश्यकता है उत्तरी मंचूरिया से ब्लाडीवास्टक तक रेल का होना। शत्रुदमन की इस मीठी बात ने चीन सरकार पर जादू का सा असर किया। २२ मई १८९६ ई० में रूस और चीन में एक गुप्त-सन्धि (Li-libonoft Secret Treaty) हुई जिसके अनुसार चीनी सरकार ने उत्तरी मंचूरिया में ब्लाडीवास्टक तक रेल बनाने की सम्मति दे दी। (२) रूस इस रेल से युद्ध और शान्ति के समय सेना तथा खाद्य पदार्थ लाये। (३) युद्ध के समय चीन के बन्दरों पर रूस के जहाज़ जा सकते थे। (४) यदि जापान पूर्वी एशिया, चीन या कोरिया पर चढ़ाई करे तो रूस उसकी सहायता करे। (५) एक दूसरे की सम्मति के बिना उनमें से कोई राष्ट्र विपक्षी राष्ट्र से सन्धि न करे।

इसके दो वर्ष बाद रूस ने चीन के सामने एक दूसरी माँग रक्खी जिसके अनुसार उसे २५ वर्ष के लिये लगान पर दक्षिणी 'लियोटंग' जिसमें पोर्टआर्थर और टैलियनवान् नामक नगर और बन्दर स्थित थे मिल गये और वहाँ रेल बनाने की आज्ञा भी मिल गई। इन रेलों के बन जाने से रूस की स्थिति मंचूरिया में दृढ़ हो गई। अब उसे मंचूरिया में रूसी फौज लाने के लिये बस किसी बहाने की आवश्यकता थी।

ऐसे अवसर पर भला जर्मनी कब चूकने वाला था। उसने भी चीन सरकार से इसी प्रकार की बातचीत आरम्भ की। इसी बीच शैण्टङ्ग के 'किआचांग' नामक नगर में दो जर्मन पादरियों की हत्या हो गई। बस, फिर क्या था, जर्मन जहाज़ी बेड़ा 'किउचाउ'

की खाड़ी में होकर क्रिउचाउ जा पहुँचा और अराजकता को शान्त करने के बहाने उस नगर पर अधिकार कर लिया। जब पादरियों का मामला तय हो गया तो जर्मनी ने चीन के सामने अपनी 'क्रिउचाउ' की माँग रक्खी। रूस और फ्रांस ने जर्मनी के इस अन्याय-पूर्ण आचरण पर कुछ न कहा। बेचारे चीन को विवश होकर जर्मनी की माँग भी पूरी करनी पड़ी और ६ मार्च १८९८ ई० को उसने जर्मनी को ९९ वर्ष के लिये किउचाउ लगान पर दे दिया। इसके अतिरिक्त उसने उसे शैनटंग में दो रेलें बनाने की भी आज्ञा दे दी। जर्मनी ने कुछ ही समय में वहाँ के बन्दर को ठीक करवा लिया, जिसमें उसका जहाज़ी वेड़ा रुक सके और रेलों का बनवाना भी आरम्भ कर दिया।

इसी प्रकार फ्रांस ने भी ९९ वर्षों के लिये काँगचाउ ले लिया और 'नानिंग से पखोई' तक रेल बनाने की आज्ञा प्राप्त कर ली। सन् १८९८ ई० में ग्रेट ब्रिटेन ने भी 'वीहाईवी' और 'कोलून' (हाँगकाँग के सामने) नामक स्थान उन्हीं शर्तों पर प्राप्त किये। इसके बाद १८९८ ई० में रूस और फ्रांस के प्रोत्साहन देने पर बेल्जियम ने पीकिंग से हाँकाऊ तक रेल बनाने का ठेका ले लिया। इसके अतिरिक्त अमेरिकन चीन डेवलपमेन्ट् कम्पनी को हांकाऊ से कैन्टन तक अँगरेज़ों को पीकिंग से मुकडेन तक, और शांघाई से नानकिंग तक, और फ्रांस को "हैनोई" से टांकिंग, टांकिंग से लओकाई, लओकाई से 'यूनानफू' तक, की के ठेके मिल गये। जापान मूकभाव से यह कौतुक देखने में विवश था। कोरिया में अब उसको चीन के स्थान में रूस के समान बलवान् शक्ति का सामना करना था और वह इसमें तन्मय था।

इस प्रकार चीन अब विदेशियों के शिकंजे में फँस गया था। इसके कुछ हितकारक परिणाम भी हुए। पहला तो यह कि चीन संसार के बहुत से राष्ट्रों के स्वार्थ का क्षेत्र बन गया जिससे कोई एक राष्ट्र अकेला उसकी स्वतन्त्रता का नाश नहीं कर सकता था क्योंकि इससे उन सब की स्वार्थ-सिद्धि में बाधा पड़ती। दूसरे यह कि रेलों के हो जाने से चीन के समान विस्तृत देश में एकता की भावना का संचार हुआ और चीनियों के हृदय में भी अन्य राष्ट्रों के समान सुधार करने की उमंग उठी। तीसरे चीनियों के हृदयों में विदेशी विरोध के भाव भी प्रज्वलित हो उठे।

फलतः भिन्न भिन्न राष्ट्रों में वाद-विवाद उठा कि चीन के द्वार प्रत्येक राष्ट्र के लिये खुले (Open Door Policy) रहने चाहिये जिससे वहाँ प्रत्येक राष्ट्र को समान व्यापारिक सुभीते मिलें। हम इस स्थान पर इस प्रकरण का विस्तृत विवरण देना उचित नहीं समझते, केवल इतना बतला देना चाहते हैं कि ६ सितम्बर १८९९ ई० में अमेरिका के 'सेक्रेटरी आफ स्टेट' 'जान हे' ने अपने प्रतिनिधियों द्वारा ग्रेट ब्रिटेन, जर्मनी, रूस, जापान, इटली, फ्रांस की सरकारों के पास पत्र भेजा जिनमें निम्नलिखित सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया—

(१) चीन में कोई शक्ति, किसी दूसरी शक्ति के स्थान में या सत्ता के क्षेत्र में हस्तक्षेप न करेगी।

(२) चीन की चुंगी की दर हर एक बन्दर में (माफी बन्दरों के अतिरिक्त) एक ही हो।

(३) विदेशी जहाज़ों का कर, और विदेशियों से रेलों का किराया उतना ही लिया जाये जितना चीन अपने देश के जहाज़ों से और अपने देश के निवासियों से ले।

हम कह आये हैं, कि चीन में विदेशी-विरोध के भाव जागृत हो चुके थे और समय की प्रगति के साथ उन्होंने भीषण रूप धारण कर लिया। देश में कृपणता छाई ही हुई थी। साथ साथ नदियों में बाढ़ें भी आ गई। देश में अशान्ति फैली और विदेशी-विरोध की भावना ने भी ज़ोर पकड़ा। फलतः चीन में विदेशियों के विरुद्ध एक भीषण विद्रोह फैला जो इतिहास में 'मुक्का मार विद्रोह' के नाम से प्रसिद्ध (Boxe's Rising) है। कितने ही विदेशियों के प्राण गये, रेल और तारों का ध्वंस हुआ। १३ जून को पीकिंग और उसके दूसरे दिन टेन्टसिन विद्रोहियों के अधिकार में आ गया। पीकिंग से विदेशी प्रतिनिधि निकाल दिये गये। उसी दिन चीन की महारानी ने विदेशियों पर युद्ध की घोषणा करवा दी। बड़ा लोमहर्षण युद्ध हुआ और अगणित विदेशी मारे गये।

विदेशियों ने विवश होकर जापान से सहायता माँगी। जापानी फ़ौजें शीघ्र चीन आ पहुँची, कुछ ही दिनों में अन्य राष्ट्रों की सेनाएँ भी आ मिलीं। रूस की सेना ने समस्त मंचूरिया पर अधिकार कर लिया। चीन की हार हुई। अन्त में ७ सितम्बर १९०१ को सन्धि हुई। चीन ने भिन्न राष्ट्रों को ४५०,०००,००० टेल तावान देना स्वीकार किया जिसमें जापान का भाग बहुत कम था।

कोरिया में रूस का वैभव दिन दूना रात चौगुना बढ़ रहा था। यह देख कर जापान के हृदय पर मानों साँप लोट गया। उसका विचार था कि चीन को निकाल भगाने के बाद कोरिया में जापानी 'घर जानी मन मानी' कर सकेंगे परन्तु अब उसे एक महान्, संगठित राष्ट्र से टक्कर लेनी थी। नितान्त, ३० जनवरी १९०२ ई० में जापान ने अँगरेजों से सन्धि कर ली जिसके अनुसार उन्होंने 'चीन और कोरिया के साम्राज्यों की स्वतन्त्रता की रक्षा करने का अनुष्ठान किया', दूसरे, दोनों देश इन साम्राज्यों में प्रत्येक राष्ट्र के लिये समान व्यापारिक सुभीते प्राप्त करने का प्रयत्न करेंगे, तीसरे दोनों राष्ट्रों ने एक दूसरे को वचन दिया कि वे, ग्रेट ब्रिटेन के उन विशेष अधिकारों को जो उसने चीन में प्राप्त किये हैं और जापान के उन विशेष अधिकारों को जो उसने कोरिया में प्राप्त किये हैं, अन्य राष्ट्रों के आक्रमणों से या चीन की अशान्ति और अराजकता से सुरक्षित रक्खेंगे।

अमेरिका और जरमनी ने इस सन्धि का समर्थन किया परन्तु रूस ने इसका घोर विरोध किया। और मार्च के महीने में फ्रांस के साथ एक समझौता किया जिससे उन्होंने चीन और कोरिया में फ्रांस और रूस की स्थिति को उसी प्रकार दृढ़ कर लिया।

हम कह चुके हैं, चीन में 'मुक्कामार' विद्रोह के समय में रूस ने मञ्चूरिया पर अधिकार कर लिया था। विद्रोह-दमन हो जाने पर उसने दक्षिणी मंचूरिया से अपनी सेना लौटा ली, परन्तु उत्तरी मंचूरिया से सेना नहीं हटाया और उसे कम करने के स्थान में बढ़ाता रहा। उसकी इच्छा थी कि मंचूरिया को अपने देश में मिला कर अमू नदी को रूस और चीन की प्राकृतिक सीमा बनावे। जापान ग्रेट ब्रिटेन और अमेरिका ने इसका विरोध किया। इसी समय रूस-जापान में सन्धि हुई जिसका हम ऊपर वर्णन कर चुके हैं। इससे रूस ने चीन से समझौता किया जिसके अनुसार वह धीरे धीरे तीन बार में अपनी सेना हटा ले जाने को तैयार हो गया, परन्तु बाद में इसका उल्लंघन किया।

जापान को यह अच्छा न लगा। वह रूस के मंचूरिया के अधिकार से उतना ही असन्तुष्ट था जितना उसके कोरिया के प्रभुत्व से। इन समस्याओं के सुलझाने का बस एक ही मार्ग था—जापान-रूस युद्ध और सन् १९०४ में ऐसा ही हुआ।

युद्ध के बाद वही हुआ जो युद्धों के बाद होता है। सन् १९०५ ई० की पोर्ट्समाउथ की सन्धि या समझौता हुआ जिसका प्रभाव रूस पर बुरा पड़ा, उसको मंचूरिया खाली करना पड़ा। कोरिया में जापान का बोल बाला हो गया। इसके अतिरिक्त उसे चीन में रूस का 'कान्टँग' नामक स्थान, जिसमें पोर्ट आर्थर और डेरिन स्थित थे, मिल गए।

रूस की सत्ता के ह्रास होने से चीन और जापान एक बार फिर आमने सामने आ गए, अब मंचूरिया की बारी थी। जापान ने मंचूरिया में भी उसी नीति का अनुसरण किया जिसका उपयोग उसने चीन के विरुद्ध कोरिया में किया था। नवम्बर १९०५ ई० में चीन-जापान में पीकिंग की सन्धि हुई जिसके अनुसार उसने पोर्ट्समाउथ की सन्धि स्वीकार की। इसके अतिरिक्त चीन के १६ नये शहर अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के लिए खोल दिये गए। जापान को 'मुकडेन और अनटङ्ग' के बीच एक फ़ौजी रेल बनाने की आज्ञा मिली। रेल के गार्ड बुला लेने के विषय में जापान ने कहा कि वह ऐसा करना तब स्वीकार करेगा जब रूस भी अपने गार्डों को बुला लेना स्वीकार कर ले, मंचूरिया में शान्ति स्थापित हो जाय और चीन विदेशियों के जन और धन की रक्षा करने के योग्य हो जाय। जापान को इसी प्रकार रेल तथा अपनी जागीर की रक्षा करने के अन्य अधिकार मिले।

मंचूरिया का प्रश्न

यह योरुप में बड़ी उथल-पुथल का समय था। इंगलैंड, फ्राँस, रूस इत्यादि जरमनी की शक्ति को बढ़ने देना नहीं चाहते थे, जापान ने भी जरमन-

विरोधी राष्ट्रों का साथ देने का विचार किया क्योंकि इसमें उसका हित था। जरमनी की पराजय तथा पतन होने पर उसे आशा थी कि चीन में जरमनी के स्थान जापान को मिल जाएँगे। ग्रेटब्रिटेन-जापान में सन्धि हो ही चुकी थी। जापान ने फ्रांस से भी उन्हीं शर्तों पर सन्धि कर ली। कुछ ही दिनों बाद जापान और रूस में भी सन्धि हो गई जिससे उन्होंने चीन की स्वतन्त्रता तथा पिछली सन्धि के समय की चीन साम्राज्य की सीमा, वहाँ खुले दरवाजे की नीति को स्वीकार किया। ३१ अगस्त १९०७ को ग्रेट ब्रिटेन और चीन में सन्धि हो गई जिसके अनुसार उन्होंने तिब्बत पर चीन का आधिपत्य स्वीकार किया।

मंचूरिया में जापान के प्रभाव के बढ़ने के साथ साथ वहाँ जापानियों का व्यापार भी बढ़ा। ऐसा होना स्वाभाविक ही था क्योंकि जापान का देश मंचूरिया के इतने निकट है। धीरे धीरे जापान ने इससे अनुचित लाभ उठाना आरम्भ किया और 'खुले द्वार' की नीति के सिद्धान्तों का भो उल्लंघन किया। इसके अतिरिक्त जापान ने चीन से कुछ समभौते किये जिससे उसके रेलवे के अधिकार बढ़ गए और उसने कई नई रेलवे-लाइनें बनाईं जो मंचूरिया के अन्तस्थ से आती थीं और मुख्य रेलवे-लाइन में मिल जाती थीं। इससे जापान को मंचूरिया के अन्दर घुसने और नये नये सुधार करने का अच्छा अवसर मिला।

जापान ने चीन से कुछ ऐसे समभौते किये जिनसे उसकी मंचूरिया में आर्थिक दशा अच्छी हो गई। १९१० में उसे 'फूशुन', और 'येन्टाई' की कोयले की खदानें मिल गईं। ओकूरा एण्ड कम्पनी को 'पेन्हसिंह' की खदानों का ठेका मिल गया। उसे मंचूरिया में लकड़ी काटने के भी अधिकार मिले, चुंगी की दर में भी कुछ रियासतें दी गईं।

इन सब समभौतों से बड़ी जटिल समस्याएँ उठ-खड़ी हुईं। चीन और जापान में रेल सम्बन्धी भगड़े होने लगे। 'खुले द्वार' के सिद्धान्त के उल्लंघन से जापान का अन्य राष्ट्रों से भी मतभेद रहने लगा। इस पारस्परिक मतभेद को शान्त करने के लिये यह कहा गया कि चीन अमेरिका, ग्रेटब्रिटेन, फ्रांस इत्यादि से धन लेकर मंचूरिया की जापानी और रूसी रेलें खरीद लें, परन्तु जापान इससे सहमत हुआ।

चीन में प्रजातन्त्र राज्य

योरुप में इस समय एक महान् युद्ध की तैयारियाँ हो रही थीं। साथ साथ चीन में भी एक महान् क्रान्ति की आग सुलग रही थी 'मुक्कामार' विद्रोह के बाद चीन की महारानी ने साम्राज्य में सुधार करना आरम्भ किये। अनेकानेक आज्ञापत्र शिक्षा, फौज, शासन प्रणाली के सुधार के लिये प्रकाशित हुए। 'युवान् शिहकाई' ने फ़ौज का नया संगठन किया, जरमनी से शिक्षक बुलाए जिन्होंने उन्हें योरुप के नवीन अस्त्र, शस्त्र चलाना सिखाया। कुछ लोग विदेशों को वहाँ की शासन पद्धतियों के अवलोकनार्थ भेजे गए परन्तु इसी समय महारानी की मृत्यु हो गई और नए शासक के अन्तर्गत सुधारों का वह जोर जाता रहा। १९०९ ई० में प्रान्तिक सभाओं की बैठक हुई और १९१० ई० में पीकिंग में एक बृहत् राष्ट्रीय सम्मेलन हुआ जिसमें सदस्यों ने माँग रक्खी कि नवीन शासन पद्धति की घोषणा शीघ्र की जाय। इतना होने पर भी चीन में अशान्ति की ज्वाला धधकती रही। चीन सरकार ने इसे शान्त करने के लिए इंगलिस्तान के समान शासन पद्धति स्थापित करने की घोषणा की, परन्तु क्रान्तिकारी न माने और २५ दिसम्बर १९११ ई० में उन्होंने चीन में प्रजातन्त्र राज्य की स्थापना की। डाक्टर 'सनयात् सेन' चीन प्रजातन्त्र राज्य के सर्वप्रथम् सभापति निर्वाचित हुए।

चीन को इस क्रान्ति से जापान बहुत असन्तुष्ट हुआ और १८ दिसम्बर को वहाँ के मंत्री 'इन्नुइन' ने चीन को नवीन शासन पद्धति को अस्वीकार किया, परन्तु इससे अधिक वह कुछ न कर सका क्योंकि इंगलिस्तान ने उसके साथ सहयोग करने में आना-कानी की।

योरुप का महासमर १९१४-१८

५ अगस्त १९१४ ई० को ग्रेटब्रिटेन ने जरमनी के विरुद्ध युद्ध करने की घोषणा कर दी। इसके दो दिन पश्चात् टोकियो में इस प्रश्न पर वाद-विवाद हुआ

और यह निर्णय हुआ कि जापान युद्ध में भाग ले। उसको आशा थी कि वह जरमनी की सामुद्रिक शक्ति को पूरब से सदा के लिए उखाड़ सकेगा। १८ अगस्त को जापान ने एक 'अल्टीमेटम' जरमनी भेजा जिसमें उसको कहा गया कि (१) वह जापान और चीन के किनारे स्थित समुद्रों और खाड़ियों में से अपने सैनिक-जहाज़ वापस बुला लेवे। (२) जरमनी अपनी किआचाओ की सब ज़मीन जापान को दे देवे, जिससे जापान उसे चीन को लौटा दे।

जरमनी ने इसका कुछ उत्तर न दिया। अवधि के बाद जापान ने चीन में जरमनी के स्थानों पर मार काट मचा दी जिससे चीन और जापान में भी मत-भेद होने लगा क्योंकि जापान बिना चीन देश की ज़मीन का उपयोग किये जरमनी के स्थानों पर आक्रमण नहीं कर सकता था। दूसरे कुछ रेलें ऐसी थीं जो चीन और जरमनी दोनों की थीं। चीन ने झगड़ा सुलझाने के लिए कुछ स्थान युद्ध के लिए दे दिये।

जब जापान ने शाण्टङ्ग में जरमन स्थान ले लिये तब चीन ने उन्हें जापान से तुरन्त वापस माँगा। जापान ऐसा करना नहीं चाहता था जब तक कि योरुप में सन्धि न हो जाय। इसके अतिरिक्त उनमें सन् १९०९ ई० से १९१४ ई० तक रेल-सम्बन्धी अनेकानेक झगड़े आ खड़े हुए।

इक्कीस माँगें (१९१५)

७ नवम्बर को जब जापान ने 'किउचाउ' जीत लिया तब चीन ने उसे भी वापस माँगा। जापान इसे भी नहीं देना चाहता था। उसने चीन के साथ समझौते की बातचीत आरम्भ की और उसके सम्मुख अपनी २१ माँगें रक्खी, जिन्हें हम स्थानाभाव से यहाँ नहीं दे सकते। हाँ, इतना कह देना उचित समझते हैं कि यदि चीन सरकार इन माँगों को स्वीकार कर लेती तो उसका साम्राज्य एक जापानी उपनिवेश हो जाता। 'युआन शिह काई' ने कुछ उत्तर न दिया। जापान ने चीन को२७ घण्टे का अल्टीमेटम् दिया और चीन को निम्नलिखित शर्तें मानने पर विवश किया। (१) जापान को शाण्टङ्ग में जरमनी के सब अधिकार दे दिये जाँय। (२) यदि चीन 'शेफू से सिनान्-किउचाउ' तक रेल बनावे तो जापान उसमें अपना धन लगा सकता है। (३) विदेशियों के रहने और व्यापार करने के लिए शाण्टङ्ग के बड़े बड़े शहर खोल दिये जाँय।

इसके साथ चीन-जापान में एक दूसरी सन्धि हुई जिसके अनुसार पोर्ट आर्थर, डेरिन और दक्षिण मंचूरिया की रेलों का पट्टा २५ वर्ष से ९९ वर्ष तक के लिये बढ़ा दिया गया। (२) वहाँ जापानी लोग व्यापार, व्यवसाय या खेती के लिए ज़मीन लगान पर ले सकते थे। (३) दक्षिणी मंचूरिया में जापानी लोग रह सकते थे और व्यापार कर सकते थे। (४) मंचूरिया में जापानियों को 'एक्सट्रा टेरिटोरियलिटी' के अधिकार दिये गए। इसी प्रकार की अन्य रिआयतें जापानियों को मिलीं।

जब इन समझौतों की खबर अन्य राष्ट्रों को मिली तो उन्होंने अपना असन्तोष प्रकट किया। अमेरिका ने इसका घोर विरोध किया। जापान ने अमेरिका को सन्तुष्ट करने के लिये २ नवम्बर १९१७ को उससे समझौता कर लिया जिसके अनुसार अमेरिका ने स्वीकार किया कि चीन के निकट होने के कारण जापान के उस देश में विशेष अधिकार हैं तथा जापान सरकार ने अमेरिका की सरकार को आश्वासन दिया कि यद्यपि चीन में उसके विशेष अधिकार हैं फिर भी व्यापारिक मामलों में किसी राष्ट्र के साथ भेदभाव न होगा।

योरुप में महासमर के पश्चात् १९१८ ई० में वारसाई की सन्धि हुई। जापान ने वहाँ राष्ट्रों के सामने, जिनमें चीन भी था, अपनी यह माँग रक्खी कि उसको 'किउचाउ' तथा शैण्टङ्ग के सूबों में जर्मनी के रेल सम्बन्धी सब अधिकार मिल जाँय। बहुत दिनों के वाद-विवाद के बाद जापान की माँगें पूरी हुईं।

वाशिङ्गटन कान्फ्रेंस (१९२१)

महासमर का सब से बड़ा परिणाम था राष्ट्रों में निःशस्त्रीकरण की भावना का जागृत होना। इस प्रश्न के साथ शान्त महासागर के देशों की समस्याओं पर भी विचार होना था। इसके लिये १९२१ ई० में अमेरिका में वाशिङ्गटन कान्फरेंस की आयो-

जना हुई। चीन, बेल्जियम, हालैण्ड और पुर्तगाल भी आमन्त्रित किये गये।

चीन ने वाशिङ्गटन में उपस्थित राष्ट्रों के सामने अपनी सब समस्याओं को रक्खा। उसने चीन से विदेशियों के विशेष अधिकार, जापान की १९१५ की सन्धि, चीन में अन्य राष्ट्रों के लगानी स्थान, मंचूरिया में जापानी गार्डों का होना, अन्यायपूर्ण बतलाया। जापान के सदस्यों ने भी अपने उत्तर और प्रत्युत्तर दिये।

१६ नवम्बर को कान्फरेंस ने चीन-जापान के विषय में निम्नलिखित प्रस्ताव पास किये :—

(१) चीन की स्वतन्त्रता, आधिपत्य, तथा राज्य की सीमा पूर्ववत् रहें और सब इसे स्वीकार करें।

(२) कोई देश चीन की उन्नति के मार्ग में बाधक न हो।

(३) चीन में सब को व्यापार करने के समान सुभीते रहें।

(४) कोई राष्ट्र चीन की अशान्तिमय आन्तरिक परिस्थिति से लाभ न उठावे।

इसी प्रकार 'खुले द्वार' की नीति के विषय पर भी प्रस्ताव पास हुए। चीन को चुंगी के कर लगाने में कुछ स्वतन्त्रता दी गई। शैण्टङ्ग का प्रश्न 'कान्फरेंस' के सामने नहीं आया वरन् एक पृथक सन्धि द्वारा तय कर दिया जिसके अनुसार 'किउचाउ' चीन को वापस मिल गया, परन्तु वहाँ के स्कूल, धार्मिक स्थान तथा क़बरिस्तान जापानियों के ही अधिकार में रहे। चीन को सिनान-सिंगटाओ रेलवे तथा उसकी सहयोगी रेलें भी वापस मिलीं।

जापान की ओर से बैरन शिडेहरा ने चीन को आश्वासन दिया कि जापान 'एक इंच भी चीन का राज्य' नहीं चाहता वरन् वहाँ 'खुले द्वार' की नीति तथा समान व्यापारिक और व्यवसायिक सुभीते चाहता है।

चीन में इस समय घरेलू लड़ाइयाँ हो रही थीं। जून १९२८ ई० में 'नैशनलिस्ट्स' का बोलबाला हुआ परन्तु पारस्परिक विरोध कम न हुए। इसका प्रभाव चीन की अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति पर बुरा हुआ। जापान में इस समय 'बैरन टनाका' प्रधान मन्त्री था। उसकी नीति थी कि एशिया की विजय करने के लिये जापान को पहले चीन की विजय करनी चाहिये, और चीन की विजय करने के लिये जापान को मंचूरिया की विजय करनी उचित है'। उसकी इस नीति को इतिहास में 'महाद्वीप की नीति' (Continental Policy) कहते हैं। १९२७ ई० और पुनः १९२८ ई० में जनरल चाँग काई शेक ने दो बार पीकिंग पर विजय पाने के लिये 'शैन्टंग' पर आक्रमण किया। बैरन टनाका ने वहाँ के जापानियों के रक्षार्थ एक सेना भेजी। मई १९२८ ई० में सिनान के स्थान पर चीन और जापानी फ़ौजों में लड़ाई हो गई जिसमें बहुत से प्राण गये। जापान ने सिनान-सिंगटाओ रेल के दोनों ओर ७ मील चौड़ी जमीन ले ली और चीनी फ़ौज को उसमें से निकाल दिया। चीन सरकार ने इसका विरोध किया परन्तु बैरन टनाका ने इसका कारण जापानियों के प्राणों की रक्षा करना बतलाया। चीन सरकार ने जेनेवा के राष्ट्रीय संघ से अपील की परन्तु इसका कुछ फल न हुआ। तब चीनियों ने 'बायकाट' का अस्त्र उठाया और जापानी माल के बहिष्कार का आन्दोलन आरम्भ किया जिससे बैरन टनाका को विवश होकर सन्धि करनी पड़ी और जापान को उक्त स्थान से अपनी फ़ौज वापस करनी पड़ी।

चीन में जापानियों के विरोध का आन्दोलन चल रहा था। चीन सरकार ने प्रकाशित किया कि पहली जनवरी १९३२ ई० से 'एक्स्ट्रा टेरिटोयलिटी' के अधिकार तोड़ दिये जायँगे जिसका अन्य राष्ट्रों ने (जिनमें जापान भी था) विरोध किया।

इसी समय मंचूरिया में चीन-जापान का पारस्परिक वैमनस्य बढ़ रहा था। चीन ने वाशिंगटन कान्फरेंस में १९१५ की सन्धि के रद्द कर देने की माँग रक्खी थी परन्तु इस प्रश्न पर वहाँ विचार न हो सका। इस सन्धि के अनुसार चीन ने क्वांगटन का पट्टा २५ वर्ष से ९९ कर दिया था। अब चीन सरकार ने जापान सरकार को लिखा कि वह सन्धि रद्द कर दी जाय जिसका जापान ने निषेध किया।

मंचूरिया के रेलों के विषय में अनेकानेक झगड़े उठे जिनसे परेशान होकर चीन ने निश्चय किया कि मंचूरिया की रेलों में जापान के साथ साझा न किया

जाय और वहाँ सब नई रेलें चीनियों के धन से और चीनियों के द्वारा बनवाई जाँय। इस अनुष्ठान के अनुसार १९२५-३१ तक दक्षिणी मंचूरिया में ५०० मील तक रेलें बनीं।

इसके अतिरिक्त मंचूरिया में चीनियों के बड़े कारख़ाने, इमारतें थीं, अगणित जापानी वहाँ रहते थे। १९२७ तक जापान की नीति रही कि मंचूरिया के अन्दरूनी मामलों में जापान हस्तक्षेप न करे, परन्तु सन् १९२७ ई० में बैरन टनाका ने चीन सरकार को लिखा कि मंचूरिया में अधिकतर अशान्ति तथा अराजकता रहती है। इससे जापान सरकार बाध्य होगी कि वहाँ शान्ति स्थापित करने के लिये प्रयत्न करे।

३ जून १९२८ ई० को पीकिंग सरकार का 'ताना-शाह' चैंगतसोलिन जब मुकडेन जा रहा था उसकी गाड़ी मार्ग में बम से उड़ा दी गई और उसकी मृत्यु हो गई। बाद में पता चला कि जिस पुल पर यह घटना हुई थी वह जापानी रक्षकों की देख-भाल में रहता था।

इससे चीन-जापान की तनातनी बहुत बढ़ गई। १९२८ ई० को मार्शल चैंग सुह-चियाँग ने अपने पिता का स्थान लिया। उसके अन्तर्गत मंचूरिया की अशान्ति बढ़ी। मंचूरिया के बड़े बड़े नगरों में जापान-विरोधी भिन्न भिन्न संस्थाएँ बनीं जैसे 'फारेन अफेयर्स असोसियेशन', 'नार्थ ईस्टर्न कल्चरल असो-सियेशन'।

१८ सितम्बर की रात को चीन की एक फ़ौज में और जापान के रेल-गार्डों में संघर्ष हो गया। घटना एक साधारण थी परन्तु जापान ने इससे अनुचित लाभ उठाया। इसके दूसरे ही दिन जापान ने मुकडेन और 'चंगचुन' पर अधिकार कर लिया और उसके दूसरे दिन 'पिंगकाऊ', 'चिंगटू', 'फूशुन' इत्यादि मंचूरिया के प्रधान स्थान जापानियों के हाथ में आ गये। चीनियों की पराजय हुई और दूसरी जनवरी १९३२ ई० तक समस्त मंचूरिया में जापान का अधि-कार हो गया।

चीन ने जेनेवा के राष्ट्र-संघ के पास फिर अपील की। बड़ा वाद-विवाद हुआ और अन्त में एक कमीशन वहाँ की जाँच करने के लिये नियुक्त हुआ जिसका सभापतित्व इंगलैण्ड के लार्ड लिटन को दिया गया।

इसी समय शांघाई में युद्धाग्नि धधकने लगी। इसका कारण यह था चीन में जापानी माल के बहि-ष्कार का आन्दोलन बड़े वेग से चल रहा था। शांघाई चीन का सब से बड़ा बन्दर था। वहाँ संसार के सब राष्ट्रों के व्यापारी रहते थे जिनमें जापानियों की संख्या सब से अधिक थी। चीन के 'बायकाट' आन्दोलन से जापान को भारी हानि हुई।

शांघाई के बीचोबीच में दो मुख्य स्थान हैं—(१) अन्तर्राष्ट्रीय सेटिलमेन्ट, (२) 'फ्रांसीसी कन्सेशन'। इनमें अधिकतर विदेशी रहते हैं जो इसमें ज़मीन लगान पर ले सकते हैं। उनको 'एक्स्ट्राटेरिटोयलिटी' के अधिकार हैं। चीन में अराजकता तथा पारस्परिक झगड़ों के समय यह प्रथा रही कि इनसे छेड़छाड़ न की जाय।

इस समय चीनियों में पारस्परिक लड़ाई नहीं हो रही थी वरन् उनकी और जापानियों की टक्कर थी जो एक विदेशी राष्ट्र था और जहाँ के निवासी इन स्थानों में रहते थे। अतः स्वाभाविक था कि यह प्रश्न उठता कि 'अन्तर्राष्ट्रीय सेटिलमेन्ट तथा फ्रेञ्च कन्सेशन' की ओर कैसा व्यवहार किया जाय। चीनियों का कहना था कि जापानी इन स्थानों में अपने भाइयों की रक्षा नहीं करना चाहते, वरन् कोरिया और मंचूरिया के समान यहाँ रह कर और शांघाई पर आक्रमण करके चीन का गला घोंटना चाहते हैं।

१८ जनवरी १९३३ ई० को एक दुर्घटना हो गई। चापी (शांघाई) में एक चीनी कारख़ाने के सामने चीनी-जापानी मुठभेड़ हो गई जिसमें दो जापानी घायल हुए और उनमें एक की मृत्यु हो गई। इसके दो दिन बाद जापानियों ने उस कारख़ाने में आग लगा दी जिसमें उनका म्युनिसिपल पुलिस से मुकाबला हुआ और तीन चीनी और तीन जापानी घायल हुए।

जापानी कान्सल जेनरल ने शांघाई के मेयर के सामने निम्नलिखित माँगें रक्खीं :—

(१) मेयर क्षमा प्रार्थना करे।

(२) १८ जनवरी के अपराधियों को दण्ड मिले।

(३) जापान-विरोधी आन्दोलनों का अन्त किया जाय।

शांघाई के मेयर ने चीन के नेताओं से अनुनय विनय किया कि वे जापान के माल का बहिष्कार कराने वाली संस्थाएँ तोड़ दें और २७-२८ जनवरी की रात में पुलिस ने कुछ दफ़्तरों पर अपना अधिकार कर लिया। २८ जनवरी के प्रातःकाल एडमिरल शिरज़ोवा ने कहा कि यदि मेयर का कोई उत्तर न आयेगा तो जापान कल प्रातःकाल अपना काम आरम्भ करेगा।

इन जापानी धमकियों ने चीनियों को बहुत क्रुद्ध कर दिया। ऐसी दशा देख कर अन्तर्राष्ट्रीय सेटिल-मेन्ट के लोग सजग हो गये और हर एक राष्ट्र ने अपनी अपनी सेनाओं के स्थान नियत कर दिये। जापानियों का स्थान सेटिलमेन्ट के उत्तर-पूर्वी भाग में था परन्तु जापानी लोग सेटिलमेन्ट के कुछ बाहर तक निकल कर चापी के पास पहुँच गये जहाँ चीनी फ़ौज पड़ी थी। यदि जापानी अब और आगे बढ़ते तो यह आवश्यक था कि चीनी सेना के साथ उनकी टक्कर हो जाती।

उसी दिन दोपहर में शांघाई के मेयर ने जापानियों की माँगें स्वीकार कर लीं और जापानियों ने उस पर सन्तोष की भावना प्रगट की। परन्तु उसी रात के ११ बजे ऐड्मिरल 'शिरज़ोवा' ने मेयर के पास अपनी यह घोषणा भेजी कि 'चापी' में जापानियों की रक्षा करने के लिये एक जापानी सेना भेजना निश्चित हुआ है और चीनी अपनी चापी में ठहरी हुई सेना को रेल के पश्चिम ओर हटा ले जाँय। यह सन्देशा शांघाई के मेयर के पास ११-१५ बजे पहुँचा और ११-४५ पर ही जापानी सेनाएँ चापी की ओर बढ़ीं और उनकी और चीनी सेना की मुठभेड़ हो गई। जापानी सेना पर बम बरसने लगे और प्रातःकाल साढ़े पाँच बजे चापी में ७५ से १०० फीट ऊँची लपटें उठ रही थीं। साथ ही नानकिंग पर भी बमवर्षा होने लगी।

चीन ने जेनेवा के संघ से फिर अपील की। संघ ने भिन्न राष्ट्रों के उन्नीस सदस्यों की एक समिति नियुक्त की और अन्त में उस समिति ने यह तय किया कि चीन में लड़ाई रोक दी जाय। चीनी फ़ौजें वहीं की वहीं पड़ी रहें और जापानी फ़ौजें उसी स्थान को लौट जायँ जहाँ वे इस लड़ाई के पहले थीं। इस प्रकार वहाँ एक संरक्षित भाग बना दिया गया।

मंचुको का गोरखधंधा

हम ऊपर कह चुके हैं मंचूरिया में चीन और जापान का संघर्ष हुआ जिसमें चीनियों की हार हुई। बैरन् टनाका की नीति के अनुसार जापान को चीन में पदार्पण करने के लिये आवश्यक था कि वह मन्चूरिया पर अधिकार जमाये। इस ध्येय की पूर्त्ति के लिये जापान ने एक नई चाल सोची। उसने मन्चूरिया में चीन-विरोधी भावना का निरूपण किया। मन्चूरिया के निवासियों के सामने मन्चू सम्राटों के पतन का दृश्य खींचा। और 'मन्चूरिया मन्चूरियनों के लिये है' (Manchuria for the Manchurian's) तथा 'सीमा के अन्दर शान्ति रहे' निवासी सकुशल रहें (Peace within borders and Security for the inhabitants) के नारे लगवाए। तत्पश्चात् अक्तूबर १९३१ में जापानियों ने चुपके चुपके मुकडेन में सेल्फ़ गवर्नमेंएट गाइडेन्स नामक संस्था बनाई और भिन्न भिन्न नगरों में नाम मात्र के लिए म्यूनिसिपल गवर्नमेंएट की स्थापना की और भिन्न भिन्न प्रान्तों में भी नाम के लिए प्रान्तीय सरकारें स्थापित कीं। फिर १६-१७ फ़रवरी १९३२ ई० को मुकडेन में प्रान्तीय सरकारों की एक सभा हुई जिसमें सात गवर्नर उपस्थित थे। इस सभा ने मन्चूरिया में नए शासन विधान की स्थापना का निश्चय किया जिसके मौलिक सिद्धान्तों के निर्माण करने के लिए एक समिति बनाई गई। १८ फ़रवरी को मन्चूरिया की स्वतन्त्रता की घोषणा की गई। २५ फ़रवरी को मंचुको (या मन्चूरिया के राज्य) की स्थापना हुई। 'सिंगकिंग' इसकी राजधानी हुई। पहली मार्च को मन्चुको ने अपना चीन से नाता तोड़ दिया। चीन की गद्दी से उतारा मन्चू सम्राट 'पी' मन्चुको का शासक और 'चियांग हसिआओ हसी' प्रधान मन्त्री बना। जापान ने मन्चुको की स्वतन्त्रता स्वीकार कर ली और वहाँ अपना प्रतिनिध भेज दिया।

इसी समय लिटन कमीशन ने निष्पक्ष भाव से जाँच आरम्भ की। उसकी रिपोर्ट ने जापान के ढोल

की पोल खोल दी। उस रिपोर्ट में जापान पर दो मुख्य लाच्छन थे। (१) १८ दिसम्बर को जापान ने जो आक्रमण किया वह आत्मरक्षा का साधन नहीं कहा जा सकता (२) मन्चूरिया में स्वाधीनता की स्थापना जापानी सेना तथा जापानी कर्मचारियों की उपस्थिति से ही सम्भव हो सकी और वहाँ की प्रजा की वास्तविक तथा हार्दिक स्वधीनता की भावना उसका कारण न थी।

जापान ने लिटन रिपोर्ट का घोर विरोध किया, परन्तु जेनेवा राष्ट्रसङ्घ ने बड़े तर्क वितर्क के बाद एकमत से उसे स्वीकार किया और मन्चूरिया की स्वाधीनता को अस्वीकार करते हुए तय किया कि मन्चूरिया चीन राज्य के अन्तर्गत रहे। जापान ने इससे असन्तुष्ट होकर लीग से अपना नाता बिल्कुल तोड़ दिया।

मंचुको की स्थापना के उपरान्त जापान ने जेहोल प्रान्त पर दाँत लगाया। पहली जनवरी १९३३ ई० से 'शंहैंकुआन' में युद्ध आरम्भ हुआ और जापान और मंचुकों की सेनाओं ने मिल कर उस पर अधिकार कर लिया। समस्त जेहोल प्रान्त में चीन और जापान मंचुको की संयुक्त सेनाओं में युद्ध होने लगा। ४ मार्च १९३३ को बिना एक गोली चलाए जेहोल की राजधानी 'चेंगटह' जापानियों के हाथ आ गई। चीनी जेहोल में न ठहर सके और 'ग्रेट वाल' के दक्षिण भाग गए। जापानियों ने 'ग्रेट वाल' के दक्षिण पर भी धावा मारा। ३१ मई, १९३३ ई० को जापान-चीन में टाँगू का समझौता हुआ जिसके अनुसार 'ग्रेट वाल' से लेकर लुटाई, टुङ्गचांग, येनचिंग तक का स्थान संरक्षित Demilitarized Zone कर दिया गया जिसमें कोई सेना नहीं रह सकती थी। चीनी सेनाएँ इसके दक्षिण चली आईं और इस स्थान में शान्ति !स्थापित करने के लिए चीनी पुलिस नियत हुई।

इस प्रकार चीन के हाथ से मञ्चूरिया और जेहोल निकल गया। तब से जापान यह प्रयत्न कर रहा है कि संसार के सब राष्ट्र मंचुको की स्वतन्त्रता स्वीकार करें, दूसरी ओर जेनेवा का राष्ट्र संघ इसका निषेध करने में उतना ही तुला है। ७ जून १९३३ ई० को उसकी एक 'उप-समिति' ने सब राष्ट्रों को अपना एक वक्तव्य भेजा है जिसमें उनसे विनय किया है कि मंचुको को रेडियो, तार, डाक, इत्यादि के अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों में स्थान न दिया जाय, उसके सिक्के पासपोर्ट, डाक के टिकट, स्वीकार न किये जाँय।

आधुनिक परिस्थिति (३)

जापान की यह नाट्य लीला और मंचुको और जेहोल की घटनाओं से समाप्त न हुई। पिछले दो-तीन वर्षों से वह मंगोलिया में स्वतन्त्रता-आन्दोलन का सञ्चालन कर रहा है। इसमें उसके दो अभिप्राय हैं—(१) कुछ पिछले वर्षों से चीन की शासन व्यवस्थाओं से सँभल जाने से चीन की केन्द्रीय सरकार बलशाली होने लगी तथा चीन साम्राज्य के उत्तर पश्चिमी भाग में उन्नति होने लगी। इससे जापानी सेना के नेताओं को खटका हुआ। यदि चीन की केन्द्रीय सरकार अपनी उत्तर पश्चिमी सीमा पर बलवान सेना नियुक्त कर उसे सुरक्षित कर लेगी तो जापान की पश्चिमी चीन में सभी योजनाओं पर पाला ही न पड़ जायगा वरन् मञ्चुको की स्वतन्त्रता में भी बाधा पड़ेगी। (२) जापान-जरमनी और जापान-इटली में समझौता हो जाने से संसार के तीन 'तानाशाही' देश एक ही खीमे में आ गए। जापान को इससे साम्यवाद को दबाने के बहाने चीन में हस्तक्षेप करने का अवसर मिल गया जिससे वह मंगोलिया और उसके बाद रूस के राज्य पर धावा मार सके।

जापानियों ने अपने इन अभिप्रायों को सिद्ध करने के लिये चीनियों को चीनियों से भिड़ाया और पूर्वी मङ्गोलिया को पश्चिमी मङ्गोलिया पर आक्रमण करने का प्रोत्साहन दिया इस प्रकार यह स्पष्ट है कि जापान की सुइयान तथा अन्दरूनी मङ्गोलिया के उत्तर पश्चिमी भाग को पराजित करने की इच्छा कोई नई बात नहीं है वरन् उसकी 'महाद्वीप नीति' Conti-

nental Policy का ही फल है। जापान की इस इच्छा के कुछ आर्थिक तथा सैनिक पक्ष भी हैं जिन पर हम अब विचार करेंगे। (१) जापान चीन की उत्तर-पश्चिम की संरक्षक सीमा को तोड़ देना चाहता है। यह सीमा उसके उत्तर पश्चिम में मङ्गोलियन प्लेट पर है जो पूर्व दिशा में किङ्गन पहाड़ से आरम्भ होती है और पश्चिम में पामीर तक जाती है। पश्चिमी सीमा लगभग १००० मील लम्बी है जिसमें बाह्य मङ्गोलिया का कुछ भाग है तथा सिंगक्यांग, कांसू, निंगसिया, सुइयान और चहार हैं। १९२४ ई० में जब बाह्य मङ्गोलिया स्वतन्त्र हो गया तो चीन की सीमा गोबी के मरुस्थल के दक्षिण में आ गई। १९३१ में मञ्चूरिया, जेहोल, पूर्वी होपी, उत्तरी चहार निकल जाने से चीन की सीमा सिकुड़ कर 'ग्रेटवाल (चीन की बड़ी दीवार) के अन्दर आ गई।

सुइयान जेहोल और चहरयार के पूर्व में स्थित है। इसके उत्तर में बाह्य मङ्गोलिया है, पूर्व में चहार परिचम में निंगसिया, कॉसू और दक्षिण में शांसी और शेंसी हैं। इस प्रकार सुइयान, उत्तर चीन और उत्तर पश्चिम चीन के बीच एक द्वार ही नहीं है वरन् इन भागों में आने जाने वाले मार्गों का केन्द्र है। यहाँ से एक रास्ता 'उर्गा' हो कर साइबीरिया जाता है, दूसरा पूर्व को ओर उत्तरी चहार होकर जेहोल जाता है, तीसरा परिचम की ओर निंगसिया और 'कांसू' होकर सिगक्यॉग जाता है। पॉचवॉ दक्षिण पश्चिम की ओर शांसी और होपी को जाता है। स्वाभाविकतः यदि चीन के हाथ से सुइयान निकल जाय तो चीन की रक्षा की समस्त उत्तरी-पश्चिमी संरक्षक सीमा उसके हाथ से निकल जायगी। उत्तरी चीन के लिए सुइयान एक रोक है। यदि जापान उसे ले ले तो दक्षिण में शांसी और शेंसी पर और पूर्व में 'होपी' और 'चहार' पर आसानी से आक्रमण कर सकते हैं।

इसके अतिरिक्त सुइयान के निकल जाने से उत्तरी चीन और उत्तर-पश्चिमी चीन के सूबे पृथक पृथक हो जॉयगे जिससे उनके बीच का एक जोड़ निकल जायगा और वे खटके में पड़ जॉयगे। इससे उत्तरी चीन ही चीन साम्राज्य से न निकल जायगा, वरन् निंगसिया और कांसू भी जापानियों के आक्र-के लिए खुल जॉयगे। इसी कारण जापानियों ने मञ्चुको और मङ्गोलिया की सेनाओं को 'सियान' पर आक्रमण करने का प्रोत्साहन दिया।

(२) जापान चीन का सम्बन्ध बाहरी संसार से तोड़ देना चाहता है। चीन के सामुद्रिक किनारों पर अच्छे अच्छे बन्दर हैं जिनमें बड़े बड़े जहाज आते जाते हैं। इसके अतिरिक्त एक स्थल मार्ग भी है जो सिक्यॉग, मङ्गोलिया, साइबीरिया होकर यूरप जाता है। चीन-जापान में युद्ध छिड़ जाने पर जापान चीन का सामुद्रिक मार्ग तो सरलता से बन्द कर सकता है क्योंकि चीन के किनारे किनारे टापुओं की एक 'लाइन' स्थित है जो जापानियों के अधिकार में हैं। जापानी जहाज चीन के समुद्रवर्ती प्रान्तों पर आसानी से बम चला सकते हैं और अपने अधिकार में ले सकते हैं। कोरिया में अधिकार होने के कारण 'पीलासागर' और चिहली की खाड़ी, लिउ चिउ टापुओं में अधिकार होने के कारण 'पूर्वी सागर' और फार्मोसा पर अधिकार होने के कारण 'चीन सागर' उसके चंगुल में हैं। इस कारण युद्ध के समय जापान समुद्र मार्ग से चीन मे खाद्य पदार्थों का जाना सरलता से रोक सकता है। परन्तु स्थल मार्ग का रोकना उसके बस में नहीं। बाह्य मङ्गोलिया के स्वतन्त्र हो जाने, 'उत्तरी चहार' और 'डोलोना' के जापानियों के अधिकार में चले जाने से स्थल मार्ग से आना जाना बहुत कुछ बन्द हो गया फिर भी उत्तर-पश्चिम के मार्ग का उपयोग हो सकता है और अब भी सिंक्यांग और योरुप से आना-जाना बना है जिससे जापान बड़ा चिन्तित है। चीन को पराजित करने के पूर्व जापान के लिये परमावश्यक है कि वह चीन और महाद्वीप का सम्बन्ध तोड़ दे। वास्तव में चीन के इस समय तक स्वतन्त्र रहने का कारण बस एक ही है—चीन में उपस्थित राष्ट्रों की शक्ति की समता (International balance of power)। चीन का सब से बड़ा सहायक रूस है जो उसकी उत्तर-पश्चिमी सीमा पर स्थित है। अतः यह आवश्यकता हुई कि बाह्य मङ्गोलिया और रूस का भी घेरा किया जाय। इसी कारण मंचुको की स्थापना के समय से जापान साम्यवाद के दमन करने में लगा

है, तथा मंचुको की सेना रूसी सीमा पर उपद्रव मचा रही है।

(३) जापान की इस कूद-फाँद का एक आर्थिक पक्ष भी है। जापान में प्राकृतिक पदार्थों की कमी है। उसे कच्चा माल लेने के लिये अन्य देशों की ओर हाथ बढ़ाना होता है। उसे भय है कि संसार के अन्य देश किसी समय भी उसे कच्चा माल देना बन्द कर दें तो वह बड़े संकट में पड़ जायगा। जापान में मुख्यतः सूती, ऊनी कपड़ों और साधारण दैनिक प्रयोग के सामान के कारखाने हैं। पिछले वर्षों में जापान से ऊनी सामान भी बड़े परिमाण में बाहर भेजा जा रहा है। इस विषय में १९३४ ई० की अन्तर्राष्ट्रीय ऊन कांग्रेस के एक सदस्य ने कहा था कि जो जापान कि गत वर्षों में यूरोप से ऊनी सामान मँगाता था, आज वह उसे बना कर बाहर के देशों को भेजता है। यूरोप की बाजारों में इंगलिस्तान, जर्मनी और फ्रांस पर भी इसका प्रभाव पड़ रहा है।

अभी तक जापान आस्ट्रेलिया से ही कच्चा ऊन मँगाता था। उत्तर-पश्चिमी चीन और अन्तस्थ मंगोलिया में भी भेड़ें पाली जाती हैं और अच्छा ऊन बनाया जाता है। विस्तार में यह स्थान आस्ट्रेलिया के इतना है और एक 'प्लेटू' पर स्थित है जहाँ की जलवायु शुष्क है और जहाँ के चरागाहों में बड़ी संख्या में भेड़ें पल सकती हैं, इसी कारण अन्तस्थ मंगोलिया में जेहोल, चहार, सुइयान, और उत्तर-पश्चिमी चीन में 'काँसू', निंगसिया, चिङ्घाई अपने ऊन के लिये चीन में प्रसिद्ध हैं। इन छः प्रान्तों में निम्न-लिखित स्थान ऊन के लिये विख्यात हैं :—

चिङ्घाई—ह्वाँगयुआन, तलुङ्ग, युङ्गान, सिनिंग, टिंगट्रू, लब्राँगा।

निङ्गसिआ—निङ्गसिआ, तेङ्गकू, लिङ्गवू, चुँगवी, वीयुआन।

कान्सू—लन्चाऊ, लिआँगचाऊ, पिंगलिआँग, ताओचाओ, तुनहुआँग, सिआहो, मिन्चाओ।

सुइयान्—चूयूआन, पाओताओ, फीसुई, ताओ-लिन, वूहुआफू।

चहार—चंगपेह, सुआनह्वा, चोलू, दोलोनर।

जेहोल—चिफ़ेङ्ग, चाओपङ्ग, सुइटङ्ग, चङ्गटेह।

चीन सरकार की पिछली रिपोर्ट के अनुसार चीन में ५४०,००० पिस्कल ऊन बनाया गया। इसमें चिंगटाई में १६६,००० पिस्कल, कान्सू में ८०,००० पि०, सुइयान और चहार में ६४,००० पि०, निङ्गसिआ में ३०,००० और जेहोल में २७,००० पि० बना।

इस प्रकार अन्तरस्थ मंगोलिया और उत्तर-पश्चिमी चीन में चीन का ७५ प्रतिशत ऊन बनता है। जापान को २० करोड़ येन मूल्य का ऊन प्रति वर्ष बाहर से मँगाना पड़ता है। यदि अन्तस्थ मंगोलिया और उत्तर-पश्चिमी चीन उसे मिल जाय तो उसकी यह समस्या सुलझ जाय। गत वर्ष जापान की सरकार ने अपने दो कर्मचारियों को इस उद्देश्य से अन्तस्थ मंगोलिया और उत्तर-पश्चिम चीन में भेजा कि वे वहाँ जाकर वहाँ ऊन की उत्कृष्टता तथा परिमाण की जाँच करें। इसके अतिरिक्त जापानियों ने किउचाउ एण्ड कम्पनी नामक व्यापारिक संस्था खोली और मंगोलिया ऊलन वीविंग कम्पनी की पूँजी बढ़ाने का उद्योग कर रही है जिससे टेन्टसिन का जापानी कारखाना बढ़ जाय और उसकी उपशाखाएँ देश के अन्दर स्थापित की जाएँ। इस प्रकार जापान ने सुइयान पर आक्रमण केवल राज्य लोभ से प्रेरित होकर ही नहीं किया, वरन् अन्तस्थ मंगोलिया तथा उत्तर-पश्चिम चीन के कच्चे ऊन से प्रलुब्ध होकर भी।

अभी अक्तूबर १९३७ ई० में अमेरिका के सभा-पति रूज़वेल्ट महोदय के भाषण की आलोचना करते हुए जापानी मन्त्रिमण्डल के 'इन्फ़ार्मेशन ब्यूरो' के प्रधान 'तत्सुओ कवाई' ने कहा "संसार मनुष्य मात्र का है जिसमें प्रत्येक परिश्रमी व्यक्ति को आनन्द से जीवन व्यतीत करने का अधिकार है। फिर हम देखते कि उसमें सुस्त तथा आलसी लोग आनन्द कर रहे हैं और बेचारे सज्जन तथा परिश्रमी व्यक्तियों के पास जीवन के साधन भी नहीं हैं। इससे अधिक अन्याय पूर्ण और क्या बात हो सकती है। पिछले ५० वर्षों में जापान की जनसंख्या बहुत बढ़ गई है जिसके लिए कुछ स्थान माँगा, किन्तु उसे सूखा जवाब मिला। जापानियों ने न्याय की आवाज़ उठाई है उन के पास प्राकृतिक पदार्थ कम हैं और वे उन्हें उन अन्य देशों से चाहते हैं जो उन पदार्थों से

वे देश इस आवाज का उचित

देते तो युद्ध के अतिरिक्त और हो ही क्या सकता है" ? जापानी लोग सब यही कहते हैं कि संसार मनुष्य मात्र के लिए है और हम लोग मेहनती और सज्जन हैं अतः हमें भी संसार में आनन्द से रहने का अधिकार होना चाहिये। जापान चाहता है कि महाद्वीप शान्ति के साथ उन्नति करे और चीन के सहयोग की इच्छा करता है। चीन इसका निषेध करता है और यही युद्ध का कारण है।'

दो वर्ष पूर्व एक सम्वाददाता ने 'कामेकिची तकाहशी' नामक जापान के अर्थ शास्त्र विशेषज्ञ से मुलाक़ात की। बातचीत करते हुए तकाहशी महोदय ने कहा, 'आज कल ग्रेट ब्रिटेन, अमेरिका इत्यादि बड़े बड़े देश आर्थिक राष्ट्रीयता (Economic Nationalism) के सिद्धान्तों पर चल रहे हैं। उनके पास बड़ा आर्थिक राज्य है जिससे वे अपने आयोजनों को सफलता पूर्वक बिना रोक पूरा कर लेते हैं। जापान का हाल दूसरा है। उसको पास पड़ोस में एक 'आर्थिक राज्य' की खोज करनी पड़ती है।' इस प्रकार विद्वद्वर अपने देश की सेना के अनाचारों को न्याय पूर्ण बता रहे थे कि सम्वाददाता ने प्रश्न किया, यह आर्थिक राष्ट्रीयता का प्रश्न तो कुछ वर्षों से आ प्रस्तुत हुआ है। जापान ने कोरिया और फ़ार्मोसा तो बहुत पहले अपने राज्य में मिला लिये थे। तब तो अंगरेज़ और अमरीका वाले आर्थिक राष्ट्रीयता के सिद्धान्तों पर नहीं चल रहे थे। उन्होंने उत्तर दिया, जापान आत्मरक्षा के लिये ऐसा करने को बाध्य हुआ इसमें जापान की वही दशा थी जो एक डूबते हुए जहाज़ में उस आदमी की होती है जो बलवान है परन्तु जिसके पास डूबने से बचने के लिए कोई सहारा नहीं है। मान लीजिए, उसी जहाज़ में कुछ कमज़ोर आदमी हैं जिनके पास डूबने से बचने के लिए लकड़ियाँ हैं। यदि अपनी रक्षा करने के लिए यह आदमी कमज़ोर आदमियों से कुछ लकड़ियाँ छीन लेता है तो यह कोई अनुचित बात नहीं। उस समय जापान की ठीक यही दशा थी।

इसके विपरीत चीनियों का कहना है कि यदि जापान को कोई आर्थिक सङ्कट है तो इसका यह अर्थ नहीं कि जापान चीन पर छापा मारे। चीन और जापान की आबादी एक ही प्रकार घनी है। चीन मुख्यतः किसानों का देश है, इस कारण चीन की ज़मीन वहाँ के निवासियों के लिये ही पर्य्याप्त नहीं है। अतः चीन के राज्य को पराजित करने की इच्छा करना जापान के लिए अनुचित है। इसके अतिरिक्त जापान की आर्थिक कठिनाइयों का मुख्य कारण उस देश का छोटा होना या जन संख्या अधिक होना नहीं है वरन् वहाँ के आर्थिक सङ्गठन की त्रुटियाँ हैं। जापान के किसान पशुओं के समान परिश्रम करते हैं, फिर भी भोजन तक के लिए तरसते हैं। साथ साथ वहाँ के शहरों में बड़े बड़े पूंजी पति हैं जिनके पास बड़ा धन है। इसके अतिरिक्त जापान के साम्राज्यवादी नेता चीन को जीत कर एक विश्व युद्ध की ओर अग्रसर होना चाहते हैं। जितना अधिक राज्य उन्हें मिलता है उतना ही अधिक उनका राज्य लोभ बढ़ता है और साथ साथ उन्हें अधिक शस्त्री करण की आवश्यकता भी होती है। ऐसा करने में उन्हें धन की आवश्यकता होती है जिस कारण वे प्रजा पर भांति भांति के कर लगाते हैं जिससे प्रजा को दुःख होता है। जापान के राज्य विस्तार, जन संख्या तथा वहाँ के प्राकृतिक पदार्थ को देख कर विदित होता है कि यदि वे उसका उचित प्रयोग करें तो अपना जीवन व्यतीत कर सकते हैं। चीन तथा संसार के अन्य देश जापान से सहयोग करने को तैयार हैं और एक दूसरे की सहायता करना चाहते हैं जिससे वे साथ साथ फलें फूलें, परन्तु जापान के साम्राज्यवादी इस शान्तिमार्ग से विचलित हो जाते हैं, वे लोगों का धन ले लेना चाहते हैं और उसके स्थान में कहते हैं कि वे जापान की नौकरी करें।'

(पैसिफिक डाइजेस्ट से)

इतने दिनों से ठोकर खाते खाते चीनी भी अब कुछ सुधर गये हैं। वहाँ के विद्यार्थी भी बाहर के देशों से पढ़ पढ़ कर आये हैं और उनमें देश-प्रेम के भाव जागृत हो गये हैं। एकता तथा विदेशियों के विरुद्ध पारस्परिक प्रेम और सहयोग करने की इच्छा का प्रादुर्भाव हुआ है। चीन के लोग चाहते हैं कि मंचुको का राज्य उन्हें वापस मिले, कोरिया और फ़ार्मोसा के लोग जापान से स्वतन्त्र होकर अपने देश का शासन अपने हाथ में लेवें।

इसके विपरीत जापान उत्तरी चीन में अपना सिक्का जमाना चाहता है। १९३५ ई० में जापान ने उत्तरी चीन में हापी, शैएटङ्ग, शॉसी, चहार को मिलाकर एक राज्य स्थापित करने का प्रयत्न किया, जो पूर्ण रूप से सफल न हुआ और जापान को केवल पूर्वी हापी का राज्य स्थापित करा कर सन्तोष करना पड़ा।

पिछले ३६ वर्षों में जापान पीपिंग से टेन्टसिन तक के स्थान में अपनी एक सेना रक्खे हुए है। इस बार ७ जूलाई १९३७ ई० को पीपिंग और समुद्र के किनारे के बीच लोकचिआओ में जापानी-चीनी सेनाओं में झगड़ा हो गया। यह हम नहीं कह सकते कि किसका दोष था। दो दिन की मार-काट के बाद यहाँ शान्ति हुई, परन्तु उसी साल अगस्त में शांघाई में एक दुर्घटना हो गई जिससे युद्धाग्नि फिर प्रज्वलित हो उठी और जापान और चीन में घमासान युद्ध होने लगा और अभी हो रहा है।

चीन की राजनैतिक रूप रेखा
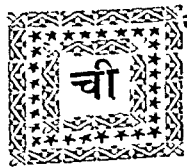
चीन का शासन विधान सहस्त्रों वर्ष से करीब करीब एक ही ढर्रे पर चला आ रहा था। चीन की जनता, नई रोशनी से बिल्कुल बेखबर, अपने पुराने राजाओं की गवर्नमेण्ट से सन्तुष्ट थी। १९ वीं शताब्दी के आखिर तक यही हाल रहा। किन्तु यूरूपियन जातियों के संसर्ग में आने पर चीन वालों को भी प्रजातन्त्र शासन प्रणाली की बू लगी। विचार शील व्यक्तियों ने देखा कि अमेरिका के संयुक्त राष्ट्र और फ्रांस आदि प्रजातन्त्रवादी राष्ट्र हर क्षेत्र में उन्नति कर रहे हैं, अतएव वे लोग भी चीन में प्रजातन्त्र की स्थापना का स्वप्न देखने लगे। उन्होंने अनुभव किया कि यह युग प्रजातन्त्र का है, प्रजातन्त्र के वग़ैर वर्त्तमान युग में कोई राष्ट्र उन्नति के मार्ग पर अग्रसर नहीं हो सकता।

फलस्वरूप १९११ में चीन की सुप्रसिद्ध क्रान्ति हुई, और मंचू वंश के राजा को सिंहासन परित्याग करना पड़ा। चीन में पहली बार प्रजातन्त्र की स्थापना हुई। १९११ में चीन के शासन की वागडोर प्रजातन्त्र के हाथों में चली तो गई, किन्तु समूचे देश में एक प्रकार की अशान्ति फैल गई। सेठ, साहूकार, जमींदार और सामन्त तथा फौजी सरदार मंचू घराने के बादशाहों की अयोग्यता और कुप्रबन्ध से तंग आ गये थे, और इसी कारण १९११ की क्रान्ति में उन्होंने क्रान्तिकारियों का साथ भी दिया, किन्तु इन लोगों के दिमाग़ में क्रान्ति के बाद की तसवीर बिल्कुल साफ़ न थी। न तो पुनर्निमाण का कोई प्रोग्राम क्रान्तिकारियों के सामने था और न स्वयं इनका संगठन ही मजबूत था। देश की सतन्तुष्ट साम्राज्य विरोधी शक्तियों का उतावली में तैयार किया हुआ यह एक संयुक्त मोर्चा था। अतएव १९११ के बाद के ज़माने में भी यद्यपि शासन की बागडोर प्रजातन्त्र के हाथों में थी, तो भी जनता का कुछ फायदा न हो सका। शासन सत्ता कुछ थोड़े से फौजी जेनरल और उच्च पदाधिकारियों के हाथ में थी। ये लोग अपने निज के फायदे के लिये राष्ट्र के हित की रत्ती भर भी परवा नहीं करते थे। विदेशी राष्ट्रों से रुपये लेकर मनमानी तरह से सन्धि करते, व्यापार करने के लिये उन्हें विशेषाधिकार सौंपते।

चीन की इस क्रन्ति के प्रमुख प्रवर्तक डा० सन्-यात सेन बड़े क्षुब्ध हुए। आखिर उन्होंने उक्त प्रजातन्त्र की सत्ता न स्वीकार कर दक्षिण चीन में एक अलग प्रजातन्त्र की स्थापना की, जिसमें राष्ट्रीयता, प्रजातन्त्रात्मक अधिकार और देश की गरीबी दूर करने की आवश्यकता पर जोर डाला गया। डा० सन् यात-सेन ने इन्हीं दिनों कूमिङ्गटांग (नेशनलिस्ट) पार्टी की नीव डाली। इस पार्टी ने वर्षों के अथक परिश्रम से उपरान्त १९२८ में चीन के केन्द्रीय प्रजातन्त्र के अधिकारियों को परास्त किया, और नानकिङ्ग नेशनलिस्ट गवर्नमेन्ट की स्थापना हुई। आजकल चीन के प्रजातन्त्र शासन की वागडोर इसी नेशनलिस्ट पार्टी के हाथों में है। नेशनलिस्ट पार्टी के

अतिरिक्त चीन में कम्यूनिस्ट पार्टी भी एक मजबूत संस्था है। इन राजनीतिक दलों पर हम आगे चल कर प्रकाश डालेंगे। अभी हम वर्त्तमान शासन विधान आप के सामने रखते हैं।

शासनविधान

चीन के वर्त्तमान शासन विधान की आधार शिलाएं डा० सनयात सेन के तीन सुप्रसिद्ध सिद्धान्त हैं। राष्ट्रीयता, प्रजातन्त्र वाद और जीविका का प्रश्न। शासन विधान बनाते समय इस बात पर काफ़ी जोर दिया गया कि चीन को एक स्वतन्त्र और प्रतिष्ठित राष्ट्र बनाना ज़रूरी है ताकि अन्तर्राष्ट्रीय जगत में इसे भी स्थान मिले, और ऐसा होना तभी सम्भव है जब विदेशी साम्राज्य वाद से चीन का पीछा छूटे। दूसरे सिद्धान्त के अनुसार चीन की जनता को बराबरी का हक़ मिलना चाहिये। पुरुष स्त्री, गरीब या धनी व्यक्तियों में राजनीतिक अधिकारों की दृष्टि से कोई अन्तर नहीं होना चाहिए। तीसरे सिद्धान्त के लिये डा० सनयात सेन ने समाजवाद का सहारा लिया क्योंकि पूंजीवाद बेकारी और भूक के प्रश्न को हल कर ही नहीं सकता। मेन्शियस की फिलासफ़ी की भी उसने सहायता ली। मेन्शियस का कहना था कि एक आदर्श गवर्नमेण्ट को प्रजा की जीविका का प्रश्न सबसे पहले हल करना चाहिये।

डा० सन-यात-सेन निरे स्वप्न देखने वाले व्यक्ति न थे। उन्होंने पूरा शासन विधान पांच विभागों में बाँटा, और विधान को पूर्णतया काम में लाने के लिये उन्होंने अपने प्रोग्राम को तीन भागों में रक्खा, क्रान्ति का काल, विधान के लिये तैय्यारी का काल और विधान को अमल में लाने का काल। विधान के लिये तैय्यारी के काल में जन साधारण की उपयुक्त राजनीतिक शिक्षा और प्रचार की योजना रक्खी गई। इस तैय्यारी के जमाने में प्रान्तों में प्रजातन्त्रात्मक विधान चलाया जायगा, यदि प्रान्तों में यह विधान सफलता पूर्वक चलने लगा तो केन्द्रीय विधान भी पूर्णतया प्रजातन्त्रात्मक बना दिया जायगा।

चीन की नेशनल गवर्नमेण्ट की स्थापना नानकिंग में १० अक्टूबर १९२८ को हुई। जैसा हम अभी कह आये हैं, नेशनल गवर्नमेण्ट का संचालन मुख्यतः कूमिङ्गटांग पार्टी के हाथों में है। १८ जून १९२९ को कूमिङ्गटांग पार्टी ने निश्चय किया कि विधान को पूर्णतया प्रजातन्त्रात्मक बनाने के लिये १९२९ से १९३५ तक समय निर्धारित किया जाय। अतएव इस बीच चीन का शासनविधान पाँच विभागों के हाथ में रहेगा। विभाग युआन (Yuan) के नाम से पुकारे जाते हैं। इन पाँचों विभागों के ऊपर स्टेट काउन्सिल (State Council) का नियन्त्रण रहता है। इस स्टेट काउन्सिल में प्रेसिडेण्ट के अतिरिक्त ३२ सदस्य और होते हैं। हर एक विभाग में एक चेयरमैन होता है, और उसकी सहायतार्थ अनेक मंत्री। नीचे हम नेशनलिस्ट गवर्नमेण्ट का शासन विधान दे रहे हैं।

स्टेट काउन्सिल, चेयरमैन [लिन सेन]

शासनविभाग	लेजिस्लेटिव विभाग	न्यायविभाग	परीक्षाविभाग	सेन्सर विभाग
(वांगचिंग वे)	(सनफ़ो)	(चूचेंग)	(ताईचुआन शिन)	(यूयूजेन)

उक्त शासन विधान में १९३४ में नये सुधार किये गये। इसे पूर्णतया प्रजातन्त्रात्मक बनाया गया। अब चीन की प्रजातन्त्रात्मक सत्ता जनता के हाथों में पूर्णरूप से आ गई। तमाम नागरिक जिनकी अवस्था २० वर्ष से ऊपर हो, चाहे वे किसी ख्याल या धर्म के क्यों न हो, वोट दे सकते हैं। इस प्रकार 'नेशनल कांग्रेस' का चुनाव होता है। और यह नेशनल कांग्रेस ३१ प्रतिनिधि चुनेगी जो 'पीपुल्स कमेटी' बनायेंगे। कांग्रेस ही प्रजातन्त्र के लिये सभापति और सभापति चुनेगी।

साथ ही साथ पांच युवानों के लिये भी प्रेसिडेण्ट के चुनने का अधिकार कांग्रेस को प्राप्त है। इस प्रकार गवर्नमेण्ट के सभी उच्च पदाधिकारी जनता द्वारा चुने जाते हैं। प्रेसिडेण्ट ७ वर्ष के लिये एक बार चुना जाता है। यद्यपि प्रेसिडेण्ट कांग्रेस के प्रति अपने कामों के लिये उत्तरदायी है, फिर भी उसे कुछ ताना-

शाही के भी अधिकार मिले हैं। केन्द्रीय गवर्नमेण्ट के अतिरिक्त प्रान्तीय, जिले और म्यूनिसिपैल्टी की लोकल गवर्नमेण्ट के लिये नियम और कानून बनाए गये।

राजनैतिक दल

चीन में दो प्रधान नीति के दल हैं। एक कूमिङ्गटांग और दूसरा साम्यवादी। कूमिङ्गटांग (नेशनलिस्ट) पार्टी के हाथों में नेशनलिस्ट गवर्नमेण्ट है। साम्यवादी दल ग़ैर कानूनी करार दिया गया था किन्तु पिछले साल से कूमिङ्गटांग पार्टी (गवर्नमेण्ट) और साम्यवादी दल में समझौता हो गया है। जापानियों के खिलाफ़ दोनों ने मिल कर संयुक्त मोर्चा क़ायम किया है।

कूमिङ्गटांग पार्टी

यह पार्टी डा० सनयातसेन के तीन सिद्धान्तों (राष्ट्रीयता, प्रजातन्त्रात्मक अधिकार भूख और बेकारी के प्रश्न) को मानती है। चीन की वर्तमान अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियों को यह अन्यायपूर्ण मानती है और उन्हें रद्द कर दूसरी सन्धियाँ करना चाहती है। विदेशियों को चीन में विशेषाधिकार देन के पक्ष में नहीं है। देश के भीतर आर्थिक पुनर्सङ्गठन करने का प्रोग्राम पूरा करना चाहती है। शासन के लिये नानकिङ्ग में केन्द्रीय सरकार के हाथों में प्रान्तीय शासन का नियन्त्रण देने के पक्ष में है। पिछले साल तक यह पार्टी साम्यवादी का घोर दमन करती रही थी, किन्तु अब कम्युनिस्ट पार्टी से समझौता कर लिया है। धीरे धीरे इस दल का सञ्चालन भी चियांग काई-शेक तथा अन्य समर नायकों के हाथ में ही चला गया। नतीजा यह हुआ कि इस गवर्नमेण्ट की नीति जनसाधारण के हितसाधन की जगह पूँजीपतियों और महाजनों के मुनाफे बढ़ाने की हो गई। पार्टी की इस नई पालिसी से असन्तुष्ट होकर इस पार्टी में एक गरम दल उत्पन्न हुआ जो विदेशी ताक़तों को चीन से एक दम हटा देने के पक्ष में है। इस दल की राय में विदेशी शक्तियों के संग की गई सन्धियाँ अन्याय पूर्ण है। अतएव उन्हें तोड़ देना चाहिये। चीन के बन्दरगाह तथा अन्य तिजारती शहर जो विदेशियों के कब्जे में हैं, उन्हें भी वापस लेने के पक्ष में यह दल है कूमिङ्गटांग पार्टी के कुछ प्रमुख सदस्य ये हैं:—

पार्टी के प्रमुख सदस्य

माओ-त्सेंग (प्रेसिडेण्ट, सोवियट रिपब्लिक आव चाइना) च्यूतेह (लाल सेना के सेनापति) चेन तूसेह (सेक्रेटरी)।

चीन का साम्यवादी दल

चीन के साम्यवादी तथा वहाँ की साम्यवादी लाल सेना के बारे में अकसर समाचार पत्रों द्वारा हमें तरह तरह की बातें मालूम होती रहती हैं, किन्तु इनमें अधिकांश तो अधूरी और पक्षपात पूर्ण होती हैं। जापानी लोग और स्वयं चीनी पूँजीपति चीन के साम्यवादियों को डाकू और लुटेरों के नाम से अब तक पुकारते रहे हैं, किन्तु अब समूचे संसार पर सत्य प्रगट हो गया है, अतः ऐसी फजूल बातें अब नहीं सुनने में आतीं।

अभी कुछ दिनों पूर्व तक चियांग-काई शेक की नेशनल गवर्नमेंण्ट जी जान से प्रयत्न कर रही थी कि चीन के साम्यवादी दल को नष्ट कर दे। केवल इसी बात से हम अन्दाज लगा सकते हैं कि इस दल का महत्व कितना अधिक है।

चीन का साम्यवादी आन्दोलन वास्तव में वहाँ के किसानों की जागृति का आन्दोलन है। यद्यपि जापानी एजेन्टों ने सभ्य संसार के सामने सदैव यह बात रक्खी है कि रूस की साम्यवादी सरकार ही चीन के साम्यवादी आन्दोलन को बल प्रदान कर रही है ताकि चीन सरकार से जापान का घनिष्ट सम्बन्ध न हो सके। किन्तु वास्तव में बात यह नहीं है। चीन में क्रान्ति की सामग्री तो यूँ ही मौजूद थी। हाँ रूस की सफलता ने चीन के साम्यवादियों के मन में आशा का सञ्चार अवश्य किया। साम्यवाद

के सिद्धान्त में उनका विश्वास और भी दृढ हो गया।

अब हम चीन के राजनैतिक इतिहास पर एक दृष्टि डालेंगे। १९११ में मंचू खानदान को हटाया गया। सम्राट की जगह प्रजातन्त्र की पार्लियामेंएट कायम की गई। देश का शासन भार इसके ऊपर सौंपा गया। १९११ की क्रान्ति के पीछे भी किसानों की शक्ति थी। चारो ओर भीषण गरीबी और मरभुखी छाई हुई थी। किसानों को विश्वास हो गया था कि वर्तमान शासन पद्धति में अवश्य दोष है। काश्तकारी के कानून, सरकारों के जुल्म और बाजार में गल्ले का भाव सभी कुछ किसानों को पीसे डाल रहे थे। देहात की जनता दो भागों में बंटी हुई थी। एक तो गरीब काश्तकार जो टैक्स, लगान और बेगार के बोझ से मरा जाता था और दूसरा जमींदार और महाजन जो सूद और मालगुजारी के नफे से अपनी तिजोरियाँ भरते थे। हाँ तो यह सही है कि १९११ की क्रान्ति के पीछे किसानों की शक्ति थी, किन्तु इस क्रान्ति से उनका कुछ विशेष लाभ नहीं हुआ। काश्तकारी के कानूनों में परिवर्तन करने की जबरदस्त आवश्यकता थी, किन्तु पार्लियामेंएट ने इस प्रश्न पर विचार तक नहीं किया। पार्लियामेंएट के लगभग सभी सदस्य जमींदार या साहूकार वर्ग के थे।

१९२७ से चीन की राजनीति का नया अध्याय आरम्भ होता है। चीन की कूमिङ्गटॉग पार्टी ने रूस की सहायता से चीन की गवर्नमेंएट का पुनर्संगठन किया और दक्षिण चीन पर अपना प्रभुत्व जमा कर नानकिङ्ग में नेशनल गवर्नमेंएट स्थापित की। देश के सभी गरम दलों ने कूमिङ्गटांग के साथ सहयोग किया। साम्यवादी दल, जो १९२० में कायम हुआ था, उसने भी कूमिङ्गटॉग की सहायता की। किन्तु कूमिङ्गटांग में अधिकांश फौज के अफसर तथा धनिकवर्ग के लोग थे। अतएव कूमिङ्गटांग को जमीन्दारों के खिलाफ कानून बनाने में स्वभावतः हिचक होती थी। वे सुधार के समर्थक तो थे, किन्तु जमींदारी प्रथा में वे किसी प्रकार का क्रान्तिकारी परिवर्तन नहीं चाहते थे। नतीजा यह हुआ कि जब साम्यवादी दल गॉव के किसानों का साम्यवादी दल पर संगठन करके उनकी सोवियट (पञ्चायत) कायम करने लगा, तो नेशनल गवर्नमेंएट को बहुत बुरा मालूम हुआ और कूमिङ्गटांग ने साम्यवादी दल से अपना सब नाता तोड़ लिया और उन्हे कुचल देने का प्रयत्न करने में लग गया।

इस प्रकार चीन का गृह-युद्ध आरम्भ हुआ। एक ओर नेशनल गवर्नमेंएट और दूसरी ओर साम्यवादी दल और उसकी लाल सेना। १९३० में नानकिङ्ग नेशनल गवर्नमेंएट उत्तर चीन में झगड़े फसाद को दूर करने में व्यस्त रही। इस मौके का लाभ साम्यवादी दल ने भरपूर उठाया और 'कियान्सी' प्रान्त में अपनी निज की गवर्नमेंएट कायम की। इस साम्यवादी गवर्नमेंएट के बारे में एक अँग्रेज लेखक लिखता है:—

"एशिया में सब से विचित्र यह गवर्नमेंएट थी। इसने समाज का रूप रंग बदला, करेन्सी नये ढंग पर चलाया, शादी व्याह के कानून बदले और नये ढंग से स्कूल और यूनीवर्सिटियाँ चलाईं। इस सोवियट सरकार (साम्यवादी गवर्नमेंएट) ने साम्यवाद पर अनेक पुस्तकें प्रकाशित कराईं। निज के अखबार निकाले। इस सोवियट सरकार की अपनी निज की फौज है। जमींदारों के अधिकारों में भारी कमी की गयी है।

इन सोवियट प्रान्तों में अफीम की तिजारत एक दम बन्द है, वेश्या-वृति भी नहीं देखने को मिलती, तथा सूदखोरी जुर्म करार दी गयी है। वेश्याओं को मकान और खेत गवर्नमेंएट की ओर से मिले हैं, ताकि वे गृहस्थ की तरह जिन्दगी बसर कर सकें। सरकारी कर्मचारियों को घूसखोरी के लिये कड़ा दण्ड मिलता है। अकाल तथा बाढ़ की आफत दैवी नहीं होती वरन् आदमी की गलतियों से होती है। ऐसा साम्यवादियों का विश्वास है, और दोनों ही रोके जा सकते हैं। बेकारी का प्रश्न भी चीन के सोवियट प्रान्तों में अब नहीं है।"

इस साम्यवादी सोवियट सरकार के प्रति जनता के हृदय में एक अपूर्व श्रद्धा और विश्वास है। इस सोवियट की रक्षा का भार साम्यवादी लाल सेना पर है। इस लाल सेना को दबाने तथा

कुचल देने के लिये चियांगकाईशेक की नेशनल गवर्नमेण्ट ने कई बार प्रयत्न किये हैं, किन्तु बार बार लालसेना ने सोवियट की रक्षा की है। इसी गृहयुद्ध के कारण जापान की बन आई। कम्यूनिस्टों का दमन करते समय जापान चियांग-काई-शेक के साथ मिल कर गृह विवाद को उत्तेजित कर देता और जब समग्र देश सङ्गबद्ध होने लगता, उस समय चियाङ्गकाईशेक के विरोधियों को उभाड़ कर अपना काम निकालता। अब तक चीन में जापान की कूटनीति के ये ही सब खेल होते आ रहे थे। इस सम्बन्ध में एक घटना का जिक्र कर देना अनुचित न होगा—

इसी वर्ष जनवरी में चियाङ्ग-काई-शेक ने उत्तर चीन के कम्यूनिस्टों का दमन करने के लिये जनरल चाङ्ग सुइलियाङ्ग को एक मञ्चूरियन सैन्य दल के साथ वहाँ भेजा। किन्तु कम्यूनिस्टों के साथ लड़ने की इच्छा इन मञ्चूरियन सैनिकों की नहीं थी। जापानियों ने उनके देश पर अधिकार कर लिया था, इसलिये जापानियों के ही ऊपर उनका क्रोध था, और वे जापानियों के साथ ही लड़ने के लिये व्यग्र थे। हजारों की संख्या में ये मञ्चूरियन सैनिक साम्यवादी लालसेना से मिल गये, यहाँ तक कि नानकिङ्ग नेशनल सरकार के सेना के तीन सेनाध्यक्ष कम्यूनिस्ट नेताओं के परामर्श के अनुसार चल रहे थे। ऐसी हालत देख चियाङ्ग-काई-शेक ने स्वयं सियान जाने का विचार किया। वे समझते थे कि सियान पहुँच कर वे शीघ्र ही कम्यूनिस्टों का दमन कर सकेंगे। किन्तु वहाँ पहुँचने पर दो ही सप्ताह के भीतर चियाङ्गकाई-शेक साम्यवदियों के हाथ नजर बन्द हो गए। बड़ी मुसीबत में प्राण फंसे। उनसे कहा गया "जापानी साम्राज्य वाद तुम्हें निगले जा रहा है, और तुम कान में तेल डाले पड़े हुए हो। यह आलस्य त्यागो, उठो, आगे बढ़ो, कमर कसो, जूझो, मरो मारो और आजादी को हाथ से जाने न दो"। बहुत कुछ परामर्श के बाद जब चियाङ्ग काई शेक साम्यवादी दल के अनुकूल अपनी नीति में परिवर्त्तन करने के लिये कुछ राजी हुए, तब आप मुक्त किये गये। फल स्वरूप चीन का गृह युद्ध बन्द हो गया। चियाङ्गकाईशेक ने कम्यूनिस्टों को दमन करने वाली अपनी भ्रान्ति मूलक नीति त्याग दी। कम्यूनिस्टों के साथ कूमिङ्गटाँग को मैत्री-आबद्ध होना पड़ा। चीन जापान की लड़ाई में चीन की ये दोनो पार्टियाँ संयुक्त मोर्चा बना कर लड़ रही हैं। चीन की वर्तमान जागृति के पीछे वहाँ के साम्यवादी दल की शक्ति है। सन् १९३१ में जब जापान ने मञ्चूरिया पर जब जबर्दस्ती दखल जमा लिया था, उस समय जो चीन था, आज वह चीन नहीं है। कम्यूनिस्ट और कूमिङ्गटाँग इन दो दलों के बीच उन दिनों जो संघर्ष था, आज नहीं है। जैसा कि हमने ऊपर कहा, है ये शक्तियाँ स्वदेश रक्षा के लिये आज कन्धे से कन्धा मिला कर जापान की साम्राज्य लिप्सा का सामना करने के लिये रण प्राङ्गण में उतर आई हैं। भविष्य के गर्भ में क्या निहित है ? इस प्रश्न का उत्तर कौन दे ?

युद्ध क्यों ?

[लेखक—श्रीयुत सीताराम अग्रवाल]

सन् १९३७ की जूलाई के आरम्भ से ही चीन जापान की यह मौजूदा लड़ाई जारी है। चीन-जापान की आपस की लड़ाई बहुत पुरानी है। यदि इसके इतिहास पर दृष्टि डाली जाय तो पता चलता है कि १८९५ में ही जापान ने चीन से फार्मोसा द्वीप हड़प लिया था। फिर १९१० में बेधड़क कोरिया पर भी कब्जा जमा लिया। इसके बाद १९१५ में जब संसार के बड़े बड़े राष्ट्र महायुद्ध में फँसे थे, तब जापान ने चीन से जबर्दस्ती अनेक शर्तें अपने मतलब की मंजूर करवाई। फिर इन जीते हुए हिस्सों में अपने को मजबूत बना लेने की व्यवस्था में जापान को कुछ समय लग गया और वह करीब १९३० तक चुप रहा

१९३१ में जापान ने पुनः पूर्व एशिया में अपने साम्राज्य का विस्तार करने के लिये पाँसा फेंका, और कोरिया से आगे बढ़ कर मंचूरिया पर कब्जा जमाया। जापान की इस धृष्टता पर चीन ने संसार के अन्य सभ्य राष्ट्रों तथा राष्ट्रसंघ से भी बहुत कुछ आरजू मिन्नत की। पर जापान ने इसकी रत्ती भर भी परवाह न की। अन्य राष्ट्र भी कुछ न कर सके। नतीजा यह हुआ कि मंचूरिया में जापान का आधिपत्य स्थापित हो गया।

जापान की इस विजय ने संसार के अन्य राष्ट्रों को चकित ही नहीं वरन् काफी सतर्क भी बना दिया। परिणामस्वरूप चीन के इन प्रान्तों के हथियाने के अतिरिक्त जापान चीन के व्यापार की बन्दर-बाट में शामिल कर लिया गया। जापान की साम्राज्य लिप्सा अभी इतने ही से शान्त न हुई। देश के औद्योगिक प्रगति व आबादी के कारण इसे एक ऐसे भूभाग की आवश्यकता हुई जहाँ वह अपना माल खपा सकता, बढ़ती हुई जनता को बसा सकता तथा जहाँ से वह अपने उद्योग धन्धों के लिये कच्चा माल भी पा सकता।

चीन के कोरिया व फारमोसा को हथिया लेने पर भी जापान की यह प्यास न बुझी अत वह अब चीन के उन प्रदेशों की ओर नज़र रखने लगा जिनमें आबादी कम व कच्चे माल तथा खनिज प्राप्ति के साधन सुलभ और बहुतायत से होते हुए भी प्राप्य हों। इनके सिवाय वह रूस के निर्जन प्रदेश साइबेरिया पर भी दाँत लगाये था। जापान मंचूरिया के दक्षिण में मङ्गोलिया के जेहोल प्रान्त पर सन् १९३२ से तो काबिज था ही पर अब वह उत्तरी चीन के सुइयान, चहार, होपेह, शान्सी व शांटुंग प्रदेशों पर कब्जा करने की पूरी फिक्र में लग गया।

जापान के सौभाग्य से इन प्रदेशों में (उसकी परम अभिलाषा को पूरी करने वाली) खनिजात्मक सम्पत्ति की कमी नहीं है। और दक्षिण के दोनों प्रवेश तो बस्ती बसाने के लिहाज से भी उपयुक्त हैं।

जापान केवल अपने साम्राज्य विस्तार के लिये ही चीन से मुठभेड़ लेने पर उद्यत हुआ है, ऐसी बात नहीं है। क्योंकि इन प्रदेशों में सोवियट रूस की प्रतिद्वन्द्विता भी पूरी सहायक है। अतः यह स्पष्ट है कि चीन के कुछ प्रदेशों में रूस व जापान की होड़

भी चीन जापान के इस संघर्ष का कारण है, बल्कि इसे एक मुख्य कारण भी कहें तो कोई अत्युक्ति न होगी। यही कारण है कि चीन में जापान का विरोधी रूस के सिवा और कोई नहीं है।

जापान ने जिस भाव को लेकर चीन पर आक्रमण किया था उसका परिणाम उलटा होता दिखाई पड़ रहा है। इस युद्ध को आरम्भ हुए लगभग ७ महीने हो गये हैं, यदि अब यह कुछ दिन भी और चला तो इसका परिणाम भी जापान के लिये यह होगा कि उसकी विगड़ी हुई आर्थिक अवस्था और भी बिगड़ जायगी, और सम्भव है चीन की भी हानि उसकी अपेक्षा अधिक हो और उसकी लाखों वर्ग-मील भूमि तहस नहस हो जाय तथा जनता के जन धन की भी भीषण हानि हो।

अब सवाल यह उठता है कि क्या चीन की जान का प्यासा केवल जापान ही है या और भी कोई! यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाय तो यह स्पष्ट हो जाता है कि चीन में, जापान की प्रगति के विरोधी रूस के अतिरिक्त ब्रिटेन और अमेरिका भी हैं। ब्रिटेन अपने व्यापार व एशिया में अव्यवस्थित साम्राज्य की रक्षा के हेतु चीन में जापान को शक्तिशाली नहीं देखना चाहता। यद्यपि चीन के इन पाँचों प्रदेशों से ब्रिटिश साम्राज्य के किसी अंग का सम्बन्ध नहीं है, किन्तु दक्षिण मङ्गोलिया में जापानी सेनाओं के पहुँच जाने से चीनी तुर्किस्तान की सीमा तक, जापानी साम्राज्य कायम हो जाता है। दूसरी बात यह है कि भारत की उत्तरी सीमा भी इसी तुर्किस्तान से मेल खाती है और इस स्थल मार्ग द्वारा, स्याम की मदद से और जल द्वारा भी, जापान सोने की चिड़िया तक पहुँचने का पूरा प्रवन्ध कर सकता है। यही भय ब्रिटेन को भी सदा सशंक वनाये रखता है।

इतना ही नहीं जापान तो अपनी बढ़ती हुई आवादी के लिये आस्ट्रेलिया में भी कुछ भूभाग चाहता है, यह बात भी ब्रिटेन व जापान के विरोध का एक मुख्य कारण है।

अमेरिका के फिलिपाइन-टापू चीन के निकट ही हैं। इन टापुओं में शक्कर की पैदावार बड़ी प्रचुरता से होती है, तथा युद्ध की दृष्टि से भी प्रशान्त-महासागर में इन टापुओं का स्थान बड़ा महत्वपूर्ण है, इसके अतिरिक्त अमेरिका की अरबों डालर की पूँजी चीन में लगी हुई है। इन्हीं कुछ कारणों से अमेरिका, जापान की इस प्रगति का विरोध करना चाहता है और अपने दरवाजे पर से बैठा बैठा गुर्रा रहा है, क्योंकि उसे इस बात का पूरा भय है कि चीन को जीत कर जापान कहीं अमेरिका के साथ चलते हुए व्यापार को न रोक दे वरना अमेरिका को वड़ा भारी धक्का पहुँचेगा। साथ ही यह भी तो स्पष्ट है यदि जापान इतना करने की हिम्मत रखता है तो अमेरिका और ब्रिटेन मिल कर, जापान का बहिष्कार भी कर सकते हैं और ऐसी आशा प्रगट की जाती है कि यदि इसकी नौवत आई तो जापान को जान के लाले पड़ जायँगे।

इलाहाबाद की कांग्रेस शोशलिस्ट-पार्टी की तरफ से अभी एक पैम्फ्लेट प्रकाशित किया गया था। उसे पढ़ने से तो प्रतीत होता है कि जापान ने असानुषिकता की हद कर दी है। और यह बात सच भी है। इस समय संसार के किसी राष्ट्र की सहानुभूति जापान के साथ नहीं है। जर्मनी और इटली भी हृदय से ऐसे कार्य को प्रोत्साहन नहीं दे सकते, चाहे वे गला फाड़ कर क्यों न कहा करते हों कि 'मैंने कमर कस ली है, और मैं अपने प्रदेश वापस लूँगा" आदि......। पर यह बात तो सभी समझ सकते हैं कि आगामी युद्ध का उतने भयंकर रूप में घटित होना, जैसा कि उसके विषय में अनुमान किया जाता है, असम्भव है। इसी पेम्फलेट में चीन जापान युद्ध का कारण यह बतलाया गया है, कि "सात जुलाई का वाकया है—पेपिंग के समीप जापानी सैनिक चाँदमारी की प्रेक्टिस कर रहे थे! इस सिलसिले में आधी रात के बाद इन सैनिकों ने अपने एक सिपाही को ढूँढ़ने के बहाने पेपिंग शहर में घुसना चाहा। इस शहर में घुसने का कोई भी हक़ जापानियों को नहीं था। नगर के चीनी अधिकारियों ने जापानी सैनिकों को शहर में घुसने की आज्ञा न दी। जापानियों को बहुत बुरा मालूम हुआ, उन्होंने चीनी सन्तरियों पर हमला कर दिया। निदान चीनी गार्डों को भी अपने बचाव के लिये गोलियाँ चलानी पड़ीं। बस जापान को चीन से युद्ध छेड़ने का अच्छा बहाना मिल गया......।"

खैर, हमें इससे वहस नहीं है कि युद्ध कैसे छिड़ा, उसे तो छिड़ना ही था, इस कारण से न छिड़ता तो दूसरा तैयार था, पर यहाँ तो शेर और भेड़िये का मसला आ पड़ा था। अगर भेड़िया नीचे पानी पीने के कारण नदी का पानी गँदला नहीं कर सकता था तो उसके बाप ने जो एक मर्तबा शेर को गाली दी थी उसका बदला तो वह लेगा ही।

पर यह आशा न थी कि जापान इतना अमानुषिक होकर युद्ध नीति के भी विरुद्ध कार्य करने लगेगा जितना कि वह कर रहा है। जापान की नृशंसता दिनों दिन बढ़ती ही जा रही है और चीनी जनता निरन्तर हज़ारों की संख्या में विध्वंस हो रही है।

नानकिंग को तो जापानियों ने बमवर्षा से निर्जन बना डाला है। इधर कुछ दिन हुए कई स्थानों पर लगातार २४ घंटे बमवर्षा की गई—शहर के निरीह प्राणियों पर लगभग ९०० बम बरसाये गये।

जापानियों ने चीनी सैनिकों को अधिक भयभीत करने के लिये चीन के जिन प्रधान नगरों पर हवाई हमले किये थे उनके कारण वे शहर प्रत्यक्षरूप में विध्वंस हो चुके हैं। लाखों जापानी सैनिकों और सैकड़ों वायुयानों के कुकृत्य से असंख्य चीनी नागरिकों की सम्पत्ति की हानि ही नहीं हुई है वरन् कितने ही शान्तिप्रिय और निर्दोष जनता के प्राण भी हर लिये गये हैं।

चीन के शान्सी प्रान्त से श्रीमती एग्निसस्मेडली ने वहाँ के घायल चीनी सिपाहियों का दर्दनाक वर्णन यों किया है—

"हमें राह में आहत सिपाहियों से भरी हुई कई गाड़ियाँ मिलीं। नित्य प्रायः एक हज़ार आहत दक्षिण ले जाये जाते हैं। उन्हें खुली मालगाड़ियों से ले जाया जाता है, और उनमें भी इतनी भीड़ रहती है कि लेटना असम्भव हो जाता है। ह्वाँग-हो (पीली नदी) के तट पर चार पाँच सौ सिपाही तट पर पड़े हुए थे। और यात्रा में एक महीना लग गया था। दो सप्ताह से उनकी पट्टियाँ नहीं बदली जा सकी थीं। जख्मों की सड़न से वे मर रहे थे। घायलों के साथ डाक्टर, नर्स, या प्राथमिक सहायता देने वाले भी कोई नहीं थे—वे स्वयं एक दूसरे की मरहम पट्टी (!) करते हैं, या कभी साथ आये हुए किसान भरसक मदद करते हैं।

चीनी सेना के चिकित्सा विभाग के अफसर से बात करने पर मुझे मालूम हुआ कि इस प्रान्त में कुल १८ अस्पताल हैं, जिनमें अधिक से अधिक १८ हज़ार रोगी रह सकते हैं। लेकिन दो सेनाओं से ही प्रतिदिन १००० आहत होते हैं अर्थात् मास में ३०,००० । अस्पताल में इनके दशमांश के लिये भी पट्टियाँ दवाएँ और औजार नहीं हैं। शीतकाल के लिये कम्बल भी नहीं है। सैकड़ों मील के उत्तरी युद्ध मुख पर केवल सात मोटर लारियाँ घायलों को लाती हैं—अधिकांश युद्ध क्षेत्र में पड़े पड़े सड़कर मर जाते हैं।"

इधर तो चीन की यह दशा हो रही है और उधर चीन पर आक्रमण करते समय जापानी सेना के अधिनायक, जनरल मात्सुई कहते हैं—"अपने जीवन के पिछले तीस वर्ष मैंने जापान और चीन का सहयोग बढ़ाने में बिताये हैं। अब भी मेरे हृदय में चीन को दण्ड देने की नहीं; उसकी चालीस करोड़ प्रजा को उबारने की इच्छा है......मेरा दृढ़ विश्वास है कि परम्परागत नैतिक विधान के अनुसार जापान की नवजाग्रत राष्ट्र-भावनाओं को इसी प्रकार के आत्म-त्याग में प्रगट होना चाहिये—त्याग जापानी चरित्र का मुख्य गुण है।"

इसी प्रकार अबीसीनिया पर आक्रमण करते समय डूची (मसलिनी) ने भी तो कहा था—'इथियोपिया में भेजे गये इटालियन सैनिक नहीं सभ्यता के दूत हैं। हमारा उद्देश्य है कि इथियोपियन लोगों तक पाश्चात्य संसार की सब से उन्नत सभ्यता का सन्देश पहुँचाएँ।"

धन्य है, इन राष्ट्रों की ऐसी पर-राष्ट्र सेवा! लाखों सैनिकों तथा निर्दोष नागरिकों व सर्वथा निर्दोष और अबोध स्त्री और खेलते हुए बच्चों के प्राण हर कर उन्हें 'आत्म-त्याग' तथा 'उन्नत सभ्यता' का सन्देश पहुँचाया जा रहा है।

भारतवासियों के लिये तो संसार के समाचार पाना भी काफी कठिन है, क्योंकि हमें ज्ञान-विज्ञान और राजनीति—समाजशास्त्र आदि भयङ्कर छूत-रोगों से सुरक्षित रखने के लिये ब्रिटिश सरकार काफी

प्रयत्न शील है (!) फिर भी उनकी असावधानी से जो हमें खबरें कभी कभी कट-छँट कर मिल जाया करती हैं उनसे पता चलता है कि अब जापानी सैनिकों ने चीन के साथ और भी सख्ती करने का निश्चय कर लिया है। इनकी आयोजना सुनने लायक है—

कहते हैं कि जापान अब ऐसे गैस-बमों का प्रयोग करेगा जो कि हज़ारों आदमियों के प्राण क्षणों में हर लिया करेंगे। इनके आग लगाने वाले बम ऐसे होंगे जो शहर के गैस-पाइपों को तोड़ कर उनमें आग लगा देंगे, आग बात की बात में शहर भर में फैल जाया करेगी। युद्ध में जिन गैसों का प्रयोग होता है वे तीन प्रकार की हैं—

१—पहली श्रेणी की गैस वे हैं जिनका प्रभाव फेफड़ों पर होगा, उनसे दम घुटने लगेगा और फेफड़े कट कट कर खून के साथ निकलने लगेंगे और इसी से आदमी की मृत्यु होगी।

२—यह गैस मस्टर्ड गैस (Mustard Gas) के नाम से प्रसिद्ध है। यह ज़मीन पर धुएँ के समान फैल जाती है और जिस चीज़ में लग जाती है वह तत्काल जल उठती है। इसके असर से मांस भी सड़ने लगता है और फेफड़े तक झुलस जाते हैं। इसके असर से भारी जलन और कष्ट होता है।

३—यह तीसरी प्रकार की गैस स्नायु पर भी अपना प्रभाव डालती है और इसके परिणाम स्वरूप मन पर भी प्रभाव पड़ता है। इसके असर के कारण आदमी बे-काबू होकर इधर उधर हाथ पैर पटकता है और गैस के बुरके (Gas Mask) को उतार कर फेंकने की कोशिश करता है। इस तीसरी गैस का उपयोग दूसरी प्रकार की गैस के साथ ही किया जाता है।

इतने से ही अभी अन्त नहीं है, इन सब के अतिरिक्त भयंकर छूत के रोगों के कीटाणु भी शत्रुओं की सेना पर छोड़े जा सकते हैं। ये पानी के स्थान अथवा नदियों में छोड़े जायँगे, पर इनका अधिक प्रयोग होना सम्भव नहीं क्योंकि एक बार इनके फैल जाने से इनके प्रभाव का रोकना कठिन हो जायगा और दुश्मन तथा मित्र दोनों ही इसके घातक प्रभाव से बच न सकेंगे।

यह तो हुई गैसों की बात, पर आज के युद्धों में इनका महत्वपूर्ण स्थान नहीं है जितना कि हवाई जहाजों का। टैंक, मशीनगन, एन्टी-एयरक्राफ्ट-गन तथा डिस्ट्रोयर्स आदि का प्रयोग तो होता ही है पर वे इतने उपयोगी नहीं हैं अथवा यों कहें कि वे इतने नाशकारी नहीं हैं जितनी कि नाशकारी गैसें अथवा विविध प्रकार के बमवर्षी-वायुयान।

ऐसे युद्धों की भयङ्करता पर ध्यान देने से आदमी सिहर उठता है। जापान ने इन भयङ्कर यन्त्रों का प्रयोग करके जिस नृशंसता का परिचय दिया उसे सुन कर खून खौल उठता है। और बात तो यह है कि जब जापान ही इतनी भयङ्कर चीजों का प्रयोग कर सकता है तो ये बड़े बड़े धग्गड़ (इटली और जर्मनी किन चीजों का प्रयोग करेंगे और उस युद्ध का क्या रूप होगा इसकी आशंका ही से हम काँप उठते हैं। पिछले जर्मन-महायुद्ध ने ही यह साबित कर दिया है कि एक आधुनिक युद्ध कितना आतंककारी हो सकता है। साथ ही अब संसार की राजनैतिक परिस्थितियाँ भी खूब जटिल होती जा रही हैं। और इसमें सन्देह नहीं है कि भावी युद्ध दूर नहीं है, चाहे वह उतना भयङ्कर न हो जितना कि उसके विषय में हम कल्पना करते हैं, पर यह तो सभों को विदित है कि प्रत्येक राष्ट्र अपनी अपनी कमर कस चुके हैं और बैठे बैठे बस औज़ार पैने कर रहे हैं।

अतएव इस चीन-जापान युद्ध को उस युद्ध का अग्रदूत कह सकते हैं।

× × ×

जापान ने चीन पर ऐसे अवसर पर आक्रमण किया जो उसके आर्थिक और राजनीतिक विकास का समय था। चीन हार ज़रूर रहा है, पर जापान ने जितनी आसानी से चीन को जीतने का स्वप्न देखा था वह निरन्तर झूठा निकला। अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थिति भी कुछ ऐसी हो गई कि रूस, चीन का प्रमुख समर्थक होते हुये भी इस लड़ाई में खुल्लमखुल्ला भाग नहीं ले सकता है। अमेरिका भी खूब गम खा रहा है और ब्रिटेन तथा राष्ट्र परिषद ने तो निरी नपुंसकता ही धारण कर लिया है, ऐसी उनसे आशा न थी।

इस समय चीन की मदद करने की हिम्मत संसार के किसी भी राष्ट्र में नहीं। चीन के सभी लोग, वहाँ के मर्द, औरतें और विद्यार्थी एक हो कर, बहादुरी के साथ अपनी आजादी के लिये जी जान से लड़ रहे हैं। गुलामी की जिल्लतों को वे पड़ोसी भारत की दशा देख कर अच्छी तरह समझ चुके हैं। अतः कोई भी चीनी व्यक्ति, शक्ति रखते हुये गुलाम बनना कैसे क़बूल कर सकता है? हम, भारतवासी भी, चीन की इस पीड़ा का अच्छा अनुभव कर सकते हैं, क्योंकि हम दोनों ही एक ही पथ के यात्री हैं; दोनों ही विदेशी सत्ता के पंजे से अपना छुटकारा चाहते हैं। सभी राष्ट्र आज इस बात की पूरी कोशिश में लगे हुये हैं कि उनके राज्य का विस्तार हो जाय और गुलाम राष्ट्र इस कोशिश में है कि वे आजाद हो जाँय। और इधर तो लड़ाई की तैयारी में राष्ट्रों में भी दलबन्दी शुरू हो गई है।

× × ×

यह बात स्पष्ट है कि शान्तिप्रिय राष्ट्रों के सन्मुख सबसे बड़ी कठिनाई है इटली, जर्मनी और जापान का एक गुट्ट बन जाना। और उस गुट्ट से टक्कर लेना शक्तिशाली राष्ट्रों के लिये तभी सम्भव हो सकता है जब वे भी अपना एक गुट बना लें और इस गुट की ..क्ति तभी काफी होगी जब उसमें ब्रिटेन, फ्रान्स, .. और अमेरिका चारो शामिल हों। पिछले चन्द वर्षों की घटनाओं ने तो इन चारों शान्तिप्रिय, किन्तु शक्तिशाली राष्ट्रों को भी चिन्तित और सशङ्कित कर दिया है और वे युद्ध की तैयारी में जी जान से लग गए हैं, परन्तु उनके बीच जितनी एकता की आवश्यकता है उतनी एकता के अभी तक कोई लक्षण नहीं दिखाई पड़ रहे हैं।

इटली जर्मनी और जापान के शासकों की महत्वाकांक्षाएँ केवल अनुचित नहीं हैं, संसार के लिये भयानक भी हैं।

एक तरफ तो जर्मनी में हिटलर जैसे तानाशाहों को हम देखते हैं और उसके विपरीत चीन में जेनरल चांग काइशेक के उदाहरण पर भी जरा दृष्टिपात करें।

कुछ दिन हुये इस बात की सूचना समाचार पत्रों में जोर कर रही थी कि चीन के कुछ प्रदेशों ने जेनरल फ्रांको की नीति का अनुकरण कर वहाँ कुछ छोटे २ स्वतन्त्र राष्ट्र बना लिये हैं। बात सच है, पर इससे हम यह नहीं कह सकते कि सम्पूर्ण चीनी जनता मे अपने राष्ट्र-अधिनायकों के प्रति अविश्वास फैल गया है क्योंकि, हाल में घटित कुछ घटनाओं के आधार पर हमें कुछ विपरीत ही फल होता हुआ दिखाई पड़ा है। यह स्पष्ट है चीन का बहुमत अभी चांग काइशेक की तरफ है। कुछ दिन हुए स्यान में एक विद्रोह उठ खड़ा हुआ था। इस विद्रोह के कारण जिस रहस्य का उद्घाटन हुआ उससे रहा सहा चीन भी एकता के दृढ़ सूत्र में बंध गया और एक सम्मिलित शक्ति बन कर स्वतन्त्रता के युद्ध में पूरी शक्ति के साथ हाथ बटाने लगा। इस विद्रोह का दमन करने के बाद गिरफ़ार विद्रोहियों के सन्मुख मार्शल चांग काइशेक ने जो भाषण दिया, उससे हम उनके हृदयोद्गार तथा अगाध देश प्रेम का पूरा परिचय पाते हैं।

उन्होंने कहा—"मैने सदैव अपने देश के लिये ही काम किया है और मेरा यही दृढ़ विश्वास रहा है कि मेरे नेतृत्व में काम करने वाले कर्मचारियों को सचाई और इमानदारी अवश्य मालूम हो जाय, इसी लिये मैंने अपने व्यक्तिगत संरक्षण का कभी विशेष ध्यान नहीं रक्खा। मेरी इस असावधानी के कारण ही विद्रोही लोग परिस्थिति से लाभ उठा सके।

प्रत्येक कार्य का एक प्रारम्भिक अप्रत्यक्ष कारण होता है और इस विद्रोह का कारण मेरी व्यक्तिगत असावधानी को ही समझना चाहिये। मेरी असावधानी के कारण सेना का अनुशासन बिगड़ा तथा राष्ट्र और केन्द्रीय सरकार को अत्यधिक चिन्ता हुई। अपनी असावधानी के लिये मैं अपने को दोषी ठहराता हूँ और इसलिये राष्ट्र, सरकार तथा पार्टी के समक्ष मैं क्षमा प्रार्थना करना अपना कर्त्तव्य समझता हूँ।"

मै पूछता हूँ, क्या योरुप के तानाशाहों में से कोई ऐसी परिस्थिति में इतने खुले शब्दों में अपनी ग़लती कबूल करने का दावा कर सकता है? योरुप के जो लोग चीन मे नैतिकता का अभाव पाते हैं उन्हें उक्त घटना से सबक़ सीखना चाहिये।

इसमें तो कोई सन्देह नहीं है कि चीन संसार का सबसे प्राचीन सभ्य देश है, और उसकी संस्कृति, साहित्य, सभ्यता और स्वतन्त्रता पर जो आघात किया जा रहा है उसकी रक्षा के लिए चीन की सहायता करना प्रत्येक स्वतन्त्रता प्रेमी का कर्त्तव्य है। पर जापान तो अपनी वर्वरता से चीन को हड़पता ही जा रहा है। इतने से ही उसे सन्तोप हो जाय तो वड़ी वात हो, वह तो सोते शेर को जगाने में लगा है। कई वार हमें यह खवर सुनने में आ चुकी है कि जापानी सैनिकों ने ब्रिटिश-प्रतिनिधि को घायल कर दिया। अमेरिका के झंडे का अपमान किया और उसके जहाजों पर वम वर्पा की आदि......इन वातों से तो यही स्पष्ट है कि ब्रिटेन और अमेरिका जितना इससे वचकर दूर रहना चाहते हैं उतना ही वह उनका तिरस्कार करता है।

ब्रिटेन से तो खास तौर पर उसे नाराजी मालूम होती है। और जापानी फौज के एक प्रसिद्ध अफसर ने तो यह भी घोपित कर दिया है कि जापान का यह धावा चीन पर ही नहीं है वरन् हांकाऊ होकर हांगकांग, सिंगापुर, ब्रह्मा, आसाम आदि होते हुए भारतवर्प पर भी है। पूर्व एशिया में वह साम्राज्य स्थापित करना चाहता है।

चीन में तो युद्ध चक्र चल ही रहा है। जापान के हवाई जहाज निहत्थे नागरिकों पर गोलियों की वौछार कर रहे हैं। मरने वालों की संख्या वमुक़ावले सैनिकों के नागरिकों की अधिक है। ७ महीने हो गये। लगातार वमवाजी और कत्लेआम का वज़ार गर्म है। यहां तक कि शंघाई की अन्तर्राष्ट्रीय वस्ती पर भी खूव गोला वारी हुई है। संसार के सभी राष्ट्र जापान के इस अनुचित हमले से क्षुब्ध हैं। सभों ने उसे दोषी ठहराया है फिर भी वह 'वेहयाई का जामा पहने' चीन में खून की नदियां वहाये जा रहा है।

जेनरल चू-तेह की अपील

[गत २६ दिसम्बर को चीन की प्रसिद्ध लाल सेना के कमान्डर-इन-चीफ़ चू-तेह ने राष्ट्रपति पं० जवाहरलाल जी के पास एक पत्र भेजा है जिसमें उन्होंने चीन के लिये सहायता की याचना की है। पत्र चीनी भाषा में था, उसका सारांश हम नीचे दे रहे हैं।
—सम्पादक]

यहाँ चीन में हमें ख़वर मिली है कि आपने भारत में जगह जगह चीन की जनता के संग सहानुभूति प्रगट करने के लिये सभाएँ की हैं—चीन की लाल सेना (कम्यूनिष्ट) के प्रति आपने हमदर्दी दिखाई है। हम आपको हृदय से धन्यवाद देते हैं।

आप जानते हैं कि जापानियों ने हमारे कई शहरों और रेलवे लाइनों पर ज़वर्दस्ती कव्जा कर रक्खा है। चीन की क्रान्तिकारी लाल सेना जन साधारण का संगठन कर रही है, उन्हें हथियार दे रही है ताकि हम इस लम्वी लड़ाई के लिये अपने को तैयार कर सकें। हमें पूरा विश्वास है कि अन्त में विजय हमारी ही होगी। उत्तर चीन में जगह जगह हमारे संग मिल कर लड़ने के लिये स्वयंसेवक आते हैं, इनकी संख्या वढ़ती जा रही है, और इनकी सहायता की हमें सख्त जरूरत भी है। किन्तु हमारे सामने अनेक अड़चनें हैं, हमारे पास काफ़ी रुपया नहीं है। इसी समस्या को हल करने के लिये मैं आप के पास यह पत्र लिख रहा हूँ—

उन इलाक़ों में जहाँ जापानियों ने अपना कव्जा जमा लिया है, हजारों की संख्या में मजदूर, किसान और विद्यार्थी जापानियों के खिलाफ उठ खड़े हुए हैं। उन्होंने स्वयंसेवकों के जत्थे वनाये हैं ताकि साम्राज्यवादी आक्रमणकारी का वे विध्वंस कर सकें। इन लोगों के पास हथियार तो हैं, किन्तु इनके पैरों में न तो जूते हैं, और न ओढ़ने के लिये इनके पास कम्वल। कितनों के वदन पर तो काफ़ी कपड़े भी नहीं हैं। कभी कभी समूचे दिन इन्हें भूखा रह जाना पड़ता है! अभी हाल में २००० स्वयंसेवकों ने हमारी लाल सेना के संग मिल कर जापानियों का वड़ी वहादुरी के साथ सामना किया है। इन स्वयंसेवकों

जापानी जंगी जहाज पर से गोलाबारी की तैयारी।

चीन के कुछ अनाथ बच्चे, जिनके मां बाप तथा मकान जापानी बमवर्षा से बरबाद हो गये हैं।
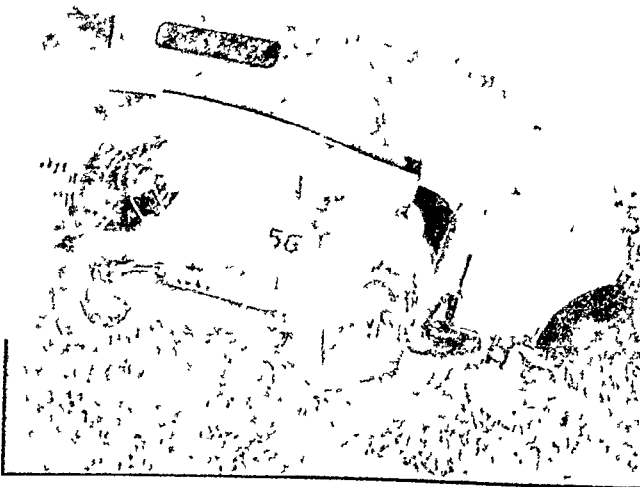
शाघाई की मोटर दुर्घटना जिसने चीन जापान युद्ध का सूत्रपात किया है।

नानकिंग में जापानी सैनिक।

के लिये हम रुपये इकट्ठे कर रहे हैं, चीन में और बाहर के देशों में भी। हमें पूरा विश्वास है कि इण्डियन नेशनल कांग्रेस जिसके आप प्रेसिडेण्ट हैं, हमें अवश्य मदद पहुँचायेगी। जो कुछ भी इन स्वयं-सेवकों के लिये आप भेज सकेंगे, उसे हम सहर्ष स्वीकार करेंगे। हम जानते हैं कि आपके देश में करोड़ों व्यक्ति ऐसे हैं जो हमारे साथ सहानुभूति रखते हैं, और वे हमारी सहायतार्थ कुछ न कुछ अवश्य देंगे।

कमान्डर-इन-चीफ़ की हैसियत से मैं आपको—कांग्रेस को और सारे हिन्दुस्तान को—यह बतलाना चाहता हूँ कि चीन आज हताश नहीं है, वह हारा भी नहीं है। हमारी सेना उत्तर चीन से कभी पीछे न हटेगी। हम जनता के संग रहेंगे, उनका संगठन करेंगे, उन्हें हथियार देंगे, और जापान की साम्राज्य-वादी फ़ौजों के खिलाफ उस वक्त तक लड़ते रहेंगे, जब तक उनके एक एक सिपाही को चीन से भगा नहीं देते—हाँ, मंचूरिया से भी उन्हें हम बाहर भगा-एँगे। यह लाल सेना कभी हार नहीं सकती क्योंकि यह सेना जनता की सेना है। हज़ारों की संख्या में आम लोग इसके संग मिल कर शत्रु से मोर्चा ले रहे हैं—उसकी शक्ति कभी कम नहीं हो सकती।

हमारे अन्दर अनुशासन (Discipline) है, हमने उत्तम फ़ौजी शिक्षा पायी है। हम हार नहीं सकते। हम केवल चीन के लिये ही नहीं लड़ रहे हैं, वरन् यह युद्ध समस्त एशिया की मज़लूम जनता का युद्ध है—हम उस अन्तर्राष्ट्रीय कम्यूनिष्ट सेना की टुकड़ी हैं, जो शोषित राष्ट्रों के साम्राज्यवादी शोषण का नाश करने के लिये निरन्तर युद्ध कर रही है।

हमारा ध्येय ऊँचा है, और इसीलिये गौरव-शाली भारत से सहायता की याचना का हम साहस भी कर सके हैं।

चीन के स्वयंसेवकों के लिये आर्थिक सहायता हम सहर्ष स्वीकार करेंगे—हम औषधियाँ और सर्जरी के औज़ार खुशी से कबूल करेंगे। हमें डाक्टर और नर्स चाहियें। हम ऐसे स्वयंसेवकों का स्वागत करेंगे जो हमारी आज़ादी की लड़ाई में हमारे संग कंधे से कंधा मिला कर लड़ना चाहते हैं।

हम आशा करते हैं कि आप हमारी अवश्य सहायता करेंगे—और जापानी माल के बहिष्कार का भारत में जोरों से आन्दोलन करेंगे। हमें भरोसा है कि आपकी कांग्रेस भारत की जनता को हमारी आज़ादी की लड़ाई के बारे में बराबर ख़बर देती रहेगी।

यदि जापानी चीन पर हावी हो गये तो एशिया की पददलित जातियों को अपनी खोई हुई आज़ादी वापस लाने में और भी देर लगेगी—शायद पीढ़ियाँ बीजांय। ……हमारी लड़ाई आपकी लड़ाई है।

एक बार फिर हमारी लाल सेना आपको हार्दिक धन्यवाद देती है।

आपका कामरेड
चू-तेह
कमान्डर-इन-चीफ़
लाल सेना (Route Army)
चीन

निम्न बातें भी अन्त में चीन को विजय-सूचक हैं :—

(१) जापान के राष्ट्रीय कर्ज़ के कुछ आँकड़े—

१९३०-३१	५,९५५,८१६,७६० येन
१९३१-३२	६,१८७,६५७,४७४ ,,
१९३२-३३	७,०५४,१९५,५५१ ,,
१९३३-३४	८,१३९,०३८,३९२ ,,
१९३४-३५	९,०९०,४५४,०२२ ,,

(२) जापान की कुल सम्पत्ति (Reserved Gold) ५० करोड़ येन है।

(३) १९३३ में राष्ट्रसंघ ने प्रस्ताव पास किया है कि जापानियों ने नाजायज़ तरीक़े से मंचुको राज्य की स्थापना की है।

(४) अमरीका, इँगलैंड, भारत आदि सभी देशों ने जापान को दोषी ठहराया है और जापानी माल के बहिष्कार का आन्दोलन उठाया है।

(५) सोवियट रूस ने चीन को सहायता का वचन दिया है।

चीन के रेलमार्ग

अत्यधिक अधिक
अधिक
साधारण

धान

अत्यधिक
अधिक
साधारण
कम
नहीं के समान

जन-संख्या

Published by the Editor (Pt. Ram Narain Misra, B. A.) and Printed by Sheopal at the Bhugol Press, 306, Jamuna Road, Allahabad.

चीनी-एटलस

सम्पादक
रामनारायण मिश्र बी० ए०
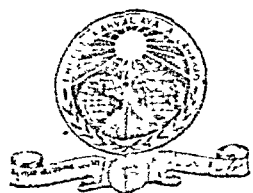
वार्षिक मूल्य ३)
विदेश में ५)
इस अंक का ॥)

ANNUAL SUBSCRIPTION
Indian: Rs. 3/-
Foreign: Rs. 5/-
Single copy As. 8

प्रकाशक:—

सम्पादकीय

चीन अंक से उस विशाल देश का संक्षिप्त परिचय "भूगोल" के पाठकों को मिल ही गया होगा। चीन-जापान युद्ध के सम्बन्ध में इतने नये नये स्थानों का नाम आता है कि साधारण मनुष्य को उनकी स्थिति और महत्व का ठीक ठीक पता नहीं लग सकता। इसीलिये इस बार चीनी एटलस प्रकाशित करने की आवश्यकता प्रतीत हुई। इसमें दो (दूसरे और तीसरे) पृष्ठों पर चीन देश का विवरणात्मक नक़शा दिया गया है। २४ पृष्ठों में चीन के प्रान्तों के बड़े बड़े नक़शे दिये गये हैं। इनके अन्त में नक़शों के पृष्ठों का हवाला देकर प्रान्तों का संक्षिप्त वर्णन दिया गया है। इसके बाद समय समय पर बदलने वाले चीन के प्राचीन राजनैतिक मानचित्र, प्रमुख ऐतिहासिक घटनाएँ और चीनी इतिहास के कुछ चित्र दिये गये हैं। अन्त में चीन की उपज और व्यापार आदि के मानचित्र और खाके दिये गये हैं। इन पर नज़र डालते ही चीन की आर्थिक स्थिति का ठीक ठीक पता लग जाता है। चीन-अंक और चीनी एटलस से अभागे चीन देश की समस्याओं को समझने में सुविधा होगी। चीन अंक और चीनी एटलस का अलग अलग मूल्य आठ आठ आना है। दोनों का एक साथ मूल्य बारह आने रक्खा गया है। आशा है हिन्दी प्रेमी इस सुविधा से लाभ उठावेंगे।

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१—चीन के सब प्रान्तों के नक़शे	१-२६
२—प्रत्येक प्रान्त का संक्षिप्त वर्णन	२७-३८
३—ऐतिहासिक मानचित्र	३९-४२
४—चीनी इतिहास की प्रमुख घटनाएँ	४३-४६
५—चीनी इतिहास के कुछ चित्र	४७-५२
६—संसार में चीन का आर्थिक स्थान	५३-५६

चीन देश
चीन
क्षेत्रफल- (मंचूरिया को मिला कर) ४२,७०,३५२ वर्ग मील
कृषि - छोटे २ खेत उत्तर में गेहूँ, जौ, ज्वार, बाजरा,
कपास, और सोयाबीन द० मे धान, गन्ना, नील
पशु-
भेड बकरी
खनिज- कोयला, लोहा, टीन सुरमा, ताम्बा
नोट- चीन की अपार खनिज का अभी ठीक २
विकास नही हुआ है।
मंगोलिया
मं-चू-कुओ
(मंचूरिया)
जापानी राज्य
पुरानी राजधानी
पीपिंग
टिन्टसिन
पिचली की खाड़ी
पीला सागर
बाजरा
ज्वार
कोयला और लोहा
ओर्डोस का पठार
शानसी की उच्च भूमि
कोयला और लोहा
लोयस
लोयस का मैदान
हलकी पीली रे० मिट्टी
अत्यन्त उपजाऊ
घोड़ा और खच्चर
सिनलिंग पर्वत
भेड
४०°

चेक्यांग
संकेत:—
प्रान्तीय सीमा
राजधानी
प्रान्तीय नगर
स्वाधीन चाओ
स्वाधीन तिंग
चाओ शहर
तिंग शहर
ज़िले का नगर
१ ली = १ मील
० ५० १०० १५०
निंग पो
येन चाओ
किंग ह्वा
चू चाओ
त्वाई चाओ
हांगचाओ

क्वांगटुंग

संकेत:-

- ---- प्रान्तीय सीमा
- ● राजधानी
- ▪ प्रान्तीय नगर
- ⊖ स्वाधीन चाओ
- \+ स्वाधीन तिंग
- ⊘ चाओ शहर
- ○ तिंग शहर
- ○ जिले का नगर

३ ली = १ मील

ली ० ५० १०० १५० ली

फूकेन
सकेत:-
प्रान्तीय सीमा
राजधानी
प्रान्तीय नगर
स्वाधीन चाओ
स्वाधीन तिंग
चाओ शहर
तिंग शहर
ज़िले का नगर
३ ली = १ मील
ली ० ५० १०० १५० ली
११६
११७
११८
११९
१२०
२४
२५
२६
२७
२८

क्यांग्सु
संकेत:-
प्रान्तीय सीमा
राजधानी
प्रान्तीय नगर
स्वाधीन चाओ
स्वाधीन तिंग
चाओ शहर
तिंग शहर
ज़िले का नगर
३ ली = १ मील
ली ० ५० १०० १५० ली
नानतुंगचाओ

फ़ं ग यां न फ़ू
लि या न चाओ
आ न किं ग फ़ू
ची चाओ फ़ू
नि ग कुओ फ़ू
हु सी चाओ फ़ू
आनहे
२ ली = १ मील
ली ० ५० १०० १५० ली

क्यांग्सी
संकेत:-
प्रान्तीय सीमा
राजधानी
प्रान्तीय नगर
स्वाधीन चाओ
स्वाधीन तिंग
चाओ शहर
तिंग शहर
ज़िले का नगर
३ ली = १ मील
० ५० १०० १५० ली
का न चा ओ
ना न न फू
चे न फू
नानचंग
क्यानफू

हूनान
संकेतः-
----प्रान्तीय सीमा
राजधानी
प्रान्तीय नगर
स्वाधीन चाओ
स्वाधीन तिंग
चाओ शहर
सिंग शहर
जिले का नगर
३ ली - १ मील
० ५० १०० १५० ली

हूपे
संकेत –
प्रान्तीय सीमा
राजधानी
प्रान्तीय नगर
स्वाधीन चाओ
स्वाधान शिंग
चाओ शहर
तिंग शहर
जिले का नगर
३ ली = १ मील
० ५० १०० १५० ली

कान्सू
संकेत:-
प्रान्तीय सीमा
राजधानी
प्रान्तीय नगर
स्वाधीन चाओ
स्वाधीन तिंग
चाओ शहर
तिंग शहर
ज़िले या नगर
१ ली=१ मील

किरीन
संकेत:-
प्रान्तीय सीमा
राजधानी
प्रान्तीय नगर
ली ० ५० १०० १५०
फूचीन
सिंशानफू

शांटंग
संकेतः—
प्रान्तीय सीमा
राजधानी
प्रान्तीय नगर
स्वाधीन चाओ
स्वाधीन सिंग
चाओ शहर
सिंग शहर
जिले का नगर
३ ली = मील
० ५० १०० १५० ली

चिह्ली
संकेत:-
प्रान्तीय सीमा
राजधानी
प्रान्तीय नगर
स्वाधीन चाओ
स्वाधीन तिंग
चाओ शहर
तिंग शहर
ज़िले का नगर
२ ली = १ मील
चेंगटेफू
चाओयांगफू
चिफेंगचाओ
पाओटिंगफू
मंचूरिया

शान्सी
संकेत:-
प्रान्तीय सीमा
राजधानी
प्रान्तीय नगर
स्वाधीन चाओ
स्वाधीन तिंग
चाओ शहर
तिंग शहर
ज़िले वा नगर
३ ली—१ मील
ली ० १०० २०० ३००
तैयुआन

होनान
संकेत:-
प्रान्तीय सीमा
राजधानी
प्रान्तीय नगर
स्वाधीन चाओ
स्वाधीन तिंग
चाओ शहर
तिंग शहर
ज़िले का नगर
३ ली=१ मील
काइफेंगफू
होनानफू
चेनचाओफू
नानयंगफू
कांगचाओ

शुंग किंग
संकेत—
प्रान्तीय सीमा
राजधानी
प्रान्तीय नगर
स्वाधीन चाओ
स्वाधीन तिंग
चाओ शहर
तिंग शहर
ज़िले का नगर
३ ली = मील
ली ० ५० १०० १५०

मंगोलिया
पैमाना
0 १०० २०० ३०० मील
मोटर मार्ग
बैकाल झील
इर्कुट्स्क
मुस्तागदर्रा
मंचूरिया
कोसगोल
ख्वाकेम
ओरिखो
तन्नू पर्वत
ख्याथ्या
सेलेंगा
उलनखोम
बीस्क
कोतन्दा
सुओक
कोब्डो
उल्यासुताई
वारुनकुर्या
उगा
केरुलेन
जैसान्स्क
चुगूचक
तुलता
गुलुन्तोखोई
अल्ताई पर्वत
सांगनलूक
ग्राइट पर्वत
तीहाफू
ओर्गिन
नारन
सैरूसु
उदे
गोबी का रेगिस्तान
कोनित्याो
इलीखिन
बेइनकुदूक
विल्गीकी
सेसी
कोश्यात
डोलोनार
चिंदफेंग
पीकिंग
पात्सेवोलोंग
खाराखोतो
तेतुन्स्जी
हागकिन
शिंचाओ
निंगस्याफू
तिंगयुआनपिंग
चेनफाऊ
ह्वांगहो (पीली नदी)
हैयुवान

समस्त प्रान्तों का संक्षिप्त वर्णन नीचे दिया जाता है। पृष्ठ २ और ३ में चीन का बड़ा नक्शा है, वह स्पष्ट ही है। प्रत्येक प्रान्त के नक्शे की पृष्ठ संख्या उस प्रान्त के वर्णन के नीचे दे दी गई है। —सम्पादक

क्वांग्सी

क्वांग्सी (७७,००० वर्ग मील, जन संख्या १,१३,००,०००) प्रान्त पहाड़ी है। पहाड़ दक्षिण से उत्तर पूर्व की ओर चले गये हैं। वेस्ट (पश्चिमी) नदी या सीक्यांग और इसकी सहायक नदियों की घाटियाँ उपजाऊ हैं। दक्षिण की ओर जलवायु अधिक ऊष्ण है। धान, गन्ना, फल, अनाज, बांस, कासिया (Cassia) और अनीसीड (Aniseed) प्रधान उपज हैं। स्टार एनिस (Star Anise) की उपज के लिये क्वांग्सी संसार भर में प्रसिद्ध है। सुरमा, कोयला, टीन, लोहा एस्बेस्टास (जो आग में नहीं जलता है) और गेलीना मुख्य खनिजें हैं। रेलों के अभाव से यहाँ की खनिज-सम्पत्ति का विकास न हो सका। नानिंग (७०००० से ऊपर) में पटाखे और चमड़े का सामान बनाया जाता है। वूचाओ में मोजे, रेशम और शोशे का कारबार है। यहाँ रेशम के कीड़े की एक ऐसी जाति होती है जो कपूर के पेड़ की पत्तियाँ खाता है। इसकी अँतड़ियों से मछली पकड़ने की डोरी (Line) बनाई जाती है। क्वेलिन (७५००० से ऊपर) शहर इस प्रान्त की राजधानी है। पृष्ठ नम्बर १

चेक्यांग

चेक्यांग प्रान्त का क्षेत्रफल ३७,००० वर्ग मील और जन-संख्या २ करोड़ २० लाख है। प्रान्त के उत्तरी और उत्तरी-पूर्वी भाग में अधिक घनी आबादी है। उत्तरी भाग में विशाल उपजाऊ मैदान है। दक्षिण और पश्चिम में पहाड़ हैं। धान, चाय, रेशम, कपास, गेहूँ, सन, नील, ईख, और फल यहाँ खूब होते हैं। चाय के पौधे पहाड़ियों पर लगे हैं। यह प्रान्त रेशम के लिये बहुत प्रसिद्ध है। यहाँ साल में दो बार रेशम निकाला जाता है। कपास बढ़ रही है। शाओलिंग और निंगपू के बीच वाले भाग में बहुत बढ़िया कपास होती है। चेक्यांग प्रान्त में लोहा, कोयला, फिटकरी और सोप स्टोन (सेलखरी) बहुत है। लेकिन निकाला कम जाता है।

इस प्रान्त का प्रधान कारबार रेशम है। हूचाओ का कच्चा रेशम बढ़िया होता है! हांगचाओ में सर्वोत्तम रेशमी कपड़े बनते हैं। निंगपू में सूत कातने और सूती कपड़ा बुनने की कई मिलें हैं। काशिंग में तांबे और पीतल के बर्तन अच्छे बनते हैं। हांगचाओ में कागज, पंखे, छाते, ब्रुश, (चीनी कलमें) बहुत बनते हैं।

शाओहिंग में चावल की शराब बहुत बढ़िया बनती है और बाहर भी भेजी जाती है। वेंचाओ में पत्थर का सामान बनता है।

इस प्रान्त में नदियों और नहरों का जाल पुरा हुआ है। शङ्घाई और निंगपू के बीच में स्टीमर चला करते हैं।

हांगचाओ (आबादी ६ लाख) नगर इस प्रान्त की राजधानी और ट्रीटी पोर्ट है। शाओहिंग (ट्रीटी पोर्ट), निगपू (ट्रीटी पोर्ट) और हूचाओ शहरों की जन संख्या १ लाख से ऊपर है। लांगचो, वेचाओ (ट्रीटी पार्ट) काशिङ्ग, चूचाओ और किनह्वाफू दूसरे प्रसिद्ध नगर हैं। यहां के निवासी बड़े साहसी और बहादुर समुद्री मल्लाह हैं और मन्दरिन भाषा बोलते हैं। पृष्ठ नम्बर ४

क्वांगटंग*

क्वांगटंग (१००,००० वर्गमील, जनसंख्या ३ करोड़ ७२ लाख) प्रान्त सीक्यांग (पश्चिमी नदी) को छोड़ कर शेष भाग में पहाड़ी है। घाटियाँ और डेल्टा का प्रदेश बड़ा उपजाऊ है। यहाँ साल में तीन फसलें होती हैं। समुद्र तट खूब कटा फटा है। बन्दरगाह अच्छे हैं। इसी से सीक्यांग नदी के डेल्टा और तटीय प्रदेश में अत्यन्त घनी आबादी है। जलवायु ऊष्ण है। रेशम, चावल, गन्ना, तम्बाकू, कासिया, फल, तरकारी, बांस, चाय, अदरख, चटाई बुनने के सरकंडे और सन बहुत होता है। धान प्रधान उपज है। रेशम मुलायम और चमकीला होता है और साल में सात आठ बार तैयार होता है। यहाँ की नारंगी और लीची बहुत प्रसिद्ध हैं। अच्छा लोहा और कोयला बहुत मिलता है। टंगस्टन, मेंगनीज, मोलिवड़ेनम और सुरमा भी बहुत है। लेकिन अच्छे मार्गों की कमी होने से निकाला कम जाता है। रेशम बुनने, चटाई बुनने और धान कूटने के कई कारखाने हैं। हाथी दाँत पर नक्काशी करने, चीनी मिट्टी के वर्तन बनाने लकड़ी पर रंगसाजी करने का काम होता है। केन्टनी लोग बड़े उन्नतिशील हैं। विद्यार्थियों को छोड़ कर केन्टन से ही अधिक तर साधारण चीनी लोग अमरीका को गये थे। समुद्र तट के बन्दरगाहों के बीच में जहाज चला करते हैं। केन्टन से समशुई, केन्टन से शुईचाओ, केन्टन से कोलून (हांग कांग) और हानकाओ को रेलें गई हैं। केन्टन प्रान्त भर में सब से बड़ा (१५ लाख) नगर, ट्रीटीपोर्ट और राजधानी है। १ लाख और पाँच लाख के बीच की आबादी वाले शहरों में फातशान, चाओचाओफू, हांगकांग शेक्युङ्ग, शेकी, समशुई, स्युलान और कोंगमून हैं। स्वाटाओ, मकाओ होकशान और शापिङ्ग नगरों की जन संख्या २५००० के ऊपर है। केन्टन, स्वाटाओ, कोंगमून, कोलून, लप्पा, पाखोई, शमशुई हांगकांग (ब्रिटेन ने ले लिया), मकाओ (पुर्चगाल ने ले लिया) और क्वांगचाओ (फ्रांस ने ले लिया) ट्रीटी पोर्ट हैं।

पृष्ठ नम्बर ५

फूकेन

फूकेन प्रान्त का क्षेत्रफल ४६ ००० वर्ग मील और जनसंख्या १ करोड़ ३० लाख है। समुद्र-तट के पास और मीन नदी की घाटी में सबसे अधिक घनी आबादी हैं। यह प्रान्त पहाड़ी है। पहाड़ समुद्र-तट के समानान्तर चले गये हैं। तट कटा फटा है। खाड़ियाँ कई हैं। सान्तुआओ, फूचाओ और एमाय सुन्दर बन्दरगाह हैं। यहाँ की जलवायु शीतोष्ण कटिबन्ध से कुछ गरम लेकिन ऊष्णकटिबन्ध से ठंडी है। धान, लकड़ी चाय और फल यहाँ की प्रधान उपज हैं। फलों में नारंगी, जैतून लुंगवान लांची और बेर बहुत होते हैं। बाँस के मुलायम हरे किल्ले खाने के काम आते हैं। गन्ना, गेहूँ और सकरकन्द की खेती होती है। कोयला, तालक (Talc) चिकनी चीनी मिट्टी और चूने का पत्थर बहुत निकाला जाता है। मालिब डेनम (Molyb denum) सोना, चाँदी, ताँबा, सीसा, और ग्रेफाइट (पेंसिल का मसाला) भी कई भागों में मौजूद है। लेकिन अभी निकाला नहीं जाता है।

खेती के बाद सब से अधिक मनुष्य लकड़ी काटने और लकड़ी बाहर भेजने के काम में लगे हुए हैं। बाँस से कागज बनाया जाता है। टिनफायल (Tin foil), कागज से छाता बनाने, दियासलाई और साबुन के काम में कुछ लोग लगे हैं। कुछ लोग चाय को बाहर भेजने, नाव बनाने और मछली मारने का काम करते हैं। फूचाओ में चमड़ा, कपूर साफ करने, मोजा तौलिया बुनने और रबड़ के जूते बनाने के कारखाने हैं। एमाय में फलों से मुरब्बा बनाने का भी काम होता है। एमाय (१ लाख) बन्दरगाह

---

* नक्शे में भूल से क्यांगटंग छप गया है। कृपया सुधार लें।

से बहुत से चीनी मज़दूर प्रशान्त महासागर के द्वीपों और सिंगापुर को जाया करते हैं। यह एक ट्रीटीपोर्ट है। फूचाओ शहर प्रान्त भर में सब से बड़ा (५ लाख) और राजधानी है। फूचाओ तक मीन नदी इतनी गहरी है कि यहाँ तक समुद्री जहाज़ आ जाते हैं। यह भी ट्रीटीपोर्ट है। यांगचाओ और चुनचाओफू दूसरे प्रसिद्ध नगर हैं। उत्तरी फूकेन के लोग घर छोड़ना पसन्द नहीं करते हैं। दक्षिणी भाग के लोग बड़े साहसी हैं।

पृष्ठ नम्बर ६

क्यांग्सू

क्यांग्सू (३८,६०० वर्ग मील, जन संख्या ३ करोड़ ४० लाख) में कैमेन का सिरा और सुंग.मिंग द्वीप और भी अधिक घना बसा है। सारा प्रान्त विशाल कछारी मैदान है। दक्षिण में १२० मील लम्बा और ६० मील चौड़ा यांगज़ी का डेल्टा है। प्रान्त की ज़मीन नीची है। कहीं कहीं दलदल और अनूप हैं लेकिन यहाँ की ज़मीन बड़ी उपजाऊ है। रेशम, कपास, धान, बीन, मटर, गेहूँ, बाँस, तरकारी और फल यहाँ की प्रधान उपज हैं। वूसी का रेशम दुनिया भर में सर्वोत्तम होता है। कपास की खेती हर साल बढ़ती जा रही है। सूत कातने और कपड़ा बुनने के ७२ कारखाने हैं जो अधिक तर शंघाई में हैं। यहीं आटा पीसने, बिजली तैयार करने, तेल पेरने, दिया सलाई, काग़ज, लकड़ी, मोमबत्ती, बल्ब, साबुन, सीमेंट, शराब, शक्कर, ब्रुश और सोड़ावाटर बनाने के बड़े बड़े कारखाने हैं। वूसीह, नानकिंग, और सूचाओ में रेशम बुना जाता है। इस प्रान्त की सभी नदियों में स्टीमर चलते हैं। नहरों का जाल सा बिछा हुआ है। शंघाई से नानकिंग, वूसुंग और हांगचाओ को रेलें गई हैं। सड़कें अच्छी नहीं हैं। शंघाई (१८ लाख) सूचाओ (६ लाख) प्रसिद्ध शहर हैं। नानकिंग जापानी हमले तक चीन की राष्ट्रीय सरकार की राजधानी रहा। हमले के समय राजधानी यहां से उठ कर चुंगकिंग को चली गई। वूसीह, चिंक्यांग, और यांगचाओ प्रसिद्ध नगर हैं। शंघाई, नानकिंग, सूचाओ और वूसुंग ट्रीटी पोर्ट भी हैं। प्रान्त में मन्दरिन चीनी और शंघाई की उपभाषा (चीनी) बोली जाती है।

पृष्ठ नम्बर ७

आन्हवे

आन्हवे का प्रान्त अपने देश के संयुक्त प्रान्त का आधा (५५००० वर्गमील) है। इसकी जन-संख्या २ करोड़ है जो अपने प्रान्त की जन-संख्या के आधे से कुछ कम है। उत्तरी भाग में यह प्रान्त सब से अधिक घना बसा है। यांगजी के दक्षिण में यह प्रान्त पहाड़ी हो गया है। बीच वाला भाग बड़ा उपजाऊ है। ह्वे नदी के उत्तर का मैदान कभी अकाल और कभी बाढ़ से पीड़ित रहता है। धान, कपास, गेहूँ और चाय यहाँ की प्रधान उपज हैं। सोयाबीन, सोरगम, तम्बाकू और ज्वार बाजरा भी पैदा होता है। इस प्रान्त के कई भागों में कोयला पाया जाता है। यहाँ लोहा बहुत अच्छा है।

आन्हवे प्रान्त में देशी और चीनी स्याही बहुत तैयार की जाती है। दक्षिणी भाग में काग़ज बनाया जाता है। वुहू में धान कूटने और आटा पीसने की कई मिलें हैं।

आंकिङ्ग (राजधानी) वुहू (ट्रीटी पोर्ट) और पोचाओ नगरों की जन संख्या १ लाख से ऊपर है। दूसरे प्रसिद्ध नगर पेंगू (ट्रीटी पोर्ट) तोतुङ्ग, ह्वेचाओ और लूचाओफू हैं। इस प्रान्त के रहने वाले भोले शान्त और मेहनती हैं। वे मन्दरिन (चीनी) भाषा बोलते हैं।

पृष्ठ नम्बर ८

क्यांग्सी

क्यांग्सी प्रान्त (६८,००० वर्ग मील, जन संख्या २½ करोड़) पोयांग झील के पास वाले भागों को छोड़ कर शेष पहाड़ी है। झील के पास वाले भागों में दलदल भी बहुत है। प्रान्त के बहुत बड़े भाग का पानी कान नदी बहा ले जाती है। झील के पास वाले भाग और कान नदी की घाटी में आबादी घनी है। यहाँ की जलवायु बड़ी नम रहती है। धान, चाय, तम्बाकू, बाँस, मटर, फल, नील और अनाज यहाँ की प्रधान उपज हैं। कपूर के पेड़ बहुत से भागों में उगते हैं। रेमी (Ramie) भी बहुत होता है। इस प्रान्त में कोयला और चिकनी चीनी मिट्टी की कई खानें हैं। पिंगस्यांग की खानों से हर साल १० लाख टन से अधिक कोयला निकलता है। चीनी मिट्टी का कारबार बहुत पुराना और प्रसिद्ध है। घास से जितना कपड़ा सारे चीन में बनता है उसका आधा अकेले क्यांग्सी प्रान्त में तैयार होता है।

पोयांग झील और कान नदी में स्टीमर चला करते हैं। कान नदी की सहायक नदियों में देशी नावें चलती हैं। नानयांग से क्यू क्यांग और पिंगस्यांग से चूचांग को रेल गई है। नानचांग (१ लाख से ऊपर) राजधानी है। क्यू क्यांग ट्रीटी पोर्ट है। कानचाओ क्यानफू और किंगतेचेन दूसरे प्रसिद्ध नगर हैं। प्रान्त की भाषा मन्दरिन (चीनी) है।

पृष्ठ नम्बर ९

हूनान

इस प्रान्त का क्षेत्रफल ८३,००० वर्ग मील और जन संख्या ३ करोड़ है। नदियों की घाटियों और तुंगतिंग झील के पड़ोस में आबादी बहुत घनी है। यह प्रान्त पहाड़ी है। दक्षिण और पश्चिम में पहाड़ और भी अधिक हैं। तुङ्गतिङ्ग झील (७५ मील लम्बी और ६० मील चौड़ी) में चार नदियां गिरती हैं। चाँगशा के दक्षिण में मैदान है।

हूनान प्रान्त में कई तरह की खेती होती है। धान प्रधान है। चाय, सोयाबीन, रेमी (Ramie), तिल, बांस, लकड़ी का तेल, वनस्पति घी, कपास, तम्बाकू, तरबूज, फल और गेहूँ बहुत होता है। यहाँ के सुअर भी (मांस के लिये) प्रसिद्ध हैं। खनिज सम्पत्ति भी बहुत है। सुरमा, सीसा, जस्ता कोयला, लोहा, मैंगनीज, टीन और पारा प्रधान खनिज हैं। खनिज खोदना यहाँ का प्रधान कारबार है। बाँस से कागज, घास से कपड़े, रेशम की कढ़ाई और सूती कपड़ा (नानकीन) बनाने का काम बहुत होता है। हूनान के हैम (Ham) चीन भर में पहुँचते हैं। बाँस से कई तरह की चीजें बनती है। चाँगशा प्रधान कारबारी केन्द्र है।

झील में और चाँगशा और हानकाओ के बीच में स्टीमर चला करते हैं। स्यांग, ली और येन नदियों में नावें चला करती हैं। शीतकाल में गहराई कम हो जाने से नावों का चलना बन्द हो जाता है। चाँगशा रेल द्वारा हानकाओ नगर से जुड़ा हुआ है। यहाँ से एक लाइन केन्टन को गई है। चाँगशा (१ लाख से ऊपर) राजधानी और ट्रीटीपोर्ट है। चाँगते, और स्यांगतान दूसरे प्रसिद्ध नगर हैं। योचाओ ट्रीटी पोर्ट है।

पृष्ठ नम्बर १०

सेचुआन

सेचुआन (२,२०,००० वर्ग मील, जन संख्या ५ करोड़) प्रान्त में चेंग्ट मैदान (जो ९० मील लम्बा और ४५ मील चौड़ा है) अत्यन्त घना बसा है। प्रति वर्ग मील में २००० से अधिक मनुष्य रहते हैं। प्रान्त का तीन चौथाई भाग पहाड़ी है। इसमें १८००० फुट ऊँचे पहाड़ चले गये हैं। लाल बालू और पत्थर के इस पठार का ढाल पूर्व और दक्षिण-पूर्व की ओर है। दक्षिणी भाग की जलवायु कुछ कुछ ऊष्ण कटिबन्ध की है। जो उपज चीन के दूसरे भागों में होती है वह सब इस प्रान्त में होती है। रेशम, गेहूँ, गन्ना, तम्बाकू, कपास, रवर्व (Rhubarb) बांस, चाय, जड़ी बूटी, लकड़ी का तेल प्रधान उपज हैं। चेंगटू मैदान में २००० वर्ष से सिंचाई की जा रही है। सेचुआन प्रान्त में लोहा, कोयला, तांबा, पारा, नमक और मिट्टी का तेल बहुत है। नमक के कुएँ बहुत गहरे हैं। कोई कोई कुआँ ३००० फुट गहरा है। सेचुआन प्रान्त से बाहरी प्रदेशों में जाने के लिये अकेला सुगम मार्ग यांगजी नदी है। इसी से यह प्रान्त प्रायः स्वावलम्बी रहा है। यहां नमक, गुड़, रेशम, ऊन, तम्बाकू, चमड़ा, तेल, कागज़ आदि प्रायः सभी आवश्यक चीज़ों को घरेलू ढंग से बनाने का काम होता है। चुङ्गकिङ्ग (८ लाख) प्रधान कारबारी नगर और व्यापार का केन्द्र है। चेंगटू (४ लाख) राजधानी है। क्यातिंगफू, फाओचाओ, वानसेन जेल्यूसिंग दूसरे बड़े नगर हैं। इनमें प्रत्येक की जन-संख्या १ लाख से ऊपर है। चुङ्गपा, वातंग, निंगपुआनफू, फेंगतूरोन, क्वेचाओफू, सुईफू, वेचाओफू नगरों की जन-संख्या २५००० से ऊपर है इस प्रान्त में कुछ चीनी और कुछ मूल निवासी रहते हैं।

पृष्ठ नम्बर ११

हूपे

हूपे (७१००० वर्गमील, जन संख्या २ करोड़) प्रान्त के ३० फी सदी भाग में पहाड़, और ६० फी सदी में जल है। केवल १० फी सदी भाग में रहने योग्य अच्छी जमीन है। यांगजी और हान नदियाँ इस प्रान्त को पार करती हैं। यहाँ असंख्य झीलों और नहरों का जाल सा बिछा हुआ है। मछलियाँ बहुत पकड़ी जाती हैं। धान, कपास, और बीन यहाँ की प्रधान उपज हैं। तिल, तम्बाकू, गेहूँ, रेमी (Ramie) और रेशम भी होता है। अंडा, अंडे से बने हुए पदार्थ, नट गाल (Nutgalls) वनस्पति और पशुओं की चर्बी बाहर भेजी जाती है। यहाँ की प्रधान खनिज लोहा और कोयला है। तायेह की लोहे की खानें चीन भर में सब से बड़ी हैं। हांगकाओ प्रान्त का कारबारी नगर है। लोहे और फौलाद के कारबारों के अतिरिक्त हानकाओ में सूती कारखाने, आटे की चक्कियाँ, सिगरट के कारखाने, तेल की मिलें, सीमेंट बनाने, कच्ची धातु का साफ करने और अंडों से तरह तरह की चीजें बनाने के कारखाने हैं। हानकाओ प्रान्त के व्यापार का भी केन्द्र है। यहां से कपास, लकड़ी का तेल, तिल, तम्बाकू, चमड़ा, खाल, चाय, लोहा, कच्चा रेशम, ब्रिसिल (Bristles) रेमी (Ramie) अंडे की बनी हुई चीजें, सन और नटगाल (Nutgall) बाहर भेजने का काम होता है। साल में आठ महीने समुद्री जहाज़ हानकाओ तक आते हैं। हांकाओ से ऊपरी यांगजी, हांगकाओ से चांगशा और हांकाओ से लाओहोकाओ (हान नदी पर) को भी स्टीमर जाया करते हैं। पेकिंग हांकाओ, और वूचांग-चांगशा रेलवे लाइनें प्रान्त को पार करती हैं। हांकाओ वूचांग, और हानचांग के "वूहान नगरों" की जन संख्या १५ लाख है। हांकाओ, इचांग और शांसी ट्रीटी पोर्ट हैं। वूचांग-राजधानी है। प्रान्त की भाषा मन्दरिन (चीनी) है।

पृष्ठ नम्बर १२

क्वेचाओ

क्वेचाओ (क्षेत्रफल ६७,००० वर्गमील, जन संख्या १ करोड़ १० लाख) प्रान्त दक्षिण और दक्षिण पूर्व में अधिक घना बसा है। प्रान्त का ५/६ भाग पहाड़ी है। पठार की औसत ऊँचाई ४००० फुट से अधिक है। युआन और वू नदियों की घाटियां तंग और गहरी हैं। धान, तम्बाकू, लकड़ी का तेल, फल, अफीम और गेहूँ यहाँ की उपज है। वैसे प्रधान चीन भर में यह प्रान्त कम उपजाऊ गिना जाता है। कोयला पोटाश का शोरा, लोहा, जस्ता और पारा यहाँ की खनिज हैं। लेकिन बहुत से भाग की अभी तक ठीक ठीक पैमाइश नहीं हुई है।

युआन और वू नदियों में छोटी छोटी नावें चलती हैं। क्वेयांग (राजधानी) मे यूनन, सेचुआन, हूनान, और क्वांग्सी को जाने वाली चारों सड़कें बहुत तंग हैं। क्वेयांग की जन-संख्या १० लाख है। अन्शुनफू (५०,०००) और सुनयी (४०.०००) दूसरे नगर हैं।

इस प्रान्त में लगभग १/३ लोग चीनी और शेष दो तिहाई लोग मूल निवासी हैं। चीनी लोग मन्दरिन बोलते हैं। मूलनिवासियों की अलग अलग उपभाषायें हैं।

पृष्ठ नम्बर १३

यूनन

यूनन (१,४६,७०० वर्ग मील जन संख्या १ करोड़) प्रान्त सब का सब पहाड़ी है। पश्चिम की ओर ऊँचे और तंग पहाड़ हैं। पूर्व की ओर ऊंचा पठार है। पठार ही अधिक घना बसा है। अधिक ऊंचाई पर जलवायु अच्छी हैं। नदियों की निचली घाटियों में नमी और कुहरा छाया रहता है। यहाँ की जलवायु स्वास्थ्यकर नहीं है। गरमी की ऋतु में पानी बरसता है धान प्रधान उपज है। गेहूँ और मकई की खेती भी होती है। यूनन प्रान्त में कई प्रकार की खनिजे हैं। लेकिन अभी केवल टीन निकाली जाती है। कहीं कहीं कपड़ा बुना जाता है। हैफांग-यूननफू रेलवे फ्रांसीसियों के अधिकार में है। नेरोगेज (छोटी) लाइन प्रधान रेलवे से कोचीन की टीन की खानों तक गई है। हैफांग और हांगकांग के बीच में स्टीमर चला करते हैं। यूननफू (१७५०००) राजधानी व्यापारिक केन्द्र और ट्रीटी पोर्ट है। मेंग्ज़, होकाओ (पूर्व में) जेमाओ और तेंग्वे (दक्षिण पश्चिम में) दूसरे ट्रीटी पोर्ट हैं। प्रान्त में पश्चिमी मन्दरिन बोली जाती है। मूलनिवासी अपनी अपनी अलग उपभाषायें बोलते हैं।

पृष्ठ नम्बर १४

शेन्सी

शेन्सी (७५००० वर्ग मील, जन-संख्या ९४,५०,०००) के उत्तरी और दक्षिणी सिरो के आर पार ऊँचे ऊँचे पहाड़ चले गये हैं। वी नदी के उत्तर में बहुत ही उपजाऊ और नीचा पठार है। वी बेसिन को चीनी सभ्यता का जन्म स्थान कहते हैं। किसी समय यह प्रान्त वनो के लिये प्रसिद्ध था। लेकिन आजकल यहाँ के पहाड़ी ढाल एक दम नंगे हो गये हैं। वी और हान नदियों की घाटियाँ अत्यन्त उपजाऊ हैं। वी नदी की घाटी चीन भर में सर्वोत्तम कपास की उपज के लिये प्रसिद्ध है। गेहूँ, मकई, तम्बाकू, आलू, अल्फा घास, बीन, जई, जौ, ज्वार बाजरा, मटर, गेहूँ, रेशम और तिलहन बहुत होता है। कहा जाता है कि शेन्सी प्रान्त में कोयला और मिट्टी का तेल बहुत है। रेलों और सड़कों के अभाव से अभी उसका ठीक ठीक पता नहीं लगा है।

इस प्रान्त में देशी पनचक्कियां बहुत हैं। खच्चर, भेड़, गाय बैल बहुत पाले जाते हैं। हान नदी में हान-चुंगफू नगर तक नावें चल सकती हैं। कुली और लद्दू जानवर हजारों की संख्या में सामान ढोते हैं। इस प्रान्त के लोग मन्दरिन (चीनी भाषा) बोलते हैं। श्यानफू प्रधान नगर (२ लाख) और राजधानी है।

पृष्ठ नम्बर १५

कान्सू

कान्सू (१,२५,००० वर्ग मील, जन संख्या ६० लाख) प्रान्त प्रधान चीन में सब से कम आबाद है। कान्सू प्रान्त में पहाड़ उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पश्चिम को चले गये हैं। दक्षिणी भाग अत्यन्त पहाड़ी है। पूर्व और उत्तर पूर्व में उपजाऊ लोयस (हवा के साथ लाई हुई मिट्टी) का पठार है। उत्तरी भाग भी जंगली और निर्जन है। यह प्रान्त बहुत ही खुश्क और ठंडा है। इस प्रान्त में खेती की अपेक्षा भेड़ और गाय बैल पालने का काम अधिक होता है। उपजाऊ भागों में गेहूँ, ज्वार, बाजरा, कपास तम्बाकू और मटर की खेती भी होती है। ऊन और चमड़े का काम प्रसिद्ध है। इस प्रान्त में एक भी रेलवे नहीं है। गरमी में ह्वांग हो नदी की सहायक नदियों में कुछ दूर तक नावें चलती हैं। सरदी में बरफ पर फिसलाकर बेड़ा खींचा जाता है। लानचाओफू (५ लाख) राजधानी है। सिनचाओ, सीमिंगफू और ल्यांगचाओफू दूसरे प्रसिद्ध नगर हैं। इस प्रान्त में मुसलमान बहुत हैं। उत्तरी भाग में मंगोल लोग रहते हैं। इस प्रान्त की भाषा पश्चिमी मन्दरिन है।

पृष्ठ नम्बर १६

शांटंग

शांटंग (५६,००० वर्गमील जन-संख्या ३ करोड़, १० लाख) का पूर्वी और दक्षिणी भाग पहाड़ी है। पश्चिमी भाग में बड़ा मैदान है। ह्वांगहो नदी उत्तर-पूर्व की ओर बहती है। इस नदी में नावें नहीं चल सकतीं। इस नदी में अक्सर भयानक बाढ़ आती है। समुद्र तट कटा फटा है। सिंगताओ और चीफू बन्दरगाह हैं।

शांटंग प्रान्त में खेती बहुत बढ़ी चढ़ी है। गेहूँ, कपास, ज्वार, बाजरा, शोरगम, मटर, तम्बाकू, मकई, रेशम, फल, सन, अखरोट और तरकारी बहुत होती है। कोयला और लोहा यहां की प्रधान खनिज हैं। इनको निकालने का काम नये ढंग से होता है। कपड़ा बुनने, पुंगी रेशम तैयार करने और तिनकों की टोकरियाँ बुनने का भी काम होता है।

शाही नहर इस प्रान्त का प्रधान जल मार्ग बनाती है। ह्वांगहो नदी में कभी कभी देशी नावें चलती हैं। टियन्टसिन से पोकाओ और क्याओचाओ से सीनान को रेल गई है। प्रान्त में लगभग ५०० मील लम्बी मोटर चलने योग्य पक्की सड़क है।

सीनान (३ लाख) राजधानी और ट्रीटी पोर्ट है। इसे अपने आप ही चीनियों ने विदेशियों के लिये खोल दिया। चीफू, सोनिंग, सिंगताओ, वीसेन और तैआनफू दूसरे प्रसिद्ध नगर हैं। इनमें प्रत्येक की जन-संख्या ७५००० से ऊपर है। चीफू, सिंगताओ, सीनान, लुङ्काओ और वीहाइवी ट्रीटीपोर्ट हैं।

पृष्ठ नम्बर १८

चिह्ली

चिह्ली प्रान्त का क्षेत्रफल १,१६,००० वर्ग मील है जो हमारे संयुक्त प्रान्त से कुछ बड़ा है। लेकिन इसकी आवादी ३ करोड़ २० लाख है। चिह्ली प्रान्त का उत्तरी पश्चिमी भाग पहाड़ी है। इस प्रान्त का बड़ा मैदान गरमी की ऋतु में बड़ा उपजाऊ रहता है। मानसूनी हवायें फसल उगाने के लिये समय से पानी वरसाती हैं। शीतकाल अत्यन्त ठंडा होता है। नदियाँ बरफ से जम जाती हैं। स्थल की ओर से आने वाली आंधियाँ धूल से लदी रहती हैं।

सोरगम, ज्वार बाजरा, मकई, सोयाबीन, गेहूँ, मटर, कपास और सन यहाँ की फसलें हैं। फलों में अखरोट आदि कई फल होते हैं। गेहूँ अन्तिम वर्षा के बाद बोया जाता है और गरमी के आरम्भ में काटा जाता है। ऊँची जमीन में कपास अच्छी होती है।

इस प्रान्त में कोयला, चूने का पत्थर और नमक बहुत है। टियन्टसिन कारबारी नगर है। यहाँ बिजली तथा ऊन, जूट, रुई आदि बुनने का कारबार बहुत है।

कोयले की खानों, आटा की चक्कियों सूती ऊनी मिलों और सिगरेट के कारखानों, रेलवे की दुकानों पर विदेशियों का शासन है। वे नदी और शाही नहर में नावें चला करती हैं।

टियन्टसिन (१३ लाख) प्रधान बन्दरगाह और पेकिंग (८ लाख) राजधानी है। पाओतिनफू की जनसंख्या १ लाख से अधिक है। टियन्टसिन, कालगन, कैह्लाचांग, हूलूताओ, चिफेंग, डोलोनगर और चिनवांताओ प्रधान नगर हैं। यहाँ मंगोल और मंचू लोगों में तारतारी खून की अधिकता है। जो उत्तरी मन्दरिन भाषा बोलते हैं।

पृष्ठ नम्बर १९

शान्सी

शान्सी (८२,००० वर्ग मील, जन संख्या १ करोड़ १० लाख) लोयस मिट्टी का विषम पठार है। इसकी ऊँचाई २००० फुट से ४००० फुट तक है। कई पर्वत श्रेणियाँ पूर्व से पश्चिम को गई हैं। जहाँ पहले झीलें थीं वहाँ हवा ने मिट्टी ला ला कर उपजाऊ मैदान बना दिया है। इन्हीं उपजाऊ भागों में सबसे घनी आबादी है। शीतकाल बहुत ठंडा और ग्रीष्म में गरम रहता है। वसन्त और ग्रीष्म में वर्षा होती है। उपजाऊ लोयस मिट्टी में गेहूँ, ज्वार बाजरा, मकई, शोरगम, कपास, तम्बाकू, अखरोट, मटर, सरसों अंगूर और दूसरे फलों की उपज होती है। इस प्रान्त में बहुत ही बढ़िया कोयला और लोहा पाया जाता है। खेती करना और कोयला खोदना यहाँ का पेशा है। देशी लुहार प्रान्त भर में फैले हुए हैं। नये ढंग के कारखाने नहीं हैं। प्रान्त में सिंचाई की नहरों और रेलवे लाइनों की कमी है। फेन नदी में ४० मील तक कुछ महीनों में नावें चलती हैं। मैदान की गहरी लीकों में बैल गाड़ियाँ चलती हैं। हाल में कई अच्छी सड़कें बन गई हैं।

तैयुआनफू प्रान्त की राजधानी है। और रेल द्वारा पेकिंग-हांगकाओ लाइन से मिला हुआ है। क्वेह्लागित दूसरा बड़ा नगर है। प्रान्त के लोग मन्दरिन (चीनी) भाषा बोलते हैं।

पृष्ठ नम्बर २१
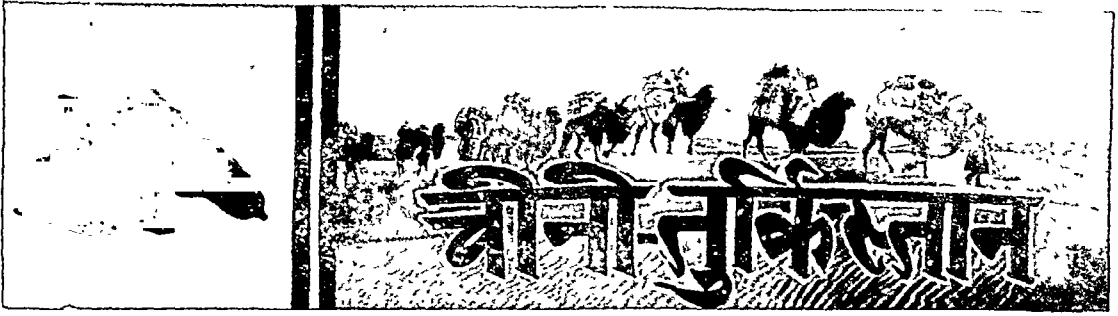
सिनक्यांग

सिनक्यांग (५,५००,०० वर्ग मील जन संख्या २५ लाख) एक विशाल रेगिस्तान है जो उत्तर और दक्षिण में ऊँचे ऊँचे पहाड़ों से घिरा हुआ है। उपजाऊ भाग कहीं कहीं नदियों के किनारे हैं। तरीम यहाँ की प्रधान नदी है। जहाँ सिंचाई हो जाती है वहाँ बढ़िया फसलें होती हैं। हामी का मरुद्यान (ओसिस) बड़ा उपजाऊ है। यहाँ जौ, जई, ज्वार बाजरा, और गेहूँ की खेती होती है। यहाँ के तरबूज चीन भर में प्रसिद्ध हैं। पहले वे यहाँ से पेकिंग को भी भेजे जाते थे। यहाँ की खनिज सम्पत्ति का अभी तक ठीक ठीक पता नहीं लग सका है। यहाँ जेड (बहुमूल्य पत्थर), निकाला जाता है। घोड़े, भेड़, बकरी, ऊँट और गधे बहुत पाले जाते हैं। क़ालीन, रेशमी कपड़े, जेड, नमदा, और खाल तैयार करने का काम होता है। इस ओर एक भी रेल नहीं है। प्राचीन ऐतिहासिक कारवाँ मार्ग भी अच्छी हालत में नहीं हैं। काशगर (६०,०००) यारकन्द (५०,०००) खोटा (३०,०००) उरुमशी (३०,०००) और तुरफान प्रधान नगर हैं।

पृष्ठ नम्बर २४

होनान

होनान का क्षेत्रफल ६८,००० वर्ग मील और जनसंख्या ३ करोड़ ९ लाख है। प्रान्त की पश्चिमी सीमा के पास पहाड़ियाँ हैं। शेष भागों में मैदान हैं। यहाँ जमीन उपजाऊ है। लेकिन ह्वांगहो नदी की बाढ़ का भय लगा रहता है। गरमी की ऋतु गरम होती है। इसी ऋतु में पानी बरसता है। सरदी की ऋतु खुश्क होती है तभी खूब जाड़ा पड़ता है। गेहूँ, सोरगम, सोयाबीन, ज्वार, बाजरा, तिल, मक्कई, धान कपास और मटर यहाँ की प्रधान उपज है। कपास की खेती बहुत बढ़ रही है। कोयला और लोहा अधिक है। खेती के बाद कोयला खोदना, ईंट पाथना और सूती कपड़ा बुनना ही यहाँ का कारबार है।

ह्वांग हो, ह्वै, और ची नदियों में केवल ह्वांग हो नदी के कुछ भागों में नावें चल सकती हैं। पेकिंग हांकाओ रेलवे उत्तर से दक्षिण को और लंग-है रेलवे पूर्व से पश्चिम को जाती है। कैफेंग प्रधान नगर (१ लाख से ऊपर) और राजधानी है। चेंगचाओ ट्रीटी पोर्ट और कारबारी नगर है। यहाँ की भाषा मन्दरिन (चीनी) है।

पृष्ठ नम्बर २२

मंगोलिया

मंगोलिया (१३ लाख ५० हज़ार वर्ग मील जन संख्या २५ लाख) एक विशाल तसले के आकार का तीन चार हज़ार फुट ऊँचा पठार है। यह ऊँचे पहाड़ों और लहरदार स्टेपी से घिरा हुआ है। बीच में ढाई लाख वर्ग मील का गोबी रेगिस्तान है। यहाँ अक्सर धूलभरी आँधियाँ चलती हैं। हवा खुश्क है। शीत काल में अत्यन्त अधिक जाड़ा पड़ता है। उत्तरी भाग को बाहरी मंगोलिया और दक्षिणी भाग को भीतरी मंगोलिया कहते हैं। देश के कुछ भागों में चरागाह हैं जहाँ भेड़ें और गाय बैल पाले जाते हैं। चारे की तलाश में लोग मारे मारे फिरते हैं। बहुत कम भागों में खेती होती है। पानी दस इंच से कम (८-१०) बरसता है। घास गेहूँ और ज्वार बाजरा की खेती होती है। मंगोलिया में सोना बहुत पुराने समय से निकलता रहा है। कोयला, लोहा, ताँबा, चाँदी, सीसा, और जस्ता मिलने की भी आशा की जाती है। ढोर और भेड़ चराने का प्रधान पेशा होने से ऊन और चमड़ा यहाँ की प्रधान उपज हैं। लिकोरिस और दवाइयाँ भी बनती हैं।

इस प्रदेश में एक भी रेलवे नहीं है। जलमार्गों का भी अभाव है। उर्गा (राजधानी) से एक रेलवे लाइन पेकिंग-कालगन लाइन तक खुलने वाली है। दस बारह विदेशी और चीनी मोटर कम्पनियाँ उर्गा और कालगन के बीच में मोटर चलाया करती हैं। सड़क अच्छी नहीं है। रास्ते में चार दिन लगते हैं। उर्गा से साइबेरिया को ऊँटों और बैलगाड़ियों का कारवाँ जाया करता है। उर्गा (३८,०००) राजधानी है। दूसरा नगर क्याख्ता है। प्रधान मंगोलिया में मंगोल लोग रहते हैं और मंगोली भाषा बोलते हैं। पश्चिम की ओर तुर्की फिरके और दक्षिण की ओर चीनी लोग रहते हैं।

पृष्ठ नम्बर २५
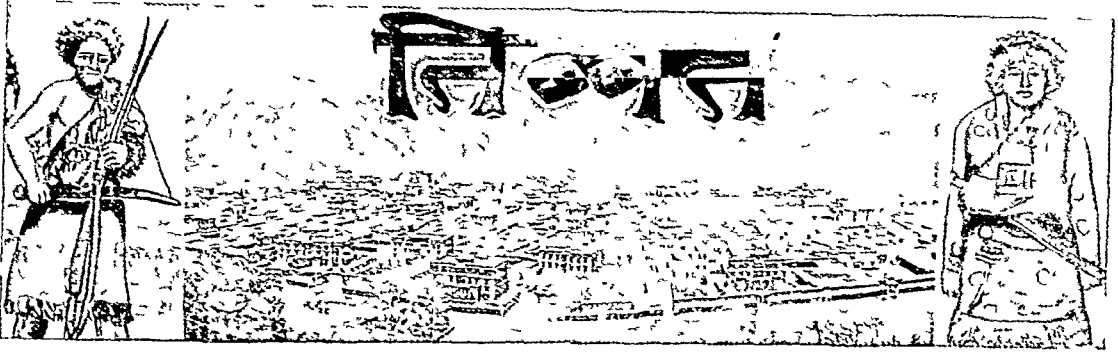
तिब्बत

तिव्वत (४६५ ००० वर्ग मील, जन संख्या ६० लाख) का वहुत बड़ा भाग पथरीला रेगिस्तान है। दक्षिण और पश्चिम की घाटियाॅं उपजाऊ हैं। इन में घनी वनस्पति है। चुम्बी नदी की घाटी सव से अधिक उपजाऊ है। तिव्वत का पठार दुनियाॅं भर मे सव से ऊँचा देश है। उत्तर और दक्षिण की ओर यह और भी अधिक ऊँचे पहाड़ों (उत्तर में क्विनलुन और दक्षिण में हिमालय) से घिरा हुआ है। इसी से यहाॅं पहुॅंचना दुर्गम है। उपजाऊ घाटियों में फल तरकारी, मकई, और जौ उगता है। चरागाह अधिक हैं। याक, गधे, भेड़ वकरी और घोड़े वहुत पाले जाते हैं। तिव्वत में खनिज पदार्थ वहुत है। सोना कई भागों में मिलता है। याक का चमड़ा, भेड़ की खाल मुश्क, सोने का वुरादा, ऊन, कम्वल, कालीन और औषधि यहाॅं की प्रधान सम्पत्ति है। तिव्वत में सड़कें वहुत कम हैं। जो हैं वे वड़ी खराव हैं। नदियों को रस्से के पुल से पार करना पड़ता है। कभी कभी याक की खाल की मशक वनाकर और उसका सहारा लेकर नदी को पार किया जाता है। सरकारी हरकारे दिन-रात वारी वारी से घोड़ों पर सवार होकर चलते हैं और एक महीने में पेकिंग से लासा पहुॅंच जाते हैं। लासा (४०,०००) प्रधान नगर और राजधानी है। यहाॅं आधे से अधिक लामा हैं। पर्व के अवसर पर यहाॅं यात्रियों की संख्या वहुत वढ़ जाती है। यातुंग ट्रीटी पोर्ट है। यहाॅं कुछ ही सौ लोग रहते हैं। दूसरे नगर और भी छोटे हैं। तिव्वती लोग वड़े हंसमुख मजवूत और संगीत प्रेमी होते हैं। उनकी भाषा तिव्वती है।

पृष्ठ नम्बर २६

---

३८ वे पेज का शेषांश

नगरों में मोटर सर्विस है। सरदी की ऋतु में मोटर सव कहीं जा सकते हैं। हार्विन में १ लाख विदेशी गोरे हैं। यह एशिया का एक ऐसा नगर है जिसमें गोरों की संख्या सव से अधिक है। इस नगर के गोरों में अधिकतर निवासी रूसी है। यहीं २ लाख चीनी रहते हैं। मुकडन राजधानी में २ लाख चीनी रहते है। दूसरे वड़े नगर डेरियन (१,८६,०००) और किरीन (१ लाख) हैं। चांगचुन, ऐगुन और न्यूच्वांग भी प्रसिद्ध शहर हैं। यहाॅं के ५ फीसदी निवासी चीनी हैं। इसी से उत्तरी मन्दरिन (चीनी भाषा) वोली जाती है। लेकिन शासन की वागडोर और वड़े वड़े कारवार जापानियों के हाथ में हैं इसलिये जापानी भाषा का प्रचार भी वढ़ रहा है।

पृष्ठ नम्बर १७, २०, २३
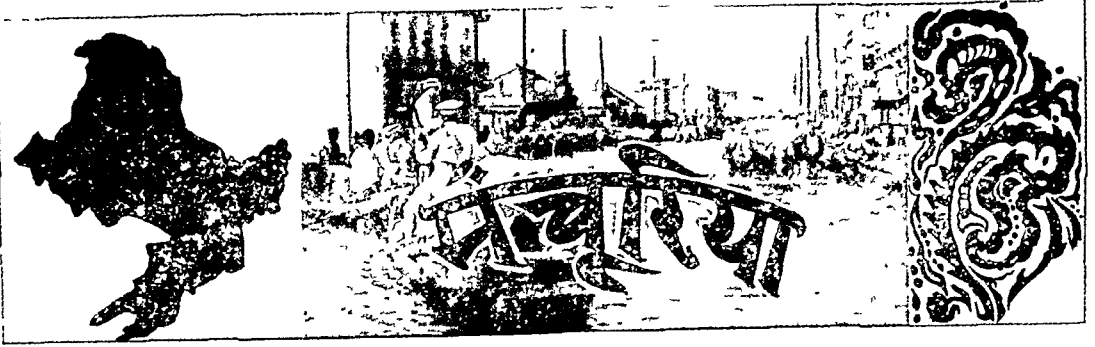
मंचूरिया

मंचूरिया (३,६५००० वर्ग मील जन संख्या २ करोड़ २० लाख) में शेंगकिंग (फेंगतिन), किरीन और हेलुंग क्यांग तीन प्रान्त हैं। उत्तरी भाग अधिक बड़ा है। यहाँ वन अधिक है। इसका ढाल अमूर नदी की ओर है। दक्षिणी भाग अधिक उपजाऊ और अधिक घना बसा है। इसका ढाल ल्याओतुंग की खाड़ी की ओर है। उत्तर में सुंगारी नदी के मैदान और दक्षिण में ल्याओ के मैदान में उत्तम फसलें होती हैं। कई भाग इस समय भी बिना जुते पड़े हैं। उपजाऊ पठार में दो दो गज ऊँची घास होती है। यहाँ की जलवायु स्वास्थ्यप्रद है। सरदी की ऋतु बहुत लम्बी और बड़ी ठंडी होती है।

मंचूरिया के कुछ भागों में खेती की जमीन दुनियाँ भर में सर्वोत्तम है। सोयाबीन, गेहूँ, ज्वार बाजरा, सोरगम और मकई की फसलें बहुत अच्छी होती हैं। रेशम के कीड़ों को सिन्दूर के पत्ते खिलाये जाते हैं। रेशम काफी तैयार होता है। नील, तिलहन और फल खूब होते हैं। जानवर भी बहुत पाले जाते हैं।

दक्षिणी मंचूरिया कोयले का एक विशाल क्षेत्र है। लोहा और सोना भी निकलता है। उत्तरी मंचूरिया में सोना, चाँदी, ताँबा, लोहा और सोडा मिलता है। सोना अमूर नदी की सहायक नदियों के पड़ोस में उत्तरी हेलुंग क्यांग में मिलता है। खेती के अतिरिक्त सोयाबीन से तरह तरह की खाने की चीजें बनाने, आटा पीसने, लकड़ी काटने और ढोर पालने में मंचूरिया के लोग लगे हुए हैं। रेशम, तम्बाकू, नमदा, खाल और लोहे कोयले के कारबार में बहुत सा धन लगा हुआ है। साउथ मंचूरियन रेलवे से दक्षिणी भाग में और चाइनीज ईस्टर्न रेलवे से उत्तरी भाग में बहुत सा कारबार बढ़ गया है।

अमूर नदी में मुहाने के पास बसे हुए निकोलेवस्क नगर से ब्लांगोवेस्चेन्स्क नगर तक बड़े बड़े स्टीमर चलते हैं। छोटे छोटे स्टीमर मुहाने से १५०० मील से कुछ अधिक दूर बसे हुए स्ट्रेटेन्स्क जाते हैं। मुहाने के पास रेतीले टीले की रुकावट होने के कारण पहले समुद्री जहाजों को अमूर नदी में ऊपर पहुँचने में बाधा पड़ती थी। लेकिन मिट्टी निकल जाने से आजकल समुद्री जहाज खाबरोव्स्क तक जा सकेंगे।

सुंगारी नदी में किरीन नगर तक, नोनी में शिशिहर तक, ल्याओ में तुङ्ग क्यांग्जी तक और याल्रू नदी के समूचे मार्ग में नावें चल सकती हैं। मुकडन शहर दक्षिण में पेकिंग और टियन्टसिन से उत्तर में हार्बिन और शिशिहर से, दक्षिण-पूर्व में पोर्टअर्थर और डेरियन से और पूर्व में अन्तुंग नगर से रेल द्वारा जुड़ा हुआ है। मंचूरिया होकर पेकिंग से याकोहामा और मास्को को रेलमार्ग गया है। चाइनीज ईस्टर्न रेलवे द्वारा हार्बिन चांगचुन से मिला हुआ है जो साउथ मंचूरियन रेलवे का अन्तिम उत्तरी स्टेशन है। पश्चिम की ओर मंचौली से (जो चीता रेलवे का अन्तिम स्टेशन है) ट्रान्ससाइबेरियन रेलवे को और पूर्व में उसूरी रेलवे के अन्तिम स्टेशन निकोल्स्क को रेल गई है। यहाँ से रेलवे प्रशान्त महासागर के किनारे व्लाडीवोस्टक को चली गई है। चाइनीज ईस्टर्न रेलवे की इक्सप्रेस गाड़ियां दुनियाँ भर में सर्वोत्तम गिनी जाती हैं। हार्बिन और उत्तरी मंचूरिया के दूसरे

शेष पृष्ठ ३७ पर देखिये

चीन देश के समय समय पर बदलने वाले

राजनैतिक मानचित्र

तीन राज्य
पैमाना १:४०,०००,०००
वी
लोयांग
सू
सांगयांग
चेंगटू
चिपी
कयांगलिन
वू
चेनयो
चयाओची
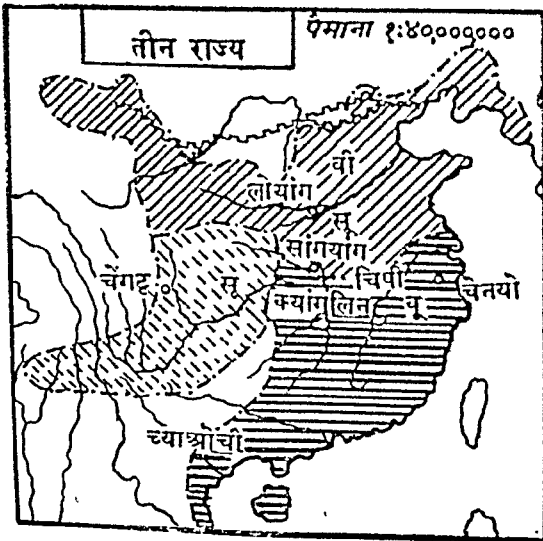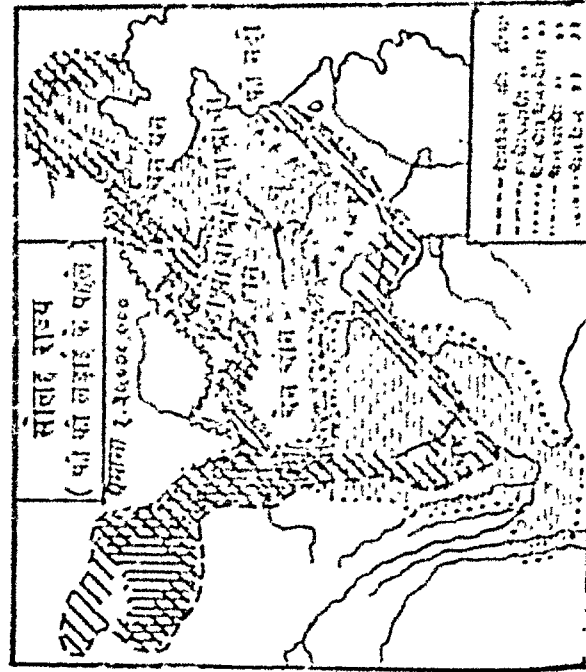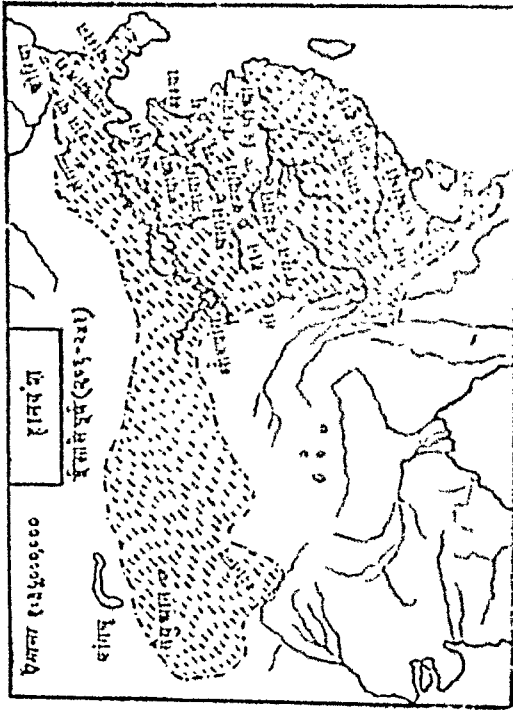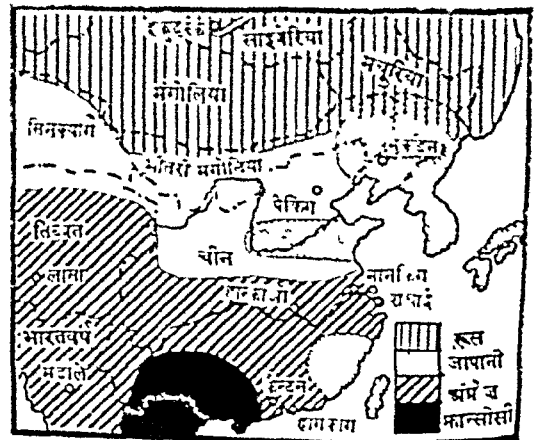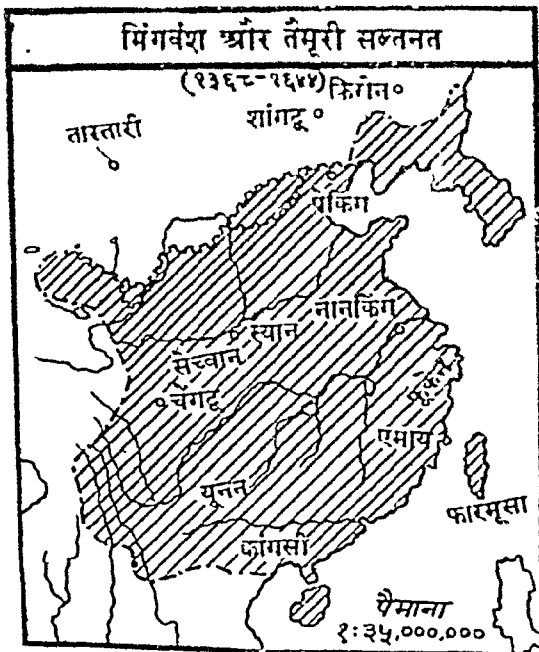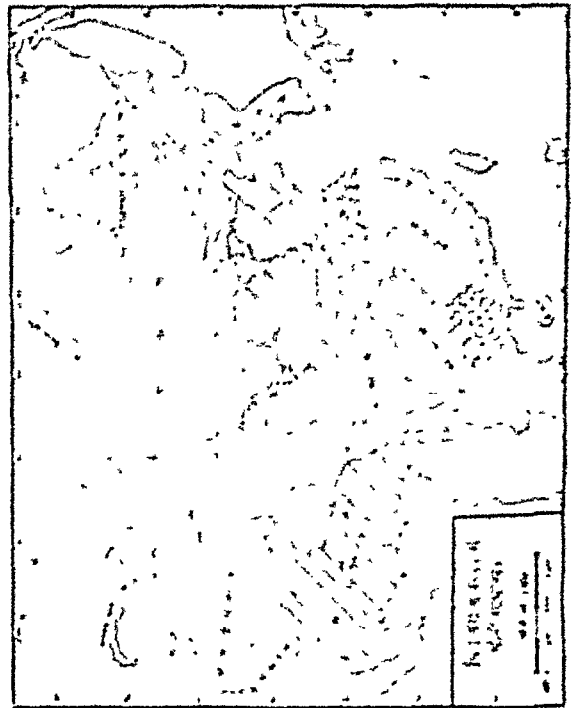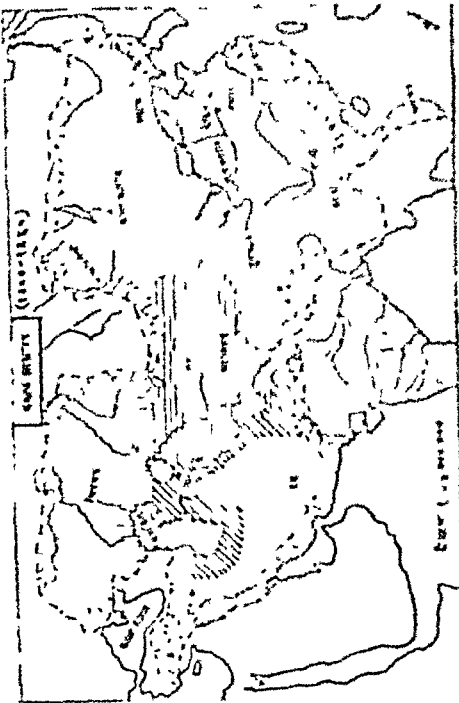
चीन में विदेशी प्रभाव के क्षेत्र

चीनी इतिहास की प्रमुख घटनायें

ईसा से पूर्व २३५६ याओ राजा गद्दी पर बैठा
२२०५ स्या वंश की स्थापना
१७६६ शांग वंश „ „
११२२ चाओवंश „ „
६०५ लाओजू का जन्म
५५१ कनफ्यूशस का जन्म
४७९ कनफ्यूशस की मृत्यु
३७२ मेन्शस का जन्म
२४९ चाओवंश का अन्त
२१२ कनफ्यूशस सम्बन्धी साहित्य जलाया गया
२०४ बड़ी दीवार बनकर समाप्त हुई।
२०२ हानवंश की स्थापना
ईस्वी ६५ बौद्ध धर्म का आगमन
२२१ तीन राज्य। चीन की प्रथम गुप्त समिति
५८९–सुईवंश
६१८ तांगवंश की स्थापना और इस्लाम धर्म का प्रवेश
६३५ नेस्टोरियन ईसाइयों का आगमन
९०७—पांत्ववंश की स्थापना
९६० सुग वंश „ „
१२७५ मार्को पोलो चीनी राजधानी में पहुँचा
१२८० मंगोल वंश की स्थापना
१३६८ मिंग वंश की स्थापना
१५१६ पुर्तगाली लोग चीन में आये।
१५५७ पुर्तगाली लोग मकाओ में बस गये।
१६०१ रिक्सी पेकिंग में पहुँचा
१६३७ प्रथम ब्रिटिश जहांज केन्टन में आ लगा।
१६४४ रूसी लोग पहली वार अमूर की घाटी में आये।
१६८९ रूस और चीन के वीच में पहली सन्धि हुई।
१७२० चीनी कोहांग या एकाधिकार (monopoly) का केन्टन में संगठन।
१७२९ अफीम न पीने की सरकारी आज्ञा
१७३३ चीनी राजदूत सेंटपीटर्स वर्ग (रूस की राजधानी) को भेजा गया।
१७८४ प्रथम अमरीकन जहाज़ केन्टन में आ लगा
१७९३ ब्रिटिश राज दूत पेकिंग में आया।
१७९६ अफीम निषेध की घोषणा।
१८०० अफीम लाने का निषेध
१८०७ प्रथम ईसाई प्राटस्टेन्ट मिशन केन्टन में आया।
१८१६ एम्हर्स्ट (राजदूत) पेकिंग में आया।
१८३४ ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के निरंकुश व्यापार (मानोपली) का अन्त
१८३९ चीनी कमिश्नर ली ने चोरी से लाई हुई अफीम को पकड़ कर जलवा दिया।
१८४० ब्रिटिश ने केन्टन को घेर लिया
१८४२ चीन और ब्रिटेन की (नानकिंग की) सन्धि
१८४३ ब्रिटिश व्यापारिक सन्धि। शंघाई का द्वार विदेशी व्यापार के लिये खोल दिया गया
१८४४ अमरीका और चीन की सन्धि
१८४९ पुर्तगाली लोगों ने चीनी चुंगी विभाग को मकाओ शहर से भगा दिया
१८५१ तैपिंग विद्रोह का आरम्भ
१८५ तैपिंग लोगों ने नानकिंग पर अधिकार कर लिया।
१८५४ शंघाई के चुंगीघर में विदेशी प्रबन्ध
१८५६ लोर्चा की घटना
१८५७ अँग्रेज़ों और फ्राँसीसियों ने केन्टन पर अधिकार कर लिया।
१८५८ टियन्टसिन की सन्धियों पर ब्रिटिश अमरीकन, रूसी और फ्रांसीसियों ने हस्ताक्षर किये

१८५९ ताकू में अँग्रेजों और फ्रांसीसियों की हार।

१८६० अँग्रेज और फ्रांसीसियों ने पेकिंग ले लिया।

१८६४ तैपिंग विद्रोहियों को हरा कर शाही सेना ने नानकिंग फिर ले लिया।

१८६६ इलाई में मुसलमानी विद्रोह।

१८६७ फ्रांसीसियों ने कोचीन चीन के तीन प्रान्त मिला लिये। अमरीकन लड़ाकू जहाज कोरिया में आया।

१८७१ रूसी लोगों ने कुल्जा ले लिया।

१८७५ क्वांगसू सम्राट घोषित किया गया।

१८७६ जापानी बेड़ा कोरिया पर चढ़ आया। शंघाई-वूसुंग रेलवे का आरम्भ।

१८७७ चीनियों ने इस रेलवे को मोल लेकर नष्ट कर दिया। प्रथम चीनी राजदूत लन्दन पहुँचा।

१८७८ मुसलमानी विद्रोह दबा दिया गया। प्रथम चीनी राजदूत अमरीका पहुँचा। कैपिंग की कोयले की खानों से कोयला निकलने लगा। चुंगी विभाग ने अपना पोस्ट आफिस खोल लिया।

१८८० अमरीका और चीन की व्यापारिक सन्धि। तार घरों की मंजूरी।

१८८१-शंघाई-टियन्टसिन तार की लाइन तैयार हो गई।
रूसियों ने कुल्जा और इलाई प्रदेश लौटा दिया।

१८८२ अमरीका और कोरिया की सन्धि।

१८८३ अनाम पर फ्रांसीसियों ने अपना संरक्षण घोषित कर दिया।

१८८४ अनाम के लिये चीनी-फ्रांसीसी लड़ाई।
सिउल (कोरिया) में चीनी जापानी लड़ाई।

१८८५—टियन्टसिन में चीन-जापान की सन्धि और फ्रांस से सन्धि।

१८८६ बरमा और तिब्बत के सम्बन्ध में ब्रिटेन और चीन की सन्धि।

१८८७ सीमा प्रान्तीय व्यापार सम्बन्धी फ्रांस और चीन की सन्धि।

१८८७ पुर्चगीज़ ने चीन से सन्धि कर के मकाओ शहर ले लिया।

१८८८ लेंगशान से टियन्टसिन को रेल खुली।

१८९० सिकम और तिब्बत के सम्बन्ध में ब्रिटेन और चीन की सन्धि।

१८९१ ईसाई मिशनरियों के विरुद्ध यांगज़ी घाटी में दंगे।

१८९४ चीनियों को दस वर्ष तक अमरीका न भेजने के सम्बन्ध के अमरीका और चीन की सन्धि।
कोरिया में तोंगहाक का विद्रोह।
यालू नदी के किनारे चीन-जापान युद्ध।

१८९५—जापान से शिमोनोसेकी की सन्धि। रूस, फ्रांस और जर्मनी ने ल्याओटंग प्रायद्वीप लौटाने के लिये जापान को विवश किया।

१८९६ चाइनीज़ ईस्टर्न रेलवे के सम्बन्ध में रूस और चीन की सन्धि।

१८९७ शांगटंग में दो जर्मन मिशनरियों की हत्या। जर्मनों ने सिंगटाओ छीन लिया।

१८९८—जर्मनी ने ९९ वर्ष के लिये क्याओचाओ का पट्टा लिखा लिया। रूस ने २५ वर्ष के पट्टे पर क्वांगटंग प्रायद्वीप को ले लिया।
फ्रांस ने क्वांगचाओवान छीन लिया। ब्रिटेन ने वीहाइवी को पट्टे पर ले लिया।
महारानी डोवोजर ने सम्राट को क़ैद कर शासन की बागडोर अपने हाथ में ली।

१८९९ यांगज़ी घाटी में ब्रिटिश प्रभाव और मंचूरिया में रूसी प्रभाव स्था-

पित करने के लिये रूस और ब्रिटेन की सन्धि।
बाक्सर विद्रोह

१९०० विदेशी राजदूतों (शक्तियों) की फौज पेकिंग को भेजी गई। विदेशी फौज ने ताकू के क़िले ले लिये।

१९०१ पेकिंग की सन्धि।

१९०२ एंग्लो-जापानी सन्धि।

१९०३ ब्रिटिश फौज ने तिब्बत पर चढ़ाई की।

१९०४ रूस-जापान युद्ध।

१९०५ पोर्ट्समथ में रूस और जापान की सन्धि।
ब्रिटेन और जापान की मित्रता सम्बन्धी सन्धि।
चीन ने मंचूरिया के रूसी अधिकार जापान को सौंप दिये।

१९०६ तिब्बत के सम्बन्ध में ब्रिटेन और चीन की नई सन्धि।
अफीम का प्रयोग न करने के सम्बन्ध में चीनी सम्राज्ञी की घोषणा।

१९०७ तिब्बत के सम्बन्ध में एंग्लो-रूसी सन्धि।

१९०८ चीन के सम्राट और साम्राज्ञी की मृत्यु।

१९०९ शासन सुधार के बाद प्रान्तीय सभाओं की प्रथम बैठक।

१९१० क्षणिक राष्ट्रीय सभा की बैठक।

१९११ वूचांग में क्रान्ति का अरम्भ। बाहरी मंगोलिया ने स्वाधीनता घोषित कर दी।

१९१२ मांचू राजवंश का सिंहासन त्याग। सनयात सेन दक्षिणी चीन के प्रथम राष्ट्रपति हुए।

१९१३—युआन शिकाई राष्ट्रपति हुये। अमरीका ने चीन के प्रजातन्त्र राज्य को स्वीकार कर लिया।

१९१४—जापान ने जर्मनी से क्याओ चाओ मांगा। ब्रिटेन और जापान ने सिंगटाओ ले लिया।

१९१५ जापान ने अपनी २१ मांगें चीन के सामने पेश कीं। चीन ने इस सम्बन्ध में सन्धि कर ली।
युआन ने सम्राट बनने का प्रयत्न किया।

१९१६ दक्षिणी प्रान्तों में विद्रोह। युआन की मृत्यु

१९१७ अमरीका ने जर्मनी से सम्बन्ध तोड़ने के लिये चीन को आमन्त्रित किया। चीन ने जर्मनी से लड़ाई छेड़ दी। शांगटंग के सम्बन्ध में जापान, फ्रांस, रूस और ब्रिटेन की गुप्त सन्धि।

१९१८ शांगटंग के सम्बन्ध में चीन जापान की गुप्त सन्धि।

१९१९ बड़ी लड़ाई के बाद चीनी प्रतिनिधि सन्धि परिषद के लिये वर्सेल्स भेजे गये।

१९२२ शांटंग के सम्बन्ध में चीन जापान की सन्धि। वाशिंगटन में चीन की स्वाधीनता और साम्राज्य को अविछिन्न रखने के लिये नौ शक्तियों की सन्धि।

१९२३ केन्टन बन्दरगाह में अन्तर्राष्ट्रीय फौजी बेड़े का प्रदर्शन

१९२४ ह्वांगपोआ मिलीटरी एकडेमी की स्थापना।

१९२५—सनयात सेन की मृत्यु। चीनी राष्ट्रीयता और ब्रिटिश साम्यवाद की मुठभेड़। हांगकांग का बहिष्कार।

१९२६ बहिष्कार उठा लिया गया।

१९२७ चीन की राष्ट्रीय सरकार ने हांकाओ के ब्रिटिश कन्सेशन पर अधिकार कर लिया। ब्रिटिश फौज का शंघाई में आगमन। केन्टन में साम्यवादी विद्रोह।

१९२८—विद्रोही सेना और जापानी सेना में मुड़भेड़। राष्ट्रीय सेना का पेकिंग में प्रवेश। नानकिंग राजधानी बना

चीन और बेल्जियम की मित्रता सम्बन्धी सन्धि।

१९२९ मंचूरिया में नानकिंग का शासन प्रबन्ध।।

१९३०–नानकिंग सरकार ने चीन से इक्स्ट्रा-टेरिटोरियल' (विदेशी) न्याय विभाग उठाने की घोषणा की।

१९३२ मुकडन में प्रान्तीय सरकारों का सम्मेलन।

१९३३ चीन-जापान युद्ध। मंचूकूओ राज्य (जापानी संरक्षण में) की स्थापना। जेहोल प्रान्त में जापानी आक्रमण।

१९३५ जापान ने उत्तरी चीन में होपे, शांटंग, शांसी और चाहार को मिलाकर एक स्वतन्त्र राज्य स्थापित करने का प्रयत्न किया।

१९३७ जुलाई में जापान ने फिर चीन पर आक्रमण किया। उत्तरी चीन और नानकिंग पर जापानी फौज का अधिकार। चुंगकिंग चीन राष्ट्र की क्षणिक राजधानी बना।

चीन और हिन्दुस्तान का सम्पर्क

६५ ईस्वी में चीन के राजा मिंग ती ने बौद्ध धर्म का सन्देश लाने के लिये भारतवर्ष को राजदूत भेजे। यह राजदूत अपने साथ कश्यप मातंग और धवरकेह नाम के दो भारतीय विद्वानों और कई ग्रन्थों को ले आये। कश्यप मातंग ने ४२ खंडों के एक छोटे से सूत्र ग्रन्थ का चीनी भाषा में अनुवाद किया, इस से चीन देश में बौद्ध धर्म का प्रचार बहुत तेजी से बढ़ने लगा, जिस सफेद घोड़े पर लदकर भारतवर्ष से धर्म ग्रन्थ लाये गये थे। उसी के नाम से चीन में पहला मन्दिर बना। दोनों भारतीय पुजारी इस मन्दिर में रह कर मरने के समय तक ग्रन्थों का अनुवाद और धर्म प्रचार का काम करते रहे। इस समय दक्षिणी (लंका) बौद्धों के ग्रन्थ पाली भाषा में होने लगे। उत्तरी बौद्धों के ग्रन्थ संस्कृत भाषा में थे। कश्यप मातंग उत्तरी भारत के सम्प्रदाय के थे। इसलिये इनके साथ अधिकतर ग्रन्थ संस्कृत भाषा के थे। ३३५ ईस्वी में राजा चाओ की ओर से घोषणा हुई कि जो चाहे वह श्रमन (बौद्ध) बन सकता है। तारतारी लोग पहले ही से बौद्ध बन चुके थे। इस घोषणा से प्रधान चीन में भी बौद्धों की संख्या बढ़ने लगी। उत्तरी चीन में लगभग ९० फीसदी लोग बौद्ध हो गये। ४०५ ई० में भारत वर्ष का प्रसिद्ध भिक्षु कुमारजीव चीन में पहुँचा। यह नानलू के कौतुजी राज्य में ठहरे हुए थे। इनको लाने के लिये चीन के राजा ने नानलू पर चढ़ाई की। कुमारजीव ने कई बौद्ध ग्रन्थों का अनुवाद और सम्पादन किया। एक शास्त्र भी चीनी भाषा में लिखा। बुद्धिधर्म जलमार्ग से केन्टन पहुँचे। इनके बारे में गाथा है कि एक दीवार के सामने मुँह करके वे ९ वर्ष तक बैठे रहे। ६ ठीं सदी के बाद बहुत से भारतीय भिक्षु चीन में प्रचार करने के लिये आये। भारतीय मिशनरियों की चीन में बाढ़ ही आने लगी। फिर कई चीनी भी भारतवर्ष में तीर्थ यात्रा करने के लिये गये।

चीनी इतिहास के कुछ चित्र

चीन के प्रसिद्ध सम्राट ह्वांगती का योग्य सेनापति सांगची। सांगची ने छः प्रकार की लिपि का आविष्कार किया।

सम्राट शुन का त्याग भरत के समान है। जब याओ सम्राट की मृत्यु हो गई तो शुन ने राजगद्दी पर बैठने से इनकार कर दिया। २ वर्ष तक उन्होंने शोक मनाया। अन्त में प्रजा के बहुत कुछ कहने पर सिंहासन ग्रहण किया। बाढ़ को रोकने के लिये उन्होंने इंजीनियर नियुक्त किये। जो विफल हुआ उसे फाँसी दी। लेकिन यू ने नदियों की तली को गहरा किया और बाँध बनाये। ८ वर्ष के निरन्तर परिश्रम के बाद यू (इंजीनियर) को सफलता मिली। शुन ने प्रसन्न होकर यू को अपना उत्तराधिकारी

सम्राट शुन।

बनाया। शुन ने ४७ वर्ष तक राज्य किया। याओ और शुन का शासनकाल चीनी इतिहास में स्वर्ण युग समझा जाता है।

जब सम्राट शुन २३ वर्ष राज्य कर चुका तो उसने यू की योग्यता से प्रसन्न होकर उसे अपना समान अधिकारी बना लिया। यू ने बाढ़ से तो देश को बचा ही लिया था। वह प्रजा से मिलने का बड़ा इच्छुक था।

सम्राट यू (ईसा से पूर्व २२०५ से २१९७ तक)

उसने राज द्वार पर एक ढोल और एक घण्टा रखवा लिया था। घन्टा बजाते ही आवश्यक काम से मिलने वालों को भीतर जाने की आज्ञा मिल जाती। इससे यू को अक्सर दोपहर का भोजन देरी से करना पड़ता था। सम्राट यू ने स्या राजवंश की नींव डाली।

तांग वंश का अमर प्रधान मन्त्री यिन।

जब सम्राट तांग का लड़का सम्राट होने पर बिगड़ने लगा तो यिन ने उसे गद्दी से उतार दिया। २ वर्ष में जब वह सुधर कर फिर आया तब यिन ने उसे राजा बना दिया। ह्वांग हो की बाढ़ से बचने के लिये राजधानी यिन स्थान में बनाई गई। इससे नाम यिन राजवंश पड़ गया।
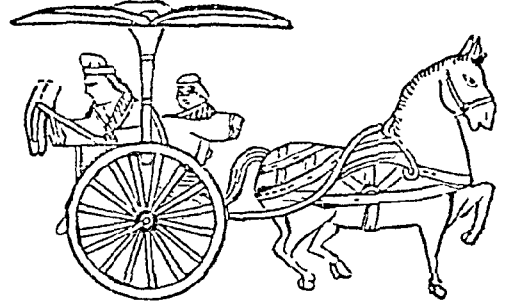
चीनी रथ।

रथ प्राचीन चीनी सेना का प्रधान अङ्ग था रथ लकड़ी और चमड़े के बनते थे। ईसा पूर्व १७९७ से चीनी रथों का उल्लेख मिलता है।

महात्मा कन्फ्यूशस

उत्तर की असभ्य जातियों को बाहर रखने के लिये सम्राट ने १५०० मील लम्बी बड़ी दीवार
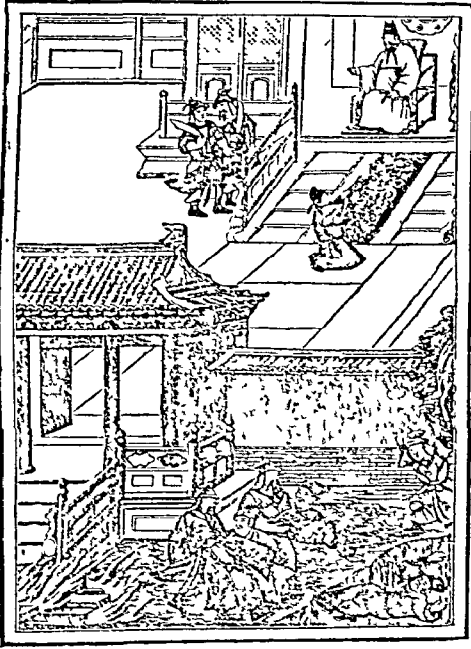
चीन राजवंश के विख्यात सम्राट चिङ्ह्वांगती का राजदरबार।

बनवाई। ईसा से पूर्व २०६ में चीन वंश का अन्त हो गया। चीन वंश के बाद हानवंश के राजा हुए।

हान राजवंश के समय का पीतल का दर्पण।

ता य्वेह ने अपना अलग राज्य स्थापित करने की कोशिश की। ईसा से १२७ वर्ष पूर्व चीनियों ने आर्डोस जीत कर शुओफांग (उत्तरी प्रदेश)

ता य्वेह ती के सिक्के।

की नींव डाली। इस समय सिन्ध (हिन्दुस्तान) से कपड़ा आदि कई चीजें यहाँ आती थीं। सिक्के पर भी हिन्दुस्तानी छाप है।

स्युङ्गनू और सेन पे की मुहरें।

जब चीन छोटे छोटे राज्यों में बँटने लगा तब उत्तर में स्युङ्गनू वंश उन्नति के शिखर पर पहुँच रहा था।

तांग ताई सुङ्ग।

सुंग वंश के समय का लड़ाका जहाज़।

यांग्ज़ी की लड़ाई में चीनी लोग इन जहाज़ों की सहायता से अपने शत्रुओं को दूर रखते थे।

दुनिया को दहलाने वाला चिंगेज।

चीन को जीतकर मंगोल कराकोरम से पश्चिमी एशिया कीओर बढ़ा। खलीफा मुहम्मद ने ४ लाख सिपाही उसे रोकने के लिये भेजे। इन में डेढ़ लाख से ऊपर खेत रहे। शेष तितर बितर हो गये। चिंगेज़ का साम्राज्य योरुप से लेकर प्रशान्त महासागर तक फैल गया।
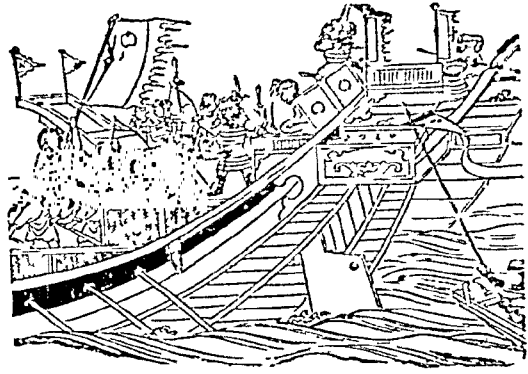
मंगोलों का जहाज़ी बेड़ा

मंगोलों की फौजी ताकत इतनी बढ़ी कि उनका एक जहाजी बेड़ा चीन तट के उस पार जापान पर हमला करने गया।

सम्राट कुबलई।

सम्राट कुबलई ने अपने विशाल साम्राज्य की राजधानी कराकोरम से बदल कर पेकिंग में बनाई।

युआन वंश के समय की बारूद ढोने की विशाल

वैल गाड़ी। इसे ढोने के लिये कई जोड़े वैल जोते जाते थे।
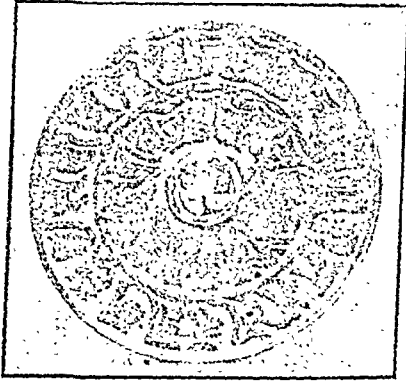
युआन वंश के समय का चीनी दर्पण।

इस दर्पण पर संस्कृत का लेख खुदा हुआ है। इस से सिद्ध होता है कि चीन देश में संस्कृत का कितना प्रचार हो गया था।

तैमूर का मक़बरा।

चिंगेज़ के मरने के बाद उसके सम्बन्धी आपस में लड़ने लगे। लेकिन तैमूर लंग ने उन सब को मिला लिया। हिन्दुस्तान से सफल होकर लौटने पर उसने चीन पर चढ़ाई करने की सोची। लेकिन १४०५ में वह ओतरा शहर में मर गया।

मिंग राजा बड़े उन्नत थे। जिस तरह आज कल सोने-चाँदी के सिक्कों के साथ काग़ज के सरकारी नोट
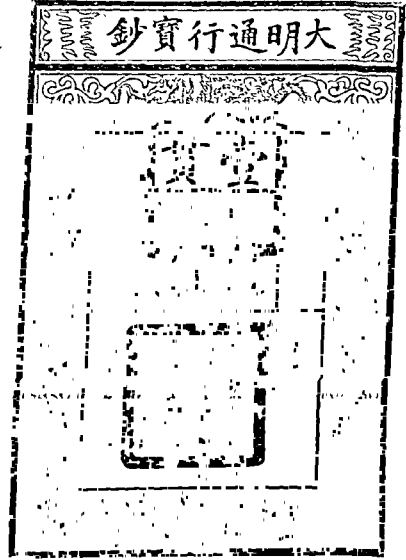
मिंगवंश के समय का काग़ज़ी नोट।

चलते हैं उसी तरह चीन के मिंग राजाओं ने भी काग़ज़ी नोट चलाये।

प्रथम तारतारी सम्राट के दरबारी लोग।

सम्राट चेनलुंग-१७३५ ई० में चीन की गद्दी पर बैठा। उसने ६० वर्ष तक राज्य किया। सब से पहले

सम्राट चेनतुङ्ग।

उसने चीनी तुर्किस्तान को जीता। फिर और प्रदेश जीते। उसके समय में चीनी साम्राज्य का विस्तार सब से अधिक हो गया।

सेंगकुओ पान।

चीन में विदेशियों की छेड़खानी से चीन के कई भागों में अराजकता छा गई। दक्षिण की ओर तैपिंग विद्रोह उठ खड़ा हुआ। इनका धार्मिक विश्वास कुछ कुछ प्राटेस्टेंट ईसाइयों से मिलता जुलता था। इन्होंने विद्रोह से पहले अच्छा संगठन कर लिया। इनकी फौज में ६ लाख मर्द और ५ लाख स्त्रियाँ थीं। इनके विद्रोह को दवाने के लिये वृद्ध सेंगकुओपान ने स्वयं सेवकों की फौज संगठित की। इस काम में उन्होंने बड़ी वीरता और कार्य कुशलता दिखलाई।

ली हुँग चान।

ली हुँग चान ने तैपिंग विद्रोह को दवाने के लिये दूसरी स्वयं सेवक सेना इकट्ठी की। इस सेना को शंघाई और दूसरे स्थानों में अपूर्व सफलता मिली।

मांचू वंश की अन्तिम शासक साम्राज्ञी ज़ सी

संसार में चीन का आर्थिक स्थान

संसार में अंडों की उपज (१० लाख दर्जन)

संसार में चावल की उपज

संसार के प्रधान देशों के गाय बैल

संसार में रेशम की उपज

Published by the Editor (Pt. Ram Narain Misra, B. A.) and Printed by Sheopal at the Bhugol Press, 306, Jamuna Road, Allahabad.

१५, सख्या ११

March 1939

गंगा-एटलस

सम्पादक

रामनारायण मिश्र, बी० ए०

प्रकाशक:—

देश-दर्शन पर दिल्ली के प्रतिष्ठित पत्र अर्जुन का सम्मति

देश दर्शन (लंका)

सम्पादक—श्री रामनारायण मिश्र, भूगोल कार्यालय, इलाहाबाद। वार्षिक मूल्य ४) । इस अङ्क का मूल्य ।≈)

श्रद्धेय रामनारायण जी ने हिन्दी साहित्य के एक महत्वपूर्ण अङ्ग की पूर्ति जिस सुन्दर ढङ्ग से की है, वह न केवल हिन्दी की दृष्टि से अद्भुत है, वरन् अन्य भारतीय भाषाओं के लिये भी अनुकरणीय है। आज की दुनिया में ईश्वर, आत्मा आदि दार्शनिक विचारों की अपेक्षा भौगोलिक ज्ञान हमारी मौलिक उन्नति के लिये कहीं अधिक आवश्यक हो गया है। रेल, जहाज, तार, वायुयान आदि के युग में जब सारा संसार ही हमारा निकट पड़ोसी हो गया है, तब संसार के राष्ट्रों, उनकी भौगोलिक स्थिति, उनके रहन सहन, धर्म, उनके व्यापार, व्यवसाय या अन्य विशेषताओं के बारे में हमारा ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक हो जाता है। यों तो भूगोल पत्र से यह कार्य हो ही रहा है, लेकिन प्रत्येक देश पर अलग-अलग पुस्तक के रूप में यह देश-दर्शन नाम से एक माला चलाने का प्रयत्न बिलकुल नया है।

प्रस्तुत अङ्क इस माला का प्रथम अङ्क है। इसमें लंका का वर्णन है। भाषा और लेखन शैली सरल और मनोरंजक, टाइप बड़ा (ग्रेट पायका) जिससे बच्चे भी मजे में पढ़ सकें और चित्रों की भरमार— ये इस पुस्तक की विशेषतायें हैं। १४४ पृष्ठ की पुस्तक में ७०-८० चित्र और अधिकांश चित्र पूरे पृष्ठ के। फिर भी मूल्य सिर्फ ।≈), वार्षिक ग्राहक को तो इससे भी कम। इन चित्रों में लंका के रहन-सहन, वेषभूषा, गहने, ऐतिहासिक स्मारक, दर्शनीय स्थान, मेले, खेल, सिक्के आदि सभी प्रकार के चित्र दिये गये हैं। लेखक जिन देशों की स्वयं यात्रा कर आये हैं, उन्हीं बहुत से देशों का पहले वर्णन होगा इसलिए वर्णन में सजीवता का आना स्वाभाविक है। प्रत्येक मास एक देश का वर्णन घर बैठे मिल जायगा।

हम प्रत्येक हिन्दी-भाषी, पुस्तकालय व स्कूलों से विशेष अनुरोध करते हैं कि वे इसके ग्राहक बनकर अपने ज्ञान को अवश्य बढ़ावें।

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१—गौमुख से उत्तर काशी तक	२
२—उत्तर काशी से देवप्रयाग तक ...	३
३—केदारनाथ से देवप्रयाग तक (केदारनाथ से रुद्र प्रयाग तक मन्दाकिनी, नागरासू से देवप्रयाग तक अलकनन्दा) ...	४
४—बद्रीनाथ से नागरासू तक (अलकनन्दा)	५
५—देवप्रयाग-हरिद्वार-रुड़की ...	६
६—रुड़की-बिजनौर-मुजफ्फर नगर ...	७
७—मेरठ-गढ़मुक्तेश्वर ...	८
८—गढमुक्तेश्वर से अनूपशहर तक ...	९
९—अनूपशहर से कछला तक ...	१०
१०—कछला से भौपूर चौरासी तक ...	११
११—भौपूर चौरासी से कन्नौज तक ...	१२
१२—कन्नौज से कानपूर तक ...	१३
१३—कानपूर से डालामऊ तक ...	१४
१४—डालामऊ से सँजैतीघाट (जिला इलाहाबाद) ...	१५
१५—इलाहाबाद सँजैतीघाट से कुसौंधम किले तक	१६
१६—कुसौंधम किले से चुनार किले तक ...	१७
१७—चुनार से गाजीपूर तक ..	१८
१८—गाजीपूर से हल्दी तक ...	१९
१९—हल्दी से सैयदपूर तक ...	२०
२०—सैयदपूर से नवडीहघाट तक ...	२१
२१—नवडीहघाट से मुँगेर तक ...	२२
२२—मुँगेर से सैयदपूर बरका तक ...	२३
२३—सैयदपूर बरका से राजमहल तक ...	२४
२४—राजमहल से भगवान गोला तक ..	२५
२५—भगवान गोला से नूरपूर तक ...	२६
२६—नूरपूर से सिबले तक ...	२७
२७—सिबले से मुन्शीगञ्ज (तहसील) तक ...	२८
२८—गङ्गा, मेघना, ढोलेश्वरी, बूड़ी गङ्गा, और गोमती के संगम ...	२९
२९—गङ्गापूर से बानेहपूर तक ..	३०
३०—बनेहपूर से बंगाल की खाड़ी तक ..	३१
३१—जङ्गीपूर से प्लासी तक ..	३२
३२—प्लासी से बालागढ़ तक ...	३३
३३—बालागढ़ से मायापूर तक ...	३४
३४—मायापूर से हल्दी संगम तक ...	३५
३५—काशीनारा से गङ्गा सागर तक	३६
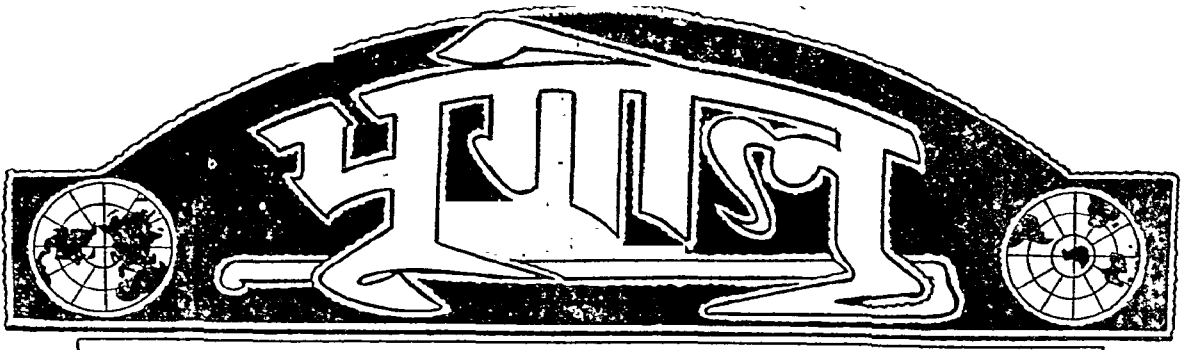
यह पत्र संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, वरार, विहार, उड़ीसा, पंजाब प्रान्त तथा ग्वालियर, जैपुर, जोधपुर और कोटा राज्य के शिक्षा-विभाग द्वारा हाई, नार्मल और मिडिल स्कूलों प्रयोग होने के लिये स्वीकृत है।

वर्ष १५] चैत्र सं० १९९६, मार्च १९३९ [सं० ११

गंगा-एटलस

गंगा-अंक के नक़शे समय से तयार न हो सके थे और गंगांक के साथ न जा सके। अतः अब यह नक़्शे गंगा-एटलस के रूप में पाठकों की सेवा में भेजे जा रहे हैं। गंगा के उद्गम से गंगा-सागर तक गंगा-तट के समीप में इतने स्थान पड़ते हैं कि उन सब को एक बड़े नक़शे में भी दिखलाना कठिन हो जाता। इसी लिये गंगा के प्रवाह प्रदेश को अलग अलग ३५ भागों में बाँट दिया गया है। आरम्भ के पहाड़ी प्रदेश में नगरों की संख्या कम है।लेकिन सघन मैदानी भाग में गंगा-तट पर इतने अधिक नगर पड़ते हैं कि बहुतों को छोड़ना पड़ा। फिर भी सभी महत्व पूर्ण स्थान दिखलाये गये हैं। आशा है "भूगोल" के पाठकों को यह गङ्गा-एटलस उपयोगी सिद्ध होगी।

गंगोत्री ग्लेशियर
उत्तरकाशी
पैदल मार्ग
प्रांतीय सीमा
पर्वत

प्रांतीय सीमा
नदियाँ
पैदल मार्ग
पर्वत
केदारनाथ
त्रियुगी नारायण
गौरीकुंड
मैंता
गुप्तकाशी
भैरो
रामपुर
गुलाब
रानीबाग
श्रीनगर

हरद्वार
रुड़की
ज्वालापुर
बहादराबाद
नहर
नदियाँ
शहर

रुड़की
बहादुरपुर
कटारपुर
धानपुर
चाँदपुर
मंगलौर
लुक्सर (जंकशन)
बाकरपुर
रामपुर
निरंजनपुर
रैसी स्टे०
रैसी
सोपाली
गंगदासपुर
नागल
रपानपुर
बालावाली स्टे०
चाँदपुरी
गोपालपुर
कुन्दपुर
खानपुर
मज़ाखिसपुर
आज़िमपुर
सेमला
सुखाखेरी
मोहनपुर
रघुनाथपुर
कीरतपुर
मंडावर
मुज़फ्फरनगर
मीरा
रावली
जौली
मुहम्मदपुर (मन्डाली)
बिजनौर
नवलपुर
साधुपुर
जलालपुर
हंसावाली
दारानगर
गंज
जहाँनाबाद
गौरी
शेरपुर
सलेमपुर
बारला
पुर
नहरें
कच्ची सड़कें
पक्की सड़कें
रेलवे

नहर
नहर
रेलवे
पक्की सड़क
कच्ची ,,
गंगा जी

२१—कछला से मौपुर चौरासी तक

१२—भाऊपुर चौरासी से कन्नौज तक

पैमाना :—१ इंच = ६ मील
नहरें
पक्की सड़क
कच्ची „
रेलवे
जिले की सीमा
पानी
कन्नौज
बिलग्राम
बांगरमऊ
बिल्हौर स्टे०
स फ़ी पु र
सफ़ीपुर
बि ल्हौ र
उ न्नाव
का न पु र
शिवराजपुर
बिठूर
कल्याणपुर
भैइथा स्टे०
भवपुरस्टे०
भीमसेन

१३- े कानपुर तक

पैमाना :—१ इंच = ६ मील
जिले की सीमा
रेलवे
पक्की सड़क
कच्ची सड़क
नहर
नदी
उ न्ना व
का न पु र
पु र वा
डु ल म ऊ
रा य ब रे ली
डलमऊ
लालगंज
सरेनी
गुरुबक्सगंज

डलमऊ से सँजैतिया तक।

१६—इलाहाबाद सँजैतीघाट से कुर्सौंधम किले तक

१७—कुसौंधम किले से चुनार किले तक

१८—चुनार से गाजीपुर तक

१९—गाजीपुर से हलदी तक

२२—नवडोहघाट से मुंगेर तक

२३—मुँगेर से सैयदपूर चरका तक

२४—सैयदपुर से राजमहल तक

२५—राजमहल भगवानगोला तक

२६—भगवान गोला से नूरपुर तक

२८—नूरपूर से सिवले तक

२८—सिवले से मुन्शीगंज (तहसील) तक

२९—गंगा, मेघना, ढोलेश्वरी, बूढ़ी गंगा, और गोमती के संगम

३० — गंगापूर से थानेहपूर तक

३१—चानेहपूर से बंगाल की खाड़ी तक

मुर्शिदाबाद
कान्डी
पैमाना :—
१ इंच=६ मील
पानी
रेलवे
पक्की सड़क
कच्ची "
शहर
मिर्जापुर
मनीग्राम
पलासी

३३—प्लासी से वालागढ़ तक

३४—बालागढ़ से मायापुर तक

३५—मायापुर से हल्दी-संगम तक

५६—काशीनारा से गंगासागर तक

गंगा-अंक का परिशिष्ट

गंगा-अंक के बचे हुये चित्र

गंगा मध्यस्थ जन्हुऋषि स्थान; यहीं जान्हवी का जन्म हुआ है और यहीं अजगवीनाथ महादेव हैं

तुलसी घाट, अरसी बनारस
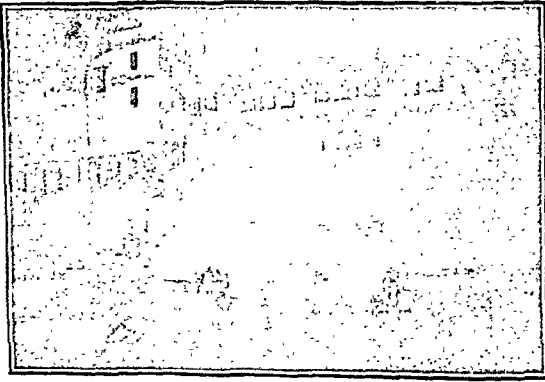
गंगनानी धर्मशाला से सड़क का एक दृश्य

★ ★ ★ ★ ★
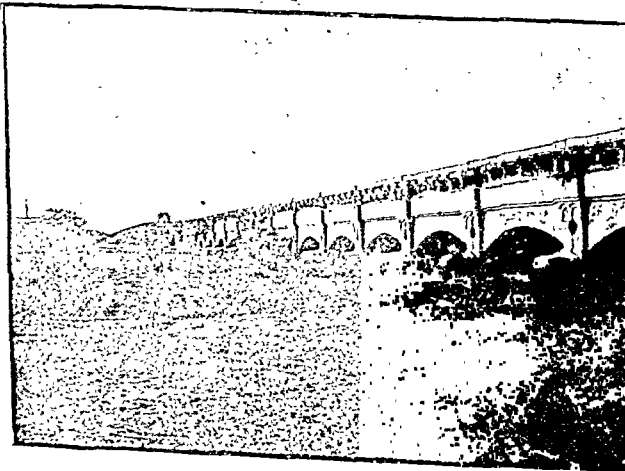
सोलानी पर नहर का पुल, रुड़की के पास

समीप से गौमुख का एक दृश्य

मणिकर्णिका घाट, बनारस
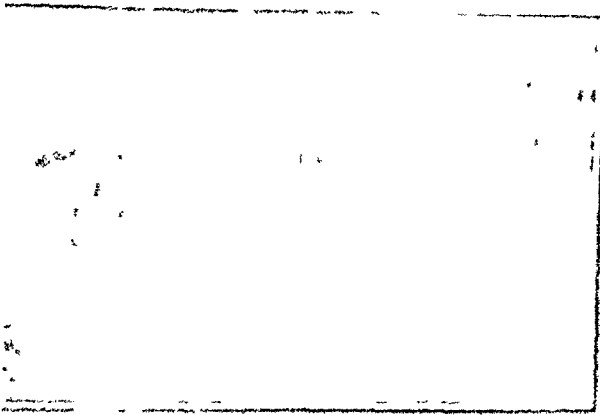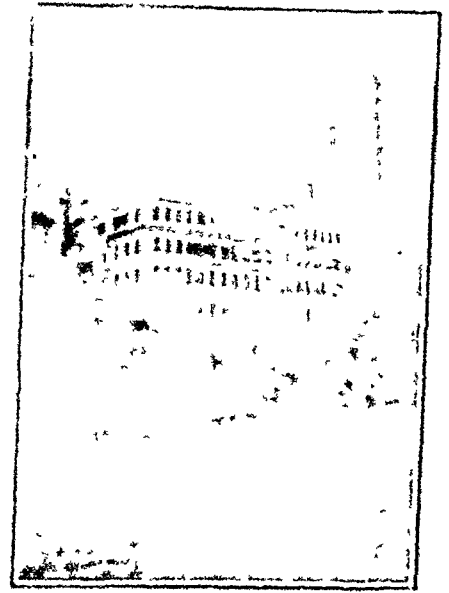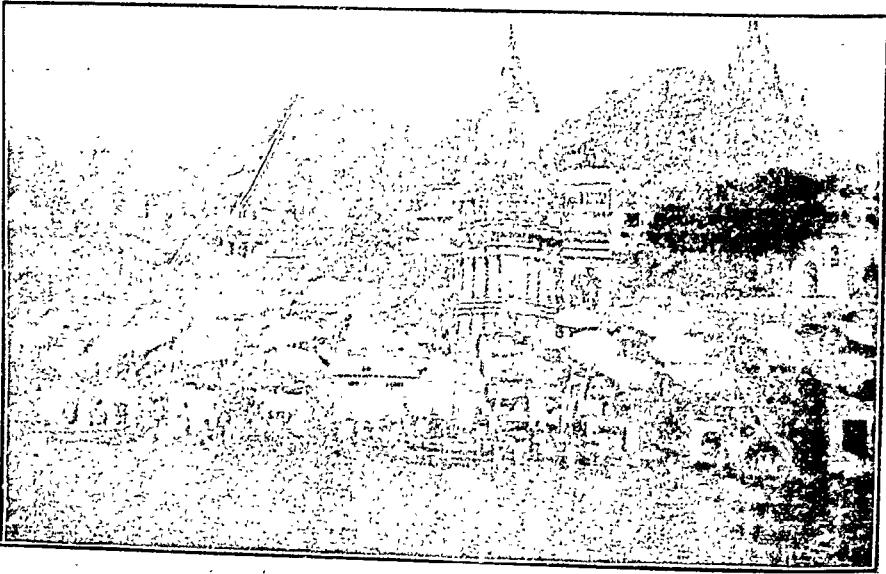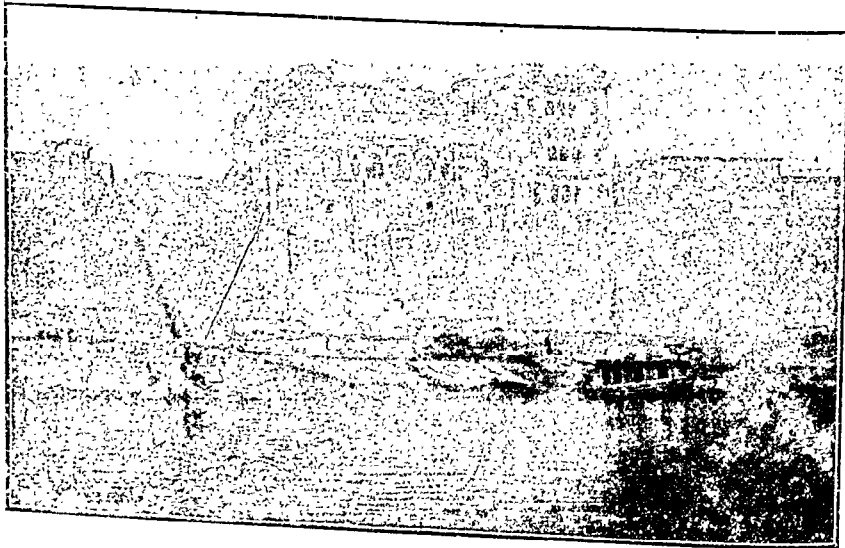
केदार घाट, बनारस
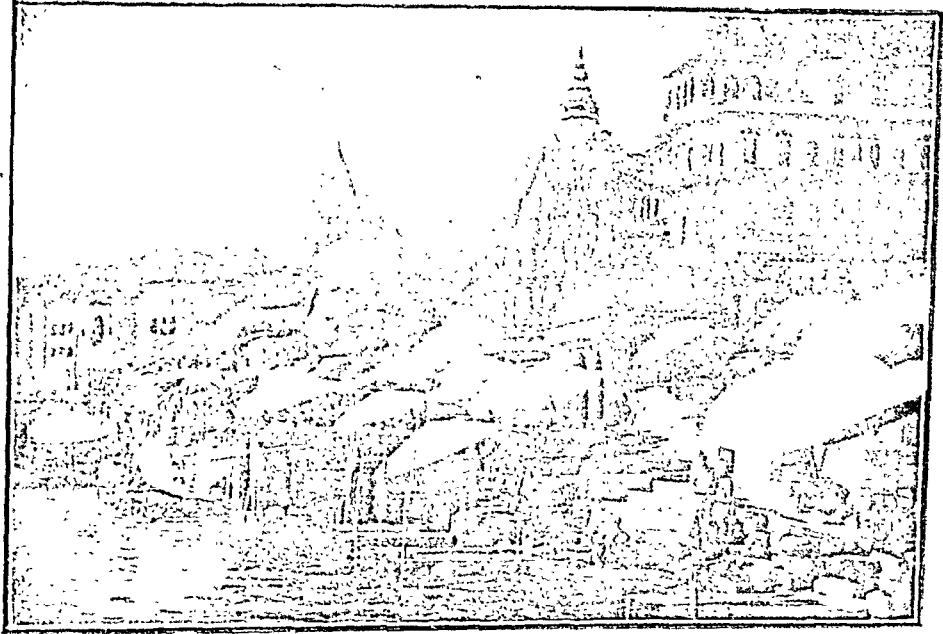
दशाश्वमेध घाट: बनारस
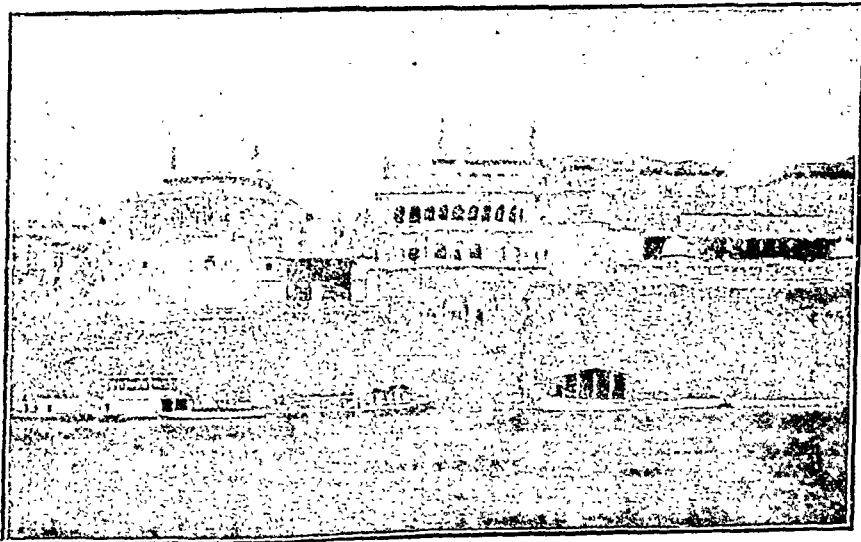
रामनगर, काशी

बक्सर, जिला शाहाबाद
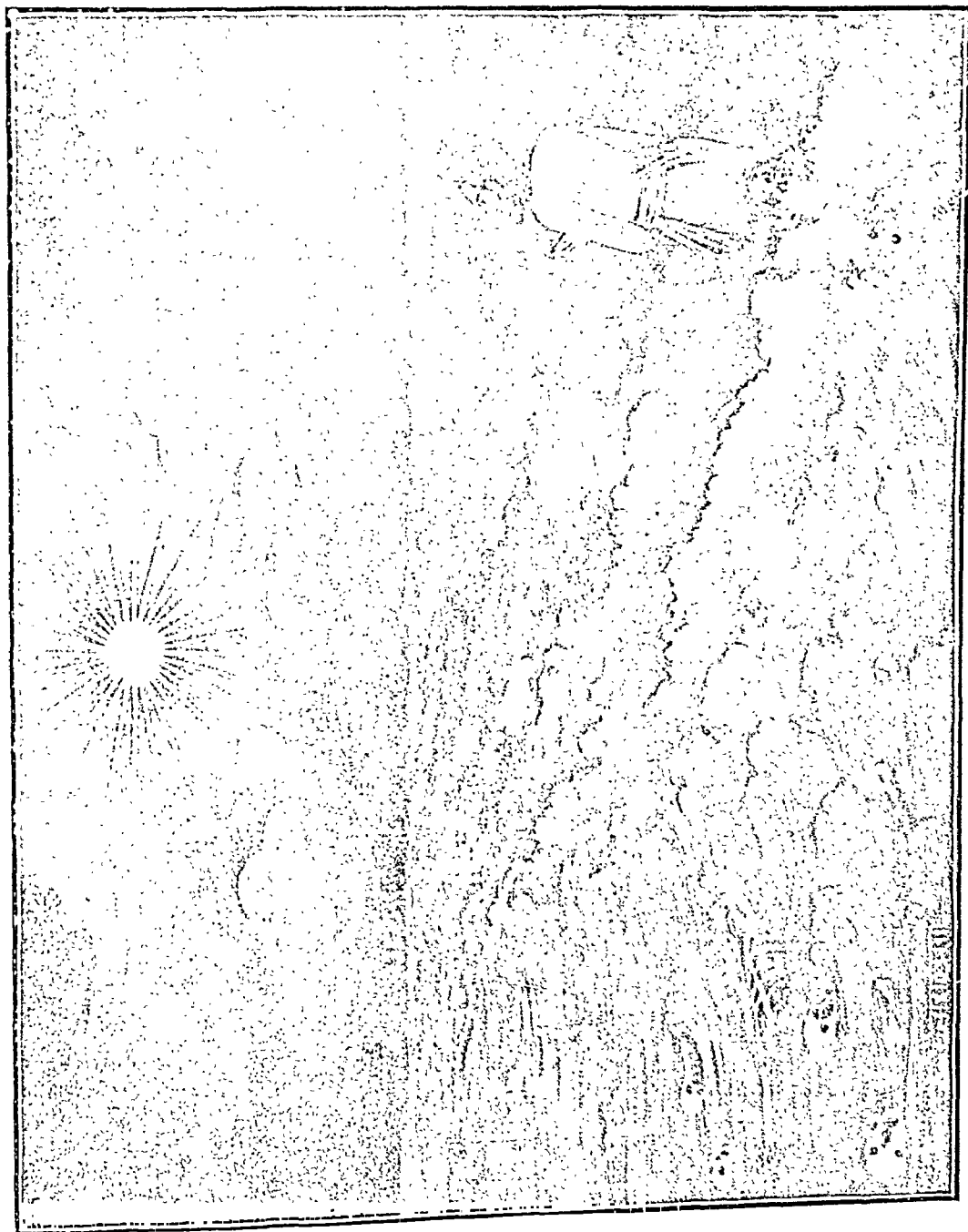
राजा भगीरथ और गंगा सागर

हमारी नई योजना

सभी विचारशील मानते हैं कि ऐसे साहित्य की ज़रूरत

"भूगोल"-कार्यालय, प्रयाग

प्रिय महाशय जी :—

आप "भूगोल" के पुराने ग्राहक हैं। गत १५ वर्षों से आपके "भूगोल" ने हिन्दी-संसार की जो कुछ सेवा की है उसका अधिकांश श्रेय आपको है।

आप जैसे हिन्दी प्रेमियों के सहयोग से प्रोत्साहित होकर हमने इसी मार्च से "देश-दर्शन" नाम का पुस्तकाकार सचित्र मासिक पत्र का प्रकाशन आरम्भ किया है। प्रत्येक अंक में किसी एक देश का आँखों देखा सचित्र और रोचक वर्णन रहता है। पृष्ठ-संख्या १०० से ऊपर, वार्षिक मूल्य ४) रु०, एक प्रति का छः आना।

"भूगोल" के ग्राहकों को एक और सुविधा है। भूगोल और देश-दर्शन को एक साथ मंगाने से आठ आने का लाभ होगा। "भूगोल" का वार्षिक मूल्य ३) रु० है, "देश-दर्शन" का वार्षिक मूल्य ४) है। दोनों का एक साथ वार्षिक मूल्य केवल ६॥) रहेगा।

आशा है आप "देश-दर्शन" का भी आर्डर भेजने की कृपा करेंगे। नीचे का आर्डर फार्म भर कर यदि आप खुले लिफाफे में भेज दें तो दो पैसे का ही टिकट पर्याप्त होगा।

निवेदक—

रामनारायण मिश्र

आर्डर फार्म

श्री मैनेजर, भूगोल-कार्यालय,

इलाहाबाद।

ता०..................१९

कृपया मेरा नाम "देश-दर्शन" के ग्राहकों में भी लिख लें और प्रथम (लंका) अंक रियायती वी० पी० द्वारा भेज दें।

भवदीय

नाम..

पूरा पता..

....

(कृपया उधर भी देखिये)

ग्राहकों के सहयोग की आवश्यकता

हिन्दी-संसार में इस तरह के पत्र का होना कितना आवश्यक था, यह आप 'देश-दर्शन' का प्रथम अंक 'लङ्का-दर्शन' देख कर अनुमान कर सकते हैं। लेकिन इस विराट साहित्यिक आयोजन को हम ग्राहकों की सहायता से ही सफल बना सकते हैं।

"भूगोल" के कई शुभचिन्तकों ने 'देश-दर्शन' की इकट्ठी दस दस, पांच पांच प्रतियाँ मंगाई हैं और माहवार भेजने के लिए वचन दिया है। कई ग्राहकों ने दो-दो, चार-चार, और पांच-पांच (जिससे जितना हो सका है) नये ग्राहक "भूगोल" और 'देश-दर्शन' के साथ साथ बनाये हैं। हम आशा करते हैं कि आप 'देश-दर्शन' और "भूगोल" के नये ग्राहक बनाकर हमारा उत्साह बढ़ायेंगे।

जो सज्जन जनवरी से "भूगोल" के ग्राहक बनेंगे उन्हें गंगा-अंक १) गंगा-एटलस ॥) और देशी राज्य अंक मूल्य २) जो जुलाई में प्रकाशित होगा मिलेगा। इसके अतिरिक्त साधारण अंक भी पूरे वर्ष भर मिलते रहेंगे।

"भूगोल" का वार्षिक मूल्य ३) और 'देश-दर्शन' का वार्षिक मूल्य ४) रु० है। दोनों के ग्राहक होने में रियायती चन्दा ६॥) होगा। 'भूगोल' और देश-दर्शन दोनों में किसी एक का ग्राहक होने पर क्रमशः ३।) और ४।) की वी० पी० भेजी जायगी।

निवेदक—

मैनेजर

प्रिय महाशय,

आपकी आज्ञानुसार निम्नलिखित सज्जनों के नाम भेज रहा हूँ। "भूगोल" और 'देश-दर्शन' के ग्राहकों की श्रेणी में इनका नाम लिख लीजिये और प्रथम अंक से वी० पी० भेजकर चन्दा वसूल कर लीजिए।

हस्ताक्षर ....

ग्राहक नं०........

१ ____________________

____

२ ____________________

____

३ ____________________

____

४ ____________________

____

"BHUGOL"

The only Geographical Monthly published in India

Purpose : "Bhugol" aims to enrich the geographical section of Hindi literature and to stimulate geographical instruction in the Hindi language.

Contents : Articles are published on varied topics of geographical interest: Current History, Astronomy, Industry and Trade, Surveys, Travel and Exploration, Fairs and Exhibitions; Plant and Animal Life. Climatic charts, a brief diary of the month, and questions and answers are regular features. Successive numbers contain serial articles on regional and topical subjects so that by preserving file of "Bhugol" any teacher of geography can accumulate invaluable reference material.

Travel Department : The Travel Department of "Bhugol" annually arranges tours which provide an excellent opportunity for geography teachers and students to visit regions of special interest in India, Burma and Ceylon. Full information will be supplied on application (with a stamped and addressed envelope).

Use in Schools : The use of "Bhugol" in connection with the geography instruction in high schools, normal schools and middle schools, is specially sanctioned by the Educational Departments of the United Provinces, Berar, the Central Provinces, the Punjab, Bihar and Orissa, Gwalior, Jaipur, Kotah and Jodhpur.

Remittances : Make all remittances, cheque, money order or British Postal Order, payable to the manager, **"Bhugol".**

Rates for Advertisements : Ordinary full one page Rs. 10/-
3rd page of the cover „ 12/-
4th page of the cover „ 15/-

Write to the Manager,

"BHUGOL",

ALLAHABAD.

Published by the Editor (Pt. Ram Narain Misra, B. A.) and Printed by K. P. Misra at the Bhugol Press; 306, Jamuna Road, Allahabad

विषय-सूची

विषय			पृ॰
१—भारतवर्ष के महात्मा गांधी	...	...	
२—चीन के च्यांग-काई-शेक	..	...	
३—टर्की के मुस्तफा कमालपाशा	...	...	
४—ईरान के रिज़ाशाह	...	...	१
५—रूस के लेनिन	...	...	१
६—अरब के इब्न सऊद	...	...	१
७—इटली के मसोलिनी	.	...	२
८—जर्मनी के हिटलर	...	...	२
९—आयरलैंड के डी वेलरा			३

निर्माता-अङ्क

यह पत्र संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, वरार, विहार, उड़ीसा, पंजाब प्रान्त तथा ग्वालियर, जैपुर, जोधपुर और कोटा राज्य के शिक्षा-विभागों द्वारा हाई, नार्मल और मिडिल स्कूलों में प्रयोग होने के लिये स्वीकृत है।

वर्ष १४] वैशाख सं० १९९५, अप्रैल १९३८ [सं० १२

भारतवर्ष में नया युग लाने वाले महात्मा गांधी

महात्मा जी को आश्रम वासी और उनसे घनिष्ट सम्बन्ध रखने वाले बापू जी कहते हैं। पर उनका पूरा और पुराना नाम है मोहनदास कर्मचन्द गान्धी। गान्धी जी का जन्म १८६९ के अक्तूबर महीने की दूसरी तारीख को पोर बन्दर या सुदामापुरी में हुआ था। इनके पिता कर्मचन्द बड़े धार्मिक वैश्य थे। वे पोरबन्दर के राजा के यहाँ दीवान थे। गांधी जी के माता पिता का बहुत सा समय भजन पूजन में बीतता था।

गान्धी जी की शिक्षा पोर बन्दर में ही प्रारम्भ हुई। वहीं एक स्कूल में वे पढ़ने के लिये बिठाये गये। पहले पहल इनको गुजराती की शिक्षा मिली। कुछ ही समय में इनके पिता पोर बन्दर छोड़ कर राजकोट चले आये। अतः गांधी जी भी राज कोट के एक देशी भाषा के स्कूल में पढ़ने लगे। दस वर्ष की उम्र में वहाँ की पढ़ाई समाप्त कर ये काटियावाड़ हाई स्कूल में अंग्रेजी पढ़ने के लिये भेजे गये। गान्धी जी ध्यान से पढ़ते थे और पूरा परिश्रम करते थे। ये अच्छे लड़के समझे जाते थे। इनके अध्यापक और घर वाले सभी इनसे प्रसन्न रहते थे। बारह वर्ष की उम्र में इनका विवाह हुआ। पोर बन्दर में विवाह कृत्य समाप्त होने के बाद वे फिर राज कोट में पढ़ने लगे। यहां फिर इनको बुरी संगति मिली। धर्म के प्रति इनके मन में तरह तरह की शंकायें उठने लगीं। इनके साथियों ने इन्हें मांस खाना सिखा दिया। लेकिन इनके कुटुम्ब वाले धार्मिक वैष्णव थे। इसलिये मांस खाने के लिये छिपकर बाहर प्रबन्ध करना पड़ता था। इसको छिपाने के लिये (जिस दिन घर पर ये भोजन न करते तो) इन्हें कोई न कोई बहाना करना पड़ता। पर गान्धी जी का हृदय गिरा हुआ नहीं था। केवल कुसंग का कुछ बुरा असर हो गया था। सत्य से प्रेम इन्हें पहले ही सिखाया गया था। इन्होंने सोचा मैं मांस खाने के लिये झूठ कैसे बोलूं ? इनको

मांस से घृणा हो गई और इनका मांस खाना छूट गया।

स्कूल के काम से जो अवकाश मिलता था। उसे गान्धी जी धर्म ग्रन्थों को पढ़ने में लगाने लगे। इससे इनका पहला भ्रम दूर हो गया। सत्रह वर्ष की उम्र में गान्धी जी मेट्रिक की परीक्षा में उत्तीर्ण हुए। आगे की पढ़ाई के बारे में तरह तरह के सवाल उठे। इसी समय विलायत से बारिस्टर बन कर एक ब्राह्मण राजकोट में आये हुए थे। इन्होंने बारिस्टरी पढ़ने की सम्मति दी। यही बात गान्धी जी को पसन्द आई। गान्धी जी के पिता का देहान्त हो चुका था। इनके बड़े भाई घर का काम चलाते थे। आमदनी अधिक नहीं थी। पर वे पढ़ाई का खर्च देने के लिये राजी हो गये।

उन दिनों विलायत जाने के सम्बन्ध में लोगों का अनुमान था कि वहां जाने वाले धर्म भ्रष्ट हो जाते हैं। अतः उनकी धार्मिक माता उन्हें विलायत भेजने में हिचकिचाने लगीं। अन्त में एक जैन साधु के सामने गान्धी जी से तीन प्रतिज्ञायें करवाने के बाद माता ने उन्हें विलायत जाने की आज्ञा दे दी। वे तीन प्रतिज्ञायें निम्नलिखित थीं :—

(१) मांस न खाना, (२) शराब न पीना, (३) पर-स्त्री-संसर्ग न करना। गांधी जी ने खुशी से ये तीन प्रतिज्ञायें कीं और १९ वर्ष की उम्र में माता से बिदा हुए।

भारत से चलकर १८८८ के सितम्बर महीने में गांधी जी लन्दन पहुँचे। पहले वे वहां विक्टोरिया होटल में ठहरे। वे वहां के रहन सहन से परिचित न थे। कुछ लोग उन्हें बुरी तरह से चिढ़ाने लगे। इनका वहां रहना कठिन हो गया। एक मित्र की सहायता से गांधी जी ने किराये पर एक घर ठीक किया। धीरे धीरे वे विलायती सभ्यता की बातें सीखने लगे।

एक दिन इनके सहायक मित्र के यहाँ भोज था। गान्धी जी को भी निमन्त्रण मिला। जब इस भोज में मांस परोसा गया तब गान्धी ने अपनी प्रतिज्ञा को ध्यान में रख कर खाने से इनकार कर दिया इस से इनका मित्र बड़ा नाराज हुआ। इन के सामने दूसरा उपाय ही क्या था?

लन्दन के यूनिवर्सिटी कालेज में गान्धी जी तीन वर्ष तक पढ़े। बारिस्टरी के अध्ययन से जो अवकाश इन्हें मिलता था उसे वे उत्तम ग्रन्थों के पढ़ने में लगाते थे। यहीं एक पादरी ने इनको बाइबिल पढ़ने की राय दी। लेकिन भगवद् गीता से इन्हें पूरा सन्तोष हुआ। गीता के सम्बन्ध में गान्धी जी कहते हैं "गीता के उपदेशों के प्रकाश में मैंने अपने जीवन का लक्ष्य निश्चित किया। गीता के उपदेशों के प्रकाश में मैंने ज्ञान भंडार देखे, मेरी शंकाओं का अन्त हो गया। इतने दिनों से जिस धर्म प्रकाश को मैं ढूंढ़ रहा था वह मुझे गीता में मिला।" तीन वर्ष की पढ़ाई के बाद बारिस्टरी की परीक्षा पास करके वे भारतवर्ष को लौटे। इसी बीच में इनकी माता का देहान्त हो चुका था। इनकी पढ़ाई में विघ्न न पड़े इस लिये इस खबर को इनके पास विलायत में नहीं भेजा था। लौटने पर इस घटना से इन्हें बड़ा दुःख हुआ। नासक में प्रायश्चित हुआ। इस भोज में जाति के बहुत से लोग शामिल हुए। कुछ कट्टर लोग नहीं आये।

गान्धी जी ने राजकोट में बारिस्टरी शुरू की। बारिस्टरी खूब चली। इनको बड़े बड़े मुक़द्दमे मिलने लगे। इनकी दलीलों के सामने न्यायाधीशों को विवश होकर इनकी बात माननी पड़ती थी। इस प्रकार बारिस्टरी करते हुये राजकोट में गान्धी जी के १८ महीने सुख से बीते। इसके बाद गान्धी जी को दक्षिण अफ्रीका जाना पड़ा। पोर बन्दर के एक सेठ की दूकान ट्रान्सवाल की राजधानी प्रीटोरिया में थी। इसी दुकान का कोई मुक़द्दमा था। इस के लिये एक योग्य बारिस्टर की आवश्यता पड़ी। वह सेठ गान्धी जी का मुवक्किल था ही। इस लिये मुक़द्दमे की पैरवी करने के लिये गान्धी जी से अनुरोध किया गया। गान्धी जी ने वह मुक़द्दमा अपने हाथ में ले लिया। उसी के लिये १८९३ में वे दक्षिण-अफ्रीका पहुँचे। यहाँ जो घटनायें हुईं उनसे गान्धी जी का जीवन ही बदल गया। किसी एक कुटुम्ब के बदले उनका जीवन समस्त भारतवर्ष वरन् संसार भर के लिये हो गया। दक्षिण अफ्रीका में पहले डच लोग बस गये थे जो बोअर कहलाते थे। जब यहाँ हीरा और सोना मिला तब

पीछे से अंग्रेज लोग भी आये। बहुत से गोरे लोग भी दक्षिण अफ्रीका में बस कर खेती करने लगे। खेती के लिये इन्हें सस्ते मजदूरों की जरूरत थी। अफ्रीका के मूल निवासी इस काम के लिये उपयुक्त न पड़े अतः उन्होंने हिन्दुस्तान, चीन और पूर्वी द्वीप समूह से मज़दूर बुलाये। हिन्दुस्तानी मज़दूर कुली प्रथा से बन्धकर जाते थे। नियत समय को पूरा करने के बाद कुछ मज़दूर लौट आये। जो हिन्दुस्तानी वहाँ बस गये उन से और वहाँ बसे हुये गोरों से आर्थिक होड़ होने लगी। स्वतन्त्र पेशों में लगे हुए हिन्दुस्तानी अधिक मेहनत करते थे और अपने रहन सहन पर कम खर्च करते थे। अत गोरे लोग उन से घबराने लगे। उनको अफ्रीका से निकालने के लिये वे तरह तरह के उपाय सोचने लगे।

गान्धी जी मुकद्दमे के सम्बन्ध में एक वर्ष के लिये गये थे। एक वर्ष पूरा होने पर उनकी विदाई के लिये डर्बन में एक सभा हुई। इसी समय गान्धी जी ने अखबारों में भारतीयों से मत देने के अधिकार छीनने और दूसरे घातक क़ानूनों के बारे में पढ़ा। अतः इस सभा में एकत्रित हिन्दुस्तानियों को उन्होंने संगठित और सावधान रहने के लिये कहा। एकत्रित सज्जनों ने गांधी जी को अगुआ बनने और वहीं ठहरने के लिये कहा। गांधी जी वहीं ठहर गये। कई हज़ार हिन्दुस्तानियों के हस्ताक्षर के साथ क़ानून के विरुद्ध सरकार को प्रार्थना पत्र भेजा गया। क़ानून पर विशेष प्रभाव न पड़ा। पर सरकार तक हिन्दुस्तानियों की आवाज़ पहुँचने लगी। जब गान्धी जी ने नैटाल में वकालत करने के लिये अरजी दी तब पहले गोरे वकीलों में सनसनी फैल गई। पर अन्त में गान्धी जी को वहाँ वकालत करने की आज्ञा मिल गई। वकालत के साथ साथ उनका बहुत सा समय सार्वजनिक कामों में बीतता था। तीन वर्ष के प्रवास के बाद १८९६ में गान्धी जी स्त्री और बच्चों को लाने के लिये भारतवर्ष आये।

भारतीय नौका के कर्णधार
महात्मा गान्धी

भारतवर्ष में लौटने पर गान्धी जी ने बम्बई, कलकत्ता आदि प्रधान शहरों में उन असुविधाओं पर प्रकाश डाला जो दक्षिण अफ्रीका में बसे हुए भारतवासियों पर आ रही थीं। किसी ने इस प्रकार की झूठी खबर दक्षिण अफ्रीका में भेज दी। वहां के गोरे गांधी जी से बड़े नाराज़ हो गये दैव योग से जब गान्धी जी दक्षिण अफ्रीका को लौट रहे थे। उसी समय भारतवर्ष से ६०० हिन्दुस्तानी कुली अफ्रीका को जा रहे थे। गोरों ने समझा गान्धी जी लड़ने के लिये सिपाही ला रहे हैं पहले जहाज़ को अफ्रीका के तट पर आने से रोका गया। फिर किसी तरह मुसाफिर उतरे। गांधी जी की धर्म पत्नी और बच्चे पहले भेज दिये गये फिर गान्धी जी अपने एक पारसी मित्र के साथ चले। गोरों की भीड़ ने हमला किया। इस मारपीट में पारसी सज्जन का साथ छूट गया। पुलिस सुपरिटेन्डेन्ट की स्त्री ने अपूर्व साहस करके गान्धी जी की जान बचाई और उन्हें पारसी मित्र के घर पर भेजवा दिया। रात को यहां फिर गोरों की भीड़ इकट्ठी होने लगी। आधी रात को भीड़ ने गान्धी जी के अतिथि का घर घेर लिया। गान्धी जी कान्स्टेबिल (पुलिस) का भेष धारण करके बाहर निकल आये। इस प्रकार गान्धी जी के बच्चों और अतिथि की जान बची। पीछे से जब गांधी जी की असली चिट्ठी अखबारों में छपी तब गोरों का रोष कुछ ठंडा हुआ।

इसके कुछ ही समय बाद बोअर युद्ध शुरू हुआ। गाँधी जी ने सरकार की सहायता करने केलिये अपनी

और दूसरे हिन्दुस्तानियों की सेवायें अर्पण की। घायलों और पीड़ितों की सेवा इस हिन्दुस्तानी दल ने अपनी जान जोखों में डालकर की। इस का गोरों पर अच्छा प्रभाव पड़ा। इस लड़ाई और आगे चल कर जुलू विद्रोह के अमानुषिक अत्याचारों को देखकर गाँधी जी का अहिंसा में और भी अधिक अटल विश्वास होगया।

बोअर लड़ाई के बाद ट्रान्सवाल में ब्रिटिश अधिकार होगया। ब्रिटिश सरकार ने एक नया एशियाटिक डिपार्टमेंट खोला। इसका उद्देश्य भारतीयों को योरूपीय लोगोंसे अलग रखने का था। इस संकट का सामना करने के लिये गान्धी जी को फिर अफ्रीका लौटाना पड़ा। १९०३ की पहली जनवरी को वे प्रीटोरिया पहुँचे। हिन्दुस्तानियों का कहना था कि उच शासन में रंग और जाति का भेदभाव न था। ब्रिटिश शासन में इसे स्थान ही न मिलना चाहिये। इसी सम्बन्ध में हिन्दुस्तानियों को अधिक संगठित और शिक्षित बनाने के लिये गान्धी जी ने इण्डियन ओपिनियन नाम का समाचार पत्र चलाया। पहले यह चार भाषाओं (अंग्रेजी, हिन्दी, तामिल, गुजराती) में निकलता था। इसके चलाने में गान्धी जी को बहुत घाटा सहना पड़ा। इसके बाद इन्होंने टालस्टाय के सिद्धान्तों के अनुसार एक आश्रम स्थापित किया।

१९०६ में जुलू विद्रोह हुआ। इस समय भी सुश्रूषा करने के लिये गान्धी जी ने हिन्दुस्तानियों की ओर से सरकार को सूचना दी। गान्धी जी इस सेवादल के अगुआ थे। जिन जुलू लोगों के कोड़े लगते थे उनको बुरा हाल हो जाता था। घाव बिगड़ जाते थे। कुछ मर भी जाते थे। मरहम पट्टी करना यहाँ मुख्य काम था। हिन्दुस्तानियों को छोड़कर कोई दूसरा यह काम करने को तैयार न था। इस बीच में भी यहाँ आये हुए एशियावासियों के विरूद्ध गोरों का अन्दोलन चल रहा था। उनका स्वच्छन्द आना रोकने के लिये रजिस्ट्रेशन क़ानून बना। इसके अनुसार हिन्दुस्तानियों को अपराधियों (मुजरिमों) की तरह रजिस्टर दर्ज कराना पड़ता। जब और उपाय विफल हुए तब गान्धी जी ने इसको रोकने के लिये निष्क्रिय प्रतिरोध (पैसिव रेजिस्टेंन्स) आरम्भ किया यदि हिन्दुस्तान स्वाधीन होता तो प्रवासी भारतीयों की रक्षा का शायद कुछ दूसरा उपाय हो सकता था। लेकिन पराधीन भारत के लिये गान्धी जी का सत्याग्रह या निष्क्रिय प्रतिरोध एक दैवी और अमोघ शस्त्र था। इसमें स्त्री, बच्चे, बुड्ढे सभी शामिल हो सकते थे। केवल निर्भयता और आत्म-विश्वास की आवश्यकता थी। हुआ भी ऐसा ही। जिन स्थानों पर हिन्दुस्तानियों को जाने की मनाई थी, उनमें दो हज़ार हिन्दुस्तानी पैदल चलकर गये। वे जेल भेजे गये। उन पर गोलियाँ चलीं। लेकिन आन्दोलन जारी रहा। कई वर्ष के आन्दोलन के बाद फल यह हुआ कि गान्धी-स्मट समझौता हो गया। हिन्दुस्तानियों की कई असुविधायें दूर हो गई। हिन्दुस्तानियों पर जो ३ पौंड (४५ रु०) का कर लगता था वह हट गया। उनका ब्याह जायज मान लिया गया।

दक्षिण अफ्रीका में गान्धी जी को सत्याग्रह आन्दोलन से जो अनुभव हुआ उससे उन्हें विश्वास हो गया कि अब उनके कार्य का क्षेत्र भारतवर्ष है। १९१४ में वे भारतवर्ष लौट आये। इसी वर्ष बड़ी लड़ाई आरम्भ हुई।

गान्धी जी श्री गोखले जी को अपना राजनैतिक गुरू मानते थे। उनके आदेशानुसार गान्धी जी एक वर्ष तक चुपचाप भारतवर्ष की राजनैतिक स्थिति का निरीक्षण करते रहे। व्याख्यान कहीं नहीं दिया। १९१६ में लखनऊ की कांग्रेस के अवसर पर गान्धी जी से बिहार के निलहे गोरों के अत्याचारों के सम्बन्ध में बोलने के लिये कहा गया। बिहार के नील उगाने वाले गोरे मालिक किसानों पर तरह तरह के अत्याचार करते थे। गान्धी जी बोलने के पहले वहां की हालत की स्वयं जांच पड़ताल करना चाहते थे। अतः कांग्रेस की ओर से यह भार गान्धी जी के सौंपा गया। जब गांधी जी मुज़फ्फरपुर से मोतिहारी की ओर जा रहे थे तो मजिस्ट्रेट की आज्ञा से उनको रोक लिया गया। इन पर मुक़दमा चला। इससे सारे हिन्दुस्तान में सनसनी फैल गई। अन्त में मुक़दमा

उठा लिया गया। गांधी जी जांच कमेटी में शामिल कर लिये गये। निलहों का प्रभुत्व जाता रहा। भारत वर्ष में सत्याग्रह की यह पहली विजय थी।

पहले गान्धी जी को ब्रिटिश सरकारी न्याय प्रियता और उद्देश्यों में पूरा भरोसा था। बड़ी लड़ाई में गांधी जी ने सरकार की यथा शक्ति सहायता की। अहिंसा व्रत होने पर भी लड़ने के लिये सिपाही भरती कराये। गांधी जी की अहिंसा में देश की कायरता को स्थान नहीं है। कायरता दूर करने के लिये लड़ाई में शामिल होना आवश्यक ही था। पर लड़ाई के समाप्त होने पर जब रौलट एक्ट बना तब गान्धी जी को ब्रिटिश सरकार पर सन्देह होने लगा। इस नये क़ानून का विरोध करने के लिये सत्याग्रह आन्दोलन आरम्भ हुआ। जगह जगह सभायें हुईं। लेकिन पंजाब के जलियाना बाग़ के हत्याकाण्ड स सारा देश दहल गया। जलियानावाला बाग़ वास्तव में बाग़ नहीं था। यह एक घेरा है। इस म आने जाने के लिये बहुत कम और तंग दरवाजे थे। यहाँ दस हज़ार से ऊपर एक दम शान्त स्त्री, पुरुष, बुड्ढे, बच्चे सभा कर रहे थे। बिना किसी तरह की सूचना दिये हुए जनरल डायर ने इनपर गोलियाँ चलवाईं। लगभग पाँच सौ मनुष्य मरे। दो हज़ार घायल हुए। इस स गान्धी जी का विश्वास हो गया कि ब्रिटिश सरकार एक शैतानी सरकार है। उसको उखाड़ने के लिये सत्याग्रह जोरों से चलाया गया। इसी समय तुर्को और मुसलमानों के पवित्र स्थानों पर भी ब्रिटिश सरकार का दबाव पड़ रहा था। अतः स्वराज्य का माँग साथ साथ पंजाब और खिलाफत का प्रश्न भी शामिल कर लिया गया।

इस सम्बन्ध में लोगों से प्रार्थना की गई कि वे सरकारी उपाधियाँ त्याग दें, सरकारी दरबारों में शामिल न हों, सरकारी स्कूलों में अपने लड़कों को न पढ़ावें, सरकारी नौकरियाँ छोड़ दें, कार्उसिलों और विदेशी माल का बहिष्कार करें।

सत्याग्रह आन्दोलन जोरों से चला। यद्यपि कहने के लिये साबरमती आश्रम महात्मा जी का निवास स्थान कहा जा सकता पर उन्हें साल में लगभग पाँच महीने गाड़ी में बिताने पड़ते थे। देश में अपूर्व जाग्रति फैलगई थी। १९२१ में जब वेलसके राजकुमार यहाँ आये तो राजनैतिक कारणों से काँग्रेस ने उनके स्वागत का बहिष्कार किया। सरकार ने इसके विरुद्ध पूरा ज़ोर लगाया लेकिन उसे सफलता न मिली। यदि देश इसी रफ़्तार से आगे बढ़ता तो एक वर्ष में स्वराज्य मिलजाने में कोई शक न था। लेकिन चौरी-चौरा काँड से गान्धी जी को आन्दोलन स्थगित करना पड़ा। इस से काँग्रेस में कुछ मतभेद हुआ। १९२२ में वे गिरफ़्तार कर लिये गये। उनको ६ वर्ष के लिये कैद हुई। १९२४ में उन के ऐसा आपरेशन हुआ कि उनकी जान बाल बाल बच गई। वे बिना किसी शर्त के छोड़ दिये गये। हिन्दू मुसलमानों के झगड़ों से देशका वातावरण कुछ बिगड़ गया था। हिन्दू मुसलमानों की एकता के लिये गाँधी जी ने २१ दिन तक उपवास किया था। कुछ समय के लिये वे तटस्थ रहे। स्वराज्य दल के लोग काउंसिलों में शामिल हुये। लेकिन शीघ्र ही काउंसिलों की निस्सारता का लोगों को पता लग गया था। साइमन कमीशन से नरमदल के लोग भी असन्तुष्ट हो गये थे। १९३० में असहयोग आन्दोलन और भी उग्ररूप से आरम्भ हुआ। जगह जगह नमक बनने लगा। हजारों की संख्या में सत्याग्रही जेल गये। गान्धी जी की डांडी यात्रा ने देश में अपूर्व उत्साह फैला दिया। गान्धी जी के कैद हो जाने पर भी आन्दोलन जोरों से चलता रहा। अन्त में इर्विन-गान्धी समझौता हो जाने पर देश (काँग्रेस) ने लन्दन की राउण्डटेबिल कानफरेंस में गान्धी जी को अपना एक मात्र प्रतिनिधि बनाकर भेजा। दूसरे ऐसे लोग इस कानफरेंस में बुलाये गये कि इसका कोई फल न हुआ। गान्धी जी के लौटने पर सरकार की नीति बदल गई। लार्ड-विलिंगडन (वायसराय) ने गान्धी जी से भेंट करने से इनकार कर दिया। गान्धी जी ने देशको असहयोग आन्दोलन फिर जारी करने की राय दी। वे और

(शेष आठवें पृष्ठ पर देखिये।)
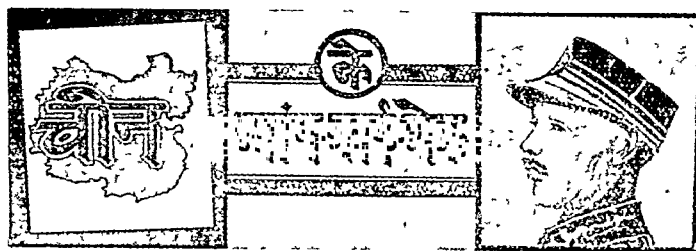
च्याँग-काई-शेक

सवीं शताब्दी का इतिहास चीन में डा० सनयात्सेन और मार्शल च्याँग-काई-शेक के अपूर्व साहस और राजनीतिकता का एक प्रशंसनीय उदाहरण है।

चीनी प्रजातन्त्र के संस्थापक ने चीनियों के राजनैतिक तथा सामाजिक जीवन पर वह प्रभाव डाला है जिसको तुलना विल्सन, लेनिन और महात्मा गांधी के देशव्यापी प्रभाव से की जाती है। जिस योग्यता कार्यपटुता तथा महान शान्ति के साथ जनरल च्याँग-काई-शेक ने अपने देश की रक्षा की है वह अद्वितीय है। उसी की बदौलत वह आज चीन के समाज में अग्रगण्य हैं।

डा० सनयात्सेन की मृत्यु के पश्चात् जनरल च्याँग ने उनके कार्यक्रम को सँभाला और "जाति के तीन सिद्धान्त" और डा० सन की इच्छाओं की पूर्ति के लिये इन्होंने बीड़ा उठाया। उन स्वार्थी लोगों के चंगुल से, जो कि भिन्न भिन्न भागों में शासक बने बैठे थे और जिन्हें अपने स्वार्थ के अतिरिक्त और किसी बात का ध्यान न था, अपने देश को उबारने का प्रयत्न करते हुये दस वर्ष में उन्होंने समस्त चीन को एक सूत्र में बाँध दिया। इन्होंने देश की आर्थिक तथा सामाजिक दशाओं को सुधारा और इन कार्यों की बदौलत वह न केवल जनता का विश्वासपात्र बना, बल्कि अन्य बाह्य शक्तियों के प्रशंसापात्र भी।

महान् व्यक्ति प्रायःमध्यम श्रेणी से आते हैं, इसका इतिहास साक्षी है। जनरल च्याँग-काई-शेक भी मध्यम श्रेणी से आते हैं। सन् १८८३ ई० के अक्तूबर महीने में चेक्याँग प्रान्त (Chekiang) के फेंग्युवा (Fenghua) नामक स्थान पर एक मध्यम वर्ग के वंश में यह पैदा हुये थे। थोड़ी ही उम्र में इनके पिता का देहान्त हो गया, मगर इनकी माता ने जो एक सुयोग्य रमणी थीं, इनको उचित शिक्षा दी। माता ने ही इन्हें आत्मविश्वास, आत्मसमर्पण और देशसेवा का पाठ पढ़ाया। जैसा कि इन्होंने स्वयं ३ अक्तूबर सन् ३६ को अपनी पचासवीं सालगिरह के अवसर पर कहा था, "......मैं दो बातों पर सदैव विचार करता रहता हूँ और उन्हीं को सोचा करता हूँ - कि जब तक हमारे देशवासी आफत में फँसे हैं, तब तक मैंने अपनी माता की इच्छा की पूर्ति नहीं की। जब तक देश को मुक्ति नहीं मिल जाती तब तक अपने आप को मैं इसकेलिये जिम्मेदार समझता हूँ।"

सत्रह वर्ष की उम्र में यह फौज के इन्फैंट्री (पैदल सेना) स्कूल में भर्ती हुए और वहाँ से निकल कर टोकियो मिलिटरी एकेडेमी में चार वर्ष तक फौजी शिक्षा ग्रहण की। जापान ही में इन्होंने अपना जीवन क्रान्ति के लिये अर्पण कर दिया और डा० सन की स्थापित की हुई तुंगमेन्घुई (Tungmenghui) सोसाइटी के सदस्य हो गये और चीन में प्रजातन्त्र की स्थापना का स्वप्न तभी से देखने लगे।

इस तरह ज्योंही सन् १९११ ई० में क्रान्ति आरम्भ हुई यह चीन में आये और शंघाई में सेनापति बने। इन्होंने शंघाई को मंचू लोगों (Manchus) से ले लिया।

इन विजयों के पश्चात् क्रान्ति सफल होने पर यह दस वर्ष तक इन सब कार्यों से अलग रहे और इस प्रकार सन् ९२३-२४ ई० से इनके जीवन का एक दूसरा अध्याय प्रारम्भ होता है और यह फिर कैन्टन के क्रान्तिकारी आन्दोलन में हिस्सा लेने लगे।

डा० सनयात सेन का इनकी योग्यता ने अपनी ओर आकर्षित किया और क्रमशः यह स्टाफ अफसर से ह्वाम्पोआ मिलिटरी एकेडेमी के सभापति नियुक्त हुये; और जब डा० सन के विरुद्ध उनके एक साथी ने बलवा किया तो मार्शल च्यांग ने अपनी एक छोटी सी फौज द्वारा उस बलवाई को हरा दिया और इस तरह अपनी योग्यता तथा वीरता का परिचय दिया। अपनी इस प्रकार की बहादुरी द्वारा सन् १९२५ तक इन्होंने क्वांगटंग (Kwangtung) को कोमिंटांग दल के अधीन कर लिया, और सन् १९२६ ई० में इन्होंने देश को छोटे छोटे टुकड़ों में विभाजित होने से बचाया। सारा देश स्वार्थी शासकों द्वारा चूसा जा रहा था, और बरबाद हो रहा था—उन सब से बचाने के लिये चीन का एक बहुत बड़ा हिस्सा इन्होंने अपने प्रयत्नों द्वारा कोमिंगटांग के आधीन किया। उसी समय से मार्शल च्यांग चीन देश के चतुर नाविक बने। वास्तव में चीन एकता पैदा करने का श्रेय यदि किसी को दिया जा सकता है, तो चियांग-काई-शेक को।

च्याग-काई-शेक।

इन्होंने फौज की शक्ति से देश को एकता के सूत्र में नहीं बाँधा, किन्तु न्याय और शान्ति की शक्ति से अपनी योग्यता तथा कार्यपटुता से। किसी ने कहा है, "केवल छः महीने फौज में काम करने से मनुष्य जंगली हो जाता है"। ठीक है, परन्तु उस मनुष्य को हम कितना बड़ा कहेंगे जिसको लड़कपन से ही फौजी शिक्षा मिली, फौजी काम ही जिस के जीवन का अधिकतर भाग रहा, और इस पर भी वह जंगली नहीं निकला, उसमें देश प्रेम तथा कर्तव्य शेष रहे। मार्शल च्यांग-काई-शेक के मस्तिष्क का जो विकास हो रहा था वह उत्तरोत्तर बढ़ता रहा। उसने संसार को दिखा दिया कि यद्यपि वह एक फौजी आदमी है मगर उसने अन्य शक्तियों को तिलांजलि नहीं दिया है। उसने संसार को दिखा दिया कि जबान और शब्दों में वह शक्ति है कि वह इस्पात को भी मोम बना सकती है।

च्यांग-काई-शेक की बड़ाई इस बात में है कि इन्होने चीन से गृहकलह दूर कर दी। सारे चीन को एकता के सूत्र में बाँधा। किसी ने ठीक कहा है, "जब चीन के इस काल का इतिहास लिखा जायगा तो उस में एक सुनहरा पृष्ठ होगा जिस में लिखा जायगा कि चीन की राजनैतिक एकता, आत्म शक्ति, वैयक्तिक योग्यता के बल पर हुई, फौज के बल पर नहीं।" वह पुरुष जो ऐसा करने में समर्थ हुआ, निस्सन्देह हमारी प्रशंसा का पात्र है। ये ही कारण हैं जिनकी वजह से च्यांग-काई-शेक के लिये चीन निवासियों के दिल में भक्ति है, श्रद्धा है और है प्रेम।

पूर्ण जातीय कार्यक्रम ने जो कि आम जनता की शिक्षा के विषय में उनकी आर्थिकसमस्या के सुलझाने के विषय में, तथा उनकी एकता तथा संगठन के विषय में थे, चीन के अमन चैन का मार्ग साफ किया

वहाँ के आर्थिक सुधार, स्वास्थ्य की उन्नति व्यापार मार्ग के सुधार और उन में वृद्धि और नये होने वाले आविष्कारों का प्रोत्साहन आदि कार्यों ने मार्शल च्यांग-काई-शेक के शासन को बहुत ही महत्व पूर्ण बना दिया।

च्यांग-काई-शेक का एक शासन कर्ता तथा 'लोक सेवक' के रूप में बहुत नाम है, मगर एक साधारण मनुष्य की हैसियत से इन्हें लोग बहुत कम जानते हैं। वास्तव में इन्हों ने सिवा साहस भरे तथा देश सुधार के कामों के और किसी काम के बारे में सोचा भी नहीं। यही नहीं, जैसा कि हर एक शासक के लिते आवश्यक होता है कि वह निरन्तर अध्ययन करता रहे, च्यांग-काई-शेक भी डा० सनयात सेन की पुस्तकों तथा तर्क शास्त्र, फिलासफी राजनीति, भूगोल, सामाजिक और फौज सम्बन्धी पुस्तकों का बराबर अध्ययन करते रहे हैं।

उन्होंने कूमिंगटांग दल के लिए अपने को सदा के लिये समर्पित कर दिया है, साथ ही साथ अपने शिक्षा सम्बन्धो और सामाजिक कार्यक्रम में अपनी जातीयता और देश प्रेम का बहुत बड़ा ध्यान रक्खा है। वह लोगों की दैनिक आय को विस्तृत आर्थिक व्यापार मार्ग तथा सामाजिक सुधारों के बल पर बढ़ाना चाहते हैं।

१९२६ में नेशनल गवर्नमेण्ट कायम होने के बाद से देश का शासन सूत्र कूमिङ्गटांग पार्टी के हाथ में आया। इस पार्टी के सर्वेसर्वा च्यांग-काई-शेक हैं। खेद की बात है कि यह पार्टी क्रमशः चीन के धनिक वर्ग के प्रभाव में आ गई। नतीजा यह हुआ कि नेशनल गवर्नमेंट को यह बात बुरी मालूम हुई कि किसान और मजदूर अपना संगठन करें। किसानों के संगठन का समर्थक साम्यवादी दल नेशनलिस्ट सरकार की आखों में खटकने लगा। जेनरल च्यांग काई-शेक को अपने दल के निर्णय के अनुसार साम्यवादी दल का दमन करने के लिये बाध्य होना पड़ा। लगातार ८ वर्ष तक कोशिश करने पर भी साम्यवादी दल कुचला न जा सका। दिसम्बर १९२६ में शान्सी प्रान्त में साम्यवादियों के दमन के लिये स्वयं च्यांग-काई-शेक गये, किन्तु वहाँ आप साम्यवादियों के शिविर में बन्दी हो गये। फिर आप की पत्नी मैडम च्यांग-काई-शेक ने साम्यवादियों के साथ एक संयुक्त मोर्चा कायम करने की बात स्वीकार की। इस तरह देश के दो प्रभावशाली दलों ने जापान के विरुद्ध अपना मोर्चा दृढ़ किया। साम्यवादी दल ने अपनी सुसंगठित 'लाल सेना को' च्यांग-काई-शेक के नायकत्व में दी।

चीन-जापान के वर्तमान युद्ध में च्यांग-काई-शेक ने अपूर्व सैनिक योग्यता, धैर्य और राज नीतिज्ञता का परिचय दिया है।

—०:○:०—

(पांचवें पृष्ठ का शेष भाग)

दूसरे हजारों काँग्रेस कार्यकर्त्ता जेल में ठूंसदिये गये। देश में सरकार की ओर से घोर दमन होने लगा। पर देश में आजादी की जो लगन एक बार जाग्रत हो चुकी थी उसे सरकारी दमन भी न सुला सका। वैसे तो काँग्रेस नये शासन विधान के सादा से विरोध करती रही। लेकिन नये चुनाव ने सिद्ध कर दिया कि देश की जनता गान्धी जी और काँग्रेस के साथ है। नये विधान में हरिजनों को अलग करने के प्रयत्न को तो गान्धी जी ने अपने प्राणों की बाजी लगाकर और आमरण उपवास घोषित कर के ठंडा कर दिया। काँग्रेस मन्त्रिमंडल से आजादी की मन्द झलक लोगों को दिखाई देने लगी। लेकिन पूर्णस्वराज्य तक पहुँचने के लिये अभी देश को काफी आगे बढ़ना है। पर देश को अपने नेता पर पूरा भरोसा है। खद्दर, राष्ट्रभाषा, स्वालम्बी शिक्षा हिन्दू-मुस्लिम एकता, हरिजन उत्थान आदि आजादी के सभी साधनों पर गान्धी जी का ध्यान लगा है। यदि शान्ति के मार्ग से देश ने पूरा जोर लगाकर स्वाधीनता प्राप्त कर ली तो सारे संसार में नया शान्ति का (गान्धी) युग आरम्भ हो जायगा।

टर्की का मुस्तफा कमालपाशा

नवीन टर्की के निर्माता और राष्ट्रपति का जन्म १८७८ ई० में सेलोनिका नगर में हुआ था। उसका पिता पहले चुङ्गी का क्लर्क था। फिर उसने नौकरी छोड़ कर लकड़ी की दुकान कर ली। लेकिन वह कमाल के बचपन में ही मर गया। इस लिये कमाल के पढ़ाने लिखाने का भार उसकी माता के ऊपर आया जो एक किसान की लड़की थी। पहले मुस्तफा को अरबी पढ़ाई गई। लेकिन अरबी पढ़ाने वाले मास्टर से उसे असन्तोष हो गया। इसलिये अरबी मदरसे को छोड़कर वह चुपचाप (बिना अपनी माता को बतलाये हुए) फौजी स्कूल में भरती हो गया। फौजी स्कूल में उसने बड़ी उन्नति की। गणित में वह बहुत ही तेज था। इसी से उसके अध्यापक ने (जिसका नाम भी मुस्तफा था। अपने शागिर्द का नाम मुस्तफा कमाल (पूर्ण) रख दिया। मोनास्टीर के फौजी स्कूल से पास करने के बाद मुस्तफा कमाल कुस्तुन्तुनिया के फौजी कालेज में भरती हुआ। १९०५ में वह कप्तान हो गया। इसके बाद वह अपने देश की राजनीति में दिलचस्पी लेने लगा।

टर्की के सुल्तान अब्दुलहमीद का शासन बहुत निकम्मा था। साम्राज्य के बाहरी प्रान्त टर्की पर बोझ डाल कर उसे और भी कमजोर कर रहे थे। सभी विभागों में असन्तोष था। फौज में यह असन्तोष और भी अधिक था।

मुस्तफा कमाल को अपने देश की कमजोर सरकार से इतनी घृणा हो गई कि वह वतन (पितृभूमि) नाम की गुप्त संस्था का सदस्य हो गया। १९०४ में कमाल लेफ्टनेन्ट गजट हुआ। लेकिन उसी दिन कमाल गिरफ़तार कर लिया गया और सिरिया (दमश्क) के फौजी रिसाले में भेज दिया गया। दमश्क से वह जाफा भेजा गया। यहाँ से वह चुप चाप फिर सेलोनिका में वापस आ गया। तभी वह एकता और सुधार (Union and Progress) नाम की संस्था में शामिल हो गया।

इस संस्था पर अधिक तर यहूदियों का प्रभाव था। यह संस्था सारे टर्की में सुधार करना चाहती थी। मेसीडोनिया के विद्रोह से सुल्तान अब्दुल हमीद को झुकना पड़ा। "एकता और सुधार" संस्था के नामी सदस्यों और कमाल के साथियों (अनवर, तलत और जाविद) के हाथ में शक्ति आ गई। लेकिन कमाल को इससे कोई लाभ न हुआ। राजनैतिक क्षेत्र में कमाल को कोई विशेष सफलता न मिली। उसकी कड़ी (खरी) जबान और रूखा चेहरा उसकी सफलता में बाधा डालते थे। इसलिये कमाल ने अपना सारा ध्यान फौज की योग्यता बढ़ाने में लगाया। फौज के नौजवान अफसर उस पर भरोसा करते थे और उसे प्यार करते थे। १९११ में इटेलियन लोगों से लड़ने के लिये वह ट्रिपालीटाना भेज दिया गया। यहाँ उसे तरक्की मिली और वह मेजर हो गया। पहला बल्कान युद्ध उसके लौटने के पहले ही समाप्त हो गया। लेकिन दूसरे बल्कान युद्ध (जुलाई १९१३) में गेली पोली प्रायद्वीप की फौज का वह सेनापति

कर दिया गया। यहाँ उसने डार्डेनेल्स (दर्रा दानियल) की रक्षा के प्रश्न को बारीकी से अध्ययन किया। सन्धि हो जाने पर वह सोफिया में फौजी अफसर बना दिया गया। बड़ी लड़ाई के सम्बन्ध में कमाल का विश्वास था कि जर्मनी की हार अवश्यम्भावी है, यह बात उसने जर्मनी में वान हिन्डन बर्ग से भेंट होने पर भी कह दी थी। फिर भी बड़ी लड़ाई में कमाल को अपनी योग्यता दिखाने का अवसर मिला।

अनवर पाशा से अनबन होने के कारण कमाल को कोई विशेष ऊँचा पद नहीं मिला। मैड़ोस की रिजर्व सेना में वह जनरल कमांडर के मातहत था। लेकिन कमाल के सत्वर निश्चय, साहसी चालों और अन्त तक लड़ने का फल यह हुआ कि ब्रिटिश फौज गैली पोली में सफल न हो सकी। सारी लड़ाई में कमाल ने जान की कुछ भी परवाह न की और अपूर्व उत्साह दिखलाया। दूसरी बार फिर ब्रिटिश फौज ने चढ़ाई की। इस बार टर्की को जीत की कोई आशा न रही। लेकिन कमाल ने सिपाहियों को ऐसा जोश दिलाया कि डार्डनेल्स की रक्षा हो गई। यदि अनवर से अनबन न होती तो पहली बार कमाल सेनापति बना दिया जाता। इस बार एक बम्ब का टुकड़ा कमाल के ठीक दिल पर लगा। यदि बीच में उसकी घड़ी न आजाती तो उसके बचने की कोई आशा न थी। इसके बाद कमाल—कमालपाशा बनाकर काकेशस प्रदेश में भेज दिया गया। यहाँ उसने रूसियों से बिटलिस और मूश वापस ले लिया।

ग़ाज़ी मुस्तफा कमाल पाशा।

१९१७ में कमाल हजाज भेजा गया। कमाल की राय थी कि हजाज से सारी तुर्की फौज बुला ली जाय और सिरिया में रख दी जाय। पर उसकी सुनवाई न हुई। इस समय जर्मन कमांडर वानफाकेन हार बग़दाद लेने की फिकर में था। कमाल को टर्की के घरेलू मामलों में विदेशी हस्तक्षेप बहुत खटकता था। कमाल ने विदेशियों का विरोध करना आरम्भ कर दिया। उसने बग़दाद के सम्बन्ध में तुर्की सरकार को चेतावनी दी। जब उसकी सुनवाई न हुई तब कमाल ने इस्तीफा दे दिया। जब वहीदुद्दीन सुलतान हुआ तो उसके समझाने से कमाल ने फिर सेना में नौकरी कर ली। इस बार जब पेलेस्टाइन में ब्रिटिश कमांडर एलनबी ने तुर्कों को बुरी तरह रहा दिया था और तुर्की फौज तितर बितर हो गई थी तब कमाल ने ही फौज को एकत्रित करने और शानदार ढंग से पीछे हटाने का काम किया। बड़ी लड़ाई में टर्की के हार जाने से कमाल को आश्चर्य न हुआ। हार के बाद टर्की के बाहरी प्रान्तों के छिन जाने से कमाल को दुःख भी न हुआ। वह जानता था कि बाहरी प्रान्त टर्की के लिये भार रूप हैं। लेकिन जब टर्की

के ऊपर लज्जाजनक शर्तें लादी गई और स्मर्ना यूनानियों को दे दिया गया तब कमाल से न रहा गया। उसने सन्धि की निन्दा की और आवश्यकता पड़ने पर सन्धि को बदलने के लिये तलवार का सहारा लेने के लिये तय कर लिया। टर्की को बरबादी से बचाने के लिये अनातूलिया के नौजवान तुर्कों ने कमाल का साथ दिया। लेकिन बुड्ढा सुल्तान वहीदुद्दीन कुछ डरपोक था। उसे डर था कि सन्धि का विरोध करने से विजयी योरूपीय शक्तियां उस से गद्दी छीन लेंगी। इस लिये सुल्तान ने कमाल का घोर विरोध किया। और उसके साथियों की निन्दा की। इसका फल यह हुआ कि टर्की में गृह-कलह फैल गया।

कमाल ने कुस्तुन्तुनिया की कमज़ोर सरकार की परवाह न करके एकान्त में बसे हुये अंगोरा नगर में आज़ादी चाहने वाले तुर्कों की कांग्रेस की। यहीं से कमाल की राष्ट्रीय सेना का आरम्भ हुआ। सौभाग्य से तुर्की सरकार ने सन्धि की शर्तों को पूरा करने के लिये सेना के निःशास्त्रीकरण का काम कमाल को सौंप दिया। कमाल ने इस अवसर से लाभ उठाकर राष्ट्रीय सेना का संगठन किया। उसने समसुन, तोकात, सिवास आदि कई स्थानों में राष्ट्रीय आन्दोलन के केन्द्र स्थापित कर दिये।

तुर्की की सरकार को राष्ट्रीय आन्दोलन का देर से पता लगा। पता लगते ही उसने कमाल को कुस्तुन्तुनिया वापिस बुलाया। कमाल वापिस जाने के बदले इस्तीफा देकर अर्ज़रूम चला गया। कमाल ने एक राष्ट्रीय कांग्रेस जुलाई महीने में अर्ज़रूम में और दूसरी सितम्बर में सिवास में की। राष्ट्रीय अस्तित्व कायम, रखने के लिये इन कांग्रेसों में उपस्थित तुर्की नौजवानों ने अन्त तक लड़ने का वचन दिया। कुस्तुन्तुनिया की सरकार ने कमाल की संस्था को ग़ैर कानूनी करार दिया और विदेशी शक्तियों से उसे मिटाने की भरसक कोशिश की। इसी बीच में उसने कमाल से लोहा लेने के लिये यूनान (ग्रीस) को उभाड़ा और ग्रीस को बहुत सा प्रदेश देने का वचन दिया। यूनानी फौजें स्मर्ना से पूर्व की ओर बढ़ीं। १९२१ में कमाल ने पश्चिमी अनातूलिया को छोड़कर सक्कारिया नदी की शरण ली। अंगोरा (अंकारा) को बचाने के लिये यूनानियों से कई भीषण लड़ाइयां लड़नी पड़ीं। इनमें वीर तुर्कों की विजय हुई। सक्कारा की विजय के बाद कमाल ने एक वर्ष फौज को सुधारने में लगाया। १९२२ में कमाल ने यूनानियों को अनातूलिया से भगा दिया और स्मर्ना छीन लिया। यदि ब्रिटेन और फ्रांस की फौजें रुकावट न डालतीं तो कमाल के नौजवान तुर्क सिपाही कुस्तुन्तुनिया को छीन कर और अधिक पश्चिम की ओर बढ़ जाते।

तुर्कों की इस विजय से यूनानी साम्राज्य का स्वप्न एक दम दूर हो गया। नई सन्धि करने के लिये लासेन (स्विज़रलैण्ड) में कान्फरेन्स हुई। इस सन्धि ने १९१९ की सन्धि को बदल दिया। इस समय कमाल टर्की का निरंकुश स्वामी बन गया। आरम्भ में सुल्तान वहीदुद्दीन ने कमाल का घोर विरोध किया था और कमाल को दगाबाज देशद्रोही बतलाया। अपनी गद्दी को सुरक्षित रखने के लिये उसने ब्रिटेन की शरण ली। अब उसे इस विदेशी शरण का गहरा मूल्य देना पड़ा और वह गद्दी से उतार दिया गया। खिलाफत को पहले कुछ समय के लिये रहने दिया गया और वहीदुद्दीन का भतीजा अब्दुलमजीद खलीफा बनाया गया। नाम के लिये खलीफा दुनिया भर के दीनदार मुसलमानों का रूहानी सरदार था। लेकिन खिलाफत के रहने से विदेशी साजिशों को अवसर मिलता था। इससे तुर्की की आज़ादी को खतरा था। इसलिये कमाल ने खिलाफत ही को तोड़ दिया। टर्की में प्रजातन्त्र राज्य स्थापित हो गया। तुर्क लोगों ने देश को आज़ाद कराने वाले मुस्तफा कमालपाशा को गाज़ी या विजयी की उपाधि दी। कमाल ही टर्की का राष्ट्रपति और सेनाओं का प्रधान सेनापति चुना गया।

लड़ाई से छुट्टी पाने पर कमाल ने अपना सारा ध्यान सुधारों की ओर लगाया। कमाल के सुधारों ने योरुप के रोगी मनुष्य (टर्की) को एक शक्तिशाली राष्ट्र बना दिया। जापान की तरह टर्की भी विदेशियों को शक की नज़र से देखता है। लेकिन उनके गुणों

को अपनाने में टर्की ने जरा भी हिचकिचाहट नहीं की। पहले टर्की ने फेज़ या तुर्की टोपी की जगह योरुपीय हैट (टोप) पहनने का नियम बनाया। मज़हब को प्रधानता उड़ा दी गई। योरुपीय कानून टर्की में चलाये गये। विवाह की पुरानी प्रथा बन्द कर दी गई। व्याह करने के पहले तन्दुरुस्ती का प्रमाण पत्र पेश कराना पड़ता है। जो पुरुष तन्दुरुस्त नहीं होता है वह एक भी व्याह नहीं कर सकता। तुर्की स्त्रियों का परदा उड़ गया। वे सभी पेशों में भरती होने लगी। फौज और हवाई जहाज के काम में भी तुर्की स्त्रियां मिलेंगी। अरबी प्रभाव और अरबी भाषा उड़ा दी गई। कुरान का अनुवाद तुर्की भाषा में हो गया। तुर्की भाषा रोमन लिपि में लिखी जाने लगी। इस लिपि का प्रचार करने के लिये गाज़ी स्कूल मास्टर सा बन गया। उसने देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक सफर किया। टर्की में विदेशियों के स्कूल बन्द कर दिये गये। राष्ट्रीय शिक्षा अनिवार्य कर दी गई। कृषि का सुधार करने के लिये कमाल ने राजधानी के पास एक आदर्श खेत (फार्म) खोला है। वहां वह नियम पूर्वक काम करने जाता है।
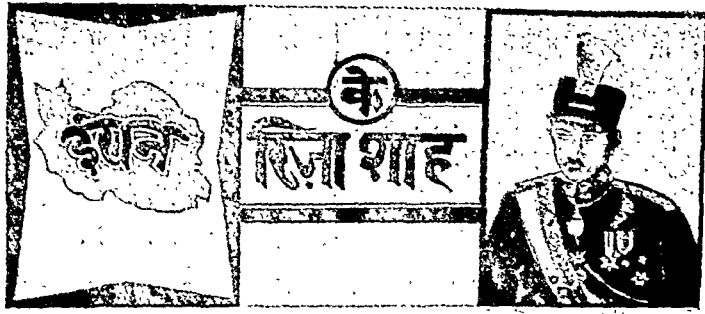
ईरान का रिज़ाशाह

ईरान के राजा रिजाखां (शाह) पहलवी का जन्म १८७७ ई० में कोह सवद में में हुआ था। रिजा खां का बाप मजन्दरान में एक किसान था। पीछे उसने फौज में नौकरी कर ली थी। रिजाखां ने नई उम्र में ही फौज में नौकरी कर ली थी। कुछ समय बाद वह कोसाक डिवीजन (कज्जाकी फौज) का अफसर हो गया। यह फौज रूसियों को रोकने के लिये भेजी गई। रूसी लोग इस समय एंजीली बन्दरगाह (कास्पियन तट) पर गोलाबारी कर रहे थे। रूसियों ने एंजीली बन्दरगाह को छीन कर रश्त शहर पर अधिकार कर लिया था। इरानी फौज को रूसियों ने बुरी तरह से हराया। ईरानी फौज को भगाकर काज्विन में पड़ी हुई ब्रिटिश फौज के पास आकर शरण लेनी पड़ी। इस समय ईरान के बहुत बड़े भाग में ब्रिटिश फौजों का जाल सा बिछा हुआ था। १९१७ में रिजाशाह हमदान से तहरान एक फौज लेकर आया। यहाँ उसने एक सेना पति को हटाकर दूसरे सेनापति बनाया। १९२१ में ४००० सिपाही लाकर रिजाखां स्वयं प्रधान सेना पति और युद्ध मन्त्री बन गया।

रिज़ाशाह पहलवी

इस समय से ईरान की सरकार की बागडोर वास्तव में रिजाखां के हाथ में आ गई। शाह नाम मात्र के लिये रह गया। रिज़ाखां ने अपने मन का मंत्रि मंडल बनाया और कई तरह के सुधार किये। १९२३ में रिजा खां प्रधान मन्त्री बना। जो जो प्रस्ताव उसने पेश किये उनको मजलिस ने एक मत होकर पास कर दिया। अर्थ विभाग को सुधारने के लिये अमरीकन अर्थ-मन्त्री को सभी तरह की सुविधा दी गई। शाह सुल्तान अहमद कदजार को अपनी स्थिति से घोर असन्तोष था। उन्होंने १९२४ में योरुप जाने के लिये प्रस्थान किया। इधर मजलिस ने रिजाखां को सरकार का सर्वेसर्वा बना दिया। इसी समय ईरान का नया शासन विधान बना।

१९२५ में मजलिस ने रिजाखां पहलवी को बाद (याद) शाह बना दिया और उसके बाद बादशाहत पहलवी वंश में रहने का प्रस्ताव पास कर दिया। १९२६ में तहरान शहर के गुलिस्तां महल में ताजपोशी हुई।

रिजाशाह ने ईरान को उन्नत करने के लिये तरह तरह के सुधार किये। पुरानी पोशाक की जगह योरूपीय पोशाक पहनने के लिये कानून बन गया। शिक्षा का प्रचार बढ़ा। देश के कारबार को बढ़ाने के लिये देशी दस्तकारी को सरकारी सहायता दी जाने लगी। फौज में भी सुधार हुआ। फौजी शक्ति बढ़ाने से विदेशी हस्ताक्षेप बहुत कम हो गया।

नवम्बर में शाह ने एंग्लो पर्शियन आयल कम्पनी को मिले हुए कन्सेशन (रियायतें) रद कर दिये। संयुक्त राष्ट्र अमराका से हवाई जहाज और बारूद मंगाने का प्रबन्ध किया।

अभी हाल में ईरान में एक क़ानून बना है। इसके अनुसार ईरान में बैंक या दूसरी संस्थाओं को अपना सारा हिसाब और विवरण ईरानी भाषा और अक्षरों में रखना पड़ेगा। वे विदेशी भाषा और विदेशी लिपि का प्रयोग न कर सकेंगी।

रूस का लेनिन

लेनिन का पूरा नाम व्लाडीमीर इलियच उल्यानोव लेनिन था। लेनिन का जन्म १८७० और मृत्यु १९२४ में हुई। लेनिन का जन्म रूस के मामूली अमीर घराने में हुआ था। जब १८९१ में उस के बड़े भाई को एलेग्जेंडर द्वितीय की हत्या के सम्बन्ध में प्राणदंड हुआ तब से वह जनता को जारशाही जुलम से मुक्त करने के लिये क्रान्तिकारी हो गया। १८८७ ई० में २७ वर्ष की उम्र में ३ वर्ष तक लेनिन को साईबेरिया में रहने का दंड मिला। साईबेरिया की कठोर शीत में रहना प्राणदंड से भी अधिक दुःखदाई होता है।

१८८७ में लेनिन सिम्ब्रिस्क स्कूल से इतने उत्तम वर्ग में उत्तीर्ण हुआ कि उसे स्वर्ण पदक पुरस्कार में मिला। इसी वर्ष वकालत पढ़ने के लिये लेनिन कजान विश्वविद्यालय में भरती हुआ। लेकिन विद्यार्थियों की एक सभा में भाग लेने के कारण वह देहात भेज दिया गया। १८८९ में उसे फिर कजान विश्वविद्यालय में आने की आज्ञा मिली। इस बार वह क़ानून (वकालत) पढ़ने के साथ-साथ कार्लमार्क्स के साम्यवादी सिद्धान्तों को ध्यान से पढ़ने लगा। १९८१ में लेनिन ने सेन्टपीटर्स वर्ग विश्वविद्यालय की वकालत की परीक्षा पास की। १८९३ में लेनिन ने समारा की अदालत में कई मुक़द्मों की पैरवी की। लेकिन उसका मन पहले रूस और फिर समस्त संसार की राजनैतिक और आर्थिक समस्याओं को सुलझाने में लगा था।

१८९४ में वह सेंट पीटर्स वर्ग आया और प्रचार-कार्य करने लगा। १८९५ में मार्क्स के अनुयायियों और मजदूरों का पक्ष लेने वाले नेताओं से मिलने के लिये लेनिन विदेश गया। लौटने पर लेनिन ने सेन्टपीटर्स वर्ग में मजदूरों को आजादी दिलानेवाला संघ स्थापित किया। मजदूरों की यह संस्था शीघ्र ही प्रभावशाली हो गई। १८९५ में लेनिन और उस के घनिष्ट मित्र गिरफ़ार कर लिये गये। १८९६ का वर्ष उसका जेल में बीता। १८९७ में उसे तीन वर्ष के लिये देश निकाले का दंड मिला। और वह पूर्वी साइबेरिया के यनीसी प्रान्त में भेज दिया गया। १८९८ में उसने सेन्टपीटर्स वर्ग की संस्था की सहयोगिनी क्रुप्सकाया से ब्याह किया। लेनिन के जीवन के २६ वर्षों के अन्त तक इस पतिगामिनी स्त्री ने अपूर्व स्वामिभक्ति का परिचय दिया। निर्वास काल में लेनिन ने 'रूस को पूंजी वाद का विकास" अपना अर्थशास्त्र सम्बन्धी महत्व पूर्ण ग्रन्थ लिखा। १९०० में लेनिन इस्क्रा (चिनगारी) नाम के क्रान्तिकारी पत्र के छपाने का प्रबन्ध करने के लिये स्विजरलैंड गया। इस पत्र की प्रथम प्रति म्यूनिक से प्रकाशित हुई। साम्यवादियों की दूसरी सभा १९०३ में ब्रूसेलस में हुई। इस सभा में प्लेखानोव और लेनिन का बनाया हुआ कार्यक्रम स्वीकार कर लिया गया। पर यहाँ साम्यवादियों के दो दल (बोल्शेविक और मेन्शेविक) हो गये। लेनिन बोल्शेविक या गरमदल का नेता बना। मेन्शेविक (या नरम) दल और लेनिन के दल में मतभेद बढ़ता ही गया। १९१४ में दोनों दलों का भेद एकदम स्पष्ट हो गया। १९०५ में रूसी-जापानी लड़ाई से रूस देश में क्रान्तिकारी स्थिति पैदा हो गई। किसानों के दंगों

और राजनीतिक हड़तालों के कारण रूसी कार्यकर्ताओं पर गोली चलाई गई। लेनिन का विचार था कि जनता को उभाड़ कर ज़ारशाही का सशस्त्र विरोध कया जावे। १९०५ के अक्तूबर महीने में रूसी बोल्शेविक लोगों ने किसानों के सम्बन्ध में एक नया कार्यक्रम तैयार किया जिस के अनुसार जागीरदारों की ज़मीन को जब्त करने का निश्चय किया गया था। ज़ार ने शासन में सुधार करने की घोषणा की। लेनिन स्विज़रलैंड से रूस लौट आया।

१९०५ के दिसम्बर में मास्को में जो विद्रोह उठा उस में फौज की सहायता न मिल सकी। दूसरे शहरों ने भी साथ न दिया। अतः यह विद्रोह एक दम कुचल दिया गया। इस से नरम दल वाले आगे बढ़े।

लेनिन ने अपने साथियों को आदेश दिया कि पार्ल्यामेन्ट की सहायता से वे अपने कार्य क्रम को आगे बढ़ावें। लेकिन १९०७ ई० में लेनिन को फिर रूस छोड़ना पड़ा। इस के बाद वह केवल १९१७ ई० में फिर रूस लौट सका। लेनिन के जीवन की विलक्षणता यह रही कि उसे अधिकतर समय रूस के बाहर ही बिताना पड़ा। फिर भी जितना उसे रूसी जनता से परिचय था उतना और किसी रूसी नेता को न था। १९१२ और १९१४ के बीच में रूसी क्रान्तिकारियों में नया जोश आगया। १९१२ में लेनिन ने प्रेग शहर में क्रान्तिकारियों की एक गुप्त सभा की। इसी समय मेन्शेविक या अल्प-संख्यक नरम दल के लोग अलग कर दिये गये। लेनिन ने अपने सिद्धान्तों का रूस में प्रचार करने के लिये प्रवदा नाम का समाचार पत्र सेन्ट पीटर्स बर्ग में चलवाया। पत्र के संचालन का काम वह बाहर से करता रहा। अपने देशवासियों से सम्पर्क रखने के लिये लेनिन ने पेरिस छोड़ कर अपना निवासस्थान क्रेकाओ में बनाया। लेनिन ने अपने प्रवास काल के कुछ वर्ष लन्दन में भी बिताये। लन्दन में वह १९०३ के पहले ब्रिटिश म्युज़ियम के पड़ोस में रहता था। यहाँ उसने एक ओर अत्यन्त गरीब और दूसरी ओर मालामाल लोग देखें। यहीं उसको कार्लमार्क्स की कब्र से गुज़रते समय नया प्रोत्साहन और ब्रिटिश म्यूज़ियम से पठनपाठन की अपार सामग्री मिलती थी। रूसी भाषा तो उस की मातृभाषा ही थी। वह इंगलिश, जर्मन और फ्रेंच भाषा का भी मास्टर था। वह इटेलियन, स्वेडिश और पोलिश भाषा भली भांति पढ़ और समझ लेता था। वह संसार की प्रायः सभी श्रमजीवी संस्थाओं से सम्पर्क रखता था।

रूस में नया युग लाने वाला लेनिन।

१९१४ ई० में उसे एक नया अवसर मिला। उसने कहा कि बड़ी लड़ाई का मूलकारण साम्राज्यवादी हैं। मज़दूरों को उसने चेतावनी दी कि वे अपने देश की पूंजीपति सरकार का साथ न दें और देश में गृहकलह फैला दें।

१९१७ में रूसी लोग बड़ी लड़ाई से कुछ थकने लगे और जारशाही से तंग आगये। इसी वर्ष उन्हों ने

विद्रोह खड़ा किया। इस समय लेनिन स्विजरलैंड में था। जब लेनिन ने रूस पहुँचने का प्रयत्न किया तो ब्रिटिश सरकार ने इसमें बाधा डाली। अतः लेनिन ने जर्मनी होकर यात्रा करने का निश्चय किया। इस ढंग से वह रूस पहुँच गया। लेकिन उस के शत्रुओं ने उसे बदनाम करने की कोशिश की कि वह जर्मनी का एजेन्ट हो कर आया है। इस अफवाह का कुछ भी असर न हुआ और लेनिन के हाथ में क्रान्ति का नेतृत्व आगया।

१९१७ के मार्च की क्रान्ति में राष्ट्र की पूरी सहायता न थी। केरेन्स्की की क्षणिक सरकार मध्यम श्रेणी के लोगों की संस्था थी। लेनिन ने क्षणिक सरकार की इस कमजोरी को ताड़ लिया। इस लिये उसने इस को किसी प्रकार का सहयोग नहीं दिया। रेलगाड़ी से उतरते ही सेन्टपीटर्स वर्ग के पहले भाषण में लेनिन ने कहा कि जारशाही का पतन तो क्रान्ति की केवल पहली सीढ़ी है। पूंजीपतियों के आन्दोलन से जनता की सरकार का यह उद्देश्य होना चाहिये कि सोवीट या पंचायतों की शक्ति बढ़े और सरकार की रचना साम्यवादी ढंग पर हो। लेनिन का कार्यक्रम केरेन्स्की और उस के साथियों को पसन्द न आया। लेकिन कई कारणों से लेनिन को सफलता मिली।

जब ज़ार को गद्दी से उतारा गया तब किसानों को जमीन देने का वचन दिया गया था। लेकिन क्षणिक सरकार ने जर्मनी के विरूद्ध लड़ाई जारी रखने का निश्चय किया। जब तक लड़ाई समाप्त न होती तब तक रूस के किसान-सिपाही जमीन पर अधिकार नहीं कर सकते थे। लेनिन ने घोषणा की कि ज्यों ही उसके (बोल्शेविक) दल ने शासन का भार अपने हाथ में लिया त्योंही सन्धि कर ली जावेगी और किसानों को जमीन बांट दी जावेगी। इस प्रकार लड़ाई से थके हुए और जमीन चाहने वाले रूसी किसानों को लेनिन की बात एकदम पसन्द आई। क्षणिक सरकार के समर्थक मध्यम श्रेणी के लोग नहीं के बराबर थे। अतः फौज और जन साधारण की सहायता न मिलने से क्षणिक सरकार लेनिन के सुसंगठित बोल्शेविक दल का सामना न कर सकी। इस प्रकार रूस देश का शासन लेनिन की अध्यक्षता में बोल्शेविक दल के हाथ में आगया। इस क्रान्ति में बोल्शेविक दल को अधिक खून बहाने की आवश्यकता न पड़ी। लेकिन इस सफल क्रान्ति के बाद रूस में गृहकलह का सूत्र पात हुआ। जनता की शक्ति को बढ़ता देखकर योरुप की पूंजीपति शक्तियाँ थर्राने लगीं। उन्होंने बोल्शेविक सरकार को नष्ट करने के लिये रूसी देशद्रोहियों को सहायता देकर रूस में गृहकलह फैला दी। ब्रिटेन ने दक्षिण में काकेशस की ओर से और उत्तर में आर्केञ्जल की ओर से रूस पर चढ़ाई कर दी। लेनिन ने जर्मनी से ब्रेस्टलिटोव्सक की सन्धि कर ली। जब ट्राट्स्की सन्धि की शर्तें तय कर रहा था तो उसे पूंजीपतियों की पोशाक में एक सभा में जाना पड़ रहा था। ट्राट्स्की ने लेनिन की राय मांगी। लेनिन ने तुरन्त उत्तर दिया कि शान्ति के लिये यदि लंहगा पहनना पड़े तो थोड़ी देर के लिये उसे भी पहन लो। इसी सन्धि से रूस में गृहकलह की नींव पड़ी और इसी से चिढ़ कर ब्रिटेन ने रूस के उत्तरी और दक्षिणी भाग पर चढ़ाई की। गृहकलह और बाहरी आक्रमण से रूस प्रायः बरबाद हो गया। मार्क्स का अनुयाई और कट्टर साम्यवादी होते हुए भी लेनिन ने पीड़ित लोगों को सहारा देने के लिये कुछ समय के लिये उन्हें निजी जायदाद रख लेने दी। रूसी क्रान्ति के साथ संसार भर में क्रान्ति फैलाना साम्यवाद का दूसरा सिद्धान्त था। लेकिन हंगरी के किसान और जर्मनी, आस्ट्रिया, इटली, लिथुएनिया, एस्थोनिया, लैटविया और फिनलैंड के मध्यम श्रेणी के लोग क्रान्ति के लिये तैयार न थे। अगर संसार भर के गरीब और मजदूर लोग एक साथ विद्रोह न करें तो एक देश में साम्यवादी विद्रोह का सफल होना कठिन था। लेनिन ने बाहरी शत्रुओं के आक्रमण और भीतरी गृहकलह के होते हुए भी रूस को स्वावलम्बी बनाने और बिजली फैलाने के लिये पंचवर्षीय योजना शुरू की। लेनिन का अनुमान था कि सामूहिक रूप से खेती, नये ढंग के यंत्रों की खेती से रूसी किसानों का रहन-सहन इतना अधिक ऊँचा

हो जायगा कि उन्हें किसी बाहरी हमले का डर न रहेगा।

रूसी किसानों ने फौज़ से लौट कर 'जागीरदारों से जमीन छीन कर आपस में बाँट ली। राजधानी मास्को में बना ली गई। ब्रिटिश हस्तक्षेप और चेकोस्लोवैक लोगों का आक्रमण सफल न हो सका। लेनिन का प्रचार कार्य इस प्रकार बढ़ता रहा कि उस के सभी शत्रुओं को नीचा देखना पड़ा। पंचवर्षीय योजना ऐसी सफल हुई कि पहली योजना के बाद उस के अनुयाइयों ने दूसरी और फिर तीसरी पंचवर्षीय योजना शुरू की।

लेकिन काम की अधिकता का भार लेनिन के ऊपर इतना पड़ा कि उस का स्वास्थ बिगड़ गया। १९२२ में डाक्टरों ने उसे काम करनेकी मनाई करदी। पर वह काम से न बच सका। १९२४ में उसकी मृत्यु हो गई। मृत्यु के अवसर पर रूस की जनता ने अभूतपूर्व प्रेम प्रदर्शन किया। सरदी की ऋतु ऐसी कड़ी थी कि रोते हुए किसानों और सिपाहियों के आँसू एकदम बरफ के कणों में बदल जाते थे। फिर भी अपार भीड़ थी। लेनिन ने अपने अपूर्व त्याग और बलिदान से न केवल रूस बरन् सारे संसार के लिये एक नया युग ला दिया। जो लोग कुचले जाते थे और अपनी मेहनत का उपयोग नहीं कर सकते थे उन में नया जीवन आ गया। वे अपने को मालिक समझने लगे। उन को चूसने वाले पूंजीपति लोग डरने और शरमाने लगे।

इब्न सऊद

इब्न सऊद या अब्दुल अज़ीज़ इब्न अब्दुल रहमान इब्न फैसल इब्न सऊद नजद की राजधानी रियादह नगर में १८८० ई० में पैदा हुआ था। उसका पिता अब्दुल रहमान (जो १९२८ में मर गया) नजद के सुल्तान अमीर फैसल के चार लड़कों में सब से छोटा लड़का था। अमीर फैसल ने १८३४ से १८६७ तक शासन किया। उसके मरने पर मध्य अरब में गड़बड़ी और गृहकलह फैल गई। गद्दी के लिये उसके दो बड़े लड़के अब्दुल्ला और सऊद आपस में लड़ने लगे। १८७५ में तुर्कों ने हासा पर अधिकार कर लिया। उत्तरी नजद से इब्न रशीद प्रतिद्वन्द्वी के वेश में दक्षिण की ओर अपना राज्य फैला रहा था। अन्त में अमीर मुहम्मद ने रियादह को छीन कर वहबी राज्य ही समाप्त कर दिया। अब्दुल अज़ीज देश से बाहर निकल गया। कुछ समय बहरिन में रहने के बाद वह कुवैत आया। यहां उसे शेख मुहम्मद ने ब्रिटेन से मित्रता रखने और आगे बढ़ने की सलाह दी। अब्दुल रहमान ने १९०० ई० में वहबी राज्य को फिर से लेने की कोशिश की। सरीफ में उसकी हार होने पर उसने अपने सब अधिकार अपने बड़े लड़के अब्दुल अज़ीज़ को सौंप दिये। १९०१ में २०० सिपाहियों के साथ अब्दुल अज़ीज रेगिस्तान में बढ़ा।

जब राजधानी कुछ ही दूर रह गई तब उसने २०० में से १५ मनुष्यों को चुना। रात में वह इन साथियों को लेकर रियादह (राजधानी) में पहुँचा और किले के सामने वाले घर में घुस गया। किले में रशीदी हाकिम रहता था। रात में जो भीषण लड़ाई हुई उसमें इब्न सऊद की जीत हुई। इस प्रकार इब्न सऊद रियादह का मालिक बन गया और नजद का राजा घोषित कर दिया गया। कुछ वर्षों में इब्न सऊद ने अपने पड़ोस वाले प्रान्तों पर अधिकार कर लिया और इब्न रशीद का मुकाबिला करने लगा। इब्न रशीद को तुर्कों से सहायता मिलती थी। १९०६ में इब्न रशीद मर गया। इससे इब्न सऊद को उत्तर की ओर से कोई खटका न रहा।

बाहरी हमलों से मुक्त होने पर इब्न सऊद ने भीतरी सुधार की ओर अपना सारा ध्यान लगाया। अलग अलग फिरकों को मिला कर उसने १९१२ में एक कौम बनाने की कोशिश की। जहां पहले १०० रहने वाले थे, वहीं अरताविया में १०,००० मनुष्यों की अच्छी बस्ती बस गई। इसी तरह पिछले २० वर्ष में कई जगह बस्तियां बढ़ गईं। घुमक्कड़ चरवाही की जगह पर खेती होने लगी। बद रस्म की जगह शरह या धर्म ग्रंथ के अनुसार काम होने लगा। हर एक बस्ती में कुछ न कुछ वहबी स्थायी सेना तैयार होगई। यह सेना भीतरी शान्ति रखने और बाहरी हमलों को रोकने के काम आती है। १९१३ में वहबी फौज ने अचानक हफ़ूफ पर छापा मारा। तुर्क लोग १८७५ से हासा में राज्य करते थे। इब्न सऊद की फौज इस प्रकार अचानक हफ़ूफ में पहुँची कि तुर्की फौज से कुछ भी करते न बन पड़ा। बिना लड़े ही हफ़ूफ पर इब्न सऊद का अधिकार हो गया। इसी तरह उक़ैर और क़ातिफ में इब्न सऊद का अधिकार हो गया और तुर्क लोगों ने पूर्वी अरब को छोड़ दिया।

१९१४ के अन्त में ब्रिटिश कैप्टेन शेक्सपियर तुर्कों के विरुद्ध सहायता लेने के लिये इब्न सऊद से मिलने गया। इब्न सऊद का पुराना दुश्मन इब्न रशीद तुर्कों से मिल गया था। इब्न सऊद ने एकदम फौज इकट्ठी की। जराब में लड़ाई हुई। लेकिन कैप्टेन शेक्सपियर मारा गया। इसलिये अंग्रेजों ने भीतरी अरब में बहुत छेड़खानी न की। १९१५ में इब्न सऊद ने अंग्रेजों से मित्रता सम्बन्धी सन्धि कर ली। लेकिन जब लारेंस की सहायता से राजा (शाह) हुसेन हजाज में बलवान होने लगा तब इब्न सऊद को चिन्ता होने लगी। १९१७ में ब्रिटिश मिशन फिर इब्न सऊद के दरबार में गया। १९१८ में इब्न सऊद ने इब्न रशीद पर चढ़ाई की। वह हैल की दीवारों के पास तक पहुँच गया। इसी बीच में बड़ी लड़ाई समाप्त हो गई। इस लिये इब्न सऊद की स्थिति में कोई अन्तर न पड़ा। बड़ी लड़ाई के पहले जो दो दुश्मन (इब्न रशीद और शाह हुसेन) थे वे ही बाद में भी बने रहे। १९१९ में ब्रिटिश सरकार की ओर से लार्ड कर्जन ने शाह हुसेन की तरफदारी की। ब्रिटिश सरकार ने शाह हुसेन को खुरमा पर अधिकार करने और इब्न सऊद को वहां से दूर रहने की आज्ञा दी। लेकिन इब्न सऊद ने इनकी परवाह न की। दो महीने बाद वहबी फौजों ने हुसी फौजों को तुराबा के पास छापा मार कर नष्ट कर दिया। इसके बाद इब्न सऊद रियादह को लौट गया। १९२० में इब्न सऊद की वहबी फौजों ने असीर जीत लिया। १९२१ में हैल को जीतने से सारा मध्य अरब इब्न सऊद के हाथों में आ गया। १९२१ में वहबी लोगों ने जौफ पर अपना अधिकार जमाया।

अरब के इब्नसऊद।

ब्रिटिश सरकार ने देर से दोनों के बीच में मध्यस्थ बनने की कोशिश की। अप्रैल १९२४ तक इसका कोई फल न हुआ। इसी समय वहबी लोगों ने हजाज़ पर चढ़ाई की और तैफ पर छापा मार कर उसे जीत लिया। वहां के निवासी मार डाले गये। शाह हुसेन को अपने बड़े लड़के अली के पक्ष में गद्दी छोड़नी पड़ी। अली ने शीघ्र ही मक्का खाली कर दिया। वहां वहबी लोगों का अधिकार हो गया। १९२४ में इब्न सऊद ने पहली बार मक्का में प्रवेश किया। कुछ महीनों में मदीना, जद्दा और दूसरे ज़िलों पर भी वहबी लोगों का अधिकार हो गया। १९२६ में मक्का की बड़ी मस्जिद में इब्न सऊद हजाज का शाह घोषित किया गया। नजद और दूसरे भागों का सुल्तान वह पहले ही था।

१९२७ में ब्रिटेन से फिर मित्रता सम्बन्धी सन्धि हुई। लेकिन जब इराक के राजा ने अरब की सीमा के पास क़िले बनवाये तो दोनों में खट पट हो गई। इब्न सऊद की एक फौजी टोली ने किला बनाने वालों को मार डाला।

इब्न सऊद को नजद में राज्य करते लगभग ३५ वर्ष और हजाज में १० वर्ष हो गये हैं। जहां पहले अराजकता थी वहां अरब में इब्न सऊद ने अमन कर

दिया है। हज करने वालों के लिये मोटर मार्ग की सुविधा हो गई है। राज्य की आमदनी बढ़ गई है। साथ ही रिशवत खोरी कम हो गई है। उसका सब से बड़ा लड़का लगभग ३२ वर्ष का है और नजद का सूबेदार है। दूसरा लड़का कई बार योरुप हो आया है। वह मक्का का सूबेदार है। इन दो के अतिरिक्त इब्न सऊद के ११ लड़के और हैं। इब्न सऊद ने १५० शादियां की हैं। कई स्त्रियों को पीछे से तलाक भी दे दी। कुछ शादियां राजनैतिक कारणों से की गई। फिर भी हजरत मुहम्मद के आरम्भ के अनुयाइयों के बाद इब्न सऊद ने सब से अधिक शक्तिशाली राज्य अरब में स्थापित कर दिया है।

—०:◡:०—

मसोलिनी

इटली का प्रसिद्ध तानाशाह वेनिटो मसोलिनी १८८३ ई० की २९ जुलाई को डोविया नगर में पैदा हुआ था। उसका बाप एक लुहार था। वह ऐसा अन्तर्राष्ट्रीय क्रान्तिकारी और नास्तिक था कि उसका नाम दूर दूर तक फैल गया था। लेकिन मसोलिनी की माँ बड़ी धार्मिक थी। वह एक स्कूल में अध्यापिका थीं। बालक-मसोलिनी पर भिन्न-भिन्न समयों पर आस्तिक माता और नास्तिक पिता दोनों ही का असर पड़ा।

मसोलिनी को फायेंजा के सेलसन कालिज में शिक्षा मिली थी। वहाँ विद्यार्थी मसोलिनी ने तीव्र बुद्धि का परिचय दिया। लेकिन वह शिक्षकों और दूसरे पदाधिकारियों का अक्सर विरोध करता था। इसके बाद वह फोर्लिम्पो पोली के नार्मल स्कूल में भेजा गया। वहाँ की पढ़ाई समाप्त करके वह एक देहाती स्कूल का शिक्षक बन गया। इस समय वह केवल १८ वर्ष का था। फिर भी वह खूब पढ़ता था। उसे इटली के साम्यवादी दल से दिलचस्पी हो गई। वह अध्यापक जीवन से थक सा गया। इधर उसके साम्यवादी विचार अधिकारियों को खटकने लगे। अतः उसे अध्यापकी छोड़नी पड़ी। कुछ समय बाद उसे सिविल सर्विस की एक छोटी नौकरी मिल रही थी। इस नौकरी से उसे खाने पीने की कमी न रहती। लेकिन वह अपने राजनैतिक उद्देश्यों को नहीं छोड़ना चाहता था।

पैसा पास न होने पर भी वह ऊँची पढ़ाई के लिये स्विजरलैंड गया। कभी स्टीमर (नाव) में मज़दूरी करके कभी पत्थर ढो कर वह अपनी गुज़र करता था। कहा जाता है कि यहीं वह एक बार जेनेवा और दूसरी बार लासेन की साम्यवादी सभा में लेनिन से मिला। एक रात को मसोलिनी लासेन के एक पुल पर सो रहा था। वहाँ की पुलिस ने उसे आवारा गर्दी में स्विज़रलैंड से निकाल दिया। हाल में जब मसोलिनी इटली का प्रधान मन्त्री और तानाशाह हो गया तब यहाँ एक विचित्र घटना हुई। जब प्रधान मन्त्री की स्पेशल गाड़ी स्विज़रलैंड की सीमा पर पहुँची तब एक पुलिसमैन गाड़ी पर चढ़ कर पूछने लगा। इस गाड़ी में कोई वेनिटो मसोलिनी है? कुछ वर्ष पहले उसको स्विजरलैंड से बाहर निकालने की जो आज्ञा हुई थी वह वापिस नहीं ली गई है। गाड़ी रोक ली गई। लेकिन जब पुलिस वालों को मालूम हुआ कि वही वेनिटो मसोलिनी इटली का प्रधान मन्त्री है तब टेलीफोन द्वारा वर्न (स्विज़रलैंड की सरकारी राजधानी) की विशेष आज्ञा लेने पर स्पेशल गाड़ी आगे बढ़ी।

स्विजरलैंड से फ्रांसीसी भाषा का डिप्लोमा लेकर लौटने पर मसोलिनी साम्यवादी राजनीति में घुस गया। पहले वह लाआवेनाइर नाम के साम्यवादी समाचार पत्र के सम्पादन विभाग में रहा। फिर वह दूसरे साम्यवादी पत्रों में लेख लिखता रहा।

१९११ में मसोलिनी की उस समय की इटेलियन सरकार से खटपट हो गई। इटली की सरकार ने

ट्रिपली में फौज भेजने का निश्चय कर लिया। मसोलिनी लड़ाई का विरोधी न था। पर सरकारी दल से उसका मत भेद था। सरकारी दल इटेलियन साम्राज्य को बढ़ाने के पक्ष में था। मसोलिनी चाहता था कि पहले घर का सुधार हो। कृषि में उन्नति हो और लोगों में धन बढ़े। अतः उसने अधिकारी वर्ग का विरोध करने और ट्रिपली में फौज न भेजने के लिये लोगों में आन्दोलन आरम्भ किया। मसोलिनी गिरफ़ार कर लिया गया। उसे पाँच महीने की सजा हुई। छूटने पर भी वह साम्यवादी दल का कट्टर अनुयायी बना रहा। उसके सम्पादन काल में साम्यवादी पत्र अवन्टी की ग्राहक संख्या ४०००० से बढ़ कर १ लाख हो गई।

१९१४ में बड़ी लड़ाई के अवसर पर मसोलिनी के सामने बड़ी विकट समस्या उपस्थित हुई। साम्यवादी होने की हैसियत से वह चाहता था कि उसके देश वाले लड़ाई में शामिल हों और यह लड़ाई सदा के लिये शान्ति स्थापित कर दे। लेकिन देशभक्त इटेलियन होने की हैसियत से वह लड़ाई में शामिल होने से झिझकता था। वह समझता था कि उसके देश वासी लड़ाई में शामिल होने के लिये तैयार नहीं हैं।

इटली की सरकार ने आरम्भ में तटस्थ रहना ही उचित समझा। धीरे धीरे में मसोलिनी में परिवर्तन हुआ। उसके साम्यवादी साथियों और उसमें मतभेद हुआ। मसोलिनी ने देखा कि प्रायः सारा योरुप लड़ाई के लिये सुसज्जित है। ऐसी अवस्था में अकेले इटली को निहत्था रखना घातक होगा। उसने यह भी देखा कि लड़ाई में शामिल होने से देश की कायरता दूर हो जायगी। वीरता और एकता के भाव जागेंगे। अतः उसने साम्यवादी पत्र (अवंटी) के सम्पादक के पद से इस्तीफा दे दिया। उसके साथियों ने उसे विश्वासघाती, किराये का टट्टू और हत्यारा बतलाया। मसोलिनी ने अपनी सफाई देने के बदले उनको बेईमान बतलाया। मसोलिनी का अन्तिम वाक्य मर्मस्पर्शी था। उसने कहा कि तुम मुझसे इस लिये घृणा करते हो क्योंकि तुम्हें इस समय भी मुझसे प्रेम है। इस समय मसोलिनी ने इल पोपोलो डि इटेलिया (Il Popolo d Italia) अर्थात् "इटली के लोग" नाम का समाचार पत्र स्थापित किया। कुछ लोगों ने यह उड़ाया कि मित्र राष्ट्रों के पक्ष का प्रचार करवाने के लिये मसोलिनी को फ्रांस से धन मिला है। पहले लेख में मसोलिनी ने पूछा क्या हम जिल्लत की जिन्दगी से सन्तुष्ट रहना चाहते हैं अथवा साजिश और बुजदिली का अन्त करना चाहते हैं? इसी में उसने लोगों से लड़ाई में शामिल होने के लिये अपील की। जब इटली लड़ाई में शामिल हो गया तब मसोलिनी ने पोपोलो डि इटेलिया पत्र में लिखा "आज से सारी

नवीन इटली का बनाने वाला मसोलिनी।

जाति को हथियार उठाना है। आज से हम याद रक्खें कि हम सब के सब इटेलियन हैं। चूं कि हमको लोहे से लोहा लेना है इस लिये हमारे दिलों से एक ही आवाज़ निकले। वह है विवा डि इटेलिया! (इटली जिन्दाबाद या इटली जीवित रहे!)

मसोलिनी ने भरता होने के लिये अपना नाम फौजी स्वयं सेवकों में लिखा लिया। पत्र का सम्पादक होने की हैसियत से वह सैनिक सेवा से मुक्त हो सकता था। लेकिन १९१५ के सितम्बर मास में उसका बुलावा आया। इसोज़ो और कार्सो और कार्सो की खाइयों (ट्रेंचों) में मसोलिनी बहादुरी से लड़ा। १९१७ की फर्वरी में वह बुरी तरह से घायल हुआ। गोली निकालने के लिये डाक्टरों ने उसे बेहोश करना चाहा। पर मसोलिनी ने कहा मैं दर्द का अनुभव करना चाहता हूँ और जानना चाहता हूँ कि मैं उसे सह सकता हूँ या नहीं। इसलिये सारी चीर फाड़ बिना नशा दिये ही की गई। उसे कई महीने अस्पताल में रहना पड़ा। अच्छे होने पर मसोलिनी ने लड़ाई के अपने अनुभवों को बहुत ही रोचक ढंग से लिखा।

क्षणिक सन्धि हो जाने पर मुसोलिनी ने सम्मान पूर्ण विदेशी नीति और लड़ाई से लौटे हुए सिपाहियों को पुरस्कार देने के सम्बन्ध में आन्दोलन शुरू किया। मुसोलिनी का विश्वास था कि बड़ी लड़ाई के अवसर पर (१९१५ और १९१७ में) ब्रिटेन और फ्रांस ने इटली के राज्य को योरूप और अफ्रीका में बढ़ाने के लिये जो वचन दिये थे वे सब पूरे होंगे। लेकिन फ्रांस, ब्रिटेन, जापान, दक्षिण अफ्रीका, आस्ट्रेलिया और न्यूज़ीलैंड को सभी मेंडेटरी प्रदेश मिल गये। इटली को उसकी कमज़ोरी के कारण एक भी मेंडेटरी प्रदेश न मिला। योरुप में भी उसे बहुत कम भाग मिला।

योरुप की बड़ी शक्तियों में इटली इस समय भी सब से अधिक ग़रीब देश है। बड़ी लड़ाई के समाप्त होने पर इटली वासियों की आर्थिक दशा और भी अधिक शोचनीय थी। पीड़ित लोग अपने कष्टों को दूर करने के लिये रूसी बोल्शेविक ढंगों की ओर झुकने लगे। बोल्शेविक लोगों का मुक़ाबिला करने के लिये मुसोलिनी ने २३ मार्च १९१९ को मिलान नगर में फेसिओ कम्बैटीमेन्ट नाम की प्रथम फेसिस्ट संस्था स्थापित की। जब इटली की फौजों ने फयूम नगर ले लिया तब मुसोलिनी ने अपने पोपोलो अखबार में समर्थन किया। इन सब बातों से मुसोलिनी को इटली के साम्यवादी नेता घृणा की दृष्टि से देखने लगे। १९१९ के चुनाव में जब मसोलिनी मिलान शहर की ओर से उम्मेद वार होकर खड़ा हुआ तब उसे बहुत कम वोट (मत) मिले। साम्यवादी पत्र अवन्टी ने मुसोलिनी को एक मुर्दा लाश (जो खाई में गाड़ने के योग्य है) बतलाया। कुछ समय बाद सशस्त्र साजिश के अपराध में मुसोलिनी गिरफ़ार कर लिया गया। लेकिन पीछे से छोड़ दिया गया। छूटने पर अपने पत्र को उन्नत करने के लिये मुसोलिनी और भी अधिक कड़ी मेहनत करने लगा। ग्राहक संख्या तेजी से बढ़ने लगी। मनोविनोद के लिये मुसोलिनी नाटक लिखता था। और वाओलिन बाजा बजाता था। मसोलिनी को हवाई जहाज़ उड़ाने और मोटर चलाने का भी शौक रहा। इसमें उसने अपनी जान की कुछ भी परवाह न की।

१९२० ई० में मज़दूरों ने कारखानों पर अधिकार करना शुरू कर दिया। इसको मसोलिनी ने पसन्द न किया। जब बोलोग्ना, मोडेना और फेरारा में राजनैतिक हत्यायें हुईं। तब मसोलिनी ने खुल्लमखुल्ला साम्यवादियों का विरोध किया। साम्यवादियों के विरोधी लोग मसोलिनी के फेसिस्ट दल में शामिल होने लगे। पहले पो घाटी में उसने साम्यवादियों को हराया। फिर इटली भर में जहाँ जहाँ फेसिस्टों और साम्यवादियों की मुठभेड़ हुई वहाँ वहाँ मसोलिनी का फेसिस्ट दल विजयी रहा। मसोलिनी ने इस सफलता से यह फल निकाला कि वर्तमान डरपोक सरकार को भगा कर शक्तिशाली नौजवानों का शासन स्थापित होना चाहिये। अतः उसने अपने फेसिस्ट दल को राजनैतिक रूप दिया। १९२१ के मई महीने में जो चुनाव हुआ। उसमें मसोलिनी और उसके ३५ फेसिस्ट साथी चुने गये। अगले वर्ष मसोलिनी और उसके फेसिस्ट दल का प्रभाव और भी अधिक बढ़ गया। १९२२ में

जो हड़ताल हुई उसे उसने अपने फेसिस्ट साथियों की सहायता से बन्द करा दिया। इसके बाद उसे साहस हो गया कि सरकार की बागडोर फेसिस्ट दल के हाथों में सौंपी जा सकती है। गैर फेसिस्ट लोगों की सहानुभूति प्राप्त करने के लिये उसने अपने दल को राजा का समर्थक बतलाया। इसके बाद मसोलिनी ने रोम पर चढ़ाई की। उस समय की सरकार ने अस्तीफा दिया। राजा ने मसोलिनी को प्रधान मंत्री बनाया। इस प्रकार देश के शासन की बागडोर फेसिस्ट दल के हाथों में आ गई। मसोलिनी ने सात घंटे के भीतर अपना मंत्रि मंडल बना लिया। इस से पहले इटली में मन्त्रिमंडल बनाने में हफ्ते लग जाते थे। मसोलिनी के मन्त्रि मंडल में कुछ ऐसे भी सदस्य थे जो फेसिस्ट दल के नहीं थे। लेकिन मसोलिनी ने दूसरे दलों के साथ किसी प्रकार का समझौता नहीं किया। पहले मसोलिनी ने गृहसचिव और विदेश सचिव का भार अपने ऊपर लिया।

शासन में कई प्रकार के सुधार हुए। पीछे से मसोलिनी ने हवाई, जल और स्थल सेना का प्रबन्ध अपने हाथ में लिया। मसोलिनी ने प्रधान मन्त्री का काम बड़ी लगन से किया। जब वह बीमार पड़ा तो भी बिस्तर पर पड़े-पड़े काम करता रहा। उसने रोम के पोप से भी समझौता कर लिया। गृह प्रबन्ध में मसोलिनी का यह उद्देश्य रहा कि इटली शक्तिशाली और सम्पन्न बने। अतः उसने मजदूरों और मिल मालिकों (दोनों) का नियन्त्रण किया। एक ओर हड़ताल दूसरी ओर मिलबन्दी (कारखाने बन्द करने) को रोक दिया। आपस के झगड़ों को पंचायती ढंग से तय करने का आदेश था। उसकी नीति मैंचेस्टर और मास्को के बीच की थी। उसने कई बार घोषित किया कि इटली पूँजीपति राष्ट्र नहीं है। सचमुच योरुप के प्रबल राष्ट्रों में इटली अत्यन्त निर्धन देश है। लेकिन साम्यवादी रूस की तरह इटली में देश सम्पत्ति का सम विभाग भी नहीं है।

राष्ट्र संघ या लीग आफ नेशन्स का मसोलिनी ने आरम्भ से विरोध किया है। मसोलिनी का विश्वास है कि राष्ट्रसंघ उन बड़े राष्ट्रों (ब्रिटेन, फ्रांस और रूस) की गुटबन्दी है। जिनके पास आवश्यकता से अधिक साम्राज्य है। कुछ छोटे छोटे कमजोर राज्य विवश होकर इस गुटबन्दी में इस लिये शामिल हैं। क्योंकि वे कमजोरी के कारण अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा नहीं कर सकते। इटली जैसे घने बसे हुए और साम्राज्य बढ़ाने की इच्छा रखने वाले देश को लीग में शामिल होने से कोई लाभ नहीं है। मसोलिनी की धारणा है कि लीग एक ऐसी संस्था है जो सम्पन्न साम्राज्यों को सुरक्षित रखने और नये राज्यों (जिनके पास राज्य की कमी है) को बढ़ने से रोकती है।

एबीसीनिया के सम्बन्ध में मसोलिनी का कहना है कि इटली एक निर्धन देश है। वह जमीन जिसमें भली भांति खेती हो सकती है फ्रांस से आधी है। लेकिन इटली की आबादी फ्रांस से कहीं अधिक है। संयुक्त राष्ट्र अमरीका और ब्रिटिश साम्राज्य के अन्तर्गत कनाडा, आस्ट्रेलिया आदि स्वराज्य-प्राप्त राज्यों ने कड़े नियम बना कर इटली के लोगों को वहां जाने से रोक दिया है। खनिज पदार्थों की कमी होने से इटली अपना माल बाहर नहीं भेज सकता है। मसोलिनी का विश्वास है कि एबीसीनिया में खनिज सम्पत्ति है। वहां की जमीन उपजाऊ है। वहां की जलवायु इटेलियन लोगों के रहने योग्य है। इसीलिये इटली ने विषैले गैस और दूसरे घृणित उपायों से वीर एबीसीनिया देश पर फौजी अधिकार जमाया।

इटली को प्राचीन रोमन साम्राज्य के समान शक्तिशाली बनाने के लिये मसोलिनी पहले भूमध्य सागर पर अपना प्रभुत्व स्थापित करना चाहता है। इसीलिये उसने स्पेन की गृहकलह में हस्तक्षेप किया और छिपे छिपे वहां की सरकार का विरोध करने और विद्रोहियों की सहायता करने के लिये हजारों स्वयं सेवक और सैकड़ों हवाई जहाज भेज दिये। पूर्व की ओर लाल सागर, पेलेस्टाइन (फिलिस्तीन) और सिरिया के अरबी लोगों को भड़काने के लिये रेडियो द्वारा अरबी भाषा के गीत, व्याख्यान और समाचार भेज कर उन लोगों में ब्रिटेन के विरुद्ध घोर अन्दोलन आरम्भ कर दिया। ब्रिटेन के विदेश मंत्री महाशय एडन ने इसका विरोध करना चाहा। लेकिन

ब्रिटिश मन्त्रिमंडल ने इटली को खुश रखने के लिये और जर्मनी से अलग रखने के लिये एडन महाशय को इस्तीफा देने के लिये वाध्य किया। इस समय इटली, जर्मनी और जापान की मित्रता है। वे रूस और फ्रांस के विरोधी हैं। ब्रिटिश साम्राज्य की ओर भी उनकी आंख लगी हुई है। लेकिन कुछ समय के के लिये वे खुल्लम खुल्ला लड़ाई वचाना चाहते हैं।

अभी हाल में इटली और ब्रिटेन में मित्रता सम्वन्धी सन्धि हो गई है। इसके अनुसार ब्रिटेन ने इटली की एवीसीनिया विजय को स्वीकार कर लिया है इटली ब्रिटेन के पैसे से पूरा लाभ उठाना चाहता है लेकिन वह जर्मनी से भी मित्रता करना चाहता है।

मुसोलिनी के देश प्रेम में किसी को सन्देह नहीं हो सकता। उसने इटली में ऐसी एकता और जान फूंक दी है जिसका वहां सदियों से नाम न था। लेकिन उसकी साम्राज्यवादी नीति इटली को कहां ले जायगी यह नहीं कहा जा सकता। कई वार उसकी जान पर हमला किया गया। लेकिन यह निर्विवाद है कि इस समय उसका इटलीवासियों पर जादू का सा असर है। जिधर उसका इशारा होता है उधर इटली वाले चलते हैं। वह इटली का तानाशाह है।

मुसोलिनी के जीवन पर कई वार हमले हुये। सन् १९२६ में उस पर जो हमला हुआ था उसके वाद वह और भी सतर्कता से रहने लगा। इस समय उसकी रक्षा के लिये ३०० विशेष सैनिक पुलिस हैं जो ओवेरा के नाम से मशहूर हैं। मुसालिनी अपने मकान से दफ़्र में आने का रास्ता रोज वदल देता है वह कभी भी एक रास्ते से नहीं आता। और रास्ते में यदि छोटा सा भी सूराख़ मिलता है तो उसका निरीक्षण कर भर दिया जाता है जिसमें वहाँ वम आदि विस्फोटक चीज़ न रक्खी जा सके। वह जैसे ही अपने मकान से निकलता है एक विशेष प्रकार की आवाज़ से सूचना हो जाती है और साधारण पुलिस रास्ते के दोनों ओर खड़ी हो जाती है तथा उसकी विशेष पुलिस आकर सारे रास्तों को देख जाती है।

टर्की के मुस्तफा कमालपाशा की रक्षा का यद्यपि इतना विपद प्रवन्ध नहीं है फिर भी लोगों का कहना है कि उनके अंग रक्षक जितने जमांमर्द एवं फुर्तीले हैं उतने शायद ही किसी और तानाशाह के हैं। एक वार वे अपने कुछ दोस्तों के साथ वैठकर ताश खेल रहे थे अचानक अली नामक एक व्यक्ति उसके सामने आ खड़ा हुआ और उनसे सरकारी नौकरी मांगने लगा। दूसरे ही क्षण उसने अपना हाथ अपनी जेव में डाला जिस पर मुस्तफा को संन्देह हुआ। और उन्होंने दो वाक्य कहे। इन दोनों वाक्यों का पूरा होना था कि उनके अंग-रक्षक पहुँच गये। और जो हाथ जेव में जा रहे थे वे वहाँ पहुँच भी नहीं पाये कि हथकड़ियों से जकड़ गये उस समय अली ने यदि तनिक भी फुर्ती दिखलाई होती तो तुर्की में अव तक कुछ और ही वात हुई होती। हाँ मुस्तफा के भोजन की जाँच में अवश्य विशेष मुस्तैदी रहती है इसके लिये उनका एक विश्वासी आदमी है जो हर क्षण भोजन को चखता रहता है।
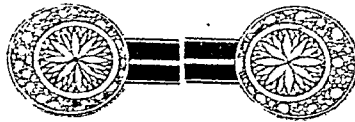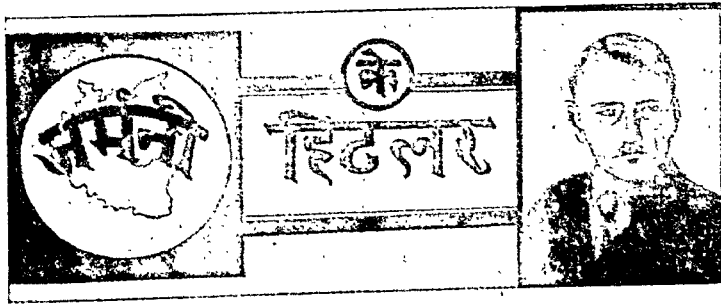
जर्मनी का एडोल्फ हिटलर

जर्मनी का तानाशाह एडोल्फ १८८९ ई० के अप्रैल महीने में ब्रौनाओ नगर में पैदा हुआ था। यह नगर इन नदी के किनारे ऊपरी आस्ट्रिया में स्थित है। जर्मन और आस्ट्रिया की सीमा के पास जन्म भूमि होने से दो प्रदेशों में स्थित जर्मन जाति को मिलाने के भाव हिटलर के हृदय में बचपन में ही पैदा हो गये थे। हिटलर के माता पिता बहुत ग़रीब थे। माता की लम्बी बीमारी में घर का बचा हुआ धन सब खर्च हो गया। अनाथ होने की हैसियत से हिटलर को वज़ीफा या पेन्शन मिलती थी। वह काफी न था इसलिये हिटलर को बचपन में ही कमाने की फिकर पड़ी। मामूली कपड़े लेकर जीविका कमाने की आशा से हिटलर आस्ट्रिया की राजधानी वियना नगर में आया। वियना में एक ओर घोर ग़रीबी और दूसरी ओर विलक्षण अमीरी थी। एक तरफ राज्य के बड़े बड़े आलीशान अफसर थे दूसरी ओर काम की खोज में आये हुए मजदूर थे। जो घर न होने के कारण नाले के पड़ोस में ही पड़े रहते थे। हिटलर की दशा इन मज़दूरों से अधिक अच्छी न थी। उसे भी कड़ी मेहनत करनी पड़ती थी। १९०९-१० में उसकी हालत कुछ सुधर गई। उसे रोज़ मज़दूरी नहीं करनी पड़ती थी। उसने नक़शा नवीसी और वाटर कलर की पेंटिंग करके स्वतंत्र जीविका कमानी आरम्भ कर दी थी।

आरम्भ में ही हिटलर को जर्मन सम्राट के प्रति श्रद्धा और पार्ल्यामेन्ट के सदस्यों के प्रति उदासीनता हो गई। लेकिन वह यहूदियों से जलने लगा। वह उनको राष्ट्रद्रोही समझता था। वियना में हिटलर को जाति और धर्म की समस्याओं पर सोचने के लिये काफी सामग्री मिली।

जमनी का तानाशाह एडोल्फ हिटलर।

१९१२ में हिटलर म्यूनिक चला गया। यहाँ आ कर वह बहुत प्रसन्न हुआ। यह एक दम जर्मन नगर था। यहाँ जातियों की खिचड़ी या धर्मों की भीड़ न

थी। यहाँ हिटलर का पूरा विकास हुआ। यह नगर हिटलर को अत्यन्त प्रिय लगने लगा। यहाँ भाषा धर्म और जाति की विलक्षण एकता थी। प्रत्येक पर जर्मन मुहर लगी हुई थी।

हिटलर का रहन सहन इस समय भी सीधा सादा है। वह शराब या सिगरेट नहीं पीता है। वह दूध, मक्खन में तली हुई तरकारी, फल और अंडा बहुत खाता है। कभी कभी वह मछली और मुर्गी का मांस भी खाता है। उसे नियमित कसरत करने का समय नहीं मिलता है। लेकिन वह टहलने रोज़ जाता है।

आरम्भ में घोर संकट और चिन्ता का जीवन बिताने के बाद अब वह पर्याप्त भोजन और बेफिकरी की पूरी नींद सोता है। इससे उसे डर लगने लगा है। कि कहीं उसका तोंद न बढ़ जावे।

१९१४ की बड़ी लड़ाई में हिटलर को आगे बढ़ने का अवसर मिला। ३ अगस्त को उसने राजा को प्रार्थना पत्र भेजा कि उसे बेवेरिया की फौज में भरती होकर लड़ने के लिये अवसर दिया जावे। उसका प्रार्थना पत्र उसी दिन स्वीकार कर लिया गया। इससे उसे बड़ी प्रसन्नता हुई। दूसरे नवयुवकों की तरह कुछ समय हिटलर के मन में भी लड़ाई की भीषणता ने उत्साह को कम कर दिया। लेकिन दृढ़ निश्चय बराबर बना रहा। १९१६ के अक्टूबर में हिटलर लड़ाई में घायल हो गया। एम्बुलेन्स ट्रेन द्वारा वह घर भेज दिया गया। पहले बर्लिन के पास एक अस्पताल में रक्खा गया। अच्छा होने पर हिटलर पहले बर्लिन और फिर म्यूनिक पहुँचा। इसके बाद वह सुरक्षित (रिज़र्व) सेना में रक्खा गया। लड़ाई समाप्त होने पर १९१८ के नवम्बर मास में हिटलर फिर रिज़र्व सेना में शामिल हो गया। अब तक हिटलर राजनीति से अलग रहा।

बड़ी लड़ाई के बाद जर्मनी की दशा कुछ शोचनीय हो गई। लोगों में निराशा सी छा गई। यद्यपि वहाँ प्रजातन्त्र स्थापित हो गया था। तथापि वहाँ के लोग इसे विदेशियों का बोया हुआ शासन समझते थे।

इसी निराशा के समय हिटलर ने जर्मनी में नई जान डालने का काम किया। १९१९ में हिटलर ने नाज़ी (राष्ट्रीय साम्यवादी) दल का संगठन किया। हिटलर ने जर्मन जाति के नाम से एक हो जाने के लिये लोगों से अपील की। जर्मन जाति के लोग जर्मनी की वर्तमान राजनैतिक सीमा के बाहर भी फैले हुये हैं। इसलिये उनको मिलाने के साथ साथ जर्मनी की राजनैतिक सीमा को बढ़ाने का काम भी इसी में शामिल है। जर्मन लोगों को सैनिक जीवन स्वभाव से ही प्यारा है। बड़ी लड़ाई के बाद प्रजा तन्त्र स्थापित होने और सन्धि की कड़ी शर्तों के कारण जर्मनी में फौजी शक्ति का संचार कुछ समय के लिये रुक गया। हिटलर ने जर्मनी की फौजी शक्ति को बढ़ाने की ओर पूरा ध्यान दिया। कुछ लोगों ने आक्षेप किया। कि बड़ी लड़ाई के पहले जर्मनी की सैनिक शक्ति योरुप भर में बढ़ी चढ़ी थी। फिर जर्मनी लड़ाई में क्यों हारा। हिटलर ने इसका उत्तर इस प्रकार दिया कि जर्मनी की फौज कभी नहीं हारी। लड़ाई समाप्त होने के पहले ही यहूदियों और साम्यवादियों ने क्रान्ति मचा दी। इससे जर्मन फौजों को लौटना पड़ा। प्रजातन्त्र के स्थापित होने पर यहूदियों को अभूतपूर्व शक्ति मिल गई थी। हिटलर की योजना से एक ओर जर्मनी की फौजी शक्ति बढ़ने लगी दूसरी ओर यहूदियों का बहिष्कार और साम्यवादियों का दमन शुरू हुआ। जर्मनी की एकता में केवल जर्मन लोग (जो अपने को आर्य कहते हैं) हैं। यहूदियों को जो अनार्य या सेमायटिक हैं इसमें कोई स्थान नहीं है। न वे कोई प्रभावशाली पद ग्रहण कर सकते इसी प्रकार साम्यवादियों से भी नाज़ी दल को कट्टर दुश्मनी है।

जैसे जैसे जर्मनी की सैनिक शक्ति बढ़ती गई वैसे वैसे हिटलर ने इसका प्रदर्शन किया। पहले राइनलैंड और सार में जर्मनी की सैनिक शक्ति का प्रदर्शन हुआ। अभी हाल में आस्ट्रिया का स्वतन्त्र राज्य जर्मनी का अंग बना लिया गया। इसके बाद चेकोस्लोवेकिया के २५ लाख जर्मनों को मिलाने के लिये वहां मुठभेड़ होने की आशा है। लेकिन चेकोस्लोवेकिया ने वहाँ के निवासी नाज़ी जर्मनों को एक प्रकार का

स्वराज्य दे दिया। इसके साथ ही साथ पोलैंड और यूक्रेन (रूस) में भी कुछ जर्मन हैं। इनको ज़ोर से जीत कर मिलाना टेढ़ी खीर है। स्पेन में नाज़ी हस्तक्षेप उपनिवेशों को वापिस लेने की पहिली सीढ़ी है। इसके बाद फ्रांस, ब्रिटेन और रूस से उपनिवेशों और कच्चेमाल के लिये नये प्रदेशों को छीनने के लिये खुल्लमखुल्ला मुठभेड़ हो सकती है। इस आक्रमणकारी योजना में जर्मनी, इटली और जापान की मित्रता है। संसार की शांति भंग करने वाली आक्रमणकारी जर्मन योजना से कोई भला मनुष्य सहमत नहीं हो सकता। लेकिन इसमें कोई सन्देह नहीं कि हिटलर ने अपने ओजस्वी भाषण, अपूर्व संगठन, शक्ति और त्याग से एक पराजित और निर्बल राष्ट्र को अत्यन्त शक्तिशाली राष्ट्र बना दिया है।

हिटलर के अंग-रक्षकों का टुकड़ी में राजनैतिक वातावरण के अनुकूल कमीवेशी होती रहती है और यही बात सिन्योर मसोलिनी के साथ भी है। सवारियाँ यों तो सभी खतरनाक हो सकती हैं पर तानाशाहों ने मोटर और हवाई जहाज को ही अपनी सवारी बनाया है। और उनकी मोटरें तथा हवाई जहाज काफ़ी मज़बूत एवं नये से नये ढंग के बने होते हैं। हिटलर के हवाई जहाज का आकार-प्रकार ठीक युद्ध के हवाई जहाज़ जैसा है और उसके चारों ओर बम बरसाने वाली मशीन लगी हुई है। उसकी मोटर-गाड़ी खास कर बनाई गई थी। श्रेक नामक उसका ड्राइवर मोटर चलाने में चतुर था ही, जर्मनी के सभी छोटे बड़े रास्तों का भी पूरा ज्ञान था। उसकी आकृति भी ठीक हर हिटलर जैसी थी। आल्प्स पहाड़ पर बर्चेसगाडेन में हिटलर का जो निवास स्थान है उसके चारों ओर आधुनिक सामरिक सामग्रियां इतनी बहुतायत एवं इतने अच्छे ढंग से रक्खी गई हैं कि उनसे बचकर उसके निवास तक पहुँचना बहुत कठिन है। स्थान २ पर उसके चारों ओर तारों के घेरे लगे हुये हैं, ज़मीन के भीतर हवाई हमले से बचने के लिये बहुत से तहखाने बने हुये हैं। मकान से १८-१९ मील की दूरी पर दो प्राइवेट सड़कें हैं जिन पर बिना पास के कोई चल नहीं सकता सड़क पर जगह जगह गार्ड रहते हैं। इस प्रकार काफी सतर्कता से काम लिया जाता है।

जिस समय मसोलिनी हिटलर से मिलने के लिये पिछले वर्ष जर्मनी गये थे उस समय जिस प्रकार की कड़ी चौकसी रक्खी गई थी वह चिरस्मरणीय रहेगी। मुसोलिनी के लिये जो गाड़ी तैयार की गई थी उसकी विशेषता यह थी कि उस पर बन्दूक की गोली का असर नहीं हो सकता था। जिस रास्ते से गाड़ी जाती थी उस रास्ते के सभी मकानों की तलाशी २४ घंटे पहले ही ली जा चुकी थी। रोम से म्यूनिच तक हर एक मील पर सैनिकों का कठिन पहरा था और जिस मकान पर ज़रा भी सन्देह होता था उसकी फिर से तलाशी ली जाती था। गाड़ी के आगे आगे कुछ दूर एक एञ्जिन जाता था।

—०:○:०—
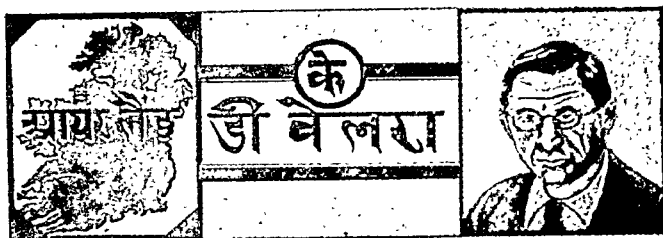
आयरलैंड का डि वेलरा

आयरलैंड के निर्माता ईमन डि वेलरा का जन्म १८८२ ई० में न्यूयार्क शहर में हुआ था। उसकी माता आयरिश और पिता स्पेनवासी था। माता ने अपने बालक को पढ़ने के लिये अपने (आयर लैंड) घर के पास कार्क जिले के चार्लविली नगर में भेज दिया। आगे डि वेलरा को ब्लैकराक कालेज और डब्लिन विश्व विद्यालय में शिक्षा मिली। १९१३ में वह आयरिश स्वयं सेवक नाम की नई स्थापित संस्था का बड़ा ही उत्साही सदस्य हो गया १९१६ के ईस्टर में आयरलैंड में जो विद्रोह हुआ उसमें डि वेलरा विद्रोहियों की एक टोली का नेता था। लेकिन अधिक संगठित ब्रिटिश सेना के सामने उसे आत्म समर्पण करना पड़ा। ३० अप्रैल को से मृत्यु दंड हुआ। छे से मौत की सजा द करके आजन्म कैद की सजा दी गई। १९१७ में १५ ून को सब कैदी छोड़ दिये गये। इसमें डि वेलरा भी छोड़ दिया गया। छूटते ही डि वेलरा ने तुरन्त सिनफीन या प्रजातन्त्र दल का सङ्गठन किया। यह दल आयरिश रिपबलिकन सेना को पूरी सहायता देता था।

आयरलैंड को स्वाधीनता दिलाने वाला डि वेलरा।

जिस महीने डि वेलरा कैद से छूटा उसी महीने ईस्टक्लेर की ओर से ब्रिटिश (वेस्ट मिनिस्टर), पार्ल्यामेंट का सदस्य चुना गया। पार्ल्यामेंट में उसने अड़ंगा डालने की नीति का अनुसरण किया। जिसका अनुमोदन आर्थर ग्रीफिथ ने किया था। इसके बाद वह आयरिश रिपबलिक का प्रधान चुना गया। इसकी डेल या पार्ल्यामेंट की बैठक डबलिन में होती थी। १९१८ के मई महीने में विद्रोह के अभियोग में वह फिर गिरफ्तार कर लिया गया। और लिंकन जेल में रक्खा गया। ३ फर्वरी को वह जेल से भाग निकला और छिपकर संयुक्त राष्ट्र अमरीका जा पहुँचा।

लिंकन जेल से डी वेलरा का छुटकारा

लिंकन जेल में सिविल और फौजी सन्तरियों

का कड़ा पहरा रहता था इस से डि वेलरा का छूट निकलना बड़ा आश्चर्यजनक था। इस से सारे इंगलैंड और योरुप में हलचल मच गई। लेकिन इस काम में अयरलैंड के देशभक्तों को बड़ा कष्ट उठाना पड़ा।

डि वेलरा से कोई बाहरी मनुष्य जेल में नहीं मिलने पाता था। ९ महीने उसकी स्त्री भी उससे नहीं मिल सकी थी। इतना होने पर भी डि वेलरा जेल से बाहर निकलने में सफल हो गया। एक जेल के दरवाजे की चाबी की छाप डि वेलरा ने मोमबत्ती पर ले ली। इन दिनों कैदी अपने मित्रों को व्यंग चित्र वाले पोस्टकार्ड बनाकर भेज सकते थे। एक कार्ड में एक शराबी एक दरवाजे में चाबी ;भिड़ा रहा था। चित्र के नीचे लिखा था। "मैं अन्दर नहीं जा सकता" दूसरे कार्ड में एक मनुष्य जेल के ताले में चाबी लगा रहा था। इसका शीर्षक था "मैं बाहर नहीं जासकता"। यह असली चाबियों के चित्र थे। ब्रिटिश अफसर व्यंग चित्रों का आनन्द लेने में इतने मग्न हा गये कि उन्हों ने इन कार्डो के असलो भावों की ओर ध्यान न दिया। आयरलैंड में डी वेलरा के साथी एक दम इनका भाव ताड़ गये। तुरन्त एक मास्टर "की" (मास्टर चाबी) तैयार कराई गइ। पकने से पहले यह चाबी रोटी के भीतर रख दी गई। इस तरह यह चाबी जेल के भीतर डी वेलरा के पास पहुँच गई। उपयुक्त समय पर डी वेलरा के मित्र मोटर लेकर उचित स्थान पर पहुँच गये। डी वेलरा चाबी की सहायता से अपने कुछ साथियों को लेकर पिछाड़ी के दरवाजे से निकल आया। कुछ समय बाद सारे इंगलैंड में हाहाकार मच गया। लिंकन शहर के प्रत्येक घर की तलाशी ली गई। लेकिन ब्रिटिश अफसरों के सब प्रयत्न विफल हुये। डी वेलरा आयरलैंड पहुँच गया। उसने एक संक्षिप्त सन्देश अपने लोगों को निकाला मैं देश के काम से जेल से बाहर आगया हूँ और देश का ही काम कर रहा हूँ।

संयुक्त राष्ट्र अमरीका में डि वेलरा ने आयरिश रिपबलिक के प्रधान होने की हैसियत से प्रजातन्त्र बांडों की जमानत पर क्रान्तिकारी आन्दोलन को बढ़ाने के लिये बहुत सा धन इकट्ठा किया। आयरलैंड के लोगों ने हिंसात्मक असहयोग का अनुसरण किया। जिन जहाजों पर फौजी सामान आता था। उसे आयरिश कुली नहीं उतारते थे। जिन रेलगाड़ियों पर अंग्रेजी फौज होती थी उनको आयरिश इंजन ड्राइवर नहीं चलाते थे। और स्वयंसेवक सेना छिप छिप कर अंग्रेजी फौज पर अचानक छापा मारती थी।

१९२१ में इंगलैंड और आयरलैंड के बीच में क्षणिक सन्धि हुई। ब्रिटिश सरकार से सन्धि की शर्तों को तय करने के लिये आयरलैंड की ओर से डि वेलरा को पूरा अधिकार दिया गया। नरम दल के दो नेताओं (आर्थर ग्रीफिथ और कर्नल कालिन्स) ने जो सन्धि तय की थी। डि वेलरा ने उसे मानने से इन्कार कर दिया। जब डेल (पार्ल्यामेंट) ने डि वेलरा की उग्र नीति का समर्थन न किया (यद्यपि उसके विपक्षियों की संख्या कुछ ही अधिक थी) तब उसने प्रधान पद से अस्तीफा दे दिया और फिर से प्रजातन्त्र दल के साथ लड़ने के लिये तैयार हो गया।

१९२३ के अगस्त में वह फिर पकड़ लिया गया। १९२४ के जुलाई मास में छूटने पर उसने फिर राजनैतिक आन्दोलन आरम्भ किया। वह पूर्ववत सिनफीन दल का नेता बना। रिपबलिकन (प्रजातन्त्र) दल की ओर से डेल (पार्ल्यामेंट) में फिर अड़ंगे की नीति का अनुसरण किया गया। दो वर्ष बाद उनके कुछ साथी टूट गये। १९२७ में उसने फियना फेल नाम का ४४ सदस्यों का नया दल स्थापित किया। इस दल ने आयरलैंड में ब्रिटिश पार्ल्यामेंट द्वारा स्थापित फ्रीस्टेट में शामिल होने के लिये स्वामिभक्ति की शपथ तो ले ली लेकिन पीछे से विज्ञप्ति निकाल दी कि यह शपथ केवल कोरी (छूछी) राजनैतिक रस्म है। इस में सचाई का नाम नहीं है। आगे चलकर डि वेलरा की अध्य-क्षता में एक ऐसा क़ानून बना जिससे ब्रिटिश सम्राट के प्रति स्वामिभक्ति सम्बन्धी शपथ लेने की प्रथा ही तोड़ दी गई।

—:o:—

पोलैंड का पिल्सुड्स्की

नेपोलियन के समय में पोलैंड का पुराना देश तीन भागों मे बट गया था। रूस, जर्मनी आस्ट्रिया इन पर राज्य करते थे। वर्तमान पोलैंड के निर्माता और सेनापति जोजफ पिल्सुड्स्की का जन्म १८६२ में विलनो जिले के जूलोवो नगर में हुआ था। पिल्सुड्स्की का वंश बहुत पुराना और प्रतिष्ठित था। लिथुएनिया के राज्यवंश से इसका सम्बन्ध था। पिल्सुड्स्की ने विलनो और खारकोव मे शिक्षा पाई थी। पिल्सुड्स्की के समय में पोलैंड की दशा अत्यन्त शोचनीय थी। विलनो की सड़कों पर पोलिश भाषा का बोलना जुर्म समझा जाता था। पिल्सुड्स्की ने अपने देश को आजाद करने की ठानी। उच्च वंश के लोगों में कायरता आ गई थी। इस लिये उसने सर्वसाधारण वर्ग के साम्यवादी लोगों से नाता जोड़ा। १८८७ में पिल्सुड्स्की जार के विरुद्ध एक साजिश में फंस गया। उसको पांच वर्ष का कड़ा दंड मिला और वह पूर्वी साइबेरिया मे भेज दिया गया। १८९२ में वह विलनो वापिस आया और आजादी प्राप्त करने के लिये उसने पोलैंड मे साम्यवादी दल स्थापित किया। १८९४ में उसने "रोबोतनिक" (मजदूर) नाम का गुप्त पत्र चलाया। इस पत्र के सम्पादन करने, छापने और बाँटने का काम पिल्सुड्स्की स्वयं करता था। अखबार का कुछ भाग एक जगह और कुछ भाग दूसरी जगह छपता था। अखबार के ऊपर सरकार की कड़ी नजर थी। जिसके पास अखबार मिलता उसको ४ वर्ष की कड़ी सजा होती। फिर भी अखबार की १६०० प्रतियां हाथों हाथ सदस्यों में बिक जाती थी। कभी कभी एक एक अखबार के लिये कई पढ़ने वालों के बीच में छीना झपटी होती। एक एक प्रति कई पढ़ने वालों के पास बारी बारी से पहुँचती। अखबार छपने की आवाज किसी को न सुनाई दे इसलिये छपते समय पिल्सुड्स्की

आधुनिक पोलैंड का निर्माता पिल्सुड्स्की।

की धर्मपत्नी बड़े जोर से पियानो बजाती थी। कुछ ही समय में पिल्सुड्स्की का रोबोतनिक समाचार पत्र एक शक्तिशाली संस्था बन गया।

आगे चलकर पिल्सुड्स्की का कार्यक्रम हिंसात्मक बन गया। उसने जारशाही का सशस्त्र मुकाबिला करने का निश्चय कर लिया। शस्त्रों से सुसज्जित मजदूरों की टोलियाँ सभाओं और जलूसों की रक्षा करतीं। जार की पुलिस और फौज से मुठभेड़ हो जाती और अक्सर खून खराबी होती। १९०० में पिल्सुड्स्की और उसकी स्त्री मेरी जुश्ज कीविकुज (जिसके साथ उसने १८९४ में ब्याह किया था) दोनों ही रोबोतनिक के दफ़र में लोड्ज शहर में गिरफ़ार कर लिये गये। पिल्सुड्स्की वारसा की कालकोठरी में रक्खा गया। यहाँ जो पेशी हुई उसमें उसने अपनी रक्षा पागल बन कर की। आरम्भ में यह पागलपन वास्तव में उसका आजादिना ढंग था। पूछताछ होने पर उसने रूसी भाषा बोलने से इनकार कर दिया। उसने केवल पोलिश भाषा में लिखित बयान दिया और गुलामी के कानूनों का पालन न किया। उन दिनों पागल होने के लिये इतना ही काफी था। पिल्सुड्स्की को ८ वर्ष की कड़ी सजा और उसके बाद आजन्म क़ैद का दंड मिला। वह वार्सा के क़िले की एक कोठरी में रक्खा गया। वहाँ उसके साम्यवादी मित्रों ने उसके पास पत्र भेजना आरम्भ किया। लेकिन वारसा के किले से उसे निकलना असम्भव सा था। अतः उसे ऐसे स्थान में भिजवाने का तय किया गया जहाँ से उसे निकलने में आसानी हो। इन दिनों जो राजनैतिक क़ैदी पागल हो जाते थे वे सेन्ट पीटर्सबर्ग भेज दिये जाते थे। पिल्सुड्स्की ने पागल बनने में अपूर्व सफलता दिखलाई वह साबुन के टुकड़े की सहायता से मुँह से झाग निकालता और सिपाहियों पर टूट सा पड़ता। साथ ही वह ऐसा चिल्लाता मानों लोग उसे जहर देना चाहते हैं। अतः उसने केवल अंडे और चाकोलोट का खाना आरम्भ कर दिया। अन्त में वह सेन्टपीटर्स बर्ग के पागल खाने में भेज दिया गया। वहीं उसके एक साम्यवादी मित्र डाक्टर ने अपनी बदली करवा ली। एक दिन भेष बदलवा कर पिल्सुड्स्की को डाक्टर बाहर ले आया। बाहर मोटर तैयार था। डाक्टर मोटर को तेज हकवाना चाहता था। लेकिन पिल्सुड्स्की ने कहा ऐसी भूल न करो धीरे धीरे चलो। इस प्रकार वह वहाँ से बाहर आया। १९०२ में पिल्सुड्स्की क्रेकाओ जाकर रहने लगा।

रूसी-जापानी युद्ध के समय पिल्सुड्स्की ने पोलैंड में विद्रोह करवाने की सोची। लेकिन उसके अनुयाइयों के पास गोला बारूद की कमी थी। सहायता लेने के लिये पिल्सुड्स्की जापान पहुँचा। लेकिन इसमें उसे कोई सफलता न मिली। रूसी विद्रोह और डूमा के शासन सम्बन्धी सुधार हो जाने पर पिल्सुड्स्की ने क्रान्तिकारी आन्दोलन स्थगित कर दिया।

आज़ादी की एक प्राइवेट फौज तैयार करने के लिये पिल्सुड्स्की ने एक सैनिक स्कूल खोला। इससे उसे फौजी अफसर मिलने लगे। कुछ ही समय में उसकी सेना में लगभग १०,००० सिपाही शामिल हो गये।

बड़ी लड़ाई के समय उसने बड़ी दूर दर्शिता से काम लिया। वह ताड़ गया कि रूस देश जर्मनी से हार जायगा। वह यह भी जान गया कि अन्त में फ्रांस जर्मनी को हरा देगा। अतः उसने पहले अपनी प्राइवेट सेना रूस के विरुद्ध लड़ने के लिये आस्ट्रिया और जर्मनी की सहायता के लिये भेजी। लेकिन उसने अपनी फौज जर्मनी या आस्ट्रिया की फौज में नहीं मिलने दी। रूसी क्रान्ति के बाद पिल्सुड्स्की ने अपने मित्रों द्वारा फ्राँस से समझौता किया और आस्ट्रिया के विरुद्ध लड़ने का निश्चय कर लिया। जब पिल्सुड्स्की ने जर्मन स्वामिभक्ति की शपथ लेने से इन्कार कर दी तब वह मागडेबर्ग की जेल में ठूँस दिया गया। उसकी फौज छिन्न भिन्न कर दी गई। ऊपर से तो उसकी फौज तितर बितर हो गई। लेकिन भीतर ही भीतर (छिपे छिपे) उसका संगठन प्रबल होता गया। १९१८ में पिल्सुड्स्की छोड़ दिया गया। इस समय पूर्वी योरुप में और सब कहीं अराजकता थी। लेकिन पिल्सुड्स्की की गुप्त फौज़ अब प्रगट होकर शान्ति

स्थापित करने और पोलैंड को आजाद करने के लिये एकदम तैयार थी।

बड़ी लड़ाई के पहले पोलैंड तीन भागों में बटा हुआ था। प्रत्येक भाग की आर्थिक समस्याओं में भेद था। प्रत्येक की दलबन्दी भी अलग अलग थी। प्रत्येक में नेता भी थे। लेकिन पिल्सुड्स्की सर्वमान्य था। इसी से पिल्सुड्स्की तीनों को मिलाने में सफल हुआ।

मेमल और विश्चुला में पिल्सुड्स्की को बाल्शेविक लोगों से गहरा सामना करना पड़ा। पर इस में पिल्सुड्स्की ने बड़ी सैनिक योग्यता दिखलाई। कुछ ही समय में दोनों में सन्धि हो गई। १९२३ में भीतरी गड़बड़ी से क्षुब्ध होकर पिल्सुड्स्की फौज से बिल्कुल अलग हो गया। १९२६ में पिल्सुड्स्की को फिर आना पड़ा। उसकी फौजों ने शान्ति स्थापित कर दी। १९२८ में पिल्सुड्स्की के दल की प्रधानता थी। लेकिन उसने राष्ट्रपति होने से इन्कार कर दिया। केवल सेना का नेतृत्व अपने हाथ में रक्खा। पर हर हालत में देश को जटिल समस्याओं को सुलझाने में पिल्सुड्स्की का हाथ रहा।

चेकोस्लोवेकिया के मसारिक

चेकोस्लोवेकिया को आजाद कराने वाले और प्रथम राष्ट्रपति टामस गेरीग मसारिक का जन्म १८५० की ७ मार्च को मोरोविया की सीमा के पास होडोनिन नगर में हुआ था। मसारिक का बाप एक आस्ट्रियन जागीरदार के यहाँ सईस था। बचपन में मसारिक को कुछ चेक भाषा और टूटी फूटी जर्मन भाषा सिखाई गई थी। पहले चेकस्कूल में पढ़ाने के बाद मसारिक एक दो वर्ष के लिये जर्मन स्कूल में भेजा गया उसके माता पिता उसे शिक्षक बनाना चाहते थे। पीछे से उन्होंने एक ताला बनाने वाले के पास काम सीखने के लिये मसारिक को लगा दिया। इसके बाद मसारिक वियना में एक लुहार के यहां काम करने लगा १८६५ में मसारिक के एक पुराने अध्यापक ने उसके माता पिता को पढ़ाई ज़ारी रखने के लिये समझाया। मसारिक ने एक वर्ष में इन्ट्रेन्स परीक्षा पास कर ली। फिर वह ब्रुन नगर में ऊँची पढ़ाई की तैयारी करने लगा। पढ़ाई का खर्च वह ट्यूशन करके पूरा करता था। यहीं वह क्रान्ति की ओर झुकने लगा। अन्ध परम्परा में उसे अविश्वास हो गया। कनफेशन न करने के कारण उसे पढ़ाई के लिये वियना जाना पड़ा। उत्तम ढंग से उत्तीर्ण होने पर वियना के विश्व विद्यालय में वह फ़िलासफी (दर्शन शास्त्र) पढ़ाने के लिये नियुक्त हुआ।

चेको स्लोवेकिया को आज़ाद कराने वाले और प्रथम राष्ट्रपति मसारिक।

मसारिक के काम को समझने के लिये यह जानना आवश्यक है कि सातवीं सदी में बोहेमिया और आठवीं सदी में मोरेविया स्वतन्त्र राज्य थे। स्लोवेकिया को विजयी मेगापर लोगों ने हंगारी में मिला लिया था। इसके बाद आस्ट्रिया के सम्राट ने बोहेमिया को अपने साम्राज्य में मिलाने का प्रयत्न किया।

मसारिक सत्य का अनुयाई था। एक बार कुछ बनावटी हस्त लिखित प्रतियाँ मिलीं जो बोहेमिया का

गौरव बढ़ाने वाली थीं। मसारिक ने निर्भय होकर उनकी पोल खोली। इससे उसके कुछ देश वासी उससे नाराज़ हो गये। उसका उद्देश्य था कि गौरव सच्चाई में है। १८९१ में नवयुवक चेक दल ने मसारिक को शाही धारा सभा का सदस्य चुना। १९०८ में मसारिक ने आस्ट्रिया-हँगारी की जालसाज़ी का भेद खोल कर कई देश भक्त स्लैव लोगों को बचाया। इस से सरकार बहुत नाराज हो गई। लेकिन उसके देश वासियों में उसका मान बहुत बढ़ गया।

१९१० में न केवल चेक वरन् दक्षिणी स्लैव लोग भी मसारिक को अपना नेता मानने लगे। जब १९१४ में बड़ी लड़ाई छिड़ी तब मसारिक ने अपना कर्तव्य एक दम निश्चित कर लिया। उसे यह आशा न थी कि आस्ट्रिया हंगारी की शाही सरकार अल्पसंख्यक लोगों के साथ न्याय का व्यवहार करेगी। अतः वह आस्ट्रिया-हंगारी के साम्राज्य को नष्ट करने और मित्र राष्ट्रों को सहायता करने में लग गया।

दूसरी राष्ट्रीय कौन्सिल का संगठन करने के बाद मसारिक ने आस्ट्रिया का राज्य छोड़ दिया। पहले वह कुछ समय तक स्विज़रलैंड में रहा। फिर वह पेरिस चला गया। वहीं उसने चेक लोगों की ओर से आस्ट्रिया पर युद्ध घोषित कर दिया। पहले पेरिस में फिर वह लन्दन के किंग्स कालेज में अध्यापक नियुक्त हुआ। यहीं से वह आस्ट्रिया के साम्राज्य को नष्ट करने का प्रयत्न लगातार करता रहा।

१९१७ में रूसी क्रान्ति के बाद जो कैदी छूटे उनको संगठित करके मसारिक ने ९२,००० सिपाहियों की एक चेक सेना तैयार की। यह फौज रूसी सीमा के पास मित्र राष्ट्रों की ओर से लड़ती रही। जब बोल्शेविक लोगों ने ज़र्मनी से ब्रेस्टलिटोव्स्क की सन्धि कर ली तब मसारिक के लिये रूसी सीमा के पास लड़ना असम्भव हो गया। योरुप से साइबेरिया होकर मसारिक इस सेना को प्रशान्त महासागर तट पर ब्लाडो वोस्टाक को ले गया। यहां से वह संयुक्त राष्ट्र अमरीका गया। मई १९१८ में संयुक्त राष्ट्र अमरीका में जहां जहां चेक लोग अधिक संख्या में थे वहां वहां उसने सभा की, व्याख्यान दिये और राष्ट्रीय आन्दोलन के लिये चन्दा इकट्ठा किया। इस बीच में १९१८ के अक्तूबर में आस्ट्रिया का राज्य लड़ खड़ाने लगा। संयुक्त राष्ट्र अमरीका और मित्र राष्ट्रों ने मसारिक की राष्ट्रीय काउंसिल को चेकोस्लोवेकिया की सरकार के रूप में स्वीकृत कर लिया। इस प्रकार मसारिक ने अपने लगातार प्रयत्न से एक स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर दिया। १९२० में वह वहाँ का राष्ट्रपति चुना गया।

सारे राष्ट्र की शक्ति अपने हाथ में आ जाने पर भी मसारिक बड़ा नम्र रहा। उसने अल्पसंख्यक जातियों के हितों की सदा रक्षा की। उसका कहना था कि अपने देश, भाषा और जाति को प्यार करो। अपने सभी देशवासियों से मित्रता का व्यवहार करो चाहे उनमें और तुम में भाषा और धर्म का भेद भले ही हो। विद्यार्थियों में वह बहुत ही प्रिय था। गांवों की सामूहिक ड्रिल उसकी एक अनोखी और उपयोगी सूझ थी। मसारिक इतना लोकप्रिय रहा कि १९२७ में दूसरी बार फिर वह ७ वर्ष के लिये राष्ट्र पति चुना गया। लेकिन १९३४ में तीसरी बार उसने राष्ट्र पति चुने जाने से इनकार कर दिया। अतः उसके स्थान पर उसका मित्र और पुराना साथी बेन्स राष्ट्र पति चुना गया। मसारिक ने वर्षों के परिश्रम के बाद एकान्त वास लिया।
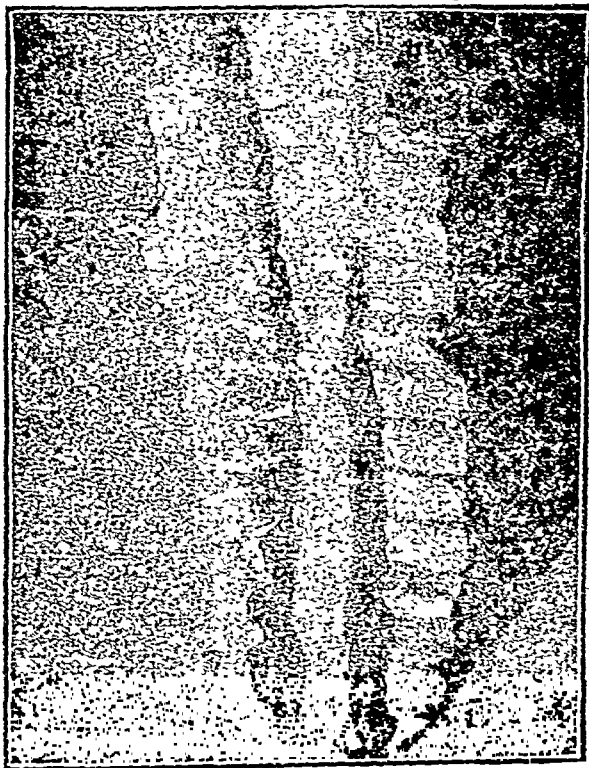
नोट—गङ्गा तट के किसी नये या पुराने स्थान के सम्बन्ध में जो सज्जन चित्र या वर्णन भेज सकें उनका भूगोल कार्यालय पर बड़ा उपयोग होगा। मैनेजर "भूगोल" इलाहाबाद

"भूगोल" का गंगा-अंक

आगामी जुलाई में "भूगोल" का गंगाङ्क प्रकाशित होगा। इस अंक में गंगोत्री से गंगासागर तक गंगा जी का सचित्र वर्णन रहेगा। प्रोफेसर दयाशंकर (प्रयाग विश्वविद्यालय) इस अंक के सहकारी सम्पादक रहेंगे। वर्षों से उन्होंने जो सामग्री इकट्ठी की है वह उन्होंने इस अंक को सम्पादित करने के लिये भूगोल-कार्यालय को दे दी है। इसमें ३५ बड़े बड़े (पूरे पृष्ट के) नक़्शे, कुछ छोटे नक़्शे और सौ से ऊपर चित्र रहेंगे। इस अंक के लिये गंगा के प्रायः समस्त मार्ग की यात्रा की जा चुकी है। सम्भवतः दूसरी यात्रा नाव द्वारा ("भूगोल" के यात्रा-विभाग की ओर) प्रयाग से गंगासागर तक मई में फिर की जायगी।

वास्तव में गंगा भारतवर्ष का प्राण है। इसकी गोद में संसार की महत्व पूर्ण घटनायें हुई हैं। इस अंक को उपयोगी बनाने का पूरा प्रयत्न किया जा रहा है। गंगाङ्क हिन्दी में एक अद्वितीय ग्रन्थ होगा। फिर भी इसका मूल्य केवल १) रु० होगा। डाय व्यय।) "भूगोल" के जिन ग्राहकों का चन्दा मई १९३८ से अप्रैल १९३९ तक आ गया है या आगामी जुलाई तक आ जावेगा। उनको गंगाङ्क चन्दे में ही मिलेगा।

केवल परिमित संख्या में यह अंक छापा जा रहा है। अतः शीघ्र ही इसका मूल्य १।) अथवा "भूगोल" का वार्षिक मूल्य ३) भेज कर अपनी प्रति सुरक्षित कर लीजिये।

मैनेजर, "भूगोल",
इलाहाबाद।

Published by the Editor (Pt. Ram Narain Misra, B. A.) and Printed by Sheopal at the Bhugol Press, 306, Jamuna Road, Allahabad.

सितम्बर १९२८
ANNUAL
SUBSCRIPTION
Indian Rs 3/-
Foreign Rs. 5/-
Single Copy As. 5
भूगोल-कार्यालय प्रयाग

"भूगोल"-कार्यालय

संक्षिप्त परिचय

१९२४ के मई महीने में "भूगोल" मासिक पत्र स्थापित किया गया। गत १२ वर्षों में इस पत्र ने जो भूगोल सम्बन्धी साहित्य तयार किया है उसका पता गत १२ वर्षों की फाइलों और साथ में दिये हुए सूची-पत्र से लग सकता है। पर सच्चा भूगोल-साहित्य घर बैठे कल्पनामात्र या केवल विदेशी पुस्तकों के आधार पर नहीं लिखा जा सकता। इसके लिये भ्रमण की आवश्यकता है। इसी लिये "भूगोल" के यात्रा-विभाग की ओर से समस्त भारतवर्ष, लंका, बरमा, ईरान, इराक, सिरिया, पैलेस्टाइन, मिस्र, सूडान, टर्की, बलगेरिया, यूगोस्लेविया, हंगारी, आस्ट्रिया, चेकोस्लोवेकिया, जर्मनी, डेन्मार्क, बेल्जियम, फ्रांस, इंगलैंड, स्काटलैंड, आयरलैंड, नार्वे, स्वेडन, फिनलैंड और रूस की यात्रा की गई।

हमारा विश्वास है कि देश की आज़ादी प्राप्त करने और कायम रखने के लिये अपने देशवासियों को संसार के प्रत्येक भाग का ठीक ठीक ज्ञान रखना आवश्यक है। भावी स्वाधीन भारत के राजदूत जब दूसरे देशों में जायेंगे तो उन देशों का पूरा ज्ञान होना चाहिये। इसी लक्ष्य को सामने रखकर आपका "भूगोल" कार्यालय, भूगोलसम्बन्धी दुर्लभ, पुस्तकों और नक्शों का संग्रह करता रहा है।

आपका कर्त्तव्य—हम चाहते हैं कि यह काम अधिक संगठित ढंग से और अधिक तेज़ी से हो। इसलिये आप से प्रार्थना है कि आप इस राष्ट्रीय काम में हमारा हाथ बटावें।

आप स्वयं और अपने मित्रों को "भूगोल" का ग्राहक बनाकर हमारी सहायता कर सकते हैं। जितने अधिक ग्राहक होंगे उतनी ही आसानी से हम यात्राक्रम और पुस्तक संग्रह को बढ़ा सकते हैं।

जिस तरह विदेशी वस्त्र को रोकने के लिये खादी का प्रचार आवश्यक है उसी तरह हर साल लाखों रुपयों की बाहर से आने वाली भौगोलिक पुस्तकों को रोकने के लिये आवश्यक है कि हिन्दी में उनकी बराबरी करने वाली और उनसे बढ़कर पुस्तकें तैयार हों। अभी तक हिन्दी में लगभग २० पुस्तकें तैयार हैं। आप उनकी बिक्री बढ़ाकर दूसरी पुस्तकों की रचना में सहायक हो सकते हैं।

भावी कार्य-क्रम—देहाती जनता और विद्यार्थियों के लिये हमने देश-दर्शन नाम की पुस्तक-माला का आयोजन किया है। इसमें २०० पुस्तकें होंगी। एक देश पर एक पुस्तक हर महीने प्रकाशित होगी। पुस्तक चित्रों और नक्शों से खूब सुसज्जित होगी। निजी यात्रा के आधार पर रोचक ढंग से सरल भाषा में लिखी जायगी। काग़ज़ कवर, छपाई सफाई में हिन्दी में एक अनूठी चीज़ होगी। फिर भी डेढ़ सौ पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य लागत मात्र ।=) होगा। साल भर का ४) और पूरी ग्रन्थमाला का केवल २०) होगा। इस सम्बन्ध में मध्यप्रान्त के भूतपूर्व शिक्षा-मन्त्री और वर्तमान प्रधान मन्त्री पं० रविशङ्कर शुक्ल जी की सम्मति पढ़िये और देश-दर्शन के ग्राहक बनकर हिन्दी में एक नये साहित्य को लाने में श्रेय लीजिये। आशा है आप लौटती डाक से ही अपना आर्डर भेजने की कृपा करेंगे।

निवेदक—

रामनारायण मिश्र

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१—संसार की हवाई फौज	१
२—दक्षिण दिशा में (विद्या भूषण विभु B. A. F. R. G. S., M. N. G. S.) ...	४
३—शुभ्र कालीन व्यापार	८
४—पाताल प्रवेश (ठा० कर्ण सिंह सब० डि० इं० बांदा) ...	१२
५—मध्य भारत की भौगोलिक परिस्थिति एवं उसका प्रभाव (लाल भानु सिंह बाघेल) ...	१३
६—आस्ट्रेलिया की लोमड़ियाँ	१५
७—जातियों का कोष	१६
८—लोहा और फौलाद	२५

प्रिय महाशय जी :—

आप "भूगोल" के पुराने ग्राहक रह चुके हैं। हमें आशा है कि जिन कारणों से आप ने "भूगोल" का मंगाना बन्द कर दिया था वे क्षणिक थे। अब आप फिर "भूगोल" को मंगाने की कृपा करेंगे। गत १५ वर्षों में "भूगोल" ने जो उन्नति की है वह हिन्दी संसार के सामने है। "भूगोल" के यात्रा-विभाग की ओर से भूमंडल के बड़े भाग की यात्रा की जा चुकी है। "भूगोल" का पुस्तकालय भी पहले से बहुत बढ़ गया है। अतः अब आप के "भूगोल" में प्रति मास यात्रा व्यवसाय आदि भौगोलिक विषयों पर पहले से कहीं अधिक रोचक और अधिकार पूर्ण लेख रहते हैं। अतः आप से प्रार्थना है कि अब आप फिर "भूगोल" को अपनाने की कृपा करें। पन्द्रह दिन के भीतर इसका वार्षिक मूल्य ३) रु० मनी आर्डर द्वारा भेज दें। यदि किसी कारणवश अभी आप "भूगोल" का मंगाना स्थगित ही रक्खें तो भी कृपया शीघ्र ही वैसी सूचना भेज दें।

१५ दिन तक ३) रु० का मनी आर्डर अथवा अन्य किसी प्रकार की सूचना न मिलने पर हम समझेंगे कि आप "भूगोल" को वी० पी० द्वारा मंगाना चाहते हैं। अतः आज से १५ दिन के बाद "भूगोल" का चालू अंक ३) रु० की वी० पी० द्वारा भेजा जायगा। आशा है आप वी० पी० छुड़ाकर हमारे काम में सहायता करेंगे।

निवेदक—

मैनेजर,

"भूगोल", इलाहाबाद।

नोट—कृपया पत्रोत्तर देते समय ग्राहक नम्बर.........का हवाला अवश्य दें।

या ग्वालियर, जैपुर,
डेल स्कूलों में प्रयोग

में आधे से अधिक बड़े
न (२७ मन) से अधिक
सकते हैं। इनका रेडियस
आने का फ़ासला ४००
: जर्मनी के सैनिक हवाई
बड़ी राजधानियों में बम्ब
लौट आ सकते हैं। जर्मन
ी जाती हैं लेकिन स्पेन में
ं का प्रयोग हुआ। उनकी
र अमरीकन हवाई जहाजों
उनकी संहारक शक्ति भी
से अधिक ऊँचाई पर इन
और भी कमी हो गई।
ढंग के हवाई जहाज़ बन
टे २०० मील है। जर्मनी
या भी बढ़ रही है। शीघ्र
न हज़ार हो जायगी। इतने
गे।
र्मनी में लड़ाई के हवाई
सके। अतः जर्मनी ने
; काम वाले) हवाई जहाज
ता बढ़ाई। लेकिन सिविल
हवाई जहाज़ इस प्रकार बनाये जाते थे कि वे शीघ्र ही

हवाई जहाजों की अधिकता है। लगभग आधे जहाज

"भूगोल"

यह पत्र संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, बरार, बिहार, उड़ीसा, पंजाब प्रान्त तथा ग्वालियर, जैपुर, जोधपुर और कोटा राज्य के शिक्षा-विभागों द्वारा हाई, नार्मल और मिडिल स्कूलों में प्रयोग होने के लिये स्वीकृत है।

वर्ष १९] आश्विन सं० १९९५, सितम्बर १९३८ [सं० ५

संसार की हवाई फौज

लड़ाई छिड़ जाने पर हवाई जहाज बनाने वाले कारखाने शायद उतनी तेजी से तयार न कर सक्ते जितनी तेजी से वे नष्ट होते हैं। इस लिये हर एक देश इस बात का प्रबन्ध करता है कि हर एक लड़ने वाले हवाई जहाज के पीछे तीन चार दूसरे जहाज जरूरत के लिये तयार रहें।

इस प्रकार यदि किसी देश में १००० सैनिक हवाई जहाज घोषित किये जाते हैं तो इसका अर्थ यह होता है कि वहाँ तीन या चार हजार हवाई जहाज और तयार रहते हैं। इस लिये किसी देश के सैनिक हवाई जहाजों का ठीक ठीक पता लगना कठिन हो जाता है। जर्मनी ने अपनी हवाई शक्ति और भी गुप्त रक्खा। इस लिये जर्मनी के हवाई जहाजों की संख्या किसी ने २५,००० किसी ने ३७००, किसी ने १०,००० बतलाई पर इसमें संदेह नहीं कि इस समय जर्मनी के सैनिक हवाई जहाजों की संख्या १५०० से कम नहीं है। जर्मनी में हवाई जहाज तो तेजी से बने लेकिन उनके चलाने वाले उड़ाके उतनो तेजी से तयार न किये जा सके। इनको सिखाने में अक्सर दुर्घटनायें हुईं जिन्हें जर्मन सरकार को अक्सर छिपाना पड़ा। जर्मनी के सैनिक हवाई जहाजों में बाम्ब गिराने वाले कई प्रकार के हवाई जहाजों की अधिकता है। लगभग आधे जहाज बाम्ब गिराने वाले हैं। इन में आधे से अधिक बड़े बड़े जहाज हैं जो एक टन (२७ मन) से अधिक बाम्ब एक बार में ले जा सकते हैं। इनका रेडियस या अर्द्ध व्यास जाकर लौट आने का फ़ासला ४०० मील से ऊपर है। इस पर जर्मनी के सैनिक हवाई जहाज योरुप की बड़ी बड़ी राजधानियों में बाम्ब गिराकर बड़ी आसानी से लौट आ सकते हैं। जर्मन मशीनें अच्छी अवश्य गिनी जाती हैं लेकिन स्पेन में जिन जर्मन हवाई जहाजों का प्रयोग हुआ। उनकी रफ़ार रूसी इटेलियन और अमरीकन हवाई जहाजों के मुकाबिले में कम रही। उनकी संहारक शक्ति भी कम थी। १२००० फुट से अधिक ऊँचाई पर इन जहाजों की योग्यता में और भी कमी हो गई। लेकिन जर्मनी में जो नये ढंग के हवाई जहाज बन रहे हैं उनकी रफ्तार फी घंटे २०० मील है। जर्मनी में हवाई जहाजों की संख्या भी बढ़ रही है। शीघ्र ही यह संख्या ढाई या तीन हजार हो जायगी। इतने ही हवाई जहाज रिजर्व रहेंगे।

बड़ी लड़ाई के बाद जर्मनी में लड़ाई के हवाई जहाज खुल्लम खुल्ला न बन सके। अतः जर्मनी ने सिविल (जन साधारण के काम वाले) हवाई जहाज तयार करने में अपनी योग्यता बढ़ाई। लेकिन सिविल हवाई जहाज इस प्रकार बनाये जाते थे कि वे शीघ्र ही

फौजी जहाजों में बदले जा सकते थे। इस तरह के २०० सिविल हवाई जहाज़ बाम्ब गिराने वाले जहाज़ों में बदले जा सकते हैं। पर अब जर्मनी में खुल्लम खुल्ला फौजी तैयारी हो रही है। इस लिये इस प्रकार के अर्द्ध सैनिक हवाई जहाज़ों के बढ़ाने की आवश्यकता न रही। फिर भी इस तरह के जहाज़ शान्ति के समय सिखाने और लड़ाई के समय लड़ने के काम आ सकते हैं। जर्मनी में हवाई जहाज़ और खेल की कई संस्थायें हैं। इनमें ५००० जर्मन हवाई जहाज़ उड़ाने की शिक्षा पा रहे हैं। वे रिज़र्व का काम दे सकते हैं और लड़ाई के समय कमसे कम ५०० पाइलट (उड़ाके) सेना के लिये दे सकते हैं। इटली ने भी बड़ी गुप्तरीति से अपनी हवाई सेना बढ़ाई। एबीसीनिया की लड़ाई के बाद इटली ने बड़ी तेज़ी से हवाई जहाज़ों की फौज बढ़ाई। इस समय वहां लगभग १५०० हवाई जहाज़ हैं और वर्ष के अन्त में २००० हो जायेंगे। इनमें एक तिहाई जहाज़ बाम्ब गिराने वाले हैं। वे ज़मीन की चीज़ों (फौज, शहर आदि) पर निशाना लगाकर बाम्ब गिराने वाले हैं। एबीसीनिया की नाज़ुक स्थिति को सँभालने के लिये लगभग २०० हवाई जहाज़ इरीट्रिया और इटेलियन सुमालीलैंड में हैं। इतने ही जहाज लिबिया और डोडेकनीज़ (द्वीप समूह) में हैं। जब से इटली ने स्पेन की गृहकलह में हस्तक्षेप करने का निश्चय किया तब से बहुत से हवाई जहाज़ इटली ने स्पेन में भेज दिये हैं इटली अपने हवाई जहाज़ों को शांति के समय सिखाने के लिये और लड़ाई के समय लिबिया और एबीसीनिया भेज सकती है। खतरे के समय दूर दूर बिखरे हुए हवाई जहाज़ बड़ी आसानी से फिर इटली में इकट्ठे किये जा सकते हैं। योरुप की दूसरी शक्तियों के हवाई जहाज़ इतनी तेज़ी से उपनिवेशों से खतरे के समय घर नहीं लौट सकते हैं। इटली में २२० मील प्रति घंटे की चाल से उड़ने वाले ऐसे नये जहाज़ बन रहे हैं जिनका अर्द्ध व्यास ५०० मील है अर्थात् वे ५०० मील उड़ कर बाम्ब गिराने के बाद फिर वापिस लौट सकते हैं। इस प्रकार ये जहाज़ लिबिया से उड़ कर सिकन्दरिया पोर्ट सईद और दक्षिणी ग्रीस यूनन में बाम्ब गिराकर लौट सकते हैं। भूमध्यसागर के अत्यन्त दूर के सिरे इन हवाई जहाज़ों की पहुँच के बाहर कहे जा सकते हैं। लेकिन इटली की भौगोलिक स्थिति खतरे से खाली नहीं है। इटली एक तंग और लम्बा देश है। तट बहुत लम्बा है। तट या स्थल सीमा के पास बसे हुए नगरों पर बड़ी आसानी से बाम्ब गिराये जा सकते हैं।

फ्रांस में कुछ समय तक हवाई जहाज़ों का बेड़ा सब से अधिक था, फिर फ्रांस पिछड़ गया। १९३७ में फ्रांस में लगभग १४०० हवाई जहाज़ थे। इनमें १००० हवाई जहाज घर पर रहते थे, शेष उत्तरी अफ्रीका, लेवांट (सिरिया) फ्रेञ्च इण्डो चीन आदि उपनिवेशों में बँटे हुए थे। फ्रांस के पुराने जहाज़ नये ढंग के नहीं हैं। फ्रांस में बाम्ब गिराने वाले हवाई जहाज़ जर्मनी से कम हैं। लेकिन इस समय फ्रांस अपने हवाई जहाज़ों की संख्या को ड्योढ़ा कर रहा है। नये ढंग के जहाज़ कहीं अधिक भारी बाम्ब ले जा सकेंगे। ब्रिटेन में कुछ समय पहले केवल ८८० लड़ाका जहाज़ थे। लेकिन योरुप की स्थिति बिगड़ने लगी। एबीसीनिया की लड़ाई ने ब्रिटेन को चौकन्ना कर दिया। भूमध्यसागर की दुर्घटनाओं ने उसे डरा दिया। १९३६ में यहाँ ११०० सैनिक हवाई जहाज़ थे। इनमें २०० भारतवर्ष और ब्रिटिश साम्राज्य के दूसरे भागों में थे। घर पर केवल ९०० हवाई जहाज़ रह गये। लेकिन हवाई जहाज़ों की संख्या तेज़ी से बढ़ाई जा रही है। कुछ समय में २००० हो जायगी। २२० बढ़िया मशीनें है। ५ नये एअरक्राफ्ट केरियर बन रहे हैं। इनसे ७०० लड़ाका जहाज़ उपनिवेशों में पहुँचाये जा सकते हैं। ब्रिटेन के सिंगिल सीट फाइटर (हवाई जहाज़) दुनिया भर में सब से तेज़ हैं। वे एक घंटे में २८० मील की चाल से उड़ते हैं। कुछ जहाज़ ३०० मील फी घंटे की चाल से उड़ते हैं। बाम्ब गिराने वाले भारी हवाई जहाज़ २२० मील फी घंटे की चाल से उड़ते हैं। वे २००० मील तक धावा मार सकते हैं।

रूस का हवाई बेड़ा योरुप भर में सब से अधिक बड़ा है। यहाँ लगभग ४००० सैनिक हवाई जहाज़ हैं। इनमें लगभग तीन चौथाई लड़ने वाले जहाज़ हैं। ४०० बाम्ब गिराने वाले भारी हवाई जहाज़ हैं जो बहुत दूर जाकर बाम्ब गिराकर लौट सकते हैं।

चूँकि रूस का राष्ट्र कई हज़ार मील तक फैला हुआ है इसलिये रूस ने इस बात पर विशेष ध्यान दिया कि उसके लड़ाका जहाज़ बहुत दूर जाकर लौट सकें। स्पेन की गृह-कलह में रूस के हवाई जहाज़ जर्मनी और इटली के जहाज़ों से बहुत बढ़िया सिद्ध हुए। रूस के उड़ाका लोगों को बहुत अच्छी शिक्षा दी जाती है।

जर्मनी में हवाई जहाज़ उड़ाने वाली (एएटी एअर क्राफ़्ट तोपों) और हवाई जहाज़ों की बनावटी लड़ाई।

जापान में १९३६ के अन्त में ८६० हवाई जहाज़ थे। इनमें आधे से अधिक हवाई जहाज़ जल-सेना की सहायता देने वाले थे। वे नये ढंग के नहीं थे। बाम्ब गिराने वाले हवाई जहाज़ बहुत कम थे। इसके बाद जापान ने अपने हवाई जहाज़ तेज़ी से बढ़ाये। लगभग एक तिहाई जहाज़ बाम्ब गिराने वाले बन गये। इनकी रेंज (गश्त लगाने की सीमा) १००० मील है। सैनिक जहाज़ों की संख्या इस समय १४०० से अधिक है। इनमें ८०० हवाई जहाज़ जलसेना की सहायता करने वाले हैं। १९३८ के जनवरी महीने में संयुक्त राष्ट्र अमरीका में ११०० सैनिक हवाई

बम्ब गिराने वाला एक जहाज़

जहाज़ थे। ८०० बन रहे थे। १९४० में इनकी संख्या बढ़ कर २३२० हो जायगी। १९४१ में वहाँ जलसेना की सहायता करने वाले २०७० हवाई जहाज़ तैयार हो जायँगे।

दक्षिण दिशा में

[विद्या भूषण विभु B. A. F. R. G. S., M. N. G. S.]

सिन्धवाद जहाज़ी की यात्रा बड़ी विचित्र है। उसमें नये-नये देशों की अद्भुत बातों का वर्णन ऐसे अनोखे ढंग से किया गया है कि शुरू करने के बाद छोड़ने को जी नहीं चाहता। सचाई के साथ साथ उसमें मिथ्या का मिश्रण विशेष है। कल्पना की मात्रा अधिक होने से वह यात्रा बड़ी मनोरञ्जक हो गई है। परन्तु इस यात्रा में उन्हीं बातों का वर्णन किया जायगा जिनको मैंने अपनी आँखों से देखा है। यह कहना अनुचित न होगा कि इस यात्रा में मैंने आकाश से पाताल तक की चीजों का अवलोकन किया। विशाल महलों से लेकर जंगली टोडों की झोपड़ियों तक में प्रवेश किया। देश देश के चित्ताकर्षक प्राकृतिक दृश्य, अनोखे रस्म रिवाज, विचित्र वेश-भूषा सामने आये। इस भ्रमण के साथ साथ मैंने कुछ सामुद्रिक, वानस्पत्य तथा खनिज वस्तुओं का भी संग्रह किया। इन चीजों को मैंने डी० ए० वी० हाई स्कूल प्रयाग के भौगोलिक अजायब घर में रख दिया है।

काश्मीर यात्रा की समाप्ति के बाद लंका देखने की प्रबल इच्छा मेरे हृदय में जागृत हुई। कई कारणों से कोलम्बो तो न पहुँच सका परन्तु दक्षिणी भारत का भ्रमण भली भाँति हो गया।

तारीख़ ६ जून सन् १९३८ को आगरा कैंट स्टेशन से २१॥।-) का टिकट मद्रास के लिये ख़रीदा और रात के दस बजे (Peshawar Madras Grand Express) से रवाना हुआ। भीड़ काफी थी जैसे तैसे बैठने को जगह मिली। बाहर अँधेरे का राज था इससे कोई चीज़ दिखाई नहीं देती थी। गाड़ी के अन्दर भी अन्धेर नगरी थी कुछ पंजाबी पठान तो लम्बी तान कर सो रहे थे। लेकिन कुछ यात्री स्थान न पाकर खड़े ही थे अगर कोई उनको जगाने की हिम्मत करता था तो वे उससे लड़ने लगते थे। स्टेशनों पर चीज़ बेचने वालों को ख़ूब तंग करते थे, पाँच सरदे लेकर एक छिपा दिया और चार का दाम दिया। जूते बेचने वाले से जूते लेकर एक ने पहन लिये न कीमत देता था और न जूते ही वापस करता था। वह बेचारा सिपाही को बुलाकर लाया और उसने बहुत धमकाकर उसके जूते दिला दिये। शिकायत भी बेकार थी क्यों कि टिकट बाबू उठकर बैठो कहते हुए चले जाते थे। एक यात्री ने पठान से कहा साहब उठकर बैठ जाइये, कई बार कहने पर भी उस पर कोई असर न पड़ा तो उस यात्री ने उसके पैरों को पकड़ कर घुमा दिया और बैठ गया पठान उठ खड़ा हुआ और लड़ने लगा उसके अन्य साथी भी आगये यात्री ने जंजीर खींच दी और गाड़ी रुक गई। गार्ड आया और एक पुलीस को तैनात कर के चला गया उस यात्री को तो स्थान मिल गया मगर सोने वालों और खड़े होने वालों में कुछ परिवर्तन न हुआ एक पंजाबी ने उनको समझाया कि ऐसा बर्ताव करने से सारे पंजाब की बदनामी होती है। तो वह सब बिगड़ कर उसको बनाने लगे। उसने धीरे से कहा। सीख न दीजै बानरा अपनी हानि कराय; इस उपद्रव से ट्रेन में बड़ी चहल पहल रहती थी। वह सिकन्दराबाद में सरकारी पलटन के सिपाही थे। काज़ी पेट जंकशन पर उन्होंने गाड़ी बदल ली और शान्ति स्थापित हो गई। हमारी गाड़ी ग्वालियर झाँसी होती हुई बीना पहुँची। बीना सुनते ही अंधेरा भागने लगा और ऊषा की लालिमा दिखलाई पड़ने लगी। मेरी भी आंख खुल गई।

७ जून को ७ बजे भोपाल के स्टेशन पर पहुँचे वर्षा आरम्भ हो गई। ऐसा प्रतीत होता था कि गर्मी को हटाने के लिये भूपाल ताल से जल लाकर छिड़काव किया गया है। हवा, गाड़ी दोनों ही ठंडी हो गई। इटारसी जंकशन से सुरंगें शुरू हो गई तीसरे पहर के बाद नागपुर पहुँचे यहाँ बाग की चर्चा शुरू हो गई। पंजाबी महाशय ने कहा "सी० पी० में साँप बहुत पाये जाते हैं"। मुझे चाँदा जाना है वहाँ ठहरने का कैसा प्रबन्ध है। एक सज्जन ने कहा "किसी धर्मशाला अथवा सराय में ठहर जाइयेगा"।

एक छोटे से स्टेशन पर एक विचित्र घटना हो;

गई। एक मुसलमान के साथ बहुत सा सामान और कई बच्चे थे। वह बीबी और बच्चों को गाड़ी में बिठाकर स्वयं ही सामान रखने लगा। आधा सामान ही रखने पाया था कि गाड़ी छूट गई और वह बेचारा स्टेशन पर ही रह गया। अकेली बीबी रेल में घबराने लगी। लोगों ने उसे समझाया। एक पंजाबी ने उठकर उसके लिये चंदा इकट्ठा किया। हिंदू मुसलिम का यहाँ कोई भेद न था। सब ने कुछ न कुछ दिया। शहर की गन्दी जातीयता का यहाँ नाम तक न था। एक हिन्दू बालक मुसलमान की दाढ़ी से खेल रहा था। सिक्ख फलों के टुकड़े काट काट कर सब के बच्चों को दे रहे थे। यह देख कर मुझे केसव दास के भारद्वाज आश्रम की याद आगई।

'केशव दास' मृगज-बछेरु चोपैं बाधनीन, चाटत सुरभिबाघ बालक बदन हैं।

सिंहन की सटा ऐंचैं कलभ करनि करि,
सिंहन को आसन गयंद को रदन है।
फणी के फणन पर नाचत मुदित मोर,
क्रोध न विरोध जहां मदन मदन हैं।
बानर फिरत डोरे डोरे अंध तापसीन,
शिव को समाज कैधौं ऋषिको सदन हैं।

वर्धा से गाड़ी चाँदा पहुँची, दिल्ली के मि० भटनागर यहाँ पर उतर पड़े। ये महाशय व्यापार कुशल मालूम होते थे इन्होंने मुझे छोटे २ व्यापार की कई युक्तियां बताई। चांदा के कमिश्नर ने कुछ व्यापार सम्बन्धी सलाह लेने के लिये बुलाया था।

८ जून को सुबह दिनकाल पर आंख खुली तो सफेद लुंगी बाँधे हुये लोग दिखलाई देने लगे। इस मदरासी लिबास को देखकर हमारे तरफ का एक आदमी धीरे से बोला "क्या इस स्टेशन पर सभी मुसलमान हैं। बेचने वाला कोई हिन्दू नहीं है"? और यह जानकर कि ये सब हिन्दू हैं उसे बड़ा आश्चर्य्य हुआ।

९ बजे के लगभग बेजवाड़ा का जंकशन आ गया पूड़ी कचौड़ी का स्थान इटली, उपमा, दोश, (चीला) मुरुक और बड़ों ने ले लिया। काफी काफी की पुकार सुनाई पड़ने लगी। चावल साँभर (इमली का पना) रसम् के राज्य में प्रविष्ट हो गये। मैंने भी इस अनुपम उपमा का आस्वादन किया।

तिनाली का स्टेशन आते ही मुझे तिनाली राम की याद आ गई। वह दक्षिण के 'बीरबल' कहलाते थे। उनके लतीफे और चुटकुले बड़े मनोरंजक हैं।

शाम को ५॥ बजे हमारी गाड़ी मदरास आ पहुँची। मैं मोतीराम गुजराती के हिन्दूलाज साहूकार पेट में ठहरा ।=) प्रति खुराक ।) प्रति दिन एक कोठरी के तय हुए। शहर पर एक सरसरी दृष्टि डालने के लिये मैं रात को निकला। मदरासी लिबास बहुत ही सीधा सादा है। बंगालियों ने तो सिर्फ टोपी ही छोड़ी परन्तु उन्होंने टोपी जूते दोनों का त्याग कर दिया। लुंगी की तरह श्वेत धोती लपेटे हुए बहुत ही मामूली कमीज़ में नंगे सिर और नंगे पैर, बिखेरे हुए बाल, मद्रास की सड़क पर आपको बहुत से लोग मिलेंगे। इस सरल मूर्तियों की तुलना बंबई के नख-शिख भूपित उन फैशनेबुल बाबुओं से कीजिये। भारतवर्ष के तीन बड़े बड़े नगरों में पृथक पृथक तीन निराली धारा बहती हैं।

नया देश नया-वेष-नई बोली। न मैं उनकी बात समझता न वे मेरी। न किसी से जान न पहचान अकेला ही सड़क पर घूमने लगा बाबुओं से तो अंगरेजी में बात कर लेता था। परन्तु कुली आदि से संकेत द्वारा ही काम लिया जाता था। घूमते घूमते थक गया तो होटल में आकर सो गया।

९ बजे सुबह उठ कर आर्य समाज मंदिर में गया। वहां ठहरने के लिये कोई विशेष प्रबन्ध न था इस लिये महाशय समुद्रम् ने पास की धर्मशाला में मुझे ठहरा दिया। महाराज छठवें जार्ज का जन्मदिवस होने के कारण चार आने के दिन भर के लिये ट्राम का रियायती टिकट मिल गया। मैं ट्राम में बैठ कर समुद्र स्थान को चल दिया।

मद्रास भारत का तीसरे नम्बर का शहर और पांचवें नम्बर का बन्दरगाह है। स्नान के बाद मैं समुद्र के किनारे किनारे बन्दरगाह की ओर चलने लगा। मार्ग में एक मछुवे का बालक मिला वह भी साथ हो लिया। आपस में हम दोनों केवल संकेत से ही बात कर सकते थे। कुछ मछुये के बालक तर बालू से खाने के लिये केकड़े निकालने का प्रयत्न कर

रहे थे। एक गोरा लहरों में उछल उछल कर बड़े आनन्द से नहा रहा था। थोड़ी दूर चलने पर बन्दरगाह आ गया यह कृत्रिम बन्दरगाह बांध से समुद्र का पानी घेर कर बनाया गया है। यहाँ समुद्र बिल्कुल शान्त है। इसके विपरीत दूसरी ओर पानी बल्लियों उछल रहा था। मैंने पहले पहल स्पंज (Sponge) इसी बन्दर में देखे। वे शान्त जल में बड़ी सुस्ती से तैर रहे थे। उनमें कुछ रंगीन भी थे। जो बहुत भले मालूम होते थे। समुद्र फेन की तरह स्पंज के विषय में भी लोगों की मिथ्या धारणा है। जिस तरह समुद्र फेन समुद्र का झाग नहीं बल्कि एक जल जीव है। उसी प्रकार स्पंज भी एक जल जीव है। मैं पामबन (Pamban) से बहुत से समुद्रफेन लाया हूँ। समुद्र के झाग सूख कर कैसा रूप धारण कर लेते हैं इसके नमूने भी मेरे पास हैं। लौटते हुए पुराने लोहे का एक ढेर मिला एक सज्जन ने बतलाया कि यह विलायत भेज दिया जाता है। और वहाँ से नया रूप लेकर फिर यहाँ आ जाता है।

मद्रास का चिड़िया घर (Zoo) कलकत्ते की अपेक्षा छोटा है। सफेद मोर रङ्गीन मोर की तरह नाचता था परन्तु रङ्गीन मोर सौन्दर्य्य में अधिक चित्ताकर्षक था। दक्षिण अमरीका का लामा ऊँट की तरह गर्दन उठाये खड़ा हुआ था।

Aquarium (मछली घर) मद्रास की एक विशेष वस्तु है। इसमें अनेक प्रकार की जिन्दा मछलियाँ हैं। इस प्रकार की विचित्र मछलियाँ मैंने आज तक नहीं देखी थीं। शीशे के बड़े बड़े टैंकों (tanks) में वे किलोल कर रही थीं। आक्सीजन जल के अन्दर बराबर जा - रही थी। (scorpion fish) बीछू मछली का खेल मुझे बहुत पसन्द आया। यह सेई (porcupine) की तरह अपने असंख्य कांटों को फैला कर मोर की तरह नाचती थी। star fish के दो नमूने ले कर आगे चल दिया।

Triplicane beacg समुद्र तट शाम को वायु सेवन के लिये सुन्दर स्थान है। हजारों स्त्री पुरुष बालू पर बैठ कर रेडियो सुनते हैं तरह तरह की चहल पहल रहती है।

३० जून को मैंने अदियार (Adyar) की ट्राम पकड़ी अदियार थियासेफी का केन्द्र है। इसका क्षेत्रफल २६२ एकड़ है। यहाँ के पुस्तकालय में सैकड़ों भोजपत्र पर हस्तलिखित संस्कृत पुस्तकें देखीं। प्राचीन लेखनी भी वहीं पर रक्खी हुई थी। इसे स्याही में डुबाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। एक विशाल वट वृक्ष यहाँ पर सैकड़ों वर्ष से खड़ा हुआ है। संसार के वट वृक्षों में इसका तीसरा नम्बर है। यह उत्तर से दक्षिण २०० फुट और पूर्व से पश्चिम १६० फुट है। कलकत्ते का वट वृक्ष इससे अधिक बड़ा है। लेकिन इसमें यह विशेषता है कि इसका मुख्य तना अभी तक मौजूद है। एनीबीसेंट की समाधि भी दर्शनीय है। नारियल का बाग और खिले हुए गुलमुहर के पेड़ अदियार की शोभा बढ़ाते हैं।

मद्रास का light house(दीप स्तंभ) समुद्र के कुछ दूर law college के पास स्थित है। दो आने का टिकट ले कर उसकी २५० फुट ऊँची चोटी पर चढ़ गया। यहाँ से कुल शहर का दृश्य अत्यंत मनोरम दिखलाई देता है। सायंकाल में उसमें रोशनी होती है। और गुम्बद घूमता रहता है। वहाँ से लौट कर बाला जी आदि कई मन्दिर देखे।

२१ जून को प्रसिद्ध किला St. George को देखा वह किला अंग्रेजों का भारत में सबसे पहला settlement है। इसे अंगरेजी राज्य की नीव कहना चाहिये, एक खाई से घिरा हुआ है, और उसमें तीन फाटक है। अंदर जाने के लिये पास (Pass) का झंझट था। पहरेदार से बिना पूछे मैं जल्दी से अन्दर जा कर एक दूकान दार से बातचीत करने लगा। और आगे बढ़ा तो एक आदमी खड़ा हुआ मिला। मैंने उससे अंग्रेजी में पूछा "क्या मैं किला देख सकता हूँ।" उसने उत्तर दिया "क्या आपके पास पास (Pass) है।" मैंने कहा "नहीं"। मैं उत्तरी भारत से आया हूँ क्या आप मेरी मदद करेंगे। उसने मुझे डरा दिया कि वह गोरा आ रहा है। वह बिना पास न जाने देगा। अगर उसे मालूम हो गया तो वह आपको जरूर लौटा देगा। आप इस रास्ते से सीधे चले जाइये और दूसरे फाटक से निकल जाइये। Thanks (धन्यवाद) देकर मैं आगे बढ़ा। एक ओर गोरों की ड्रिल हो रही थी दूसरी ओर सरकारी

दफ्तर थे। एक गिरजा घर भी था। मैं दूसरे फाटक पर आगया पहरेदार ऊँघ रहा था मैं बाहर निकल आया और सड़क के दूसरी ओर चाँदमारी देखने लगा। यह (Pride of Madras) (मद्रास की शान) कहलाता है।

सड़क को छोड़कर मैं फिर समुद्र के पास आया।

शंख के अंडे का खोल

समुद्री घोड़ा

शंख
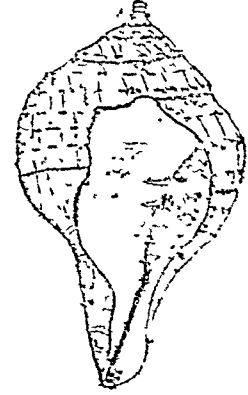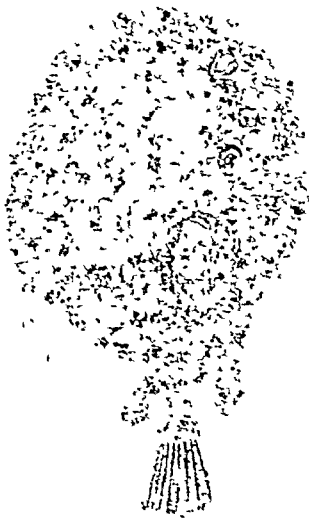
मद्रास मत्स्यागार की फूली हुई पफर नाम की विचित्र मछली

ब्लोच आंख वाली मछली

मरीना रोड समुद्र से कुछ हट कर कई मील तक गई है। सड़क के एक तरफ समुद्र की ओर फूल पत्तियों की एक कतार है। दूर दूर पर बेंच मिलती जाती हैं। दूसरी तरफ बड़ी बड़ी इमारतें हैं। प्रातः काल वायुसेवन के लिये बड़ा रमणीक स्थान है। तट पर से कुछ सीपियाँ इकट्ठी कीं। (Aquarium) के पास गौरी शंख, सुब्रह्मराय शङ्ख (शिव), गणेप शङ्ख, विष्णु शङ्ख, दूध शङ्ख, मान शङ्ख, अभिषेक शङ्ख, रावण किरीट, सीता गर्भ, काल वाहन तथा (sea horse) समुद्री घोड़ा आदि वस्तुयें मोल लीं।

सायंकाल को मूर मारकेट (moore market) देखने गया। वम्बई के क्राफर्ड मारकेट तथा कलकत्ते की ह्यूलेट मारकेट की तरह यह वाजार भी अपनी सजधज के लिये मशहूर है। दुकानों की जगमगाती चीजें मन को सहसा मोह लेती हैं। एक पैसे की चीज का एक रुपया मांग लेना यहाँ बुरा नहीं माना जाता। इसके पास ही गुदड़ी वाजार है। श्मशान की भांति यहाँ भी ज्ञानोदय हो सकता है। समय और स्थान के भेद से मूल्य में अंतर पड़ जाता है। दुनिया भर की चीजें आपबीती वतलाती हैं। इसी लिये गुदड़ी वहुत प्यारी है। सैकड़ों विद्यार्थी अपनी पुरानी पुस्तकों को अन्य विद्यार्थियों के हाथ बेच रहे थे। यहाँ की यह विशेषता मुझे बहुत पसंद आई।

(Buckingham Canal) यह खारी पानी की २५० मील लम्बी नहर मद्रास के उत्तर दक्षिण गई है। बहुत सा व्यापार इसके द्वारा होता है। उत्तर में वैजवाड़ा और दक्षिण में ६० मील तक जाती है।

मद्रास के म्यूजियम में मैंने कई चीजें देखी यह अजायव घर कई विभागों में विभाजित है। पुरातत्व विभाग में बौद्ध कालीन मूर्ति आदि वस्तुयें हैं। भूगर्भ विभाग में खनिज पदार्थ और वनस्पति विभाग में पेड़ पौधों के अंग और उनसे उत्पन्न हुई वस्तुओं का संग्रह था। प्राणि विभाग में नाना प्रकार के मृत पक्षी देखे गये। चेंचू हट का नमूना, अमरावती स्तूप, तारों के तीन टुकड़े (Metiorite) १६००-१९०० शताब्दी का वृक्ष कार्नवालिस तथा नील की वृहत् मूर्तियाँ, कनेम्मरी पुस्तकालय विशेष उल्लेखनीय हैं। मुझे ठीक स्मरण नहीं कि अर्जेंटाइन (S. America की पम्पा घास (Pumpa Grass) इस म्यूजियम में देखी या वंगलोर में। यह कास के सफेद फूल की तरह सुन्दर मालूम देती थी। (असमाप्त)

गुप्त-कालीन व्यापार

उपक्रम

प्राचीन समय में संसार के सभ्य देशों का भारतवर्ष शिरमौर था। इसकी सभ्यता चरम सीमा को पहुँच चुकी थी। भारत न केवल आध्यात्मिक उन्नत्ति की पराकाष्ठा को पहुँचा था, परन्तु भौतिक क्षेत्र में भी पर्याप्त वृद्धि कर चुका था। प्राचीन भारत में ई० स० ३०० से लेकर ई० स० ६०० यानी तीन सौ वर्षों तक गुप्त वंश के नरेशों ने शासन किया था। उस समय सभी क्षेत्रों में भारत का सर्वोच्च स्थान था। संसार में ऐसा कोई देश नहीं था जो इस प्रकार की उन्नति अवस्था में हो। भारत ही का सर्वत्र वोलवाला था। इन्हीं कारणों से इन तीन सौ वर्षों को 'स्वर्ण-युग' के नाम से पुकारते हैं। इस लेख में तत्कालीन व्यापार की अवस्था, सामग्री तथा साधन का संक्षेप रीति से वर्णन किया जायगा।

गुप्त काल में प्रजा धन धान्य से पूर्ण थी। राजा तथा प्रजा वहुत धन पुन्य में व्यय करते थे। संक्षेपतया तत्कालीन समृद्धि का दिग्दर्शन कराने से व्यापार की महानता का अनुमान किया जा सकता है। सर्वदा से भारतवर्ष का मुख्य व्यवसाय कृषि रहा है। इसी लिए शासक भी प्रजा के हित के लिए कृषि की उन्नति का सर्वदा चिन्तन करते रहे हैं। राजा समस्त भूमि को नापकर उसके सिचाई का सुन्दर प्रवन्ध करता था। गुप्तों के समय में भी इसके लिए विशाल नहर तथा तालाव वनवाए गए थे। सुदर्शन नामक कासार उसका उदाहरण था। इससे प्रगट होता है कि प्रजा सुसम्पन्न तथा समृद्धशाली थी। किसी देश की जनता का सुखी रहना उसके उन्नति का द्योतक है। ऐसी दशा में प्रजा अच्छी तरह व्यापार में भी सहयोग कर सकती है। आधुनिक समय में सभी व्यापार में उन्नत देशों की जनता सुखी तथा सम्पन्न हैं। दुखी तथा निर्धन मनुष्य व्यापार के लिए उपयुक्त नहीं होते। गुप्तों की समृद्धशाली राज्य में व्यापार की उन्नति पर्याप्त अवस्था तक पहुँची थी।

प्राचीन समय में व्यापार मुख्यतः छोटे छोटे

"भूगोल"

यह पत्र संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, बरार, विहार, उड़ीसा, पंजाब प्रान्त तथा ग्वालियर, जैपुर, जोधपुर और कोटा राज्य के शिक्षा-विभागों द्वारा हाई, नार्मल और मिडिल स्कूलों में प्रयोग होने के लिये स्वीकृत है।

वर्ष १६]　　आश्विन सं० १९९५, सितम्बर १९३८　　[सं० ५

संसार की हवाई फौज

लड़ाई छिड़ जाने पर हवाई जहाज बनाने वाले कारखाने शायद उतनी तेजी से तयार न कर सक्ते जितनी तेजी से वे नष्ट होते हैं। इस लिये हर एक देश इस बात का प्रबन्ध करता है कि हर एक लड़ने वाले हवाई जहाज के पीछे तीन चार दूसरे जहाज जरूरत के लिये तयार रहें।

इस प्रकार यदि किसी देश में १००० सैनिक हवाई जहाज घोषित किये जाते हैं तो इसका अर्थ यह होता है कि वहाँ तीन या चार हजार हवाई जहाज और तयार रहते हैं। इस लिये किसी देश के सैनिक हवाई जहाजों का ठीक ठीक पता लगना कठिन हो जाता है। जर्मनी ने अपनी हवाई शक्ति और भी गुप्त रक्खा। इस लिये जर्मनी के हवाई जहाजों की संख्या किसी ने २५,००० किसी ने ३७००, किसी ने १०,००० बतलाई पर इसमें संदेह नहीं कि इस समय जर्मनी के सैनिक हवाई जहाजों की संख्या १५०० से कम नहीं है। जर्मनी में हवाई जहाज तो तेजी से बने लेकिन उनके चलाने वाले उड़ाके उतनो तेजी से तयार न किये जा सके। इनको सिखाने में अक्सर दुर्घटनायें हुई जिन्हें जर्मन सरकार को अक्सर छिपाना पड़ा। जर्मनी के सैनिक हवाई जहाजों में बाम्ब गिराने वाले कई प्रकार के हवाई जहाजों की अधिकता है। लगभग आधे जहाज बाम्ब गिराने वाले हैं। इन में आधे से अधिक बड़े बड़े जहाज हैं जो एक टन (२७ मन) से अधिक बाम्ब एक बार में ले जा सकते हैं। इनका रेडियस या अर्द्ध व्यास जाकर लौट आने का फासला ४०० मील से ऊपर है। इस पर जर्मनी के सैनिक हवाई जहाज योरुप की बड़ी बड़ी राजधानियों में बाम्ब गिराकर बड़ी आसानी से लौट आ सकते हैं। जर्मन मशीनें अच्छी अवश्य गिनी जाती हैं लेकिन स्पेन में जिन जर्मन हवाई जहाजों का प्रयोग हुआ। उनकी रफ़ार रूसी इटेलियन और अमरीकन हवाई जहाजों के मुकाबिले में कम रही। उनकी संहारक शक्ति भी कम थी। १२००० फुट से अधिक ऊँचाई पर इन जहाजों की योग्यता में और भी कमी हो गई। लेकिन जर्मनी में जो नये ढंग के हवाई जहाज बन रहे हैं उनकी रफ्तार फी घंटे २०० मील है। जर्मनी में हवाई जहाजों की संख्या भी बढ़ रही है। शीघ्र ही यह संख्या ढाई या तीन हजार हो जायगी। इतने ही हवाई जहाज रिजर्व रहेंगे।

बड़ी लड़ाई के बाद जर्मनी में लड़ाई के हवाई जहाज खुल्लम खुल्ला न बन सके। अतः जर्मनी ने सिविल (जन साधारण के काम वाले) हवाई जहाज तयार करने में अपनी योग्यता बढ़ाई। लेकिन सिविल हवाई जहाज इस प्रकार बनाये जाते थे कि वे शीघ्र ही

फौजी जहाजों में वदले जा सकते थे। इस तरह के २०० सिविल हवाई जहाज़ बाम्ब गिराने वाले जहाजों में वदले जा सकते हैं। पर अब जर्मनी में खुल्लम खुल्ला फौजी तैयारी हो रही है। इस लिये इस प्रकार के अर्द्ध सैनिक हवाई जहाजों के बढ़ाने की आवश्यकता न रही। फिर भी इस तरह के जहाज़ शान्ति के समय सिखाने और लड़ाई के समय लड़ने के काम आ सकते हैं। जर्मनी में हवाई जहाज और खेल की कई संस्थायें हैं। इनमे ५००० जर्मन हवाई जहाज उड़ाने की शिक्षा पा रहे हैं। वे रिजर्व का काम दे सकते हैं और लड़ाई के समय कमसे कम ५०० पाइलट (उड़ाके) सेना के लिये दे सकते हैं। इटली ने भी बड़ी गुप्तरीति से अपनी हवाई सेना बढ़ाई। एवीसीनिया की लड़ाई के बाद इटली ने बड़ी तेज़ी से हवाई जहाजों की फौज बढ़ाई। इस समय वहां लगभग १५०० हवाई जहाज़ हैं और वर्ष के अन्त में २००० हो जायँगे। इनमें एक तिहाई जहाज़ बाम्ब गिराने वाले हैं। वे ज़मीन की चीज़ों (फौज, शहर आदि) पर निशाना लगाकर बाम्ब गिराने वाले हैं। एवीसीनिया की नाजुक स्थिति को सँभालने के लिये लगभग २०० हवाई जहाज़ इरीट्रिया और इटेलियन सुमालीलैंड में हैं। इतने ही जहाज लिबिया और डोडेकनीज़ (द्वीप समूह) में हैं। जब से इटली ने स्पेन की गृहकलह में हस्तक्षेप करने का निश्चय किया तब से बहुत से हवाई जहाज़ इटली ने स्पेन में भेज दिये हैं इटली अपने हवाई जहाज़ों को शांति के समय सिखाने के लिये और लड़ाई के समय लिबिया और एवीसीनिया भेज सकती है। खतरे के समय दूर दूर बिखरे हुए हवाई जहाज़ बड़ी आसानी से फिर इटली में इकट्ठे किये जा सकते हैं। योरुप की दूसरी शक्तियों के हवाई जहाज़ इतनी तेज़ी से उपनिवेशों से खतरे के समय घर नहीं लौट सकते हैं। इटली में २२० मील प्रति घंटे की चाल से उड़ने वाले ऐसे नये जहाज़ बन रहे हैं जिनका अर्द्ध व्यास ५०० मील है अर्थात् वे ५०० मील उड़ कर बाम्ब गिराने के बाद फिर वापिस लौट सकते हैं। इस प्रकार ये जहाज लिबिया से उड़ कर सिकन्दरिया पोर्ट सईद और दक्षिणी ग्रीस यूनन में बाम्ब गिराकर लौट सकते हैं। भूमध्यसागर के अत्यन्त दूर के सिरे इन हवाई जहाजों की पहुँच के बाहर कहे जा सकते हैं। लेकिन इटली की भौगोलिक स्थिति खतरे से खाली नहीं है। इटली एक तंग और लम्बा देश है। तट बहुत लम्बा है। तट या स्थल सीमा के पास बसे हुए नगरों पर बड़ी आसानी से बाम्ब गिराये जा सकते हैं।

फ्रांस में कुछ समय तक हवाई जहाजों का बेड़ा सब से अधिक था, फिर फ्रांस पिछड़ गया। १९३७ में फ्रांस में लगभग १४०० हवाई जहाज़ थे। इनमें १००० हवाई जहाज घर पर रहते थे, शेष उत्तरी अफ्रीका, लेवांट (सिरिया) फ्रेञ्च इण्डो चीन आदि उपनिवेशों में बँटे हुए थे। फ्रांस के पुराने जहाज़ नये ढंग के नहीं हैं। फ्रांस में बाम्ब गिराने वाले हवाई जहाज जर्मनी से कम हैं। लेकिन इस समय फ्रांस अपने हवाई जहाजों की संख्या को ड्योढ़ा कर रहा है। नये ढंग के जहाज़ कहीं अधिक भारी बाम्ब ले जा सकेंगे। ब्रिटेन में कुछ समय पहले केवल ८८० लड़ाका जहाज थे। लेकिन योरुप की स्थिति बिगड़ने लगी। एवीसीनिया की लड़ाई ने ब्रिटेन को चौकन्ना कर दिया। भूमध्यसागर की दुर्घटनाओं ने उसे डरा दिया। १९३६ में यहाँ ११०० सैनिक हवाई जहाज थे। इनमें २०० भारतवर्ष और ब्रिटिश साम्राज्य के दूसरे भागों में थे। घर पर केवल ९०० हवाई जहाज़ रह गये। लेकिन हवाई जहाज़ों की संख्या तेज़ी से बढ़ाई जा रही है। कुछ समय में २००० हो जायगी। २२० बढ़िया मशीनें हैं। ५ नये एअरक्राफ्ट केरियर बन रहे हैं। इनसे ७०० लड़ाका जहाज़ उपनिवेशों में पहुँचाये जा सकते हैं। ब्रिटेन के सिंगिल सीट फाइटर (हवाई जहाज़) दुनिया भर में सब से तेज हैं। वे एक घंटे में २८० मील की चाल से उड़ते हैं। कुछ जहाज़ ३०० मील फी घंटे की चाल से उड़ते हैं। बाम्ब गिराने वाले भारी हवाई जहाज २२० मील फी घंटे की चाल से उड़ते हैं। वे २००० मील तक धावा मार सकते हैं।

रूस का हवाई बेड़ा योरुप भर में सब से अधिक बड़ा है। यहाँ लगभग ४००० सैनिक हवाई जहाज हैं। इनमें लगभग तीन चौथाई लड़ने वाले जहाज़ हैं। ४०० बाम्ब गिराने वाले भारी हवाई जहाज़ हैं जो बहुत दूर जाकर बाम्ब गिराकर लौट सकते हैं।

चूँकि रूस का राष्ट्र कई हज़ार मील तक फैला हुआ है इसलिये रूस ने इस बात पर विशेष ध्यान दिया कि उसके लड़ाका जहाज़ बहुत दूर जाकर लौट सकें। स्पेन की गृह-कलह में रूस के हवाई जहाज जर्मनी और इटली के जहाज़ों से बहुत बढ़िया सिद्ध हुए। रूस के उड़ाका लोगों को बहुत अच्छी शिक्षा दी जाती है।

जर्मनी में हवाई जहाज़ उड़ाने वाली (एण्टी एअर क्राफ्ट तोपें) और हवाई जहाज़ों की बनावटी लड़ाई।

जापान में १९३६ के अन्त में ८६० हवाई जहाज थे। इनमें आधे से अधिक हवाई जहाज़ जल-सेना को सहायता देने वाले थे। वे नये ढंग के नहीं थे। बाम्ब गिराने वाले हवाई जहाज़ बहुत कम थे। इसके बाद जापान ने अपने हवाई जहाज़ तेज़ी से बढ़ाये। लगभग एक तिहाई जहाज़ बाम्ब गिराने वाले बन गये। इनकी रेंज (गश्त लगाने की सीमा) १००० मील है। सैनिक जहाज़ों की संख्या इस समय १४०० से अधिक है। इनमें ८०० हवाई जहाज़ जलसेना की सहायता करने वाले हैं। १९३८ के जनवरी महीने में संयुक्त राष्ट्र अमरीका में ११०० सैनिक हवाई

बम्ब गिराने वाला एक जहाज़

जहाज थे। ८०० बन रहे थे। १९४० में इनकी संख्या बढ़ कर २३२० हो जायगी। १९४१ में वहाँ जलसेना की सहायता करने वाले २०७० हवाई जहाज़ तैयार हो जायँगे।

दक्षिण दिशा में

[विद्या भूषण विभु B. A. F. R. G. S., M. N. G. S.]

सिन्धवाद जहाजी की यात्रा बड़ी विचित्र है। उसमें नये-नये देशों की अद्भुत बातों का वर्णन ऐसे अनोखे ढंग से किया गया है कि शुरू करने के बाद छोड़ने को जी नहीं चाहता। सचाई के साथ साथ उसमें मिथ्या का मिश्रण विशेष है। कल्पना की मात्रा अधिक होने से वह यात्रा बड़ी मनोरञ्जक हो गई है। परन्तु इस यात्रा में उन्हीं बातों का वर्णन किया जायगा जिनको मैंने अपनी आँखों से देखा है। यह कहना अनुचित न होगा कि इस यात्रा में मैंने आकाश से पाताल तक की चीजों का अवलोकन किया। विशाल महलों से लेकर जंगली टोडों की झोपड़ियों तक में प्रवेश किया। देश देश के चित्ताकर्षक प्राकृतिक दृश्य, अनोखे रस्म रिवाज, विचित्र वेश-भूषा सामने आये। इस भ्रमण के साथ साथ मैंने कुछ सामुद्रिक, वानस्पत्य तथा खनिज वस्तुओं का भी संग्रह किया। इन चीजों को मैंने डी० ए० वी० हाई स्कूल प्रयाग के भौगोलिक अजायब घर में रख दिया है।

काश्मीर यात्रा को समाप्ति के बाद लंका देखने की प्रबल इच्छा मेरे हृदय में जागृत हुई। कई कारणों से कोलम्बो तो न पहुँच सका परन्तु दक्षिणी भारत का भ्रमण भली भाँति हो गया।

तारीख ६ जून सन् १९३८ को आगरा कैंट स्टेशन से ३१॥।-) का टिकट मदरास के लिये खरीदा और रात के दस बजे (Peshawar Madras Grand Express) से रवाना हुआ। भीड़ काफी थी जैसे तैसे बैठने को जगह मिली। बाहर अँधेरे का राज था इससे कोई चीज दिखाई नहीं देती थी। गाड़ी के अन्दर भी अन्धेर नगरी थी कुछ पंजाबी पठान तो लम्बी तान कर सो रहे थे। लेकिन कुछ यात्री स्थान न पाकर खड़े ही थे अगर कोई उनको जगाने की हिम्मत करता था तो वे उससे लड़ने लगते थे। स्टेशनों पर चीज बेचने वालों को खूब तंग करते थे, पाँच सरदे लेकर एक छिपा दिया और चार का दाम दिया। जूते बेचने वाले से जूते लेकर एक ने पहन लिये न कीमत देता था और न जूते ही वापस करता था। वह बेचारा सिपाही को बुलाकर लाया और उसने बहुत धमकाकर उसके जूते दिला दिये। शिकायत भी बेकार थी क्यों कि टिकट बाबू उठकर बैठो कहते हुए चले जाते थे। एक यात्री ने पठान से कहा साहब उठकर बैठ जाइये, कई बार कहने पर भी उस पर कोई असर न पड़ा तो उस यात्री ने उसके पैरों को पकड़ कर घुमा दिया और बैठ गया पठान उठ खड़ा हुआ और लड़ने लगा उसके अन्य साथी भी आगये यात्री ने जंजीर खींच दी और गाड़ी रुक गई। गार्ड आया और एक पुलीस को तैनात कर के चला गया उस यात्री को तो स्थान मिल गया मगर सोने वालों और खड़े होने वालों में कुछ परिवर्तन न हुआ एक पंजाबी ने उनको समझाया कि ऐसा वर्ताव करने से सारे पंजाब की बदनामी होती है। तो वह सब बिगड़ कर उसको बनाने लगे। उसने धीरे से कहा। सीख न दीजै बानरा अपनी हानि कराय, इस उपद्रव से ट्रेन में बड़ी चहल पहल रहती थी। वह सिकन्दराबाद में सरकारी पलटन के सिपाही थे। काजी पेट जंकशन पर उन्होंने गाड़ी बदल ली और शान्ति स्थापित हो गई। हमारी गाड़ी ग्वालियर झाँसी होती हुई बीना पहुँची। बीना सुनते ही अंधेरा भागने लगा और ऊषा की लालिमा दिखलाई पड़ने लगी। मेरी भी आंख खुल गई।

७ जून को ७ बजे भोपाल के स्टेशन पर पहुँचे वर्षा आरम्भ हो गई। ऐसा प्रतीत होता था कि गर्मी को हटाने के लिये भूपाल ताल से जल लाकर छिड़काव किया गया है। हवा, गाड़ी दोनों ही ठंडी हो गईं। इटारसी जंकशन से सुरंगें शुरू हो गईं तीसरे पहर के बाद नागपुर पहुँचे यहाँ बाग की चर्चा शुरू हो गई। पंजाबी महाशय ने कहा "सी० पी० में साँप बहुत पाये जाते हैं"। मुझे चाँदा जाना है वहाँ ठहरने का कैसा प्रबन्ध है। एक सज्जन ने कहा "किसी धर्मशाला अथवा सराय में ठहर जाइयेगा"।

एक छोटे से स्टेशन पर एक विचित्र घटना हो

गई। एक मुसलमान के साथ बहुत सा सामान और कई बच्चे थे। वह बीवी और बच्चों को गाड़ी में बिठाकर स्वयं ही सामान रखने लगा। आधा सामान ही रखने पाया था कि गाड़ी छूट गई और वह बेचारा स्टेशन पर ही रह गया। अकेली बीवी रेल में घबराने लगी। लोगों ने उसे समझाया। एक पंजाबी ने उठकर उसके लिये चंदा इकट्ठा किया। हिंदू मुसलिम का यहाँ कोई भेद न था। सब ने कुछ न कुछ दिया। शहर की गन्दी जातीयता का यहाँ नाम तक न था। एक हिन्दू बालक मुसलमान की दाढ़ी से खेल रहा था। सिक्ख फलों के टुकड़े काट काट कर सब के बच्चों को दे रहे थे। यह देख कर मुझे केसव दास के भारद्वाज आश्रम की याद आगई।

'केशव दास' मृगज-बछेरु चोपैं बाघनीन, चाटत सुरभिवाघ बालक बदन हैं।

सिंहन की सटा ऐंचैं कलभ करनि करि,
सिंहन को आसन गयंद को रदन है।
फणी के फणन पर नाचत मुदित मोर,
क्रोध न विरोध जहां मदन मदन हैं।
वानर फिरत डोरे डोरे अंध तापसीन,
शिव को समाज कैधौं ऋषिको सदन हैं।

वर्धा से गाड़ी चाँदा पहुँची, दिल्ली के मि० भटनागर यहाँ पर उतर पड़े। ये महाशय व्यापार कुशल मालूम होते थे इन्होंने मुझे छोटे २ व्यापार की कई युक्तियां बताईं। चांदा के कमिश्नर ने कुछ व्यापार सम्बन्धी सलाह लेने के लिये बुलाया था।

८ जून को सुबह द्विनकाल पर आंख खुली तो सफेद लुंगी बाँधे हुये लोग दिखलाई देने लगे। इस मदरासी लिबास को देखकर हमारे तरफ का एक आदमी धीरे से बोला "क्या इस स्टेशन पर सभी मुसलमान हैं। बेचने वाला कोई हिन्दू नहीं है"? और यह जानकर कि ये सब हिन्दू हैं उसे बड़ा आश्चर्य्य हुआ।

९ बजे के लगभग वैजवाड़ा का जंकशन आ गया पूड़ी कचौड़ी का स्थान इटली, उपमा, तोश, (चीला) मुरुक और वड़ों ने ले लिया। काफी काफी की पुकार सुनाई पड़ने लगी। चावल सांभर (इमली का पना) रसम् के राज्य में प्रविष्ट हो गये। मैंने भी इस अनुपम उपमा का आस्वादन किया।

तिनाली का स्टेशन आते ही मुझे तिनाली राम की याद आ गई। वह दक्षिण के 'बीरबल' कहलाते थे। उनके लतीफे और चुटकुले बड़े मनोरंजक हैं।

शाम को ५॥ बजे हमारी गाड़ी मदरास आ पहुची। मैं मोतीराम गुजराती के हिन्दूलाज साहूकार पेट में ठहरा। ≈) प्रति .खुराक ॥) प्रति दिन एक कोठरी के तय हुए। शहर पर एक सरसरी दृष्टि डालने के लिये मैं रात को निकला। मदरासी लिबास बहुत ही सीधा सादा है। बंगालियों ने तो सिर्फ टोपी ही छोड़ी परन्तु इन्होंने टोपी जूते दोनों का त्याग कर दिया। लुंगी की तरह श्वेत धोती लपेटे हुए बहुत ही मामूली कमीज में नंगे सिर और नंगे पैर, बिखेरे हुए बाल, मद्रास की सड़क पर आपको बहुत से लोग मिलेंगे। इस सरल मूर्तियों की तुलना बंबई के नख-शिख भूपित उन फैशनेबुल बाबुओं से कीजिये। भारतवर्ष के तीन बड़े बड़े नगरों में पृथक पृथक तीन निराली धारा बहती हैं।

नया देश नया-वेष-नई बोली। न मैं उनकी बात समझता न वे मेरी। न किसी से जान न पहचान अकेला ही सड़क पर घूमने लगा बाबुओं से तो अंगरेजी में बात कर लेता था। परन्तु कुली आदि से संकेत द्वारा ही काम लिया जाता था। घूमते घूमते थक गया तो होटल में आकर सो गया।

९ बजे सुबह उठ कर आर्य समाज मंदिर में गया। वहां ठहरने के लिये कोई विशेष प्रबन्ध न था इस लिये महाशय समुद्रम् ने पास की धर्मशाला में मुझे ठहरा दिया। महाराज छठवें जार्ज का जन्मदिवस होने के कारण चार आने के दिन भर के लिये ट्राम का रियायती टिकट मिल गया। मैं ट्राम में बैठ कर समुद्र स्थान को चल दिया।

मद्रास भारत का तीसरे नम्बर का शहर और पांचवें नम्बर का बन्दरगाह है। स्नान के बाद मैं समुद्र के किनारे किनारे बन्दरगाह की ओर चलने लगा। मार्ग में एक मछुवे का बालक मिला वह भी साथ हो लिया। आपस में हम दोनों केवल संकेत से ही बात कर सकते थे। कुछ मछुये के बालक तर बालू से खाने के लिये केकड़े निकालने का प्रयत्न कर

रहे थे। एक गोरा लहरों में उछल उछल कर बड़े आनन्द से नहा रहा था। थोड़ी दूर चलने पर बन्दरगाह आ गया यह कृत्रिम बन्दरगाह बांध से समुद्र का पानी घेर कर बनाया गया है। यहाँ समुद्र बिल्कुल शान्त है। इसके विपरीत दूसरी ओर पानी बल्लियों उछल रहा था। मैंने पहले पहल स्पंज (Sponge) इसी बन्दर में देखे। वे शान्त जल में बड़ी सुस्ती से तैर रहे थे। उनमें कुछ रंगीन भी थे। जो बहुत भले मालूम होते थे। समुद्र फेन की तरह स्पंज के विषय में भी लोगों की मिथ्या धारणा है। जिस तरह समुद्र फेन समुद्र का झाग नहीं बल्कि एक जल जीव है। उसी प्रकार स्पंज भी एक जल जीव है। मैं पामबन (Pamban) से बहुत से समुद्रफेन लाया हूँ। समुद्र के झाग सूख कर कैसा रूप धारण कर लेते हैं इसके नमूने भी मेरे पास हैं। लौटते हुए पुराने लोहे का एक ढेर मिला एक सज्जन ने बतलाया कि यह विलायत भेज दिया जाता है। और वहाँ से नया रूप लेकर फिर यहाँ आ जाता है।

मद्रास का चिड़िया घर (Zoo) कलकत्ते की अपेक्षा छोटा है। सफेद मोर रङ्गीन मोर की तरह नाचता था परन्तु रङ्गीन मोर सौन्दर्य्य में अधिक चित्ताकर्षक था। दक्षिण अमरीका का लामा ऊँट की तरह गर्दन उठाये खड़ा हुआ था।

Aquarium (मछली घर) मद्रास की एक विशेष वस्तु है। इसमे अनेक प्रकार की जिन्दा मछलियाँ हैं। इस प्रकार की विचित्र मछलियाँ मैंने आज तक नहीं देखी थीं। शीशे के बड़े बड़े टैंकों (tanks) में वे किलोल कर रही थीं। आक्सीजन जल के अन्दर बराबर जा रही थी। (scorpion fish) बीछू मछली का खेल मुझे बहुत पसन्द आया। यह सेई (porcupine) की तरह अपने असंख्य कांटों को फैला कर मोर की तरह नाचती थी। star fish के दो नमूने ले कर आगे चल दिया।

Triplicane beacg समुद्र तट शाम को वायु सेवन के लिये सुन्दर स्थान है। हजारों स्त्री पुरुष बालू पर बैठ कर रेडियो सुनते है तरह तरह की चहल पहल रहती है।

३० जून को मैंने अदियार (Adyar) की ट्राम पकड़ी अदियार थियासेफी का केन्द्र है। इसका क्षेत्रफल २६२ एकड़ है। यहाँ के पुस्तकालय में सैकड़ों भोजपत्र पर हस्तलिखित संस्कृत पुस्तकें देखीं। प्राचीन लेखनी भी वहीं पर रक्खी हुई थी। इसे स्याही में डुबाने की आवश्यकता नहीं पड़ती। एक विशाल वट वृक्ष यहाँ पर सैकड़ों वर्ष से खड़ा हुआ है। संसार के वट वृक्षों में इसका तीसरा नम्बर है। यह उत्तर से दक्षिण २०० फ़ुट और पूर्व से पश्चिम १६० फ़ुट है। कलकत्ते का वट वृक्ष इससे अधिक बड़ा है। लेकिन इसमें यह विशेषता है कि इसका मुख्य तना अभी तक मौजूद है। एनीबीसेंट की समाधि भी दर्शनीय है। नारियल का बाग और खिले हुए गुलमुहर के पेड़ अदियार की शोभा बढ़ाते हैं।

मद्रास का light house(दीप स्तंभ) समुद्र के कुछ दूर law college के पास स्थित है। दो आने का टिकट ले कर उसकी २५० फ़ुट ऊँची चोटी पर चढ़ गया। यहाँ से कुल शहर का दृश्य अत्यंत मनोरम दिखलाई देता है। सायंकाल में उसमें रोशनी होती है। और गुम्बद घूमता रहता है। वहाँ से लौट कर बाला जी आदि कई मन्दिर देखे।

२१ जून को प्रसिद्ध किला St. George को देखा वह किला अंग्रेजों का भारत में सबसे पहला settlement है। इसे अंगरेजी राज्य की नीव कहना चाहिये, एक खाई से घिरा हुआ है, और उसमें तीन फाटक है। अंदर जाने के लिये पास (Pass) का झंझट था। पहरेदार से बिना पूछे मैं जल्दी से अन्दर जा कर एक दूकान दार से बातचीत करने लगा। और आगे बढ़ा तो एक आदमी खड़ा हुआ मिला। मैंने उससे अंग्रेजी में पूछा "क्या मैं किला देख सकता हूँ।" उसने उत्तर दिया "क्या आपके पास पास (Pass) है।" मैंने कहा "नहीं"। मैं उत्तरी भारत से आया हूँ क्या आप मेरी मदद करेंगे। उसने मुझे डरा दिया कि वह गोरा आ रहा है। वह बिना पास न जाने देगा। अगर उसे मालूम हो गया तो वह आपको जरूर लौटा देगा। आप इस रास्ते से सीधे चले जाइये और दूसरे फाटक से निकल जाइये। Thanks (धन्यवाद) देकर मैं आगे बढ़ा। एक ओर गोरों की ड्रिल हो रही थी दूसरी ओर सरकारी

सायंकाल को मूर मारकेट (moore market) देखने गया। बम्बई के क्राफर्ड मारकेट तथा कलकत्ते की ह्यूलेट मारकेट की तरह यह बाजार भी अपनी सजधज के लिये मशहूर है। दुकानों की जगमगाती चीजें मन को सहसा मोह लेती हैं। एक पैसे की चीज का एक रुपया मांग लेना यहाँ बुरा नहीं माना जाता। इसके पास ही गुदड़ी बाजार है। श्मशान की भांति यहाँ भी ज्ञानोदय हो सकता है। समय और स्थान के भेद से मूल्य में अंतर पड़ जाता है। दुनिया भर की चीजें आपबीती बतलाती हैं। इसी लिये गुदड़ी बहुत प्यारी है। सैकड़ों विद्यार्थी अपनी पुरानी पुस्तकों को अन्य विद्यार्थियों के हाथ बेच रहे थे। यहाँ की यह विशेषता मुझे बहुत पसंद आई।

(Buckingham Canal) यह खारी पानी की २५० मील लम्बी नहर मद्रास के उत्तर दक्षिण गई है। बहुत सा व्यापार इसके द्वारा होता है। उत्तर में बैजवाड़ा और दक्षिण में ६० मील तक जाती है।

मदरास के म्यूजियम में मैंने कई चीजें देखीं यह अजायब घर कई विभागों में विभाजित है। पुरातत्व विभाग में बौद्ध कालीन मूर्ति आदि वस्तुयें हैं। भूगर्भ विभाग में खनिज पदार्थ और वनस्पति विभाग में पेड़ पौधों के अंग और उनसे उत्पन्न हुई वस्तुओं का संग्रह था। प्राणि विभाग में नाना प्रकार के मृत पक्षी देखे गये। चैचू हट का नमूना, अमरावती स्तूप, तारों के तीन टुकड़े (Metiorite) १६००-१५०० शताब्दी का वृक्ष कार्नवालिस तथा नील की वृहत् मूर्तियाँ, कनेम्बरी पुस्तकालय विशेष उल्लेखनीय हैं। मुझे ठीक स्मरण नहीं कि अर्जेंटाइन (S. America की पम्पा घास (Pumpa Grass) इस म्यूजियम में देखी या बंगलोर में। यह कास के सफेद फूल की तरह सुन्दर मालूम देती थी। (असमाप्त)

गुप्त-कालीन व्यापार

उपक्रम

प्राचीन समय में संसार के सभ्य देशों का भारतवर्ष शिरमौर था। इसकी सभ्यता चरम सीमा को पहुँच चुकी थी। भारत न केवल आध्यात्मिक उन्नत्ति की पराकाष्टा को पहुँचा था, परन्तु भौतिक क्षेत्र में भी पर्याप्त वृद्धि कर चुका था। प्राचीन भारत में ई० स० ३०० से लेकर ई० स० ६०० यानी तीन सौ वर्षों तक गुप्त वंश के नरेशों ने शासन किया था। उस समय सभी क्षेत्रों में भारत का सर्वोच्च स्थान था। संसार में ऐसा कोई देश नहीं था जो इस प्रकार की उन्नति अवस्था में हो। भारत ही का सर्वत्र बोलबाला था। इन्हीं कारणों से इन तीन सौ वर्षों को 'स्वर्ण-युग' के नाम से पुकारते हैं। इस लेख में तत्कालीन व्यापार की अवस्था, सामग्री तथा साधन का संक्षेप रीति से वर्णन किया जायगा।

गुप्त काल में प्रजा धन धान्य से पूर्ण थी। राजा तथा प्रजा बहुत धन पुन्य में व्यय करते थे। संक्षेपतया तत्कालीन समृद्धि का दिग्दर्शन कराने से व्यापार की महानता का अनुमान किया जा सकता है। सर्वदा से भारतवर्ष का मुख्य व्यवसाय कृषि रहा है। इसी लिए शासक भी प्रजा के हित के लिए कृषि की उन्नति का सर्वदा चिन्तन करते रहे हैं। राजा समस्त भूमि को नापकर उसके सिंचाई का सुन्दर प्रबन्ध करता था। गुप्तों के समय में भी इसके लिए विशाल नहर तथा तालाब बनवाए गए थे। सुदर्शन नामक कासार उसका उदाहरण था। इससे प्रगट होता है कि प्रजा सुसम्पन्न तथा समृद्धशाली थी। किसी देश की जनता का सुखी रहना उसके उन्नति का द्योतक है। ऐसी दशा में प्रजा अच्छी तरह व्यापार में भी सहयोग कर सकती है। आधुनिक समय में सभी व्यापार में उन्नत देशों की जनता सुखी तथा सम्पन्न हैं। दुखी तथा निर्धन मनुष्य व्यापार के लिए उपयुक्त नहीं होते। गुप्तों को समृद्धशाली राज्य में व्यापार की उन्नति पर्याप्त अवस्था तक पहुँची थी।

प्राचीन समय में व्यापार मुख्यतः छोटे छोटे

समितियों के हाथ में था जिसको श्रेणी कहते थे।

व्यापारिक संस्थाएँ

श्रेणी आधुनिक व्यापारिक व्यापारिक संस्थाओं के समान थी जो व्यापार का नियम तथा नीति निर्धारित करती थी गुप्तकालीन श्रेणियों का वर्णन अधिकता से स्मृति ग्रन्थों तथा राजाओं के मुहरों में पाया जाता है। याज्ञवल्क्य स्मृति में श्रेणियों के नियमों का विशेष रूप से उल्लेख मिलता है। समिति के कितने सदस्य थे, उनका आपस में क्या सम्वन्ध था तथा सभापति आदि के अधिकारों का वर्णन मिलता है। गुप्तकालीन मुहरों में 'श्रेणी सार्थवाह' 'कुलिक निगम' तथा 'श्रेणी सार्थवाह कुलिक निगम' आदि वाक्य मिलते हैं। इन मुहरों को अधिकता से यह तात्पर्य निकलता है कि उस समय अनेक संस्थाएँ थीं जो व्यापार का काम करती थीं। ऐसी संस्थाएँ पाटलिपुत्र, वैसाली, उज्जैन भरौंच तथा दशपुर आदि स्थानों में विद्यमान थीं जिसके कारण वे स्थान व्यापारिक केन्द्र वन गए थे। इन स्थानों का सजीव तथा अत्यन्त सुन्दर वर्णन गुप्त लेखों में मिलता है जिसका वर्णन स्थानाभाव के कारण नहीं किया जा सकता। गुप्तों की राजधानी पाटलिपुत्र एक विशाल नगर था। मध्य देश में यह सव से बड़ा नगर था। वैसाली की शोभा अकथनीय थी। नगर के शोभा के साथ यहां की व्यापारिक संस्थाओं का कार्य मनुष्यों के दिल में एक कौतूहल पैदा कर देता था। यह एक मुख्य केन्द्र था जिसका आर्थिक उन्नति में वहुत वड़ा हाथ था [आ० स० रि० १९०३-४] गुप्तकाल में मालवा की उज्जैनी नगरी मध्यस्थ का काम करती थी। उत्तरी भारत तथा भरौंच के वीच का मार्ग इसी नगर से होकर जाता था। उज्जैनी के सदृश दशपुर भी एक समृद्धशाली नगर था। वम्बई प्रांत का भरौंच (भृगुकच्छ) नगर व्यापारिक दृष्टि से एक विशेष महत्त्वपूर्ण स्थान रखता था। यह एक मुख्य वन्दरगाह था जहाँ से फारस, मिश्र तथा पश्चिम के देशों में भारत का माल जाता था। इसी प्रकार अनेक स्थान वैभव तथा व्यापार के लिए प्रसिद्ध थे जहां पर श्रेणी स्थापित की गई थी।

गुप्तकालीन व्यापार दोनों स्थल तथा जल-मार्गों से होता था। भारत का व्यापार विश्व व्यापी हो गया था। पूर्व तथा पश्चिमी देशों में भारत की वनी हुई वस्तुएँ प्रयोग में लाई जाती थीं। आधुनिक काल के समान भारत की दुखद अवस्था नहीं थी, परन्तु वे समस्त देश अपने आवश्यकीय पदार्थों के लिए भारत का मुख देखते थे। यानी भारतीय व्यापार सर्वोन्नत था। अरव, फारस, रोम, मिश्र देशों से भारत का व्यापार होता था।

व्यापारिक मार्ग

भारतीय व्यापारियों के सुविधा के लिए वड़ी वड़ी सड़कें वनाई गई थीं। गुप्तकाल से पूर्व भी पाटलिपुत्र से अफगानिस्तान तक १०० मील लम्वी सड़क वनाई गई थी। साधारण सड़कें भी वहुत स्थानों में वनी हुई थीं। [सरकार-पोलिटिकल इन्स्टीट्यूशन एण्ड थियरी आफ हिन्दू पृ० १०२-३] गुप्त राजाओं ने इनका प्रयोग युद्ध मार्ग के लिए भी आवश्यक समझा था, अतएव चन्द्रगुप्त द्वितीय ने पारसियो को विजय करने के लिए पर्याप्त संख्या में सड़कें वनवाया था [पारसिकान् ततो जेतुं प्रतस्थे स्थल वर्त्मना-रघु०] उस समय का भारतीय चीनी यात्री फाहियान ने अपनी पूरी यात्रा स्थल से समाप्त की थी। उसकी सकुशल यात्रा से ज्ञात होता है कि गुप्तों के राज्य में स्थलमार्ग अत्यन्त सुरक्षित थे। ठगों तथा डाकुओं का नामोनिशान तक न था। व्यापार में वड़ी सुविधा थी। भड़ौच से पाटलिपुत्र तक व्यापार चलता था। पेरिप्लस ने लिखा है कि भरौंच से व्यापारिक सामग्रियाँ विभक्त की जाती थीं जो विभिन्न मार्ग से होकर सारे देश में भेजी जाती थीं। स्थलमार्ग से स्वदेश ही नहीं परन्तु विदेश से भी व्यापार होता था। अरव, फारस, चीन वैविलोनियां आदि से भारत का व्यापारिक सम्वन्ध था। योरप तक स्थल से व्यापार होता था। एक मार्ग पालमारा होते रोम तथा सीरिया की ओर तथा दूसरा आक्सस कैसिपयन सागर से मध्य योरप तक पहुँचता था [इनसाइक्लोपिडिया वृटेनिका भा० २ पृ० २५९]।

स्थल-मार्ग

स्थल मार्ग के अतिरिक्त गुप्तकाल में जलमार्ग से भी व्यापार पर्याप्त मात्रा में होता था। इसके लिए वड़े वड़े जहाजी वेड़े वनाए गए थे। उस समय पूरव में चीन तथा

जल-मार्ग

पश्चिम में अफ्रिका और योरप तक भारतीय जहाज व्यापार की सामग्री लेकर जाते थे। इन सुदुर देशों के सिवाय व्यापार भारत के किनारे तथा समीपवर्ती टापुओं से भी होता था। गुप्तकाल से पूर्व ही रोम तथा भारत का व्यापार वृद्धि पर था। कुषाण काल में भारतीय रेशमी, रंग मसाले तथा मोती आदि के विनिमय में रोमन सिक्के (सोने के) आते थे। रोम के सोने की मुद्राओं की संख्या बहुत मिलती है। इसी कारण से प्लीनी ने (ई० स० ८) में रोमन लोगों की विलासिता की निन्दा की है। क्योंकि यदि वे लोग भारत से सुख और विलास की सामग्री न मँगाते तो रोमन सिक्के भारत में न जाते। उसने लिखा है कि करोड़ों रुपयों के सुगन्धित पदार्थ, आभूषण, वस्त्र आदि प्रत्येक वर्ष भारत से खरीदे [जे० आर० ए० एस० १९०४ पृ० ५५४] इतना नहीं; रोमन निवासी भारत में व्यापार के लिए आते, परन्तु तामिल तथा पाण्ड्य नरेशों के यहाँ नौकरी करने लगते प्राचीन तामिल तथा संस्कृत साहित्य में यवन और रोमन शब्द का प्रयोग मिलता है। रोमक से रोम नगर तथा यवन से ग्रीक और रोमन लोगों का तात्पर्य है। इस कथन से ज्ञात होता है कि ईसा की प्रथम शताब्दी से भारत का पश्चिमी देशों से व्यापारिक सम्बन्ध था। भारत के समीप जावा, सुमात्रा कम्बोडिया, स्याम आदि देशों से भी बराबर व्यापार होता था। वहां भारतीयों ने अपना निवास-स्थान बनाया था।

जलमार्गीय व्यापार की पुष्टि जावा के बारोबुडुर नामक मन्दिर पर अंकित चित्रों से होती है। इनमें बड़े बड़े जहाजों का यात्रा तथा व्यापारिक नावों के चित्र हैं। इन चित्रों से ज्ञात होता है कि भारतीय नावों पर सामग्री लेकर व्यापार निमित्त अन्यत्र जा रहे हैं। गुप्त शासकों ने व्यापार, विनिमय में सुविधा के लिये अपने सिक्कों की तौल रोमन सिक्कों के बराबर तैयार कराया था। रोमन सिक्के देनेरियस (Danerius) के नाम से पुकारे जाते थे और गुप्त सिक्के दीनार के नाम से प्रसिद्ध थे। पश्चिमी देशों से आफ्रिका आदि के समीप टापुओं में गुप्तों के सिक्के मिले हैं जो विनिमय की प्रामाणिकता सिद्ध करता है। (मुकर्जी-इंडियन शिपिंग पृष्ठ १८९) उन देशों के लिये सुपारा तथा भरौंच बन्दरगाहों से भारतीय माल बाहर जाता था। वराहमिहिर (ई० स० ६००) भरुकच्छ का उल्लेख किया है (गिरि सलिल दुर्ग कोसल भरुकच्छ समुद्र रोमक सुपारा:) पूरब में मलाया द्वीपों से होते व्यापारी लोग चीन तक चले जाते थे। चीनी इतिहास में भारतीय व्यापार का उल्लेख मिलता है। कालिदास ने चीनी रेशमी वस्त्रों का वर्णन किया है—

चीनांशुकमिव केतो प्रतिवातं नीयमानस्य।

—शकुं० १।३२

संतान काकीर्ण महापथं त-

चीना शुकै: कल्पित केतुमालम्।

—कुमार० ७।३

जिससे गुप्तकालीन व्यापार की पुष्टि होती है। इस प्रकार पश्चिम तथा पूरब में एक स्थायी जलमार्ग स्थापित हो गया था।

पोत निर्माण

इन जलमार्गीय व्यापार से ज्ञात होता है कि गुप्त काल में समुद्र यात्रा के लिये जहाज तथा बड़े बड़े नाव तैयार किये गये थे। साहित्य तथा चित्र-कला के प्रमाणों से उपर्युक्त कथन की पुष्टि होती है। कालिदास ने वंग निवासियों तथा धनमित्र को जहाजों कला में निपुण बतलाया है।

वङ्गायनुत्खाय तरसानेता नौसाधनाद्यतान।

—रघु० ४।३६

समुद्र व्यवहारी सार्थवाहो धनमित्रो नाम

नौ व्यसने विपन्न:।

—शकुं० ६

गुप्तकाल में शकों का उत्क्रमय तथा जावा के उपनिवेश का उल्लेख मिलता है। ईसा की पाँचवीं सदी के प्रारम्भ में चन्द्रगुप्त द्वितीय ने सौराष्ट्र तथा मालवा पर विजय प्राप्त की थी तथा शकों को परास्त किया था। इसी युद्ध के पश्चात् शकों ने निरापद भूमि को खोज कर जावा को उपनिवेश बनाया। इसकी पुष्टि एक लेख (इ० ए० भा० ५ पृ० २१४) और जावा के एक जनश्रुति से होती है। इस जनश्रुति में ई० स० ६०० के लगभग किसी गुजरात नरेश की जावा यात्रा का वर्णन मिलता है। (हिस्ट्री आफ जावा भा० २ पृ० ८२) उस समय

सौराष्ट्र के निवासी जलमार्गीय व्यापार में अत्यन्त निपुण समझे जाते थे (बील-बुधिस्टीक रेकर्ड भा० २ पृ० २६९) व्यापार ही एक मुख्य कारण था जिसकी वजह से भारतीयों ने भिन्न भिन्न देशों ने उपनिवेश बनाया था। गुप्तों ने अपना राज्य विस्तार के लिये द्वीपों पर भी आक्रमण किया था। प्रयाग की प्रशस्ति में समुद्रगुप्त द्वारा 'सर्व द्वीय वासिभिः' पर आक्रमण करने का वर्णन मिलता है। कालिदास ने भी जावा सुमात्रा आदि द्वीपों का वर्णन ममासा द्वोप के नाम से किया है। (रघु० ६।५७) गुप्तकालीन चीनो यात्री फाहियान ने अपनी अन्तिम यात्रा (ताम्रलिप्ती से सिंहल तथा स्वदेश) जहाजों द्वारा हो समाप्त की थी। उसने वर्णन किया है—"फिर व्यापारियों के एक बृहत्पोत पर चढ़ा; समुद्र में दक्षिण-पश्चिम ओर चला। संस्कृत प्रतियों को पाकर वह एक व्यापारी के बड़े पोत पर चढ़ा। उसमें २०० से अधिक मनुष्य थे। एक छोटी नौका समुद्र-यात्रा के क्षति के रक्षार्थ बड़े पोत से बँधी हुई थी।" (फाहियान की यात्रा)

इन सब विवरणों से ज्ञात होता है कि गुप्तकाल में भारत रोम, चीन तथा अन्य द्वीपों से अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का सम्बन्ध था। इतने विस्तीर्ण जलमार्ग के लिये सुदृढ़ जहाज तथा बड़ी नौकाएँ अवश्य बनती होंगी। भारत में अजंता तथा बोरोबुडुर के चित्रों में जहाज और नावों के समावेश से सिद्ध होता था कि भारतीय पोतकला मे निपुण अवश्य होंगे। अन्यथा चित्रों से उनका समावेश होना सहज न था। इन्हीं पोतों द्वारा गुप्तकाल में जलमार्गीय व्यापार होता था।

व्यापारिक सामग्री

भारत से अधिकतर रेशम, ऊन, मलमल आदि भिन्न भिन्न प्रकारों के सूक्ष्म वस्त्र, मणि, मोती, हीरे, हाथीदाँत, मोर-पंख, सुगन्धित द्रव्य तथा मसाले विदेशों में जाया करते थे। मिश्र का आधुनिक खोज में वहाँ की ममियों की पुरानी कबरों से बारीक भारतीय मलमल भी मिली है (ओझा-मध्यकालीन भारत पृ० १६७)। ये भारतीय मलमल उस समय से लेकर १८वीं सदी यानी ईस्ट इण्डिया कम्पनी के समय तक तैयार होते थे। ढाके का मलमल उसका एक उदाहरण है। विदेशी व्यापार के कारण भारत समृद्धिशाली तथा अतुलनीय वैभवयुक्त हो गया था। जैसा कहा गया है कि प्लीनी ने लिखा है कि प्रति वर्ष रोमन राज्य से करोड़ों रुपया भारत में आता था जिसके बदले सुख की सामग्री और वस्त्र आदि वहाँ जाता था। प्राचीन समय में भारत में व्यवसाय तथा उद्योग धन्धों की अवस्था बहुत ही उच्च कोटि की थी। सब से सुन्दर व्यवसाय वस्त्रों का होता था। नाना प्रकार के वस्त्र तैयार किये जाते जिस प्रकार के वस्त्र तैयार करना आजकल अत्यन्त कठिन है। भारत में सूक्ष्म से सूक्ष्म प्रकार के छींट, मलमल तथा शाल बनते थे। कपड़े रँगने की भी कला बहुत उन्नत थी। इस प्रकार अनेक रसायनिक क्रिया प्रचलित थीं। (फाहियान की यात्रा विवरण)

बैंक

जैसा कहा गया है कि प्राचीन भारत में व्यापार पूँजीपतियों के हाथ में नहीं था परन्तु इसका संचालन छोटे छोटे गण या श्रेणी करते थे। गण की प्रथा बहुत समय से प्रचलित थी। गुप्तकालीन गणों या श्रेणी का वर्णन किया जा चुका है। व्यापार के अतिरिक्त श्रेणी सिक्के के शुद्धता पर भी ध्यान खूब देते थे। इनकी सुव्यवस्था तथा समुचित नियमों के कारण बैंक का काम भी श्रेणियों के जिम्मे कर दिया गया था। यदि उन नियमों को कोई उल्लंघन करता तो व्यापार की हानि उसी व्यक्ति को पूरी करनी पड़ती।

> प्रमादा नासितं दाप्यं प्रतिषिद्धं कृतं च यत्।
>
> —नारद.

सारी जनता अपना धन श्रेणी के पास जमा करती। श्रेणी से समयानुसार कर्ज भी लेती थी। परोपकारार्थ जितना धन संग्रह किया जाता वह श्रेणी के पास रख दिया जाता था। कुछ नियम बनाये जाते थे जिसके अनुसार श्रेणी उस धन के सूद से मन्दिर में राग भोग की सामग्री, धूप दीप तथा मरम्मत किया जाता था। कभी कभी सर्वसाधारण के व्यवहार के लिये तालाब और कूप भी खोदवाये जाते थे। इस प्रकार संग्रहित धन श्रेणी के बैंक में जमा किया जाता था। शासक भी इन कारणों से श्रेणी के नियमों का आदर करता था। उनके नियमों को ध्यान में रखते हुए अपना नियम बनाता।

जाति जनपदान् धर्मान् श्रेणी धर्मान्श्च धर्मवित्।
समीक्ष कुल धर्मान्श्च स्वधर्म प्रतिपादयेत् ॥

—मनु० ८।४१

इन सब कारणों से साधारण जनता भी व्यापार में भाग लेती थी। आजकल की तरह थोड़े से धनी मानी मनुष्य न थे परन्तु श्रेणी के कारण सर्वसाधारण के पास सम्पत्ति थी। गुप्तकालीन सिक्कों की असंख्य गणना से यह प्रगट होता है कि सर्वसाधारण भी समृद्धिशाली तथा वैभव सम्पन्न थे। आधुनिक काल की अचर परिस्थिति में रह कर प्राचीन भारत के अतुल वैभव, व्यापार में सर्वोच्च स्थान तथा तत्कालीन भारतीय महत्ता का अनुमान करना अत्यन्त कठिन काम है। इस संक्षेप वर्णन से उसकी महानता का आभास मात्र मिल सकता है।

—वासुदेव उपाध्याय, एम० ए०

पाताल प्रवेश

(अनुवादक ठा० कर्ण सिंह सब० डि० इं० बांदा)

(२) भेदिया कागज़

काका जी का अभ्यास-गृह एक छोटा सा संग्रहालय था। नाना प्रकार के पत्थर के टुकड़े पृथक २ अलमारियों में रक्खे थे। प्रति दिन शाम को नये सिरे से संभाल कर रखना होता था। कारण यह कि प्रोफ़ेसर साहब एक स्थान से किसी वस्तु को उठा कर पुनः वहाँ रखना न जानते थे। मुझे भी उसे संभालने में बड़ा आनन्द आता था। अमुक मूल्यवान खनिज वस्तुओं को तो प्रतिदिन संभाल कर साफ़ रखना ही पड़ता था। ग्रेफ़ायट ऐंथ्रेसाइट लिग्नाइट, पीट, बीटयुमेन, रेसीन पर तो मैं कभी धूल की एक कनी भी न पड़ने देता था।

परन्तु इस समय मेरा ध्यान इस प्रदर्शन की ओर न था मेरा ध्यान तो काका की ओर था। वह एक आराम कुर्सी पर किसी फटी पुरानी रुमाल को हाथ में लिये बैठे थे। बीच बीच में चश्मा में से आंखें चमक जाती थी।

"आहा! क्या आनन्द की पुस्तक है!! कितनी उत्तम! वह बोल उठे। निश्चय ही पुस्तकों के पीछे काका पागल तो थे ही। परन्तु आज असाधारण आनन्द विभोर थे।

"क्यों देखा, देखा? इधर देख, मैं आज एक गुप्त खज़ाना पुरानी पुस्तकें बेचने वाले के पास से सवेरे खोज लाया!"

"खूब"! मैं उत्साह से बोल उठा। प्रोफ़ेसर साहब मेरे ऊपरी मन को न देख सके वह अपनी पुस्तक में मस्त थे।

"देख; कितनी उत्तम? जिल्द कैसी अच्छी बनी है? बिल्कुल ठीक खुलती है न? देख; चाहे जिस पन्ना को खोल लो, ठीक खुल जाता ठीक बन्द हो जाता है? नही? वाह! बन्द हो जाने पर तनिक भी सन्धि नहीं रह जाती है! ७ शताब्दियों बीत जाने पर भी पुस्तक का कुछ भी नहीं बिगड़ता। "यह कहते हुये काका जी ने कई बार पुस्तक खोली और बन्द किया।

साहस करके मैं बोला: "किस की लिखी है?"

काका उत्साहित हो गये "यह पुस्तक १२वीं सदी में आइसलेण्ड निवासी एक विख्यात विद्वान ने लिखी है।"

"जर्मन भाषा में यह उसका अनुवाद है?" मैंने पूछा,

"भाषान्तर! मैं उसे अवश्य खरीदूंगा; यह तो मूल पुस्तक आइसलेण्ड की भाषा में ही लिखी हुई है।"

"यह बात? छपाई भी बड़ी सुन्दर है?" प्रशंसा करते हुये मैंने कहा।

"मूर्ख! यह छपी हुई है? दिखलाई नहीं देता? यह तो हाथ को लिखी है! रूनिका लिपि में लिखी है। क्या रूनिक का अर्थ भी तुझे समझाना होगा?"

"नहीं" !

"तब ठीक, काका आगे बोले, अत्यन्त प्राचीन काल में यह लिपि आइसलेण्ड में प्रचलित थी। किंवदन्ती है कि 'ओडीन' देव ने इस लिपि का आविष्कार किया था।

उनका व्याख्यान न मालूम कितना और चलता; इतने में पुस्तक में से एक कागज़ का टुकड़ा निकल पड़ा आगे हम दोनों का ध्यान उस ओर आकर्षित हो गया।

"अरे यह क्या ?" प्रोफ़ेसर साहब ने सावधानी से उस कागज़ के टुकड़े को उठा लिया। न मालूम कब से यों ही इस पुस्तक में पड़ा होगा। पांच इंच लम्बे, तीन इंच चौड़े इस टुकड़े का मूल्य अब एक श्वान के मूल्य से बढ़कर था। 'रूनिक' लिपि में उस पर एक विचित्र रीति से—ऊपर से नीचे को लिखा था।

प्रोफ़ेसर साहब बड़बड़ाते हुये बार २ उस कागज़ को देखते रहे। मुंह पर बार २ क्रोध और आवेग के चिन्ह प्रकट हो रहे थे।

दो का घण्टा बजा, और नौकरानी तुरन्त ही कमरे में आ दाखिल हुई। "प्रोफ़ेसर साहब ! भोजन तैयार है ?"

"भाड़ में डाल अपने भोजन को !"

नौकरानी आगे का वाक्य सुनने के लिये खड़ी न रह सकी !" मैं भी साथ ही भोजनालय में चला गया। भोजन की मेज़ पर सारा सामान परोसा हुआ रक्खा था। मैंने थोड़ी देर प्रोफ़ेसर साहब की प्रतीक्षा की। पर परसी थाली रखी होने पर अधिक प्रतीक्षा करना जरा मुश्किल है, वह भी भूखे पेट; यह समझने की बात है। अन्ततोगत्वा मैंने भोजन करना आरम्भ कर दिया। अरे आज कुछ अधिक भी खा गया।

"प्रोफ़ेसर साहब को आज क्या हो गया है ?" नौकरानी ने पूछा।

"आज की गरज तो ऐसी है कि बिना बरसे न रहेगा !!" मैंने कहा।

इतने में अभ्यास गृह में से काका जी की आवाज़ आ पहुँची। मैं अधकुल्ला किये ही दौड़ गया।

मध्य भारत की भौगोलिक परिस्थिति एवं उसका प्रभाव

(लेखक लाल भानुसिंह बाघेल)

पर्वतराज हिमालय की नन्दादेवी, धवलागिरि तथा गौरीशंकर चोटियों एवं उनकी अधित्यकाओं से सीधे दक्षिण की यात्रा में गंगा के विस्तृत मैदान के अनन्तर पैरों को धीरे धीरे पुनः ऊँचाई का अनुभव होने लगता है कि एकाएक एक और भूधर का दर्शन होता है। यह ऊँचाई एवं विस्तार में पर्वतराज का बच्चा भी नहीं, किन्तु अवस्था में उसका पिता हो सकता है। इसकी श्रेणियां पूर्व-पश्चिम विहार से बंबई प्रान्त तक दण्डायमान उत्तर एवं दक्षिण भारत को अलग करती हैं यही विन्ध्याचल है। इस की अधित्यका एवं उपत्यकाएँ समतल, पठार का रूप धारण करती हैं। वे सैकड़ो मील विस्तृत हैं। यही विन्ध्यपृष्ठ है बघेल खण्ड (रीवा राज्य) के पूर्व से इसकी पूर्वी सीमा आरम्भ होती है। यहाँ इस पर्वत की एक और भुजा उत्तर पश्चिम की ओर बढ़ कर गंगा के मैदान से इसे अलग ही नहीं करती किन्तु अपनी खड़ी दीवार से एकदम इसे ऊपर उठा कर मध्यभारत की माल भूमि का श्रीगणेश भी करती है। बुन्देलखण्ड में यही श्रेणी छिन्न-भिन्न होकर वहाँ के वृहत् तालाबों का आधार बनती है। ग्वालियर में इस श्रेणी की न्यूनता के कारण ही मध्यभारत की पश्चिमोत्तरी सीमा यमुना-चम्बल तक पहुँच जाती है। दक्षिणी श्रेणी बघेलखण्ड से मालवा तक समान रूप से खड़ी हुई पश्चिम की ओर ढालू होकर नर्मदा जल-धारा उत्पन्न करती है। विन्ध्याचल के इस प्रकार विस्तार एवं आकार के कारण ही जो प्रान्त रीवा राज्य के उत्तरी भाग में एक संकीर्ण उच्चसम भूमि (प्लेटो) देख पड़ता है। वही पश्चिम की ओर क्रमशः

चौड़ा होता हुआ चम्बल के बराबर हो जाता है। इसके उत्तर में अत्यन्त उपजाऊ और विस्तृत गंगा का मैदान है। पश्चिम में गुजरात का सुन्दर प्रान्त और पश्चिमोत्तर में राजपूताना का अगम्य रेगिस्तान है। पूर्व में छोटा नागपुर का जंगली प्रान्त और दक्षिण में विन्ध्य और सतपुड़ा पर्वत की अगम्य श्रेणियाँ तथा नर्मदा एवं ताप्ती की जलधाराएं बहती हैं।

सारा प्रान्त एक हजार से तीन हजार फुट की उंचाई में कर्क रेखा के उत्तर-दक्षिण विस्तृत है। नर्मदा की घाटी को छोड़कर प्रान्त भर का ढाल गंगा की ओर है। इसमें कई बड़ी २ नदियाँ बहती हैं। वर्षा में वे उमड़ पड़ती हैं। पर ग्रीष्म में उनका पानी पाताल पहुँचने का प्रयत्न करता है। उनके दोनों किनारे प्राय: ऐसे ऊँचे, जैसे कि पहाड़ो नदियों के होते हैं। न उनमें नावें चल सकती हैं न उनसे नहरें निकल सकती हैं। इस प्रकार सजल होने पर भी प्रान्त शुष्क है। किन्तु सारी भूमि पर्वतों की अधित्यका, उपत्यका एवं नदियों के बेसिन से बनी होने के कारण उपजाऊ है। उँचाई के कारण समशीतोष्ण एवं उष्ण कटिबन्ध के ताप के उत्ताप का दुःख नहीं है। अगम श्रेणियों, घाटियों और रक्षित बनों के अतिरिक्त शेष भाग का जल-वायु (मालवा का तो बहुत ही) उत्तम है। औसत आबादी १२० प्रति वर्ग मील पड़ती है।

मध्यभारत की ऐसी भौगोलिक परिस्थिति के कारण स्थल मार्ग भारतवर्ष की तरह मध्यभारत में भी प्राचीन काल से पश्चिमोत्तर से ही आने-जाने का मार्ग प्रशस्त रहा है। अतएव, गंगा का उपजाऊ मैदान, राजपूताना का अगम्य रेगिस्तान, एवं गुजरात का सुन्दर प्रदेश विदेशी लुटेरे डाकुओं के रोकने में मध्यभारत के लिये ढाल का काम करते आये हैं।; किन्तु अपने उन्मुक्त मार्ग एवं अपनी उर्वरता के कारण मालवा उतना सुरक्षित नहीं रह सका जितना बुन्देलखण्ड और बघेलखण्ड सुरक्षित रहे हैं।

पर्वतीय प्रदेश होने के कारण ही प्राचीन काल से उत्तर और दक्षिण भारत के मार्ग में होने पर भी आवागमन का यहाँ से कोई प्रशस्त मार्ग नहीं रहा। मालवा से पश्चिम समुद्र निकट होने के कारण वहाँ का व्यापार यद्यपि गुजरात से कुछ होता था, पर शेष प्रान्त अपनी परिस्थिति के कारण कभी व्यापारिक नहीं रहा। किन्तु मनुष्य-जीवनोपयोगी वस्तुओं के लिये उसे कभी परमुखापेक्षी भी नहीं रहना पड़ा। २० से ४० इंच की औसत वर्षा अल्पजलापेक्षी (कपास, गेहूँ इत्यादि) एवं बहुजलापेक्षी (धान इत्यादि) पौधों को पर्याप्त प्रमाण में उत्पन्न करती है। चरखों के समय में बुन्देलखण्ड एवं चन्देरी (ग्वालियर) अपने वस्त्रों के लिये बहुत प्रसिद्ध थे। बुन्देलखण्ड के अस्त्र अब भी प्रसिद्ध हैं।* साहित्य (धारानगरी) संगीत (ग्वालियर) एवं कला-कौशल (सांची, भिलसा, भरहुत, खजुराहो कालिंजर इत्यादि) की यहाँ उत्तरोत्तर उन्नति होती गई है।

स्वाधीन-जीवी प्रदेश होने के कारण ही यहाँ के शासकगण सदा से स्वतन्त्र होते आये हैं और शुष्क किन्तु अधिक उष्ण प्रान्त न होने के कारण यहाँ की मनुष्य जाति सदा से बहादुर जाति रही है। कछुवा, प्रगार, चन्देल, बुन्देला एवं बाघेला वीर सदैव से स्वतन्त्रता के लिये लड़ते रहे हैं। मनुष्य जीवनोपयोगी सब सामग्री सम्पन्न होने पर भी व्यापारिक प्रान्त न होने के कारण ही आबादी १२० प्रति वर्गमील से अधिक नहीं बढ़ी है। उज्जैन आदि में जहाँ कहीं प्रान्तीय व्यापार होता था। वहाँ की आबादी भी अधिक थी; किन्तु आज कल रेलों के समय में अब वह दशा नहीं रही। अब किसी देश की भौगोलिक परिस्थिति में रेल मार्ग का भी पर्याप्त भाग होता है। यद्यपि मध्यभारत की प्रान्तीय परिस्थिति रेलमार्ग में भी बाधक हुई है; किन्तु रेलों की रेलापेली में इन्दौर, उज्जैन, रतलाम, ग्वालियर, भोपाल और सतना यहाँ के व्यापार के केन्द्र हो रहे हैं। इनमें इन्दौर ही सबसे प्रमुख है; क्यों कि एक तो मध्यभारत के सब से उपजाऊ प्रान्त मालवा में इसकी स्थिति है, दूसरे भारत के फाटक बम्बई से इटारसी द्वारा, यह जुड़ा हुआ है और प्रान्त की राजधानी भी है।

---

* स्वाधीन भारत के समय में यहां भी उत्तमोत्तम शस्त्रास्त्र बनाये जाते थे। उनमें तलवारें विशेष उत्तम होती थीं। और वे खास खास स्थानों की अपने अपने ढंग की होती थीं, जैसे सूरत की सुधी, गुजरात की तलवार, हुगली और बर्दवान (बङ्गाल) का तेगा, बूँदी की कटार इत्यादि। किन्तु बुन्देलखण्ड इन सब प्रकारों की नकल कर के अपने यहां सब प्रकार की तलवारें तैयार करता था। —लेखक

आस्ट्रेलिया की लोमड़ियाँ

किसी समय डिंगो या आस्ट्रेलिया का जंगली कुत्ता वहाँ के स्क्वेटरों (मेष-वालों) या भेड़ों के मालिकों का जानी दुश्मन था। वह उनके भेड़ों को मारकर खा डालने में बड़ा होशियार हो गया था। इसी से डिंगों को नष्ट करने में लाखों रुपये खर्च किये गये और असीम प्रयत्न किये गये। फल यह हुआ कि आस्ट्रेलिया के मूल निवासियों की तरह डिंगों आस्ट्रेलिये के किसी किसी भाग में केवल इनी गिनी संख्या में शेष रह गये हैं। जिन भागों में भेड़ें पाली जाती हैं उनमें डिंगों का प्रायः बिल्कुल भय नहीं रह गया है। दुर्भाग्य से बहुत से भागों में डिंगों का स्थान लोमड़ी ने ले लिया है।

जैसे रेबिट (बड़े जंगली चूहों) को लाने वाले लोगों को यह ध्यान न आया कि इनसे आस्ट्रेलिया में कितनी हानि होगी इसी तरह लोमड़ी लाने वालों ने भी इस बात पर विचार न किया कि लोमड़ी से वहाँ क्या क्या हानि होगी। कुछ वर्षों पहले अंग्रेज लोग इंगलैंड से आस्ट्रेलिया में लोमड़ी इस लिये लाये थे कि आस्ट्रेलिया में भी उन्हें लोमड़ी का शिकार करने का अवसर मिले। मेलबोर्न को छोड़ कर आस्ट्रेलिया के और किसी भाग में लोमड़ी का शिकार लोकप्रिय न हो सका। लेकिन आस्ट्रेलिया में लोमड़ियों की संख्या बड़ी तेजी से बढ़ी। आस्ट्रेलिया को जमीन और जलवायु लोमड़ियों को विशेष रूप से अनुकूल सिद्ध हुई। उनकी संख्या तो तेजी से बढ़ी ही उनका कद भी बढ़ गया। आस्ट्रेलिया की लोमड़ियाँ इंगलैंड की लोमड़ियों से कद में कहीं अधिक बड़ी हो गई हैं। कद के बढ़ने के साथ साथ लोमड़ियों की चालाकी में किसी तरह की कमी नहीं हुई। अंग्रेजी लोमड़ी बन्दूक वाले आदमी से कम डरती है। वह जानती है कि उस पर गोली नहीं छोड़ी जायगी। इस लिये कभी कभी बन्दूक लिये मनुष्य लोमड़ी के निकट पहुँच जाता है। लेकिन आस्ट्रेलिया की लोमड़ी जानती है कि बन्दूक वाला मनुष्य उसके ऊपर गोली छोड़े बिना नहीं रह सकता इस लिये वह बन्दूक वाले के पास नहीं फटकती है। हाँ निहत्थे आदमी को देख कर कभी कभी वह चुपचाप खड़ी रहती है। इंगलैंड की लोमड़ी तो भेड़ के बच्चों पर ही हमला करती है। उन्हें बचाने के लिये इंगलैंड के गड़रिये तरह तरह की तरकीबें करते हैं। लेकिन आस्ट्रेलिया की लोमड़ी कद में इतनी बढ़ गई है कि वह भेड़ों पर भी हमला करने में नहीं हिचकिचाती मेमने (भेड़ के बच्चे) इतने अधिक होते हैं कि उनको लोमड़ी से बचाना असम्भव सा हो जाता है। इसी से भेड़ पालने वाले लोमड़ी को मारने की ताक में रहते हैं। आस्ट्रेलिया में जो लोग रैबिट (सफेद बड़े चूहे) फँसाते हैं वे भी लोमड़ी को पसन्द नहीं करते हैं। आस्ट्रेलिया के किसान रेबिट को नष्ट करने के लिये रैबिट फँसाने वालों की सहायता लेते हैं। इसके बदले में वे उन्हें खाने पीने की चीजें दे देते हैं। उनको इन रैबिटों से बड़ी आमदनी होती है वे उन्हें बेचकर काफी धन कमाते हैं। रैबिट फंसाने वाले लोग एक साथ प्रायः तोन सौ जाल लगाते हैं। इस लिये एक दिन में वे एक जाल को एक बार से अधिक नहीं देख सकते। फिर भी जब फँसाने वाले लोग जाल को देखने आते हैं तो उन्हें अक्सर एक एक जाल में समूचे रैबिट की जगह रैबिट की एक एक टांग फंसी मिलती है। उसके शेष भाग को लोमड़ियां खा जाती हैं। इससे रैबिट फंसाने वाले लोग नाराज होकर लोमड़ियों को मारने की कोशिश करते हैं। एक लोमड़ी को खाल से भी उन्हें आठ दस शिलिंग (६ या सात रुपये) मिल जाते हैं।

लोमड़ी वैसे तो बड़ी होशियार होती है। लेकिन जब वह फंसे हुए रैबिट की आवाज सुनती है तो वह सब सावधानी छोड़ कर रैबिट को खाने के लिये सीधी जाती है। वह जानती है कि यदि उसने देर की तो कोई दूसरी लोमड़ी आकर उस रैबिट को चट कर जायगी। शिकारी जाल के पास छिपा रहता है और नजदीक आने पर लोमड़ी का शिकार करता है। कभी कभी वह रैबिट की बनावटी आवाज करता है। लोमड़ी धोखे में आकर नजदीक आती है और मारी जाती है। अब तो एक कम्पनी ने ऐसी सीटी तयार की है जिसकी आवाज फंसे हुए रैबिट की तरह होती है। इस से लोमड़ियों को मारने में बड़ी सहायता मिल रही है। लेकिन लोमड़ियों की हिम्मत बढ़ती जा रही है। एक बार एक लोमड़ी ने शिकारी के कन्धे पर चढ़ कर उसके गाल में काट खाया।

जातियों का कोष

अ

अकवोई—गायना इन्डियन की एक उपजाति। ये लोग केरिब भाषा बोलते हैं। पर ये लोग केरिब लोगों से क़द में कुछ छोटे होते हैं। ये लोग बिना दीवारों के घर बनाते हैं और मुर्दों को खड़ा गाड़ते हैं।

अवचासी—ये लोग काकेशस के सिरकेशियन की एक उपजाति हैं। ये लोग छोटे पर मज़बूत होते हैं और ब्रूनेट भाषा बोलते हैं।

अवराम्बो—ये वेली प्रदेश में रहते हैं और माव्डी से मिलते जुलते हैं।

अकम्बा—पूर्वी अफ्रीका के बान्टू भाषा भाषी लोग। ये अपर ताना के दक्षिण में ऊँचे ढालों पर रहते हैं। वे ऊपरी दाँतों को कुछ तोड़ लेते हैं और बीच वाले निचले दाँतों को निकाल डालते हैं। वे अपने बच्चों को बड़ा प्यार करते हैं।

अफ़ग़ान—अफ़ग़ान, गिल्ज़ई, पठान, दुर्रानी, हज़ारा, ताजिक और ऐमक आदि लोग हैं। ये लोग ईरानी हैं। पर इन में मन्गोलियन की मिलावट है। ये परवतो बोलते हैं।

अयमर—बोलिविया के पठार पर रहने वाले मूल निवासी। ये लोग बड़े मज़बूत होते हैं और लामा (जानवर) पालते हैं। ये ऊपर से ईसाई हैं। लेकिन इनका विश्वास है कि असली देवता हिम प्रदेश में रहते हैं।

अरब लोग—अरब देश के लोग जो उत्तरी अफ्रीका और एशिया के कुछ भागों में भी मिलते हैं।

अलफचूर—मलय प्रायद्वीप की एक जाति।

अमरीकन इन्डियन—वे लोग उत्तरी और दक्षिणी अमरीका के रक्षित स्थानों में रक्खे जाते हैं। इन की संख्या घट कर प्रायः ४ लाख रह गई है। उत्तरी और मध्य अमरीका में वे एथेबास्कन अलगोन्क्वियन इरोकोई, सिओन सेलीशन, शोशोन-नथआटलन भाषा बोलते हैं। दक्षिणी अमरीका के इन्डियन लोग अरावक, केरिब, तूपी, तपुय्या, प्यूलचो और सोने का भाषा बोलते हैं।

अलगोन्क्विन—उत्तरी अमरीका की एक जाति।

अरबा—याका लोग ब्रह्मा में रहते हैं। उन के गाँवों में दो बड़े फाटक दुष्टात्माओं को निकालने के लिये रहते हैं।

अन्टानोसी—मेडेगास्कर के दक्षिण और मध्य में रहने वाले लोग।

अन्टान्कराना—मेडागास्कर के उत्तरी सिरे पर रहने वाले लोग।

अन्टाइमोरो—मेडेगास्कर के धुर दक्षिणी सिरे पर रहने वाले लोग। वे एक प्रकार के हब्शी हैं।

अज़टेक—मेक्सिको के प्राचीन लोग। इन के घरों के तीन भाग होते हैं। देवालय, भोजनालय और अन्न रखने का घर।

अनामी—अनाम में रहने वाले लोग। यह श्याम देश की थाई भाषा बोलते हैं। इनके दाढ़ी कम होती है। ये बड़े चालाक होते हैं।

अबाबुआ—वेली-बोमो-कौंडी प्रदेश के बाँटू भाषा भाषी लोग। ये वेल्जिअनकौंगो में रहते हैं। इन का क़द मामूली होता है। ये लोग चतुर शिकारी होते हैं और हाथियों को विषैले भालों से मारते हैं। ये बड़े हँसमुख होते हैं और अतिथि का बड़ा सत्कार करते हैं।

अमाम्बे—टैंगनिका के पठार व न्यासा की एक बाँटू जाति। ये लोग निचले भाग के दो दाँत निकाल डालते हैं।

अटन—अचिन की एक जाति।

अटायल—फारमूसा द्वीप के उत्तरी भाग में रहने वाले लोग। ये लोग ज्वार, बाजरा, चावल, सुअर और हिरण का गोश्त खाते हैं।

अज़ान्डी—नील-क्रेल के जल विभाजक के पास मध्य अफ्रीका में रहने वाले मूल निवासी। पहले मनुष्याहारी होने के कारण ये नियाम-नियाम कहलाते थे। पहले ये लोग बड़े लड़ाका होते थे।

अपाची—उत्तरी अमरीका के वे लोग जो एथेबास्कन भाषा बोलते हैं। ये लोग बहुत बात करते हैं।

अराकन—चिली देश के मूल निवासी।

अलपायन जाति—यह छोटे सिर के लिये प्रसिद्ध हैं।

अरावक—दक्षिणी अमरीका के मूल निवासी जो ऊपरी पेरेग्वे से लेकर वेनिज़्वेला तक फैले हुये हैं।

अवाटवा—(बाटवा) मध्य अफ्रीका में बेंगव्यूलो झील के दक्षिण में लुआपूला नदी के दलदलों में रहने वाले हबशी लोग।

अवार—काकेशस के लेसघियन लोग। वे बड़े लड़ाका होते हैं। छठीं सदी में वे डेन्यूब नदी के समीप आ बसे।

अशान्टी—गोल्ड कोस्ट के लड़ाका लोग।

अटिओ—बेल्जियन कॉंगो में स्टेनले पूल के उत्तर में रहने वाले बटेके लोग। बटेके का अर्थ बौना है।

अदिघी—सिरकेशियन लोग।

अन्टी—अरावाकन लोग जो कम्पा भी कहलाते हैं। ये लोग ऊपरी यूकेयाली के वनों में रहते हैं।

अचीनी—सुमात्रा के लोग। ये बड़े लड़ाका होते हैं और खेती करते हैं। वे मलय लोगों से अधिक काले तथा अधिक लम्बे होते हैं।

अफ्रीदी—पेशावर के पास वाले पठान लोग।

असीनी बोइन—मानटाना के रक्षित स्थानों में रहने वाले रेड इन्डियन लोग।

अम्बुन्दू—सैन पाल डि लोअंडा के पृष्ट प्रदेश में रहने वाले बान्टू भाषा भाषी लोग।

अरून्टा या अरूंडा—मध्य आस्ट्रेलिया के लोग जो माकुम्बा नदी से मेकडोनल पर्वत तक फैले हुये हैं।

अनेटोलियन भाषायें—इन्डो-यूरोपियन भाषायें जिन में आर्मेनियन और विलीन फ्रिजियन और सिदियन भाषायें भी शामिल हैं।

अरेकूना—गायना के केरिब भाषा भाषी लोग। ये लोग सवन्ना प्रदेश में रहते हैं और मिट्टी के घर बनाते हैं।

अल्बेनियन—अल्बेनिया के रहने वाले।

अबोर—ब्रह्मपुत्र की घाटी के उत्तर पूर्व की ओर वाली पहाड़ियों में रहते हैं और तिब्बती-बरमी भाषा बोलते हैं जो आसाम के उत्तर में बोली जाती है।

अशाँगो—विषुवत् रेखा के फ्रांसी सी प्रदेश के बाँटू भाषा भाषी लोग।

आ

आर्य द्राविड़—संयुक्त प्रांत, बिहार लंका आदि के रहने वाले।

आइबेरियन—इतिहास के पूर्व दक्षिणी-पश्चिमी योरुप के रहने वाले।

आइसलैंडर—आइसलैंड द्वीप में रहने वाले स्कैंडनेवियन लोग।

आइरिश—आयर लैंड के निवासी।

आर्मेनियन—आर्मेनिया देश (पठार) के रहने वाले लोग।

आस्ट्रेलियन—आस्ट्रेलिया के मूल निवासी लोग बड़े दयालु होते हैं। लेकिन ये प्रायः नष्ट हो रहे हैं।

इ

इजो—नाइजर-डेल्टा के लोग ये लोग बड़े मज़बूत होते हैं और पाम आयल (तेल) के कारबार में दलालों का काम करते हैं।

इलोंगोट—फिलीपाइन के लोग। ये लोग नाटे लेकिन मज़बूत होते हैं। इनके यहाँ विवाह तब होता है जब दूल्हा किसी को मारकर उसका सिर ले आता है। नौ दिन के बाद यह सिर दुलहिन के घर में गाड़ दिया जाता है।

इमेरेशियन—अपर और मध्य रिओन घाटी में रहने वाले जार्जियन लोग।

इन्का—बोलिविया के लोग। पहले ये लोग पीरू देश में राज्य करते थे।

इन्डोनेशियन—पूर्वी द्वीप समूह के निवासी।

इटट्टू—हारा ज़िले में बोली जाने वाली भाषा।

इरूला—नीलगिरी के काले लोग।

इरोकाई—पूर्वी बन में रहते हैं। ये लोग उत्तरी अमरीका के केवल रक्षित स्थानों में रहते हैं।

इन्गुश—काकेशस के लोग। कहा जाता है कि ये लोग बड़े चोर होते हैं।

ईडो या बीनी—बेनिन तथा उसके निकटस्थ देश प्राचीन काल में एक महान् राज्य का केन्द्र होने से सुविख्यात थे जो सत्रहवीं शताब्दी में गोल्ड कोस्ट तक विस्तृत था। बेनिन मानव बलिदान के कारण कलुषित था। राजा सुव्यवस्थित था तथा श्रेणीबद्ध कर्मचारियों द्वारा घिरा रहता था। वह अपने कुल का निर्धारण किसी योरब के द्वारा करता था। लगभग ७२० वर्ष पूर्व योरुब ने किसी निकटस्थ राजा के कुल को अपने अधीन करके (उस कुल के कुछ लोग अब तक बेनिन में थोड़े बहुत अधिकार का उपभोग कर रहे हैं) एक राज कुल की नींव दिया था। ईडो लोग लोअर नाइजर की भाषा का प्रयोग करते हैं जो टोगोलैंड के ईव तथा कुकुरुकु से समानता रखती हैं। ईडो लोग शूरवीर तथा

अभिमानी होते हैं। उनके नेता अपने को योरुप के निवासियों से उत्तम समझते थे। हाँ; वे लोग अपने पड़ोसियों से अधिक समझदार तथा कम स्वच्छन्द रहते हैं। उनके घरों में सच्ची छत नहीं रहती। प्रत्येक कोठरी के मध्य में एक खुला स्थान रहता है। जिससे ख़राब ऋतु में जल-वृष्टि से बचाव नहीं रहता।

इजिप्शियन (मिस्री)—इजिप्ट देश के निवासी हैं। सात हजार वर्ष पहले से लेकर अब तक यहाँ की जन संख्या मिश्रित हो गई है जो चिपटी नाक वाले हेमिटिक लोगों के दो भिन्न समुदाय का सम्मिश्रण है। दो हज़ार वर्ष पश्चात् मेडिटरेनियन (भूमध्यसागर) के लम्बे सिर वाले मनुष्य हेमिटिक लोगों के स्थान में बसने लगे। वे रोम राज्य के पूर्व अठारहवीं शताब्दी में बहुत बलवान हो गये। उसी समय अल्पाइन के गोल सिर वाले मनुष्य सुविख्यात शक्ति धारण किये। देश की जनसख्या में अब भी लम्बे सिर वालों का बाहुल्य है। किन्तु प्रान्तानुसार उनमें कुछ विभिन्नता है। एस्यूट के ऊपर मुसलमान लोग अधिकतर लम्बे सिर वाले तथा चौड़ी नाक वाले हैं। और उसके नीचे वाले डेल्टा में योरुप के अल्पाइन तथा मेडिटरेरियन लोगों की बढ़ती है।

इँगलिश—इँग्लैंड के रहने वाले लोग।

इथिओपियन—गाला आदि पूर्वी अफ्रीका के लोग।

इगाबो—नाइजर नदी के पूर्व के सोम्बो लोग।

इगोरोट—फिलीपाइन द्वीप समूह के लोग। ये लोग बड़े अच्छे किसान होते हैं कभी कभी वे किसी पहाड़ी के पूरे ढाल को सींच लेते हैं। इनका रंग हल्का पीला या भूरा होता है। इनकी नाक चपटी और क़द नाटा होता है। टिंगुयान, इटनेग, बनयान, नीलयान आदि इनकी उपजातियाँ हैं।

ई

ईकोई—क्रास नदी से कुछ दूर नाइजीरिया की बान्टू बोलने वाली एक जाति है।

ईबो—नाइजर नदी के निचले भाग में रहने वाले हब्शी लोग। इनकी संख्या लगभग ४० लाख है। ये लोग बड़े खुले दिल और उदार होते हैं।

ईबीबिओ—नाइजीरिया के दक्षिण-पूर्व में रहने वाले हबशी लोग।

उ

उजबेग—समरक़न्द, बुख़ारा आदि के तुर्की लोग। जो फ़रग़ाना के किपचक लोगों से मिलते हैं। १४ वीं सदी में उज़बेग ख़ाँ इनका नेता था। इसीसे इनका भी यह नाम पड़ गया। अब ये लोग बद्दू जीवन छोड़कर धीरे २ बसने लगे हैं। लकड़ी और मिट्टी के घर बन जाने पर भी इनके यहाँ गर्मियों में फेल्ट के डेरे अब भी दिखाई देते हैं। ये लोग कज़्ज़ाक और किरगीज़ लोगों से बहुत कुछ मिलते हैं।

ए

एन्टलीज़ प्रदेश—पश्चिमी द्वीप समूह जहाँ अरावक और केरिब लोग रहते थे।

एबिसीनियन—ये लोग एबीसीनिया के रहने वाले हैं यह शब्द हबशी से बिगड़ कर बना है। ये लोग ईसाई हैं। अमहारिक और टिग्नी भाषा बोलते हैं।

एन्टीमेटिना—या होवा। ये लोग मेडेगास्कर में रहते हैं।

एलुन्डा—अंगोला की बाँटू भाषा बोलने वाली एक जाति।

एल्यूट—एस्किमो की एक उपशाखा जो एल्यूशियन द्वीप और अलास्का में रहती है।

एमेजान—ओरिनीको जातियाँ। ये लोग एक समय में आधे दक्षिणी अमरीका को घेरे हुए थे। उत्तर-पश्चिम के लोग अरावक और केरिब भाषा बोलते थे। दक्षिण-पूर्व के लोग तूपी और तपुय्या भाषा बोलते थे। ये लोग मछली मारते हैं और शिकार तथा खेती करते हैं। ये लम्बे लम्बे घरों में रहते हैं। ये लोग कम कपड़े पहनते हैं और ढोल से ख़बरें (सिगनल) पहुँचाते हैं। गायना के रहने वाले सूती कपड़े भी बुनते हैं।

ऐ

ऐटा—फिलीपाइन द्वीप के हबशी लोग जो पहाड़ी प्रदेश में रहते हैं। इनके बाल ऊन के समान घूँघरदार और काले होते हैं। इनकी नाक कम लम्बी लेकिन अधिक चौड़ी होती है। होंठ मोटे होते हैं। ये लोग मछली मार कर, शिकार करके और वन से खाद्य पदार्थ एकत्रित करके निर्वाह करते हैं। ये लोग बड़े ईमानदार होते हैं।

ऐनू—जापान और दक्षिणी साखालियन के लोग। ये लोग छोटे पर मज़बूत होते हैं। इनका चेहरा कुछ चौड़ा

हाता है। नौ सदियों तक उन्होंने सारे जापान को घेर रक्खा। वे भालू के सम्मानार्थ बड़ा त्योहार मनाते हैं।

अं

अंडमानी—इनका क़द लगभग ४ फुट १० इञ्च होता है। ये लोग बहुत कम कपड़ा पहनते हैं और मछली मार कर गुज़ारा करते हैं।

अंडी—यहूदी ढंग के काकेशस लोग। ये अखार भाषा बोलते हैं।

अंगोनी—इन लोगों की उत्पत्ति ज़ुलू लोगों से हुई है। वे न्यासा झील के पश्चिम में रहते हैं और बाँटू भाषा बोलते हैं।

क

कनका—(मनुष्य) मैसूर और दक्षिणी बम्बई प्रान्त की भाषा।

कछारी—आसाम के कछार में रहने वाले लोग।

कबापल—अल्जीरिया के बर्बर लोग।

कबार्डियन—काकेशस के मुसलमान लोग। वे अपनी सिरकेशियन भाषा को अरबी अक्षरों में लिखते हैं।

कदापन—बोर्नियो के क्लेमान्टन लोग।

कराया—ब्रेज़िल के इण्डियन लोग। जो अरगुआया नदी के किनारे रहते हैं।

कशगई—दक्षिणी फारस के लोग।

कलामाँटन—योर्नियो के वे मूल निवासी जो खेती करते हैं।

कलाबीत—बोर्नियो के कलामाँटन लोग।

कनूरी—चाड झील के दक्षिण-पश्चिम के लोग जो सूडानी भाषा बोलते हैं। वे लोग बड़े लम्बे और काले होते हैं। पर वे हासा या मज़दूर लोगों को घृणा की दृष्टि से देखते हैं।

करेलियन—पूर्वी फिन लोग। इस शब्द का अर्थ ग्वाला है। ये लोग अपने पड़ोसी रूसी लोगों से मिलते हैं।

कबाबिश—एँग्लो-इजिप्शियन सूडान के धनी और शक्तिशाली लोग।

कबीरी—न्यूगिनी की फ़्लाई नदी के मुहाने पर रहने वाले लोग।

कछिन—इरावद्दी के निकास के पास रहने वाले लोग।

कनेम्बू—नाइजीरिया के उत्तरी प्रान्तों के लोग जो चाड झील के दक्षिण-पश्चिम में रहते हैं। कनेम्बू शब्द का अर्थ है कनेम का मनुष्य।

करेन—श्याम के पश्चिम की ओर बरमा के रहने वाले।

काकचिक्विल—क्विचे के दक्षिण में ग्वाटे माला के लोग।

काडूविओ—ग्रेनचाको के ग्वे कुरु लोग जो खेती करते हैं। वे जुलाहे और कुम्हार का काम करने में भी निपुण हैं।

काजोकुमुक—काकेशस के लाक या लेसगियन लोग। इस प्रदेश में यही लोग पहले पहल मुसलमान हुए थे इसलिये इन्हें गाज़ी भी कहते हैं।

काल्काडून—पूर्वी क्विन्सलैंड के मूल निवासी।

कामचाडल—(इटेलमीज) कमश्चटका के प्राचीन साइबेरियन लोग।

कारागा—पूर्वी अल्टाई के तुर्की लोग।

काराकल्पक—(काली टोपी वाले) आमू नदी के तुर्की लोग।

कायन—बोर्नियो के बौने लोग।

कायपो—ब्रेज़िल की अरागुआया नदी के पश्चिम में रहने वाले लोग।

कायाखा—मानखमेर भाषा बोलने वाले स्याम के लोग

काफ़िर—(१) उत्तरी-पूर्वी अफ़ग़ानिस्तान के लोग। ये लोग हिन्दुस्तानी हैं जिन्होंने मुसलमान होने से इन्कार कर दिया। ये लोग बड़े बीर होते हैं और अतिथि का बड़ा सत्कार करते हैं। (२) नैटाल के बाँटू लोग।

कामिलो रोई—आस्ट्रेलिया के मूल निवासी जो न्यू साउथ वेलस के उत्तर में रहते हैं।

कारामुन्डी—आस्ट्रेलिया के मूल निवासी जो प्रायः नष्ट हो चुके हैं।

काकेशियन—गोरे लोग।

कायुगा—इरोकोई समूह के अमरीकन इण्डियन जो राज्यक्रान्ति के समय कनाडा चले गये।

किकुयु—पूर्वी अफ्रीका के वे लोग जो कीनिया पर्वत के पश्चिम में रहते हैं।

किपचक—स्वर्ण समुदाय (गोल्डियन होर्ड) के लोग।

किवई—लोअर फ़्लाई नदी और न्यूगिनी के पापुअन लोग।

किरगीज़—तूरानी तुर्क लोग।

किरेई या किरैट—मंगोलिया के उत्तर-पश्चिम में रहने वाले तूरानी तुर्क लोग या किरगीज़ लोग।

किस्त—काकेशस के मुसलमान लोग।

किओवा—अमरीकन इण्डियन लोग जो मिसूरी और आर्कांसारन में रहते थे।

क्विचुआ—बोलिविया के रेड इण्डियन लोग। इनको चरका भी कहते हैं। पोटोसी में वे अब भी वही पोशाक पहनते हैं।

क्विचे—ग्वाटेमाला के मध्य भाग में रहने वाले लोग। इनका क़द काला और रंग पीला होता है। ये लोग खेती करते हैं।

कीनेयाह—बोर्नियो की एक प्रधान जाति।

क्री—मेकेंज़ी प्रदेश के रेड इण्डियन लोग। ये लोग बड़े ईमानदार और अतिथि-सेवी होते हैं।

कुबू—सुमात्रा के घुमक्कड़ लोग।

कुआनयामा—दक्षिणी अंगोला और उत्तरी डमारा-लैंड के बाँटू भाषा-भाषी लोग।

कुविरी—नेलसन अन्तरीप के रहने वाले न्यूगिनी के लोग।

कुई—खोंड लोग।

कुर्द—लघु एशियाई (एशिया माइनर) और आरमीनिया के पठार पर रहने वाले लम्बे लोग।

कुनामा—दक्षिणी इरीट्रिया के सूडानी बोलने वाले लोग।

कुरुम्बा—नीलगिरि के लोग।

कुयोनो—फिलीपाइन लोग। इनका रंग पीला और बाल खड़े होते हैं। इनके पैर का बड़ा अँगूठा बड़ा लम्बा होता है। वह दूसरी अँगुलियों से बहुत अलग होता है।

कुशापट—पूर्वी अफ्रीका के अगाओ, गाला, सुमाली अफ़रसाहो आदि लोग।

कूटेनाइ—ब्रिटिश कोलम्बिया के कूटोनाका लोग। ये लोग छाल की विचित्र नाव रखते हैं। पहले ये लोग नदी और झील के तट पर ही रहते थे। अब हाल में ये लोग घोड़े पर भी चढ़ने लगे हैं।

क्रू—तट तथा लाइबेरिया के पृष्ठ प्रदेश में रहने वाले हबशी लोग। ये लोग नाव चलाने में प्रसिद्ध हैं। ये अपने माथे के नीचे नीला टीका लगाते हैं।

केई—द्वीपीय मूल निवासियों और मलय लोगों के मेल से उत्पन्न लोग। ये लोग मेलमेल (श्रेष्ठ), रिनरिन (प्रजा) और ईरी नाम के तीन वर्गों में बँटे हुए हैं।

क्वेसी—(ख्वेसी) लाइबेरिया के वे लोग जो मेंडिंगो भाषा बोलते हैं।

क्रेज या क्रेडी—बहरुलगज़ल के चौड़े सिर वाले लोग। ये लोग कुछ छोटे होते हैं।

केलिफोर्निया क्षेत्र—वह ज़िला जिसमें ऐसे लोग बसे हैं कि जिनके पास नाव या मिट्टी के बर्तन भी नहीं हैं। ये लोग जंगली चीज़ों पर निर्वाह करते हैं।

केनेलोस या क्विजोस—इक्वेडार में नापो के निकास के पास रहने वाले लोग।

केरिब—दक्षिणी अमरीका के वे लोग जिनमें अका-वाय, बकेरी, गालिबी, मकूसी, रुकियन आदि लोग शामिल हैं।

केशिवो या कारापेची—यूकेयाली के पश्चिम में नोअन लोग।

केल्ट—इटेलोकेल्ट समूह की भाषा बोलने वाले लोग।

कैज़क—अरल, कास्पियन बेसिन के उत्तर-पूर्व में रहने वाले लोग। ये लोग किरग़ीज़ लोगों से मिलते जुलते हैं। ये लोग घोड़े और भेड़ पालते हैं।

कैटिश—मध्य आस्ट्रेलिया के मूल निवासी। ये बेरो-क्रीक के आस पास बसे हैं। इनका रहन-सहन आरुँदा लोगों से मिलता जुलता है।

कोली—पश्चिमी हिन्दुस्तान की एक जाति।

कोहिस्तानी—कोहिस्तान के स्थानिक लोग।

कोम्बे या नगुम्बी—स्पैनिश गिनी के तट पर बनिटो और केम्पो नदियों के बीच में रहने वाले लोग जो बाँटू भाषा बोलते हैं।

कोण्डे—पूर्वी पुर्चगाली अफ्रीका में मसालू नदी के पास रहने वाले मकोण्डे लोग।

कोञ्जर—मध्य अफ्रीका के दारफ़ूर लोग। इनका रंग ज़ैतून रंग का होता है।

कोरियन—कोरिया के रहने वाले।

कोरिन्ची—मलय प्रदेश की एक जाति। ये लोग पडांग के पास पहाड़ी प्रदेश में रहते हैं।

कोर्याक—कमचटका के पास के रहने वाले पेलिओ साइबेरियन लोग। ये लोग मछली मार कर और रेनडियर पाल कर अपना निर्वाह करते हैं।

कोटा—नीलगिरि प्रदेश के दस्तकार लोग।

कोटोको—चाड झील के दक्षिण में लम्बे सूडानी लोग। ये लोग लकड़ी के टुकड़ों को सी कर नाव बनाते हैं।

क्रोबो—गोल्डकोस्ट के ट्वी लोग।

कोमान्चो—शोशोनियन भाषा बोलने वाले व्योमिंग के रेड इण्डियन लोग।

कोसाक—रूस के लड़ाका सिपाही।

क्रो—अमरीकन इण्डियन लोग जो सिओन भाषा बोलते हैं।

ख

खा (मनुष्य)—इण्डोचीन के लोग।

खालकस—लोअर मंगोलिया के लोग।

खासी—आसाम की खासी पहाड़ियों के लोग।

खेमर—कम्बोडिया और स्याम के वे लोग जो मान खमेर भाषा बोलते हैं।

खोंड या कोंढ (गोंड)—उड़ीसा के पहाड़ियों के द्राविड़ लोग। धान की खेती करने के लिये ये लोग वन को जला दिया करते हैं।

ग

गलेगो—गेलिशिया उत्तरी पश्चिमी स्पेन की भाषा।

गाया अक्रा—गोल्ड कोस्ट के लोग।

गारो—खासी के पश्चिम में आसाम के लोग।

गिल्जा या खिल्जी—पूर्वी अफ़ग़ानिस्तान के तुर्की लोग।

गिल्याक—उत्तरी साखालियन के लोग जिनका मुख्य पेशा मछली मारना है।

ग्रीक—वर्तमान ग्रीस (यूनान) के लोग।

गुरखा—नैपाल के लोग।

गुरियन—सुराम (काकेशस) पर्वत के जार्जियन लोग।

गुआनाको प्रदेश—केपहार्न से बोलिविया तक का वह प्रदेश जिसमें बद्दू लोग रहते हैं।

गुआरानी—पेरेग्वे और दक्षिणी ब्रैज़िल के लोग।

गुआकुरु—पेरेग्वे के वर्ण संकर लोग।

गोला—सिअरालिओन और लाइबेरिया की सीमा के लोग।

च

च्यूस्यर—जार्जिया के वर्ण संकर लोग।

चाम—कोचीन चाइना के लोग।

चान्टोज—तुर्किस्तान के वर्ण संकर लोग। ये लोग खेती और व्यापार करते हैं।

चारगर—चिली और शान्सी के उत्तर वाले प्रान्तों में रहने वाले मंगोल लोग।

चारुआ—यूरुग्वे के लोग बोला का प्रयोग करते हैं और घोड़े पर सवार होकर शिकार करते हैं।

चिकासा—अकूला हामा के मकूगियन लोग जो कोलम्बस के आने से पहले मिसीसिपी स्टेट में बस गये थे।

चिचाअकी—दक्षिणी अमरीका का उत्तरी भाग इसमें वह फिरके रहते हैं जो विषैले तीर चलाते हैं। इस तरह के कुछ लोग कोलम्बिया में भी रहते हैं।

चिन—ब्रह्मा के पहाड़ी लोग। इसी से चिन्डविन नाम (इरावद्दी नदी की सहायक नदी का) पड़ा है।

चिलकट—अलास्का के तिनकिट लोग जो अपने कम्बलों के लिये मशहूर हैं।

चिनूक—प्रशान्त महासागर के तट पर बसने वाले लोग कोलम्बिया नदी के उत्तर में बसे हुये थे। आजकल वे प्रायः नष्ट हो गये हैं।

चिप्पेवा—अलोन्किन जाति के ओजिवा लोग।

चिप्पेवियान—कनैडा के एटोवास्कन लोग।

चिरिग्वानो—ग्रेन चाको के पूर्व में रहने वाले कम्बा लोग।

चित्राली—हिन्दुकुश के दक्षिण में रहने वाले लोग। इनका सिर गोल होता है।

चिक्विटो—तूबी भाषा बोलने वाले बोलिविया के लोग। इनका रंग ज़ैतूनी और कद नाटा होता है। ये लोग बड़े ईमानदार और मेहनती होते हैं।

चीनी—चीन देश के निवासी। उत्तर के लोग मन्चू और दक्षिण के लोग मिआओत्से कहलाते हैं। चीनी लोग बड़े ईमानदार और मेहनती होते हैं।

चुकची—साइबेरिया के धुर उत्तर-पूर्व में रहने वाले पेलिओ साइबेरियन लोग। इनकी दो जातियाँ हैं। एक

जाति के लोग रेनडियर पालते हैं दूसरी जाति मछली मारती है।

चुवास—कज़ान प्रदेश के फिनिक लोग। ये लोग बड़े मेहनती और कम खर्च होते हैं। ये बड़े अच्छे किसान होते हैं।

चेचेन—मध्य टेरेक आसा आदि के लोग। इनमें किस्त, गलगई और इन्गुश लोग शामिल हैं। ये लोग अतिथि का बड़ा सत्कार करते हैं।

चेरेमिस—वालगा प्रदेश के फिनिक लोग। इनके सिर छोटे आखें तंग, दाढ़ी छोटी और नाक चपटीहोती है।

चेरोकी—वर्जिनिया के इरोक्विन लोग।

चेचीन—मैदान के रेडइन्डियन जो अलगान्कियन भाषा बोलते हैं और सूर्य-नृत्य करते हैं।

चोलो या चोला—बोलविया के वर्ण संकर इन्डियन लोग।

चोलोन—हुआलागा के बायें किनारे पर रहने वाले दक्षिणी अमरीका के लोग।

चोन्टाल—निकारेगुआ के पोपोलूका लोग। नाहुआटल भाषा में चोनटान अजनबी को कहते हैं।

चोरोटेगा—निकारेगुआ और मेक्सिको के वे लोग जो माँग्वे भाषा बोलते थे।

चोकटा—मिसीसिपी नदी के समीप रहनेवाले मस्कोगियन लोग। ये लोग मुरदों की हड्डियों को साफ करके हड्डी को घरों में जमा करते थे।

ज

जगतई भाषायें—तुर्को-तारतारी भाषायें जिसमें उईगुट, कोमन, जगतई, उसबेग, तुर्कोमन और कज़ान भाषायें शामिल हैं।

जर्मन—जर्मनी के रहने वाले लोग।

जम्बो—सुमात्रा के मलय लोग।

जम्बो—एबीसीनिया के वे लोग जो सोबात नदी के किनारे पर रहते हैं।

जाट—उत्तरी-पश्चिमी भारत के किसान लोग। पुराने समय में इन्होंने सिन्ध की घाटी को जीता था।

जापानी—जापान के लोग। इनमें माँचू और कोरिया का रुधिर भी मिला है।

जार्जियन—काकेशस के दक्षिण में रहने वाले कर्थिली लोग।

जाकुन—मलय प्रायद्वीप के वर्ण संकर लोग। ये प्रायः मलय प्रायद्वीप के दक्षिणी भाग में रहते हैं। इनके बाल खड़े होते हैं।

जावानी—जावा द्वीप के रहने वाले लोग। इनका रंग हलका और बाल सीधे होते हैं। इनका सिर गोल होता है, ये सुंडा के लोगों से कद में बड़े होते हैं।

जिप्सी—बंजारे, नट लोगों की तरह के घुमक्कड़ लोग। फारस और तुर्किस्तान में ये लूली और मलङ्ग कहलाते हैं सिरिया में उन्हें चिंगने कहते हैं। इँग्लैंड में इस तरह के लोग बहुत कम हैं। रूस में ये बहुत अधिक हैं।

जिवारो—एमेज़ान के निकास के पास के लोग। ये लोग बड़े स्वाभाविक भक्त होते हैं। इन्हें स्वतन्त्रता बड़ी प्रिय होती है।

जिरियन—फिनिक लोग जो मामूली कद, भूरे बाल, और गोल सिर के होते हैं।

जुकून—बेन्यू नदी के दक्षिण में सूडानी बोलने वाले लोग।

जुलू—(अमाज़ुलू) दक्षिणी पूर्वी अफ्रीका के बाँटू भाषा भाषी लड़ाका लोग।

जूनी—उत्तरी अमरीका के दक्षिण-पश्चिम में रहने वाले प्यूबलो लोग।

जेक्री—(शेक्री) नाइजीरिया में नदी के पास के रहने वाले लोग।

जेफी—यू लोगों के ही रूपान्तर हैं।

जेपोटेक—छोटे सिर वाले मेक्सिको के निवासी जो स्पेन वालों के आक्रमण के समय प्रशान्त महासागर की ओर रहते थे।

ट

टर्क—टर्की के लोग जो शायद प्राचीन हूण लोगों के सम्बन्धी हैं।

टर्को—ईरानी, बलूची, बरूही और अफ़ग़ान लोग।

टस्केरोरा—नार्थ केरोलिना के सन इकट्ठा करने वाले इन्डियन लोग।

टश—जार्जियन लोग जो प्रायः काकेशस के उत्तर में रहते हैं।

टावस्टियन—पश्चिमी फ़िन लोग। जो अपने को हेमेलेसेट झील के पास रहने वाले कहते हैं इनका शरीर चौड़ा और भारी होता है। इनकी आँखें तिरछी, भूरी या

नीली होती हैं। ये लोग ईमानदार लेकिन बदला लेनेवाले और सुस्त होते हैं।

टापीरो—न्यूगिनी के हबशी लोग जो मिमिका नदी के निकास के पास रहते हैं। पापुअन लोगों से इनका रंग कुछ हलका (गोरा) होता है। इनका क़द ५ फुट से ५ फुट ४ इं० तक लम्बा होता है।

टिंगुयन या इटनेग—उत्तरी लूज़न के पहाड़ी लोग जो धान की खेती करते हैं।

टिंलकिट—एलास्का के पच्छिमी तट पर रहने वाले अमरीकन इण्डियन लोग। इनका सिर गोल और रङ्ग पीला होता है।

टिकीटिको—ऊपरी इटूरी नदी के बौने लोग। जो कौंगो और नील नदी के बीच में रहते हैं। ये लोग बद्दू होते हैं। ये लोग अटिओ या वेटेके लोगों से मिलते जुलते हैं। ये लोग चट्टानों में आश्रय लेते हैं। शिकार की चीज़ें देकर मंगबेट्टू या मोम्बू लोगों से फल, हथियार और कपड़ा मोल लेते हैं।

टुंगस—निओसाइबेरियन लोग। जिनमें गोल्डी, मांचू और ओरोचोन आदि लोग शामिल हैं। शिकार करने में ये लोग बड़ी वीरता दिखलाते हैं। ये शमानी होते हैं।

टेडा—चाड झील के उत्तर और ताइबस्ती पठार में रहने वाले सहारा रेगिस्तान के लोग। इनका रंग काला होता है लेकिन ये हबशी नहीं होते हैं। ये लोग टीबू और कनूरी लोगों से मिलते हैं।

टेलिगू—आन्ध्र प्रान्त की भाषा।

टेंगरेसे—जावा के पूर्व में रहने वाले पहाड़ी लोग। इनके सिर लम्बे, नाक चौड़ी और बाल घूँघुर वाले होते हैं। ये लोग दक्षिणी भारत के उन लोगों की सन्तान हैं जो यहाँ ७वीं सदी से आने लगे।

टेहुआना—मेक्सिको के टेहुआस्टी पेक प्रदेश में रहने वाले ज़ेपोटेक लोग।

टेहुेलची—पेटोगोनिया के मूल निवासी। इनका क़द बहुत लम्बा (५ फुट ८ इञ्च से ६ फुट तक) होता है। ये लोग अधिकतर गुआनाको का मांस खाते हैं।

टोडा—नीलगिरि की पहाड़ियों पर रहने वाली एक जाति। पहले इन लोगों में कन्या को मार डालने की चाल थी। इसलिये स्त्रियाँ बहुत कम हो गईं और एक स्त्री के कई पति होने लगे।

टोबा—पिल्कोमियो और बरमेजो के बीच में रहने वाले बोलविया के लोग। ये लोग लम्बे होते हैं और चिरीगुआनो लोगों से उनका रंग अधिक काला होता है।

टोमक—वे बलगेरियन लोग जो मुसलमान हो गये।

टोंगा—न्यासा झील के पश्चिम में रहने वाले बाँटू भाषा-भाषी लोग। इसी नाम के कुछ लोग इन्हाम्बेन के पास तट पर रहते हैं।

टोपा—पाँडीचीरी के पुर्तगीज़ लोग।

ड

डच – हालैंड के लोग। और डुंगन (ज़ुंगन या ज़ुंगर) इलाई नदी के पास वाले प्रदेश के पश्चिमी मंगोलियाटिकी टारटार लोग। ये लोग मुसलमान हैं लेकिन चीनी ढंग से रहते हैं।

डनाकिन या अफार—हेमायटिक जाति के वे लोग जो एबीसीनिया और समुद्र के बीच वाले ख़ुश्क प्रदेश में रहते हैं। बनावट में येला सुमाली से मिलते हैं। लेकिन इनमें अरबीपन बहुत कम है।

डाकोटा या सिओक्स—ये लोग सुपीरियर झील के दक्षिण-पश्चिम मैदान में रहते थे। इनकी संख्या इस समय ३०,००० से अधिक नहीं है।

डाफला—हिमालय प्रदेश के बाँधिन लोग जो शिकार से रोज़ी कमाते हैं।

डुसून—बोर्नियो के इन्डोनेशियन लोग जो खेती करते हैं।

डूस—लेबनान और एन्टीलेबनान के लोग। ये लोग अरबी बोलते हैं। नाम मात्र को इनका मत ईसाई है।

डेनी या टिनेह—उत्तरी अमरीका में मेकेंज़ी-समुदाय के लोग। ये लोग छाल के रेशे से जाल बनाकर केरिबो हिरण को पकड़ते हैं। इसी मांस से उनका गुज़ारा होता है। इस मांस के पकाने के लिये वे स्प्रूस लकड़ी की बनी हुई टोकरी से हाँडी का काम लेते हैं। वे लोहे के टुकड़ों से आग बना लेते हैं फिर वे आग में पत्थरों को गरम कर लेते हैं। अन्त में वे इन्हीं गरम पत्थरों को मांस से भरी हुई टोकरी में डाल डाल कर अपना भोजन पका लेते हैं।

डेलावेर या लेनापी—एल्गोंक्वियन समुदाय के लोग जो पहले डेलावेर नदी के बेसिन में रहते थे।

डेन—डेनमार्क के लोग। इनकी भाषा वही है जो

नार्वेजियन लोगों की है। निओलिथिक समय से पहले यह देश बसा नहीं था।

त

तगबानुआ—फिलीपाइन के केलिमियेन द्वीप समूह के निवासी। क़द में ये लोग छोटे होते हैं पर इनकी टाँगें बड़ी लम्बी होती हैं। ये बड़े मेहनती होते हैं।

तनगुत—दक्षिणी-पश्चिमी चीन के मंगोल और दूसरे लोग।

तगाल—बोर्नियो के लम्बे और मज़बूत लोग।

तगालोग—मेनिला के पास रहने वाले फिलीपायन लोग।

तलामान्का—चिब्चा भाषा बोलनेवाले कोस्टारिका के लोग।

तराञ्ची या इलाई तारतार—तुर्की लोग जो रूसी तुर्किस्तान में आकर बस गये। जब चिंगेज़ ख़ाँ ने कुल्जा पर अधिकार कर लिया तभी ये लोग इधर आये थे। ये लोग सार्ट लोगों के सम्बन्धी हैं; लेकिन ये लोग खेती करते हैं और अपनी स्त्रियों को अधिक स्वतन्त्रता देते हैं।

तरास्को—मेक्सिको के मेचोआकन प्रदेश के व्यूरेपेचा लोग। ये लोग बड़े वीर और दयालु होते हैं। इनकी स्त्रियाँ अपने बच्चों को कन्धों पर लटका कर ले जाती हैं।

ताजिक—गोल सिर वाले पूर्वी फ़ारस के लोग। ये लोग खेती करते हैं। पहाड़ी प्रदेश में रहने वाले लोग परसीवान (फारसी की एक उप-भाषा) बोलने के कारण परसीवाल कहलाते हैं। मैदान में रहने वाले दिखन (किसान) कहलाते हैं।

तामिल—उत्तरी लङ्का और दक्षिणी हिन्दुस्तान के लोग। इनमें पल्लाई, एयीन और वेल्लाल जातियों के सिर लम्बे होते हैं। दूसरे लोगों के सिर चौड़े होते हैं। इनकी द्राविड़ भाषा बड़ी पुरानी है। शुद्ध भाषा कोडेन और बिगड़ी हुई भाषा को कोदुम कहते हैं।

तानला—मेडेगास्कर के घने बनों में रहने वाले हबशी लोग।

ताई या थाई—स्याम इन्डोचीन और चीन के वे लोग जो स्यामी चीनी भाषा बोलते हैं। लोलो लोगों को छोड़ कर ये लोग इस प्रदेश के बड़े पुराने रहने वाले हैं। लड़कपन में इनकी बुद्धि बड़ी तीव्र होती है और ये लोग सोलने में बड़े कुशल होते हैं। लेकिन नशीली तम्बाकू पीने के व

ताराहुमारे—मेक्सिको के उत्तरी पहाड़ी प्रदेश में रहने वाले लोग। इनका रंग कुछ भूरा और शरीर गठीला होता है।

तारतार—मध्य एशिया के असली तारतार लोग तो नष्ट हो गये। परन्तु यह शब्द पश्चिमी एशिया के तुर्क लोगों के लिये प्रयुक्त होता है। ये लोग मंगोल लोगों से हिल मिल गये। तारतारी भाषाओं में तुर्की तारतारी, किरगीज़, बश्कीर, नोगाई, कोमान, कारचल, काराकल्पक, मश्चेरक और साइबेरियन भाषायें शामिल हैं।

गविंजुर—नूबिया के लोग। इन्हीं में चाड झील के दक्षिण-पश्चिम में रहने वाले शूवा अरबी भी शामिल हैं। कहते हैं कि ये लोग ट्यूनिस से यहाँ आये।

तुकानो—एमेज़ान प्रदेश के लोग जो देशाना लोगों के दुश्मन हैं। इनका सिर गोल होता है। ये मछली मार कर खाते हैं और बेटोया भाषा बोलते हैं।

तुगाई या कैया-कैया—न्यूगिनी के मनुष्याहारी लोग।

तुर्की—मध्य एशिया के लोग जो खेती करते हैं। तुर्की लोगों में याकूत, किरगीज़, उज़बेग, टर्कमान आदि लोग शामिल हैं। पश्चिमी तुर्कों की भाषा में डरबेन्ट, अज़र बैजान, क्राइमियन, अनाटोलियन और रुमेलियन भाषायें शामिल हैं। अनाटोलियन और रुमेलियन के मिलने से ओस्मानली भाषा बनी है।

तुर्कीतारतारी—इन लोगों में क़ज़ान तारतार, तारतार, क्राइमिया के तारतार, तौरिदा, किरगीज़, कास्पियन के नोगई और ओरनबर्ग में बश्कीर शामिल हैं।

तुरकाना—रुडाल्फ झील के पश्चिम में पूर्वी अफ्रीका के लोग। ये संसार भर के मनुष्यों से अधिक लम्बे होते हैं। इनकी औसत ऊँचाई ७ फुट होती है। ये लोग ढोर पालते और मछली मारते हैं।

तूरानी—पारसी लोगों के अवस्ता ग्रन्थों में तूरा (तुरया) शब्द उन प्रदेशों के लिये आया है जिन्हें आजकल तूरान कहते हैं। तारतारी का दूसरा नाम तूरान है।

तोरज—सेले बीस द्वीप के जंगली लोग। ये लोग सीधे सादे और ईमानदार होते हैं।

तोमत—खीवा के पड़ोस में रहने वाले तुर्की लोग।

तौरेग—सहारा के बर्बर लोग जिन्हें अस्थेनावा (अस्बेनन्टरवार्लास्तान) के रहने वाले कहते हैं।

लोहा और फौलाद

बहुत पुराने समय में मनुष्य अनाज और तरकारी उगाना नहीं जानते थे। वे जंगली जानवरों का शिकार करके उनके मांस से अपना पेट भरते थे। उन दिनों जङ्गली जानवर बहुत थे। लेकिन उनको मारना कठिन था। उस समय के लोगों के हथियार बहुत भद्दे थे। वे तेज़ पत्थरों को लकड़ी में बांध कर भाला बनाते थे।

एक बार कुछ लोगों ने काले पत्थरों के ढेर के पास आग जलाई। इन्हीं में एक

१—पत्थर के हथौड़े से लोहा पीटने का ढंग।

पत्थर कड़ी आंच में पिघल कर बहने लगा। गरमी में घुल कर वह शीरे की तरह गाढ़ा और आग की तरह लाल हो गया। ठंडा होने पर

२—लोहा साफ करने की पुरानी भट्ठी।

वह फिर कड़ा हो गया। यही लोहा था। इसको फिर गरम करके इन्होंने इसे पत्थर के हथौड़ों से पीटा। उससे उन्होंने तरह तरह के हथियार बनाये। इस तरह एक नया युग शुरू हुआ।

लोहे में जल्द जङ्ग (काई) लग जाती है। इस लिये बहुत दिनों तक नहीं ठहरता है। फिर भी इजिप्ट (मिस्र) देश के एक पिरेमिड में लोहे का एक टुकड़ा मिला जो ४००० वर्ष का पुराना है। दिल्ली में पृथिवी राज के किले के पास वाला लोहे का खम्भा भी बहुत पुराना है।

एशिया के पश्चिम में भूमध्य सागर में क्रीट का टापू है। यहाँ के लोगों के बहुत पुराने समय में अजब ढंग से लोहे का पता लगा। वहाँ जङ्गल में बड़े ज़ोर की आग लगी। जङ्गल ज़ल गया। लेकिन बाद में

जगह जगह पर वहाँ के लोगों को लोहे के ढेर मिले। इसी से वहाँ के लोग बड़े होशियार लुहार बन गये। सब से अच्छा लोहा आकाश से आता है। रात को जो छोटे छोटे तारे टूटते हुए दिखाई देते हैं उनमें किसी किसी में बहुत ही बढ़िया लोहा रहता है। लेकिन इस तरह का आया हुआ लोहा बहुत थोड़ा होता है। सबसे अधिक लोहा हमारी ज़मीन के भिन्न भिन्न भागों में मिलता है।
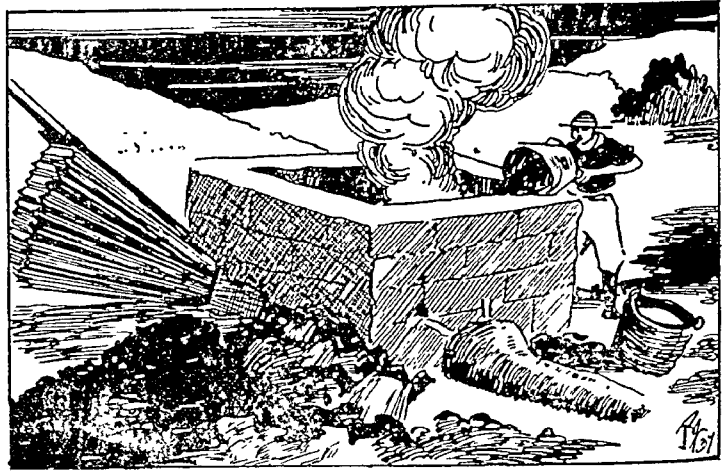
३—लोहे का साफ करना

एशिया के प्राचीन लोग लोहे से तरह तरह की चीज़ें बनाते थे। पश्चिमी एशिया के एसीरियन लोग लोहे के रथ और सुन्दर गहने बनाते थे। उनके पास लोहे की तलवार और औज़ार थे। उनका आरा आजकल के आरे की तरह था। वे लोग लोहे से फौलाद बनाना जानते थे। फौलाद अधिक मज़बूत और चमकीला होता है। वह लोहे में कार्बन मिलाने से बनता, है कार्बन कोयले में मिलता है। तुम्हारी पेन्सिल में प्रायः शुद्ध कार्बन है। हीरे में सब से अधिक शुद्ध कार्बन रहता है।

पहले लोहे का पता लगाने और उसको शोधने में बहुत खर्च होता था। इस लिये आरम्भ में लोहा बहुत कीमती था। स्पार्टा (ग्रीस) के लोग लोहे के सिक्के बनाते थे। सिकन्दर हिन्दुस्तान से सोने के साथ साथ लोहे को भी लूट ले गया था। अब से छः सौ वर्ष पूर्व तक कहीं कहीं लोहे के तसले और बर्तन शाही हीरा जवाहिरात की तरह कीमती समझे जाते थे। पहले कच्चे लोहे को साफ करने का ढंग बहुत सीधी सादा था। कच्चा लोहा लकड़ी के कोयले से गरम किया जाता था। अधिक आँच में लोहा पिघल कर एक तरफ इकट्ठा हो जाता था। लुहार ने देखा कि अधिक आंच से अधिक लोहा साफ किया जा सकता है। इस लिये कुछ लोगों ने हवा के झोंकों का उपयोग करने के लिये पहाड़ी चोटियों पर भट्टियाँ बनाई। वहाँ हवा ज़ोर से लगती थी और बहुत सा लोहा साफ हो जाता था।

लेकिन कभी हवा चलती थी। कभी वह बन्द हो जाती थी। इस लिये मिस्र के लोगों ने खोखले बेंत की नली से फूँकना शुरू किया। कुछ लोगों ने धौंकनी से काम लिया। मिस्री लोगों की धौंकनी दो बकरों की खाल से बनती थी। इनमें एक नल लगा रहता था। इसी से हवा आग तक पहुँचती थी। धौंकने

वाला एक पैर एक खाल पर और दूसरा पैर दूसरी खाल पर रखता था। वह रस्सी को हाथ से पकड़ कर खालों के ऊपरी भाग को उठाता था। फिर वह बारी बारी से एक पैर से एक खाल को दबाता और दूसरी को ढीला करता जाता था।

इसके बाद भट्टियाँ बनने लगीं। इनमें कोयले की तहों के बीच में लोहे की तहें भरी जाती थीं। आँच को भीतर रखने के लिये बाहर से भट्टी मिट्टी या पत्थर से बन्द कर दी जाती थी। धुआँ निकलने के लिये ऊपर छेद होता था। नीचे हवा के आने के लिये छेद होता था। इस तरह की भट्टी में एक दो सेर लोहा निकालने में कई दिन लग जाते थे।

स्पेन में केटेलोनिया के लुहारों ने कुछ अच्छी भट्टियाँ बनाईं। इनमें वे बड़ी बड़ी धौंकनियों को हाथ या पानी के ज़ोर से चला कर हवा भरते थे। लड़ाई और दूसरे कामों के लिये लोहे की मांग बढ़ती ही गई। लोहा गलाने में लकड़ी का इतना कोयला खर्च होने लगा कि कई जगह जंगल साफ होने लगे। इंगलैंड के मल्लाह डरने लगे कि कहीं जंगल बिल्कुल साफ न हो जाये और उनको नाव बनाने के लिये लकड़ी न मिले। इसलिये वहाँ एक क़ानून बना कि कोई जलाने के लिये पेड़ को न काटे। इसी समय पत्थर का कोयला मिला और नये ढंग की बड़ी बड़ी भट्टियाँ बनने लगीं।

अमरीका के रेड इंडियन लोग लोहे के कुछ ज़ेवर बनाते थे। लेकिन वे बड़ी बड़ी भट्टियों को पसन्द नहीं करते थे। जब १६२१ ई० में इंगलैंड से आये हुए लोग वर्जीनिया में बसने लगे तो उन्हें वहाँ बहुत सा लोहा मिला। लोहे को साफ करने के लिये उन्होंने वहाँ बड़ी

४—लोहा और फौलाद।

बड़ी भट्टियाँ बनाईं। इस पर रेड इंडियन लोगों ने उन पर हमला किया। इससे १०० वर्ष तक वहाँ किसी ने भट्टियों में लोहा गलाने का नाम नहीं लिया।

जब गोरे लोग मज़बूत हो गये तब उन्होंने लोहे से अँगीठी, बर्तन, हल और तोपें बनाईं।

जब रेल निकली तब तो और भी अधिक लोहे का सामान वहाँ बनने लगा। आजकल वहाँ कई सौ मन लोहा हर रोज़ तयार किया जाता है। लोहे के कारखाने वाले घड़ियों के स्प्रिंग, सुई और आल्पीन से लेकर बड़े बड़े

पुल, घरों के ढाँचे, रेल की पटरियाँ और वड़े वड़े इंजिन वनाते हैं।

हमारे देश के लोग वहुत पुराने समय में ही लोहे को काम में लाने लगे थे। गदर के समय तक लगभग हर गाँव के लुहार वहुत वढ़िया तलवार और वन्दूक वनाते थे। हल, फाउड़ा, गँड़ासी और हँसिया, खुरपा इस समय भी वहुत से स्थानों में वनाया जाता है। वड़े पैमाने पर नये ढंग का कारखाना टाटानगर या जमशेदपुर में हाल में खोला गया है। यहाँ फौलाद की वहुत सी चीज़ें वनती हैं।

हिन्दुस्तान में छोटा नागपुर (विहार) उड़ीसा, मध्यप्रान्त और दूसरे कई स्थानों में लोहा पाया जाता है। अमरीका में पेन्सिल्वेनिया, वर्जीनिया, न्यूजेरसी और सुपीरियर झील के पड़ोस में लोहा वहुत है। मध्य इंगलैंड, उत्तरी फ्रांस, और जर्मनी में भी काफी कोयला निकलता है। स्वेडन और स्पेन का लोहा वाहर वहुत जाता है।

कुछ खानों में लोहा धरातल के पास मिलता है। कई खानों में वह अधिक गहराई पर पाया जाता है। अक्सर ड्रिलिंग मेशीन से छेद किया जाता है। वारूद से चट्टानें तोड़ी जाती हैं। फिर विजली के ज़ोर से चलने वाले फौलादी फाउड़े इस कच्चे लोहे को नीचे से ऊपर लाते हैं। जहाँ कई फाउड़े एक साथ चलते हैं वहाँ कुछ ही मिनटों में गाड़ी के कई डब्बे एक साथ भर जाते हैं। यह गाड़ियाँ इस कच्चे लोहे को दूसरे स्थान (ब्लास्ट फर्नेस के पास) पर ले जाती हैं। वहाँ दूसरी मशीनें इन डब्बों को उलट कर खाली कर लेती हैं।

ब्लास्ट फर्नेस (झोंके वाली भट्टी) एक वड़े भट्टे की तरह लगातार आग और चिनगारियाँ उगलती रहती है। इसकी चिमनी १०० फिट या इससे भी अधिक ऊँची होती है। इसमें नाप नाप कर कच्चा लोहा, कोक (पिसा हुआ कोयला) और चूना भरते हैं। यह
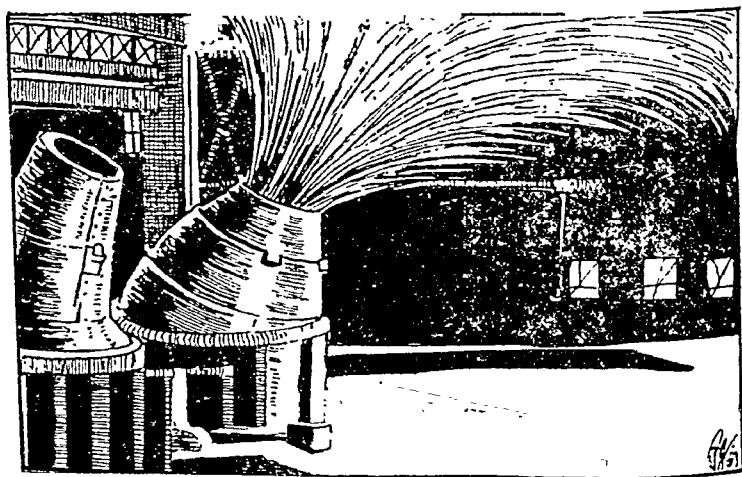
५—फौलाद।

सव चीज़ें कड़ी आँच में पिघल कर पहले आपस में मिलती हैं फिर वे अलग हो जाती हैं। चूना और कची धातु का मैल स्लैग (धात-मैल) कहलाता है। २१२ अंश फारेनहाइट की आँच में पानी खौलने लगता है। लेकिन इस भट्टी में लगभग ३००० अंश फारेनहाइट की आँच रहती है। चार पाँच घंटे की लगातार आँच के वाद भट्टी की नली के दो

दरवाज़े खोल दिये जाते हैं। ऊपरी दरवाज़े से स्लैग (मैल) बहता है। निचले दरवाज़े से पिघले हुए लोहे की चकाचौंध कर देने वाली लाल लाल गरम धारा बहती है।
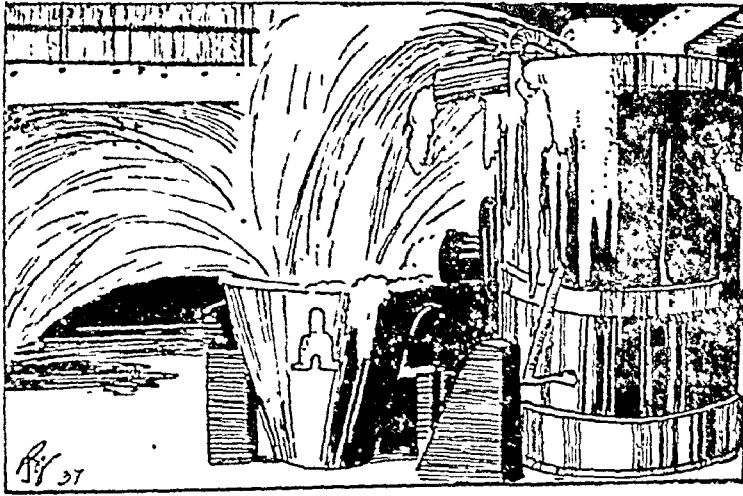
६—फौलाद।

लेडिल या बड़ी बड़ी थालियाँ इस लोहे को भर कर दूसरे स्थान पर ले जाती हैं। यहाँ इससे दो ढाई मन के टुकड़े (पिगबेट) बनते हैं। पहले पिघला हुआ लोहा बालू में ढाँचों पर बहाया जाता था। वहाँ इसकी सूरत लेटे हुए सुअर की तरह हो जाती थी। इसी से इसे पिग आयरन कहते थे। आजकल पिघले हुए लोहे को बिना ठंडा किये ही कास्ट आयरन या फौलाद बनाने के काम में लाते हैं।

कास्ट आयरन में ३'५ फी सदी कार्बन रहता है। इससे यह कम आँच में पिघल जाता है। लेकिन ठंडे होने पर इसके जल्द टूटने का डर रहता है। फिर भी अँगीठी आदि ढालने के लिये यह बहुत अच्छा रहता है।

राट आयरन में बहुत थोड़ा (०'३ फी सदी) कार्बन रहता है। इससे यह देर में गलता है। लेकिन इससे सुन्दर आकार की चीज़ें बन सकती हैं। जंजीर, लंगर, छड़ आदि राट आयरन से बनते हैं।

फौलाद इन दोनों से अच्छा होता है। इसमें लगभग २ फी सदी कार्बन रहता है। पहले लोग गरम लोहे को एकदम ठंडे पानी में डाल कर फौलाद बनाते थे। आजकल लग भग आध घंटे में नये ढंग से गरम लोहे को फौलाद में बदल लेते हैं। गरम लोहा एक बड़े बर्तन में किया
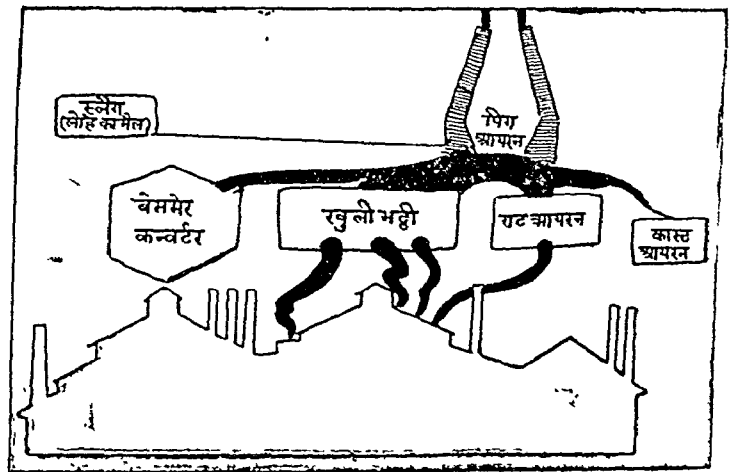
७—लोहा और फौलाद। कच्चे लोहे से फौलाद इसी प्रकार बनाते हैं।

जाता है। इसको वेसमेर कन्वर्टर कहते हैं। इस ढंग की खोज हेनरी वेसमेर

८—फौलाद का कारखाना।

नामी एक अंग्रेज़ ने की थी। इसी से यह वेसमेर कन्वर्टर कहलाता है। इस वर्तन की सूरत एक अंडे की तरह होती है। यह इतना बड़ा होता है कि इसमें २ टन (५६ मन) लोहा समा सकता है। जब इसमें नीचे से हवा का झोंका आता है तब बड़े ज़ोर की आवाज़ होती है। ऊपर से पीली पीली लपट निकलती है और लाखों लाल चिनगारियाँ छूटती हैं। इसमें लगभग २ फी सदी कार्वन मिलाया जाता है। ठंडा होने पर इसी से फौलाद तयार हो जाता है। कन्वर्टर को देखने के लिये भारी ऐनक पहन कर एक आदमी पुल के ऊपर से आता है। जब कन्वर्टर खाली हो जाता है तब वह इशारा करता है और कन्वर्टर फिर पिघला हुआ लोहा भरने के लिये सीधा कर लिया जाता है।
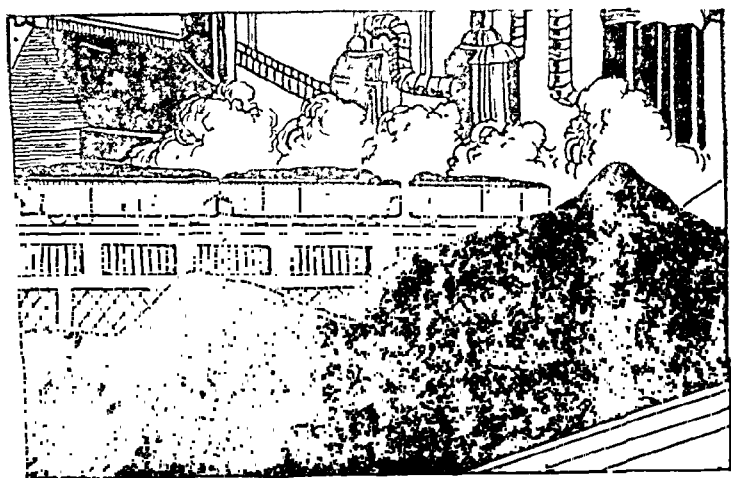
रेल की पटरी, जहाज़ और मोटर की चादरें और दूसरी बड़ी चीज़ों को बनाने के लिये वेसमेर ढंग से काम लिया जाता है। कई चीज़ों के लिये ओपेन हर्थ (खुली भट्टी) से काम लिया जाता है। इस ढंग से देर लगती है। लेकिन बढ़िया फौलाद तयार होता है। काफी गरम हो जाने पर दरवाज़ा खोला जाता है। मैल (स्लैग) ऊपर तैरता है और ऊपर के ही रास्ते से एक
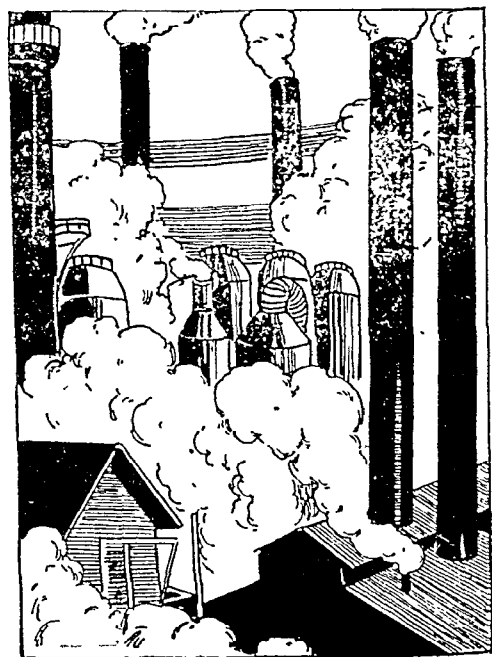
९—लोहे की खान और कारखाना।

वर्तन में गिरता है। पिघला हुआ फौलाद

१०—लोहे और फौलाद की भट्ठी

लेडल या बड़ी बाल्टी में गिरता है। यह बाल्टियाँ मशीनों से उठाई जाती हैं।

रोलिंग मिल में फौलाद से तरह तरह की चीज़ें बनती हैं। जब गरम फौलाद की पटरियाँ या चादरें रोलरों के बीच से गुज़रती हैं तब उनसे लाल चिनगारियाँ चारों ओर को छूटती हैं। यहाँ कुछ मशीनें गरम पटरियों में सूराख करती हैं। कुछ मशीनें पटरियों और चादरों को मूली की तरह आसानी से काटती हैं। यहीं और भी कई तरह की चीज़ें बनती हैं।
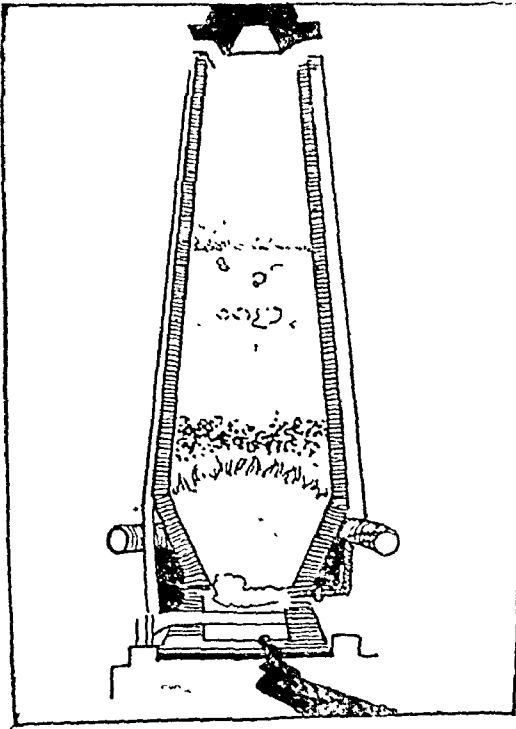
"भूगोल" की नई योजना
देश-दर्शन

के सम्बन्ध में मध्य प्रान्त के भूतपूर्व शिक्षामन्त्री और वर्तमान प्रधान मंत्री माननीय पंडित रविशंकर शुक्ल जी का शुभ सन्देश

कैम्प-पचमढ़ी.
८.६.३८

भूगोल कार्यालय, इलाहाबाद से श्री पंडित रामनारायण जी मिश्र 'देशदर्शन' नामक ग्रंथमाला प्रतिमास निकाल रहे हैं। आजकल जनता में संसार के देशों का ज्ञान फैलाना वर्तमान परिस्थिति में विशेष महत्व की बात है। अतः इसका लाभ प्रत्येक स्थानिक संस्था को उठाना चाहिये। मैं पंडित जी को कई वर्षों से जानता हूं और मेरा विश्वास है कि यह ग्रन्थमाला उपयोगी होगी।

रविशंकर शुक्ल
शिक्षा मंत्री

बाल-संसार

बाल-संसार की एक प्रति देकर अपने बालकों को दूसरे देशों के बालकों का हाल बताइये और उनमें नया जीवन डालिये।

संक्षेप में बाल-संसार में १११ बालकों के घर, भोजन, वस्त्र, खेल-कूद, काम-काज और रहन-सहन द्वारा उनके देशों के जीवन की झांकी दिखलाई गई है। भाषा एकदम सरल है जिसे छोटे बच्चे बड़ी आसानी से समझ लेते हैं। नामों का बोझ बिल्कुल अलग कर दिया गया है। इस अंक में लगभग तीन सौ चित्र हैं। जिनसे इस अंक की रोचकता और भी अधिक बढ़ गई है। बाल-संसार में पांच भाग हैं। पहले भाग में अफ्रीदी, नैपाली, सिन्धी, बर्मी सिंहाली आदि भारतवर्ष के बच्चों का वर्णन है। दूसरे भाग में चीनी, जापानी, स्यामी, अफ़ग़ानी, ईरानी, अरबी, तुर्की, आदि एशिया के बालकों पर प्रकाश डाला गया है। तीसरे भाग में अंग्रेज़ी, जर्मन, रूसी, फ्रांसीसी आदि योरुप के बालकों के रहन सहन का वर्णन है। चौथे भाग में एस्किमो, रेड इंडियन, कनाडा, संयुक्त राष्ट्र अमरीका, मैक्सिको, ब्रेज़ील, पीरू, अर्जेन्टाइना आदि उत्तरी और दक्षिणी अमरीका के बालकों का वर्णन है। पांचवें भाग में अफ्रीका आस्ट्रेलिया और प्रशान्त महासागर के कुछ द्वीपों में रहने वाले बालकों का वर्णन किया गया है। बाल-संसार के प्रत्येक लेख में आप आश्चर्य और आनन्द में डालने वाली नवीनता देखेंगे। रोचकता की दृष्टि से भौगोलिक बाल-साहित्य पर यह प्रथम और अपूर्व प्रयास है।

तीन सौ चुने हुए चित्रों के अतिरिक्त प्रत्येक लेख में एक शीर्षक चित्र है।

बड़े आकार (१०×७½) के २६० पृष्ठ, मूल्य १।।) सजिल्द १।।।), प्रत्येक भाग का अलग मूल्य ।=)

मैनेजर, "भूगोल" इलाहाबाद।

चीन-अंक

चीन अंक के दो भाग हैं। पहले भाग में चीन की स्थिति, भूरचना, जलवायु, वनस्पति, पशु-पालन, कारबार, शिक्षा, समाचारपत्र, कहावतें। मनोरंजन, खेलकूद, हवाई डाक और हवाई सेना, मार्शल च्यांगकाई शेक, मेडम च्यांग काई शेक, हुइशी (चीन के गान्धी), डा० सन्यातसेन, धार्मिक व्यवस्था, चित्रकला, चीन के पड़ोस में विदेशी शक्तियों का जमघट, जापानी साम्राज्य, चीन में घुसने के मार्ग, मङ्गोल लोगों का देश चीनविच्छेद, नानकिंग की सरकार रूस का पूर्वी प्रदेश, चीन और जापान, मन्चूकुओ की स्थापना, आधुनिक परिस्थिति, राजनैतिक रूप रेखा, चीन का साम्यवादी दल, चीन जापान संघर्ष और जनरल चूतेह की अपील है। इसमें कई नक़शे और चित्र हैं। बड़े आकार की पृष्ठ संख्या ८८, मूल्य ॥)।

दूसरे भाग में चीन की एटलस है। प्रत्येक प्रान्त के पूरे (बड़े) पृष्ठ के २४ नक़शे। चीन देशका बड़ा नक़शा (दो पृष्ठों पर)। इसी भागमें नक़शों की व्याख्या और प्रान्तों का वर्णन है। इसके अतिरिक्त १६ ऐतिहासिक नकशे, ऐतिहासिक घटनाओं की सूची, और चीनी इतिहास के चुने हुए चित्र हैं। अन्त में संसार में चीन का आर्थिक स्थान प्रदर्शित करने के लिये ८ आर्थिक नकशे और कई डायाग्राम (खाके) हैं। मूल्य ॥) दोनों भागों का एक साथ मूल्य बारह आना।

"भूगोल" कार्यालय, प्रयाग।

आधुनिक इतिहास एटलस

पृष्ठ संख्या १४७, नकशों की संख्या ७४। इस पुस्तकाकार एटलस में एक पृष्ट पर नक़शा और उसके सामने वाले पृष्ठ पर उसकी व्याख्या है। वर्सेल्स (वर्साई) की सन्धि, जर्मनी की पश्चिमी सीमायें, पोलिश कारीडार, रूस के खोये हुए प्रदेश, लिटिल एग्टेग्ट, यूगोस्लेविया की जातियां, पूर्वी और मध्य योरुप में अल्प संख्यक जातियां, स्पेन की गृह-कलह भूमध्य सागर में राष्ट्रों का संघर्ष, इटली और लालसागर, इब्न सऊद की विजय, चीन विच्छेद, अफ्रीका के स्वाधीन राज्य, संयुक्त राष्ट्र अमरीका में हब्शियों की समस्या, दक्षिणी अमरीका की जातियां आदि सभी प्रसंगों के व्याख्या सहित वड़े वड़े नक़शे दिये गये हैं जिनका दैनिक पत्रों में उल्लेख आता है। यह एटलस आजकल की घटनाओं से दिलचस्पी रखने वालों के वड़े काम की चीज है। मूल्य केवल ॥)

देश-निर्माता

इस ७२ पृष्ठ की छोटी सी पुस्तक में उन ११ नेताओं की रोमांचकारी जीवनियां हैं। जिन्होंने अपनी जान की बाज़ी लगाकर अपने अपने देश में नई जान फूंकी है। भारत के महात्मा गान्धी, चीन के च्यांग काई शेक, टर्की के मुस्तफा कमाल पाशा, ईरान के रिजाशाह, रूस के लेनिन, अरब के इब्न सऊद, इटली के मसोलिनी, जर्मनी के हिटलर, आयरलैंड के डी वेलरा, पोलैंड के पिल्सुडस्की और चेकोस्लोवेकिया के मसारिक ने किस प्रकार अपने अपने देश को बनाया उन उन घटनाओं पर इस पुस्तक में पूराप्रकाश डाला गया है। रंगीनकवर पर सभी निर्माताओं के चित्र हैं। शीर्षक पर नेता के चित्र के साथ देश का नकशा भी दिया गया है। मूल्य केवल चार आना।

हमारी दुनिया

पृष्ठ संख्या ८४, चित्र और नकशों की संख्या ८१, आर्ट पेपर का तिरंगा कवर। यह वास्तव में भूगोल की पहली सीढ़ी है। मोटे टाइप और सरल भाषा में नाप का साधारण ज्ञान, दिशा-ज्ञान, नियत पैमाने पर नक़शा बनाना, गांव और शहर के नकशे का पढ़ना, नदी की रामकहानी, तारे, चन्द्रमा, सूर्य और गोले का दर्शन आदि ११ पाठ हैं। पुस्तक इतनी रोचक है कि बालक आरम्भ करके इसे बिना समाप्त किये नहीं छोड़ना चाहते हैं। इससे उन्हें भूगोल के मूलमन्त्रों का सहज ही ज्ञान हो जाता है। शिक्षकों के लिये भी इसमें दो शब्द हैं। विहार, संयुक्त प्रान्त और मध्य प्रान्त के शिक्षा विभाग द्वारा प्रायमरी शालाओं के लिये स्वीकृत। मूल्य चार आना।

"भूगोल" कार्यालय, इलाहाबाद

'भगोल' के समयानुकूल वड़े सुन्दर सुन्दर विशेषांक निकलते हैं। उन विशेषांकों से पाठक अच्छी तरह परिचित होंगे। इस बार जब स्पेन की सारे संसार में बड़ी चर्चा है, इसका स्पेन-अङ्क हिन्दी-संसार के सामने उपस्थित हुआ है। इस अङ्क में स्पेन का पुराना और नया इतिहास, जलवायु, निवासी, तथा अन्य बहुत सी ज्ञातव्य बातें दी गई हैं। पाठकों को इस उपयोगी अंक से लाभ उठाना चाहिये।

पृष्ठ संख्या १३६, चित्र संख्या ६९, एक बड़ा (दो पृष्ठ) का नक़शा, २९ अन्य नक़शे मूल्य, केवल ।।-)

ईरान

इस अंक में ईरान देश की स्थिति, भू-रचना, जलवायु, उपज, व्यापार, मार्ग, निवासी इतिहास, साहित्य, वर्तमान परिस्थिति आदि फ़ारस (ईरान) देश के सभी अंगों पर पूरा पूरा प्रकाश डाला गया है। यह अंक सुन्दर चित्रों और बड़े नक़शों से सुसज्जित है। मूल्य केवल १) रु०।

वेद, पुराण, रामायण, महाभारत आदि प्राचीन ग्रन्थों में जिन स्थानों का वर्णन है, उसके वर्तमान नाम दिये गये हैं। जो नष्ट हो गये हैं उनकी स्थिति बतलाई गई है। प्राचीन ग्रन्थों के आधार पर कुछ रोचक लेख हैं। कई छोटे-बड़े नक़शे हैं। मूल्य केवल १) रु०।

भूगोल कार्यालय, प्रयाग।

देश-दर्शन

प्रत्येक अङ्क में प्रायः निम्नलिखित विषय रहेंगे जो आवश्यकतानुसार घटाये बढ़ाये जा सकेंगे।

१—देश का आकार, विस्तार, बनावट, दृश्य। २—जलवायु और उपज। ३—[illegible] और [illegible]
जानवर। ४—कारबार। ५—व्यापार, बाज़ार, [illegible]। ६—जनसंख्या और जातियां। ७—[illegible]। ८—[illegible]
समय पर एक नज़र। ६—वर्तमान शासन। १०—[illegible] सहन। ११—भाषा, कहानी। १२—[illegible]।
१३—गांव का जीवन। १४—खेल कूद-त्योहार।

प्रत्येक देश का वर्णन प्रायः निजी यात्रा के आधार पर भारतीय दृष्टिकोण से लिखा जायगा।
इस माला में निम्नलिखित देश रहेंगे। :—

भारतवर्ष—१—लंका, २—बरमा, ३—आसाम, ४—बंगाल, ५—बिहार, ६—उड़ीसा, ७—[illegible]
देश, ८—तामिल, ६—केरल, १०—ट्रावनकोर, ११—कुर्ग, १२—मैसूर, १३—हैदराबाद, १४—[illegible]
१५—बम्बई-महाराष्ट्र, १६—मध्यप्रान्त, १७—काठियावाड़, १८—गुजरात, १६—सिन्ध, २०—बलोचिस्तान,
२१—पंजाब, २२— पटियाला, २३—जोधपुर, २४—जयपुर, २५—बीकानेर, २६—अजमेर २७—उदयपुर,
२८—कोटा, २६—भरतपुर, ३०—अलवर, ३१—ग्वालियर, ३२—इन्दौर, ३६—रीवाँ, ३४—काश्मीर,
३५—नैपाल, ३६—भूटान, ३७—शिकम, ३८—गढ़वाल, ३६—अवध, ४०—संयुक्तप्रान्त, ४१—पाण्डिचेरी,
४२—अंडमान, निकोबार, लंका द्वीप, मालद्वीप।

एशिया—१—जापान, २—चीन, ३—कोरिया, ४—मंचूरिया, ५—मंगोलिया, ६—चीनी तुर्किस्तान,
७—तिब्बत, ८—साइबेरिया, ६—रूसी तुर्किस्तान, १०—जार्जिया, ११—आर्मेनिया, १२—टर्की १३—सिरिया,
१४—पेलेस्टाइन, १५—इराक, १६—अरब, १७—ईरान, १८—मलय प्रायद्वीप और सिंगापुर, १६—स्याम,
२०—जावा, २१—बोर्नियो, २२—फ़िलीपाइन द्वीपसमूह, २३—अफ़गानिस्तान, २४—किरगीज़ प्रजातन्त्र।

योरुप—१—आयरलैंड, २—ब्रिटेन, ३—फ्रांस, ४—हालैंड, ५—बेल्जियम, ६—डेनमार्क, ७—नार्वे
८—स्वीडन, ९—आइसलैंड, १०—फ़िनलैंड, ११—रूस, १२—यूक्रेन, १३—पोलैंड, १४—रूमानिया, १५—
बल्गेरिया, १६—लिथुएनिया, लैटविया और एस्थोनिया १७—यूगोस्लेविया, १८—ग्रीस, १६—इटली, २०—स्पेन,
२१—पुर्तगाल, २२—जर्मनी, २३—हंगारी, २४—स्वीज़रलैंड, २५—चेकोस्लोवेकिया, २६—अल्सेस लारेन।

अफ्रीका—१—मिस्र, २—सूडान, ३—एबीसीनिया, ४—ज़ंजीबार और पम्बा, ५—मेडेगास्कर, ६—
कीनिया, ७—यूगाडा —पूर्वी पुर्तगाली अफ्रीका, ६—बेल्जियन कांगो, १०— रोडेशिया, ११—दक्षिणी अफ्रीका,
१२—पश्चिमी पुर्तगाली अफ्रीका, १३—१४—महाराष्ट्र, १५—मराक्को, १६—अल्जीरिया, १७—ट्यूनिस,
१८—ट्रिपली, १६—लाइबेरिया, २०—मारीशस द्वीप।

उत्तरी अमरीका—१—कनाडा, २—न्यूफाउंडलैंड; ३—संयुक्त राष्ट्र अमरीका, ४—मेक्सिको, ५—पनामा,
६—मध्य अमरीका, ८—पश्चिमी द्वीपसमूह।

दक्षिण अमरीका—१—कोलम्बिया, । २—गायना, ३—वेनिज्वेला ४—इक्वेडार, ५—पीरू, ६—
बोलिविया, ७—चिली ८—पेरेग्वे ६—यूरुग्वे, १०—ब्रेज़िल, अर्जेन्टाइना।

आस्ट्रेलिया—१—आस्ट्रेलिया, २—टस्मेनिया, ३—न्यूज़ीलैंड, ४—न्यूगिनी, ५—फ़िजी द्वीप, ६—प्रशान्त
महासागर के द्वीप।

अन्वेषक—१—मार्कोपोलो, २—कोलम्बस, ३—वास्को डि-गामा, ४—कुक, ५—लिविंगस्टन, ६—
स्टैनली, ७—ड्रेक, ८—स्वेन हेडिन, ६—लारेंस, १०—पियरी, ११—नान्सेन।

नगर—१—प्रयाग, २—कलकत्ता, ३—बम्बई, ४—बनारस, ५—मद्रास, ६—लाहौर, ७—लन्दन,
८—पेरिस, ६—बर्लिन, १०— मास्को, ११—न्यूयार्क, १२—टोकियो, १३—बग़दाद, १४—क़ाहरा, १५—यरूशलम,
१६—मक्का, १७—पेकिंग १८—हांगकांग।

नदी—गंगा, यमुना, सिन्ध, नर्मदा, गोदावरी, महानदी, ब्रह्मपुत्र, इरावदी, याग्ज़ी, ह्वांग हो, अमूर, दजला-
फ़रात, वाल्गा, राइन, डेन्यूब, मिसीसिपी, एमेज़न, नील, कांगो, सेन्ट लारेंस।

पर्वत—हिमालय, अल्प्स, ऐंडीज, राकी।

नहर—स्वेज़, पनामा, चीन की ग्राड केनाल।

कारबार—क़ागज़, लोहा, दियासलाई, मोटर, पेन्सिल, मिट्टी का तेल, पुतलीघर, जहाज़, रेल, हवाई जहाज़।

सभ्यता—वैदिक, एसीरिया, प्राचीन मिस्री, इन्का, माया, यूनानी, रोमन।

"BHUGOL"

The only Geographical Monthly published in India

Purpose : "Bhugol" aims to enrich the geographical section of Hindi literature and to stimulate geographical instruction in the Hindi language.

Contents : Articles are published on varied topics of geographical interest : Current History, Astronomy, Industry and Trade, Surveys, Travel and Exploration, Fairs and Exhibitions, Plant and Animal Life. Climatic charts, a brief diary of the month, and questions and answers are regular features. Successive numbers contain serial articles on regional and topical subjects so that by preserving file of Bhugol any teacher of geography can accumulate invaluable reference material.

Travel Department : The Travel Department of 'Bhugol" annually arranges tours which provide an excellent opportunity for geography teachers and students to visit regions of special interest in India, Burma and Ceylon. Full information will be supplied on application (with a stamped and addressed envelope).

Use in Schools : The use of "Bhugol" in connection with the geography instruction in high schools, normal schools and middle schools, is specially sanctioned by the Educational Departments of the United Provinces, Berar, the Central Provinces, the Punjab, Bihar and Orissa, Gwalior, Jaipur, Kotah and Jodhpur.

Remittances : Make all remittances , cheque, money order or British Postal Order, payable to the manager, **"Bhugol".**

Rates for Advertisements : Ordinary full

one page Rs. 10/-
3rd page of the cover ,, 12/-
4th page of the cover ,, 15/-

Write to the Manager,

"BHUGOL",

ALLAHABAD.

Published by the Editor (Pt. Ram Narain Misra, B. A.) and Printed by Sheopal at the Bhugol Press; 306, Jumuna Road, Allahabad

भूगोल
वार्षिक मूल्य ३)
विदेश में ५)
एक प्रति का ।=)
अक्तूबर १९३८
ANNUAL
SUBSCRIPTION
Indian Rs 3/-
Foreign Rs 5/-
Single Copy As 5
भूगोल-कार्यालय प्रयाग

"भूगोल"-कार्यालय

संक्षिप्त परिचय

१९२४ के मई महीने में "भूगोल" मासिक पत्र स्थापित किया गया। गत १४ वर्षों में इस पत्र ने जो भूगोल सम्बन्धी साहित्य तयार किया है उसका पता गत १४ वर्षों की फाइलों और साथ में दिये हुए सूची-पत्र से लग सकता है। पर सच्चा भूगोल-साहित्य घर बैठे कल्पनामात्र या केवल विदेशी पुस्तकों के आधार पर नहीं लिखा जा सकता। इसके लिये भ्रमण की आवश्यकता है। इसी लिये "भूगोल" के यात्रा-विभाग की ओर से समस्त भारतवर्ष, लंका, बरमा ईरान, इराक, सिरिया, पैलेस्टाइन, मिस्र, सूडान, टर्की, बल्गेरिया, युगोस्लेविया, हङ्गारी, आस्ट्रिया, चेकोस्लोवेकिया, जर्मनी, डेन्मार्क, बेल्जियम, फ्रांस, इंगलैंड, स्काटलैंड, आयरलैंड, नार्वे, स्वेडन, फिनलैंड और रूस की यात्रा की गई।

हमारा विश्वास है कि देश की आज़ादी प्राप्त करने और कायम रखने के लिये अपने देशवासियों को संसार के प्रत्येक भाग का ठीक ठीक ज्ञान रखना आवश्यक है। भावी स्वाधीन भारत के राजदूत जब दूसरे देशों में जायेंगे तो उन देशों का पूरा ज्ञान होना चाहिये। इसी लक्ष्य को सामने रखकर आपका "भूगोल" कार्यालय, भूगोलसम्बन्धी दुर्लभ, पुस्तकों और नक़्शों का संग्रह करता रहा है।

आपका कर्तव्य—हम चाहते हैं कि यह काम अधिक संगठित ढंग से और अधिक तेज़ी से हो। इसलिये आप से प्रार्थना है कि आप इस राष्ट्रीय काम में हमारा हाथ बटावें। आप स्वयं और अपने मित्रों को "भूगोल" का ग्राहक बनाकर हमारी सहायता कर सकते हैं। जितने अधिक ग्राहक होंगे उतनी ही आसानी से हम यात्राक्रम और पुस्तक संग्रह को बढ़ा सकते हैं।

जिस तरह विदेशी वस्त्र को रोकने के लिये खादी का प्रचार आवश्यक है उसी तरह हर साल लाखों रुपयों की बाहर से आने वाली भौगोलिक पुस्तकों को रोकने के लिये आवश्यक है कि हिन्दी में उनकी बराबरी करने वाली और उनसे बढ़कर पुस्तकें तैयार हों। अभी तक हिन्दी में लगभग २० पुस्तकें तैयार हैं। आप उनकी बिक्री बढ़ाकर दूसरी पुस्तकों की रचना में सहायक हो सकते हैं।

भावी कार्य-क्रम—देहाती जनता और विद्यार्थियों के लिये हमने देश-दर्शन नाम की पुस्तक-माला का आयोजन किया है। इसमें २०० पुस्तकें होंगी। एक देश पर एक पुस्तक हर महीने प्रकाशित होगी। पुस्तक चित्रों और नक़्शों से खूब सुसज्जित होगी। निजी यात्रा के आधार पर रोचक ढंग से सरल भाषा में लिखी जायगी। काग़ज़ कवर, छपाई सफाई में हिन्दी में एक अनूठी चीज़ होगी। फिर भी डेढ़ सौ पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य लागत मात्र ।=) होगा। साल भर का ४) और पूरी ग्रन्थमाला का केवल ४०) होगा। इस सम्बन्ध में मध्यप्रान्त के भूतपूर्व शिक्षा-मन्त्री और वर्तमान प्रधान मन्त्री पं० रविशङ्कर शुक्ल जी की सम्मति पढ़िये और देश-दर्शन के ग्राहक बनकर हिन्दी में एक नये साहित्य को लाने में श्रेय लीजिये। आशा है आप लौटती डाक से ही अपना आर्डर भेजने की कृपा करेंगे।

निवेदक—

रामनारायण मिश्र

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१—संसार की सेनायें	१
२—नई दुनिया के प्राचीन नगर	३
३—जापान की जन वृद्धि समस्या (श्री० बेशलाल चौधरी बी० ए०)	५
४—इतिहास का भूगोल पर प्रभाव (प्रह्लाद नरायन रायजादा एम० ए० विशारद)	७
५—आस्ट्रेलिया के मोती	१०
६—ग्रीनलैंड	११
७—सोना	१२
८—दक्षिण दिशा में (विद्या भूषण विभु B. A. F. R. G. S., M. N. G. S.)	१९
९—जातियों का कोष	२७

"भूगोल"

यह पत्र संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, बरार, बिहार, उड़ीसा, पंजाब प्रान्त तथा ग्वालियर, जैपुर, जोधपुर और कोटा राज्य के शिक्षा-विभागों द्वारा हाई, नार्मल और मिडिल स्कूलों में प्रयोग होने के लिये स्वीकृत है।

वर्ष १६] कार्तिक सं० १९९५, अक्तूबर १९३८ [सं० ६

संसार की सेनायें

बड़ी लड़ाई के बाद कुछ समय तक शान्ति रही। राष्ट्र संघ से लोगों को आशा थी कि शायद सचमुच संसार में न्याय का राज्य हो जावे और शस्त्रों के जोर से प्रबल देश निर्बल देशों का चूसना बन्द करदें। लेकिन कुछ ही समय में लोगों का भ्रम दूर हो गया। सभी स्वाधीन देश अपनी अपनी सैनिक शक्ति बढ़ाने लगे। एबीसीनिया की लड़ाई से सिद्ध हो गया कि दुर्गम देश में बहादुर और निडर फौज भी नये ढंग से सुसज्जित फौज का सामना नहीं कर सकती। स्पेन को गृह-कलह और चीन-जापान युद्ध में कुछ देशों को अपने फौजी प्रयोगों को आजमाने का अवसर मिल गया। बड़ी लड़ाई के बाद जर्मनी की सैनिक शक्ति एक दम कम कर दी गई थी। इससे जर्मनी को नये ढंग से सैनिक संगठन करने का पूरा अवसर मिल गया। दूसरे देश अपने पुराने ढर्रे के फौजी ढंग को छोड़ने में इतने स्वतन्त्र न थे।

बड़ी लड़ाई के समय में हवाई जहाजों और टैंक (तोपों) को रोकने के लिए कोई उपयुक्त साधन न था। इसके बाद सैनिकों के सामने यह प्रश्न था कि क्या कोई देश हवाई शक्ति को इतना बढ़ा सकता है कि वह उन्हीं के जोर से अपने शत्रु का नाश कर दे और उसे फौज की आवश्यकता ही न पड़े। दूसरा प्रश्न यह था कि क्या सशस्त्र मोटर कारों की फौज इतनी बढ़ाई जा सकती है कि वह अपने सामने के पैदल सिपाहियों को कुचलती हुई अपने सामने का रास्ता साफ करले।

बड़ी लड़ाई के समय में रेंज फाइंडिंग (दूर से आने वाले हवाई जहाजों की दिशा और दूरी निर्धारित करने वाले) यन्त्रों का आविष्कार नहीं हुआ था। उनको दूर से देखने के यन्त्र भी इतने अच्छे न थे। आज कल एन्टीएअर क्राफ्ट तोपों का निशाना इतना पक्का है और वे इतनी तेज़ी से गोला छोड़ती हैं कि हवाई जहाज़ आसानी से उनका सामना नहीं कर सकते। इसी प्रकार एंटी टैंक शास्त्रों ने टैंकों का डर कम कर दिया है। पैदल सिपाही जर्मन सेना के प्रधान अंग हैं। लेकिन पैदल सेना के प्रत्येक डिवीज़न (भाग) के साथ उसी अनुपात से एंटी एअर क्राफ्ट और एंटी टैंक तोपें और दूसरे शस्त्र रहते हैं। इन शस्त्रों की इतनी अधिकता है कि एक प्रकार से जर्मन फौज हवा और जमीन पर आग के वायुमंडल से घिरी हुई आगे बढ़ती है और शत्रु से लड़ती है।

लड़ाई आरम्भ हो जाने पर हवाई जहाजों का प्रधान काम यह है कि वे शत्रु की सेना पर गोलाबारी करके उसे बड़ी संख्या में एकत्रित न होने दें। वे गोलाबारूद के कारखानों को नष्ट करें और रसद के

केन्द्रों को उजाड़ दें। वे शत्रु की फौज पर इस प्रकार अचानक छापा मारें कि उनके पैदल सिपाही आसानी से आगे बढ़ सकें। सारे राष्ट्र को डराने के लिये कभी कभी हवाई जहाज निःशस्त्र जनता पर भी गोलाबारी करते हैं। हवाई जहाज और टैंकों के अतिरिक्त फौजी मोटरकारों ने भी लड़ाई के ढंग को बदल दिया है। फौजी मोटर कार कुछ हद तक (घोड़सवारों) का काम करते हैं। वे अपनी फौजों को आड़ में रखते हैं। उनमें दुश्मन को टोलियों को भीतरी भाग का ठीक पता नहीं लगता है। तोपों को खींचने का काम भी अक्सर घोड़ों के बदले बड़े मोटरों से लिया जाने लगा है। मोटरों से सारी फौज को एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाने का काम भी लिया जाने लगा है। इस प्रकार घोड़ा उन ऊँचे नीचे विकट स्थानों के लिये उपयोगी रह गया है जहाँ पहिये वाली गाड़ियां (मोटर लारियाँ) नहीं चल सकती हैं।

रासायनिक (केमिकल) लड़ाई अभी तक विषैले गैसों का प्रयोग इतना अधिक नहीं किया गया है कि किसी देश की समस्त जनसंख्या को समूल नष्ट कर दिया जावे। फिर भी गैस से बचने के लिये गैस मास्क और तहखाने योरुप के प्रायः सभी बड़े शहरों में तयार होने लगे हैं

सेना की भरती—संयुक्त राष्ट्र अमरीका, ब्रिटिश साम्राज्य और चीन को छोड़ कर प्रायः और सभी स्वाधीन देशों में १८ वर्ष से अधिक उम्र वाले पुरुषों को अनिवार्य रूप से फौज में भरती होना पड़ता है। कितने समय तक फौजी शिक्षा प्राप्त करें इसकी अवधि अलग अलग देशों में अलग अलग है। स्विज़रलैंड में पैदल सिपाहियों, इंजीनियरों और तोपखाने के सिपाहियों को ६५ दिन तक शिक्षा लेनी पड़ती है। रूस में पचास फ[illegible] सिपाहियों को केवल एक महीने की शिक्षा [illegible] पड़ती है। वैसे औसत से अधिकतर फौज [illegible] वर्ष की लगातार शिक्षा अनिवार्य है। संयुक्[illegible] अमरीका को छोड़ कर और प्रायः सभी प्रबल [illegible] में कुछ न कुछ संरक्षित (रिज़र्व) फौज रहती [illegible] लड़ाई के समय इससे काम लिया जाता है। सं[illegible] राष्ट्र अमरीका में केवल कुछ आफिसर संर[illegible] (रिज़र्व) सेना में है। इटली, जर्मनी और जा[illegible] में फौजी उम्र के पहले ही लड़कों को स्कूलों में [illegible] न कुछ फौजी शिक्षा दी जाती है। संयुक्त अमरीका के कुछ स्कूलों और कालिजों में फौ[illegible] शिक्षा का प्रबन्ध है। ब्रिटेन में फौजी अफसर तै[illegible] करने के लिये कई स्कूल हैं।

जर्मनी में साधारण फौज के अतिरिक्त [illegible] हज़ार (१२,००० से ऊपर) काली कमीज (ब्लै[illegible] शर्ट), खाकी शर्ट के स्वयं सेवक और दूसरे फौ[illegible] अफसर हैं। इटली में फेसिस्ट मिलीशिया [illegible] अतिरिक्त तट, बन्दरगाह, रेलवे, वन आदि की रक्ष[illegible] के लिये फौज है। फौज के अन्तर्गत रेजीमेन्ट बेटेलियन आदि में सिपाहियों और बन्दूकों की संख्या अलग अलग देशों में अलग अलग है। अधिकतर देशों के पैदल (इन्फेंट्री) डिवीज़न में १०,५०० सिपाही रहते हैं। जर्मनी में ८४०० और जापान में १५,१२८ होते हैं। हलकी भारी बन्दूकों की संख्या भी अलग अलग है रूस में भारी बन्दूकों की अधिकता है। जर्मनी में एन्टी एअर क्राफ्ट और और दूसरे यन्त्रों की अधिकता है। सीमा के पास आजकल सीमेन्ट और फौलाद की पक्की खाइयों और सुरंगों की अधिकता हो रही है। फ्रांस औ[illegible] जर्मनी ने एक दूसरे के आमने सामने इसी तरह की मज़बूत किलाबन्दी कर ली है।

नई दुनिया के प्राचीन नगर

चोलूला—१

मेक्सिको में पहुँचने के लिये स्पेनवासियों ने समुद्र के किनारे पर वेराक्रूज़ (सच्चा क्रूस) नाम का बन्दरगाह बसाया। समुद्र से देखने पर वेराक्रूज़ कुछ भी सुन्दर नहीं मालूम पड़ता है। रेतीले किनारे पर घरों की सुनसान क़तार दिखाई देती है। नगर के चारों ओर वीरान पहाड़ियाँ हैं। इन में हरियाली का नाम नहीं है। वैसे यहाँ पानी खूब बरसता है। बादल में से आस्मान घिरा रहता है। निचले किनारे पर अनूप वन गये हैं। पीला अजार (बुखार) बहुत फैलता है। इसी से वेराक्रूज़ मेक्सिको भर में सबसे अधिक अस्वास्थ्यकर गिना जाता है। वेराक्रूज़ का बन्दरगाह भी अच्छा नहीं हैं। उत्तर की ओर से अक्सर तूफानी हवायें चलती हैं। नावें अपना बाद बान उतार देती हैं। जहाज़ दुहरा लंगर डालते हैं। फिर भी ठीक ठीक रक्षा केवल फोर्टसेन्ट जूलियन के पास होती है। वेराक्रूज़ के ताजे पुते हुये घर कुछ अच्छे मालूम होते हैं। लेकिन अक्सर गलियों और घरों की छतों पर काले गिद्ध मंडराते रहते हैं। वे ऐसे पालतू हो गये हैं कि मुसाफिर को देखकर वे अपनी जगह से नहीं हिलते हैं। जब नौकर घरों का कूड़ा कचड़ा फेंकते हैं तब ये गिद्ध बड़ी तेज़ी से इस पर उड़ते हैं। मेक्सिको दरवाज़े के बाहर वेराक्रूज़ शहर का सुन्दर भाग है। शहर के दोनों ओर कोकोआ के बड़े बड़े पेड़ लगे हुए हैं। इसी ओर शाम को माझी और कुली इकट्ठा होते हैं। रात को देर तक गाना बजाना होता है। अगर हम वेराक्रूज़ से पश्चिम की ओर बढ़ें तो किनारे के गरम दलदली भाग के आगे कुछ ऊँचा शीतोष्ण प्रदेश मिलता है। यहाँ क़हवा, तम्बाकू, केला बहुत होता है। इस भाग में नारंगियों के बगीचों के बीच में घिरे हुए छोटे छोटे घर बहुत सुन्दर मालूम होते हैं। यहाँ से आगे हर मोड़ के सामने आरिज़ाबा पर्वत दिखाई देता है। आरिज़ाबा और पोपोकेटिपेटल मेक्सिको के सबसे ऊँचे पहाड़ हैं। इनकी सुन्दर बर्फीली चोटियाँ तो समुद्र से ही दिखाई देने लगती हैं। आरिज़ाबा नगर इसी नाम के पर्वत की तलहटी में बसा हुआ है। इधर कारखाने बढ़ रहे हैं जो बिजली के ज़ोर से चलते हैं। इस ओर पठार पर पहले विकराल ज्वालामुखी पर्वत आग धुआं उगलते थे।

आरिज़ाबा के आगे सड़क बहुत सपाट हो जाती है। बड़े बड़े पुलों के ऊपर से नद कन्दराओं को पार करने के बाद यात्री माल्ट्राटा नगर में पहुँचता है। यहाँ से अधिक चढ़ाई शुरू होती है। रेलगाड़ी में नये इंजिन लगते हैं। इसके आगे सुरंग और पुल बहुत जल्द जल्द रास्ते में पड़ते हैं। एस्परांज़ा के पास गाड़ी ३९०१ फुट की ऊँचाई पर चढ़ जाती है। इसके आगे जमीन खुश्क मिलती है। आरम्भ की हरियाली लुप्त हो जाती है। रास्ते में अक्सर धूल उड़ती हुई मिलती है। कहीं कहीं मकई और गेहूँ के छोटे छोटे खेत दिखाई देते हैं। कांटेदार राम बांस (केक्टस) अक्सर मिलता है। कहीं कहीं सफेद हेसियंडा से मालूम पड़ता है कि वह प्रदेश एक दम निर्जन नहीं है। दूर क्षितिज में स्थित ऊँचे पहाड़ और पड़ोस के रेतीले टीले मैदान (पठार) के दृश्य में कुछ विभिन्नता डाल देते हैं। अब हमारा मार्ग कुछ उत्तर पश्चिम की ओर मुड़ता है। हम ह्वामांटला से गुज़र कर मोलिंची का चक्कर लगाते हैं। लगभग २० मील की दूरी पर प्यूब्ला शहर हमारी बाईं ओर छूट जाता है। इसी के पड़ोस में एलो पौधे से शराब बनाई जाती है। इसका रंग कुछ पीला होता है। रस गाढ़ा होता है। इस में बड़ी गन्ध आती है। यहाँ से मेक्सिको के प्रायः सभी भागों को शराब के पीपे रेलगाड़ी पर लद कर जाते हैं।

स्पेन वासियों ने मेक्सिको की विजय के कुछ ही समय बाद प्यूब्ला शहर बसाया था।

मेक्सिको शहर के बाद मेक्सिको देश में दूसरे नम्बर का शहर प्यूब्ला ही है। यहाँ के थलिक गिरजों की भरमार है।

प्यूब्ला से कुछ ही दूरी पर मेक्सिको का प्राचीन नगर चोलूला बसा हुआ है। किसी समय में चोलूला

ा विशाल पिरेमिड़ बहुत प्रसिद्ध था। तलेहटी में सका घेर १६ एकड़ और चोटी पर एक एकड़ ा। इसी के ऊपर मेक्सिको के अधिष्ठातृ देव केटज़ा-ोटल (पवन देव) का मन्दिर बनाया गया था। हा जाता है कि टोल्टेक लोगों (उस समय के ेक्सिकोवासियों) को शान्ति की कलायें, धर्म, और ाजनीति सिखाने के लिये क्वेटज़ा कोटल (पवन देव) ं मनुष्यों के बीच में रहना स्वीकार कर लिया। ा। इस पवित्र देवता को ऋतु के ऋतु में होने वाले केवल फल और फूल भेंट चढ़ाये जाते थे। इसी ेवता के सम्मानार्थ चोलूला का विशाल पिरेमिड नाया गया था। वह कब बना इसका ठीक पता हीं चलता है। जब अज़टेक लोग पठार पर आये ब यह पिरेमिड चोलूला में बना हुआ था। कुछ ोगी का कहना है कि यह विशाल पिरेमिड ओल्मेक ोगों ने बनाया। कुछ का अनुमान है कि इसे टोल्टक ोगों ने बनाया। कुछ का कहना है कि इन से पहले ाले विशालकाय लोगों ने इसे बनाया जो प्रलय से डरते थे। लेकिन बहुत ऊँचे प्राकृतिक पहाड़ों के ोते हुए कृत्रिम टीलों का बनाना अनावश्यक था। इसकी ऊँचाई केवल १९९ फुट है।

अपने समय में चोलूला अत्यन्त समृद्ध शाली नगर था। जैसे हिन्दुओं का काशी, मुसलमानों का मक्का, ईसाइयों का यरूशलम केथलिक लोगों का रोम है उसी प्रकार चोलूला प्राचीन रेड इंडियन लोगों का तीर्थ स्थान था।

आनाहुआक के दूर दूर के सिरों से रेड इंडियन लोग केटज़ा कोटल के मन्दिर में भेंट चढ़ाने आते थे। यहीं केटज़ा कोटल ने निवास किया था। पूर्वी देशों की ओर चलते समय केटज़ा कोटल (पवन देव) ने अपने अनुयायियों को धर्म पर आरूढ़ रहने का आदेश दिया था और उन्हें वचन दिया था कि वह और उसकी सन्तान उसके ऊपर राज्य करने के लिये फिर यहाँ आवेंगे। स्पेन वालों के आने के समय इस भविष्य वाणी ने जादू का काम किया। इससे स्पेन वासियों को बड़ी सहायता मिली। भोले भाले रेड इंडियन लोगों ने समझा कि लम्बे क़द गोरे रंग और नीली आँखों वाले स्पेन वासी केटज़ कोटल की ही सन्तान हैं। वे बहुत दिनों से इसकी प्रतीक्षा कर रहे थे। इस लिये स्पेनवासियों को मेक्सिको विजय में दैवी सहायता मिल गई।

जिस समय स्पेन वासियों ने मेक्सिको को जीता उस समय चोलूला बड़ा शक्ति शाली नगर था। यहाँ के पिरेमिड के ऊपर से बड़ा आलीशान दृश्य दिखाई देता था। उत्तर की ओर पोपोकेटी पेटल और इज़टाक्सी ह्वाटल दो विशाल पर्वत प्राकृतिक पहरेदारों के रूप में मेक्सिको के पठार की रक्षा करते मालूम होते थे। दक्षिण की ओर आरिज़ावा की बर्फ़ीली चोटी आस्मान से बातें करती थी। पास वाला सियराडि मेलिंची पर्वत अपने पड़ोस के मैदान पर छाया डाल रहा था। इनमें से तीन ज्वालामुखी पर्वत योरुप के ऊँचे से ऊँचे पहाड़ से भी अधिक ऊँचे हैं। उनके नीचे कड़ी बरफ जमा रहती है जो जून की तेज़ धूप में भी नहीं पिघलती है।

अपने समय में चोलूला में बहुत से विशाल मन्दिर और भवन थे। स्पेन वालों के आने के बाद जैसे जैसे रेडइंडियन लोगों का ह्रास हुआ वैसेही चोलूला शहर भी खंडहरों में बदल गया।

जापान की जन-वृद्धि समस्या

(लेखक-श्री बेशलाल चौधरी, बी० ए०)

ऐसे तो सभी राष्ट्र अपनी राजनीतिक, औद्योगिक और सैनिक शक्ति बढ़ाने की चेष्टा करते हैं। सभी की महत् आकांक्षा रहती है कि अपने राज्य-सीमा को यथासाध्य विस्तृत करें। जापान भी इस से वञ्चित नहीं। अपनी सभी शक्तियों को बढ़ाने का प्रयत्न कई वर्षों से कर रहा है। आज चीन से भिड़ा हुआ है। राजनीतिक क्षेत्र में इसके कई कारण बताये जाते हैं। कितनों का ख्याल है कि विश्व-राज्य-संस्थापन के फेर में जापान पड़ा हुआ है। कोई कोई सोचते हैं कि पूर्वीय संसार में सर्वश्रेष्ठ बनना चाहता है। ऐसा भी अनुमान किया जाता है कि निकटवर्त्ती देशों को जीत कर अपने लिए औद्योगिक क्षेत्र तैयार कर रहा है। इन सब कारणों के होते हुए भी एक ऐसा जटिल प्रश्न इसके सामने आ उपस्थित हुआ है जिससे बाध्य होकर जापान अन्यान्य देशों पर अपना आधिपत्य जमाने की कोशिश कर रहा है। वह प्रश्न यहां की जन-वृद्धि का है। यहाँ की जन-संख्या इतनी शीघ्रता से बढ़ रही है कि इसके असह्य बोझ से आज जापान दबा जा रहा है। इसका प्रारम्भ सन १८७० ई० से बताया जाता है। परन्तु गत कुछ वर्षों से इसकी संख्या इतनी बढ़ती जा रही है कि सभी जापान निवासियों के ध्यान इसी ओर आकृष्ट हैं।

दिनों दिन जन-संख्या की इतनी वृद्धि हुई कि इसका उल्लेख करना अनिवार्य्य प्रतीत होता है। अन्यान्य भागों को छोड़ कर केवल मुख्य जापान को ही लेता हूँ। सन् १९२५ में ८,७५,००० की वृद्धि हुई। १९२६ में ९,००,००० की हुई और १९२७ में १०,००,००० तक की वृद्धि हो गई। अगले चार वर्षों में वृद्धि की संख्या लगभग ९,००,००० के हुई और १९३२ में १०,००,००० की हो गई। इस प्रकार वृद्धि प्रति वर्ष प्रति शत १·२ होती रही है। इस गणना के आधार पर ऐसा अनुमान किया जाता है कि ४० वर्षों में ही यहाँ की जन-संख्या दूनी हो जायेगी। जन-संख्या की बढ़ती देख कर मृत्यु-संख्या भी कम होती जा रही है। इसका एक प्रधान कारण ग्रामीणों का नगरों में आश्रय लेना है। जापान में पहले पहल जागीरदारी प्रथा (Feudal System) थी। वे ही कृषकों को भूमि जोतने बोने के लिए दिया करते थे। उनकी प्रताड़ना सभी को मालूम है। भाग्यवश सन् १८७२ में ग़रीब किसान इनके चंगुल से बचे जब कृषि-भूमि इनके (किसानों) अधिकार में आ गई। किन्तु इधर कई वर्षों से एक नये वर्ग के अधिकार में अधिकांश भूमि आ गई है। इस वर्ग के लोग "नये धनिक" (Nouveaux riches) के नाम से विख्यात हैं। इनकी प्रताड़ना जागीरदारों (Feudal Lords) से भी बढ़ कर है। अतएव बहुत सी कृषक संतान ग्रामों को छोड़ छोड़ कर नगरों का आश्रय ले रही हैं। ग्रामों की अपेक्षा नगरों में औषधि आदि का प्रबन्ध अच्छा रहता है अतएव मृत्यु संख्या न्यूनतम होती जाती है। फलस्वरूप जन-वृद्धि का प्रश्न और भी जटिल हुआ जा रहा है।

ऐसी परिस्थियों में पड़ कर इस प्रश्न को हल करने के लिये जापान अपनी आँखें देश की प्राकृतिक बनावट की ओर फेरता है! देखता है कि क्वाटों का विस्तृत मैदान केवल १२०,०००,००० मनुष्यों को भोजन दे सकता है। नोबी की निम्नभूमि ४५,०००,००० मनुष्यों का भरण-पोषण कर सकती है। किन्की की चौरस जमीन ६०,०००,००० मनुष्यों का पालन कर सकती है। इस के अतिरिक्त पर्वत पार्श्व-स्थित संकीर्ण भूमि तथा छोटी छोटी नदियों की तराइयां नज़र आती हैं। इस पहाड़ी देश में इस प्रकार केवल एक चौथाई भूमि ऐसी है कि कृषिकार्य में लाई जा सकती है। ऐसी भूमि की गणना में केवल उर्वरा समतल भूमि नहीं वरन् पार्वतीय ढाल और कुछ ऊसर भूमि भी सम्मिलित हैं जो कठिन मानवी परिश्रम से धान के क्षेत्रों में परिवर्त्तित की जा सकती हैं। ऐसी भूमि कुल खेती की जाने वाली जमीन के ⅓ हैं। यदि इन्हें जोता बोया जाय तो सम्भव है कि भोज्य पदार्थों में ३३ प्रतिशत की वृद्धि हो जो लगभग २०,००००,००० मनुष्यों के लिये पर्य्याप्त होगी। परन्तु यहाँ के इतिहास पर दृष्टि डालने से यह उतनी आशातीत नहीं दीख पड़ती है। सन् १९०५ से १९२५ तक अर्थात् २० वर्षों में कृषि-क्षेत्र की वृद्धि लगभग १८,७५,००० एकड़ भूमि से हुई। इस प्रकार वार्षिक वृद्धि १००,२००० एकड़ भूमि से भी कम हुई। इस हिसाब से ५० वर्षों में सभी शेष भूमि खेती कार्य्य के लिए अधिकृत

की जा सकती है। और इधर २०,००,००,००० जन-संख्या २५ वर्षों से भी कम समय में बढ़ सकती है। अतएव भूमि वृद्धि से भी जन वृद्धि का प्रश्न हल नहीं हो सकता। कितनों का अनुमान है कि अन्न की उपज की मात्रा में वृद्धि की जाये तो सम्भव है कि यह प्रश्न हल हो। परन्तु सभी बातों की सीमा होती है। सन् १८८० से आज तक ६६-६७ प्रतिशत की वृद्धि केवल चावल की उपज में हुई है तौभी यह प्रश्न ज्यों का त्यों रहा।

जापान साम्राज्य की वृद्धि
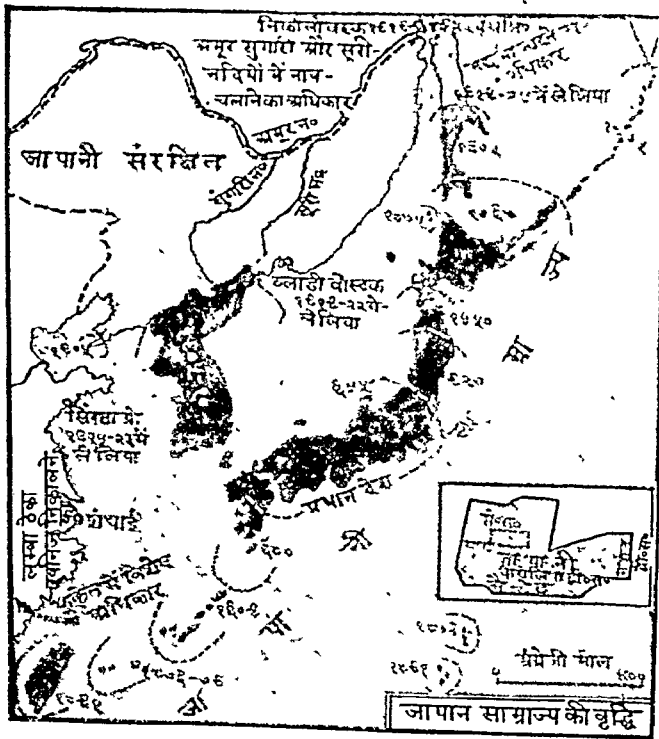
जापान जन-वृद्धि निवारणार्थ उद्योग धन्धों की ओर दृष्टि डाल रहा है। यद्यपि यह पूर्वीय इङ्गलैण्ड के नाम से विख्यात है तथापि इङ्गलैण्ड या अमरीका से इसकी तुलना करने पर यह व्यवसायी राष्ट्र नहीं कहा जा सकता। इसमें कोई शक नहीं कि पूर्व की अपेक्षा अब जापान व्यवसाय में बहुत कुछ उन्नति किये हुए है। सभी देशों में जापानी चीज़ें दीख पड़ती हैं। परन्तु फिर भी यह अभी भी कृषि प्रधान देश है क्यों कि अधिकांश लोगों की जीविका कृषि पर ही निर्भर है। १९२६ में कारख़ानों में श्रमजीवियों की संख्या १०प्रतिशत थी। सूत और लोहे की कुछ ही चीजें बड़े बड़े कारख़ानों में तैयार की जाती हैं नहीं तो शेष चीजें छोटे छोटे कारख़ानों में तैयार की जाती हैं। ओसाका नगर में १९२४ में लगभग १६००० औद्योगिक केन्द्र थे जिन में १३००० में ५ से भी कम मनुष्य काम करते थे। रुई सम्बन्धी कारोबार सानों और आशीकागो जिले में तथा इन के निकटस्थ स्थानों में होता है। लगभग ६ कपड़े गृहस्थों के घर बनते हैं। कपड़े पूर्ण रूप से तैयार होने के पहले कई छोटे छोटे व्यवसाय-केन्द्रों से होकर गुज़रते हैं। यही प्रथा जूते, ब्रश, कैंची-छुरी, छाता, लालटेन, मिट्टी के बर्तन आदि चीजों को बनाने की भी है। इस प्रकार जापान अत्यल्प संख्या में श्रमजीवियों को औद्योगिक केन्द्रों में पाता है और इसे जन-वृद्धि समस्या को हल करने का यथेष्ट साधन नहीं समझता। यदि वह बड़े बड़े कारख़ानों के अभाव को दूर कर सकता तो सम्भव है कि कुछ हद तक समस्या हल हो जाती।

परदेश-गमन द्वारा कुछ मनुष्यों का निर्वाह हो सकता है और देश जनता के बोझ से कुछ बच सकता है। परन्तु प्रवासित जापानियों को देखने से पता चलता है कि ऐसा करने से भी वे बाज नहीं आये हैं। अन्यान्य देशों में प्रवासित जापानियों की संख्या सन् १९३१ में ६२४,००० थी। इन में मंचूरिया में १६६०००, हवाइन द्वीपों में १४०,००० ब्राजील की अधित्यका में १००,००० और संयुक्त प्रदेश (अमेरिका) के उपकूल भागों में १००,००० इस से पता चलता है कि यथा सम्भव वे अन्यान्य देशों में जाकर बस ही गये हैं। यदि उन्हें कोई रिक्त स्थान प्राप्त हों तो उनका कल्याण हो सकता है।

वे भोज पदार्थों में परिवर्त्तन लावें तो सम्भव है उनकी कठिनाई दूर हो। वे अधिकांश भोजन चावल का ही करते हैं। यदि वे चावल के बदले कुछ अधिक मात्रा में शाक, फल और मूल का व्यवहार करते तो चावल की माँग कम हो सकती है। आलू प्रति एकड़ चावल से अधिक

उपजता है। पहाड़ी प्रान्तों में धान के बदले चाय और फलों की पैदावार अच्छी हो सकती है। फिर भी यदि चावल के बदले गेहूं का प्रयोग करें तो किफ़ायत पड़ेगी क्यों कि संसार में गेहूं के क्षेत्र धान के क्षेत्रों से अधिक हैं। साथ ही साथ उनका स्वास्थ्य भी सुधरेगा। परन्तु जापानियों को चावल अत्यन्त ही प्रिय भोजन है। इसके बदले में कोई भी दूसरा अन्न भोजन करना उनके लिए अपने मान मर्यादा को कम करना है। अतएव सार्वजनिक शिक्षा द्वारा कुछ दिनों में उनका विचार पलट सकता है। ऐसा होने पर भी ऐसा अनुमान किया जाता है कि उनका संतान-वृद्धि-दुःख पूर्ण रूप से दूर नहीं हो सकता।

अब जापान के लिए केवल एक ही उपाय शेष नज़र आता है जिस से वह युद्ध के अमानुषिक कार्य्यों तथा नर हत्या के दोषों से मुक्त रह सकता है। साथ ही साथ अपनी वर्तमान सन्तान को पुष्ट बना सकता है। वह है सन्तान नियंत्रण-साधन। इसमें कठिनाइयों तो अवश्य हैं क्यों कि यह जापानी सिद्धान्तों के नितान्त प्रतिकूल है, फिर भी य दे सार्वजनिक शिक्षा द्वारा उनके विचारों में पूर्ण परिवर्तन लाया जाय तो सम्भव है कि इस साधन में उन्हें सफलता मिले। कुछ जापानी तो अवश्य इसके पक्ष में हैं और इस साधन का प्रयोग भी कर रहे हैं। परन्तु ऐसे महानुभावों की संख्या सोचनीय है। अतएव उन्हें यथोचित रूप में इस का आन्दोलन करना चाहिए। साथ ही साथ इसकी महता को सर्व-प्रिय बना देना चाहिये।

इतिहास का भूगोल पर प्रभाव

(ले० प्रहलाद नारायण रायज़ादा एम० ए० विशारद)

इतिहास से हमें पूर्व कालीन ज्ञान प्राप्त होता है अर्थात् इतिहास हमें मनुष्य के किये हुए कार्य बतलाता है। मनुष्य जैसा कार्य करता है वैसा ही इतिहास बन जाता है। अतः मनुष्य अपने कार्य से सदैव किसी देश का इतिहास बनाता रहता है। वह अपने परिश्रम से बड़े बड़े कार्य जो असम्भव प्रतीत होते हैं कर डालता है और प्राकृतिक वस्तुओं में भी अन्तर कर भौगोलिक दशा को बदल देता है।

प्राचीन इतिहास अध्ययन करने से हमें ज्ञात होता है कि मनुष्य ने अपने परिश्रम से पर्वत और समुद्र को भी कुछ न समझा। हम रामायण में पढ़ते हैं कि किस प्रकार नल और नील दो भाइयों ने भारतवर्ष और लंका के बीच के समुद्र के ऊपर रामचन्द्र जी की सेना के जाने के लिये मार्ग बनाया, किस प्रकार हनुमान जी सम्पूर्ण पर्वत को उठा कर रामचन्द्र जी के पास ले आये थे। महाभारत अध्यन करने से हमें ज्ञात होता है कि किस प्रकार कृष्ण जी ने अपने सहपाठी ग्वालवालों की सहायता से गोवर्धन पर्वत को उठा लिया था। इसी प्रकार की वीरता की कहानियाँ हम प्राचीन यूनान और रोम के इतिहास में पढ़ते हैं। हरकुलीस (Hercules) की कहानियाँ आज तक उसकी वीरता के हेतु बड़े मनोरञ्जन से पढ़ी जाती हैं।

प्रायः इन प्राचीन कहानियों को असम्भव बतला झूँठी समझते हैं परन्तु वर्तमान युग में हमको बहुत से उदाहरण मिलते हैं जिन्हें देख आश्चर्य होता है कि इस थोड़े से जीवन में मनुष्य ने कैसे कैसे कार्य किये हैं जिनके कारण सम्पूर्ण संसार का भूगोल बदल गया है।

मनुष्य ने वर्तमान युग में विज्ञान की सहायता से प्रकृति पर अधिकार स्थापित कर लिया है। वर्तमान वैज्ञानिक आविष्कारों ने समय और दूरी को बहुत घटा दिया है। प्रकृति द्वारा स्थापित सुदूर देशों को रेल, तार, जहाज़, हवाई जहाज़ द्वारा निकट बना.दिया है। प्रकृति की बनाई हुई खानों को मनुष्य ने खाली कर डाला है। इंगलैंड में स्थानाभाव के कारण टेम्स नदी के नीचे नीचे रेलें चलाई हैं। पिहाड़ काट कर देशों को मिला दिया है। (Simpllon) सिम्पलौन की सुरंग में बारह मील तक रेल सुरंग के अन्दर ही अन्दर चलती रहती है। बहुत समय तक भौगोलिक कारणों से दक्षिण भारत उत्तरी भारत से अलग रहा यहाँ तक कि दक्षिण एक बिलकुल ही दूसरा देश

था। कोई भी मुसलमान बादशाह उस पर पूर्णतया अपना आधिपत्य न जमा सका और मुग़ल बादशाहों की तो वह कब्र ही बना रहा। परन्तु ऐतिहासिक कारणों से वही दक्षिण अब उत्तरी भारत से मिला दिया गया है और ब्रिटिश सरकार ऐसी आसानी से उस पर शासन करती है जैसे उत्तरी भारत पर। भौगोलिक कारणों से सहारा का रेगिस्तान अंधेरा महाद्वीप (Dark continent) कहलाता था परन्तु ऐतिहासिक कारणों से उसका अंधकार दूर हो गया है और अब वह उजाला महाद्वीप बन रहा है।

हालैन्ड की पृथ्वी समुद्र तल से नीची है अतः समुद्र के पानी को देश में घुस आने से रोकने के लिये डच लोगों ने बड़े बड़े डाइक्स (Dykes) और ड्यून्स (Dunes) बनाये हैं। जब कभी समुद्र में तूफ़ान आने के कारण यह डाइक्स टूट जाते हैं तो देश के भीतर तक समुद्र बढ़ आता है परन्तु वहाँ के परिश्रमी मनुष्य फिर से ऐसे ही डाइक्स बना लेते हैं। यही नहीं वरन् डच लोग समुद्र से बरजोरी ज़मीन छीन लेते हैं। वह लोग समुद्र के अन्दर बड़ी बड़ी दीवार बना कर एक प्रकार का कुंड बना लेते हैं जिसका पानी इञ्जन द्वारा निकाल देते हैं और ज़मीन को सुखा लेते हैं इस प्रकार की सुखाई हुई ज़मीन को पोल्डर (Polder) कहते हैं।

ज्यूडरज़ी के स्थान पर किसी समय पृथ्वी थी परन्तु समुद्र के तूफ़ान ने डाइक्स (बांध) को तोड़ डाला और बहुत दूर तक थल के स्थान पर जल ही जल हो गया। अब फिर इसका पानी उलीचा जा रहा है और आशा है कि शीघ्र जल के स्थान में थल बन जायेगा।

पृथ्वी की शक्ल और संसार के मान चित्र का ज्ञान भी मनुष्य को क्रमशः बढ़ता रहा है। इतिहास द्वारा समय समय पर उसमें परिवर्तन होते रहे हैं। जब ईसा के ५०० वर्ष पूर्व ऐनिक्सीमेंडर (Anexemander) ने संसार का मानचित्र बनाया तो उसने समझा कि समस्त देश एक वृत्त (Circle) बनाते हुये हैं और यूनान उन सब के मध्य में स्थित है। उसके सौ वर्ष पश्चात् डेमोक्रटस (Democratees) ने अपने पूर्व देशों के भ्रमण के आधार पर एक ऐसा चित्र बनाया कि जिसके पूर्व से पश्चिम की दूरी उत्तर से दक्षिण की दूरी से डेढ़ गुनी थी। तत्पश्चात यूनान के विद्वानों ने पता लगाया कि पृथ्वी एक ग्लोब है। परन्तु अब भी बहुत सी त्रुटियाँ बाक़ी थीं। रूम सागर बहुत लम्बाकार बनाया गया था। योरुप बहुत ही सकड़ा गया भारतवर्ष दिखलाया ही नहीं गया और लंका बहुत बड़ी बनाई गई इत्यादि। जब मार्कोपोलो सन् १२९५ ई० में चीन और जापान का भ्रमण कर के जेनोआ लौटा और वहाँ बन्दी कर लिया गया था तो बन्दी गृह में ही उसने अपने भ्रमण का वृत्तान्त लिखा। उसके लेख से संसार के भूगोल का बहुत सा ज्ञान बढ़ गया।

जब क़ुतुब नुमा (Mariner's compass) का आविष्कार हुआ तो बहुत से मनुष्य नये नये देश की खोज में चल पड़े और बहुत से नये देश ढूंढ़ निकाले। प्रत्येक खोज संसार के चित्र को कुछ न कुछ बढ़ा देती थी। सन् १४९२ ई० में क्रस्टफ़र कोलम्बस ने (Christpher Columbus) ने अमरीका (America) के बड़े महाद्वीप का पता लगाया। यह महाद्वीप इतना बड़ा था कि नई दुनिया (New world) के नाम से पुकारा जाने लगा। सन् १६६९ ई० में कैप्टिन कुक (captain Cook) ने (Newzealand) को ढूंढ़ निकाला और उसके एक वर्ष बाद Australia का भी पता चलाया। ऐसे ऐसे आविष्कारों ने मनुष्य के भौगोलिक ज्ञान को ही नहीं बढ़ाया वरन् बड़ी बड़ी बस्तियाँ बसने लगीं और बहुत से व्यापारिक, राजनैतिक, और आर्थिक परिवर्तन कर डाले।

एक समय था जब भारत का व्यापार योरुप के महाद्वीप से अफ्रीका के बड़े महाद्वीप का चक्कर लगा कर होता था। परन्तु जब अरब और अफ्रीका के बीच की पतली चिट को काट कर स्वेज़ नहर (Suez canal) द्वारा लाल सागर (Red Sea) और रूम-सागर (Mediterranean) मिला दिये गये तो स्वेज़ नहर (Suez canal) में होकर जहाज़ आने जाने लगे और हज़ारों मील का चक्कर कम हो गया। इसी प्रकार पनामा की नहर (Panama canal) ने अटलान्टिक महासागर और पेसेफ़िक महासागर को मिलाकर दक्षिण अमरीका का चक्कर मिटा दिया और कील Kiel) नहर ने उत्तरी सागर (North Sea और बेरिंग सागर को मिलाकर डेनमार्क का चक्कर कम

कर दिया जिसके कारण व्यापार में बड़ी सुविधा हुई।

इसके अतिरिक्त इतिहास का व्यापारिक भूगोल (Commercial Geography) पर बड़ा गहरा प्रभाव डाला है। पहले भारतवर्ष से योरुप थल की राह से खैबर दर्रे में होकर कुस्तुन्तुनिया (coustuntunia) होते हुए व्यापार होता था परन्तु जब सन् १४५१ तुर्कों ने कुस्तुन्तुनिया पर अपना अधिकार स्थापित कर लिया तो उन्होंने अपने देश में होकर काफिलों को जाने से रोक दिया। अब तो कोई अन्य मार्ग की आवश्यकता हुई। थल की राह से कोई मार्ग नहीं था क्योंकि टर्की का विस्तृत राज्य पूर्व में सारे प्रान्त में फैला हुआ था अतएव जल मार्ग ढंढ़ने के लिये बहुत से यात्री चल पड़े और वास्कोडिगामा (Vascodegama) नामक यात्री ने अफ्रीका का चक्कर लगाते हुए अटलान्टिक महासागर में मार्ग ढूँढ़ निकाला और अब इस राह से व्यापार होने लगा।

इतिहास का राजनैतिक भूगोल (Political Geography) पर भी बहुत प्रभाव है। ऐतिहासिक घटनाओं द्वारा देशों की सीमा बहुत कुछ घटती व बढ़ती रहती है। एक समय वह था जब कि रोम साम्राज्य (Roman Empire) सम्पूर्ण दक्षिण योरुप में फैला हुआ था परन्तु आज रोम नगर के अतिरिक्त कुछ भी नहीं रहा और वह भी इटली के आधीन एक नगर है। महान युद्ध से पहिले आस्ट्रिया पर्शिया व रूस (Austria, Purssia and Russia.) के प्रबल राज्यों ने मिलकर पोलैन्ड (Poland) के स्वतन्त्र देश को आपस में बाँट लिया और उसका अस्तित्व ही संसार के मानचित्र से मिट गया। युद्ध के पश्चात पोलैन्ड पहिले के समान फिर स्वतन्त्र देश स्थापित कर दिया गया। पोलैन्ड ही नहीं परन्तु और भी कई छोटी २ स्वतन्त्र रियासतें बनाई गईं जैसे जार्जिया, ऐज़र बेजान, रीगा इत्यादि।

इस प्रकार देखा जाता है कि इतिहास का भूगोल पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ता है और ऐतिहासिक घटनाओं के अनुसार भौगोलिक दशा में भी परिवर्तन होता रहता है।

आस्ट्रेलिया के मोती

उत्तरी-पश्चिमी आस्ट्रेलिया में मोती निकालने का काम फर्वरी महीने में शुरू होता है। तूफानों का आना इससे पहले ही बन्द हो जाता है। इससे छोटी छोटी नावें भी बड़ी आसानी से चल सकती हैं। आधे दिसम्बर से आधी फर्वरी तक एक तरह से आराम करने का समय होता है। नावें आकर ब्रूम शहर के पास ठहर जाती हैं। वहाँ उनकी मरम्मत या रँगाई होती है। इसी बीच में पुराने मल्लाह कोपॉग और दूसरे टापुओं को जाते हैं। यहाँ से वे दूसरे नये मल्लाह भरती कर लाते हैं। इसी समय सीप को अलग करने को गोरे लोग भरती किये जाते हैं। गोरे मजदूरों को २ पौंड (लगभग ३० रु०) हर हफ़्ते मिलता है। इसके साथ ही किसी किसी गोरे को आमदनी (जो उसके द्वारा होती है) का १५ फी सदी भाग मिलता है। मोती निकालने वाले मोती के अलावा उन सीपों से भी लाभ उठाते हैं। जिनमें मोती अक्सर छिपे रहते हैं। मोती का सीप लगभग २०० पौंड (३०००० रु०) प्रति टन के हिसाब से बिकते हैं। मोती निकालने वालों में अक्सर कुछ जापानी गोताखोर, टेंडार, कई कोपॉग द्वीप निवासी और एक गोरा रहता है। इस तरह नाव पर बड़ी भीड़ रहती है। ४० फुट लम्बी नाव पर सभी लोग बहुत साफ रहते हैं। पानी बहुत रहता है। पीले जापानी और काले द्वीप निवासी खूब नहाते और कपड़ा धोते हैं। वे शाम को कपड़ा धोकर नाव के घेरे पर सूखने के लिये लटका देते हैं। सवेरे को कपड़े सूखे मिलते हैं। नाव पर ही लोग भोजन पकाते हैं। कुछ लोग पानी से ताजी मछली पकड़ कर पका लेते हैं।

सब लोग सवेरे ही काम पर लग जाते हैं। डाइविंग ड्रेस (गोताखोरी की पोशाक) पहनने के पहले लोग फलालैन के कपड़े पहनते हैं फ़लालैन का पाजामा एड़ी के पास बंधा रहता है। गोता लगाने वाले सवेरे को गरम गरम कहवा पीते हैं। जब गोताखोर नियत समय तक अन्दर ठहर चुकते हैं तब टेंडार लोग "ऊपर आओ" की आवाज लगाते हैं और रस्सी हिलाते हैं। शीघ्र ही गोता खोरों की टोपी ऊपर दिखाई देती है। वे रस्सी के उस थैले को डेक (नाव के फर्श) पर डाल देते हैं जिसमें वे सीपें भर लाते हैं। इसके बाद गोरा अफसर छुरी लेकर सीपों को काटता है। किसी किसी सीप की चौड़ाई, दस बारह इंच होता है। इसके बाद गोता खोर फिर डुबकी लगाते हैं और सीप का थैला भर लाते हैं। इस तरह से सवेरे से शाम तक सीपें निकाली जाती हैं। शाम को छुट्टी होती है। मजदूर लोग भोजन बनाने में लग जाते हैं। किसी किसी दिन सीप में मोती भी निकला है। एक एक मोती का दाम २५०० रु० होता है। कोई कोई मोती २०,००० रुपये को बिकता है।

ग्रीनलैंड

उत्तरी ध्रुव (आर्क्टिक) सागर में ग्रीनलैंड दुनिया का सब से बड़ा द्वीप है। इसका क्षेत्रफल ८,४०,००० वर्गमील है जो हिन्दुस्तान का लगभग आधा है। लेकिन इस बड़े द्वीप में केवल ३५,००० वर्गमील ऐसी जमीन है जो बरफ से नहीं ढकी है। नाम का बन्दरगाह बरफ से नहीं खाली रहता है। डेन्मार्क की सरकार ने घोषणा निकाली कि १९४१ ई० तक यह बन्दरगाह सब जहाजों के लिये खुला रहेगा। तब से कई मछली पकड़ने वाले जहाज इधर आने लगे हैं। ग्रीनलैंड के भीतरी भागों का

यहाँ की आबादी १६,७०० है। इसमें ४०० डेन्मार्क के डेन लोग हैं। इस द्वीप का व्यापार एकदम डेन्मार्क की सरकार के हाथ में है। १९३७ के अप्रैल महीने में डेन्मार्क वालों ने थ्यूल को भी मिला लिया। दुनिया का सब से अधिक उत्तरी आबाद स्थान थ्यूल ही है। दक्षिणी-पश्चिमी तट पर फेरिंजहेविन पता लगाने का काम भी जारी है। उत्तरी-पश्चिमी तट पर नई बस्तियाँ बसाई जा रही हैं।

अटलांटिक महासागर के आर पार उड़ने वाले हवाई जहाजों के लिये ग्रीनलैंड बड़े मौके पर पड़ता है। यहाँ का जलवायु सम्बन्धी खोज भी बड़े काम की होगी। इसी से ग्रीनलैंड का महत्व बढ़ रहा है।

सोना

बहुत पुराने समय में जब मनुष्य खोहों में रहते थे एक लड़की को एक नदी के किनारे

१—पुराने समय में सोने की खोज

बालू में कुछ पीले पीले टुकड़े मिले। वे बड़े सुहाने थे। उसने उन्हें उठाकर अपने बाप को दिखलाया। बाप ने भी उन्हें बहुत पसन्द किया वे सोने के टुकड़े थे। उनमें छेद करके बाप ने उन्हें अपनी लड़की को पहना दिया। तब से अब तक लोग सोने की खोज में रहे हैं।

सोना बहुत कम स्थानों में मिलता था। फिर भी राजा लोग इससे तरह तरह के आभूषण और बर्तन बनवाते थे। पुराने समय के राजाओं की कब्रों में तरह तरह का सामान मिला है। यह सामान बड़े बड़े अजायबघरों में रक्खा गया है। सोने का कुछ सामान पुराने मिस्री राजाओं के पिरेमिडों में मिला है इराक़ देश के प्राचीन एसीरियन लोग भी बड़े माल-दार थे। उन्होंने सोने की तरह तरह की चीज़ें बनाई थीं। हिन्दुस्तान का बहुत सा सोना विदेशों में पहुँच गया है।

सुलेमान बादशाह के पास इतना सोना था कि उसने सोने का मन्दिर बनवाया :—

यूनान के राजा मिडास के बारे में एक विचित्र कहानी है। उसके पास बहुत सा सोना था। वह सोने को सब से अधिक चाहता था। उसने देवताओं से प्रार्थना की कि वह जिस चीज़ को छुए वह
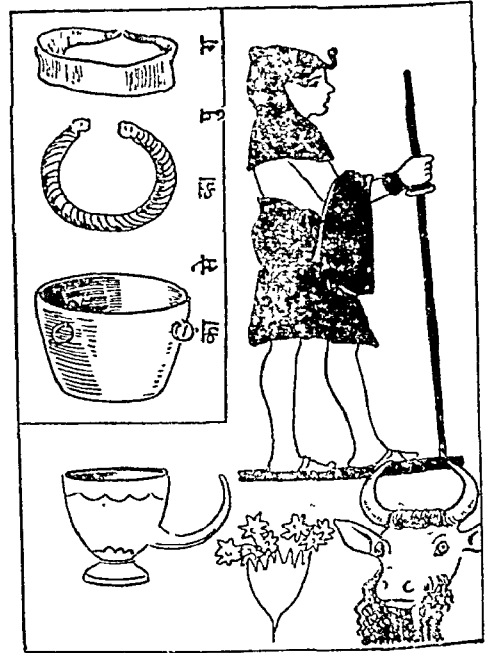
२—प्राचीन मिश्र के सोने के आभूषण

सोने की हो जावे। उसने अपना घर हथियार

आदि बहुत सी चीज़ें छू कर सोने की बनाली। उसके नौकर कई प्रकार का लेकिन जिस भोजन को राजा खाने के लिये छूता वही सोना बन जाता। राजा
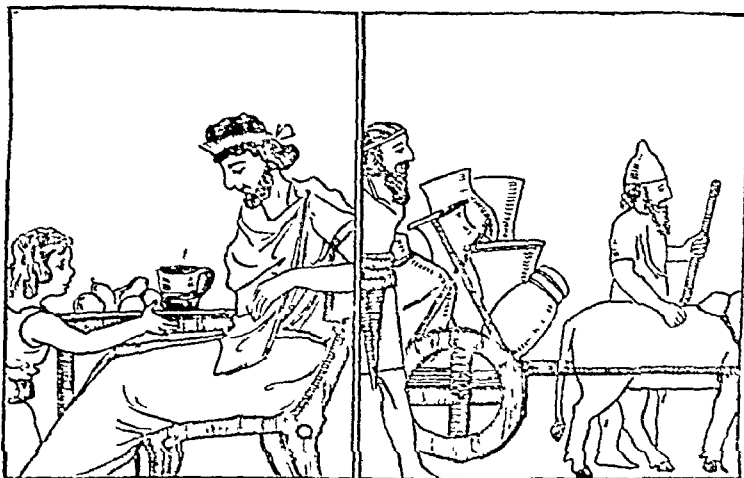
२—सोना असीरियन और यूनानी।

सोना नहीं खा सकता था। इससे राजा को कष्ट होने लगा। एक दिन इसकी प्यारी लड़की आकर उससे लिपट गई। वह बेचारी भी सोने की बन गई। तब तो मिडास ने दुःखी होकर देवताओं से प्रार्थना की कि जो वरदान उसे मिला है उसे वे वापिस ले लें।
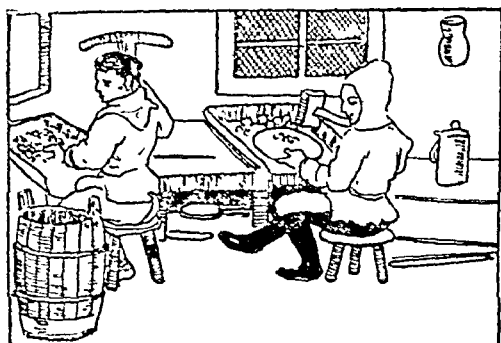
फिर भी राजा लोग सोने को चाहते ही रहे। सोने के लालच से वे दूर के देशों में हमला करते और बहुत सा सोना रथों पर लादकर वे अपनी राजधानी में ले जाते थे।

४—मिश्र देश का सोना। ५—सोना निकालनेका पुराना ढंग।

भोजन बना कर उसके सामने परोसते।

जब सोना कम मिलने लगा तो पुराने समय के कीमियागरों ने तरह तरह की चीज़ों को मिलाकर सोना बनाने की कोशिश की। कुछ लोग सोने की तलाश में पहाड़ और जंगलों में गये। कुछ लोगों ने सोने की खोज में समुद्रों को पार किया।
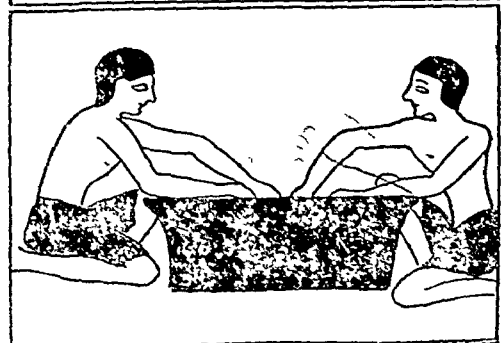
स्पेन वाले सोने की ख़ोज में मेक्सिको पहुँचे। मेक्सिको के लोग अज़टेक कहलाते थे। उनके पास बहुत सोना था। जब वहां के राजा को मालूम हुआ कि स्पेन वाले सोना चाहते हैं तब वहां के राजा ने स्पेन के सरदार कोर्टेज़ को सोने की बहुत सी चीज़ें भेंट की। लेकिन इससे स्पेन वालों का लोभ बढ़ता ही गया और उन्होंने मेक्सिको बरबाद कर दिया।

स्पेन वाले सोने की तलाश में दक्षिणी अमरीका भी पहुँचे। वहां पीरू के इन्का लोग भी
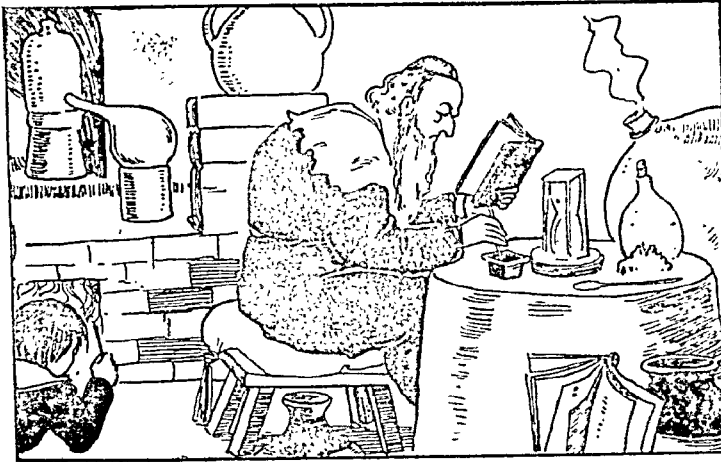
६—सोने की मियागार।

मालदार थे। उनको हरा कर स्पेन वालों ने वहां से बहुत सा सोना लूटा। लेकिन कभी कभी स्पेन वालों को रास्ते में इंग्लैंड और फ्रांस के लुटेरे जहाज़ मिल जाते। वे स्पेन वालों से लड़कर सोना छीन लेते थे। कभी कभी दोनों की लड़ाई में सोने से भरा हुआ जहाज़ डूब जाता था। आज कल कुछ लोग डुबकी लगाकर खोये हुए सोने को निकालने की कोशिश करते हैं।

कुछ लोग घोड़े या खच्चर पर सवार हो कर सोने की खानों का पता लगाने निकलते हैं। एक वार केलिफोर्निया में जेम्स मार्शल ज़मीन खोद रहा था। उसने वहां की मिट्टी में सोने के कण देखे। यह खबर बड़ी तेज़ी से दूर दूर तक फैल गई। लोग इस सोने की तलाश में लम्बी यात्रा तय करके यहां आ बसे। यह लोग १८४६ में यहां बसने आये थे। इसी से यहाँ के लोग १८४६ के नाम से प्रसिद्ध हो गये। उन दिनों में यात्रा करना बड़ा कठिन था। लोग लम्बी बन्द बैल गाड़ियों में सामान लाद कर धीरे धीरे चलते थे। उनको यहाँ आने में कई महीने लग गये।

आस्ट्रेलिया में कुछ ही इंच की गहराई पर सोना मिलने लगा। इस सोने की खोज

७—सोना।

में भी इंगलैंड के बहुत से लोग घर वार बेच कर यहां दौड़ आये।

उत्तरी अमरीका के धुर उत्तरी क्लांडायक

प्रदेश में एस्किमो रहते हैं। एक वार क्लूकुम-
जिम नामी रेड इंडियन शिकारी एक हिरण

८—सोने की खुदाई।

का पीछा करता करता यहां आ पहुँचा। वह वहुत थक गया था। पानी पीने के लिये एक नदी के किनारे ठहर गया। नदी के कंकड़ों के वीच में उसने सोने के टुकड़े देखे। यह ख़वर भी दूर दूर तक पहुँची यहां साल में आठ महीने तक कड़ा जाड़ा पड़ता है। फिर भी जाड़े की कुछ भी परवाह न करके लोग सोने की तलाश में यहां आने लगे। वे ओढ़ने के लिये कम्वल, खोदने लिये फावड़े और दूसरा भारी भारी सामान अपने आप ही ढो कर लाये थे। वरफ पर चलते चलते उनके पैर सुन्न पड़ जाते थे। कभी कभी उनको भूखा रहना पड़ता था। कुछ लोग तंग आकर लौट गये। कुछ मर गये। कुछ लोगों को सोना मिला और वे मालदार हो गये।
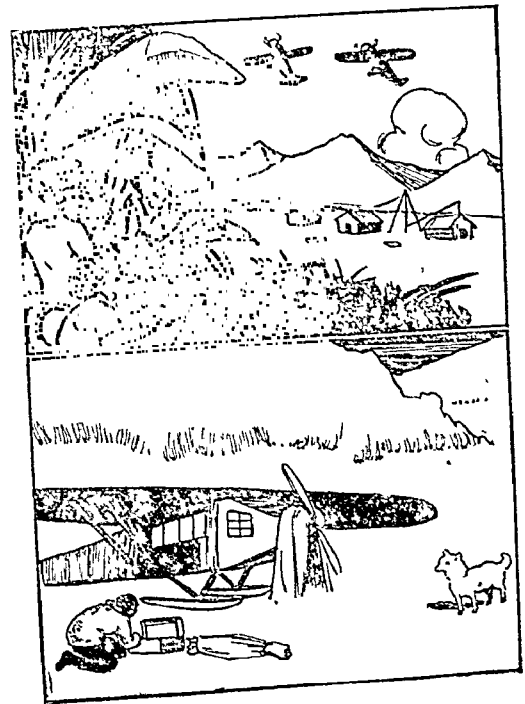
आज कल सोने की दुनिया भर में सव से वड़ी खानें दक्षिणी-अफ्रीका में हैं। वहाँ के मज़दूर लोग काले हवसी हैं। वे वड़ी गहराई पर सोना खोदते हैं। उनके मालिक गोरे लोग हैं जो योरुप से आकर वहाँ वस गये हैं। खानों के चारों तरफ सव कहीं सफेद वालू के ढेर लगे हैं। इनको इन्हीं हब्शियों ने खोद कर इकट्ठा किया है।

कनाडा की कुछ सोने की खानें इतनी दूर उत्तर के वर्फीले प्रदेश में हैं कि वहाँ विना पहिये की स्लेज गाड़ियों में सामान लादकर मज़दूरों के लिये पहुंचाया जाता है। कभी कभी सामान और

९—सोना।

मुसाफिरों को पहुँचाने का काम हवाई जहाज़ों से लिया जाता है।

पूर्वी द्वीप समूह के दक्षिण-पूर्व में न्यूगिनी द्वीप की सोने की खानें जंगलों से घिरी हुई

१०—सोना।

११—प्राचीन मिश्री सुनार सोने के आभूषण बना रहा है।

हैं। यहाँ ज़मीन में साँपों का डर रहता है। पेड़ों के ऊपर बन्दर उछलते कूदते रहते हैं। मैसूर राज्य की कोलार की खानों में बहुत गहराई पर सोना मिलता है। इसको खोदने का काम मशीनों से लिया जाता है।

सोना अक्सर बालू, मिट्टी और दूसरी मैली धातु से मिला हुआ पाया जाता है। नदी की तली में मिलने वाले सोने को लोग तसलों में भर कर बार बार धोते हैं। इससे बालू और दूसरी हलकी चीज़ें
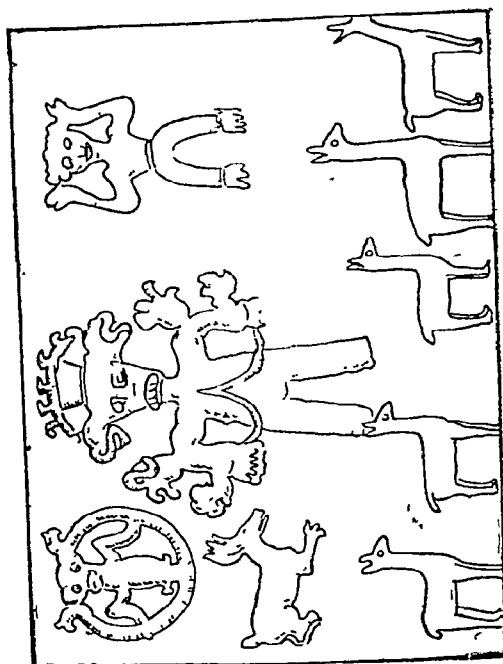
१२—सोने के आभूषण।

बह जाती हैं। भारी सोना बच जाता है। जो सोना खानों के भीतर से निकलता है। उसमें कई कड़ी चट्टानों से रंग चिपके रहते हैं। पहले

१३—रानी शेबा सुलेमान बादशाह को सोना भेंट में दे रही है।
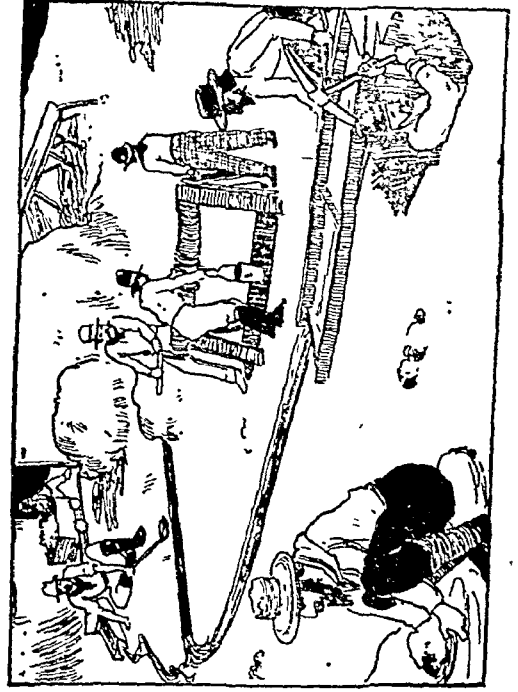
१५—सोना।
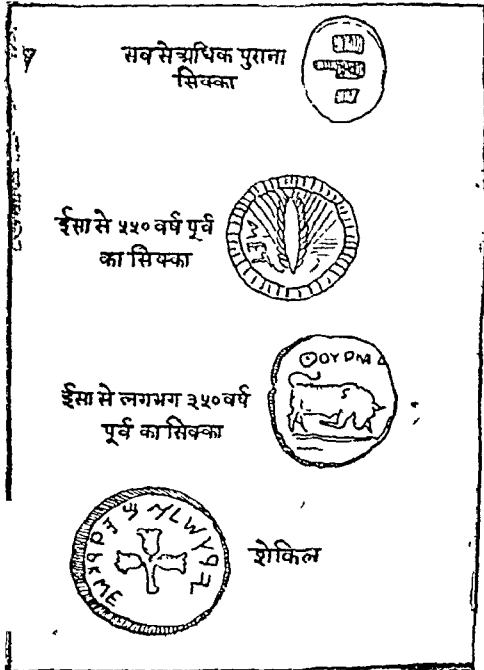
१४—सोने के सिके।
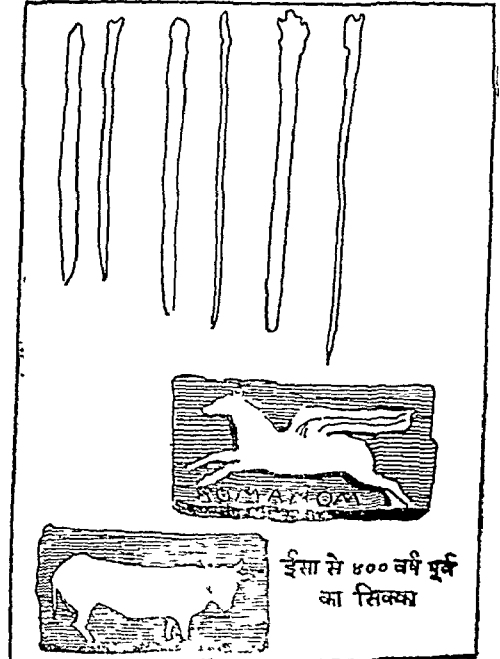
१६—सोने के सिक्के और आभूषण।

पुराने मिस्री लोग पत्थर के घन से चट्टानों को तोड़कर पत्थर की नाँदों में सोना धोते थे। इनको तोड़ा जाता है। फिर सोने को धोकर अलग करते हैं।

पहले पहल सोना आभूषण बनाने के ही काम आता था। फिर सोने के सिक्के (मुहरें) बनने लगीं। आज कल एक देश और दूसरे देश के लेन देन की नींव सोने पर ही स्थित है। आपस की लड़ाई और लूट खसोट से बहुत सा सोना एक देश से दूसरे देश को चला गया। बहुत सा सोना खो गया। फिर भी ज़मीन के भीतर से काफ़ी सोना निकाला जा रहा है।

पहले सोना राजा के खज़ाने और किले में रहता था। आज कल अधिकतर सोना बड़े बड़े बैंकों के तहखानों में रक्खा है। न्यूयार्क में संयुक्तराष्ट्र अमरीका के फेडरल रिज़र्व बैंक के गहरे तहखाने में कई अरब रुपये का सोना रक्खा है। लन्दन के बैंक में भी इसी तरह कई अरब रुपये का सोना मौजूद है। फ्राँस के बैंक में सोना रखने के लिये पेरिस शहर में ठोस चट्टान को काट कर सेन नदी की तली के नीचे बड़ा तहख़ाना बनाया गया है। इसी में वहाँ का सोना रक्खा है।

दक्षिण दिशा में

[विद्या भूषण विभु B. A. F. R. G. S., M. N. G. S.]

(गताङ्क से आगे)

अधिक बोझ भ्रमण में रुकावट डालता है इस लिए ट्रंक और बिस्तर आर्य समाज में छोड़ने का विचार कर लिया, पहने हुए कपड़े के अतिरिक्त २ चादरें १ कम्बल २ कोट २ कमीज २ धोती एक अंगौछे में बाँध लिए। झोले में लोटा गिलास रख लिए। टार्च (Torch) जेब में डाल ली। इस सूक्ष्म सामान के साथ मैंने लंका की तैयारी की। कुली ने ताला पकड़ कर ट्रंक उठाया तो कुन्दा निकल आया। *मैं बड़े असमंजस में पड़ गया। यदि बाजार में ट्रंक* ले जाकर कुन्दा लगवाया तो ट्रेन न पा सकूंगा और यदि बिना ताले के ट्रंक छोड़ता हूँ तो अपरिचित जगह पर सामान खोने का डर है। फिर भी मुझे आर्य पुरुषों की ईमानदारी पर अधिक विश्वास है। ट्रंक बिना ताले के आर्य समाज में पड़ा रहा और जब मैं १५ दिन के बाद लौट कर आया तो सब सामान सुरक्षित मिला।

१२ जून को Egmore station (मद्रास) से २२) रु० में २० दिन का रियायती Travel as you like टिकट लिया। यह summer season टिकट बहुत सस्ता और अच्छा है इससे M. & S. M. Ry. (मद्रास सदर्न मरहठा रेल) और S. I. R. (सदर्न इंडियन रेल) के द्वारा कुल दक्षिण भारत की यात्रा हो सकती है। दिन के ११ बजकर १५ मिनट पर रेल धनुषकोटि को रवाना हुई।

१३ जून को सवेरे पामवन के पास समुद्र को पार करती हुई गाड़ी धनुष कोटि पहुँची। यह रेल का अन्तिम स्टेशन मद्रास से ४६० मील है। यहाँ से स्टीमर तलाई मनार (लंका) को जाया करते हैं। २२ मील की समुद्र यात्रा २ घंटे में समाप्त हो जाती है यहाँ आकर मालूम हुआ कि डाक्टर का सार्टीफिकट और लङ्का की पुलिस का आज्ञा पत्र मण्डपम कैंप (mandapam camp station) पर मिलता है। इन दोनों के बिना लंका में उतरना असम्भव है। मण्डपम कैंप को मैं रास्ते में छोड़ आया था गाड़ी के लौटने में अभी तीन घंटे की देर थी इसलिए कपड़ों को स्टेशन पर रखकर एक नौकर के साथ समुद्र स्नान को चला। २ मील के लगभग चलने पर समुद्र का संगम आया। एक ओर शान्त महोदधि बंगाल सागर बह रहा था। और दूसरी ओर उत्ताल तरंगों वाला रत्नाकर अरबसागर अट्टहास कर रहा था, जब मैं महोदधि में स्नान कर रहा था मैंने देखा कि एक बहुत ही सुन्दर दुध शंख लुढ़कता हुआ जा रहा है। मैंने उसे झट उठा लिया, *वह जिन्दा था, अन्दर से कीड़े ने पैर निकाले वह* मेरी हथेली में छू गए मैंने उसे तुरन्त पानी में डाल दिया और वह लहरों के साथ बहता हुआ चला गया। मैंने अपने स्वार्थ के लिए उसकी जान लेना उचित न समझा। स्नान के पश्चात अन्य मनुष्य तो पंडों के इशारों पर नाच रहे थे मैं किनारे किनारे सीपी, रावण के नाखून और किरीट बीनता हुआ स्टेशन पहुँचा दस बजे गाड़ी में बैठ कर १२ बजकर ३० मिनट पर मण्डपम कैंप आ गया।

मैं स्टेशन से अस्पताल में गया। तीन घंटे बाद डाक्टर साहब से भेंट हुई। उन्होंने कहा ५०) रु० जमा करना होगा और कल टीका लगाया जायगा मेरे बहुत कुछ कहने सुनने पर २५) रु० की जमानत ही स्वीकार कर ली लेकिन टीका से छुट्टी न दी। मैंने यह सोचा कि कहीं टीका के बाद ज्वर आ गया तो अकेले सात दिन तक यहीं पड़ा रहना पड़ेगा टीका लगवाना स्वीकार न किया। स्टेशन पर आकर देखा कि पहले और दूसरे दर्जे के यात्रियों का सब संस्कार स्टेशन पर किया जा रहा है और ट्रेन उनके लिए रुकी रहती है। हम जैसे तीसरे दर्जे के यात्रियों का कोई मूल्य ही नहीं रक्खा। २० दिन कहीं लंका और मण्डपम कैंप के अस्पतालों में ही न बीत जाय और लंका के लालच में दक्षिण भारत भी न रह जाय " माया मिले न राम " यही समझ लौटने की ठान ली। २ घंटे की समुद्र यात्रा में कौन सी विपाक्त महामारी है जिससे गवर्नमेंट इतना भय खाती है। और बेचारे यात्रियों को परेशान करती है कलकत्ता

वम्बई में हजारों मनुष्य आते जाते रहते है परन्तु वहाँ पर कभी टोका का प्रश्न नहीं उठता ऐसी रुकावटें व्यापार तथा समाज की दृष्टि से दोनों देशों के लिए हानि कारक हैं।

मण्डपम कैंप से मैं रामेश्वरम् को लौट पड़ा। पामवन स्टेशन से ही पंडों ने घेरना आरम्भ किया और रामेश्वरम पहुँचते ही पंडे टिड्डीदल की तरह टूट पड़े। असीमित प्रश्नों की वर्षा शुरू हो गई। मैंने कहा कि मैं दर्शन के लिए नहीं आया तो भी उन लोगों ने एक न सुनी मैं जिधर जाता वह दल मेरे पीछे हो लेता। पिण्ड छुड़ाना कठिन देखकर मैंने एक कुली किया और उसके साथ रामेश्वरम् देखने को पैदल चल दिया। निराश होकर वह एक एक खिसकने लगे। अव केवल दो रह गए। वह दोनों उन दो फरिस्तों की तरह जो कि मनुष्य के भले बुरे कामों को लिखते रहते हैं मेरे साथ साथ घूमते रहे। थक कर उनमें एक ने अपना रास्ता लिया वाजार से विना मन्दिर देखे ही मैं स्टेशन की ओर मुड़ा। अपने सव प्रयत्नों को निष्फल देख उसने आग्रह किया कि एक समय के भोजन के लिए ही कुछ पैसे मिल जाय लेकिन मैंने उसे सवक सिखाने के लिए एक पाई भी न दी वह वड़वड़ाता हुआ अपने घर चला गया और मैं जाकर रेल में बैठ गया शाम को लगभग सात वजे त्रिचनापली को चल दिया।

५ वजे सवेरे त्रिचनापली पहुँच कर एक मास्टर के यहाँ सामान रख दिया यह शहर भी अपने अच्छे दिन देख चुका है। यहाँ पर कभी चाँदा साहव का वोल वाला था। चाँद के अस्त होने से यह अमावस्या के अँधेरे में विलीन हो गया। एक भग्न द्वार के अतिरिक्त कोई चिन्ह उन दिनों का स्मरण नहीं दिलाता। समय का फेर यही है यहाँ का Rock temple (पहाड़ी मन्दिर) दर्शनीय है। कावेरी स्नान को गया वहां सैकड़ों स्त्री पुरुष नहा रहे थे पानी वहुत गन्दा था इसलिये मेरी इच्छा उसमें नहाने की न हुई।

एक साथी लेकर श्रीरंगम् क्षेत्र देखने चला, श्री रंगम् त्रिची से तीन मील है। दो आने में मोटर वहाँ पहुँचा देती है। यह दक्षिण का एक प्रसिद्ध मंदिर है। मूर्ति तक पहुँचने के लिये कई, चौक पार करने पड़ते हैं। रास्ते में एक आने के एक दर्जन केले लेकर खाने लगा केले विलकुल फीके थे, अन्य कोई चीज खाने को पास न थी। फेंकना भी उचित न समझा। इतने में उस खान की याद आ गई जो पेड़े की जगह सावुन खरीद लाया था और वेचारा जैसे तैसे उसे खतम करने लगा, किसी ने उसे मुंह वनाते हुये देखकर पूछा 'खान क्या खाते हो ? उसने कहा 'खान खाता क्या है अपना पैसा खाता है' हंसते हंसते मैंने भी कई केले अकेले ही समाप्त कर दिये। शेष केले साथी के हाथ घर भिजवा दिये इस तरह उससे पिंड छूटा। यह नगर S. I. R का Head quarter है उत्तर-दक्षिण का प्रसिद्ध व्यापार-केन्द्र है।

रेल मे मुझे किसी ने यह वताया था कि त्रिवेन्द्रम का चिड़िया घर भारत में सवसे अच्छा है, उसमें ऐसे २ जीव जन्तु हैं जो अन्यत्र नहीं पाए जाते हैं। उनको देखने को मैं व्यग्र हो रहा था इसलिए सवा वारह वजे दिन के त्रिची से चल दिया और रात को साढ़े आठ वजे मदुरा स्टेशन पहुँचा होटल वाला मुझे शहर ले गया।=) कोठरी के।=) आना भोजन के तय हुए सवेरे ।।।) मैनेजर को दिए और १५ जून को आठ वज कर तीस मिनट पर त्रिवेन्द्रम को रवाना हुआ।

दक्खिन में काली मिट्टी के अतिरिक्त लाल मिट्टी (Red laterite) भी पाई जाती है। एक सूखी छोटी नदी लाल धूल से ही ढकी हुई थी और वह वहुत अच्छी लगती थी सामने लाल लाल खेत दिखलाई देते थे दूर दूर गड्ढे लाल जल से पूरित लाल शरवत के प्याले से मालूम देते थे। लाल गुलावी खपरेल लाल दीवालों पर दिल को लुभा रही थी। स्टेशनों की पटरियों पर भी लाल वजरी विछी थी। जिधर देखता था लाल ही लाल दिखलाई देता था। कृषि विभाग के कर्मचारी ने वतलाया कि अगर इस लाल मिट्टी को पानी मिले तो पैदावार के लिए काली मिट्टी से अधिक अच्छी है। काली मिट्टी में पौधों की जड़ें फैलने नहीं पातीं, लाल मिट्टी चिकनी न होने से मुलायम होती है और जड़ों को फैलने का पूरा अवसर मिलता है लेकिन छिद्रमयी होने से पानी अधिक

ाहती है । यहाँ की दो तिहाई भूमि लाल ही लाल है।

ट्रावन कोर राज्य में प्रवेश करते ही चित्त प्रसन्न हो गया। समय बड़ा सुहावना था कभी कभी बूँदें पड़ जाती थीं, गर्मी का नाम न था पहाड़ियों पर सागोन (Teak) रोज वुड कन्द (Rose wood) टहल और जंगली पेड़ हरियाली से आच्छादित थे। झाड़ियों में गुला लताओं में गुत्थम् गुत्था हो रही थी जंगली फूल अपनी स्वाभाविक हँसी से हँस रहे थे। बीच बीच में केले और अनन्नास भी अपनी छटा दिखा रहे थे। कहीं कहीं किसानों के लाल २ घर पृथक पृथक खड़े हुए थे और उनके पास नारियल के पेड़ झूम रहे थे। सुपारी (Areca nut) काजू (Cashewnut) और ताड़ी गोला के वृक्ष अपना निराला सौंदर्य प्रदर्शित कर रहे थे। कहीं कहीं अंधेरी सुरगें पार करनी पड़ती थी। कहते हैं कि इस विकट वन में हाथी और शेर भी पाये जाते हैं। इस निरीक्षण में मि० चक ने मुझे बहुत सहायता दी।

५ बजे से पहले किलन स्टेशन पर हमारी ट्रेन आ गई। लड़कों की टोलियाँ समुद्र स्नान करने को जा रही थीं। क्विलन एक छोटा बन्दरगाह है। रेल में से शहर साफ, सुथरा तथा सुन्दर दिखलाई देता था (Back waters) में नावें चल रही थीं।

जब हम त्रिवेन्द्रम के समीप पहुँचे तो खेतों में अपरिचित पौधे दिखलाई पड़े मैंने मि० चक से पूछा तो उन्होंने बतलाया कि यह (Tapioca) है। इस नाम के सुनते ही मैं फूला न समाया। इसे देखने को मैं अत्यन्त लालायित था। ईश्वर की कृपा से खेत के खेत देखने को मिल गये। मैंने तो यही पढ़ा पढ़ाया था कि पूर्वी द्वीप समूह (East Indies) तथा अफ्रीका में पाई जाती है और वहाँ के लोगों का यह मुख्य भोजन है। पूर्वी द्वीप समूह वाले इसके विष को हटाने के लिए इसको पहले उबालते हैं और फिर खाने के काम में लाते हैं। सुखा कर इसकी रोटी बनाते हैं। (Tapioca) की जड़ सूरत में शकर कन्द की तरह होती है। डाली काट कर आसानी से लगाई जा सकती है लौटते समय (Tapioca) का नमूना लेने का निश्चयकर लिया ट्रावनकोर की (Tapioca) विषाक्त नहीं होती। रात को ७½ बजे त्रिवेन्द्रम के Grand Hotel मे पहुँच गया, ॥) आना प्रति दिन एक कोठरी के और ।≈) आ० खूराक के निर्णय हुए।

१६ जून को सवेरे त्रिवेन्द्रम नगर देखने निकला। पैसे की जगह यहाँ रियासत का सिक्का (चक्रम) चलता है यह सवा दो पैसे का होता है मैं दो चक्रम देकर मोटर में बैठ गया कुछ दूर जाकर उतर पड़ा। छः छः पैसे में हाथी दाँत की एक स्वस्तिका और एक हाथी खरीदे। मनुष्य बहुत मिलनसार थे और आगन्तुक के प्रत्येक प्रश्न का उत्तर बड़ी सभ्यता से देते थे। यहाँ दो प्रकार के लेटरबक्स लगे हुए थे। स्थानीय तथा सरकारी राज्य के बाहर पत्र भेजने के लिए लाल रंग का सरकारी लेटरबक्स था। स्थानीय में डालने से बैरंग हो जाता है। फूलों से परिपूर्ण एक वाटिका में एक सुन्दर गुलाबी भवन खड़ा हुआ है। यही राजमहल है। संतरी बाहर पहरा दे रहा था। अन्दर बिना पास के नहीं जा सकते इस लिए मैंने दूर से ही दर्शन कर लिए। चिड़िया घर (Zoo) के फाटक से एक आदमी मेरे साथ हो लिया। हम दोनों एक दूसरे की भाषा से अनभिज्ञ थे वह समझाने का बहुत प्रयत्न कर रहा था परन्तु मेरी समझ में कुछ न आता था। एक चक्रम में सापों का तमाशा देखा। गुलाबी पेलीकन (Pelican) और पचरंगी तोता दर्शनीय पक्षी थे मैंने कुछ चिड़ियों के पंख माँगे तो उसने 'राजा' शब्द कर दोनों कलाइयाँ मिला दीं यानी राजा हथकड़ी डलवा देगा। Zoo बहुत ही साधारण था। पास ही एक छोटा सा अजायब घर भी था जिसमें चित्रों का संग्रह अच्छा था आस्ट्रेलिया Australia के सारंगी चिड़िया (Lyre bird) की पूँछ का प्रत्यक्ष दर्शन यहीं हुआ, यह बहुत ही सुन्दर थी। वेध शाला (Observatry) देखने गया लेकिन वह बंद थी।

यहाँ पर मुझे मालूम हुआ कि कन्याकुमारी का सूर्यास्त बहुत सुन्दर होता है दार्जिलिंग में सूर्योदय देखने के लिए १२ मील पैदल गया था। कन्याकुमारी लगभग ५० मील है एक रुपये में बस (Bus) ले जायगी। १ बजकर २० मिनट पर कन्या कुमारी के लिये मोटर से चल दिया, ॥।≡) ही देने पड़े। सड़क

के दोनों ओर नारियल तथा अनेक प्रकार के ताड़ के जंगल खड़े हुए थे। जहाँ जहाँ मोटर खड़ा होता था खाने को केले, पीने को नारियल का पानी मिल जाता था।

नारियल को यदि कल्पवृक्ष कहा जाय तो अत्युक्ति न होगा। गरी खाने को, अन्दर का दूध पीने को, जटा की चटाइयाँ बिछाने को, लकड़ी जलाने को, पत्ते छत पाटने को, प्याले, हुक्के तथा अन्य आवश्यक वस्तुएँ इससे प्राप्त होती हैं। अरब के लिये ऊँट, एस्किमो के लिये रेनडियर और दक्षिण वासी को नारियल ही सर्वस्व है। मेडेगास्कर (अफ्रीका) के Travellers tree की तरह खान पान आश्रय तीनों ही इससे मिलते हैं। नारियल की चटपटी चटनी कौन नहीं चाहता। मेरी तृषा को कई बार इसने शान्त किया। इसके तेल से नाना प्रकार के व्यंजन बनाये जाते हैं। ऐसा लाभदायक वृक्ष संसार में शायद ही कोई होगा।

साढ़े सात बजे शाम को कन्याकुमारी पहुँचगया। (Red and Black monazite) मानिक रेती शंखमाला, सीता के चावल, सुइयाँ, गर्भ तथा समुद्र की वस्तुएँ लेकर स्वामी विवेकानन्द हिन्दी पुस्तकालय में रख दीं और गाइड लेकर समुद्र तट को चल दिया। शीतल वायु बह रही थी। समुद्र गर्जना कर रहा था। उत्ताल तरंगें चट्टानों से टकरा कर गिर पड़ती थीं। लवण बिन्दु पवन के सहारे अंग स्पर्श करते थे। यह अंतरीप भारत की सीमा का अन्त है। एक ओर अरब सागर हिलोरें ले रहा था दूसरी ओर गंगा सागर उमड़ रहा था। दो समुद्रों का संगम बहुत ही सुन्दर तथा शान्तिप्रद था। लेकिन सूर्यास्त? कोई विशेष बात नहीं।

इतने में एक अपरिचित व्यक्ति केमरा लिये सामने आया। दोनों ने अपना अपना परिचय दिया। एकाका ने समुद्र की ओर संकेत कर कहा, टेनीसन ने ठीक कहा है, 'Water, water everywhere, not a drop to drink'. मैंने कहा यह पंक्तियाँ कालरिज के Ancient mariners से ली गई हैं, टेनीसन की नहीं हैं। उन्होंने अपनी भूल स्वीकार कर ली। दोनों किनारे किनारे बहुत देर तक टहलते रहे। उन्होंने दो एक चित्र भी लिये। सूर्य डूबने का समय आ गया किन्तु उसमें कोई अलौकिकता न दृष्टिगोचर हुई। मि० काका ने कहा, शायद जाड़ों में जब सूर्य दक्षिणायन होता है कुछ सुन्दरता दिखाई देती होगी। मैंने कहा, हाँ ऐसा हो सकता है। सूर्य के लोप होते ही अंधकार फैलने लगा। हम लोग कुमारी के मंदिर को चल दिये। मंदिर के चारों ओर किले की तरह ऊँची चहार दीवारी थी। जिसके ऊपर चौड़ी २ सफेद और लाल कमीज की तरह खड़ी धारियाँ थीं। एक अंग्रेजी पढ़ा पुजारी द्वार पर खड़ा था। उससे मालूम हुआ कि धोती के अतिरिक्त कुल कपड़े बाहर ही उतार कर रखना होगा। नहीं तो मंदिर के अन्दर नहीं जा सकते। मेरी जेब में ६०) के नोट पड़े थे इस डर से मैंने यह बात स्वीकार न की और बाहर ही रहना पसन्द किया। एकाका ने अपना मनी बेग निकाल कर मुझे दे दिया और कपड़े उतार कर अन्दर चले गये। वह पूजा पाठ तथा दर्शन के बाद बाहर चले आये उन्होंने बतलाया कि देवी के कई हीरे जड़े थे। परन्तु किसी के हाथ अपने रुपयों को छोड़ना मैंने उचित न समझा। परदेश में सहसा किसी का विश्वास करना ठीक नहीं, इसी नीति का मैंने अवलम्बन किया। एकाका कुछ हास्य प्रेमी भी थे। जब उनसे पूछा गया, क्या आप भगवान् के दर्शन को भी जायँगे तो झट बोल उठे मैं भगवान और भगवती में समझौता करने नहीं आया। यहाँ पर एक पौराणिक कथा की ओर संकेत था। यह कन्या भगवान से शादी करना चाहती थी। लेकिन किसी कारण शादी न हो सकी तो उसनें आजन्म कुमारी व्रत धारण कर लिया। उसी कन्या कुमारी का मन्दिर समुद्र के किनारे खड़ा हुआ है मिस्टर काका ने कहा कि मैं १४) रु० का Taxi किराये पर लाया हूँ आप मेरे साथ ही त्रिवेन्द्रम चलिये मैंने यह सोचकर कि कहीं आधा मुझे न देना पड़े कहा कि मैं इतना खर्च नहीं कर सकता। उधर से मैं सिर्फ ॥।=) आने में आ गया था। उन्होंने कहा खर्च करने की कोई आवश्यकता नहीं मैंने पूरी Taxi की है। उसमें जगह है आप बैठ चलिये। मैं सहमत हो गया अपना सामान लेने के लिये काका के साथ पुस्तकालय आया। पुस्तकाध्यक्ष ने दान का रजिस्टर उनके सामने रख दिया। उन्होंने ५) इसमें लिख दिये दस रुपये का

ोट निकाल कर उससे कहा कि शेष रुपया लौटा दिया जाय मैंने भी चार आने दे दिये और अपना सामान लेकर काका की मोटर को चल दिया सिढ़ियों से उतरने चढ़ने में मेरे चोट आ गई टांग में थोड़ा सा रुधिर भी निकल आया। जिससे धोती लाल हो गई मैं दर्द को सहता हुआ मोटर में आ बैठा मुझे डर था कि दौलमौला काका को मालूम हो गया तो वह तुरन्त डाक्टर के पास ले जायँगे और शहर को पहुँचने में देर हो जायगी खर्च भी न जाने कितना पड़ जाय। इसी लिये मैं चुप रहा। अभाग्यवश मोटर भी कई जगह फेल हुई और जैसे तैसे आधी रात के बाद होटल पहुँचे। खाना समाप्त हो गया था इससे निराहार ही सोना पड़ा सबेरा होते ही १७ जून को होटल से स्टेशन आ गया। लाल मिट्टी और Topica न ले सका उनके लेने की उत्सुकता बढ़ती ही जाती थी। मैंने कुली से कहा तुम दौड़ कर कुछ लाल मिट्टी ले आओ तुम्हें कुछ पैसे दिये जायँगे। वह मेरी बात न समझता था और अपनी मजदूरी माँगता था हम लोग एक द्विभाषिये के पास पहुँचे कुली ने अपनी भाषा में शिकायत की कि यह बाबू हमा ी मजदूरी नहीं देता। मैंने उस बाबू को कुल हाल बतलाया तब उसने कुली को समझा दिया कि बाबू तुमको ज्यादा पैसे देगा। तुम दौड़कर थोड़ी सी लाल मिट्टी ले आओ कुली दौड़ा गया और कोई एक सेर मिट्टी भर लाया मिट्टी मेरे पसन्द न आई मैं जैसी लाल चाहता था वैसी न थी। उसमें से दो ढेली या (आध पाव) रख कर शेष फेंक दी कुली को मजदूरी और दो पैसे मिट्टी के देकर विदा किया अब मुझे Topioca की चिन्ता हुई बार २ इधर उधर लोगों से पूछता था तो उत्तर मिलता था कि बाजार यहाँ से दूर है इस समय मिलना मुश्किल है। ३ बाबू मेरे डिब्बे के दूसरे खाने में बैठे थे उनसे जाकर पूछा तो कोई आशा जनक उत्तर न मिला इतने में S. I. R. का एक कर्मचारी उधर से निकला मैंने अपनी इस प्रबल उत्कण्ठा को उसके सामने प्रगट किया उसने फ़ौरन एक लड़के को एक चक्रम का लालच देकर Topioca के लाने के लिये दौड़ाया वह गाड़ी के छूटते २ तीन जड़ें लेकर आ पहुँचा। लड़के को एक चक्रम और बाबू को धन्यवाद देकर मैं कोदई केनाल (Kodaikanal) वेध शाला देखने चल दिया:—

उन तीन बाबुओं ने दराज से झांक कर देखा एक पतले दुबले आदमी के पास बहुत सी चीजों का ढेर लगा हुआ है वह उठ कर खड़े हो गये और मुझसे उन चीजों के विषय मे पूछने लगे। मैंने उनकी शंका दूर की और बात चीत करने को उन्हीं के पास बैठ गया। पारस्परिक परिचय के उपरान्त मैंने उनको बतलाया कि मैं काश्मीर से कन्या कुमारी तक यात्रा कर चुका हूँ। और स्कूल के अजायबघर के लिये यह संग्रह कर रहा हूँ। यह सुन कर उनको बड़ा आश्चर्य हुआ। और वे मेरे उत्साह की सराहना करने लगे। उन्होंने उत्तरी भारत के विषय में कई प्रश्न किये। मैंने उनका संतोषप्रद समाधान किया उन्होंने कहा कि हमारा देश बहुत निर्धन है। और 'कोढ़ में खाज' यह कि नारियल का भाव ६।) सै० से गिर कर १।) रुपया ही रह गया क्योंकि लंका के नारियल ने धावा बोल दिया है। मैंने प्रश्न किया कि इतने खनिज पदार्थ के होते हुये भी देश निर्धन क्यों है—नारियल से ही अनेक उद्योग चल सकते हैं।

उन्होंने लम्बी सांस लेते हुये कहा लोगों में स्वार्थ भरा हुआ है सहयोगिता का नाम नहीं। ट्रावनकोर राज्य में हिन्दी का अच्छा प्रचार है। बहुत देर तक विविध विषयों पर वार्तालाप होता रहा दो बालकें ऐयर और पिलाई तो किलन पर उतर गये तीसरे मि० नैयर जो बैंक में नौकर है कई स्टेशन तक मेरे साथ रहे। रेल से शिव काशी आदि के मन्दिर देखे रात के सात बजे मदुरा पहुँच कर उसी होटल में पहुँच गया।

मदुरा का मीनाक्षी मन्दिर भारत के देवालयों में बहुत प्रसिद्ध है। मैं एक गाइड लेकर रात में ही देखने गया, जूते बाहर रख दिये उस आदमी को समझा दिया था कि मैं मूर्तिपूजक नहीं हूँ इसलिये कहीं पूजा पाठ या पैसे चढ़ाने की बात न करना। लेकिन वह अपने स्वभाव से लाचार था जिस मूर्ति के पास जाता वहाँ चिल्लाता इस पर चढ़ाने से बड़ा पुण्य होता है। यह आरती उतारो यह चरणामृत पियो मैं अन सुनी कर आगे बढ़ जाता यहाँ १५२ फुट

ऊँचा गोपुरम् स्वर्णाभ कमलिनी से युक्त तड़ाग तथा सहस्त्र स्तम्भी भवन उल्लेखनीय हैं मन्दिर देखने के बाद शहर का चक्कर लगाया। दक्षिण में मद्रास के बाद तंजौर या मदुरा का ही नम्बर बताया जाता है। १८ जून को पौने नौ बजे कोदई केनाल रोड को चल दिया। मदुरा मिल्स देखने को समय न मिला।

दिन के ११ बजे कोदई केनाल रोड पहुँच गया। यहाँ पर चार पैसे के ५. बालबेरी खरीदे। यह फल नासपाती की तरह होता है। खाने में अधिक स्वादिष्ट नहीं लगा। एक घंटे के बाद १॥) में नेयर मेल मोटर (Nair mail motor service) में बैठकर कोदई केनाल चल दिया रास्ते में सैकड़ों चरी, ज्वार के से बोझ पड़े हुये थे। मोटर वाले ने उनमें से कुछ मोटर में लाद लिये मैंने उससे पूछा यह क्या है। उसने कहा एलम, मैं कुछ न समझा, दूसरे पड़ाव पर महकमा जंगलात का एक कर्मचारी मोटर में बैठ गया मैंने उससे भी वही प्रश्न किया उसने कहा यह इलायची है। इलायची देख कर मुझे बड़ा हर्ष हुआ क्योंकि उसके देखने की बड़ी उत्कंठा थी मोटर वाले के एलम का अर्थ अब मेरी समझ में आया यह संस्कृत के एला (इलायची) से बना है। इलायची के लिये कुछ छाया होनी चाहिये। यह बड़े पेड़ों के नीचे लगाई जाती है। फल जड़ के पास ज़मीन के ऊपर लगते हैं।

मोटर ऊँचाई पर चढ़ रही थी दिन के साथ साथ गर्मी भी घट रही थी। आकाश मेघाछन्न था और कभी कभी बौछार आ जाती थी। रंग बिरंगे फूल चारों ओर प्रसन्नता से स्वागत कर रहे थे, पहाड़ी धारा के रजत जल से मधुर संगीत निकल रहा था। चार बजे कोदई केनाल पहुँचा और अपना सामान नायडू हिन्दू होटल में रख कर वेधशाला (Observatory) गया।

यह वेधशाला एक ऊँची चोटी पर बनी हुई है भारत में एक यही स्थान है जहाँ पर तारों का निरीक्षण किया जाता है और यही समझ कर मैं उसे देखने गया था। बाहर साइनबोर्ड पर यह पढ़ कर कि जनता शुक्रवार को ही देख सकती है। मैं बहुत उदास हो गया। कई दिन तक रुक नहीं सकता था। मैं आगे बढ़ा। जगह जगह भांति भांति के यन्त्र लगे हुये थे। एक कमरा खुला देखकर उसके अन्दर गया। वहां के बाबू कुछ काम कर रहे थे। मैंने एक के पास जाकर अपना परिचय दिया और आने का उद्देश्य बतलाया, उन्होंने कहा छुट्टी हो चुकी है दफ़्तर बंद हो चुका है अतः आज आप न देख सकेंगे, कल आप डाइरेक्टर से मिल लीजिये वह आप को सब चीजें देखने की आज्ञा दे देंगे। परन्तु मि० खाँ कुछ दयालु थे। उन्हों ने कहा आप बड़ी दूर से आये हैं २० मिनट ठहरिये मैं इस काम को कर लूं तो आप को कुछ यंत्र अभी दिखला दूंगा। मैं कुर्सी पर बैठ गया। मि० खाँ थोड़ी देर बाद मुझे भूकंप यंत्र (Seismograph) के पास ले गये। इससे भूडोल की दूरी, दिशा वेगादि सब बातें मालूम हो जाती हैं। फिर उन्होंने कई एक विचित्र यंत्र तथा सूर्य के चित्र दिखलाये इन चित्रों से प्रगट होता था कि सूर्य में भी गति है। तदुपरान्त वे मुझे अपने घर ले गये और अतिथि सत्कार किया।

सूर्यास्त के बाद मेरे साथ फेरी (परी) प्रपात तथा झील तक घूमने गये यहाँ इसाइयों का एक बड़ा कालेज है जहाँ २५० ईसाई पादरी का काम सीखते हैं। अंधेरे के साथ साथ सर्दी भी बढ़ती जाती थी। हवा और बूंदों ने उसे और भी मदद पहुँचा दी मेरे दाँत बजने लगे और शरीर काँपने लगा। जाड़े का कोई वस्त्र मेरे पास न था, मि० खान ने कहा कि आप को सर्दी लग रही है। मैंने उत्तर दिया कोई बात नहीं थोड़ी देर में आदी हो जाऊँगा। मुझे दृढ़ विश्वास था कि एक रात तो सिकुड़ कर ही काट सकता हूँ मुझे होटल तक पहुँचा कर वह अपने घर चले गये। उनका हिन्दी प्रेम इससे प्रगट होता है कि उन्होंने मुझसे अपनी हिन्दी पुस्तकें भेजने का बड़ा आग्रह किया।

२९ जून को बड़े सवेरे उठा और पार्क में पहुँचा इस वाटिका में विविध प्रकार के फूल खिल रहे थे कुछ विदेशी वृक्ष भी अपने देश की स्थिति बतला रहे थे।

यूकलिप्टस ने कहा मेरी जन्मभूमि आस्ट्रेलिया गर्म देश है। सूर्य से बचने के लिए मुझे अपनी पत्तियों के किनारे खड़े रखने पड़ते हैं। चीड़ ने कांपते

हुए कहा ओह: मेरे देश में तो इतनी सर्दी पड़ती है कि रोंगटे खड़े हो जाते हैं और जाड़ों में तो बर्फ की सफेद चादर ओढ़नी पड़ती है अगर यह सुइया (नुकीली पत्ती) न होती तो कब का मर गया होता। कटीला कीकर कहने लगा अगर मेरे यह त्रिसूल न होते तो कबका सूख कर ठठरी रह जाता। चौड़े पते वाला बृक्ष बोला मैं तो इन्द्र के मोतियों को खुले हाथों लुटाया हूँ। मुझे आठ बजे मोटर से स्टेशन लौटना था इसलिये वहाँ अधिक न रह सका। मि० खान की वातों से मालूम हो गया था कि इस वेधशाला में सूर्य का ही निरिक्षण परीक्षण होता है अन्य तारों का नहीं इसलिये मेरी पूर्व की उत्सुकता जाती रही और ९ बजे मोटर से चलकर १२ बजे स्टेशन गया। दो घंटे वाद रेल मिली और रात को ८ बजे रामेश्वरम् आ गया इस बार पंडों ने तंग नहीं किया। मैं स्टेशन के समीप सरकारी धर्मशाला में ठहर गया।

२० जून के सवेरे पाम्बन (Pamban) आया। एक गाइड को साथ लेकर क्रुसेदाई (Crusadei) द्वीप को पैदल चला। यह मूंगे का द्वीप स्टेशन से ३ मील होगा। गाइड के विना वहाँ पहुँचना कठिन है आठ आने में तय करके मैं उसके साथ साथ समुद्र के किनारे किनारे चल दिया तट पर समुद्र फेन, रावण के नाखून और किरांट, झाग, सीपी तथा अन्य छोटे जल जीव ढेर के ढेर पड़े थे। थोड़े थोड़े नमूने मैने और नौकर ने एकत्रित किये। विचित्र प्रकार के ताड़ खड़े हुये थे। बोझ होने के डर से मैंने उनका कोई नमूना नहीं रक्खा।

झाग रुई के नमदे सा समुद्र तट पर पड़ा हुआ था। दो मील चलने के बाद मुझे मालूम हुआ कि मेरा अंगोछा गिर गया है इतने में दूसरी ओर से एक नाव दिखाई दी। नौकर को तो अंगोछा खोजने वापिस भेजा और मैं नाव में बैठ गया। नाव वाले ने पूछा क्या आप के पास pass है तब मैंने समझा कि यहाँ भी pass की आवश्यकता होती है। मैंने कहा वहाँ देखा जायगा। परन्तु यह बात नहीं थी Pass तो Director of fisheries, Madras से मँगाना पड़ता है और विना आज्ञा के कोई मनुष्य उस द्वीप पर उतरने नहीं पाता। Assistant biologist से बातें करता करता मैं उसके दफ्तर में पहुँच गया वहाँ एक छोटा सा Biologist museum था। उसको मैंने थोड़ी देर तक निरीक्षण किया Pass न होने के कारण मैं द्वीप में घूमने न पाया और उसी नाव से वापिस लौटा दिया गया। द्वीप के तट से मैंने तीन चार प्रकार के मूंगे नमूने के लिये और एक सरसरी दृष्टि उस प्रवाल द्वीप पर डाली वहाँ नारियल ही नारियल दिखलाई देते थे। मूंगे की मिट्टी और समुद्र का खारा पानी दोनों ही उसके लिये अनुकूल हैं। मि० वरदराजन Research assistant ने नारियल का स्वादिष्ट जल पिलाया मैं धन्यवाद देकर नाव में बैठ गया और उसी जगह पर आ उतरा जहाँ से चला था। नौकर ने सूचना दी कि अंगोछा नहीं मिला। समुद्र के विचित्र भंडार से कुछ संग्रह करते हुये हम लौट रहे थे बीच बीच में खारी लहरें पैर धो जाती थीं:

मुझे यह चिन्ता थी कि मूंगे का कोई अच्छा नमूना हाथ न लगा। समुद्र छूटने ही वाला था सिर्फ चार पांच गज का एक कोना और पार करना था, अपनी पंक्तियों को दुहराने लगा:—

बड़ी बड़ी आशा ले आये, जाते हैं सब कुछ छोड़े।
सुना सुना कर सब कहते हैं नाम बड़े दर्शन थोड़े॥
जनक ढपोर शंख का,खारी,कौड़ी, घोंघों का घर है।
या दिवालिया सेठ पुराना, यह दरिद्र रत्नाकर है॥

पानी में पैर रखते ही एक कोने में मनुष्य के सिर से बड़ा मूंगे का एक टुकड़ा दिखलाई दिया आनन्द से उछल कर उसको उठा लिया और नौकर के हवाले किया। अंतिम पंक्तियां पढ़ने लगा।

प्रगट रंकता कर देते हैं, रत्नाकर शंबुक तेरे।
जगमें नाम धराते मुझको, इसी तरह अवगुण मेरे॥

पाम्बन १० बजे आ गया और रेल में बैठ कर रामेश्वरम् लौट आया यहां पर मैने मूंगे के दो नमूने और खरीदे। यह सामान एक ताड़ की पिटारी में रख लिया और प्रसिद्ध रामेश्वरम् मन्दिर देखने चला। पट तो उस समय बंद थे। किले का चक्कर लगा आया, सारा दिन नारियल के पानी पर ही बीता था। होटल में भोजन को गया। दो आने का एक हनूमान का रोट जैसा पराठा मिला, वह भी ठंडा, खाया तो दाँत किरकिराने लगे, ऐसा ज्ञात होता था

कि आधी मिट्टी मिला दी है भूख में किवाड़ भी पापड़ हो जाते हैं। बड़ी मुश्किल से उस भीमसेनी पराठे को समाप्त किया और धर्मशाला से सामान लेकर स्टेशन को रवाना हुआ। पामवन पर गाड़ी बदल गई।

पामवन द्वीप एक छोटा जंकशन है, इससे ट्रेन रामेश्वरम् धनुपकोटि तथा उत्तर की ओर मदुरा आदि को जाती है इसके समीप समुद्र पर एक मील लम्बा पुल है जो जहाजों के जाते समय उठ जाया करता है उसके ऊपर जाते समय डिब्बों के दोनों ओर ताले बंद कर दिये जाते हैं ताकि कोई आदमी दरवाजा खुल जाने से समुद्र में न गिर पड़े। लहरों के शोर से और पवन के प्रचन्ड वेग से रात बहुत भयंकर लगती है लोग खिड़कियाँ बन्द कर लेते हैं परन्तु मुझे सबसे अधिक आनन्द इसी पुल पर आता था। खिड़की के उत्तर देखता था कि सप्तर्षि ध्रुव का चक्कर लगा रहे हैं दक्षिण की खिड़की से त्रिशंकु दिखलाई देते थे, उत्तर और दक्षिण ध्रुव के तारे निर्मल आकाश में जगमगा रहे थे।

ग्राहकों को सूचना

साल के आरम्भ में प्रति वर्ष भूगोल का विशेपांक निकलता है। इसका आकार बड़ा होने के कारण तीन महीने (मई, जून, जुलाई) का अङ्क एक ही निकाला जाता है। कृपया ग्राहकगण मई, जून के भूगोल की प्रतियाँ अलग मंगाने के लिये लिखने का कष्ट न करें।

मैनेजर

जातियों का कोष

(गताङ्क से आगे)

दरद—उत्तरी पश्चिमी हिन्दुस्तान के पहाड़ी लोग जो पिशाच भाषा बोलते हैं।

द्राविड़—दक्षिण भारत के लोग। इनकी भिन्न भिन्न जातियाँ कनारी, कोटा, टोडा, तुलू, तामिल, तेलिगू, कुरुख, माल्टो और गोंडी आदि भाषायें बोलते हैं।

दिओला—गोम्बिया के मुहाने पर सूडानी बोलने वाले लोग। इनकी भाषा आधी बान्टू होती है।

दिन्का—खार्टूम. गोन्डो केरो और बहरु गज़ल के प्रदेश में बसे हुये जींग या जिन्गो लोग। ये लोग बड़े लम्बे होते हैं। ढोर पालने वाले दिन्का लोग उन लोगों से बड़ी अच्छी हालत में होते हैं जो केवल मछली मारकर या दरियायी घोड़े का शिकार करके पेट भरते हैं। मछली मारने वाले लोग नरकुल के छोटे छोटे घर बनाकर रहते हैं। और ढोर पालनेवाले दिनका लोग अपने को तैन कहते हैं। और शिलूक लोगों को घृणा की दृष्टि से देखते हैं। अगार, बोर, शीश और अलियाब भी दिन्का लोगों के फिरक़े हैं।

नगोम्बे—मध्य कोंगो के बांटू बोलने वाले लोग। नगोम्बे शब्द का अर्थ है झाड़ी में रहने वाले।

न्यीका—ताना नदी के पास रहने वाले वागीरियामा, वेडिगो आदि लोग।

नन्दी—एलगन् पर्वत के पास रहने वाले पूर्वी अफ्रीका के लोग।

नागा—ब्रह्मपुत्र के दक्षिण में पहाड़ी प्रदेश के रहने वाले लोग।

नापो—नापो नदी के पास रहने वाले लोग। इन लोगों के अलग अलग घर नहीं होते हैं। इनके यहाँ एक बड़ा लम्बा गोलाकार घर होता है। यह घर १० गज़ ऊँचे और ६० गज़ घर में होता है। इसी में सारा कुटुम्ब रहता है।

नास्कोपी—लेब्राडोर के रेड इंडियन लोग।

नाहुआ प्रदेश—मध्य अमरीका का वह प्रदेश जिसमें अज़टेक और माया के वंशज रहते हैं।

नाचेज़—लोअर मिसिसिपी के पड़ोस में रहने वाले मस्केजियन लोग। ये लोग सूर्य की पूजा किया करते थे।

नायर—मालाबार तट के फौजी लोग।

नार्डिक—उत्तरी योरप की गोरी और लम्बे सिरवाली जाति।

नार्वेजियन—नार्वे के लोग।

निओसाइबेरियन—मध्य एशिया के लोग जो साइबेरिया में बस गये हैं। ओस्टयाक, याकूट और योगुल आदि लोग इन्हीं में शामिल हैं।

नीग्रो (हब्शी)—मध्य और पश्चिमी अफ्रीका के काले लोग।

नुआरोक—दक्षिणी अमरीका के अरावक लोग।

नूपे—मध्य नाइजर के लोग।

नूबा—कार्डो-फान के वर्ण संकर लोग।

नेदरलैंडर—हालैन्ड और बेलजियम के लोग जो फ्रिशियन, डच, फ्लेमिश और वालन भाषा बोलते हैं।

नेवार—नैपाल के लोग।

नेग्रिटो—अफ्रीका के बाहर वाले हबशी लोग।

नेग्रिलो—अफ्रीका में भूमध्य रेखा के बन में रहने वाले हबशी। इनका क़द ४ फुट ४ इंच से ४ फुट ६ इंच तक होता है।

नोसू—उत्तरी पूर्वी चीन के लोग।

(प)

पश्चा—जार्जियन लोग।

परमिअक—पर्म के निकट रहने वाले फिनिक लोग।

प्राकृत—हिन्दुस्तान की असंस्कृत भाषायें।

पहाड़ी—निचले हिमालय की भाषा।

पाडौंग—ब्रह्मा के लोग। इनकी स्त्रियाँ पीतल के बहुत से मोटे कड़े पहनती हैं।

पापुआन—न्यूगिनी के लोग।

पारसी—सूर्य के उपासक प्राचीन ईरानी लोग।

पालिनेशिया—दक्षिणी द्वीपों के वर्णसंकर हबशी लोग।

पालौंड—ब्रह्मा के वे लोग जो ऊपरी और मध्य मीकौंग की घाटी में रहते हैं। ये लोग बड़े मेहनती और

शान्त होते हैं। वे लोग मेड खमेर भाषा बोलते हैं।

पावनी—मैदान के इंडियन लोग। ये लोग मक्‍ई की खेती करते हैं।

पासुमा—कोरिंची के दक्षिण में सुमात्रा के लोग।

पिगमी—भूमध्य रेखा के बौने लोग।

पिगमी—मध्य अफ्रीका और मलय प्रदेश के बौने लोग।

पिसाच—भारत की संस्कृतेतर भाषायें।

प्रीड्रविडियन—द्राविड़ों से पहले के प्राचीन लोग।

पुर्चगीज़—पुर्चगाल के रहने वाले लोग।

पुनान—बोर्नीयो के शान्त लोग।

पेपो—फारमूसा के दक्षिणी मैदान के असभ्य लोग।

प्लेन्सइन्डियन—मिसिसिपी प्रदेश के अमरीकन इंडियन।

पेलिओसाइबेरियन—साइबेरिया के पुराने लोग जिन में चुकची, कोर्याक, कमचडल, ऐनू, गिलियाक, एस्किमो और दूसरे लोग शामिल हैं।

पैवान—फारमूसा के दक्षिणी सिरे के असभ्य लोग। ये लोग अपने कान में लकड़ी की १ इंच मोटी बाली पहनते हैं। ये लोग अपने शत्रुओं के सिरों को पत्थर के सन्दूकों में रखते हैं।

पोल—पोलैंड के स्लैव लोग।

पंजाबी—पंजाब के लोग।

(फ)

फलाशा—एबीसीनिया के अगाओ या हेमायटिक लोग ये लोग अपने को उन यहूदियों की संतान बताते हैं जो शेव एनीकेस्थ से आये थे।

फान—यू भाषा बोलने वाले डहोमा के लोग।

फान्टी—गोल्ड कोस्ट के हबशी लोग जो असान्टी लोगों के सम्बन्धी हैं। ये लोग असान्टी लोगों के समान लड़ाका नहीं होते हैं। पर ये सारे हबशियों में बुद्धिमान होते हैं। वे चतुर व्यापारी होते हैं। इनमें अधिकतर लोग पढ़े लिखे होते हैं।

फिजियन—लम्बे सिर वाले मेलेनेशिया के पूर्वी सिरे पर रहने वाले लोग।

फिन (फिनो)—उग्रियन लोग जो मध्य एशिया से चलकर योरप में आ बसे। वर्तमान फिन लोग एस्थोनियन लिवेनियन और लैप-लोगों से मिलते हैं।

फिनिक जातियाँ—फिनलैंड के लोगों के अतिरिक्त जिरियन, परमियक वोटयाक करमिस मोर्डविन, चुवास आदि लोग।

फुंज—सेनार (सूडान) के लोग।

फूला—फुल्बे नाम के फिलानि या हासा लोग।

फ्रेंच—फ्रांस निवासी।

फ्लेमिश—जर्मन की भाषा।

फ्लेमिङ्ग—बेल्जियम के उत्तर में बसने वाले लोग।

फंग, पंगवे, पहूइन—ओग्वे और सनागा के बीच में बाँटू भाषा बोलने वाले लोग।

(ब)

बख्तियारी—सूसियाना, लूरिस्तान (ईरान) के निवासी।

बग्गर—एक अरबी फिरका जो दार फूर सूडान में रहते हैं। बग्गर शब्द का अर्थ गोपाल या ढोर रखनेवाला है

बगेसू—पूर्वी अफ्रीका में एल्गोन पर्वत के पूर्वी ढालों पर रहने वाले बाँटू भाषा भाषी लोग। पहले वे ढोर चराते थे। आज कल वे खेती करते हैं।

बघिर्मी—चाड झील के दक्षिण पूर्व में सूडानी भाषा बोलने वाले लोग। वे घोड़े पर सवार होकर ज़हरीले भालों से घोड़े का शिकार करते हैं।

बजाऊ—बोर्नियो के पश्चिमी तट पर रहने वाले मलाया लोग।

बजावी—न्यान्जा प्रदेश के बाँटू भाषा भाषी लोग।

बटक—सुमात्राद्वीपी के बट्टा लोग।

बटवा—उरूँडी (पूर्वी अफ्रीका) के बौने लोग।

बट्टा—(१) पश्चिमी अफ्रीका में मध्य बेन्यू के पास वाले लोग।

(२) सुमात्रा के लोग जिन्हें बटक भी कहते हैं

बटूसी—पूर्वी अफ्रीका के उरूँडी लोग। जो बहुटू लोगों पर शासन करते हैं।

बटेटेला—बेल्जियम काँगो में संकुरू के पूर्व बाँटू भाषी लोग।

बदख़शी—ऊपरी आक्सस के पास रहने वाले गोल सिर वाले-लोग।

बदगा—नीलगिरी (दक्खिन) के किसान लोग।

बदजोक—मध्य अफ्रीका में कसाई के पास रहने वाले बाँटू भाषी लोग। इनका कद छोटा होता है। लेकिन ये

बड़े निडर लड़ाका होते हैं। ये हाथी का शिकार और रबड़ का व्यापार करते हैं।

बन्डा—युबांगी के उत्तर में फ्रांसीसी मध्य अफ्रीका में रहने वाले लोग।

बम्बाला—क्विलू नदी के पास पश्चिमी अफ्रीका में रहने वाले बाँटू भाषा भाषी लोग। ये लोग बड़े दयालु होते हैं।

बयाऔी—अफ्रीका के बोबौंगी और कसाई आदि लोग।

बराबा—नूबिया के लोग।

बरूंडी—पूर्वी अफ्रीका के बाँटू लोग।

बरोट्सी—विजयी बाँटू लोग।

बर्बर या लिबियन—उत्तरी अफ्रीका के बर्बर या अरबी भाषा बोलने वाले हेमायटिक लोग। बर्बर से अरबी लोग अधिक ऊँचे और लम्बे सिर वाले होते हैं। एक हजार वर्ष से साथ रहने पर भी अरबी और बर्बर लोग बहुत कम एक दूसरे से हिलते मिलते हैं।

बलाँगी—स्पेनिश गिनी के लोग जो काम्पो और गिरि नदियों के बीच रहते हैं।

बलाली—कौंगो नदी के उत्तरी तट के लोग।

बश्कीर—रूस के मिश्रित लोग।

बसा—क्रू के पास रहने वाले बाँटू लोग।

बसूटा—आरेञ्ज नदी के पूर्व, दक्षिण पूर्व अफ्रीका के बाँटू भाषी लोग।

बसुंडी—निचली कौंगो के बाँटू भाषी लोग।

बहुतू—पूर्वी अफ्रीका में उरूँडू प्रदेश के लोग। जिन पर बतुसी लोग शासन करते हैं।

बहुरुत्से—बेचवाना लैंड के बकवेना लोग।

बाइशी—कौंगो नदी के दक्षिण में कांगो और समुद्र तट के बीच में रहने वाले लोग।

बाइला—उत्तरी रोडेशिया के बाँटू भाषा भाषी लोग। ये लोग ऊपर के ६ दांत निकाल डाला करते हैं।

बाकूब—बेल्जियन कौंगो के बालूबा लोग।

बाकुसू—स्टैनले प्रपात के पास याकुसू के लोग।

बाकुलिया—पूर्वी अफ्रीका के बाँटू भाषा भाषी लोग।

बाकौंगो—मध्य अफ्रीका का बेली कुटुम्ब।

बाँकुटू—बेल्जियन कांगो में ऊपरी लुकन्यी के पास रहने वाले लोग।

बाचमा—नाइजीरिया के उत्तरी प्रान्तों के पास रहने वाले लोग। ये बेन्यू-चाड समूह की भाषायें बोलते हैं।

बाजीरी—युबांगी (मध्य अफ्रीका) के बांटू भाषी व्यापारी लोग। ये लोग बड़े चतुर किसान और पानी खींचने वाले होते हैं।

बाड़ा—मैडेगास्कर द्वीप के दक्षिण और मध्य में रहने वाले लोग।

बान्टू—मध्य और दक्षिणी अफ्रीका के लोग।

बान्योरो—यूगांडा के बाँटू भाषा भाषी लोग।

बापिन्डी—किल कसाई के बांटू भाषा भाषी लोग। ये लोग बड़े चतुर जुलाहे होते हैं।

बापूको—स्पेनिशगिनी के बाँटू भाषी लोग।

बाबा—चीनी से उत्पन्न मलय लोग।

बाबुन्दा—मध्य अफ्रीका के कसाई व क्विलू प्रदेश के रहने वाले बान्टू भाषा भाषी लोग। ये लोग बड़े लम्बे और लड़ाका होते हैं। ये लोग रबड़ का व्यापार करते हैं। इनके घर नहीं होते हैं। ये अपने बगीचों के बीच में रहते हैं।

बाल्ती—बाल्तिस्तान लद्दाख के लोग।

बालुआ—बेल्जियन काँगो के दक्षिण-पूर्व में रहने वाले लड़ाका लोग।

बालुन्डा या आलुन्डा—उत्तरी रोडेशिया में बैंगव्यूलो झील के दक्षिण पश्चिम में रहने वाले बाँटू भाषी लोग।

बास्क—स्पेन और फ्रांस की पिरेनीज़ के पास का प्रदेश।

बेटसीमिसिरका—मैडेगास्कर के पूर्वी भाग में रहने वाले मैदान के लोग इन का रंग कुछ हल्का और बाल खड़े होते हैं।

बेंगा—बनोहो, बन्नोको, मलिम्बा आदि स्पेनिशगिनी के लोग। ये लोग बनिटो नदी और कोरिस्को की खाड़ी के बीच में रहते हैं।

बेचुआना—जेम्बज़ी से आरेञ्ज नदी तक फैले हुये बसूटो आदि लोग।

बेजा—पूर्वी अफ्रीका के हेमायटिक लोग। इन में हम्ब, बदेंह, बिशरिन, हेडेनडोआ, हेलेंडा और बेनी अमेर भी शामिल हैं।

बेल्जियन—नेदरलैंड या बेलजियम के लोग।

बंगाली—बंगाल प्रान्त के निवासी।

भ

भील—ये लोग बड़े चतुर शिकारी होते हैं और जंगल, पहाड़ या मैदान में निडर घूमते हैं।

भूटिया—तिब्बत के पहाड़ी लोग। इन का सिर गोल और ५ फुट ४ इंच ऊँचा होता है। इन के गाल गुलाबी और बाल घूँघुर वाले होते हैं। लासा के पास वाले दक्षिण पूर्व के लोग सभ्य होते हैं। उत्तर-पश्चिम के लोग घुमक्कड़ होते हैं।

म

मकरका—अजान्दी लोगों से मिलने वाले सूडान के लोग।

मकासर—सेलेबीस के दक्षिणी प्रायद्वीप के लोग। कहा जाता है कि ये लोग अपने बच्चों की नाक को दबा दबा कर चपटी कर देते हैं।

मकुआ—मुज़म्बीक के बाँटू लोग।

मकूसी—केरिब-भाषा बोलने वाले गायना प्रदेश के लोग।

मको लो लो—बसटो लोगों की एक उपजाति।

मन—असभ्य मनुष्य।

मन्डन—मैदानी रेड इंडियन लोग।

मन्डय—फिलीपायन लोग।

मनोबो—फिलीपायन द्वीप के इन्डोनेशियन लोग। इनका माथा ऊँचा और नाक सीधी होती है।

मफूलू—न्यूगिनी के मम्बुलो लोग। ये लोग अयर-सेन्ट जोजेफ़ के प्रदेश में रहते हैं।

मबुन्दू—अन्गोला की भाषा।

मयोंगवे—गाबून प्रदेश के बान्टू बोलने वाले लोग।

मराठा—(महाराष्ट्रीय) महाराष्ट्र के लोग।

मलय—मलय द्वीप के लोग।

महफल—मेडेगास्कर के दक्षिण में रहने वाले लड़ाका लोग।

मलयालम—मलाबार तट के लोग।

मवम्वा—ब्रिटिश मध्य अफ्रीका के बवण्डा लोग।

मशूकोलुम्व्वे—रोडेशिया के बाँटू भाषा भाषी लोग। ये लोग शंकु के समान अपने सिर के बाल बना लेते हैं।

मशोना—अफ्रीका के दक्षिण-पूर्व के रहने वाले शान्त लोग ये लोग चट्टानों के बीच में घर बनाते हैं।

मसाई—पूर्वी अफ्रीका के होमायाटिक लोग।

मसावा—कार्वारोंडो की बान्टू भाषा।

मसीम—न्यूगिनी (ट्रोब्रियण्ड द्वीप) के लोग।

मस्कोजी—संयुक्त राष्ट्र अमरीका के दक्षिण-पूर्व में रहने वाले रेड इंडियन लोग। इनमें चोकटा क्रीक आदि लोग शामिल हैं। जो ओकला हामा को भेज दिये गये।

माओरी—न्यूज़ीलैंड के मूल निवासी।

माइक्रोनेशियन—गिल्बर्ट, मार्शल, केरोल और नाइ मेरियन द्वीप के निवासी। इनका कद छोटा लेकिन सिर बड़ा होता है।

माजिया—सूडानी बोलने वाले फ्रेंच कांगो के लोग।

माँचू—मंचूरिया के लोग

माटावेले या अमराडेबेल—अबाकवा जुलू लोग। उन्नीसवीं सदी में वे अपनी स्वाधीनता खो बैठे।

माया—ग्वाटे माला के छोटे सिर वाले लोग। ये लोग अपनी प्राचीन सभ्यता के लिये प्रसिद्ध हैं।

मारकिसस-द्वीपीय—पालीनेशियन जाति के लोग।

माल्टी—माल्टा के लोग।

माल्टो—राजमहल के लोगों की भाषा।

मिकीर—आसाम के आलँग लोग जो खासी लोगों से कुछ बड़े होते हैं।

मिक्सी—मेक्सिको पठार पर रहने वाले लोग।

मिक्सटेक—मेक्सिको के पढ़े लिखे और उन्नति शील लोग।

मिट्टू—सूडान में रोहल और रोह नदियों के बीच में रहने वाले लोग। यह प्रदेश दिन्का लोगों के देश मे मिला हुआ है।

मिन्हासा—सेलेबीस द्वीप के मेलेपालिनेशियन लोग। इन लोगों की आँखें भूरी और बाल काले होते हैं।

मिश्मी—आसाम की उत्तरी सीमा पर रहने वाले मोडू, मिथुन, ताइंग और मीजू लोग।

मिंग्रेलियन—रिओन घाटी के जार्जियन लोग। ये लोग बड़े मजबूत और हँसमुख होते हैं। पर वे सुस्त और अज्ञान होते हैं। कुछ शहरों में कुली का काम करते हैं।

मुमूयी—उत्तरी नाइजीरिया के कुंगुम या जागुम लोग। ये लोग याम का भोजन करते हैं। और दूध बहुत पीते हैं वे लोग अपने मुर्दों को खाली कब्र में छोड़ देते हैं केवल लाश के ऊपर एक पत्थर छोड़ देते हैं।

मुराड्रू क्रू—दक्षिणी अमरीका के टेपे होज लोग।

मुन्थी—नाइजीरिया के उत्तरी प्रान्तों के तिवी लोग। ये लोग वन्यू नदी के दक्षिण में रहते हैं इनकी संख्या लगभग तीन-चार लाख है। ये लोग बड़े लड़ाका होते हैं और ढोल बजा कर खबर भेजते हैं।

मुरूत—बोर्नियो के काञामाएटन लोग। ये लोग नदियों के किनारे लम्बे घर बना कर बड़े कुटुम्ब के साथ रहते हैं।

मुहमन्द—अफ़ग़ानिस्तान की एक जाति।

मेईथेई—मनीपुर राज्य के लोग। इनकी स्त्रियां खेती और व्यापार करती हैं।

मेलेनेशियन—पच्छिमी प्रशान्त महासागर के लोग।

मेनाङ्ग कवाऊ—सुमात्रा द्वीप के दक्षिणी पच्छिमी पठार पर रहने वाले असली मलय लोग।

मेंडी—सियरालिओन के पूर्व में रहने वाले लोग, जो अक्सर बोझा ढोया करते हैं।

मेंटावेई द्वीपीय—वे लोग जो मलय प्रायद्वीप के सामने वाले द्वीपों में रहते हैं।

मेक्सिकन—मेक्सिको देश के रहने वाले लोग। पुराने लाग अजटेक और नये लोग योरुपीय हैं।

मेरोनाइयट—लेबनान के उत्तर में रहने वाले ईसाई लोग। ये लोग मुसलमानी याडूसली से विवाह नहीं करते हैं।

मोजो—बोलविया के इंडियन लोग। ये लोग खेती में लगे हैं।

मोङ्गो—काङ्गा नदी के बड़े मोड़ के पास रहने वाले और बाँटू बोलने वाले लोग। किसी समय ये बड़े व्यापारी और मिट्टी के काले बरतन बनाते थे जिनकी बड़ी मांग थी।

मोई—इण्डोचीन के लोग। इन का रंग कुछ लाल, कद छोटा और सिर लम्बा होता है।

मोहेगन—न्यू इंग्लैण्ड के अलगोंक्विन लोग।

मोहाक—अमरीकन इंडियन के सबसे अधिक इरोकोई लोग। दोबारा अलगोंक्विन लोगों ने लड़ाई में इन को प्रायः नष्ट कर डाला। लेकिन फिर इन्होंने डच लोगों से बन्दूकें लीं और ५० वर्ष तक इरोकोई संघ में इनका बड़ा भय रहा फिर इनकी संख्या तेज़ी से घट गई।

मोनुम्बो—पाट सडैमहाफन (जहाँ पहले जर्मनी का अधिकार था)। केपापुअन भाषा भाषी लोग।

मोङ्मेर—एशिया के दक्षिण-पूर्व में बोली जाने वाली भाषायें।

मोपला—पश्चिमी घाट के वर्णसंकर मुसलमान लोग जो अरबी और हिन्दुस्तानियों के मेल से बने हैं। ये लोग बड़ी तेज़ी से बढ़े हैं। एक मोपला ने सात स्त्रियों से विवाह किया। प्रत्येक स्त्री से सात सात लड़के उत्पन्न हुये। लड़कियों की संख्या अलग है। तट के पास वाले मोपला लोग व्यापार करते हैं। भीतर बसे हुये लोग किसान हैं। ये लोग बड़े कट्टर होते हैं। गत मोपला-विद्रोह में उन्होंने अपने पड़ोसी हिन्दुओं को मुसलमान बनाने का प्रयत्न किया।

मोकुई या होपी—उत्तरी-पच्छिमी अमरीकन इंडियन लोग।

मोरडोफ—मोरडोविन लोगों की भाषा।

मोरडोविन लोग—वाल्गा बेसिन के फिनिक लोग। जो बहुत समय तक अपने पुराने धर्म पर आरूढ़ रहे। इनका सिर छोटा और बाल भूरे या काले होते हैं। ये लोग बड़े मेहनती और मितव्ययी होते हैं। पर इनके लड़के इनका कहना नहीं मानते हैं।

मोरिओरी—न्यूज़ीलैंड के पूर्व चैथम द्वीप के निवासी

मोरोस—मिंडनाओ और सुलू द्वीपसमूह के लोग। काला रंग होने से स्पेन वालों ने इनका यह नाम रक्खा। इनका असली नाम मेगिन्दानो है। इनका कद छोटा होता है। पर वे बड़े स्वामिभक्त होते हैं।

मोसो—नाइजर के विशाल मोड़ में बसे हुये वोल्टा लोग। ये लोग मोल भाषा बोलते हैं।

मंगवेटू—ऊपरी दावावेल नदी के पास रहा करते हैं। इनका रंग जैतूनी होता है। दाढ़ी बड़ी होती है।

मंडिंगो—पच्छिमी सूडान के लोग।

मंगोल—मंगोलिया पठार के लोग। चिंगज़ेख़ाँ के समय में मंगोल लोग बहुत प्रसिद्ध हो गये। मोंग शब्द का अर्थ बीर है। इन्हीं में कालमुक और बुर्यात भी शामिल हैं।

मंगोलाइड—तिब्बती इंडोचीनी लोग। नैपाल, ब्रह्मा आदि के लोग भी इन्हीं में शामिल हैं।

य

यज़ीदी—पश्चिमी खुर्दिस्तान के छोटे सिर वाले लोग। ये लोग मोर की सभ्यता और प्रेत-पूजा के लिये प्रसिद्ध हैं।

यहूदी—पेलेस्टायन के इस्रायली लोगों की संतान जो इस समय संसार के भिन्न २ भागों में फैले हुये हैं। इस समय इनका कोई देश नहीं है।

याकुई—काहिता वंश के लोग जो मेक्सिको की याकुई नदी के दोनों किनारों पर रहते हैं। ये लोग प्राचीन माया लोगों से बहुत कुछ मिलते हैं।

याकूत—पूर्वी साइबेरिया के तुर्की लोग। ये रेनडियर पर निर्वाह करते हैं। लेकिन भोजन की कमी होने पर मछली भी मार लेते हैं।

यामी—फारमूसा के दक्षिण-पूर्व में एक छोटे द्वीप के रहने वाले। इनका कद ४ फुट २ इंच से अधिक नहीं होता है। रंग भूरा होता है।

याओ (वाओ या अजावा)—न्यासा प्रदेश के लोग जो बहुत भारी बोझा ले जाते हैं। इनकी स्त्रियाँ ऊपरी ओंठ में एक बाली पहनती हैं।

यूरल—अलटाई भाषायें-इस समूह में मंगोल, फिनों उग्रियन, तुर्की, माञ्चू और समे ईड भाषायें शामिल हैं।

यूराकेरी—मेक्सिको के दक्षिण में रहने वाले इंडियन लोग।

योरुबा—ये लोग समुद्र-तट और मध्य नाइजर के बीच में बसे हुये हैं। एग्बा और जीबू आदि इन्हीं की उप जातियाँ हैं। ये लम्बे पतले लोग बड़े चतुर व्यापारी होते हैं। इनकी संख्या लगभग २० लाख है। योरुबा प्रदेश में कई बड़े २ नगर हैं। इनके यहां कई गुप्त समितियां हैं।

योलोफ—(वोलोफ या जोलोफ) सेनेगाल और गाम्बिया के बीच में सूडानी बोलने वाले पश्चिमी अफ्रीका के लोग। वे बड़े लम्बे और काले होते हैं।

र

राजपूत—राजपूताना में रहने वाले क्षत्री लोग।

रूआँडा या वरूआँडा—बटूसी के लोग।

रूमानियन—रूमानिया के लोग।

रूसी—रूस के लोग।

रूथेनियन—यूक्रेन के स्लैव लोग।

रोमान्श—अपराइन और अपइन में बोली जाने वाली भाषा।

रोंगा—दक्षिणी पूर्वी अफ्रीका के रोंगा लोग।

(ल)

लटुक—निलोटिक लोग।

लहू—ब्रह्मा के लोलो लोग।

लद्दाखी—लद्दाख के लोग।

लाओ—स्याम देश के थाई लोग।

लिशा—(लिसू) ब्रह्मा के लोलो लोग।

लूर—फारस के मुसलमान लोग।

लूसाटियन—वेण्ड लोग।

लेपचा—शिकम के रोंग लोग।

लेज्गेस—काकेशस के जार्जियन या सान लोग।

लेंगुआ—पेरेग्वे के चाको प्रदेश में रहने वाले लोग। जो अरावक भाषा बोलते हैं।

लेंग्वेडाइल—उत्तरी फ्रांस की भाषा।

लेंग्वेडाक—दक्षिणी फ्राँस की भाषा।

लेम्बोंग—सुमात्रा के लोग।

लेगियन—दागिस्तान और ट्राँस काकेशिया के काकेशस लोग। रूसियन लोग इन को लेकी कहते हैं।

लैप—लैपलैंड के लोग। ये ५ फुट ऊँचे होते हैं।

लोलो—दक्षिणी चीन के लोग।

व

वहबी—नजद के मुसलमान लोग। ये लोग अब्दुल वहब के अनुयायी हैं। इसलिये वहबी कहलाते हैं। कुछ वहबी लोग मेसोपोटामिया, हिन्दुस्तान और अफ्रीका में भी पाये जाते हैं।

वहीमा—यूगांडा के हब्शी लोग। इनका कद ऊँचा और सिर लम्बा होता है। लेकिन इनके हाथ पैर छोटे होते हैं। उन्योरो में ये लोग अमीर गिने जाते हैं। यूगाँडा में ये ढोर पालते हैं।

वहेहे—पूर्वी अफ्रीका के उहेहे लोग। ये लोग बड़े लम्बे वीर और लड़ाका होते हैं। लड़ने के समय में ये लोग "हे हे हे हे" चिल्लाते हैं। शायद इसी लिये इनका नाम वहेहे पड़ गया।

वजीबा या वजीवा—विक्टोरिया न्याञ्जा के पश्चिमी तट पर रहने वाले बाँटू भाषा भाषी लोग। इन लोगों का शरीर हृष्ट पुष्ठ और जीवन सादा होता है। ये लोग रेशे के धागों की एक विचित्र पोशाक पहनते हैं। वे अपने मृत सरदारों को एक गहरे और तंग गढ़े में खड़ा गाड़ते हैं। सिर जमीन के ऊपर निकला रहता है। उसकी देख भाल के लिये दो महीने तक संतरियों का पहरा रहता है। फिर वह जमीन के नीचे दबा दिया जाता है। इन्हें गाने बजाने या नाचने से बहुत कम प्रेम है। प्राचीन समय में इनका कोई आदमी दाढ़ी नहीं रख सकता था।

भू-तत्व

एबीसीनिया

हिन्दी-सामयिक पत्र जगत में मासिक "भूगोल" का एक मुख्य स्थान है। अपने विषय की सुन्दर सामग्री देने में वह सदैव अग्रगामी रहा है। प्रस्तुत विशेषांक में एबीसीनिया का इतिहास, भौमिक-चित्रण आदि सभी बातें दी गई हैं। इस एक पुस्तक के पढ़ लेने से एबीसीनिया के नर-नारी और भूमि, जंगल, नदी, पहाड़ आदि के विषय में काफी ज्ञान हो जाता है। यह अंक विद्यार्थियों के तो काम का है ही, परन्तु साधारण पाठक भी इससे लाभ उठा सकते हैं। इस अंक का मूल्य ॥) है। भूगोल-कार्यालय, इलाहाबाद से प्राप्य। "स्वराज"

इस भूगोल-एटलस से संसार के विभिन्न देशों की राजनैतिक सीमा और विभागों के सिवा उनकी पैदावार, आयात और निर्यात, जलवायु, मिट्टी, स्थल की ऊँचाई और निचाई, वर्षा का परिमाण, जन-संख्या, वहाँ के निवासियों का भोजन और वस्त्र, व्यापार आदि सैकड़ों विषयों का ज्ञान हो जाता है। अन्त में कुछ नक्शे ऐसे भी दिये गये हैं जिन से विदित होता है कि पिछले डेढ़ हज़ार वर्षों में किस शताब्दी में संसार के कितने भूभाग का पता लोगों को था। इन तमाम दृष्टियों से यह एटलस सभी भूगोलप्रेमियों के लिये संग्रहयोग्य है। स्कूल के विद्यार्थियों के लिये तो यह एक अमूल्य भेंट है। इसके द्वारा भूगोल का ज्ञान ऐसी सरलता से हो जाता है कि तनिक भी परिश्रम नहीं जान पड़ता।—"चाँद"

शिक्षा विभाग द्वारा स्कूलों के लिये स्वीकृत, पृष्ठ संख्या ११२ मूल्य १।)

"भूगोल" कार्यालय, प्रयाग।

चीन-अंक

चीन अंक के दो भाग हैं। पहले भाग में चीन की स्थिति, भूरचना, जलवायु, वनस्पति, पशु-पालन, कारबार, शिक्षा, समाचारपत्र, कहावतें। मनोरंजन. खेलकूद, हवाई डाक और हवाई सेना, मार्शल च्यांगकाई शेक, मेडम च्यांगकाई शेक, हुइशी (चीन के गान्धी), डा० सन्यातसेन, धार्मिक व्यवस्था, चित्रकला, चीन के पड़ोस में विदेशी शक्तियों का जमघट, जापानी साम्राज्य, चीन में घुसने के मार्ग, मङ्गोल लोगों का देश चीनविच्छेद, नानकिंग की सरकार रूस का पूर्वी प्रदेश, चीन और ज़ापान, मन्चूकुओ की स्थापना, आधुनिक परिस्थिति. राजनैतिक रूप रेखा, चीन का साम्यवादी दल, चीन जापान संघर्ष और जनरल चूतेह की अपील है। इसमें कई नक़शे और चित्र हैं। बड़े आकार की पृष्ठ संख्या ८८, मूल्य ।।)।

दूसरे भाग में चीन की एटलस है। प्रत्येक प्रान्त के पूरे (बड़े) पृष्ठ के २४ नक़शे। चीन देशका बड़ा नक़शा (दो पृष्ठों पर)। इसी भागमें नक़शों की व्याख्या और प्रान्तों का वर्णन है। इसके अतिरिक्त १६ ऐतिहासिक नकशे, ऐतिहासिक घटनाओं की सूची, और चीनी इतिहास के चुने हुए चित्र हैं। अन्त में संसार में चीन का आर्थिक स्थान प्रदर्शित करने के लिये ८ आर्थिक नकशे और कई डायाग्राम (खाके) हैं। मूल्य ।।) दोनों भागों का एक साथ मूल्य बारह आना।

"भूगोल" कार्यालय, प्रयाग।

देश-दर्शन

प्रत्येक अङ्क में प्रायः निम्नलिखित विषय रहेंगे जो आवश्यकतानुसार घटाये बढ़ाये जा सकेंगे।

१—देश का आकार, विस्तार, बनावट, दृश्य। २—जलवायु और उपज। ३—पालतू और जंगली जानवर। ४—कारबार। ५—व्यापार, बाज़ार, मेला। ६—जनसंख्या और जातिया। ७—शिक्षा। ८—पुराने समय पर एक नज़र। ९—वर्तमान शासन। १०—रहन सहन। ११—भाषा, कहानी। १२—देखने योग्य शहर। १३—गांव का जीवन। १४—खेल कूद- त्योहार।

प्रत्येक देश का वर्णन प्रायः निजी यात्रा के आधार पर भारतीय दृष्टिकोण से लिखा जायगा।

इस माला में निम्नलिखित देश रहेंगे। :—

भारतवर्ष—१—लंका, २—बरमा, ३—आसाम, ४—बंगाल, ५—बिहार, ६—उड़ीसा, ७—आन्ध्र देश, ८—तामिल, ९—केरल, १०—ट्रावनकोर, ११—कुर्ग, १२—मैसूर, १३—हैदराबाद, १४—गोआ, १५—बम्बई-महाराष्ट्र, १६—मध्यप्रान्त, १७—काठियावाड़, १८—गुजरात, १९—सिन्ध, २०—बलोचिस्तान, २१—पंजाब, २२—पटियाला, २३—जोधपुर, २४—जैपुर, २५—बीकानेर, २६—अजमेर २७—उदयपुर, २८—कोटा, २९—भरतपुर, ३०—अलवर, ३१—ग्वालियर, ३२—इन्दौर, ३३—रीवाँ, ३४—काश्मीर, ३५—नैपाल, ३६—भूटान, ३७—शिकम, ३८—गढ़वाल, ३९—अवध, ४०—संयुक्तप्रान्त, ४१—पांडिचेरी, ४२—अंडमान, निकोबार, लका द्वीप, मालद्वीप।

एशिया—१—जापान, २—चीन, ३—कोरिया, ४—मंचूरिया, ५—मंगोलिया, ६—चीनी तुर्किस्तान, ७—तिब्बत, ८—साइबेरिया, ९—रूसी तुर्किस्तान, १०—जार्जिया, ११—आर्मेनिया, १२—टर्की १३—सिरिया, १४—पेलेस्टाइन, १५—इराक, १६—अरब, १७—ईरान, १८—मलय प्रायद्वीप और सिंगापुर, १९—स्याम, २०—जावा, २१—बोर्नियो, २२—फिलीपाइन द्वीपसमूह, २३—अफ़ग़ानिस्तान, २४—किरगीज प्रजातन्त्र।

योरुप—१—आयरलैंड, २—ब्रिटेन, ३—फ्रांस, ४—हालैंड, ५—बेल्जियम, ६—डेनमार्क, ७—नार्वे ८—स्वीडन, ९—आइसलैंड, १०—फिनलैंड, ११—रूस, १२—यूक्रेन, १३—पोलैंड, १४—रूमानिया, १५—बल्गेरिया, १६—लिथुएनिया, लैटविया और एस्थोनिया १७—यूगोस्लेविया, १८—ग्रीस, १९—इटली, २०—स्पेन, २१—पुर्तगाल, २२—जर्मनी, २३—हंगारी, २४—स्वीज़रलैंड, २५—चेकोस्लोवेकिया, २६—अल्सेस लारेन।

अफ्रीका—१—मिस्र, २—सूडान, ३—एबीसीनिया, ४—जेंजीबार और पम्बा, ५—मेडेगास्कर, ६—कीनिया ७—यूगांडा ८—पूर्वी पुर्तगाली अफ्रीका, ९—बेल्जियन कांगो, १०—रोडेशिया, ११—दक्षिणी अफ्रीका, १२—पश्चिमी पुर्तगाली अफ्रीका, १३—१४—महाराष्ट्र, १५—मरक्को, १६—अल्जीरिया, १७—ट्यूनिस, १८—ट्रिपली, १९—लाइबेरिया, २०—मारीशस द्वीप।

उत्तरी अमरीका—१—कनाडा, २—न्यूफाउंडलैंड; ३—संयुक्त राष्ट्र अमरीका, ४—मेक्सिको, ५—पनामा, ६—मध्य अमरीका, ८—पश्चिमी द्वीपसमूह।

दक्षिण अमरीका—१—कोलम्बिया, २—गायना, ३—वेनिज्वेला ४—इक्वेडार, ५—पीरू, ६—बोलिविया, ७—चिली ८—पेरेग्वे ९—यूरुग्वे, १०—ब्रेज़िल, अर्जेन्टाइना।

आस्ट्रेलिया—१—आस्ट्रेलिया, २—टस्मेनिया, ३—न्यूज़ीलैंड, ४—न्यूगिनी, ५—फिजी द्वीप, ६—प्रशान्त महासागर के द्वीप।

अन्वेषक—१—मार्कोपोलो, २—कोलम्बस, ३—वास्को डि-गामा, ४—कुक, ५—लिविंग्सटन, ६—स्टैनली, ७—ड्रेक, ८—स्वेन हेडिन, ९—लारेंस, १०—पियरी, ११—नान्सेन।

नगर—१—प्रयाग, २—कलकत्ता, ३—बम्बई, ४—बनारस, ५—मद्रास, ६—लाहौर, ७—लन्दन, ८—पेरिस, ९—बर्लिन, १०—मास्को, ११—न्यूयार्क, १२—टोकियो, १३—बग़दाद, १४—क़ाहरा, १५—यरुशलम, १६—मक्का, १७—पेकिंग १८—हांगकांग।

नदी—गंगा, यमुना, सिन्ध, नर्मदा, गोदावरी, महानदी, ब्रह्मपुत्र, इरावदी, याग्ज़ी, ह्वांग हो, अमूर, दजला-फरात, वाल्गा, राइन, डेन्यूब, मिसीसिपी, एमेज़न, नील, कांगो, सेन्ट लारेंस।

पर्वत—हिमालय, अल्प्स, एंडीज, राकी।

नहर—स्वेज़, पनामा, चीन की ग्राड केनाल।

कारबार—काग़ज़, लोहा, दियासलाई, मोटर, पेन्सिल, मिट्टी का तेल, पुतलीघर, जहाज़, रेल, हवाई जहाज़।

सभ्यता—वैदिक, एसीरिया, प्राचीन मिस्री, इन्का, माया, यूनानी, रोमन।

अग्रिम मूल्य एक प्रति का ।=), वार्षिक ४)रु०, समस्त पुस्तक माला का २०)रु०।

Published by the Editor (Pt. Ram Narain Misra, B. A.) and Printed by K. P. Misra at the Bhugol Press; 306, Jumuna Road, Allahabad.

वार्षिक मूल्य ३)
विदेश में ४)
एक प्रति का ।-)
नवम्बर १९३८
भूगोल-कार्यालय प्रयाग

इस नक़शे का परिचय पृष्ठ नं० २५ पर देखिये

विषय-सूची

विषय				पृष्ठ
१—दक्षिण दिशा में (विद्याभूषण विभु B. A. F. R. G. S., M. N. G. S.)			...	१
२—जातियों का कोष	...	...	..	७
३—विदेश यात्रा के कुछ चित्र (श्री० निरंजनलाल शर्मा)		...	...	१०
४—भोजन	...	...	...	१८
५—चेकोस्लोवेकिया की हत्या (श्री० ...)				२५

"भूगोल"

यह पत्र संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, बरार, बिहार, उड़ीसा, पंजाब प्रान्त तथा ग्वालियर, जैपुर, जोधपुर और कोटा राज्य के शिक्षा-विभाग द्वारा हाई, नार्मल और मिडिल स्कूलों में प्रयोग होने के लिये स्वीकृत है।

वर्ष १५] मार्गशीर्ष सं० १९९५, नवम्बर १९३८ [सं० ७

दक्षिण दिशा में

(विद्याभूषण विभु, बी० ए०, एफ० आर० जी० एस०, एम० एन० जी० एस०)

[गताङ्क से आगे]

भारतवर्ष में उटकमंड बहुत ही उत्तम पहाड़ी स्थान गिना जाता है। इसी विचार से २१ जून को आठ बजे सवेरे मदुरा से ऊटी देखने चला। डिण्डीगल, पोतनूर कोइम्बतूर में गाड़ी बदलते बदलते तंग आ गया। शाम को मेटरपेलम पहुँचा। स्टेशन पर होटल में मदरासी भोजन किया। ठहरने का कोई प्रबन्ध होटल में न था। कुली ने चार आने में चौकीदार से पहले दरजे का वेटिंग रूम दिला दिया। रात आराम से कटी मानों चार आने में चार फल प्राप्त हो गये। २२ जून को सवेरे संकलित सामान होटल में छोड़ कर ७-५ मिनट पर नीलगिरि रेल (Blue Mountain Light Railway) से रवाना हुआ। ऊटी का टिकट १।) को मिला। मैं आगे के डब्बे में था। गाड़ी सर्पाकार मार्ग का अनुसरण कर रही थी। पीछे को दृष्टि डाली तो एक विचित्र बात देखी। इंजन पीछे से धक्का दे रहा था। आगे कोई इंजन न था। यह प्रबन्ध इसलिए था कि चढ़ाई पर डिब्बे पृथक होकर पीछे फिसलने न पावें। स्थान स्थान पर खतरे की चेतावनी के सिगनल लगे हुए थे। गाड़ी धीरे धीरे चलने लगी। पटरी के दोनों ओर वृक्ष टीलों और खाइयों से इस तरह झांक रहे थे जैसे जनता किसी बड़े आदमी के दर्शनों को जमा हो जाती है। कहीं कहीं पेड़ों से पुष्प वर्षा भी हो जाती थी। नीलगिरि में प्यास बुझाने के लिए झरनों की पौसाल बिठा दी थी। ट्रेन कभी कभी सुरंगों में छिप जाती थी। स्टेशन बहुत छोटे छोटे थे और उनपर दोहरी लाइन के स्थान पर इधर उधर शाखा निकली हुई थीं। दूसरी ओर से यदि कोई गाड़ी आती थी तो हमारी रेल उन शाखाओं पर खड़ी हो जाती थी और गाड़ी के निकल जाने पर फिर लाइन पर आ जाती थी। कोनूर ही एक बड़ा जंकशन मिला। दस बजे से पहले ऊटी पहुँच कर होटल में ठहर गये। होटल वाले ने ।।) एक खुराक का चार्ज किया।

कोइम्बतूर के साथी कोमल प्रकृति के धनी व्यक्ति प्रतीत होते थे। पैदल चलकर सब जगह घूमना उनके लिए कुछ असम्भव मालूम होता था। और फिर उसी दिन लौटना भी चाहते थे। इसलिये उन्होंने

टैक्सी का प्रस्ताव किया। मुझे भी उसी दिन वापस आना था। इससे मैं तो सहमत हो गया। परन्तु तीसरा साथी रुपये की कमी के कारण हिचकिचाता था। ६) में मोटर मिल गई। ढाई ढाई रुपये हम दोनों ने दिये और एक रुपया उस तीसरे आदमी ने दिया। टैक्सी में सैर का वास्तविक आनन्द न मिला दो घंटे में कुल मुख्य मुख्य स्थान देख लिये।

हरियाली को चीरती हुई सी मोटर चलने लगी। पहले लाट साहब की कोठी रेस कोर्स एक टीले से खड़े होकर देखे। इस बार नीलगिरि की
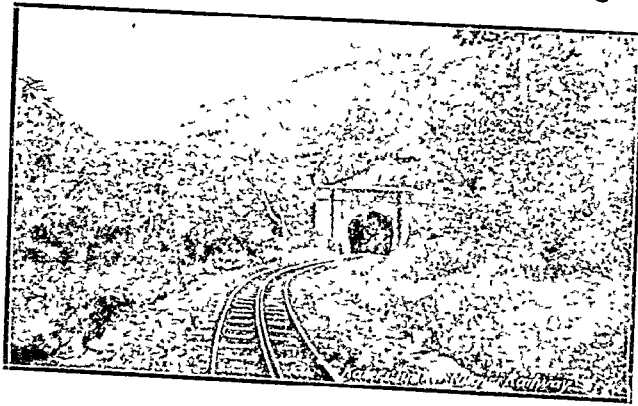
नीलगिरि-रेलवे की एक सुरंग

सबसे ऊँची चोटी दूधावाती (Dodabeti) पर पहुँचे। यह समुद्र से ८००० फीट से अधिक ऊँची है। वहाँ से टोडा (Toda) की झोपड़ी पर पहुँचे। इस घर में बैठ कर या घुटनों के बल ही अन्दर जा सकते थे। मैंने घुस कर देखा तो एक ओर रसोई का चूल्हा और दूसरी ओर सोने के लिए एक ऊँचा चबूतरा बना हुआ था। चार औरतें बाहर बैठी हुई थीं। उनमें से दो कुछ बुन रही थीं। मेरे साथी ने उनको एक इकन्नी दिखलाई। वे चारों एक पंक्ति में बैठ गईं और कनपटी पर हाथ रखकर ऐं ऐं कर गाने लगीं। मैं कुछ नहीं समझा। टोडे यहाँ के पुराने निवासी हैं। जङ्गली जीवन व्यतीत करते हैं। सरकार से उनको रहने के लिए स्थान और जलाने के लिए लकड़ी मुफ़ मिलती है।

ऊटी का बोटेनीकल गार्डन दार्जिलिंग के बाग से छोटा मालूम देता था। प्रकृति ने हरी मखमल का फर्श उसमें बिछा रक्खा है। कहीं फूलों के बेल-बूटे भी हैं। झीलों का निर्मल गोटा या पन्नी चुन्नी का काम देता था। बड़े बड़े अपने पत्तों से पंखा झल रहे थे। नील कमल जल अपना मुख देखकर हर्ष से फूले नहीं समाते थे आस्ट्रेलिया के नुकीली पत्ती वाले तरु का गोंद मैंने नमूने के लिए ले लिया। हैदराबाद के निज की कोठी हरियाली से अच्छादित थी। परन्तु मैं का झाड़ियों पर बहुत ही सुन्दर आकृतियाँ क हुई थीं। ऊटी से मैंने दस आने का यूकेलिप्टस तैल और चित्र खरीदे। मोटर ने ब के अड्डे पर उतार दिया। आठ आ देकर बस में कोनूर के लिए चल दिया।

शिमले के लिए सोलन और दार्जिलिंग के लिए खुर्सांग जो काम करते हैं वह काम कोनूर ऊटी के लिए करता है। जो मनुष्य ऊटी के खर्च से डरता है, परन्तु पहाड़ी जलवायु में रहना चाहता है, उसके लिए कोनूर उत्तम स्थान है। यहाँ से दूसरी बस ने बारह आने में मेटरपेलम पहुँचा दिया और रात के साढ़े आठ बजे अपना सामान लेकर सेलम को चल दिया।

रात के दो बजे सेलम पहुँचा। मेट्टूरडैम की गाड़ी खड़ी थी। कुली ने उसमें बिठा दिया। साढ़े छः बजे ट्रेन वहाँ से चली और दस बजे आ पहुँची। अपना संग्रह स्टेशन पर ही छोड़ दिया और कावेरी बांध देखने चला। यह बाँध ५३०० फीट लम्बा और २२० फ़ीट ऊँचा है। पर्वतों के मध्य कावेरी को बाँधने से १६ वर्गमील की एक झील बन गई है। उसमें १३ फाटक हैं। जिनसे पानी आवश्यकतानुसार छोड़ सकते हैं। दूसरी ओर कावेरी स्नान किया और फिर बाँध के नीचे उतरा। कुछ फाटकों से पानी प्रबल वेग से बह रहा था। एक छोटी सी वाटिका भी लगा रक्खी है। उनमें कई फव्वारे छूटते रहते हैं। एक फव्वारे के नीचे चार बतख़ तैरती हुई दिखाई दीं। पास जाकर देखा तो वह पत्थर की निकलीं। स्थान अत्यन्त रमणीक था। वहीं पर पानी से बिजली बनाने का कारखाना भी है। कावेरी के जल से पहिये घूमते हैं

जिससे डाइनेमो (Dynamo) चक्कर करता है और बिजली उत्पन्न होती है। स्टेशन के होटल में चावल खाये और चार बजे सेलम लौट आया। यहाँ मैंने डाक रेलवे के कर्मचारी की कृपा से मेग्नेसाइट का नमूना लिया और ५ बज कर ४५ मिनट पर वहाँ से चल दिया। दक्षिण में लगा हुआ पान बिकते मैंने नहीं देखा। स्टेशन पर पान बेचने वाले को एक पैसा दीजिये तो वह आप को कुछ पान चूना और मसाले की एक पुड़िया देगा। आप स्वयं लगाते और खाते जाइये।

टोडा लोगों का झोंपड़ा

महारानी तम्बाकू का साम्राज्य विस्तार में मलिका विक्टोरिया के राज्य से भी अधिक बढ़ गया है। संसार का कोई कोना न मिलेगा जहाँ इसका आतंक किसी न किसी रूप में न पाया जाता हो। भारत में तो इसका रंक, राजा सभी पर आधिपत्य है। आठों पहर धुआँधार होती रहती है। इसके कारण उत्तर-भारत अग्निहोत्री बन गया है। गृह अग्नि कभी बुझने नहीं पाती। जिस डिब्बे में देखिये वासियों उप-इंजन धुआँ उड़ाते दिखलाई पड़ेंगे। मध्यभारत रसिक बिहारी हो गया है। यहाँ पर बारह मास होली ही होती रहती है। जिधर देखिये उधर ही रंगीन पिचकारियाँ चल रही हैं। दक्षिण भारत में पूरक प्राणायाम सिद्ध कर लिया है। जिधर कान लगाइये सू-सू की सरसरा-हट सुनाई पड़ेगी। बतलाइये ऐसे सिद्धों को भी मोक्ष न मिलेगी तो किसे मिलेगी।

वर्तमान संसार में, हुई मुक्ति आसान।
घर घर प्रचलित वर्ग-त्रय, चाय, तमाकू, पान॥

इस त्रिगुणात्मकशालिनी को धन्य है। लोग इसके अवगुणों पर ध्यान न देकर गुणों का ही ग्रहण करते हैं। यही सज्जनता है। इसी सज्जनता के वशीभूत होकर यह सन्मुख बैठे हुए व्यक्ति न जाने कितने मन सुँघनी सूंघ चुके हैं। यह दूसरे महाशय न जाने कितनी थूक चुके। दिल जला फेफड़ा गला। लेकिन इन तीसरे महोदय का इसी धुआँधार में है भला। यही अनन्य भक्ति है।

रात को २ बजे ट्रेन जालेरपेट आ पहुँची। त्रिचनापोली जंकशन के बाद मुझे यही सुन्दर और विशाल स्टेशन मिला। गाड़ी बदली गई। सवेरे ५ बजे बोरिंगपेट आकर कोलार गोल्ड फील्ड के लिये ट्रेन बदली।

२४ जून को सवेरे ६ बज कर १५ मिनट पर ऊरे गाँव पहुँचा।

कोलार गोल्ड फील्ड कोई एक स्थान नहीं है। कोलार (मैसूर) जिले में कई जगह सोना निकाला जाता है और उनके स्टेशन भी भिन्न २ हैं। लेकिन मुझे यह पता न था जिससे मैं पूछता कि मैं कोलार गोल्ड फील्ड देखना चाहता हूँ। वह मुझसे प्रश्न करने लगता कौन कौन सी जगह। तब मैं निरुत्तर हो जाता। एक सज्जन ने बतलाया कि यहाँ तीन स्टेशन हैं। किसी एक पर आप उतर जाइये। इसलिये मैं ऊरे गाँव पर उतर पड़ा। स्टेशन बहुत छोटा था। होटल एक मील दूर था। इस लिये वहाँ न जाकर स्टेशन पर ही जो कुछ मिला पेट में डाल लिया। दस बजे गोल्ड फील्ड के दफ्तर में पहुँचा। एक रुपये का पास लेकर खान देखने चला। यह खान दो हजार फीट नीचे है, जहाँ पर कई हजार आदमी दिन रात काम करते हैं। सब काम मशीन से होते हैं। बड़े बड़े लिफ्ट के द्वारा चट्टानों के बड़े बड़े टुकड़े ऊपर आते हैं और उनको मशीनों द्वारा तोड़ कर पीसा जाता है। फिर पानी के साथ कारपेट पर बहाया जाता है। सोना उन कारपेट से चिपट जाता है। और रेत पानी के साथ बह जाता है। इसी रीति से सब सोना निकाल लेते हैं। पास लेकर दरबान पहले अपने आफिसर को दिखला कर उसके हस्ताक्षर कराता है। तब अन्दर जाने पाते हैं। प्रत्येक विभाग में यही नियम काम में लाया गया। दरबान सिपाही

पंजाबी थे। कहीं कहीं उत्तरदायित्व के स्थान पर गोरे दिखाई देते थे। किसी किसी कमरे में मशीनों का इतना शोर होता था कि गूंगे की तरह संकेत से ही बातचीत हो पाती थी। एक टेस्टिंग (परीक्षण) विभाग भी था जिसका काम यह था कि वह जाँच करे कि किन चट्टानों में सोना है और किस अनुपात से। यह लोग टुकड़े को पीस कर पारा आदि के साथ बंद भट्ठियों में गलाते हैं। इस प्रकार सोना तथा दूसरे धातु पृथक हो जाते हैं। मुझे एक टुकड़ा ऐसा दिखलाया गया जिसमें सोना खूब चमकता था। यह रिच (धनी) चट्टान कहलाते हैं। ये सब बातें मैंने जमीन के ऊपर देखी थी। खान के नीचे जाने के लिये तीन रुपये का पास लेना पड़ता था। उसका लेना हमने उचित न समझा क्योंकि गाइड उस दिन छुट्टी पर गया था।
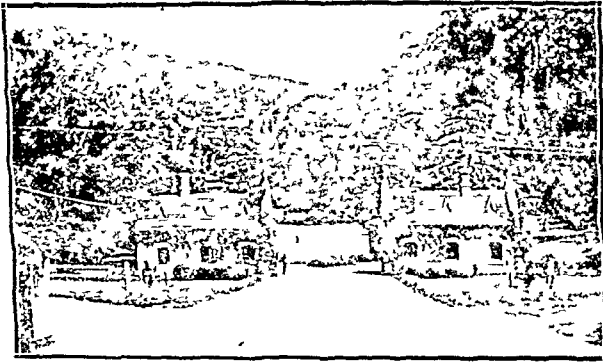
उटकमंड के सरकारी बगीचे का दरवाज़ा

उर गाँव से ढाई बजे चलकर शाम को बंगलौर आ गया। पानी बरस रहा था। टांगे वाले को पाँच आने देकर होटल में आ गया। आठ आने प्रति दिन एक कमरे के और ।=) प्रति खुराक निश्चित हुए। २५ जून को सबेरे शहर देखने निकला। घूमते घूमते पहुँचा। इस क्यूबर पार्क में एक आलीशान होटल में रेडिओ बज रहा था। एक पुस्तकालय भी था। मुझे यह बतलाया गया कि इस पार्क में मैसूर राज्य के दीवान साहब भी रहते हैं और वह प्रत्येक से बड़ी प्रसन्नता से मिलते हैं। अवकाश न होने के कारण मैं उनसे न मिल सका। यह उद्यान फूलों से सुशोभित एक रम्य स्थान है। परन्तु सबसे सुन्दर यहाँ पर एक फव्वारा है जिसके चारों ओर विविध रंग की बिजलियाँ रात को जलती हैं। उस समय ऐसा प्रतीत होता है कि मानों नभो मंडल से इन्द्रधनुप उतर कर इसकी परिक्रमा कर रहे हैं या सप्तवर्णी रश्मियाँ जल विहार कर रही हैं। फव्वारे के रंजित जल की नृत्य कला अनिर्वचनीय है। यहाँ से मैंने मार्टिनेट वे अखरोट की एक फली लेकर अजायबघर देखने चला गया। यहाँ पर चिड़ियों की प्रायः सब ही चीजें देखने को मिलीं। मृत चिड़िया, अंडे, चोंचें, घोंसले, सभी क्रमानुसार रक्खे हुए थे। श्रीरंगापट्टम का माडल अत्यन्त मनोहर था।

मोटर से लाल बाग देखने गया। पानी बरसने लगा। थोड़ी देर बाद मोटर बिगड़ गया और मुझे पैदल ही चलना पड़ा। यह बाग बड़ा है। कुछ दिन पहले यहाँ चिड़ियाघर था। अब यहाँ के सब पशु-पक्षी मैसूर पहुँच गये हैं और यह बाग उजाड़ पड़ा है। यहाँ मैंने पीले बाँस और रेन ट्री (वर्षा-वृक्ष) देखे। तदनन्तर मैं बाजार में आया। वस्तुयें सस्ती मालूम होती थीं। यहाँ से मैं लाल मिट्टी के दो लड्डू, कहवा के बीज और Ragi के दाने नमूने के लिये लेकर स्टेशन चल दिया। शहर स्वच्छ और सुन्दर था। जलवायु स्वास्थ्यवर्धक मालूम देता था। पूना की तरह बंगलोर भी मुझे अधिक प्रिय लगा। साढ़े नौ बजे रात को मद्रास के लिये रवाना हुआ।

२७ जून को साढ़े छः बजे सबेरे मद्रास पहुँचा। शहर का चक्कर लगाया। मैकमिलन और लांगमैन्स प्रकाशकों के यहाँ कुछ पुस्तकों का अवलोकन किया। २७ जून को अमावस्या थी। मैं छः बजे समुद्र स्नान को चल दिया। आज के दिन प्रायः बहुत से हिन्दू नहाने जाते हैं। इससे भीड़ काफी थी। चारों ओर एक विचित्र दृश्य था। कहीं बच्चे डर के मारे चिल्ला रहे थे लेकिन उनके माता पिता मल मल कर स्नान करा रहे थे। बुढ़िया औरतें डरती डरती पानी में घुसती थीं। लोग उनके ऊपर जल उलीच देते थे। भीरु प्रकृति दूसरे साथी का हाथ पकड़े रहते थे। पानी में बड़ पेटू की तोंद तो बिलकुल कछुये की

समानता करती थी। लड़के अपनी किलोलें अलग कर रहे थे। लहरों की अठखेलियाँ भी अद्भुत थीं। जब वे टकराती थीं तो घोर गर्जना होती थी। घुड़दौड़ की सी करतल ध्वनि और हर्ष ध्वनि सुनाई देती थी। लहरें एक के ऊपर एक बेतहाशा गिरती थीं जो श्वेत प्रवाल के समान बहुत सुन्दर लगती थीं। एक लहर कुछ आगे बढ़ आई और किनारे के कपड़ों को भिगो दिया। जहाँ दृष्टि जाती है पानी ही पानी दिखाई देता है। जब मैं इसकी असीमता को देखता हूँ और अपनी अल्प शक्ति पर विचार करता हूँ तो मुझे बड़ा दुख होता है कि ईश्वर ने मनुष्य को इतना दुर्बल क्यों बनाया।

ऊटकमंड नगर और झील का एक दृश्य

आज मैं आनन्द से नहा न सका, क्योंकि समीप ही एक विचित्र वेषधारी भैरव भगवान अपने वाहन श्वान सहित विराजमान थे। मेरी जेब में रुपये थे। कोट उतार कर छोड़ना रुपयों का खोना था। मैं बहुत देर तक इधर उधर के तमाशे देखता रहा। कुछ मल्लाह भी बालू पर घूर घूर कर देखते हुए चक्कर काट रहे थे। उनसे भी पूरा डर था। कुछ देर बाद भैरव वहाँ से चल दिये। मैं कपड़े उतार कर पानी में पहुँचा। मुड़ कर देखता हूँ कि फिर वही आदमी अपना कुत्ता लेकर वहीं आ गया। मैं वहीं बैठ गया और वस्त्रों की ओर ताकता रहा। थोड़ा सा स्नान कर शीघ्र निकल आया और कपड़े पहन कर चल दिया।

२८ जून को झोला में शीशी रखकर फिर समुद्र के किनारे गया। वस्त्र उतार कर समुद्र में घुसा और शीशी साफ करने लगा। अचानक एक बड़ी लहर से टकरा कर मैं तो एक तरफ गिर गया। शीशी हाथ से छूट कर लहर के साथ बह गई। थोड़ी दूर पर उस की गरदन दिखलाई दी। फिर वह सदा के लिये अनन्त में विलीन हो गई। शायद जलजीव उसको भी जलचर जानकर छेड़छाड़ करते होंगे। लोग कहते हैं कि समुद्र चीजों को वापिस कर देता है, परन्तु मेरी शीशी तो मालूम देता था पचा गया। क्योंकि मैंने फिर उसको किनारे फेंकते हुए नहीं देखा। शीशी खोने का तो मुझे कुछ दुःख नहीं था क्योंकि समुद्र जल स्कूल में रक्खा है। लेकिन मेरी यह इच्छा अवश्य हुई कि उस में तारीख, स्थानादि लिखकर रख देता जिससे पाने वाले को शायद समुद्र की कुछ विशेष बातें मालूम हो जातीं।

झोले में समुद्र की बालू भर कर मैं शहर लौट आया। आज शहर में रिक्शा वालों ने हड़ताल कर दी है और मैं आज ही मद्रास से वाल्टेयर जाना चाहता हूँ। सवारी के लिये बाजार में आकर खोज करने लगा। यहाँ के तांगों में बैठने में बड़ी तकलीफ होती है। रिक्शा का मिलना असम्भव था। बाजार में २००० रिक्शा वालों की भीड़ थी। जो कोई रिक्शा वाला उनके विरुद्ध चलता था उसको वह तंग करते थे। एक रिक्शा वाले ने उसकी शिकायत पुलिस में की। सब भीड़ नाके पर इकट्ठा हो गई। रास्ता बन्द हो गया। ट्राम मोटर आदि सब रुक गये। इस प्रकार सब व्यापार बन्द देख कर एक गोरे पुलिस कर्मचारी ने भीड़ में डंडे मारना शुरू किया। भीड़ काई की तरह फट गई। लोग जान ले लेकर भागने लगे। मैं भी जल्दी से दूसरी ओर मुड़ गया। कुछ देर बाद छः आने में एक रिक्शा मिल गई जिसमें बैठ कर सेन्ट्रल स्टेशन आया और रात के सवा आठ बजे की मेल से चल दिया।

२९ जून को ढाई बजे दिन के वाल्टेयर पहुँचे। यह मद्रास से ५३० मील है। मार्ग के खेतों में धान लह-लहा रहे थे। गोदावरी अपने गंदे जल से उमड़ रही

थी। जिस गड्ढे के पास जैसी मिट्टी थी उस में वैसा ही जल दिखलाई देता था। कहीं श्वेत सागर, कहीं लाल सागर, कहीं काला सागर का दृश्य सामने आ जाता था। वाल्टेयर में अनभलाई यूनिवर्सिटी है। स्वास्थ्यवर्धक स्थान माना जाता है। यहाँ से पाँच मील पर विजगापट्टम का वन्दरगाह है; जहाँ से मध्य भारत का माल वाहर भेजा जाता है। धूप कड़ी थी और स्टेशन का थर्मामीटर ९५° का तापक्रम वतला रहा था। मद्रास सदर्न मराठा रेलवे का यह अन्तिम रेलवे स्टेशन होने के कारण हमारा रिआयती टिकट

ऊटकमंड के टोडा लोगों की एक मण्डली

यहाँ पर समाप्त हो जाता है। सवा छः वजे वी० एन० रेलवे से रायपुर व विलासपुर से कटनी आया। और जी० आई० पी० से प्रयाग आ पहुँचा। १४ रु० के लगभग वाल्टेयर से प्रयाग तक का रेल का किराया लगा।

दक्षिण-भारत उत्तर-भारत से भाषा, भोजन और भूषा में विल्कुल भिन्न है। लीडर, हिन्दुस्तान टाइम्स की जगह लोगों के हाथों में हिन्दू, मद्रास मेल तथा इण्डियन एक्सप्रेस दिखलाई पड़ते थे। मद्रास के आसपास आधे दक्षिण पूर्व की भाषा तामिल है। दक्षिण-पश्चिम के केरल प्रान्त में मलायलम का प्रचार है। दोनों के उत्तर में पूर्व की ओर तैलगू और पश्चिम की ओर कनाडी भाषायें फैली हुई हैं। तामिल के भजन समझ में न आने पर भी कर्ण-प्रिय थे। अंग्रेजी जानने वालों की संख्या भी अधिक थी। पशु वहुत कम और दुर्वल दिखलाई देते थे। दूध के दर्शन दुर्लभ हो जाते थे। मद्रास में दो आने का एक प्याला दूध मिलता था। होटलों में चावल के साथ मद्रासी चुल्लू से मट्ठा (छाँछ) पीते थे। वह भी दो तीन चुल्लू ही मुझे तो विना प्याला भरे संतोष न होता था। यहाँ पर होटल दो प्रकार के थे। १. हिन्दू ब्राह्मण होटल, जहाँ पर निरामिष भोजन मिलता था। २. फौजी होटल; जहां पर मांस-मछली भी खाने के साथ दी जाती थी। भिखमङ्गों का दक्षिण में भी वही रङ्ग-ढङ्ग था। कुली और मजदूर इसी प्रकार झगड़ालू थे। लेकिन शिक्षित मनुष्य शिष्ट तथा सदय थे। उनके सद्व्यवहार और सहानुभूति से मैं अपने मार्ग के कष्टों को भूल जाता था। किसी किसी स्त्री के कानों में इतना भारी गहना था कि ललरी काँधे से छू रही थी। साउथ इण्डियन रेलवे का पहनावा मुझे अधिक पसन्द आया। गोटेदार हरी पगड़ी उनके हँसमुख चेहरे पर वहुत खिलती थी। वह यात्रियों के प्रश्नों का उत्तर बड़ी नर्मी से देते थे।

नये देश और नये दृश्य तो देखे ही, मनोविनोद भी पर्याप्त हुआ। मनोरंजन वह मिश्री है जो कष्ट के पश्चात् ही अधिक स्वादिष्ट लगती है। भ्रमणों ने मुझे कष्ट-सहिष्णु वना दिया। दक्षिण की कई हजार मील की यात्रा से मेरी ज्ञान-राशि तथा अनुभव में विशेष अभिवृद्धि हुई।

जातियों का कोष

(गताङ्क से आगे)

वजीर या वजीरी—अफ़ग़ानिस्तान के सरहद के लोग। ये लोग जङ्गली और दुर्गम प्रदेश में रहते हैं। ये लोग जानवर बहुत पालते हैं, लेकिन खेती कम करते हैं। पहाड़ी धाराओं के पास कहीं कहीं खेती होती है।

व्यान्डाट—उत्तरी अमरीका के हूरन या इरोक़ाई लोग।

वातूता—अंगोनी (न्यासा झील) के पश्चिम में रहने वाले ज़ुलू लोग।

वापोकोमो—बृटिश ईस्ट अफ्रीका के उत्तर-पूर्व में ताना घाटी के बांटू भाषी लोग। ये लोग खेत बोने जोतने के अतिरिक्त मछली मारने और शिकार करने का काम भी करते हैं। ये लोग वर्णसंकर हैं। इनमें एक ही घर में (काले से लेकर लाल तक) कई रंग के लोग मिलते हैं।

वारीमुङ्गा—मध्य आस्ट्रेलिया के वे लोग जो मर्कीसन रेंज में रहते हैं। आरूँटा लोगों से ये लोग अधिक लम्बे होते हैं। ये लोग अपने माथे और ऊपरी ओंठ के बाल उखाड़ लेते हैं।

वाराऊ या वारां—गायना के तट पर रहने वाले लोग। ये लोग छोटे और मोटे होते हैं। इनके यहाँ एक स्त्री के कई पति और एक पुरुष के कई स्त्रियाँ होती हैं। ये लोग नाव बनाने में बड़े चतुर हैं।

वान्याम्वेज़ी—यूगांडा के वे लोग जिनको लिविंग्स्टन की यात्राओं ने प्रसिद्ध बना दिया। वान्याम्वेज़ी का अर्थ है "चन्द्रवंशी" या चन्द्रमा के बच्चे।

वापीसियाना—गायना के सवन्ना प्रदेश में रहने वाले लोग, जो अरावक भाषा बोलते हैं। इनके अंग सुन्दर होते हैं और क़द लम्बा होता है। ये लोग बड़े व्यापारी होते हैं। वे अपनी नावों को एक विचित्र गोल पैडिल से चलाते हैं।

वाङ्कोएडे—या नकोण्डे—न्यासा झील के उत्तरी सिरे पर रहने वाले बाण्टू भाषा-भाषी लोग। 'वाङ्कोएडे' शब्द का अर्थ है मैदान के लोग। इन्हीं में अवाकूक्वे अबावीवा और दूसरे लोग शामिल हैं। तट के पास रहने वाले वाम.रावा लोग इनके सम्बन्धी हैं। इनका रंग काला और नाँगें टेढ़ी होती हैं। ये लोग आरामतलब और हंसमुख होते हैं। इनकी स्त्रियाँ सुन्दरी होती हैं।

वाण्डोरोवो या आण्डोरोवो—मसाई देश के बद्दू लोग। मसाई शब्द का अर्थ "ग़रीब" है। वे अपने को आसा कहते हैं। वे बुश्मैन लोगों से मिलते जुलते हैं।

वाम्वट्टी—बेल्जियन कांगो के इटूरी बन के बौने लोग।

वालून—फ्रांसीसी भाषा के उत्तर में बोली जाने वाली उप-भाषायें। इस भाषा के बोलने वाले लोगों को भी वालून कहते हैं। आर्डेन पठार, हालैंड, बेल्जियम और केण्ट में वालून अंश की प्रधानता है।

वाडिगो—न्यीका लोग जो मोम्बासा के पृष्ठ प्रदेश में रहते हैं और बांटू भाषा बोलते हैं। ये लोग वागीरियामा लोगों के सम्बन्धी हैं। इनका क़द बौने के समान ५ फुट २ इंच होता है।

वागण्डा या बागण्डा—यूगांडा के निवासी। इनमें कई भेद हैं। कुछ हब्शी हैं कुछ रोमन लोगों से मिलते हैं। कुछ लोग ६ फुट और कुछ ५ फुट ऊँचे होते हैं। ये लोग न अपने दाँत तोड़ते हैं न शरीर को बिगाड़ते हैं जैसा कि विषुवत् रेखा के समीप के रहने वाले किया करते हैं। वे अपने कान भी नहीं छेदते हैं। यूगांडा वाले लोग ऊँची छत के मकान बनाते हैं और ढांचा ताड़ की लकड़ियों का बना होता है। सामने और पीछे की तरफ़ दरवाज़े के लिये खुला होता है।

वायावू—ब्रह्मा के लोग जो मोंखमेर भाषा बोलते हैं। वे लोग छोटे लेकिन चौड़े होते हैं। वे अपने गाँव के चारों ओर दो तीन गज़ ऊँची दीवार बना लेते हैं। यह दीवार एक खाई से घिरी होती है। सुरंग के द्वारा द्वार बना लिया जाता है। ये लोग बड़े वीर और मेहनती होते हैं और खेती किया करते हैं।

वावानाकी—अल्गान्क्विन के लोग जो उत्तर-पूर्व की ओर रहते हैं। इन्हीं में पासामीक्वोडी, पेनोब्स्काट, अबेनाकी, मिकमैक और डेलावेर या लेनेय शामिल हैं।

विसायन—फिलीपायन द्वीप के लोग। ये लोग अपने शरीर को रँगते हैं। इसलिये स्पेन वालों ने इनका नाम पिन्टाडो रक्खा।

वेद्दा—लंका के मूल निवासी। इनका क़द छोटा (५ फुट), सिर तंग और लम्बा होता है। ये लोग बड़े

प्रसन्न रहते हैं। ये शिकार करते हैं और शहद इकट्ठा करते हैं। अपने मुर्दों को वे खोहों में छोड़ देते हैं।

वेयाओ या याओ—रोडेशिया और बृटिश सेन्ट्रल अफ्रीका के वॉन्टू भाषा-भाषी गठीले लोग। इनका प्रथम निवास उनाङ्गो पर्वतों में था।

वेराड—जर्मनी में लूसिट्ज प्रदेश के लोग। इन्हें पोलाव भी कहते हैं।

वेल्श—वेल्स देश के रहने वाले। इन लोगों का क़द नाटा और शरीर गठीला होता है। इनका सिर और चेहरा चौड़ा होता है। वेल्श भाषा दो ढाई वर्ष से ज़्यादा पुरानी नहीं है।

वोप्सियन—ओनेगा झील के ओलोनेट्स आदि ज़िलों में बोली जाने वाली भाषा। इनको रूसी लोग चड कहते हैं। अधिक दक्षिण में वे लुहार कहलाते हैं। ये लोग खेतों का काम बच्चों और औरतों के ऊपर छोड़ देते हैं। वे स्वयं मछली मारते हैं और राजा का काम अधिक पसन्द करते हैं। "चड" शब्द का अर्थ लम्बा है। ये लोग क़द में बड़े लम्बे होते हैं।

वोर्गेया—आस्ट्रेलिया के वे लोग जो वारामुण्गा के पूर्व में रहते हैं।

वोटयाक—पूर्वी फिनिक लोग जो अब से १२०० वर्ष पूर्व यूरल पर्वत को छोड़ कर कामा और वियाटका नदियों के बीच में बस गये। ये लोग इनमार की पूजा करते हैं। इनका क़द छोटा और शरीर कमज़ोर होता है। इनकी आँखें भूरी या नीली होती हैं।

वोनूम—मध्य फारमूसा के पहाड़ों में रहने वाले असभ्य लोग। ये लोग काफी ऊँचाई पर रहते हैं। इनकी औरतें बोझे को पीठ पर रख कर एक पट्टी से सिर पर लटका लेती हैं। शायद यही लोग प्राचीन इन्डो नेशियन लोग हैं। इनमें मंगोल रुधिर का प्रभाव है।

वोल्टा भाषायें—उत्तरी गोल्डकोस्ट फ्रांसीसी, नाइजर प्रदेश (जिसमें मोसी, ुन्शी और डागोम्बा प्रदेश शामिल हैं) में बोली जाने वाली अर्द्ध वांटू भाषायें।

वोगुल—मञ्जी लोगों का ओस्टयाक नाम है। ये लोग युग्रियन हैं। और ओस्टयाक लोगों से मिलते-जुलते हैं। इनका क़द छोटा सिर लम्बा और चेहरा गोल होता है। इनकी आँखें भूरी या नीली होती हैं। ये लोग शिकार करते हैं और गम्भीर रहते हैं।

वौंगा—मध्य अफ्रीका की वेंग व्यूलो झील के दक्षिण-पश्चिम में स्थित दलदलों में रहने वाले हब्शी लोग।

श

शान—ब्रह्मा के चीन आदि दक्षिणी मंगोल लोग। इनका दूसरा नाम थाई है, जिसका अर्थ "स्वाधीन" है। ये लोग थाई या स्यामी, चीनी भाषा बोलते हैं। पहाड़ी शान रियासतों में इन्हीं लोगों का निवास है। ये लोग अक्सर अपने अंगों को नीला गुदवाते हैं।

शानी—ओहाइओ प्रदेश के अलगोंक्वियन लोग।

शाविया—आर्स पठार के बर्बर लोग।

शिह—मराको के बर्बर लोग। जिनमें रिफ लोग भी शामिल हैं।

शिलूक—बड़े सिर वाले लम्बे हब्शी लोग। ये लोग नील के दक्षिणी किनारे पर रहते हैं और उत्तर में काका से लेकर नो झील तक फैले हुए हैं। कुछ लोग पूर्वी किनारे और सोबात नदी के पास भी रहते हैं। इन लोगों में हेमायटिक ख़ून बहुत मिला है। ये लोग ढोर चराते हैं और दुर्रा उगाते हैं। वे बड़े खुले दिल होते हैं। शिलूक भाषा की अभाषाओं में अनीवक, जुरे बेरी, गंग, अचोली, निकवा लागो, अलूर और चोपी भाषायें शामिल हैं।

शूवा—चाड झील के दक्षिण में रहने वाले लोग। ये लोग ढोर चराने का काम करते हैं। इनकी उत्पत्ति अरबी लोगों से हुई है। एबीसीनियन भाषा में शा या शोआ शब्द का अर्थ ही चरवाहा है। ये लोग क़द में छोटे होते हैं। लेकिन वे लड़ाका होते हैं और आज़ादी पसन्द करते हैं।

शोशोन—अमरीकन पठार के रेड इण्डियन लोग जो कोमाँची लोगों से मिलते हैं। पहले वे लोग व्योमिंग में रहते थे। ये लोग मछली, फल, मूल आदि का भोजन करते हैं।

स

स्याक—सुमात्रा द्वीप के मलय लोग।

स्यामी—इण्डोचीन के थाई लोग। कम्बोडिया के खेमर लोगों के द्वारा भारतवर्ष की सभ्यता स्यामी लोगों के यहाँ पहुँची। ये लोग बड़े उदार और हँसमुख होते हैं। लड़ने झगड़ने और चिल्लाने से उन्हें बड़ी घृणा है।

सकाई या सेनोई—मलय प्रायद्वीप के वनों में रहने वाले लोग। ये लोग बद्दू होते हैं। कुछ जंगली जानवरों से बचने के लिये पेड़ों पर झोंपड़ा बनाते हैं।

सकालव—पश्चिमी मेडागास्कर के लोग।

सालिश—बृटिश कोलम्बिया में पठार पर रहने वाले रेड इण्डियन लोग।

सारसी—एथेबास्कन जाति के अमरीकन इण्डियन।

स्काट या स्कच—स्काटलैंड के लोग।

साइबेरियन तारतार—तूरानी तुर्की लोग जो तूब और डरियाँ खाई कहलाते हैं। रूसी लोग उन्हें चर्न (काले जंगली लोग) कहते हैं।

साइबेरियन तुर्क—पूर्व के याकूत लोग और सायन पर्वत के उत्तर में साइबेरियन तारतार लोग।

सिहानक—मेडेगास्कर के पश्चिम में रहने वाले लोग। ये लोग दलदल के प्रदेश में रहते हैं और मछली मार कर अपना पेट पालते हैं।

सिक्ख—पंजाब के वीर जाट लोग जो गुरु नानक और गुरु गोविन्द सिंह के चलाये हुए मत को मानते हैं। अधिकतर बातों में वे हिन्दू ही हैं।

सिन्धी—सिन्ध प्रांत के लोग।

सिंहाली—लंका के सभ्य लोग।

सिवाश—वेंकूवर द्वीप के रेड इण्डियन लोग।

स्लोवेक—पश्चिमी स्लैव लोग। ये लोग चेकोस्लेवोकिया में रहते हैं।

स्लोवीन—क्रेरट के उत्तर में कार्निओला के यूगोस्लैव लोग। स्लोवो शब्द का अर्थ है वे लोग जो एक दूसरे को समझते हैं।

सोवो—ईडो लोगों की एक उप-जाति। जो वेनिन की प्रजा हैं। ये लोग नाइज़र डेल्टा की धाराओं में रहते हैं। लेकिन शेक्री या जेक्री लोग पानी के बिल्कुल पास रहते हैं।

सुमाली—अफ्रीका के पूर्वी तट पर रहने वाले हेमायाटिक लोग।

सोर्व—वेण्ड।

सोयात—सायन-अल्टाई की सीमा पर रहने वाले तुर्की तारतारी लोग। जो शायद डरियाँखाई लोग हैं।

स्पोनियार्ड—गेलेग्गे का प्रयोग करने वाले स्पेनवासी लोग।

स्टोनी इण्डियन—एसिनी बोइन।

ह

हनाक—बोहेमिया, मोरेविया और उत्तरी हंगारी में बसने वाले चेक लोग।

हका—क्वांटङ्ग की पहाड़ियों पर बसने वाले चीनी लोग।

हज़ारा—अफ़ग़ानिस्तान के तुर्की लोग। ये लोग मंगोल तारतार होते हैं।

हाटनटाट—दक्षिणी अफ्रीका के नावायोखोई खोइन लोग हैं। ये लोग बुशमैन से अधिक बड़े होते हैं।

हिदाता या मोनारी—उत्तरी अमरीका के सिओअन लोग जो सूर्य नृत्य बड़ी धूमधाम करते हैं।

हिमिया राइवट—दक्षिण अरब के लोग।

हिन्दू—हिन्दुस्तान के हिन्दू धर्म के मानने वाले लोग।

हुई चोल—कोरा के पूर्व में रहने वाले मेक्सिको के लोग। इनका रंग हलका भूरा होता है।

हूरन—इरोकोई लोग जो प्रायः नष्ट हो चुके हैं।

हेमायट—उत्तरी पूर्वी अफ्रीका के इथिओपियन लोग जो हब्शी नहीं हैं। गाला, सुमाली, मसाई; (पूर्वी), बर्बर, तौरेग भी इन्हीं में शामिल हैं।

हैडा—बृटिश कोलम्बिया के तट पर रहने वाले लोग बड़े चतुर नक्काशी करने वाले होते हैं।

होकलो—चीन के दक्षिणी पूर्वी तट पर रहने वाले लोग।

होपा या मोकोई—शोशोनियन बोलने वाले रेड इण्डियन लोग। इन का प्रधान पेशा खेती है। वैसे ये लोग बुनना और रंगना भी जानते हैं।

होराक—वे लोग जो बोहोमिया, मोरेविया और उत्तरी हंगारी में रहते हैं।

होवा—मेडेगास्कर में सब से ऊँची जाति के लोग।

हङ्गारियन या मेगायर (माजार)—हङ्गारी के लोग।

विदेश यात्रा के कुछ चित्र

आजकल भारतीय विद्यार्थी और अध्यापक विदेश यात्रा के लिये उतने ही उत्सुक रहते हैं जितने सनातन धर्मी हिन्दू भाई चारों धाम की यात्रा के लिये और मुसलमान भाई मक्का और मदीना की यात्रा के लिये। अन्तर केवल इतना ही है कि प्रथम समुदाय के यात्री यात्रा के फल-स्वरुप इसी जीवन में अच्छी पदवी पाने की इच्छा करते हैं, और द्वितीय समुदाय के यात्री मरने के बाद स्वर्ग में स्थान पाने की। यद्यपि मेरी अभिलाषा कभी विदेश जाने की न थी परन्तु ईश्वर की कृपा से सन् १९३६ में मैं भी अकस्मात् इस यात्रा पर चल पड़ा और मुझे भी एक वर्ष अपने देश से बाहर रहना पड़ा। मेरा अधिक समय इङ्गलैंड में ही बीता परन्तु योरुप के अन्य देशों में भी होकर मुझे गुजरने का अवकाश मिल गया था। इस लेख में उन्हीं देशों के कुछ चित्र दिये जाते हैं।
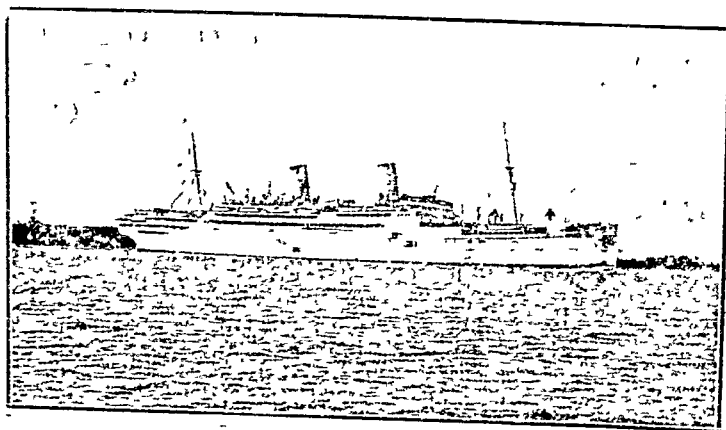
चित्र नं० १*

१—इटली की कम्पनी—"लाइड ट्रस्टीनो"—का "कान्टी वर्डी" नामक जहाज। वैस तो योरुप को यात्रा के लिये अंग्रेजी कम्पनी के बम्बई से जाने वाले साप्ताहिक जहाजों के अतिरिक्त मद्रास और कोलम्बो से फ्रेंच और जापानी जहाज भी जाते हैं परन्तु इटली की कम्पनी के बम्बई से जाने वाले जहाज हिन्दुस्तानियों को अधिक पसन्द हैं कारण कि एक तो इन जहाजों से दो दिन पहले योरुप पहुँच जाते हैं और दूसरे मुझ जैसे शाकाहारी यात्रियों के लिये इस कम्पनी के जहाज में भारतीय भोजन का अच्छा इन्तजाम रहता है। जहाज वाले कर्मचारी भोजन की दृष्टि से भारतीयों को सन्तुष्ट करने का काफी ख्याल रखते हैं। परन्तु खेद है फिर भी कभी कभी भोजन के ऊपर कुछ भारतीय यात्री उनसे बड़ा अशिष्ट व्यवहार कर बैठते हैं। अपने घर की जैसी पूड़ी तरकारी या दाल चावल जहाज में पाने की आशा रखना निरा भ्रम है। मैंने तो दोनों तरफ से इसी कम्पनी के जहाज से यात्रा की थी। इस कम्पनी का परिचय कराने के लिये मैं 'भूगोल' के पं० रामनारायण मिश्र जी का कृतज्ञ हूँ।

२—अदन की एक घाटी पार करने की सड़क का दृश्य। अप्रैल सन् १९३८ से अदन देश भारत से पृथक कर दिया गया है। भारत के हित में यह अच्छा हुआ या बुरा यह तो राजनीतिज्ञ जानें परन्तु लालसागर में प्रवेश करने के लिये इस बन्दरगाह का स्थान है बड़े मार्के का। पीने के जल की इस देश में बड़ी कमी है। वर्षा न होने के कारण पहाड़ियों पर वृक्षों या घास का अभाव है। यहाँ के काले काले पहाड़ कदाचित ज्वालामुखीय शिलाओं के बने हैं।

३—लाल सागर का जल अपने नाम के विपरीत स्वच्छ नीले रंग का है। सितम्बर के मास में केबिन में बिजली के पंखों के होते हुये भी बड़ी गर्मी मालूम पड़ती है क्योंकि इस सागर के दोनों किनारे रेगिस्तानी देश हैं। इस समय यात्रियों को सबसे अच्छा स्थान जहाज के अगले हिस्से के ऊपर का पसन्द आता है जहाँ पर दोपहर को शामियाना लग जाता है और

* चित्रों में जो संख्या पड़ी है उसी संख्या वाले पैराग्राफ़ में उनका वर्णन दिया गया है। —सम्पादक

यात्री डेक पर कुर्सी या रस्सों के ढेर पर बैठकर खूब हवा लेते हैं। रात के बारह बजे तक भी केबिन में जाने का जी नहीं चाहता।

४—अफ्रीका के इटेलियन पोर्ट "मसावा" में इटली के बैङ्क की इमारत। एबीसीनिया की लड़ाई में इटली की फौजों का यह खास केन्द्र था। खुश्की के कारण यहाँ पर हरियाली बिल्कुल नहीं है। एक दो बम्बई और सिन्ध प्रान्त के रहने वाले सौदागरों की दुकानें भी हैं परन्तु उनकी दुकान पर कपड़ा अधिकतः इटली देश का था न कि बम्बई का यद्यपि बम्बई वहाँ से अधि नजदीक शहर है। सभी देश अपने माल की खप चाहते हैं। जब बम्बई शहर में ही स्वयं भारत के मा के मुकाबिले विदेशीय माल अधिक मिलता है तो वह तो वहाँ का माल मिलने ही क्यों लगा। इटली के देश में से भारतीय व्यापारी अधिक कमा कर यहाँ ला भी नहीं सकते। वहाँ का वहाँ ही खर्च कर देना होता है या देश छोड़ने पर बहुत सा भाग सरकार द्वारा जब्त कर लिया जाता है।

चित्र नं० २

चित्र नं० ३

चित्र नं० ४

५—मिश्र देश के "पोर्ट सईद" शहर की मशहूर अंग्रेजी दुकान जहां से यात्री चीजें खरीदते हैं। पोर्ट सईद में पूर्व और पश्चिम की रीति रिवाजों का मिश्रण खूब देखने में आता है। यहाँ की स्त्रियों का बुर्का पूर्वीय रिवाज का द्योतक है और सड़क पर वेचने वालों का मोल भाव में झगड़ा करने से हिन्दोस्तान के वाज़ार का दृश्य याद आता है। स्त्रियों के नग्न चित्र वेचने वाले परदेशियों को सड़क पर काफी परेशान करते हैं। एबीसीनिया की लड़ाई में मिस्र देश ने मौका पाकर स्वराज्य ले ही लिया। विदेशों में शिक्षा प्राप्त करने के लिये यहाँ की सरकार अब काफी विद्यार्थी भेज रही है।

६—इटली के 'वेनिस' शहर में सड़कों के स्थान पर नहरे हैं जिनमें नाव (गोन्डोला) से सफ़र किया जाता है। नहरों पर जगह जगह पुल बने हुए हैं। वेनिस की कई गलियां भारत के छोटे कस्बों की तरह ईंट से बनी हैं और कई तो काफी तंग भी हैं और काशी की गलियों की याद दिलाती हैं। वेनिस के इधर उधर कई द्वीप हैं जिन में तरह तरह के कारखाने हैं। एक द्वीप में लड़कियों को कपड़े पर काढ़ना सिखाने का मशहूर स्कूल है। वेनिस में कांच के कारखाने मशहूर हैं जिन में अनेक तरह की खूबसूरत चीजें बनती हैं। चाय के सेट (कांच के) दो दो सौ रुपये के मिलते हैं। प्रायः दुकानदार समझते हैं कि भारत से आने वाले

चित्र नं० ५

चित्र नं० ६

सब यात्री धनवान राजा महाराजा ही होते हैं इसलिये ऐसी चीजें खरीद लेने का बड़ा अनुरोध करते हैं। भारत की तरह सिगरेट इटली में सस्ती नहीं है (लेखक सिगरेट न पीने वाला होकर ठीक तो जानता नहीं) कारण कि कस्टम वाले प्रायः यही सवाल करते हैं कि साथ में तम्बाकू तो नहीं है और वेनिस में यह में अद्वितीय देश है। परन्तु जिन्होंने कश्मीर को देखा है वे कहते हैं कि कश्मीर में भी अनेक स्थान योरुप के इस देश से टक्कर सुन्दरता में ले सकते हैं परन्तु कश्मीर गवर्नमेंट न तो उनको देखने के लिये यात्रियों को आकर्षित करने का प्रचार करती हैं और न वहां पर यात्रियों को ठहरने इत्यादि का इतना सुभीता
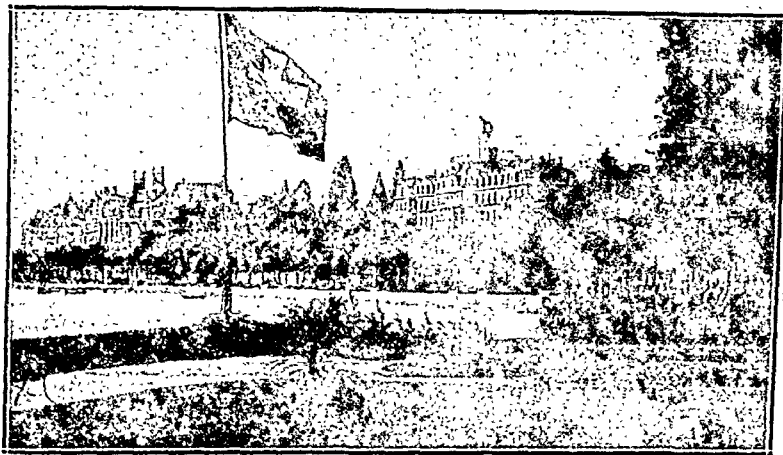
चित्र नं० ७
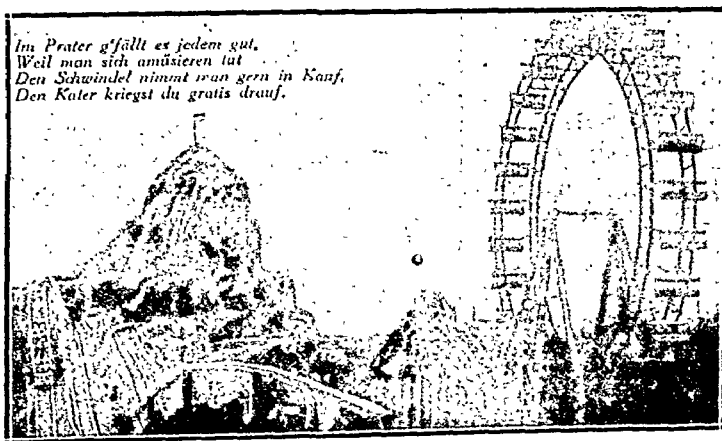
चित्र नं० ८

देखने में आया कि यात्री जो गोन्डोला में से सिगरेट का बचा हुआ छोटा टुकड़ा नहर के तट पर फेंक देते थे तो छोटे छोटे ग़रीब लड़के उन टुकड़ों को उठाकर पीने लगते थे।

७—जनेवा में राष्ट्रसंघ (League of Nations) की नई इमारत, स्विटज़रलैंड सचमुच सुन्दरता प्राप्त होता है। स्विटजरलैंड में भिन्न भिन्न धर्मावलम्बी और भिन्न भिन्न भाषा के बोलने वाले होते हुए भी देश में पूर्ण एकता है। इस देश में ७२ फीसदी मनुष्य जर्मन भाषा, २१ फी सदी फ्रेञ्च, ६ फीसदी इटेलियन और शेष २ फीसदी अन्य भाषाएँ बोलते हैं। एक फ्रेञ्च लेखक ने लिखा था " The swiss milk

their cows and live peaceably" अर्थात् स्विटजरलैंड के लोग प्रायः देहातों मे रहने वाले और मक्खन दूध पैदा करके यात्रियों के लिये होटल चलाकर निर्वाह करने वाले हैं। परन्तु यह बात ग़लत है। अंकों से पता चलता है कि यह देश मशीनों के उपयोग में किसी से पीछे नहीं है। यहां पर अनेक घड़ियों के और कृषि और बिजली इत्यादि की मशीनों के विशाल कारखाने हैं।

८—वियना शहर के तफरीह स्थान (Amusement Park) का एक भाग। यहां पर एक विशाल चरख है जो करीब २०० फोट ऊँचा होगा। इस पर चढ़कर वियना शहर का सारा दृश्य दिखाई देता है। पास में बनावटी पहाड़ी पर छोटी छोटी ट्रालियां हैं जो बिजली से चलती हैं और पहाड़ी के चारों तरफ बनावटी छोटी सी नदी है जिसमें छोटी छोटी नावें जल के साथ बहती हैं। ट्रालियां जब बड़े वेग से पहाड़ी की घाटियों और ढालों पर दौड़ती हैं तो उनपर बैठे हुए बच्चे और स्त्रियों की घिग्घी बंध जाती हैं और दर्शकों को चीखें सुनाई देती हैं। इन सवारियों के अतिरिक्त यात्रियों को तफरीह के लिये अनेक प्रकार की सवारी और सामान इस पार्क में रहता है। शाम के समय यहां बड़ी भीड़ एकत्रित रहती है।
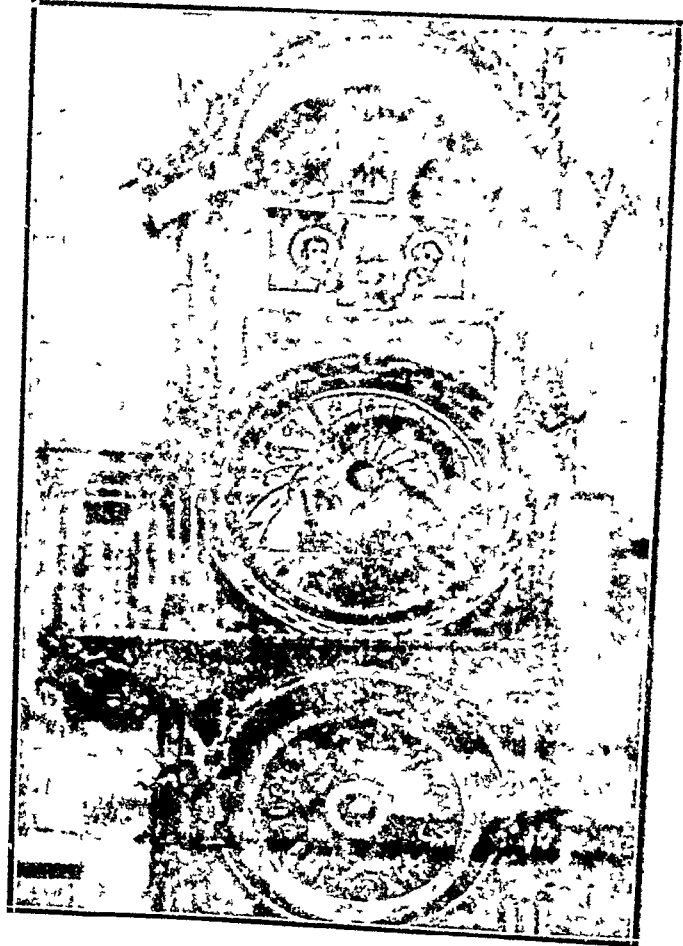
९—चेकोस्लोवेकिया देश के 'प्राग' नगर में योरुप में सबसे पुरानी घंटा घड़ी। यह घड़ा सोलहवीं शताब्दी में बनी थी। घंटा बजने के साथ साथ इसमें तस्वीरें भी इधर से उधर चलती हैं और प्रत्येक तस्वीर जनता को एक खास उपदेश देने के लिये रक्खी गई है। चेकोस्लोवेकिया की दुकानों पर बहुत सी चीजों पर 'Made in England' लिखा देखा जिस से पता चलता है कि इङ्गलैंड के माल को खरीदने के लिये यह अच्छा क्षेत्र है और इस देश की इङ्गलैंड से बहुत मित्रता है। खेद है कि उसी मित्र ने आज मुसीबत के वक्त इस देश को लड़ाई से बचाने के बहाने उस को छिन्न भिन्न करा दिया।

१०—म्यूनिक का म्यूज़ियम—विज्ञान की शिक्षा का जनता में प्रचार करने के लिये संसार में इस म्यूजियम का पहला स्थान है। इसमें क़रीब ४०० कमरे हैं। म्यूजियम के नीचे बनावटी खानें बनी हैं जहां पर यह दिखाया गया है कि कोयला इत्यादि खनिजें कैसे निकाली जाती है। यदि भिन्न भिन्न प्रकार के रेलवे पुलों की बनावट दिखानी है तो वैसे पुल कमरे

चित्र नं० ९

की छत के पास एक दीवार से दूसरी दीवार तक सचमुच के बना दिये हैं। हवाई जहाजों के कमरों में चिड़ियों के उड़ने के सिद्धान्त समझाने से आरम्भ किया है और अधुनिक जैप्लन तक दिखाये गये हैं। अनेक मशीनों को दर्शकगण स्विच को दबाकर जितनी

चित्र नं० १०

चित्र नं० ११

बार चाहें चलाकर देख सकते हैं, कोई रोक टोक नहीं। जर्मन गवर्नमेंट जनता में वैज्ञानिक ज्ञान के प्रचार के लिये कितनी उत्सुक है इसका पता इस बात से चलता है कि इस म्यूजियम की प्रवेश फी एक दिन की करीब १) और एक महीने को करीब २) है।जिससे प्रत्येक दर्शक को म्यूजियम को कई बार देखने की इच्छा होती है।

११—वर्लिन का पार्लेमेन्ट घर—नाजी गवर्नमेन्ट ने जर्मनी की काया पलट कर उस देश को संसार में एक अति उच्च स्थान प्राप्त करा दिया है। सरहद पर रेलगाड़ियां एक घंटे के करीब खड़ी रहती है तब सब यात्रियों के बटुए देखे जाते हैं और उनके पास जितना रुपया होता है उसकी रसीद उनको दे दी जाती है। जब वे यात्री देश से बाहर निकलते हैं तो फिर दूसरी सरहद पर उनके पास की रकम देखी

जाती है और पहली रसीद से मिलाई जाती है जिससे पता चल जाता है यात्री देश का पैसा तो बाहर नहीं ले जा रहा है। हमारे देश की तरह यह आज़ादी नहीं है कि बम्बई के बन्दरगाह से जो कोई चाहे जितना धन बांधकर ले जा सकता है। जर्मन लोगों को स्वयं भी देश से बाहर सैर को एक खास रकम ही ले जाने की इजाजत है उसके व्यय हो जाने पर या तो सैर करने वाले देश में वापिस आ जावें या फिर अपना निर्वाह विदेश में स्वयं पैसा कमाकर करें। यहां के राजे महाराजों की तरह जर्मनी से

करने के लिये तो कई एजेन्ट ने हिन्दुस्तानी भाषा खूब सीख ली है। वेश्या घरों में जाना सोसाइटी की नजर में बुरा नहीं गिना जाता और इन घरों में कई जगह नग्न स्त्रियों के दर्शन करने के लिये हमारे सैकड़ों धनी भारतीय भाई पेरिस की यात्रा करते हैं। पेरिस का (Art Museum) संसार में अद्वितीय गिना जाता है परन्तु इस म्यूज़ियम में भी कुछ दर्शकों को स्त्रियों के चित्रों में न्यूनाधिक नग्नता का प्रदर्शन करना अखरता है। जर्मनी और इङ्गलैंड के वासियों के मुकाबिले में इस देश के चेहरे पर उतनी रौनक नहीं
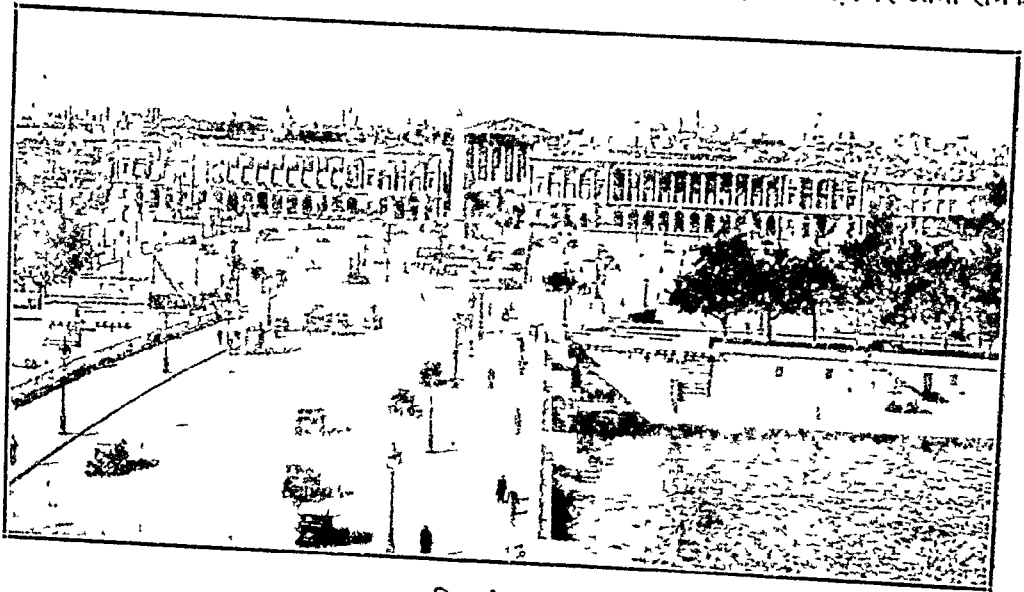
चित्र नं० १२

बाहर विदेशों में अपरिमित धन को व्यय करने कोई नागरिक नहीं जा सकता।

१२—पेरिस शहर का प्रसिद्ध चौक (Place de la Corcorde)—यहां पर छः सड़कें आकर मिली हैं। रात को यहां पर बड़ी रौनक रहती है। कहते हैं पेरिस शहर की सी रौनक संसार में कहीं पर नहीं। विदेशियों से रात को यह रौनक दिखाने के लिये यहां की कम्पनियां खूब रुपया ठगती हैं। जिन नाचघरों को देखने की फास साधारणतः २) है उनके लिये ये कम्पनियां १०) तक ले लेती है। राजा महाराजा से तो लेने की रकम का कहना ही क्या। उनकी खातिर

है और वे उनसे साधारणतः कमजोर दिखाई देते हैं। कोई कोई कहते हैं कि यह देश कृषि प्रधान देश है इसलिये यहां के वासी अधिक गरीब हैं। जहां पर आलीशान महल खड़े हैं वहीं एक ओर महागरीबी का दृश्य मुझे भी दिखाई पड़ ही गया। वह यह था कि सड़क पर मूंगफली के छिलकों में से एक लड़का साबित मूंगफली तलाश कर रहा था और एक मूंगफली मिल जाने पर बड़ी खुशी से उसे खा गया। कदाचित भारत ऐसे गरीब देश का भी भिखारी एक मूंगफली के लिये इतना कष्ट न उठायेगा। यहां तो मांगने पर उसे अनायास ही कोई दो एक मूंगफली

दे देगा। कहते हैं फ्रान्स स्वाधीनता, समानता और सवान्धवता (Liberty Equality and Fraternity) का देश है और वहाँ पर ऊँच-नीच, देशी-विदेशी में भेद-भाव दृष्टिगोचर नहीं होता। परन्तु जिन जिन मित्रों ने मुझसे इस बात की बड़ाई की उनसे मैंने पूछा कि क्या फ्रांसीसी हिन्दुस्तान (French India) की दशा बृटिश भारत से अच्छी है? तब वे चुप हो गये। यह सब सिद्धान्त तथा नक्शे और इश्तहारों के द्वारा कराया था। बेचारे भारत को इस नुमाइश में भी स्थान न मिला। सुना जाता है कि पेरिस में रहने वाले कई गुजराती व्यापारी अपने खर्चे से एक भवन बनाकर भारतीय चीजों का प्रदर्शन करना चाहते थे परन्तु चूंकि वे उस भवन को बृटिश भवन से अलग रखना चाहते थे इस कारण उनको अपना भवन बनाने की आज्ञा न दी गई। बृटिश भवन भी बड़ा रद्दी था उसमें
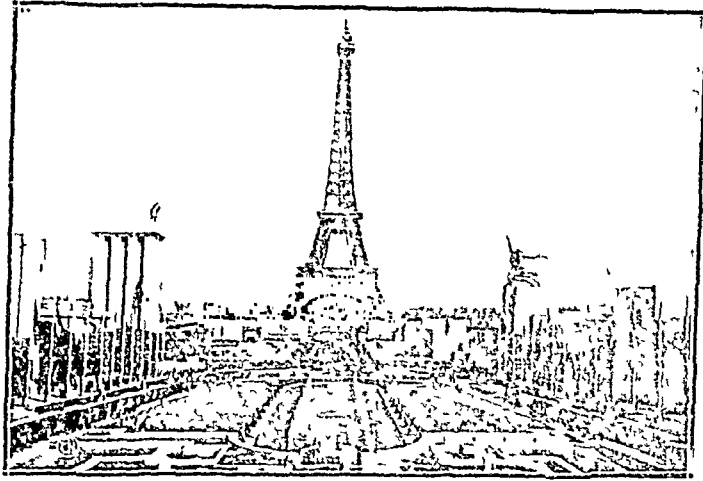
चित्र नं० १२

इन देशों के घर पर भले ही लागू हों उपनिवेशों में कदापि नहीं बरते जाते।

१२—पेरिस की सन् १९३६ की अन्तराष्ट्रीय नुमाइश में जर्मनी और रूस के भावों का दृश्य बड़े मार्के का था। बीच में ९०० फीट से अधिक ऊँचा ईफल टावर (Eiffel Tower) है जिसका स्थान उँचाई में संसार में दूसरा है। इस नुमाइश में संसार के प्रत्येक देश ने लाखों रुपये लगाकर अपना अपना भवन (pavellion) बनाया था जिसमें अपनी उन्नति का दिग्दर्शन चीजों और मोडिल्स के संग्रह से केवल मेज कुर्सी और खेल और शिकार के सामान का प्रदर्शन किया था। इङ्गलैंड के दर्शकों ने भी स्वयं बृटिश भवन की बुराई अंग्रेजी पत्रों में प्रकाशित कराई थी। यह नुमाइश करीब ६ महीने रही थी और प्रत्येक देश ने अपनी उन्नति का प्रचार संसार के यात्रियों में खूब किया और उनको अपने यहां आने को उत्साहित करने के लिये इश्तहार इत्यादि मुफ़्त उनमें बांटे। भारत इससे भी वंचित रहा इसका दुख है।

—निरंजनलाल शर्मा

भोजन

वहुत पुराने समय के लोगों को रोटी

१—भोजन तयार है

खाने को नहीं मिलती थी। उस समय के लोग खेती करना नहीं जानते थे। उस समय के लड़के लड़कियों को जव भूख लगती तव वे जंगली वेर इकट्ठे कर के खाते थे। कुछ लड़के पेड़ों के ऊपर चढ़ कर जगली फल तोड़ लेते थे। उनके मां वाप तेज पत्थर को लकड़ी में वांध कर भाला वनाते और जंगली जानवरों का शिकार करने जाते। कभी कभी वे नदियों और झीलों से मछलियाँ पकड़ लाते। लेकिन उस समय के लोगों को आग का पता न था वे मांस या मछली को तेज पत्थर से काट कर कच्चा ही खा जाते थे। फिर किसी ने आग का पता लगाया। शायद कोई लड़का दो पत्थरों से खेल रहा था। उसने कइ वार एक पत्थर को दूसरे पत्थर में मारा। इससे जो चिनगारियाँ निकलीं उनसे पास की सूखी पत्तियाँ जलने लगीं। पहले वह वहुत डरा लेकिन उसके कुटुम्व के वड़े वूढ़े लोगों ने आग से कई तरह के काम लिये। वे ठंड से वचने के लिये आग तापते थे। वे कच्चे माँस को आग में भून कर और स्वादिष्ट वना कर खाने लगे। कुछ लोगों ने मछलियों और चिड़ियों को पकड़ने के लिये जाल तयार किये। कुछ लोगों ने हिरण और दूसरे जानवरों को मारने के लिये धनुष वाण वनाये।

मांस से ऊव कर कुछ लोग किसी दूसरे
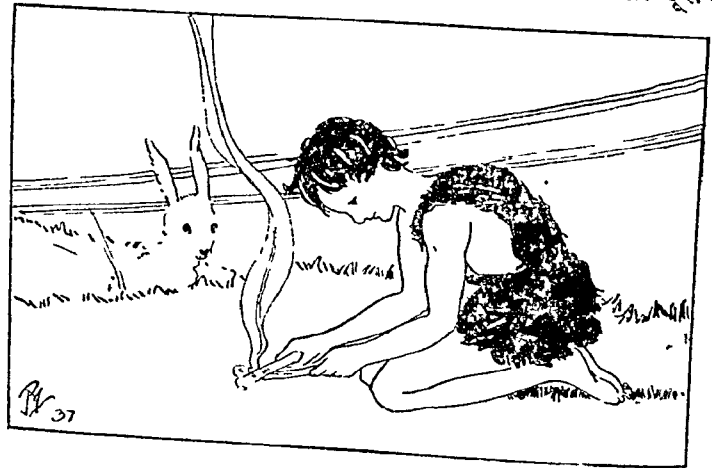
२—पुराने समय में आग वनाने का ढंग

३—प्राचीन समय के जानवरों के शिकार करने का ढंग

४—प्राचीन मिस्री और एसीरियन लोगों का भोजन

५—पुराने समय में खेतों की ज़ताई
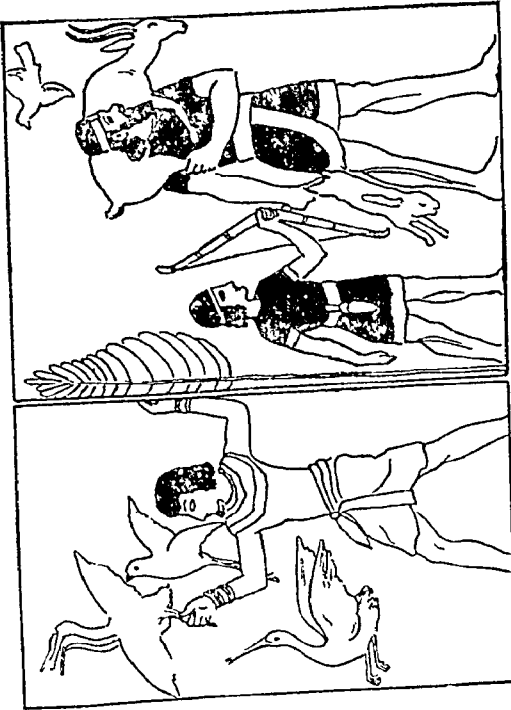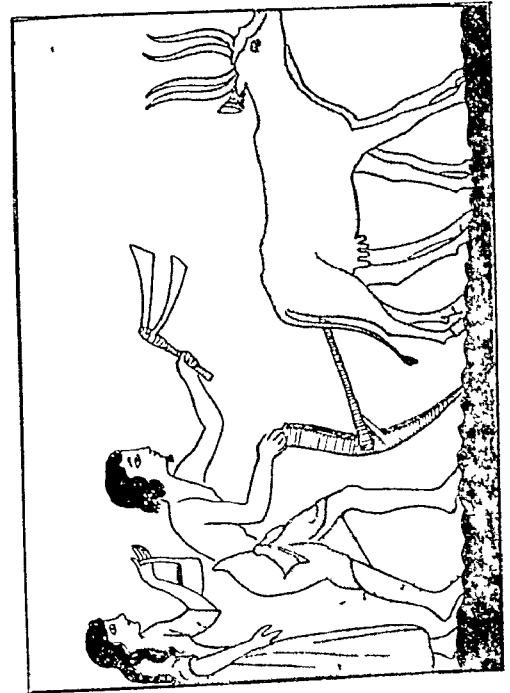
६—प्राचीन मिस्रियों का हल

भोजन को खोजने लगे। पहले पहल उन्होंने गेहूँ को छोटे छोटे सूराखों में बोया। फिर हल जोत कर गेहूँ बोया जाने लगा।

मिस्र देश के पिरामिड में हल जोतने की जो तस्वीर बनी है वह लगभग साढ़े सात हजार वर्ष की पुरानी है। सिन्ध प्रान्त के मोहनजोदड़ो की खुदाई में जो गेहूँ मिले हैं वे इससे भी अधिक पुराने हैं।

जिस रोटी को हम लोग खाते हैं वह गेहूँ के आटे से बनती है। गेहूँ की रोटी पुराने समय से मनुष्य खाते आये हैं। प्राचीन मिस्री लोगों का विश्वास था कि गेहूँ को उनके एक देवता ने प्रसन्न होकर उन्हें भोजन के लिये दिया था चीनी लोग इसे स्वर्ग का वरदान कहते थे। हमारे यहाँ गेहूँ को अन्नों का राजा मानते हैं।

आज कल संसार के अधिकतर मनुष्यों का प्रधान भोजन गेहूँ है। संसार के बहुत बड़े भाग में गेहूँ उगाया जाता है। कुछ लोग इसे पुराने ढंग से बोते और काटते हैं योरुप और अमरीका के किसान बड़े बड़े हलों में इंजन लगाकर गेहूँ को बोते और काटते हैं।

अमरीका के रेड इंडियन लोग मकई उगाते थे। वे मकई के बड़े बड़े दानों को सिल पर पीस कर इसके आटे से रोटी बनाते थे। आज कल उनके गोरे पड़ोसी आटे की बड़ी बड़ी चक्कियों में गेहूँ पीसते हैं। रेड इंडियन माँ आटे को. माड़कर चपटे गरम पत्थर पर आटे की मोटी रोटी बनाती है।

धान

कुछ देशों में बालकों को बार बार भात ही खाने को मिलता है। चीन, जापान, बरमा,
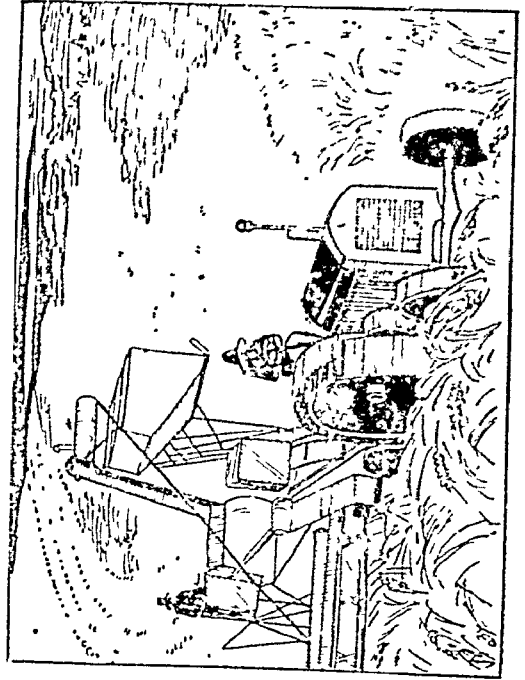
७—गेहूँ की कटाई
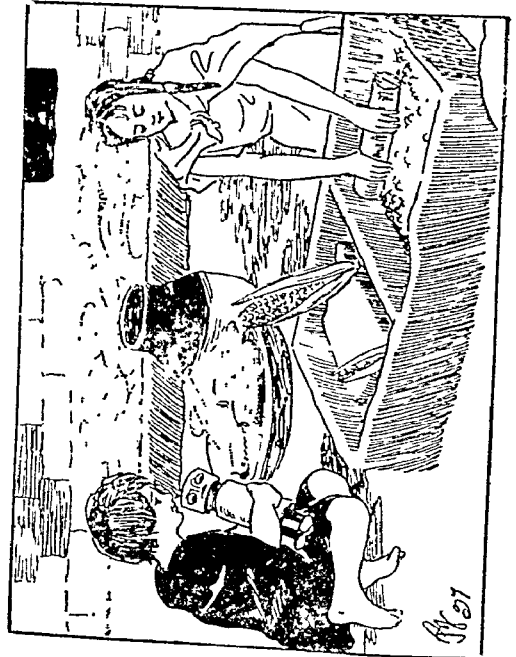
८—मकई का भोजन

स्याम और हमारे देश के बहुत से भागों में लोग चावल ही खाते हैं। इन भागों में धान का उगाना आसान है। यहाँ धान सस्ता बिकता है। इस लिये ग़रीब लोग अधिकतर भात ही खाते हैं।

धान कुछ पानी भरे हुए कीचड़ वाले खेतों में उगता है। धान बोने के पहले किसान खेत को खूब जोतता है। जोतने के लिये वह हल में बैल, भैंसा, घोड़ा, या टट्टू जोतता है। औरतें घुटने तक भरे हुए खेतों में धान लगाती हैं। किसान को इस बात का बड़ा डर रहता है कि कहीं चिड़ियां उसके बीजों या छोटे अंकुरों को खा न जावें। अक्सर वह उनको डराने के लिये खेत में इधर उधर झंडे लगा देता है। कभी वह घड़े को रंगकर उल्टा लटका देता है। कभी वह टाट या दूसरे पुराने कपड़ों का आदमी बनाकर खड़ा कर देता था।

बहुत से गरीब ज्वार और बाजरा की रोटी खाते हैं। यह वर्षा होते ही बो दिया जाता है। इसको बहुत पानी की जरूरत नहीं होती है। इससे जानवरों के लिये बहुत सा चारा मिल जाता है। यह अनाज सस्ता बिकता है। इस लिये बहुत से गरीब लोग ज्वार बाजरा की रोटी खाते हैं। ज्वार का दाना सफेद और चौड़ा होता है। बाजरा का दाना छोटा और कुछ काला होता है। ज्वार की रोटी सफेद और बाजरा की रोटी काली होती है। इसका आटा कुछ खुरदरा होता है। माँ को रोटी पोने में बड़ी होशियारी करनी पड़ती है। जब पोते पोते रोटी का कुछ भाग टूट पड़ता है तो उसे फिर से रोटी पोनी पड़ती है।

मछली मारने का काम बहुत पुराने समय से होता आया है। आज कल भी बहुत से देशों के लोग मछली मार कर अपनी गुज़र करते हैं। वे तरह तरह की नाव ले जाकर समुद्र झील या नदी से मछली पकड़ते हैं। कुछ मछलियाँ बड़ी होती हैं। वे फँस जाने पर छुड़ाने की कोशिश करती हैं। इससे अक्सर नाव उलट जाती है। हवा और तूफान में भी

९—भोजन के लिये मछली मारना

मछली मारने वाला बड़े संकट में पड़ जाता है। जब वह मछली भर कर लौटता है तो सब लोग खुश होते हैं। कभी कभी उसे खाली ही लौटना पड़ता है।

जब नाव मछलियों से भरी हुई आती है तब लड़के लड़कियाँ मछलियाँ उतरवाने में मदद देती हैं।

शक्कर सब को अच्छी लगती है। बहुत

दिनों तक लोगों को शकर का पता न चला। पहले जब लोगों को मीठी चीज खाने की इच्छा होती थी तो वे शहद खाया करते थे। शहद की मक्खियाँ इस शहद को इकट्ठा करती हैं। फिर एक ऐसे पौधे का पता लगा जिसके रस में मिठास था। यह गाँठदार गोल पौदा

१०—गन्ना

काफी ऊँचा होता है। इसके सिरे पर लम्बी लम्बी पत्तियां होती हैं। जड़ के पास वाला भाग अधिक मीठा होता है। ऊपरी सिरा कम मीठा होता है। आज कल भी बहुत से लोग गन्ने को चूसते हैं। पत्तों को अलग करने के बाद इन गन्नों को कोल्हू में पेरते हैं। फिर इनके रस को औंट कर गुड़, राब और शकर ... हैं।

अमरीका के लोग शकर बनाने के लिये मेपिल नाम के बड़े पेड़ का रस निकालते हैं। वसन्त ऋतु में लोग मेपिल के बागों में जाकर हर एक पेड़ में छेद कर देते हैं। छेद के नीचे बाल्टी रख देते हैं। फिर इसी रस को इकट्ठा करके औंट लेते हैं। इसकी शकर भी गन्नों की
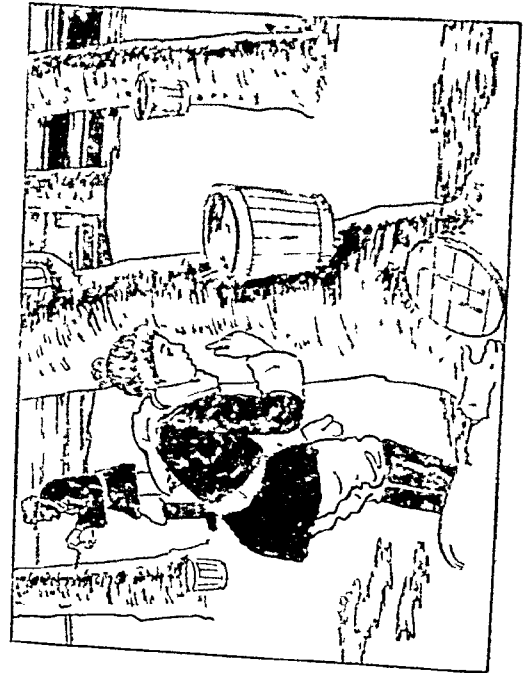
११—शकर बनाने के लिये रस निकाला जा रहा है

शकर की तरह होती है। योरुप के लोग चुकन्दर की जड़ों को पेर कर रस निकालते हैं और इस रस से शकर तयार करते हैं।

भोजन के लिये चिकनाई भी आवश्यक है। ठंडे प्रदेश में रहने वाले एस्किमो लोग ह्वेल और दूसरी मछलियों की चरबी खाते हैं। कुछ लोग तिल, सरसों, महुआ, बिनौले, पोस्त, जैतून, नारियल और मूँगफली आदि को पेर कर तेल निकालते हैं। इस तेल को वे

१२—तैल

१३—नमक

१४—दूध देने वाली गाय

१५—बेल्जियम में दूध बेचने का ढंग
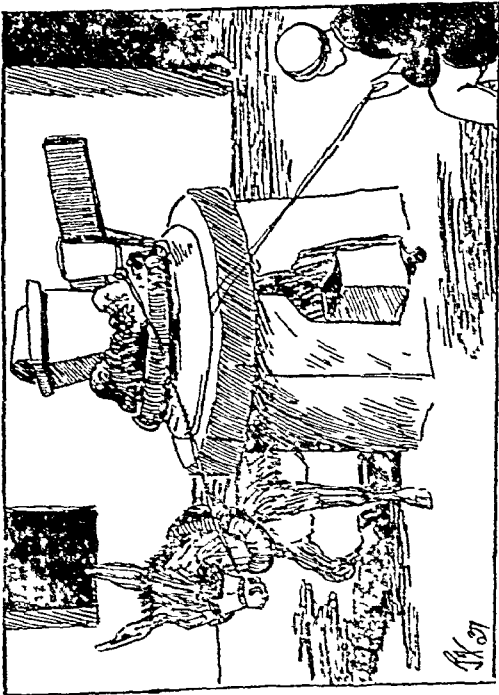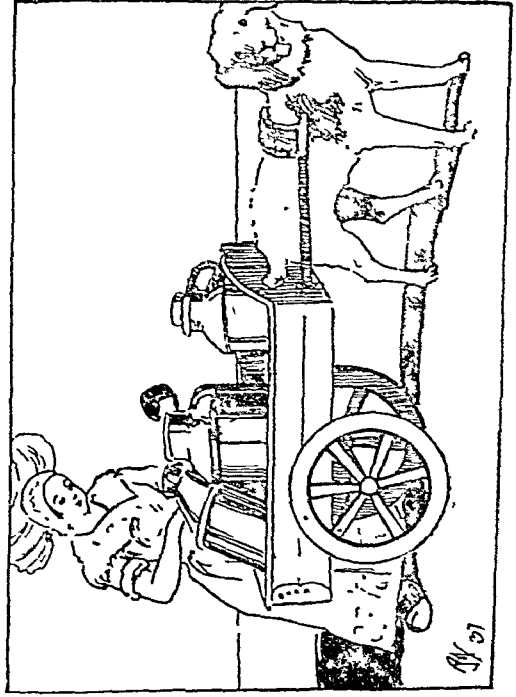
अपने भोजन में ठंडा या औट कर मिलाते और खाते हैं।

सर्वोत्तम चिकनाई मक्खन या घी की होती है। मक्खन दूध से निकाला जाता है। गाय का मक्खन बड़ा स्वादिष्ट होता है।

नमक के बिना कोई दाल या तरकारी अच्छी नहीं लगती है। जहाँ नमक नहीं होता है वहाँ के लोग दूर दूर से नमक मँगाते हैं। अफ्रीका में ऊँटों के काफिले नमक को लाद कर एक भाग से दूसरे भाग को ले जाते हैं। समुद्रों के खारी पानी में अपार नमक भरा पड़ा है। इस पानी को सुखा कर बहुत सा नमक तयार किया जाता है। कहीं कहीं खारी कुओं और झीलों के पानी को सुखा कर नमक निकालते हैं। कुछ भागों में नमक की खानें हैं। इनकी चट्टानें ऊपर से देखने से पत्थर की तरह कड़ी मालूम होती हैं। लेकिन अगर उन पर पानी डालो तो वे घुलने लगती हैं। लोग इन्हीं कड़ी चट्टानों को खोदकर नमक के बड़े बड़े डले दूर दूर भेजते हैं। इन्हीं डलों को तोड़कर और पीस कर तरकारी और दूसरी चीज़ों में नमक डालते है।

दूध बड़ा गुणकारी होता है। सबसे अच्छा दूध गाय का होता है। भैंस का दूध अधिक गाढ़ा होता है उसमें से मक्खन भी अधिक निकलता है। कुछ लोग भेड़ या बकरी का दूध पीते हैं। यह बहुत अधिक गाढ़ा होता है। इसके सेर भर दूध में लगभग आध सेर या ढाई पाव चरबी निकलती है। रेगिस्तान के लोग ऊंटनी का दूध पीते हैं। ऊंटनी बहुत ऊंची होती है। उसको खड़े खड़े दुहना पड़ता है। दूध का बर्तन रस्सी बाँध कर गले में लटका लिया जाता है। मगर एशिया के मंगोल लोग घोड़ी का दूध दुहते हैं। उससे वे दही की तरह कूमिस बनाते हैं। गधी का दूध बहुत कम लोग पीते हैं।

कुछ अपने घर में दूध देने वाला जानवर पालते हैं। कुछ लोग ग्वाले की गाय को अपने सामने दुहवाते हैं। कुछ लोग बोतलों में बन्द

९६—केला और छुहारा
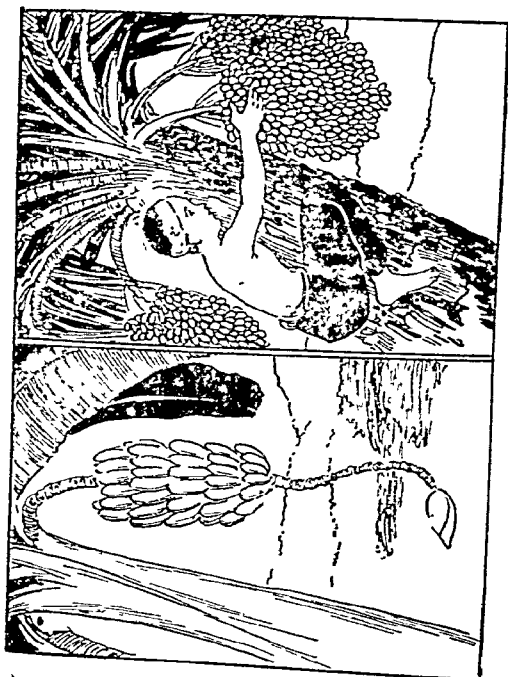
किया हुआ दूध मोल लेते हैं। हालैंड के लड़के लड़कियाँ दूध के कनस्तरों को एक छोटी गाड़ी पर रख कर बेचने जाते हैं, इस गाड़ी को कुत्ता खींचता है।

फल कई तरह के होते हैं। कुछ फल लताओं में कुछ पेड़ों में और कुछ झाड़ियों में लगते हैं। पहले इतने बड़े और अच्छे फल न थे। मनुष्यों ने इन्हें अच्छी ज़मीन में बोकर

और समय से खाद और पानी देकर धीरे धीरे बड़ा किया है। आम हमारे बागों में लगता है। केला घर, कुएँ और खेत के पास लगाया जा सकता है। पपीता पानी बहने वाली नाली के पास या घर और बगीचे में अच्छा लगता है। नीबू और नारंगी के पेड़ बड़े हो जाने पर फल देने लगते हैं। बादाम, अखरोट, सेब, अंगूर, छुहारा आदि बहुत से फल बाहर से आते हैं। छुहारा रेगिस्तान की खुश्क जलवायु में पानी मिलने पर अच्छा लगता है। खरबूजा और तरबूज़ नदी के पड़ोस की तर ज़मीन में गरमी की ऋतु में उगाये जाते हैं।

तरह तरह के शाक और तरकारी बड़े गुणकारी होते हैं। यह दूसरे भोजन को शीघ्र पचाते हैं और पेट साफ रखते हैं। हमारे पड़ोस में बहुत से लोग मूली, आलू, भिंडी, गोभी, सेम, सोआ, मेथी, लौकी आदि कई तरह की तरकारी उगाते हैं। इनमें से कुछ चीज़ें हम लोग अपने घर या बगीचे की छोटी छोटी क्यारियों में भी उगा सकते हैं। ताज़ी तरकारी बड़ी अच्छी होती है। कुछ लोग साग को सुखा कर दूसरी ऋतु के लिये रख लेते हैं। दूर देशों में भेजने के लिये तरकारी बरफ में दबा कर भेजी जाती है। इससे वह रास्ते में नहीं बिगड़ती है।

१७—आलू

चेकोस्लोवेकिया की हत्या

(शान्ति स्वरूप गुप्ता, एम० ए०)

चेक राष्ट्र का जन्म

चेकोस्लोवेकिया (Czechoslovakia) के स्वतंत्र राष्ट्र का जन्म देशभक्त मसारिक (Masaryk) बेनिस (Benes) और स्टीफानिक (Stephanik) के असीम साहस और अथक परिश्रम के द्वारा १९१९ के महायुद्ध के पश्चात हुआ। राष्ट्रपति विलसन (President Wilson) प्रजातन्त्रवाद और राष्ट्रवाद के भक्तों में थे। अतः उन्होंने इस नये राष्ट्र के बनने में सहायता दी। मि० लायड जार्ज (Mr. Lloyd George) और म० क्लीमांसो (M. Clemenceau) ने इसकी सहायता राजनीतिक दृष्टि से की। वे बोहीमिया (Bohemia) को आस्ट्रिया (Austria) से अलग करना चाहते थे क्योंकि यहाँ पर उसके मुख्य औद्योगिक सामग्रियों के केन्द्र स्थित थे। इस प्रकार बोहीमिया (Bohemia) मोरेविया (Moravia) स्लोवेकिया (Slovakia) और रूथेनिया (Ruthenia) को मिला कर चेकोस्लोवेकिया के नये राष्ट्र की रचना की गई।

आरम्भ से ही यह एक कृत्रिम राष्ट्र था। महाशक्तियां राष्ट्रवाद के सिद्धान्त को भूल गईं। अतएव चेकोस्लोवेकिया एक राष्ट्र न हो सका। इसकी जनसंख्या में ७० प्रतिशत चेक २० प्रतिशत जर्मन और १० प्रतिशत रूथेनियन थे। इसकी स्थिति भी भय से रहित न थी। शक्तिशाली राष्ट्र इसे चारों ओर से घेरे हुए थे। उत्तर-पश्चिम में जर्मनी, पश्चिम में आस्ट्रिया (जो अब जर्मनी से संयुक्त हो चुका है) पूर्व में पोलैंड (Poland) और दक्षिण में हंगारी (Hungary) ये राष्ट्र सदैव इस पर अपनी लोभ की दृष्टि जमाए रहे हैं। यहाँ का शासन-विधान उदार और प्रजातांत्रिक है। किन्तु इस राष्ट्र में कितनी ऐसी कमजोरियाँ हैं जो इसके पड़ोसियों को हस्तक्षेप करने का अवसर देती रही है।

अल्पसंख्यकों का प्रश्न

चेकोस्लोवेकिया की सबसे बड़ी कमजोरी यह है कि वहाँ पर जर्मन स्लोवैक, पोल (Poles) मेगायर (Magyar) और रूथेनियन इत्यादि जातियों के अल्पसंख्यकों की पृथक पृथक बस्तियाँ हैं। वे चेक राष्ट्र में अपनी सत्ता को मिलाना नहीं चाहते। अपने धर्म, अपनी संस्कृति और अपनी शासन-प्रणाली पर वे पूर्ण स्वायत्त अधिकार चाहते हैं। इतना ही नहीं इस अधिकार को प्राप्त करने के लिये वे जर्मनी पोलैंड और हंगारी से सहायता पाने के लिये चेकोस्लोवेकिया के विरुद्ध षड़यन्त्र रचते रहते हैं। सूडेटन जर्मनों ने हर हेनलाइन (Herr Henlein) के नेतृत्व में नाज़ी (Nazi) दल बनाया और जर्मनी के तानाशाह हिटलर से सहायता के लिये प्रार्थना की। स्लोवैक लोगों ने भी देखा कि अवसर अच्छा है। फ़ादर ह्लिंका (Father Hlinka) ने सूडेटनों से मिलकर अपना उद्देश्य सिद्ध करना चाहा। पोल और मेगायरों ने पोलैंड और हंगारी से सहायता की याचना की। इस प्रकार इन अल्पसंख्यकों ने १९३८ में चेकोस्लोवेकिया के अंग-भंग करने की सम्पूर्ण सामग्री प्रस्तुत कर दी।

चेक-जर्मन कलह का अन्तर्राष्ट्रीय महत्व

चेकोस्लोवेकिया का प्रश्न केवल अल्प-संख्यकों और बहुसंख्यकों का ही नहीं है। योरोप के अन्य राष्ट्र भी उसमें आवश्यकता से अधिक दिलचस्पी ले रहे हैं। इनमें मुख्य पोलैंड, हंगारी और जर्मनी है। ये राष्ट्र ह्लिंका (Hlinka) की आन्तरिक कठिनाइयों से लाभ उठाकर अपने अपने राज्यों की सीमा बढ़ाना चाहते हैं।

पोलैंड और चेकोस्लोवेकिया में टेश्चेन (Teschen) प्रान्त के लिये पुराना झगड़ा चला आता है। यहाँ पोल अल्पसंख्यक रहते हैं और पोलैंड उन्हें चेक राष्ट्र से पृथक हो जाने और अपने में मिल जाने के लिये प्रोत्साहन देता रहा है। इसी प्रकार हंगारी की आँखें हंगेरिया इरेडेंटा (Hungaria Irredenta) पर गड़ी हुई हैं। हंगारी की स्थिति आज अत्यन्त ही कठिन हो गई है। हिटलर की शक्ति बढ़ती जा रही है। उसकी नज़र रूमानिया के तल के सोतों पर है। वहाँ पहुँचने के लिये हंगारी बीच में पड़ता है। अतएव अभी से हंगारी हिटलर की मित्रता के लिए व्याकुल है। हंगारी के रीजेंट ऐडमिरल हौर्थी (Admiral Horthy) का बर्लिन जाना और हिटलर से मिलना इस बात का निश्चित प्रमाण है। यही कारण है कि हिटलर के चेक राष्ट्र से सूडेटनलैंड मांगने में भी हंगारी ने जर्मनी का ही साथ दिया।

जर्मनी सूडेटनलैंड (Sudetenland) पर अपना अधिकार स्थापित करने के लिये उत्सुक था। वास्तव में हिटलर ही चेकोस्लोवेकिया का हत्यारा है क्योंकि अकेले पोलैंड और हंगारी चेक राष्ट्र का कुछ नहीं बिगाड़ सकते थे। न उनमें इतनी शक्ति थी और न इतना साहस कि ब्रिटेन, फ्रांस और रूस के समान शक्तिशाली योरुपीय राष्ट्रों की कुछ भी परवाह न कर निरपराध चेक राष्ट्र को युद्ध की धमकी देते।

जर्मनी को इतनी हिम्मत कैसे हुई ?

अत्याचार को सहने की भी एक सीमा है। १९१८ में विजयी राष्ट्रों ने जर्मनी के साथ भयंकर अन्याय किया। वरसायी (Versailles) के संधिपत्र ने जर्मनी को नितान्त निःसहाय और पंगु बना दिया। १९३२ तक जर्मनी महाशक्तियों के अत्याचार को चुपचाप सहता रहा। किन्तु एक मनुष्य के हृदय में बदला लेने की आंधी उड़ रही थी। वह था एडोल्फ हिटलर (Adolf Hitler) उसने नाज़ी दल का संगठन किया और १९३३ में जर्मनी का

चांसीलर (Chancellor) वन वैठा। संयुक्त और संगठित जर्मनी की सम्पूर्ण लौह-शक्ति से उसने वर-सायी के टुकड़े टुकड़े कर डाले। जर्मन राष्ट्र फिर ५ वर्ष के अन्दर ही सशस्त्र और शक्तिशाली वन गया। अव हिटलर को जर्मनी की सीमावृद्धि करने की धुन सवार हुई। गूच(Goohc) के कथनानुसार हिटलर का राष्ट्रवाद में कट्टर विश्वास है। वह यूरोप के विखरे हुए सम्पूर्ण जर्मनों को एक अखिल जर्मन साम्राज्य में मिलाना चाहता है। सवसे पहले उसने आस्ट्रिया की ओर दृष्टि फेरी।

डा० शुसनिग (Schusnigg) और डा० वेनिस (Benes) जानते थे कि यदि आस्ट्रिया और चेकोस्लोवेकिया में से किसी पर भी जर्मनी का अधिकार स्थापित हो गया तो दूसरा सुरक्षित न रह सकेगा। अतएव डा० होड्ज़ा (Hodza) ने डैन्यूव नदी के निकटवर्त्ती राज्यों का एक डैन्यूवियन संघ वनाने के लिये अपना हौड्ज़ा प्लैन (Hodza Plan) वनाया। किन्तु ऐसा होने से पहले ही हिटलर ने आस्ट्रिया को जर्मनी में मिला लिया और डा० वेनिस और डा० हौड्ज़ा दांत पीस कर रह गये। अव चेकोस्लोवेकिया की मुख्य रेलें शत्रु देश में होकर जाती है और इस प्रकार उसका आर्थिक अधि-कार हिटलर के हाथ में आ गया है।

सूडेटन आन्दोलन

आस्ट्रिया पर अपना अधिकार स्थापित कर लेने के वाद हिटलर ने सूडेटनलैंड को लेने का संकल्प किया। हर हेनलाइन के नाज़ी दल को अव हिट-लर का प्रोत्साहन मिलना आरम्भ हो गया और उसने सूडेटनलैंड की स्वाधीनता के लिए चेक राष्ट्र के विरुद्ध आन्दोलन करना आरम्भ कर दिया। हेन-लाइन हिटलर का प्रतिनिधि है और उसकी मांगें हिट-लर की मांगें थीं। चेक सूडेटनों का अलग होना नहीं चाहते थे। क्योंकि ऐसा होने से उनकी जनसंख्या और देश का एक वड़ा भाग जर्मनी के हाथों में चला जायगा। उनके मुख्य औद्योगिक प्रदेश और उनकी सशस्त्र सीमा पर जर्मनी का अधिकार हो जायगा और इस प्रकार वे जर्मनी के सामने पूर्णतया निःशक्त और असहाय वन जायंगे जर्मनी अत्यन्त ही शक्ति-शाली वन वैठेगा। अव तो योरुप के अन्य राष्ट्रों को भी शंका हुई। वोहीमिया की स्थिति सैनिक और राजनीतिक दृष्टि से अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है। यदि वह जर्मनी के हाथ में चला जाय तो हिटलर के लिए दक्षिण-पूर्व की ओर काले सागर का माग खुल जायगा। मेडिटरेनियन सागर का पश्चिमी छोर भी जर्मनों से सुरक्षित न रह सकेगा। पूर्व का प्रश्न

मध्य योरुप में चेकोस्लोवेकिया का स्थान
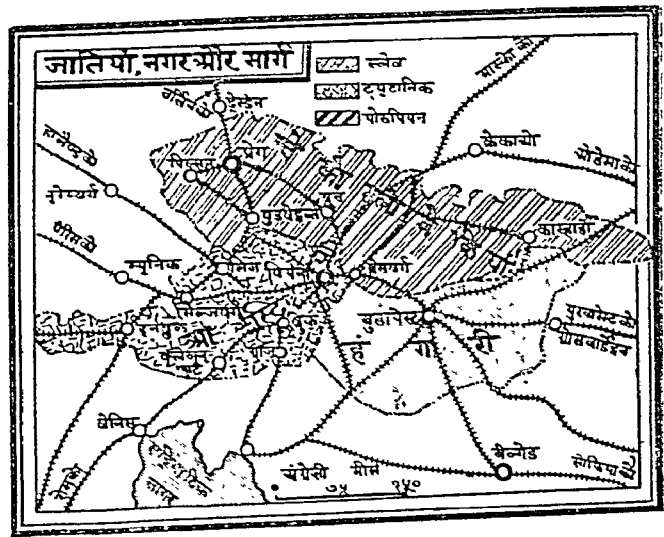
(Eastern Question) भी फिर जीवित हो उठेगा। फ्राँस, व्रिटेन और रूस ने अपनी अपनी फ़ौजें तय्यार करनी शुरू कर दीं। चेकोस्लोवेकिया की रक्षा के लिये सव ने वचन दे दिया।

जर्मनी की युद्ध के लिए तैयारी

हिटलर भी चुप न था। हेनलाइन ने कार्लवा (Carlsbad) में अपनी मांगें चेक राष्ट्र के सामने रक्खीं। उनमें मुख्य यह थीं—

१ सूडेटनलैंड का चेकोस्लोवेकिया से अलग होना।

२ जर्मन प्रदेश में जर्मन अफ़सर।

३ सूडेटनों की सामाजिक, धार्मिक और वैधा-

निक स्वतंत्रता और उनको स्वायत्त शासन का अधिकार।

अब ब्रिटेन ने लार्ड रन्सीमैन (Lord Runciman) को चेक और सूडेटनों के झगड़े का निपटारा करने के लिए मध्यस्थ बनाकर भेजा। उनकी चेष्टाएँ विफल हुईं। अब ब्रिटेन और फ्रांस ने हिटलर के सामने अपने एंग्लो-फ्रेंच्च प्रस्ताव (Anglo-French Proposals) रक्खे। हिटलर ने उनको मानने से साफ़ इन्कार कर दिया और चेक राष्ट्र को युद्ध की धमकी दे दी। जर्मनी की फ़ौजें सुसज्जित होने लगीं। ब्रिटेन, फ्रांस, रूस और चेकोस्लोवेकिया ने भी जर्मनी का मुक़ाबिला करने के लिए सेनाओं को एकत्रित करना आरम्भ कर दिया। ऐसा ज्ञात होता था कि भयंकर महायुद्ध का होना अनिवार्य है।

मि० चेम्बरलेन का समझौते के लिए प्रयत्न

ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री मि० चेम्बरलेन ने इस समय सराहनीय साहस से काम लिया। संसार को दूसरे महायुद्ध की भयंकरता से बचाने और चेक प्रश्न को शान्ति पूर्वक तै करने के लिए वे वायुयान में स्वयं उड़कर जर्मनी गए और बर्चटेसगाडेन में (Berchtesgaden) हिटलर से मिले। दो तीन दिन बाद वे फिर गोडेसबर्ग (Godesberg) में जर्मनी के चांसलर से मिले। वहाँ हिटलर ने उन्हें अन्तिम बार अपनी मांगें (Memorandum) दे दिया। यह एक प्रकार की युद्ध की धमकी थी। संसार में भय और निराशा के बादल फिर छाने लगे। ब्रिटेन के नौ-सेना अध्यक्ष श्री० डफ-कूपर (Duff Cooper) ने अंग्रेजी जंगी बेड़े को युद्ध के लिए तैयार होने की आज्ञा दे दी। मि० चेम्बरलेन ने शान्ति-रक्षा के लिए अब अपना अन्तिम प्रयत्न किया और समझौता कराने के लिए इटली के तानाशाह और हिटलर के परम मित्र सिगनर मुसोलिनी (Signer Mussolini) से अपील की। अब हिटलर भी कुछ सशंकित हुआ और उसने म्यूनिक (Munich) में मुसोलिनी, मि० चेम्बरलेन और फ्रांस के प्रधान मंत्री म० दलादियेर (M. Daladier) को आमंत्रित किया।

म्यूनिक का समझौता

म्यूनिक में फ्रांस और ब्रिटेन ने हिटलर की सब शर्तें स्वीकार कर लीं। सूडेटनलैंड जर्मनी को मिल गया। पोलैंड और हंगारी भी जिन जिन प्रदेशों को पाना चाहते थे उनके लिए चेक राष्ट्र की सम्मति पा चुके हैं। इस प्रकार निरीह हिटलर ने म्यूनिक में यूरोप के शक्तिशाली राष्ट्रों से मिल कर असहाय और निर्दोष चेकोस्लोवेकिया की निर्मम हत्या कर डाली।

चेक राष्ट्र के साथ विश्वासघात

मि० चेम्बरलेन ने निःसन्देह संसार को महायुद्ध के गर्त्त में गिरने से बचा लिया किन्तु योरुप के राष्ट्रों ने चेक राष्ट्र के साथ जो कलंकित विश्वास घात किया है, उसके लिए चेकोस्लोवाकिया सदैव उनका कृतज्ञ रहेगा। उसकी आर्थिक स्वतंत्रता का गला घुट चुका है। उसकी राजनीतिक स्वतंत्रता के दिन भी इने गिने हैं। उसकी स्वतंत्रता की रक्षा का उत्तरदायी ब्रिटेन था। लार्ड रन्सीमैन को समझौते के लिए भेज कर, बहुत से अल्प-संख्यकों का मिलाकर चेकोस्लोवेकिया को जन्म देकर, एँग्लो-फ्रेंच्च प्रोपोज़लस (प्रस्ताव) उससे ज़बरदस्ती स्वीकृत कराकर और अंतर्राष्ट्रीय सङ्घ का सदस्य हो कर, ब्रिटेन ने उसकी रक्षा का उत्तरदायित्व ले लिया था। किन्तु उसकी रक्षा करना तो दूर, उसे म्यूनिक में बुलाया तक नहीं गया। उसके साथ युद्ध में पराजित शत्रु की अपेक्षा से भी अधिक कठोर व्यवहार किया गया। यह विश्वासघात ब्रिटेन की कीर्ति को संसार में सदैव अमर रक्खेगा।

भविष्य

संसार से आज युद्ध के काले बादल हट गए हैं। २० वीं शताब्दी की सभ्यता और संस्कृत को नया जीवन मिल गया है। किन्तु जर्मनी के हृदय में अभी तक है वही अशान्ति और साम्राज्य-विस्तार की विकट कामना। संसार का प्रत्येक राष्ट्र अस्त्रीकरण की दौड़ में सब से बाज़ी लेने की चेष्टा कर रहा है। साम्राज्यवाद का भूत सभी राष्ट्रों के सिर पर सवार है। पारस्परिक विश्वास के स्थान पर है पारस्परिक अविश्वास। आर्थिक और सांस्कृत प्रतियोगिता की आंधी में प्रत्येक राष्ट्र उड़ जाना चाहता है। इन सब का परिणाम क्या होगा? इस प्रश्न का उत्तर जितना ही सरल है, उतना ही भयंकर।

चीन अंक

देश-दर्शन

प्रत्येक अङ्क में प्रायः निम्नलिखित विषय रहेंगे जो आवश्यकतानुसार घटाये बढ़ाये जा सकेंगे :—

१—देश का आकार, विस्तार, बनावट, दृश्य। २—जलवायु और उपज। ३—पालतू और जंगली जानवर। ४—कारबार। ५—व्यापार, बाज़ार, मेला। ६—जनसंख्या और जातियां। ७—शिक्षा। ८—पुराने समय पर एक नज़र। ९—वर्तमान शासन। १०—रहन सहन। ११—भाषा, कहानी। १२—देखने योग्य शहर। १३—गांव का जीवन। १४—खेल कूद, त्योहार।

प्रत्येक देश का वर्णन प्रायः निजी यात्रा के आधार पर भारतीय दृष्टिकोण से लिखा जायगा।

इस माला में निम्नलिखित देश रहेंगे :—

भारतवर्ष—१—लंका, २—बरमा, ३—आसाम, ४—बंगाल, ५—बिहार, ६—उड़ीसा, ७—आन्ध्र देश, ८—तामिल, ९—केरल, १०—ट्रावनकोर, ११—कुर्ग, १२—मैसूर, १३—हैदराबाद, १४—गोआ, १५—बम्बई-महाराष्ट्र, १६—मध्यप्रान्त, १७—काठियावाड़, १८—गुजरात, १९—सिन्ध, २०—बलोचिस्तान, २१—पंजाब, २२—पटियाला, २३—जोधपुर, २४—जैपुर, २५—बीकानेर, २६—अजमेर २७—उदयपुर, २८—कोटा, २९—भरतपुर, ३०—अलवर, ३१—ग्वालियर, ३२—इन्दौर, ३३—रीवाँ, ३४—काश्मीर, ३५—नैपाल, ३६—भूटान, ३७—शिकम, ३८—गढ़वाल, ३९—अवध, ४०—संयुक्तप्रान्त, ४१—पांडिचेरी, ४२—अंडमान, निकोबार, लका द्वीप, मालद्वीप।

एशिया—१—जापान, २—चीन, ३—कोरिया, ४—मंचूरिया, ५—मंगोलिया, ६—चीनी तुर्किस्तान, ७—तिब्बत, ८—साइबेरिया, ९—रूसी तुर्किस्तान, १०—जार्जिया, ११—आर्मेनिया, १२—टर्की १३—सिरिया, १४—पेलेस्टाइन, १५—इराक, १६—अरब, १७—ईरान, १८—मलय प्रायद्वीप और सिंगापुर, १९—स्याम, २०—जावा, २१—बोर्नियो, २२—फिलीपाइन द्वीपसमूह, २३—अफ़ग़ानिस्तान, २४—किरगीज प्रजातन्त्र।

योरुप—१—आयरलैंड, २—ब्रिटेन, ३—फ्रांस, ४—हालैंड, ५—बेल्जियम, ६—डेनमार्क, ७—नार्वे, ८—स्वीडन, ९—आइसलैंड, १०—फिनलैंड, ११—रूस, १२—यूक्रेन, १३—पोलंड, १४—रूमानिया, १५—बल्गेरिया, १६—लिथुएनिया, लैटविया और एस्थोनिया १७—यूगोस्लेविया, १८—ग्रीस, १९—इटली, २०—स्पेन, २१—पुर्तगाल, २२—जर्मनी, २३—हंगारी, २४—स्वीज़रलैंड, २५—चेकोस्लोवेकिया, २६—अल्सेस लारेन।

अफ्रीका—१—मिस्र, २—सूडान, ३—एबीसीनिया, ४—जेंजीबार और पम्बा, ५—मेडेगास्कर, ६—कीनिया ७—यूगाडा, ८—पूर्वी पुर्तगाली अफ्रीका, ९—बेलजयन कांगो, १०—राडेशिया, ११—दक्षिणी अफ्रीका, १२—पश्चिमी पुर्तगाली अफ्रीका, १३—१४—महाराष्ट्र, १५—मरक्को, १६—अल्जीरिया, १७—ट्यूनिस, १८—ट्रिपली, १९—लाइबेरिया, २०—मारीशस द्वीप।

उत्तरी अमरीका—१—कनाडा, २—न्यूफाउंडलैंड; ३—संयुक्त राष्ट्र अमरीका, ४—मेक्सिको, ५—पनामा, ६—मध्य अमरीका, ७—पश्चिमी द्वीपसमूह।

दक्षिण अमरीका—१—कोलम्बिया, २—गायना, ३—वेनिज्वेला, ४—इक्वेडार, ५—पीरू, ६—बोलिविया, ७—चिली, ८—पेरेग्वे, ९—यूरुग्वे, १०—ब्रेज़िल, अर्जेन्टाइना।

आस्ट्रेलिया—१—आस्ट्रेलिया, २—टस्मेनिया, ३—न्यूज़ीलैंड, ४—न्यूगिनी, ५—फिजी द्वीप, ६—प्रशान्त महासागर के द्वीप।

अन्वेषक—१—मार्कोपोलो, २—कोलम्बस, ३—वास्को डि-गामा, ४—कुक, ५—लिविंग्सटन, ६—स्टैनली, ७—ड्रेक, ८—स्वेन हेडिन, ९—लारेंस, १०—पिनरी, ११—नान्सेन।

नगर—१—प्रयाग, २—कलकत्ता, ३—बम्बई, ४—बनारस, ५—मद्रास, ६—लाहौर, ७—लन्दन, ८—पेरिस, ९—बर्लिन, १०—मास्को, ११—न्यूयार्क, १२—टोकियो, १३—बग़दाद, १४—क़ाहरा, १५—यरूशलम, १६—मक्का, १७—पेकिंग १८—हांगकांग।

नदी—गंगा, यमुना, सिन्ध, नर्मदा, गोदावरी, महानदी, ब्रह्मपुत्र, इरावदी, यांग्ज़ी, ह्वांग हो, अमूर, दजला-फरात, वाल्गा, राइन, डेन्यूब, मिसीसिपी, एमेज़न, नील, कांगो, सेन्ट लारेंस।

पर्वत—हिमालय, अल्प्स, एँडीज, राकी।

नहर—स्वेज़, पनामा, चीन की ग्रांड केनाल।

कारबार—कागज़, लोहा, दियासलाई, मोटर, पेन्सिल, मिट्टी का तेल, पुतलीघर, जहाज़, रेल, हवाई जहाज़।

सभ्यता—वैदिक, एसीरिया, प्राचीन मिस्री, इन्का, माया, यूनानी, रोमन।

अग्रिम मूल्य एक प्रति का ।=), वार्षिक ४)रु०, समस्त पुस्तक माला का २०)रु०।

REGD. NO. A-1333

Published by the Editor (Pt. Ram Narain Misra, B. A.) and Printed by K. P. Misra at the Bhugol Press; 306, Jumuna Road, Allahabad

भूगोल
भूगोल विषयक हिन्दी का एकमात्र
सचित्र मासिक पत्र
वार्षिक मूल्य ३)
विदेश में ५)
एक प्रति का ।-)
दिसम्बर १९३९
ANNUAL
SUBSCRIPTION
Indian: Rs. 3/-
Foreign: Rs. 5/-
Single Copy: As. 5.
भूगोल-कार्यालय प्रयाग

सूचना

अगले जनवरी (१६४०) महीने में भारतीय पशु-पक्षी-अङ्क प्रकाशित होगा। इसमें भारतवर्ष के प्रायः सभी प्रसिद्ध पशुओं का सचित्र और रोचक वर्णन रहेगा।

—मैनेजर

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ
१—प्रशान्त महासागर में समुद्री हवाओं के अड्डे	१
२—टर्की और कमाल अतातुर्क (ले० श्री० श्यामा चरण)	५
३—याकोहामा	९
४—अरब की आधुनिक समाजिक तथा आर्थिक उन्नति	१४
५—प्लेट नदी	१९
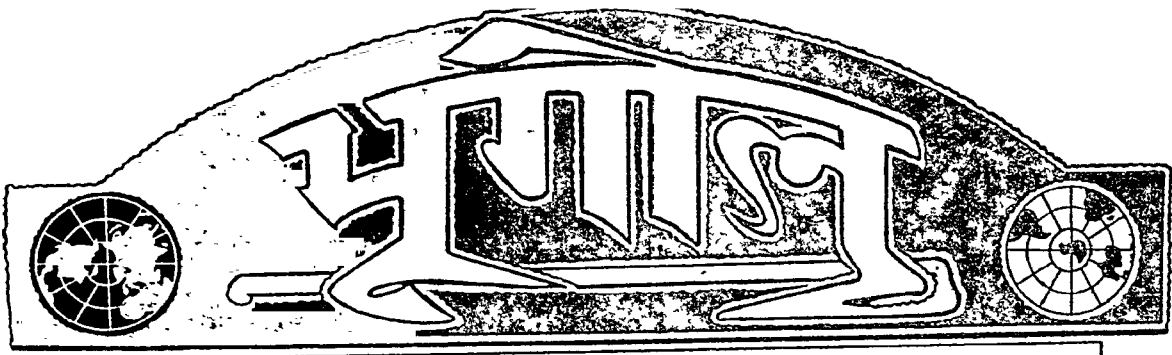
यह पत्र संयुक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, बरार, बिहार, उड़ीसा, पंजाब प्रान्त तथा ग्वालियर, जैपुर, जोधपुर और कोटा राज्य के शिक्षा-विभाग द्वारा हाई, नार्मल और मिडिल स्कूलों में प्रयोग होने के लिये स्वीकृत है।

वर्ष १६] मार्गशीर्ष सं० १९९६, दिसम्बर १९३९ [अङ्क ८

प्रशान्त महासागर में समुद्री सेनाओं के अड्डे

वर्तमान साल के आरम्भ से प्रशान्त महासागर की समुद्री सेना में एक नया भाव उत्पन्न हो गया है। वाशिंगटन नगर में नाइन पावर (नौ शक्तियों के बीच) कान्फ्रेंस १९२२ ई० में हुई थी। उसके अनुसार (दुनिया को तीन बड़ी शक्तियाँ) संयुक्त राष्ट्र अमरीका, इंगलैण्ड और जापान, बड़े बड़े जहाजों के बारे में यह मान लिया था, कि वे ५:५ और तीन के अनुपात से अपने जहाज रक्खेंगे। इसका मतलब यह था कि संयुक्त राष्ट्र और इंगलैण्ड के पाँच पाँच बड़े जहाज रहेंगे और जापान के तीन जहाज रहेंगे। इन लोगों ने यह बात मान ली थी कि वह किसी प्रकार की मोर्चाबन्दी प्रशान्त महासागर के कुछ खास स्थानों पर न करेंगे।

नाइन पावर की संधि में यह बात तय हुई थी कि वे चीन राज्य, उसके मान और सम्पति को आदर के भाव से देखेंगे और किसी प्रकार की हानि उसे नहीं पहुँचावेंगे। जापान ने अपने वचन को १९३१-३२ में तोड़ दिया और मंचूरिया पर अपना अधिकार जमा लिया। अन्तर्राष्ट्रीय राष्ट्र सभा (लीग आफ नेशन्स) और संयुक्त राष्ट्र अमरीका ने जापान के इस कार्य के विरुद्ध आवाज उठाई। किन्तु उसकी जापान ने कोई परवाह न की। जापान के वैदेशिक मन्त्री ने घोषणा की कि यदि कोई देश चीन को राजनैतिक कर्ज देगा तो जापान उसे नियमविरुद्ध मानेगा। इस प्रकार पूर्वी अन्तर्राष्ट्रीय स्थिति में गड़बड़ी पड़ गई है।

२९ दिसम्बर सन् १९३४ को जापान ने सूचना दी कि वह दो साल तक वाशिंगटन की संधि मानने में असमर्थ है। जापान को समझाने का प्रयत्न किया गया। लन्दन में इस बारे में जापानी प्रतिनिधि से बात की गई। १९३५ में इसी विषय पर एक कान्फ्रेन्स भी लन्दन में हुई। जापानी प्रतिनिध ने कहा कि जापान के साथ बराबरी का बर्ताव होना चाहिये। और जापान को भी प्रशान्त सागर में वही सुविधायें होनी चाहिये, जोकि इंगलैण्ड और संयुक्त राष्ट्र को प्राप्त हैं। यहाँ पर जापान, संयुक्त राष्ट्र और इँगलैण्ड

तीनों के मान का प्रश्न उठ खड़ा हुआ और बात तय नहीं हो सकी। वाशिंगटन-संधि के अनुसार जापान के तीन जहाजों को होना उसके मान हानि का प्रश्न था। इसके सिवा दो प्रश्न और थे. एक तो यह कि जापान की नीति उत्तरी चीन पर अधिकार करने के कारण बदल गई थी, उसका भार भी बढ़ गया था। दूसरे जापान की समुद्री, हवाई और स्थल सेनाओं की भी वृद्धि हो गई थी। इसलिये जापान वाशिंगटन की संधि मानने में असमर्थ था।

जापान अब स्वतंत्रता पूर्वक अपनी जल सेना तयार कर रहा है। कुछ लोगों का ख्याल है कि जापान बड़े बड़े सामुद्रिक जहाज बनाकर अमरीका तथा इंगलैण्ड का मुकाबिला करना चाहता है। यह बात ठीक नहीं कही जा सकती। प्रशान्त महासागर बहुत बड़ा है। जापान अपने बड़े जहाजों को हजारों मील भेज कर कभी अमरीका या ब्रिटेन की समुद्री सेना पर धावा नहीं बोल सकता। जापान केवल अपनी रक्षा करना चाहता है। वह छोटे छोटे क्रूजर्स डेस्ट्रायर्स, सबमेरीन (पनडुब्बी) तयार कर रहा है, जिससे वह अमरीकन तथा ब्रिटिश जहाजों को जब वे उस पर आक्रमण करें तो हरा सके।

वर्तमान सामुद्रिक युद्ध में अड्डों का होना बड़ा आवश्यक है, खासकर प्रशान्त महासागर जैसे बड़े समुद्र में जहाँ हजारों मील चलकर शत्रु के जहाजों पर हमला करने की सम्भावना है। अगर समुद्री अड्डे नहीं होंगे, तो बड़ी से बड़ी समुद्री सेना के हराने की सम्भावना का जा सकती है। युद्ध के समय जहाजों को अड्डों पर जाकर ठहरना, कोयला पानी लेना और कल-पुर्जों को ठीक करना आवश्यक होता है। सचमुच ही कुछ बातों का ध्यान रखते हुये अधिक जहाजों के स्थान पर अड्डों का होना आवश्यक है। इसी ध्यान से कहा जाता है कि जापान फिलीपाइन या गुआम में अमरीकन अड्डे बनाने पर अवश्य अप्रसन्न होगा।

वाशिंगटन की संधि द्वारा यह तै हो चुका था कि संयुक्त राष्ट्र प्रशान्त महासागर में एल्यूशियन द्वीप समूह, फिलीपाइन, गुआम, समोआ में, इंगलैंड, हॉग-कॉंग दक्षिणी सागर के द्वीपों में और जापान क्यूराइल, फारमूसा, ल्चू, बोनिन द्वीप समूह, करोलनि, मार्शल, मैरियाने द्वीपसमूह आदि में अड्डे न बनायेगा।

इस संधि ने सचमुच इन तीन देशों के बीच में प्रशान्त महासागर में युद्ध होने की सम्भावना हटा दी है। किन्तु यदि एल्यूशियन द्वीप समूहों ने अमरीका के साथ और क्यूराइल ने जापान के साथ छेड़खानी की, तो आपस का मनमोटाव और झगड़ा अवश्य बढ़ जावेगा।

कहा जाता है कि अड्डे न बनाने वाली संधि में अमरीका को जापान से अधिक हानि होने का खतरा है। फारमूसा, मार्शल और मैरिआने में जापानी अड्डे बनने से कैलिफोर्निया या हवाई स्थानों पर आक्रमण होने की कम सम्भावना होती है। कुछ लोगों का विचार है, झगड़े के आरम्भ में फिलीपाइन पर अवश्य ही जापानियों का कब्जा हो जावेगा किन्तु अगर गुआम में अमरीकन अड्डा बनाया जाय तो जापान अवश्य ही उसे अपने राज्य के लिये खतरा समझेगा। अट्टू, (एल्यूशियन का पश्चिमी द्वीप) डच हारबर या समुद्री सेना का अड्डा बनाना भी जापानियों के लिये खतरे की बात होगी।

वर्तमान समय में फिलीपाइन की रक्षा अमरीकन सेना किये हुये हैं। यहां ४,००० अमरीकन सैनिक और ६,०० फिलीपाइन के स्काउट (जो अमरीकन फौज में काम करते हैं) हैं। अमरीका की एशिया के अन्दर एक जल सेना है। इस जल सेना में एक झंडेदार अगाहता जहाज, १३ डिस्ट्रायर्स, १२ सबमरीन और कुछ जहाज सहायता देने वाले हैं। यह जल-सेना करवाइट में रहती है, जो मनीला की खाड़ी में है और जाड़े के दिनों में जलसेना का अड्डा रहता है। गर्मी के दिनों में डिस्ट्रायर्स और सबमरीन चेफू उत्तरी चीनी बन्दरगाह में चले जाते हैं।

अमरीका और इंगलैण्ड ने जापान को काफी सुविधायें दे दी हैं और इसीलिये अपने अड्डे बनाने से इन्कार किया है। जिससे जापान ५:५:३ के सामुद्रिक सेना के अनुपात को स्वीकार कर ले। आज यदि जापान और अमरीका में युद्ध छिड़ जाय और अमरीका का कोई साथी न हो तो अमरीका के लिये सीधे जापान पर आक्रमण करना बड़ा कठिन हो जावेगा।

१९३६ ई० के अन्त में इङ्गलैण्ड ने प्रस्ताव किया कि वाशिंगटन की संधि को दूसरी शर्तों के नाकाम होने पर अड्डे न बनाने वाली शर्त पर जोर दिया जाय। संयुक्त राष्ट्र ने इस प्रस्ताव को ठीक नहीं समझा क्योंकि जब सभी शर्तें तोड़ दी जावेंगी तो फिर इसके जोर देने से क्या होगा। इङ्गलैंड की ओर से यह प्रस्ताव इसलिये शायद किया गया था कि इङ्गलैंड के वैदेशिक आफिस के लोग सदैव जापान के साथ किसी प्रकार का भी झगड़ा होने को हमेशा बचाते रहते हैं।

ब्रिटिश के ऐसे प्रस्ताव करने का एक कारण यह भी हो सकता है कि दक्षिणी प्रशान्त महासागर में अँग्रेजों का अधिकांश हित है। आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैंड मलाया, डच पूर्वी द्वीप समूह आदि स्थान हैं। इन स्थानों पर जापानी आक्रमण उतना ही महत्व वाला समझा जावेगा जितना इङ्गलैंड के ऊपर। इसलिये इङ्गलैंड को पश्चिमी प्रशान्त महासागर में मोर्चा बन्दी करने और सामुद्रिक अड्डे बनाने से हानि छोड़ लाभ नहीं है।

सिंगापुर नगर, अपने नाम के द्वीप के दक्षिणी किनारे पर स्थित है। यह मलाया प्राय द्वीप के दक्षिणी कोने पर, मलक्का जल डमरू मध्य के किनारे पर है। किन्तु सिंगापुर का सामुद्रिक अड्डा सिंगापुर द्वीप के उत्तर की ओर है। यह जोहारे जलसंयोजक के पास सामने है। इसी स्थान पर अँग्रेजी सामुद्रिक जहाज समय आने पर ठहरेंगे।

चार वर्गमील जलाशय अड्डे के लिये सुरक्षित रक्खा जा रहा है। इस स्थान पर रह कर अँग्रेजी सेना अपने बैरियों को देख सकेगी और आवश्यकता पड़ने पर उन पर आक्रमण भी कर सकेगी।

सिंगापुर के सामुद्रिक अड्डे में तीन प्रधान बातें हैं। (१) तैरने वाला जहाजी अड्डा, (२) गुफादार सूखा ठोस जहाजी अड्डा, (३) २,२०० फुट लम्बा सूखे अड्डे से आगे निकला हुआ घाट तैरने वाले जहाजी अड्डे को रस्सियों द्वारा खींच कर टुकड़े टुकड़े करके सिंगापुर के बन्दरगाह पर ले जाते हैं। (२) गुफादार जहाजी अड्डा दुनिया में तीसरे नम्बर का है। इसकी लम्बाई १००० फुट, चौड़ाई १३० फुट और मोटाई ८० फुट है। इसमें नीचे कमरा और मशीनें हैं। यह क्वीन मेरी ऐसे जहाजों का अड्डा सँभाल सकता है। मजबूत ठोस दीवालें आदि बन चुकी हैं। अड्डे की भूमि में फौजी अफसरों के बँगले, काम करने वालों के लिये स्थान, फौजी सामान रखने के लिये मकान और टैंकों के रखने के लिये घर बने हैं।

सिंगापुर केवल सामुद्रिक जहाजी अड्डा ही नहीं है। यहाँ हवाई जहाज का स्टेशन और भूमार्गों का भी अड्डा है। सेलातार गाँव जो सामुद्रिक अड्डे से २ मील की दूरी पर है, वह हवाई जहाजों का एक बड़ा प्रसिद्ध स्टेशन है। यह गाँव बिलकुल फौजी मालूम होता है। यहाँ पर ६०० हवाई अफसर तथा हवाई सैनिक रहते हैं। हवाई क्रैफट मशीनें और दूसरे लड़ने तथा बचाव के सामान भी यहाँ हर समय मौजूद रहते हैं। हवाई जहाज में काम करने वाले लोगों के रहने के लिये मकान बने हैं। यहाँ की हवाई सेना में २ स्क्वैडरन बम्ब गिराने वाले जहाज, एक स्क्वैडरन बड़े उड़ने वाले बोट हैं। दो नये हवाई अड्डे और बनाये जा रहे हैं, जो केवल फौजी काम देंगे। चगी सिंगापुर के उत्तर पूर्व में स्थित है। यह जोहोर जलसंयोजक के पूर्वी सिरे पर है। यहां पर हवाई फौज में काम करने वाले और अफसर मिलाकर १४०० आदमी रहते हैं। २० से अधिक ऐन्टीएअर क्रैफट गन हैं। खानों के किनारे किनारे चोर बत्तियाँ और दूसरे बचाव के प्रबन्ध हैं। यहाँ लगभग २० मील की लम्बाई तक बड़ी बड़ी तोपें लगी हुई हैं।

इंगलैण्ड और जापान की सन्धि को फिर से नहीं दुहराया गया। इसी कारण सिंगापुर का सामुद्रिक अड्डा बन रहा है। चूंकि जापान ने एशिया के मध्य वर्ती भाग पर आक्रमण कर बैठा इसी कारण यह अड्डा और भी शीघ्रता के साथ बनाया जा रहा है। यह बात माननी आवश्यक है कि सिंगापुर का सामुद्रिक अड्डा जापान के विरुद्ध एक मजबूत क़िले का काम देगा।

सिंगापुर की ओर जापान ही एक ऐसा देश है जो अंग्रेजों को धक्का पहुँचा सकता है। सिंगापुर में केवल जापान की ओर से खतरा है। जापान सिंगापुर को बड़ा मारके का स्थान समझता है। 'जापान मस्ट फाइट बृटेन' नामक पुस्तक में जापान के सामुद्रिक सेना के अफ़सर लैफ़िनेंट तोता इशीमारू ने लिखा है,

कि प्रशान्त महासागर के अन्दर सिंगापुर की मोर्चाबन्दी और अंग्रेजों की सामुद्रिक सेना जापानियों के लिये बड़े खतरे की चीज है। अगर सिंगापुर पर जापानी जहाजी बेड़ा आक्रमण करे तो अंग्रेजों को आस्ट्रेलिया के सिवा और कहीं अड्डा नहीं मिल सकता। इसीलिये हमको चाहे जो हानि उठानी पड़े हमें अंग्रेजों पर आक्रमण करना हमारे लिये हितकर होगा।

सिंगापुर, फारमूसा से १,६२५ मील और सा (हाँलू द्वीप) से २,५८० मील की दूरी पर है। इसलिये जापान के ऊपर अंग्रेजों का सीधा आक्रमण होना कठिन है। जापानी द्वीप समूहों पर यह आक्रमण हो सकता है। सिंगापुर में मजबूत समुद्री तथा हवाई सेना बड़ा काम कर सकती है। भारत के लिये वह चौकीदार का काम करेगी। जापानी व्यापार जो योरप के साथ होता है, उसे भी यह सेना रोक सकती है। उस द्वीप समूहों को भी बचा सकती है और आस्ट्रेलिया के ऊपर होने वाले जापानी आक्रमण को रोक लगा सकती है।

एक दूसरा कारण सिंगापुर के अड्डे के बनाने का फिलीपाइन अमरीका से अलग हो जावेगा। १९४६ के बाद फिलीपाइन अपने पैरों आप खड़ा हो सकेगा या नहीं, इसमें सन्देह है। अभी से बहुत से जापानी लोग वहाँ आ आ कर बस रहे हैं। अगर जापान ने इसको अपने अधिकार में लाने का प्रयत्न किया तो फ्राँस और इंगलैण्ड को अवश्य ही रोक लगानी पड़ेगी। चीन, मलाया इन्डोचीन और पूर्वी द्वीप समूहों से फ्रांस तथा इङ्गलैंड को काफी लाभ है। और वे कभी जापानियों का उत्कर्ष इन प्रदेशों में नहीं देख सकते।

फारमूसा के मुख्य बन्दरगाह कीलना की घटना के बाद जापान और इङ्गलैण्ड के बीच कुछ तना तनी हो गई। तभी से प्रशान्त महासागर में अँग्रेजों ने अमरीकन जहाजी अफसरों से अधिक घनिष्टता करनी आरम्भ कर दी है। इसी कारण अमरीकन एशियाटिक स्क्वैडरन जब सिंगापुर गया तो उसकी खातिर बड़े हाव भाव के साथ की गई। अमरीकन एडमिरल वहाँ के गवर्नर का सरकार की ओर से मेहमान रहा।

कुछ भी हो किन्तु यह अनुमान करना ठीक नहीं है कि जापान और इङ्गलैण्ड के बीच जल्दी ही कोई लड़ाई होने वाली है। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में रूस और इङ्गलैंड के बीच ऐसी ही स्थिति थी। रूस हिन्दोस्तान को लेने की धमकी दे रहा था। किन्तु आज तक कोई लड़ाई रूस और इङ्गलैण्ड के बीच नहीं हुई। जापान इंगलैण्ड की समुद्री शक्ति से भली भाँति परिचित है और जानता है कि उसकी आर्थिक स्थिति भी बड़ी अच्छी है। इङ्गलैण्ड भी कभी एशिया के सबसे अधिक शक्ति शाली देश (जल, और हवाई सेना) जापान से लड़कर खतरा पैदा करना अच्छा नहीं समझता।

अँग्रेजों ने चीन में बहुत सा रुपया लगा रक्खा है। अँङ्गरेज अफसर भी चीन को आर्थिक सहायता देते रहे हैं। जापान ने अँग्रेजों का रास्ता तो अवश्य रोका था किन्तु किसी भी दशा में उन्होंने अधिक ज्यादती नहीं की और न जापान ने अपनी सैनिक योजना को ही पूरा करने की कोशिश की।

इङ्गलैण्ड ने वाशिंगटन की संधि होते हुये भी सिंगापुर का सामुद्री अड्डा बना रहा है। जापान और अमरीका अब भी अपनी बातों पर डटे हैं। जापान के प्रति शिकायतें की गई हैं अंतर्राष्ट्रीय संघ (लीग आफ नेशन्स) ने भी यह बात कही है कि जापान ने अपने द्वीपों में हारबरों को बढ़ाया है। अब तक कोई भी शिकायत ठीक ठीक जापान के विरुद्ध वाशिंगटन संधि तोड़ने की नहीं साबित हुई।

१९४६ में जब कामन वेल्थ का समय व्यतीत हो जावेगा तो अमेरीका नाता फिलीपाइन से क्या होगा? क्या चीन में अमरीका का इतना लाभ है कि वह समुद्री अड्डे बनाने का व्यय उठावे और लड़ाई का खर्च भी उठावे और जापान की शक्ति को चुनौती दे? अमरीका पश्चिमी प्रशान्त सागर के भी मोर्चा बन्दी करे या अलास्का और हवाई द्वीप के बचाने का ही प्रबन्ध करे? अँग्रेजों के साथ सुदूर पूर्वी स्थानों में कहाँ तक अमरीका मित्रता रख सकता है? यह कुछ प्रश्न हैं जो अमरीका सरकार और उसकी जनता के सामने १९४६ के बाद होंगे।
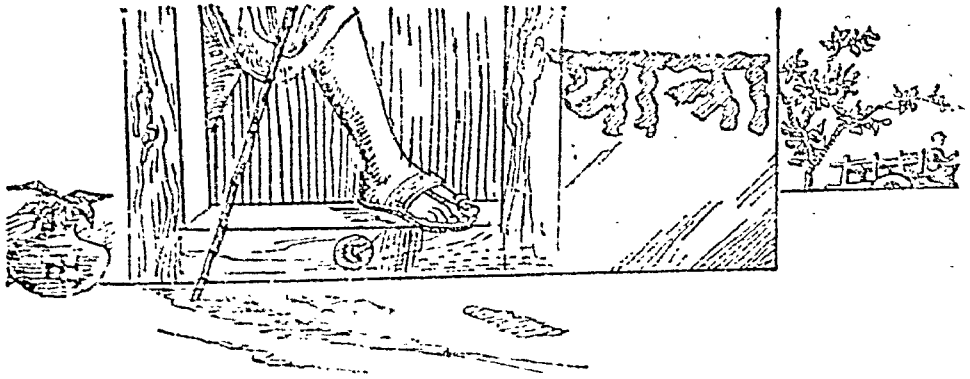
टर्की और कमाल अतातुर्क

(ले०—श्रीयुत श्यामाचरण)

पहिली बार मैं १९३१ में टर्की गया था। यहाँ के नये सुधारों के बारे में मैंने बहुत कुछ सुन रक्खा था। सुना था कि पुरानी सामाजिक और मज़हबी बातों को दूर करके टर्की ने योरुप के चाल ढाल की पूरी नकल कर ली है।

टर्की की पश्चिमी सरहद से मिले हुए बल्गेरिया में मुझे पुराने मुस्लिम रहनसहन के ढंग ज़्यादा मिले। वहाँ की राजधानी सोफ़िया में मसजिदें तो हैं ही लेकिन आबादी में मुसलमानों का नम्बर काफ़ी होने की वजह से चोग़ा, तुर्की टोपी और शलवार काफी तादाद में दिखलाई पड़ते हैं।

जैसे ही ट्रेन बल्गेरिया छोड़ कर टर्की में दाखिल होती है दुनिया ही बदली हुई नज़र आती है। आदमी और औरतें सब योरुपियन लिबास में हैं, और हर जगह रोमन अक्षर ही दिखलाई पड़ते हैं। ट्रेन में एक बुजुर्ग तुर्क से मुलाकात हुई, उन्होंने हस्ब मामूल नाम वगैरह पूछना शुरू किया। जब मैंने उनका नाम पूछा तो उन्होंने पेन्सिल से एक तुर्की अखबार के कोने में बना बना कर रोमन अक्षरों में अपना नाम लिख दिया। जरा ज़ईफ थे और अभी अभी कमालपाशा के हुकुम से उन्होंने रोमन अक्षरों को सीखा था। मैंने भी अपना नाम फारसी अक्षरों में लिख दिया। पढ़कर आप फरमाते हैं, "वाह! क्या अभी तक हिन्दी वहशी हैं। हम लोगों ने तो तमाम पुरानी बातों को छोड़ कर योरुपियन बातों को अपना लिया है। अब हम लोग किसी भी योरुपियन से कम नहीं हैं।"

इंगलैंड को छोड़ कर करीब करीब और सब विदेशी मुल्कों में हिन्दोस्तान के रहने वालों को "हिन्दी" या 'हिन्दू" कहते हैं। अमेरिका के कदीमी बाशिन्दों को 'इन्डियन" के नाम से पुकारा जाता है। और 'इन्डियन' कहने से उन्हीं को समझा जाता है। हिन्दू धर्म को आम तौर से ब्राह्मणी धर्म कहते हैं। हम लोगों की बातचीत टूटी फूटी और कुछ फारसी अक्षरों में हो रही थी।

ग़ाज़ी मुस्तफा कमालपाशा

भाषा का ज्ञान यहां के लगभग सभी ऊंचे दर्जे के पढ़े लिखे मनुष्यों को है।

ट्रेन जब इस्तम्बूल के पास पहुँची और 'मारमोरा' समुद्र के किनारे किनारे चलने लगी ता 'सीबीच' (समुद्र-तट) के दृश्य वहीं दिखलाई पड़े जो इंगलैंड या और किसी योरुपियन समुद्र के किनारे दिखलाई पड़ते हैं। तमाम मर्द-औरत योरुपियन ढंग के अधनंगे तैरने के कपड़ों में दिखाई पड़ते हैं।

रेलगाड़ी जैसे ही इस्तम्बूल में दाखिल होने को हुई पुलिस ने मेरा पासपोर्ट अपने कब्जे में कर लिया और जब तक मैं टर्की में रहा पुलिस की निगरानी मेरे ऊपर चौकस रही। बाद को मालूम हुआ कि यह निगरानी सिर्फ हिन्दोस्तानियों के लिये ही इतनी कड़ी है। कुछ साल पहिले मुस्तफा सगीर नाम के एक हिन्दुस्तानी ने कमाल पाशा को मारने की कोशिश की थी। उसको तो पकड़ कर फांसी पर लटका दिया और हिन्दुस्तानियों पर कड़ी निगाह रखने का पुलिस को हुकम दे दिया गया। इस साल जब मैं टर्की दुबारा गया तो यह सब खास सख्तियां दूर हो चुकी थीं, और जिस तरह की कठिनाइयां आजकल बाहरी देशों की यात्रा में झेलना पड़ता है वैसी ही यहां भी पेश आईं।

टर्की में मैंने अपना ज्यादा वक्त इस्तम्बूल स्मर्ना और अंगोरा ही में बिताया। इस्तम्बोल को पहिले कुस्तुन्तुनिया ही अधिकतर कहते थे। गलाटा पुल के पूर्वी किनारे से दूसरी पार मसजिदों की सफेद पतली पतली मीनारें और गुम्बद ही कसरत से देख पड़ते हैं। शहर अब काफी अच्छी हालत में है और जगह जगह योरुपियन ढंग के नाचघर और रेस्टोरांट बने हुए हैं। बहुत तलाश करने के बाद एक तंग गली में मुझे एक ठेठ तुर्की खाने की दुकान मिली। तुर्की खाना बहुत ही स्वादिष्ट होता है। ऐसी जगह तलाश करते समय एक साहब ने कहा, "पुराने तरीके के खाना खाने की क्यों फिक्र है। हमलोग तो योरुपियन हैं और योरुपियन खाना ही खाते हैं।"

देश बहुत तरक्की कर रहा है और सबों की हमेशा यही कोशिश रहती है कि टर्की सिर्फ तुर्कों के ही लिये रहे।

पहिले टर्की में सल्तनत के अजीब कायदे थे। सुल्तान का 'इरादा' ही सब से ऊँचा था वह जो चाहे मन मानी कर सकता था। लेकिन इसके साथ ही अगर वह जरा भी मुसलिम धर्म के खिलाफ कोई काम करता तो मुफ़्ती के फतवा देने पर गद्दी तक से उतार दिया जा सकता था। पुराने ज़माने में मुकदमों का फैसला काज़ी वगैरह ही किया करते थे। कचहरियों में किसी भी और मज़हब के आदमी की गवाही मुस्लिम गवाही से सच्ची नहीं मानी जाती थी। शरह के खिलाफ कोई भी काम करने से मौत तक की सज़ा दी जा सकती थी।
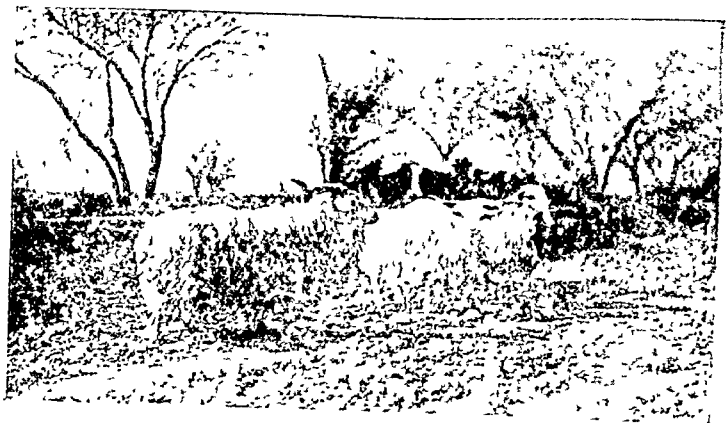
तुर्की की अंगोरा बकरियाँ। इनकी ऊन से बहुत बढ़िया कपड़े बनते हैं।

लेकिन यह सब बातें अब नहीं रही हैं मज़हब को अब सल्तनत से कोई वास्ता नहीं है। कमाल अतातुर्क ने सब पुराने मज़हबी और सामाजिक झगड़ों को दूर करके अब तुर्कों को योरुप से लोहा लेने के लिये तैयार कर दिया है। उन्होंने इस पूरे तौर से और जोर से सुधार किया है कि अब समाज में बहुत ही कम योरुपियन ढंग के सुधारों की गुञ्जाइश रह गई है।

तुर्की टोपी की जगह अब हर मर्द और औरत को हैट लगाना पड़ता है। एक अंग्रेज़ लेखक ने लिखा है कि एक बार किसी मुसलिम देश का एक एलची कमालपाशा के सामने तुर्की टोपी में पहुँच गया। कमालपाशा ने तुरन्त

उसकी टोपी उतार कर फेंक दी और उसके गाल पर एक तमाचा रसीद किया।

फ़ारसी और अर्बी अक्षरों की जगह अब सिर्फ़ रोमन अक्षरों का ही प्रयोग होता है। इसमें कोई शक नहीं है कि विदेशियों को रोमन अक्षरों की वजह से बहुत कुछ आसानी पड़ती है। मुझे भी योरुप में यूगोस्लेविया, ग्रीस, बल्गेरिया और रूम में बहुत दिक़्क़त पड़ी थी। चारों तरफ़ सड़कों के नाम और इश्तहार वग़ैरह ग्रीक या रूसी अक्षरों में ही थे। पढ़ने में बहुत कष्ट होता था लेकिन टर्की में दाख़िल होते ही यह कष्ट दूर हो गया। कमालपाशा ने बोलने के हर एक उच्चारणों के लिये कुछ ख़ासतौर के निशान निकाले हैं। इन निशानों के लगा देने से तमाम

अंगोरा शहर का एक दृश्य।

तुर्की बोली का उच्चारण रोमन अक्षरों से अच्छी तरह हो जाता है। एक बार बोलने के क़ायदे समझने के बाद पढ़ने में कोई कष्ट नहीं होता है। इसी तरह अंग्रेजी ज़बान को छोड़कर और योरुपियन भाषाओं के बोलने के नियम बने हुए हैं।

कमालपाशा ने ख़ुद, गाँव गाँव घूम कर, हाथ में खड़िया लेकर और काले तख़्ते के पास खड़े हो कर तुर्कों को रोमन अक्षर सिखाया है। इसका नतीजा यह हुआ है कि थोड़े ही वक़्त में क़रीब क़रीब सब तुर्क पढ़ने लिखने लगे हैं।

औरतों को अब आदमियों की तरह पूरी आज़ादी है। एक आदमी के बहुत सी औरतों के साथ ब्याह करने की चाल भी तोड़ दी गई है। अब एक मर्द सिर्फ़ एक ही औरत से शादी कर सकता है। जिन लोगों ने ज़्यादा औरतों से शादी की थी उन्हें एक को छोड़ कर बाक़ी औरतों को तलाक़ देकर अलग कर देना पड़ा है। अब शादी के पहिले मर्द और औरत को तन्दुरुस्ती के डाक्टरी सार्टिफिकेट पेश करने पड़ते हैं।

पुरानी इस्लामी जंत्री हटा कर अब यहाँ ईस्वी सन्, महीनों और तारीख़ों का प्रयोग होता है। और मीटर, ग्राम वग़ैरह नाप-तौल के पैमानों ने पुराने तुर्की पैमानों की जगह ले ली। सब मज़हबी छुट्टियों को उड़ाकर अब साल में इतवार के अलावा सिर्फ़ तीन ही दिन की छुट्टी होती है। मुल्क की राजधानी इस्ताम्बूल से हटाकर अंगोरा में कर दी गई है। अंगोरा को तुर्की में अंकारा कहते हैं। इस्ताम्बूल पर विदेशी हमले बहुत ही आसानी से हो सकते हैं। शायद अंगोरा को इसी लिये पसन्द किया गया है कि यह मुल्क के बीच में है और यहाँ दुश्मनों के हमले आसानी से नहीं हो सकते हैं। इसके अलावा और कोई कारण समझ में नहीं आता है।

अंगोरा दो तीन छोटे छोटे टीलों पर बसा है। गर्मी के मौसम में चारों तरफ़ सूखे मैदान और पहाड़ियाँ नज़र आती हैं। पीने का पानी भी अच्छा नहीं मिलता है। सब जगह लेमनेड-सोडा की तरह बन्द बोतलों में पीने का पानी दिया जाता है। दाम भी करीब ~) बोतल होता है। जगह जगह दुकानों पर ठंडा पीने का पानी साफ़ बरतनों में रक्खा रहता है और क़रीब)॥ पैसे में मिलता है। योरुपियन ढंग के सीमेन्ट कांक्रीट के नये नये मकानात बन रहे हैं। शहर बहुत साफ़ है और नई आलीशान रेलवे स्टेशन से रात में बिजली की रोशनी में बहुत ही ख़ूबसूरत मालूम पड़ता है।

तफ़रीह के लिये जगह जगह पर बाग़, रेस्टोरेंट, नाचघर इत्यादि बने हुये हैं। गर्मियों में खुली जगह पर सिनेमा होते हैं। कमाल पाशा के हुक्म से अब नाच घरों में मर्द औरतों

का अंगरेजी नाच भी होता है। सब गैर मर्दों, गैर औरतों के साथ नाचते हैं।

देश की तन्दुरुस्ती बढ़ाने के लिये हर जगह व्यायाम और फिजीकल ट्रेनिंग का खासा प्रबन्ध किया गया है। हर एक को निडर बनाने के लिये रूस की तरह यहां भी पेराशूट मीनारें हैं। यह करीब ४०० फीट ऊंची होती हैं। इनकी चोटी पर चढ़कर और अपनी पीठ पर पैराशूट की वजह से उन्हें कोई नुकसान नहीं पहुँचता है।

तमाम मुल्क का कारोबार अब तुर्कों ने अपने ही हाथों में ले लिया है। विदेशी कम्पनियां अब अपना अपना बोरिया बंधना समेट कर यहां से खिसक रही हैं। शुरू में तुर्कों को तिजारत में बहुत कुछ कष्ट पेश आई। यह लोग अभी तक सिर्फ लड़ाई के ही फन में होशियार थे और तिजारती हिकमतों से अलग थे। सारा व्यौपार यहूदियों, आर्मेनियों और यूनानियों के हाथ में था। लेकिन अब तुर्क भी होशियार होते जा रहे हैं और अपना व्यापार खूबी से संभाल रहे हैं।

तुर्कों के पहिले खानदानी नाम नहीं होते थे अब कमाल-पाशा के हुक्म से हरएक ने कोई एक नाम पसन्द करके अपने और नामों के आगे जोड़ दिया है। यही अब तुर्कों का खान-दानी नाम होता है। कमालपाशा ने अपना खानदानी नाम "अतातुर्क" रक्खा है। इसका मतलब है "तुर्कों का बाप"।

तुर्किस्तान में अब मुल्लाओं की कोई हस्ती नहीं है। शुरू शुरू में तो मजहब और मुल्लाओं के साथ बहुत ही बेरहमी से बरताव किया गया था, लेकिन अब जैसे जैसे समय बीतता जाता है धार्मिक बातों में दखल भी कम होता जाता है। ऐसा ही हाल रूस में भी हुआ है। वहां पहिले धर्म पर बहुत सख्तियां हुई थीं। जैसे जैसे डिक्टेटर बुड्ढे होते जाते हैं उन्हें दूसरी दुनिया का ज्यादा ख्याल आता जाता है।

कमाल अतातुर्क की जिन्दगी भी एक अजीब तरह की रही है। उनका जन्म सेलोनिका में १८८१ ईस्वी में हुआ था। सुनहरे बाल, नीली आंखें, काम में हमेशा मुस्तैद मुस्तफा कमाल को सोते जागते हमेशा टर्की ही का ख्याल रहा है। उन्होंने न कभी अपना ख्याल ही किया और न कभी अपना निजी फायदा ही सोचा। टर्की पहिले और सब कुछ बाद में। दुनियादारी इनसे छू तक न गई थी चाहे फांसी पर ही क्यों न चढ़ना पड़े हमेशा साफ़ सच्ची बात वे धड़क कहने वाले थे, ख़ाली बैठना तो जानते ही न थे। हमेशा किसी न किसी काम में लगे रहते थे। अगर मुल्की काम से छुट्टी मिली तो ऐश व आराम में भी उसी मुस्तैदी से जुट जाते थे। लेकिन इन सब बातों के होते हुए भी उन्होंने अपने मुल्क के लिये सब कुछ कर दिखलाया। दुश्मनों के गोले की बौछार में बे-परवाही से सिगरेट पीते हुये हमेशा अपने सिपाहियों के आगे रहते थे।

१९१९ में टर्की की हालत बहुत ही कमज़ोर हो गई थी और चारों तरफ दबाये जाने के कारण वह किसी भी बड़ी योरुपियन सल्तनत के हाथों में जाने को तयार था। लेकिन तीन ही बरस के अन्दर १९२२ में कमाल-पाशा ने उसकी हालत इतनी अच्छी और मज़बूत कर दी कि उसने अपनी ही दी हुई सुलह की शर्तों को अँगरेज़ों को मानने के लिये मजबूर कर दिया।

इन तीन बरसों में कमाल अतातुर्क सुल्तान को गद्दी से उतारा, ख़िलाफत को ख़त्म किया, यूनानियों को जीत कर टर्की से भगा दिया (इसी वजह से उसका नाम ग़ाज़ी पड़ा)। चानक में बर्तानिया को रोक दिया, इस्मत पाशा के द्वारा लोज़ान का सुलहनामा किया जिससे टर्की में विदेशियों के अदालती हक़ ख़त्म हो गये। टर्की की सरहदें मन्ज़ूर कराईं, और नई रिपब्लिक की बुनियाद डालकर अपने आप टर्की का पहिला प्रेसीडेन्ट हुआ।

टर्की का बच्चा बच्चा अतातुर्क को वाक़ई में अपना बाप समझता है। एक दफ़ा मेरा साथ कुछ तुर्की शिक्षार्थियों से हुआ। हर एक की जेब में कमालपाशा की तस्वीरें थीं। जिसको वह अक्सर बाहर निकाल कर चूमते थे और कहते थे, "ग़ाज़ी मुस्तफा कमालपाशा हमेशा सलामत रहें। इन्होंने हमें आज़ादी दिलवाई है और योरुपियनों के सामने सर उठाने का मौका दिया"।

कमाल अतातुर्क की मौत से शायद टर्की का बहुत कुछ नुकशान हो। लेकिन अब इस्मतपाशा टर्की के दूसरे प्रेसीडेन्ट चुने गये हैं। इनका और कमालपाशा का हमेशा साथ रहा है, इसलिये उम्मीद की जाती है कि कमालपाशा की बनाई हुई सल्तनत को बिगड़ने न देंगे। तमाम योरुप हमेशा इसी फ़िराक़ में रहा है कि टर्की को "क्रिसमस टर्की" की तरह बांट कर हड़प कर जायें। अगर कमाल ने टर्की की बागडोर अपने हाथों में न ली हो तो अब तक टर्की युरोप के पेट में समा गया होता।

तुर्कों का रंग गोरा है। अब योरुपियन ढंग इख़्तियार करने से पूरे युरोपियन मालूम होते हैं। यह सब कमाल अतातुर्क की बदौलत ही हुआ है।
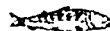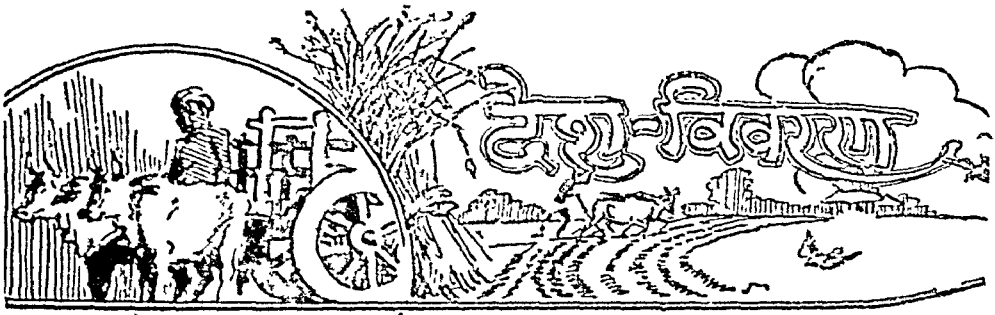
याकोहामा

सौ वर्ष पहले याकोहामा मछली मारने वाला एक छोटा गाँव था। इस समय यह एक बड़ा बन्दरगाह बन गया है। यहाँ ३० लाख टन का सालाना व्यापार होता है।

पहली सितम्बर सन् १९२३ ई० को दोपहर के समय याकोहामा बन्दरगाह में भूकम्प का प्रकोप बड़े जोरों का हुआ और क्षण मात्र में सारे नगर में हलचल मच गई। सारे नगर में आग लग गई। टोकियो नगर (जापान की राजधानी) जो याकोहामा से १८ मील की दूरी पर है उसी भूकम्प के प्रकोप से नष्ट हो गया। इस भूकम्प में बहुत से लोगों की जानें गईं और बहुत से लोग बुरी तरह घायल हुये। जापानियों के सामने राजधानी और याकोहामा के बन्दरगाह को दोबारा बनाने की समस्या आई। इस कार्य को करने के लिये एक दफ्तर खोला गया। खंडहर साफ किये गये। आज उन्हीं स्थानों पर उनसे भी बड़े नगर बन गये हैं। यह नगर बिल्कुल नये ढंग पर बनाये गये हैं।

जो यात्री याकोहामा के बन्दरगाह के अन्दर जाता है, वह जापानियों के साइंस, योग्यता, इंजीनियरिंग और कला की जीती जागती तस्वीर अपने आँखों के सामने खड़ी देखता है। वहाँ सब कुछ नया है और बन्दरगाह धीरे धीरे उन्नति कर रहा है यह पूर्वी परिवर्तन का लक्षण है।

याकोहामा बन्दरगाह में पूर्व तथा पश्चिम से आने वाले जहाज ठहरते हैं। गोरे लोगों को यहाँ आये सौ साल से भी कम समय बीता है। उसके पहले यहाँ पर कुछ मछली मारने वालों के घर बने थे। १९२३ ई० के भूकम्प के बाद जब यह आधुनिक नगर बना था तो इसका क्षेत्रफल ५०८७ वर्गमील था। १९२४ ई० में इस नगर की जन-संख्या ४,४२,६०० थी। १९३४ ई० में यह बढ़ कर ७,०३,००० हो गई। जापानी सरकार को इस नगर तथा बन्दरगाह के दोबारा बनाने में लगभग ६ साल लगे थे। इस नगर की सीमा बढ़ा दी गई है जिससे पास पड़ोस के नगर और गाँव भी इसी में शामिल हो गये हैं और अब इस नगर का क्षेत्रफल पहले से तिगुना हो गया है।

याकोहामा का बन्दरगाह बहुत प्रसिद्ध है। यहाँ पर दुनिया के बड़े बड़े नामी जहाज तथा स्टीमर आकर ठहरते हैं। यह बन्दरगाह इन्हीं जहाजों द्वारा बड़ी बड़ी राजधानियों (न्यूयार्क, लन्दन) से मिला हुआ है। यह टोकियो की खाड़ी के पश्चिम की ओर स्थित है और प्रशान्त महासागर से उरागा चैनल द्वारा मिला हुआ है। न्यूयार्क और लन्दन से आने वाले जहाज इसी चैनल होकर आते हैं। स्वच्छ ऋतु में फूजी की शानदार सुण्डाकार चोटी आकाश की ओर उठी हुई यहाँ से दिखाई देती है। यह चोटी १२,४६७ फुट ऊँची है। दक्षिण की ओर ओशीमा द्वीप के ऊपर मिहारा का ज्वालामुखी पर्वत है।

जब जहाज टोकियो की खाड़ी के समीप आते हैं तो पहले उरागा बन्दरगाह मिलता है, उसके बाद याकोसूका का समुद्री अड्डा मिलता है। यहाँ पर सैनिक जहाजों के ठहरने के लिये डाक हैं। मिकासा नामक जंगी जहाज बेड़े के झंडे के जहाज यहाँ रहते हैं। यह जहाज रूस और जापान के युद्ध काल में काम आये थे। एडमिरल टोगो जापान के नेलसन के नाम से प्रसिद्ध है और उसके झंडे के जहाज का

नाम जापानी विक्ट्री (विजय) है। विलआडम्स पहले अँग्रेज हैं जो जापान गये थे। यहीं पार्क में उनकी और उनके जापानी धर्मपत्नी की कबर हैं।

विल आडम्स विलिन्घम केन्ट में पैदा हुआ था। वह डच जहाज में जहाज चलाने का काम करता था। जिस जहाज के चलाने का काम करता था वह १६०० ई० में जापान आया। जापान वालों ने विल आडम्स की चतुरता तथा कला को देखकर उसे अपने यहाँ रख लिया और उससे वे लोग जहाज बनाना सीखने लगे।

टोकियो नगर टोकियो की खाड़ी के सिरे पर स्थित है। यहाँ पर खाड़ी उथली है। यह खाड़ी साफ करके गहरी कर दी गई है और अब ६००० टन वाले जहाज यहाँ आ सकते हैं। बड़े बड़े जहाज याकोहामा जाते हैं और उनका सामान जन्क (चीनी नाव) तथा बोटों में उतार कर टोकियो लाया जाता है।

याकोहामा हार्बर पर बड़े से बड़े जहाज आकर अपना सामान उतार तथा भर सकते हैं। यहाँ पर सूखे डाक्स हैं जहाँ पर जहाज जाकर ठहर सकते हैं और उनकी मरम्मत हो सकती है। यह बन्दरगाह पूर्व की ओर खुला हुआ है। दक्षिण पश्चिम की ओर की निचली पहाड़ियाँ इसे दक्षिणी-पश्चिमी हवाओं से बचाती हैं, किन्तु दक्षिणी पूर्वी हवाएँ गर्मी के दिनों में टोकियो की खाड़ी होकर आती हैं। इस खाड़ी की लम्बाई केवल २७ मील है। इसलिये यहाँ पर समुद्र की बड़ी ऊँची लहरें नहीं आतीं। दक्षिण की ओर से आने वाली लहरें समुद्री तट के कारण रुक जाती हैं।

बराबरी करने वाला बन्दरगाह

भीतरी समुद्री पानी (इनर वाटर) वृत्ताकार उत्तर से दक्षिण को है। इसलिये भीतरी हार्बर ११२१ एकड़ का है। यह बहुत सुरक्षित है। नया ब्रेक वाटर (अनूप) इस क्षेत्रफल में २,०४० एकड़ की और वृद्धि कर देता है।

उत्तरी और पूर्वी ब्रेक वाटर (अनूप) के बीच वाली खाड़ी साफ करके ४० फुट गहरी बना दी गई है। भीतरी हार्बर के दोनों ओर रोशनी घर (लाइट हाऊस) हैं। यहाँ के बाँधों में १७ जहाज (निम्न लिखित) रुक सकते हैं :—

एक २०,००० टन का, तीन १५,००० टन के, एक १०,००० टन का, तीन ८,००० टन के, छः ६,००० टन के, और तीन ३००० टन वाले। यहाँ पर दक्षिण पूर्व की ओर से एक घाट आगे की ओर से निकला हुआ है, जहाँ पर ३०,००० टन वाले ४ जहाज शीघ्र लंगर डाल सकते हैं। यहाँ पर कुल ६४ समुद्री जहाज ठहर सकते हैं। बाहर की ओर भी ५० या ६० जहाज ठहर सकते हैं। इस प्रकार यहाँ सौ से अधिक जहाज रुक सकते हैं।

इस नगर के १८ मील के तट में घाट और गोदाम बने हैं। अधिकांश भूमि में कारखाने हैं। यहाँ पर तरह तरह के लगभग ३००० लाइट हाऊस (प्रकाश-भवन) हैं और बहुत से शक्तिशाली जहाज खींचने वाले बोट हैं।

यहाँ की सबसे बड़ी तैरने वाली क्रेन १२० टन का बोझ उठा सकती है। ५ और दूसरी क्रेनें हैं जो ३० से १०० टन का बोझा उठा सकती हैं। याकोहामा कम्पनी का वेट डाक (भीगा डाक) ६०० फुट लम्बा और १८० फुट चौड़ा है, उसी कम्पनी के ड्राई डाक्स (सूखा डाक्स) (१) ६४० फुट लम्बा ९३½ फुट चौड़ा (२) ४०० फुट लम्बा और ६२ फुट चौड़ा, (३) ४९५ फुट लम्बा और ६०½ फुट चौड़ा है। उरागा डाक कम्पनी के दो सूखे डाक ४९७ फुट, ७० फुट और ४५७ फुट, ६५½ फुट लम्बे चौड़े हैं। असानों डाक कम्पनी के डाक ६५९-९३ और ४९९-७१ फुट के हैं।

याकोहामा से टोकियो तक का प्रदेश बहुत घना बसा है। इसलिये इस बन्दरगाह से बहुत व्यापार होता है। कोबी बन्दरगाह भी याकोहामा की भांति उन्नति पर है। यह जापान की राजधानी टोकियो का प्राकृतिक द्वार है। भूकम्प के पश्चात् इस बन्दरगाह से अधिकांश व्यापार होने लगा था। इस नगर द्वारा पश्चिमी सभ्यता जापान में घुसी है।

उरागा टोकियो खाड़ी के मुख के पश्चिमी किनारे पर है। यहां १८५० ई० में संयुक्त राष्ट्र अमरीका की कोमोडोर पेरी नामक सैनिक जहाजी बेड़ा पहले पहल आया था। उस समय जापानी सरकार और

अमरीका की सरकार के बीच संधि हुई और जिस भाग में याकोहामा स्थित है वह भाग अमरीका को ठीके पर दे दिया गया। इस प्रकार याकोहामा की नींव पड़ी। १८५९ ई० में यह नगर उन्नति की ओर बढ़ा। इसके ८ साल बाद यहां भयानक अग्निकाण्ड हुआ जिससे सब कुछ जल कर राख हो गया। १८८९ ई० में याकोहामा नगर में म्युनिसिपैल्टी स्थापित की गई। उस समय इसकी जन संख्या १,२०,००० थी। उसी साल दो ब्रेकवाटर का बनना आरम्भ हुआ। यह काम १८९६ में समाप्त हुआ। इसी बीच व्यापार की घोर उन्नति हुई और याकोहामा का भी उन्नति देने की आवश्यकता हुई। इसलिये इसके बढ़ाने का काम १८९९ में आरभ हुआ जो १९०२ में खतम हुआ। दूसरी बार इसके और बढ़ाने का काम १९०६ में आरंभ हुआ और १९१७ में समाप्त हुआ। १९१७ ई० में याकोहामा के बन्दरगाह की गणना दुनिया के बड़े बन्दरगाहों में होने लगी।

१८८१ ई० में पनामा की नहर के बनाने का कार्य आरम्भ किया गया। यह काम १९१४ ई० में समाप्त हुआ। १९१४-१८ की लड़ाई के समय याकोहामा बन्दरगाह ने बड़ी उन्नतिकी। नहर के खुल जाने से जापानी व्यापार की वृद्धि और अधिक बढ़ गई। अब जापान का व्यापार अटलान्टिक सागर वाले देशों से भी होने लगा और बहुत सा सामान पश्चिमी देशों को जाने लगा। याकोहामा इस प्रकार दुनिया के सभ्य देशों से मिल गया और सभी आधुनिक उन्नति उसमें होने लगीं।

जापान में पहली रेलवे लाइन याकोहामा और टोकियो के बीच बनाई गई। दुनिया के बड़े बड़े बैंक के दफ़्तर भी याकोहामा में खोल दिये गये। हार्बर के बढ़ाने की दस वर्षीय योजना का काम १९२१ ई० में आरम्भ हुआ। १९२३ ई० तक जापान का सारा कच्चा रेशम याकोहामा बन्दर द्वारा बाहर जाने लगा और यह कारोबार तथा व्यापार का केन्द्र बन गया।

पहली सितम्बर सन् १९२३ को दोपहर के समय भयानक भूकम्प आया। लगभग सभी घरों में इस समय भोजन बन रहा था। भूकम्प के आने से जैसे ही मकानात गिरे उनमें आग लग गई और इस प्रकार सारे नगर में भूकंप के प्रकोप के साथ ही साथ अग्नि का प्रकोप भी फैल गया। प्रचंड वायु ने भी सोने मे सुहागे का काम किया। भूकम्प से बचे हुये पानी के पम्प अग्नि के प्रकोप से फट गये। तेल की टंकियां जिनमें हजारों टन तेल भरा था फट कर बहने लगा और चारों ओर अग्नि का समुद्र सा उमड़ उठा। लोग परेशान होकर शहर से भाग कर पहाड़ी पर चले गये और वहां से जलते हुये नगर का दृश्य देखने लगे। बन्दरगाह के घाट, मकानात आदि सभी मिट कर बर्बाद हो गये। बहुत से घर तो समुद्र के भीतर समा गये। हार्बर के जहाज दौड़ कर आये और जो कुछ सहायता मनुष्यों को बचाने में कर सके उन्होंने की और लोगों को दूसरे बन्दरगाहों पर पहुँचाया।

इस बड़ी दुर्घटना के दो महीने के भीतर ही २० अक्तूबर को फिर से बनाने का काम आरम्भ होगया। पहले ब्रेक वाटर्स की मरम्मत की गई। उसके बाद, बांध, घाट और माल लादने तथा उतारने वाले स्थानों की दीवालें बनाई गईं। इसके बाद लंगर डालने वाले घाट बनाये गये।

घाट के टूटने से जो टुकड़े हो गये थे, वे इतने भारी थे कि क्रेन द्वारा भी नहीं उठाये जा सकते थे। इन टुकड़ों को बारूद द्वारा तोड़ना पड़ा था। सीमेन्ट वाले टुकड़ों को या तो चट्टान तोड़ने वाली कल से तोड़ा गया या बारूद से उन्हें चूर चूर किया गया।

घाटों को बनाते समय २७ फुट लम्बे, १७ फुट चौड़े और २९ से ३३ फुट ऊंचे ठोस सीमेन्ट के खम्भे बनाने पड़े थे। ये खम्भे असोना डाक कम्पनी के ड्राई डाक्स पर बनाए गये थे और उन डाकों को तैराकर ठीक स्थान पर इंजीनियरों द्वारा पानी में ये खम्भे डाले गये थे।

जिन घाटों पर लंगर डाले जाते हैं उनका काम सब से अन्त में आरम्भ हुआ। यह घाट लोहे के बने थे। घाट के नष्ट हो जाने से उस नष्ट लोहे के घाट को वहां पानी के अन्दर से हटाना सरल कार्य न था। लोहे के काटने का काम पनडुब्बों और बारूद द्वारा किया गया और क्रेन द्वारा वह सारा लोहा हटाकर साफ किया गया। दो साल के अन्दर बनाने का काम समाप्त हुआ और उसके

बाद बन्दरगाह को और अधिक बढ़ाने का काम आरम्भ किया गया।

यहां पर रेलवे की ओर से बड़ी सुविधायें हैं। बन्दरगाह के अन्दर का काम उत्तम श्रेणी का है। नये चुंगीघर की इमारत विचित्र है। बन्दरगाह की सफाई लगातार होने के कारण समुद्र की गहराई बढ़ती जा रही है और बड़े से बड़ा जहाज आकर ठहर सकता है।

रूई, गेहूँ, ऊन, तेल, लोबिया (बीन), खाद, लकड़ी कलें आदि वस्तुएँ बाहर से आती हैं। रेशम, रेशम का तयार कपड़ा, टीन के डिब्बों में भरी हुई मछलियाँ तथा केकड़े और दूसरे तयार सामान बाहर को भेजे जाते हैं।

निप्पन यूसेन कम्पनी जापान की सब से बड़ी और पुरानी कम्पनी है। इसके पास १५० से अधिक जहाज़ी बेड़ा है। इस कम्पनी का पताका स्वेत जमीन का है और उसमें दो लाल खड़ी पट्टियाँ हैं। इस कम्पनी के जहाज लंदन, कैलीफोर्निया और दक्षिणी अमरीका को भी आया जाया करते हैं। यासूकूनीमारू और तेरूकूनीमारू नामक दो जहाज़ बहुत बड़े हैं और योरुप की यात्रा में रहा करते हैं। ये जहाज ३७ दिन में योरुप से जापान तक की दूरी तै करते हैं।

जापान के भीतरी समुद्र में मछलियाँ बहुत पाई जाती हैं। मोजी से कोबी का फासला २४० मील है। लन्दन से जिब्राल्टर १,३१५ मील, जिब्राल्टर से मारसेल्स ६५५ मील, मारसेल्स से नेपुल्स ४५७ मील, नेपुल्स से पोर्ट सईद १,११५ मील, पोर्ट सईद से स्वेज नहर ८० मील स्वेज नहर से अदन १३१० मील अदन से कोलम्बो २,१०० मील, कोलम्बो से पेनाँग १,२८० मील, पेनाँग से सिंगापुर २९०, सिंगापुर से हाँग-काँग १,४४० मील, हाँग-काँग से शंघाई ३० मील, शंघाई से मोजी ५५० मील है। मोजी जापान का एक प्रसिद्ध भीतरी बन्दरगाह है।

भीतरी समुद्र को जापानी लोग सेटा-नैकाई कहते हैं। यह भीतरी समुद्र ५ हैं जो खाड़ियों द्वारा एक दूसरे से मिले हुये हैं। इनमें शीमोनसेकी जल-द्वारा डमरूमध्य होकर जाने का मार्ग है। ओसाका की खाड़ी में इस मार्ग का अन्त हो जाता है। दक्षिण की ओर बूंगू जलडमरूमध्य इन समुद्रों को प्रशान्त महासागर से मिलाता है। दक्षिण-पूर्व की ओर यूरा और नारूटा के जलडमरूमध्य हैं।

कोबी से नागासाकी और शंघाई का सीधा मार्ग छिछला है। इसकी गहराई ५० फुट से ५४० फुट तक है। जलडमरूमध्यों में समुद्र की लहरें बड़ी तेज रहती हैं। जापान के ये भीतरी समुद्र वहाँ के पलने (क्रैडिल) के हैं। यहां पर सुन्दर डाक और जहाजों के ठहरने के स्थान हैं। जब जापान ने पहले पहले पश्चिमी प्रभाव के कारण जहाज चलाना आरम्भ किया तो उसे इसी भाग से मल्लाह नौकर रखने पड़े थे।

कोबी का बन्दरगाह याकोहामा के पहले ही पड़ता है। यह याकोहामा नगर से बड़ा है। कोबी का बन्दरगाह प्रसिद्ध-कारबारी प्रदेश में स्थित है। यहाँ से रेशम का व्यापार अच्छा होता है।

कोबी से पूरा जलडमरूमध्य हो याकोहामा का मार्ग ३५० मील है। इस मार्ग से होकर लन्दन का १२,१६० मील है।

पी० और ओ० लाइन सर्विस के जहाज हर पन्द्रहवें दिन लन्दन से आते हैं। इस लाइन का मार्ग जापानी कम्पनी के मार्ग से कुछ अलग है। इस लाइन के जहाज जिब्राल्टर, मार्ग से, पोर्टसईद, अदन, बम्बई, कोलम्बो, पीनाँग, सिंगापुर, हाँगकाँग, शङ्घाई, मोजी, कोबी आदि बन्दरगाहों पर रुकते हैं।

ब्लू फन्नेल के जहाज लिवरपूल से चलते हैं। यह जहाज प्रतिमास आते हैं और इनका मार्ग स्वेज नहर तथा शङ्घाई होकर होता है। इनके अलावा हैम्बर्ग अमरीका, लायड ट्रीस्टिनों (इटेलियन बेड़ों उत्तरी जर्मन ललायड और मेस्सागरीज मैरीटाइम्ज के जहाज भी योरुप और जापान के बीच नित्य प्रति आते जाते रहते हैं।

दुनियाँ की दूसरी और दूसरी कम्पनियों के जहाज याकोहामा में कनाडा और सयुक्तराष्ट्र अमरीका से मिलते हैं। कैनेडियन पैसिफिक लाइनर इम्प्रेस आफ जापान की कम्पनी प्रशान्त सागर में चलती है और इसके जहाज याकोहामा से वेनकूवर को यात्रा करते हैं। इम्प्रेस आफ जापान इस कम्पनी का सब से बड़ा और तेज चलने वाला जहाज है। इम्प्रेस

आफ कनाडा इम्प्रेस आफ एशिया, इम्प्रेस आफ रशा आदि जहाज भी उत्तरी अमरीका और पूर्वी देशों के बीच चला करते हैं। इन जहाजों को सीधे मार्ग से कुल ४,२८३ मील की दूरी तै करनी पड़ती है और दस दिन का समय लगता है। हानोलूलू हो कर आने में १३ दिन का समय लगता है। इम्प्रेस आफ जापान जहाज की चाल २३ नाट है।

वेंकूवर से ये जहाज हानोलूलू ५ दिन में याकोहामा १३ दिन में, कोबे १४ दिन में, शङ्घाई १६ दिन में, हांगकांग १९ दिनमें और मनीला २१ दिन में पहुँचते हैं।

इम्प्रेस आफ एशिया और इम्प्रेस आफ रशा नामक जहाज सीधे मार्ग होकर यात्रा करते हैं और याकोहामा १० दिन में, कोबी ११ दिन में, नागासाकी १२ दिन में, शङ्घाई १४ दिन में, हांगकांग १७ दिन में और मनिला बीस दिन में पहुँचते हैं। प्रशान्त महासागर के ये जहाज अटलांटिक सागर के जहाजों का मुकाबिला करते हैं।

सैन फ्रांसिस्को और याकोहामा के बीच की यात्रा जहाजों द्वारा १४ दिन में होती है। न्यूयार्क से मनिला पनामा नहर होकर जाने वाले जहाजों के मार्ग से याकोहामा का बन्दरगाह पड़ता है। याकोहामा से यात्रा करने वाले यात्री न्यूयार्क इस मार्ग से ३९ दिन में और सैन्फ्रांसिस्को १७ दिन में पहुँच जाते हैं। ब्लूफनेल कम्पनी के जहाज जो फिलीपाइन द्वीप समूह से अमरीका जाते हैं वह याकोहामा में कोयला पानी लेते हैं। ओसाका शोसेन कावूशीकी कशा कम्पनी के जहाज जो दुनिया का चक्कर लगाते हैं। वे याकोहामा में ठहरते और कोयला पानी लेते हैं।

इसके अलावा याकोहामा से दक्षिणी अमरीका, दक्षिण अफीका और आस्ट्रेलिया को भी जहाज सदैव आया जाया करते हैं।

याकोहामा नगर अमरीका के ढांचे पर बनाया गया है। यह नगर पांच वार्डों (भागों) में बँटा है। यह नगर पहले दो भागों में बँटा था (१) कुवान्नाई हार्बर के सामने का भाग (२) कुवान्गाई। दूसरे भाग में जापानी लोगों के मकान थे। नगर का दक्षिणी भाग जो निचली पहाड़ी पर बसा था, ब्लफ कहलाता था। उत्तर-पश्चिम की ओर पर्वत पर बसा भाग नोगे कहलाता था। वर्तमान समय में सभी पब्लिक बिल्डिंगें और अफसरों के मकान कुवान्नाई में हैं। वेनटेनडोरी और हांचोडोरी की दुकानदार गलियाँ कुवांगोम है समुद्र के सामने का भाग बांध कहलाता है। इसके एक तरफ यामाशीता पार्क, होटल और क्लबघर और दूसरे सरकारी दफ़्र हैं।

नगर के और सभी दूसरे भाग जापानी हैं। थियेटर और सिनेमा घर ईजाकी-चोया थियेटर गली में हैं। इसी के समीप याकोहामा के देवी शितो का स्मारक है।

भूकम्प के समय में याकोहामा पार्क में लोग अपने मकान छोड़ छोड़ कर आकर जान बचाई थी नोगेयामा पार्क से नगर और हार्बर का अच्छा दृश्य दिखाई देता है। यह पार्क याकोहामा नगर में सब से बड़ा है और एक पहाड़ी के बगल में स्थित है। यह पार्क भूकम्प के बाद बनाया गया है। इसी के समीप अर्थक्वेक मेमोरियल हाल है जहां भूकम्प से नष्ट होने वाली यादगारें रक्खी हैं।

टोकियो की खाड़ी छिछली होने के कारण बड़े बड़े जहाज टोकियो तक नहीं जा सकते, वे याकोहामा में ही ठहरते हैं। समुद्री लहरों द्वारा स्टीमरों तथा बोटों का याकोहामा से टोकियो का जाना बहुत सुगम हो जाता है। कभी कभी यह लहरें इतनी प्रचण्ड होती हैं कि बहुत से बोट नष्ट हो जाते हैं।।

आधुनिक समय में टोकियो की जन-संख्या लगभग ५,६६३,००० है। यह दुनिया में जनसंख्या के अनुसार तीसरे नम्बर का नगर है। याकोहामा की जो कुछ उन्नति पिछले थोड़े सालों में हुई है वह जापानियों के पराक्रम का एक उदाहरण है।

अरब की आधुनिक सामाजिक तथा आर्थिक उन्नति

अरब में राजनैतिक उन्नति के साथ ही साथ आर्थिक तथा सामाजिक सुधार भी हुये हैं। धनोपार्जन तथा आने जाने वाली प्राचीन सुविधाएँ बदली जा रही हैं। इस कारण से देश के राजनैतिक विभाग तथा संगठन में भी भारी परिवर्तन हो रहा है।

वर्तमान आर्थिक परिवर्तन में खेती, मिट्टी का तेल, खनिजपदार्थ और आने जाने वाले साधन भी सम्मिलित हैं।

कृषि-विभाग खोलने का मुख्य आशय यह है कि खाने पीने के सामान की वृद्धि की जाय और अनुद्योगशील धंधों को स्फूर्ति प्रदान की जाय। इस विभाग की ओर से १९१२ ई० में पहले पहल रियादह और कुवेत के मध्य आर्तविया के रेगिस्तानी कुओं में आरम्भ किया गया। और नई वस्ती बसाई गई। कुँएँ के पानी से छुहारे के बागों और गेहूँ के खेतों की सिंचाई की गई। इस प्रयोग शाला के सफल होने पर दूसरी नई बस्तियाँ और बसाई गईं। भूमि के नीचे वाले पानी के सोतों की खोज की गई। कुल १४० कृषि-विभाग की नई बस्तियाँ थीं, जिनमें आधे से अधिक बस्तियों का काम नई खोज वाले पानी द्वारा होता था। एक लाख से अधिक अरब लोग जो पहले बिना घर द्वार के थे; अब घर बना कर रहने लगे थे। अभी हाल में हिसाब लगाया गया है कि सौदी अरब की जन-संख्या लगभग ४०,००,००० है। इसकी तिहाई जनसंख्या नई बस्तियों में बस चुकी है।

यह कृषिसम्बन्धी नीति आवश्यक होते हुये भी भली भांति सफलता को प्राप्त नहीं हो रही है। नये (भूमिके भीतर वाले पानी के) सोतों के पता लगाने का काम धीरे धीरे किया जा रहा है। जो कुएँ मौजूद हैं, उनका प्रयोग भी जितना हो सकता है उतना नहीं हो रहा है। बहुत से ऐसे कुएँ हैं, जिनका प्रयोग खानाबदोश (घर बार लेकर घूमनेवाले) बद्दू लोग करते हैं और वह किसी बसी बस्ती के काम नहीं आते हैं। २५ साल पहिले आरतविया के कुँओं की भी यही दशा थी, किन्तु आज वहां पर १२,००० बसे हुये लोगों का पालन पोषण हो रहा है।

एक आधुनिक वैज्ञानिक का कहना है कि अरब में भूमि के नीचे पानी के सोते काफ़ी हैं। यदि उन सब का प्रयोग किया जाय तो काफ़ी मात्रा में खेती हो सकती है। नई बस्तियों के सामने सब से कठिन बात यह होती है कि कुएँ से पानी खींचने में बड़ी कठिनाई पड़ती है। इसी कारण कुछ नई बस्तियां हताश सी हो रही हैं। यदि इन कुँओं के पानी निकालने का प्रयत्न मशीन वाले पम्पों द्वारा किया जाय तो पानी खींचने की कठिनाई वाला प्रश्न आसानी से हल हो सकता है। इस प्रकार के पम्पों की वृद्धि शीघ्र ही होने वाली है। यह भी आशा की जाती है कि शायद ये पम्प बद्दू लोगों को खेती की उन्नति देने के लिये उत्साहित कर सकें।

१९३० ई० के अन्त में अरब की आर्थिक स्थिति बड़ी खराब हो गई थी। हड्डी, चमड़ा, जानवर और छुहारा, खजूर आदि के मूल्य घट गये थे। मोटरकार, पेट्रोल और दूसरे विदेशी सामान जो आते थे उनका मूल्य पहले ही यात्रियों द्वारा पाये गये टैक्स से चुकाया जा चुका था। मुसलमानी दुनिया में गरीबी बढ़ने के कारण इन चीज़ों में भी कमी होने लगी थी। १९१२ ई० में वर्षा न हुई तो अरब की दशा बड़ी शोचनीय हो गई। इब्नसऊद बादशाह ने विदेशी लोगों को इस समय अरब में आने की सुविधा प्रदान कर दी। यह सुविधा पहले लोगों को नहीं थी। बादशाह ने अपने देश में पाये जाने वाले मिट्टी का तेल और दूसरे खनिज पदार्थों का पता लगाना आरम्भ किया।

जुलाई सन् १९३३ ई० में कैलीफोर्निया स्टैण्डर्ड आयल कम्पनी को सुविधा प्रदान की। यह कम्पनी अरब के पूर्वी किनारे पर लगभग १५० मील तक छान बीन कर सकती थी। इसको मिट्टी का तेल, पेट्रोल और दूसरी कार्बन सम्बन्धी वस्तुओं के पता लगाने, निकालने, बनाने और बाहर भेजने की सुविधा प्रदान की गई। यह सुविधा ६० साल के लिये प्रदान की गई है। यदि मिट्टी का तेल काफी मात्रा में पाया जावेगा और उसका व्यापार होगा तो कम्पनी को एक प्रकार का राजकीय (रायल्टी) कर देना होगा और तेल साफ करने के लिये एक कारखाना खोलना होगा जिसमें अरब सरकार के खर्च के लिये

पेट्रोल आदि तयार हो सके और अरब जनता के लिये तेल साफ हो सके।

बेहरिन प्रान्त में जेयले दुखान स्थान में तेल पाया जाता है। १९३५ ई० में ४५ मील की दूरी पर दामन नामक स्थान पर तेल निकालने की परीक्षा की गई थी। यह स्थान जुबैल बन्दरगाह से साठ मील की दूरी पर और आलखाबार से ६ मील भीतर की ओर है। पहला कुआँ बिल्कुल सूखा था। दूसरे कुएँ में २,१५२ फुट की ऊँचाई पर तेल निकला। इस भाग में १० कुएँ खोदे गये जिनकी गहराई ३,००० से ६,००० फीट तक थी। इन कुओं से अधिक मात्रा में तेल प्राप्त नहीं हुआ, फिर भी कुछ लाभ हुआ और बेहरिन के सातवें नम्बर वाले कुएँ को और अधिक गहरा किया गया। मार्च सन् १९३८ ई० में ४,७०० फुट की गहराई में मिट्टी के तेल का एक बड़ा सोता मिला। रहल-अनात ऐसे दूसरे स्थानों पर भी और दूसरे कुएँ खोदे गये। अक्टूबर सन् १९३९ ई० में इस कम्पनी के तीन कुओं में से ३६,००० गैलन रोजाना तेल निकला। यह कुएँ समुद्रतट के समीप हैं इसलिये इनमें पाइप लगाने में कम खर्च पड़ता है।

१९३६ ई० में इराक़ पेट्रोलियम कम्पनी को ६० साल के लिये आज्ञा प्रदान की गई। इस कम्पनी को लालसागर के किनारे किनारे तेल की खोज लगाने की आज्ञा दी गई। यह कम्पनी ट्रान्स जार्डन से यमन तक खोज कर सकती थी। फरासान के द्वीप की छान बीन की आज्ञा भी इन्हें दी गई थी। किन्तु मक्का और मदीना के प्रान्त छुड़ा दिये गये थे। अभी यहाँ आरम्भ हुआ है किन्तु आशा की जाती है इस प्रान्त में भी काफी मात्रा में तेल निकलेगा।

१९३४ ई० के सौदी अरेबियन माइनिंग सिंडिकेट (जो अँग्रेज़ों और अमरीका वालों के अधिकार में है) को आज्ञा दी गई कि वह तेल को छोड़ कर हेजाज के सभी खनिज पदार्थों का पता लगावें। सिंडीकट लोगों को आशा है कि वह केवल एक दहाब की प्राचीन सोने की खान से सोना प्राप्त करेंगे। यह जद्दा से २५० मील और मदीना से १५० मील उत्तर-पूर्व है। जद्दा से इस सोने की खान तक एक मोटर चलने वाली सड़क बनाई गई है। जद्दा के समीप एक घाट भी बनाया गया है जहाँ जहाज़ों को अधिक गहरा पानी ठहरने को मिलेगा। सिंडीकेट और अरब सरकार के तेल के लिये टंकियां बनाई गई हैं। खानों की जलवायु जद्दा से कहीं अच्छी है। इन खानों में अरब के मज़दूरों से काम लिया जावेगा। यह मज़दूर मशीनों के भीतर भली-भांति काम कर सकेंगे। खान खोदने का काम जनवरी १९३९ से आरम्भ किया जायगा।

अरब की सरकार को प्रभावशाली बनाने के लिये सामान आने जाने के साधन की अवश्यकता है। देश की आर्थिक उन्नति के लिये भी आने जाने के साधनों की सुगमता की बड़ी आवश्यकता है।

पिछले दस सालों में मोटर सर्विस में बड़ी उन्नति हुई है। मुख्य मुख्य नगरों के बीच मोटरें रोज़ाना आती जाती हैं। मोटर सर्विस को मरु प्रदेश के मुख्य मुख्य मार्गों में चलाने का भी प्रयत्न किया जा रहा है। जद्दा से मक्का होता हुआ रियादः का मार्ग रियादः से कुवेत तथा कातिफ का, जद्दा से मदीना हेल होता हुआ जवाफ का, हेल से नजफ को और मदीना से तेबक होता हुआ दमश्क का मार्ग प्रसिद्ध है। इन मार्गों में बहुत से मार्ग आकर मिलते हैं।

अरब में अब तक सड़कें नहीं थी, किन्तु अब मिस्र सरकार और अरब की सरकार ने मिलकर तै किया है। कि वे जद्दा, मक्का, मदीना, मूना और अराफ़ात नगरों के बीच सड़क बनावेंगी। इन सड़कों का खर्च, बिजली घरों का खर्च और मक्का में स्वच्छ किये हुये पानी पहुँचाने का खर्च लगभग २,५०,००० पौंड (३७'५०,००० रु०) होगा। इस रक़म का दो तिहाई भाग मिस्र की सरकार देगी।

जद्दा, मक्का और रियादः के बीच जो मोटर सर्विस चलती है, उसको मक्का से रियादः जाने में तीन दिन लगते हैं। यह रास्ता ऊँटों की सवारी द्वारा १ महीने में तै होता था। १९३५ ई० में नजफ और मदीना के बीच भी मोटर सर्विस चलने लगी है। जद्दा और मक्का के बीच भी बहुत सी लारियाँ चलती रहती हैं। इनमें अधिकांश धार्मिक यात्री यात्रा करने वाले होते हैं। अरब सरकार ने एक संस्था मोटर चलाने के लिये स्थापित की है और यात्रियों की रक्षा की जिम्मेदारी के लिये नियम बनाये गये हैं। मदीना को जाने वाली सवारियों में पथ-रक्षक सिपाही अवश्य जाते हैं और सरकारी तौर पर उन्हें सार्टीफिकेट भी ले लेना पड़ता है कि वे जाने योग्य हैं। कोई भी कम्पनी जिसके पास कम से कम ३० अच्छी गाड़ियां रजिस्टर्ड नहीं हैं वह अपनी गाड़ियां नहीं चला सकती।

जद्दा से धार्मिक स्थानों की यात्रा का व्यय नियमानुकूल भिन्न भिन्न हैं। १९३८ और १९३९ ई० में जद्दा से मक्का अराफात होते हुये मदीना और फिर जद्दा वापस आने का खर्च मोटर गाड़ी ३४ पौंड ५१०) रु० था। मोटर बसों द्वारा यह खर्च २४ पौंड ३६०) रु० और ऊँट की सवारी द्वारा १६ पौंड २४०) रु० पड़ता था। यात्रियों के लिये मदीना जाना बहुत जरूरी नहीं होता, इसलिये जो यात्री कम यात्रा करते हैं, उन्हें कम व्यय करना पड़ता है। इन रकमों में मोटर का किराया मक्का में काबाशरीफ़ के दर्शन कराने वाले का व्यय और दूसरे खर्च भी शामिल हैं। अरब सरकार को जो कर इस रूप में मिलता है उसका कुछ भाग रेगिस्तान में रहने वाले शेखों को भी दिया जाता है जिससे यात्री लोगों की रक्षा होती रहे।

अरब में सभी कारें बाहर से आती हैं, १९३६ ई० में हिसाब लगाया गया था कि जितनी कारें अरब में आई थीं, उनमें ८५ प्रतिशत अमरीका से, १० प्रतिशत इटली से और ५ प्रतिशत इंगलैण्ड से आई थीं। अब भी अमरीका से आने वाली गाड़ियों की अधिकता है। रेगिस्तानी देश होने के कारण यहाँ मोटर गाड़ियों की अवस्था औसत से दो या तीन साल की होती है। मोटरों द्वारा अब फौजें भी आने जाने लगी हैं। मोटर गाड़ियों ने अरब देश के संगठन को मजबूत बनाने में बड़ा भाग लिया है।

हवाई जहाजों का प्रभाव अरब के ऊपर कई भांति से पड़ा है। भारत को जो इम्पीरियल (एअरवेज़) हवाई मार्ग आता है वह परशिया की खाड़ी के दक्षिणी किनारे होकर आता है। कुवेत, बेहरिन, शरजा आदि स्थानों में वायुयान स्टेशन हैं। यह स्थान साउदी अरब के पूर्वी भाग के समीप हैं। इस प्रकार अरब, योरुप तथा भारत से हवाई मार्गों द्वारा बिलकुल मिला हुआ है। अरब में हवाई विद्या का प्रचार हो रहा है। अरब सरकार इसमें सहायता दे रही है। एक हवाई क्लब तैफ में खोला गया है। अब वायुयानों द्वारा यात्री लोग जिद्दा से मदीना आ जा सकते हैं। एक हवाई फौज भी तयार की जा रही है।

अरब में मोटर और हवाई साधन रेलवे से कहीं अधिक उपयोगी होंगे। दमिश्क के दक्षिण के हेजाज़ रेलवे का बनना १९०४ में आरम्भ हुआ था। १९०८ में यह लाइन मदीना पहुँची। पहले यह तै हुआ था कि यह मक्का तक जावेगी किन्तु वहाँ तक नहीं पहुँच सकी। रेलवे के बनाने, चलाने और उसके प्रबन्ध करने में इतना खर्च पड़ता है कि उसका पूरा होना अरब में कठिन है, इसलिये वहाँ रेलवे का बनाना बहुत कठिन है।

टेलीफोन और रेडियो के हो जाने से देश के भीतरी कार्यों में बड़ी सहूलियत हो गई है। वर्तमान समय अरब में मक्का, रियादः, मदीना, जद्दा, हेल, बुरैदा, यूक्बैर, कातिफ़, जुबैल, तावूक, काफ, बेजः, येनूब और जीज़ान आदि १५ रेडियो स्टेशन हैं। ये सभी सरकारी स्टेशन हैं और बाहरी स्थानों से सम्बन्ध नहीं रखते। सरकार इन स्टेशनों द्वारा सरहदी घटनाओं तथा आक्रमणों की खबर रखती है और घटनास्थल पर शीघ्र ही फौज पहुँचा दी जाती है। इसके सिवा जद्दा और माहदाहाव तथा जद्दा और आलहासा के बीच रेडियो सर्विस प्राइवेट कम्पनी द्वारा जारी है।

आधुनिक समय में आर्थिक परिवर्तन के साथ ही साथ अरब राजनैतिक तथा सामाजिक परिवर्तन भी हुये हैं। कृषि और आने जाने के साधनों की उन्नति होने के कारण नई सामाजिक तथा राजनैतिक संस्थाओं की भी उन्नति हुई है, जिससे अरब देश का राजनैतिक संगठन दृढ़ हो गया है।

१९३२ ई० में सौदी सरकार ने अपने देश का नाम हेजाज़-नज्द बदल कर सऊदी अरब रक्खा है। नाम के बदलने से दोनों देशों के बीच जो भेद भाव थे, उनका अन्त नहीं हुआ। नज्द के लोगों का रहन-सहन प्राचीन और सीधा सादा है। हेजाज़ के निवासी अधिक शहरी ढंग के हैं। उनका सम्बन्ध भी बाहरी दुनियाँ से अधिक रहा है। दोनों देशों के सामाजिक भेद भाव ऐसे हैं कि एक सरकार का होना बड़ा कठिन है। हेजाज़ की सरकार कुछ कानूनी व्यवस्था के अनुसार है और नज्द की सरकार निरंकुश राजा की सरकार है। सारे देश के लिये एक विधान बनाया गया है, किन्तु वह विधान अभी लागू नहीं किया गया है। इस विधान के अनुसार मुख्य शक्ति शरीयत के कानूनों में रहेगी जिनका अर्थ कुछ मुल्ला लोग लगाया करेंगे। स्वयं राजा इन कानूनों के बन्धन में रहेगा। राजा वैदेशिक, सैनिक और आर्थिक मामलों में इन मुल्लाओं से स्वतंत्र रहेगा।

कृषक नई बस्तियों के बसाने से नज्द की जातीय संस्थाएँ शक्ति हीन हो रही हैं। बस्ती के लोग पवित्र शरीयत के नियमों को बिना जातीय भेद भाव के मानते हैं। वे

एकता के भाव को दिखलाने के लिये अपने को इखवान (एक दूसरे का भाई) समझते हैं। अब रियादः की सरकार प्रान्तीय संगठनों द्वारा राज्य करती है। नज्द ६ बड़े बड़े प्रान्तों में विभाजित कर दिया गया है। ये प्रान्त भी छोटे छोटे प्रान्तों में विभाजित हैं। छोटे प्रान्तों के सरदार प्रान्तों के गवर्नरों के आधीन रहते हैं और उनको बादशाह चुनता या नामजद करता है। बादशाह अल अरीदः, कासिम, जाबल शाम्मर और अलहाशा चार बड़े प्रान्तों के गवर्नरों से सीधा सम्बन्ध रखता है। बादशाह प्रसिद्ध शेख लोगों से भी सम्बन्ध रखता है। अमीर सऊद जो १९३३ ई० में सऊद अरब का शाहजादा बनाया गया है। जब बादशाह हेजाज़ में रहता है तो वायसराय का काम करता है। यह मज़बूत केन्द्रीय सरकार का काम आने जाने के साधनों की सुगमता के कारण है। इसी कारण हर एक स्थान पर शान्ति स्थापित रखना सम्भव है। बादशाह अपने दूर से दूर रहने वाले प्रतिनिधि की सहायता इसी कारण भली भांति कर सकता है।

जब हेजाज़ को बद्दुवी लोगों ने जीता तो हेजाज़ के लिये एक सरकार बनाना आवश्यक हो गया। चूँकि देश की सामाजिक संस्थाएँ अच्छी दशा में न थीं और उनका संगठन भी बहुत खराब था। इसलिये एक मनुष्य द्वारा सारे देश पर राज्य करना बहुत कठिन हो गया। इसी कारण से नज्द और हेजाज़ के दोनों प्रान्त अलग अलग रक्खे गये और उनको केवल एक राजा होने के नाते एक किया गया। २९ अगस्त सन् १९२६ ई० को हेजाज़ के लिये एक विधान बनाया गया। जब सौदी अरब नाम रक्खा गया तो सारे देश के लिये एक विधान बनाने का प्रयत्न किया गया और नियम बनाये गये, किन्तु तब से अब तक उन नियमों पर विचार हो रहा है। जून सन् १९३८ ई० में रियादः में एक सभा हुई। जिसमें राजा प्रान्तों के अमीर उलमा और दूसरे प्रधान विचारशील मनुष्यों ने भाग लिया। इस सभा में और दूसरी बातों के साथ साथ राज्य में एक हायर काउन्सिल आफ स्टेट बनाने का विचार किया गया। यह काउन्सिल राज्य की रक्षा तथा प्रजा सम्बन्धी मामलों का विचार किया करेगी।

१९२६ के हिजाज के विधान के अनुसार मक्का में एक कानून बनाने वाली सभा (लेजिस्लेटिव काउन्सिल) जद्दा और मदीना में शासन काउन्सिल और प्रत्येक जिले में डिस्ट्रिक्ट काउन्सिल बनाई जावेगी। इस विधान के अनुसार हेजाज के प्रत्येक गाँव तथा जातीय संस्था में भी एक पंचायत बनेगी जो अपने गाँव या संस्था का प्रबन्ध करेगी और उसकी सूचना ऊपर के सरकारी अफसरों को दिया करेगी। इन पन्चायतों के शेख हुआ करेंगे। इस प्रकार शेख लोग केन्द्रीय सरकार को जवाब देने वाले होंगे और वे मक्का की सरकार के आधीन रहेंगे। इस विधान के अनुसार सारी शक्ति बादशाह के हाथों में रहेगी जो नज्द में रहा करेगा। अमीर फैसल हेजाज़ का वाइसराय होगा और वैदेशिक मन्त्री का काम करेगा। यह मक्का में रहा करेगा।

इस सरकार की खास खराबी यह है कि इसके अन्दर ट्रेन्ड (शिक्षित) सिविल अफ़सरों की कमी है। हजाज़ के बहुत से अफ़सर व्यापारी हैं और अपना व्यापार भली भांति चला रहे हैं। ख़ास ख़ास स्थानों पर नियुक्ति करने के लिये बादशाह मिस्र, सीरिया आदि मुसलमानी राज्यों से अफ़सरों को बुलाकर नियुक्त किया गया है, किन्तु ये सलाहकार बादशाह के गुलाम से हो गये हैं। क़ानून सम्बन्धी सलाह देने वाले लोग भी बाहर से बुलाये गये हैं, किन्तु वे भी नियत समय तक के लिये आते हैं। यहाँ की सरकार अपनी प्रजा को शिक्षित बनाना चाहती है, इसीलिये पिछले १० वर्षों के भीतर हजाज़ के सभी नगरों और कुछ गाँवों में शिक्षा प्रचार के लिये स्कूल खोले गये हैं। उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिये अरब से विद्यार्थी सीरिया और मिस्र भेजे जाते हैं।

नज्द और हजाज़ के देशों का भीतरी प्रबन्ध वहाँ के प्रान्त के गवर्नरों के हाथों में हैं। कुछ नगरों में म्युनिसिपेल्टियों स्थापित कर दी गई हैं।

नज्द में ६ प्रान्त (अमीर) हैं, जो छोटे छोटे भागों में विभाजित हैं।

१—नज्द या अल अरीदः का प्रान्त :—इसकी राजधानी रियादः नगर में है। इस प्रान्त में जावाल तुवैक के पठार और उसके इधर उधर का भाग शामिल है, जो रूम्मा की घाटी और दावासीर की घाटी के बीच स्थित है। यह पूर्व की ओर दहाना तक और पश्चिम की ओर हजाज़ के सरहद तक फैला हुआ है।

यह प्रान्त अल सुदाइत, वास्म, अल अरीदः, खार्ज अफ्लज, वादी दावासीर, मुहम्माल, खुरमा (तुराबा सहित) और श्रीशा आदि छोटे छोटे भागों में बँटा हुआ है। अतैबा दावासीर, काहतान, सूबाई और सुताईर आदि जातीय संस्थाएँ भी रियादः सरकार के आधीन हैं।

२—क़ासिम प्रान्त :—इसकी राजधानी अनैज़ा है। इस प्रान्त में अनेज़ा और बुरैदा नगर अररूस, मूधनिब के प्रान्त और अलरूम्मा वादी के गाँव शामिल हैं।

३—जावल शम्मार का प्रान्त :—इसकी राजधानी हेल है। इस प्रान्त में हेल, तैमा का ओसिस और खैबर शामिल हैं। मुतैर जातीय संस्था का कुछ भाग भी इसमें शामिल है।

४—अलहाशा का प्रान्त :—इसकी राजधानी होफ़फ़ है। यह प्रान्त दहाना और फारस की खाड़ी के बीच स्थित है और जुबैल शामिल है। इस प्रान्त में अजमन, अलमुरी मुनसिर, हाज़ार, हावाज़ीन, खालीद और मुतैर जातीय संस्थाएँ भी शामिल हैं।

५—असीर प्रान्त :—इसकी राजधानी आभा है। यह पहाड़ी प्रान्त है। यह प्रान्त साउदाई अरब के साथ १९३३ ई० में बनाया गया है। यह हेजाज़ और मनन के बीच स्थित है। इसमें नाजरान का ओसिस भी शामिल है।

६—असीर नीहामा का प्रान्त :—इसकी राजधानी जीनाज़ है तिहामा या तटीय प्रदेश की हुकूमत जीज़ान नगर द्वारा की जाती है।

हजाज़ में बहुत से अमीर (सूबे) हैं। कोरैयेत, अल मिलह, काफ, मिनवा, जाउफ, सकाका, तावुक कुलउला दहाबा, वेजह, उम्म लाउज, यनबू, मदीना, रबीदह, कादहिम, जिद्दा, मक्का, तैफ लीथ और कुनफीधा आदि नगर सूबे में शामिल हैं। हजाज़ की जातीय संस्थाएँ इन्हीं कुछ नगरों के आधीन हैं। अतिया और हुवैतात तावुक के आधीन हैं। हुतैम, उल्दअली, अल उला के आधीन हैं। तुकाइकात और हुवाई तात दहाबा के आधीन, बिल्ली वेजह के आधीन और हार्ब जाति का आवश्यक भाग मदीना के आधीन है।

मक्का, मदीना, जद्दा, येनबू और राबीध नगरों में म्युनिसिपैल्टियाँ स्थापित हैं।

आधुनिक उन्नति ने सौदाई अरब के देश के भविष्य की एक नई तस्वीर खींच दी है वर्तमान विशेष कलाओं के ज्ञान और गुप्त खनिज पदार्थों ने यहाँ की आर्थिक तथा सामाजिक दशा को सुधार दिया है। ये बातें इस देश के राजनैतिक संगठन में भी बहुत बड़ी सहायक होंगी।

प्लेट नदी

प्लेट नदी को स्पैनी भाषा में रिओडे ला प्लाटा कहते हैं। यह एक चौड़ी, छिछली एस्चुअरी है। इस एस्चुअरी की लम्बाई १५० मील है। यह दक्षिणी अमरीका का एक मुख्य व्यापारिक मार्ग है। यह नाम अर्जेन्टाइना और यूरुग्वे के प्रजातन्त्र राज्य के लिये भी प्रयोग किया जाता है, जहां पर गल्ला और पशु बहुत पैदा होते हैं। ब्रेजील, पेरेग्वे और बोलिविया से जो नदियाँ आकर इस एस्चुअरी में बहती हैं वे भी इसी नाम से पुकारी जाती हैं।

इस एस्चुअरी का पानी मटीला तथा शान्त रहता है। यहां पर मांस तथा अनाज के भरे हुये जहाजी बेड़े सदैव आते जाते दिखाई पड़ते हैं। यह सामान संसार में सभी भागों को भेजे जाते हैं। इन जहाजों में से अधिकांश जहाज फौजी होते हैं।

ये नदियां दुनिया के एक मुख्य उपजाऊ प्रदेश में होकर बहती हैं और लगभग १५००० वर्ग मील भूमि का पानी ले आती है। ब्यूनाजायर्स नगर एस्चुअरी के पश्चिमी तट पर स्थित है। यह नगर समुद्र से १०० मील की दूरी पर है और अर्जेन्टाइना की राजधानी है। इस नगर की जनसंख्या २२,३०,००० है और यह नगर दक्षिणी अमरीका का सब से बड़ा नगर है। मान्टी विडिओ नगर १२३ मील की दूरी पर पूर्वी तट के ऊपर बसा है और युरुग्वे की राजधानी है।

पराना और यूरुग्वे नदियों के संगम से यह एस्चुअरी बनती है। परागुवे पराना की एक बड़ी सहायक नदी है। इन नदियों और इनकी सहायक नदियों के अन्दर जहाज चल सकते हैं। ब्यूनाजायर्स नगर से लेकर ब्रेजील के बीच होते हुये बोलिविया प्रान्त के अन्डेज नगर तक जहाज चलते हैं। इनमें कुछ नदियों का पानी एमेजन नदी के पानी से मिलता है। प्लेट नदी के नदियों का ढाल अमेजन नदी के दक्षिण की ओर है। यह एमेजन की भांति लम्बा चौड़ा तो नहीं है, किन्तु व्यापारिक दृष्टि से बड़े महत्व का है। ये नदियाँ उत्तर से दक्षिण की ओर बहती हैं। इन नदियों के निचले भाग में समुद्री जहाज चल सकते हैं। इसके ऊपर नदियों में जहाज हजारों मील तक चल सकते हैं। इस भाग में स्टीमर चलते हैं।

पेरेग्वे नदी ब्रेजील के मैटो ग्रोस्सो प्रान्त से निकलती है और दक्षिण की ओर बहती हुई अर्जेन्टाइना में कोरियन्टस नगर के ऊपर पराना नदी से आ मिलती है। एसन्शन नगर पेरेग्वे देश की राजधानी है। इस नगर के समीप पेरेग्वे नदी में पिल्कोमेयो नदी आकर मिलती है। बर्मेजो नदी भी पेरेग्वे नदी में आकर गिरती है। पिल्कोमेयो तथा बर्मेजो दोनों नदियां उत्तर-पश्चिम की ओर से बहकर आती है। पेरेग्वे नदी के पश्चिमी किनारे की भूमि के बारे में बोलीविया और पेरेग्वे देशों के बीच बहुत समय तक झगड़ा चला था। पेरेग्वे नदी इसलिये प्रसिद्ध है कि वह बोलिविया और पेरेग्वे दो प्रजानंत्र राज्यों का प्रसिद्ध जल-मार्ग है।

इस भाग का जल-मार्ग इतना सुगम है, कि न्यूयार्क तथा लंदन की भांति ब्यूनाजायर्स और मांटिविडियो में भी जहाज जा सकते हैं। इन स्थानों से नदी मार्ग द्वारा स्टीमरों पर यात्री दक्षिणी अमरीका के भीतरी भाग तक पहुँच सकते हैं।

जलमार्ग और जहाज चलाने की उन्नति होने के कारण प्लेट नदी बहुत उन्नतिशील हो गई है। इसी कारण लाखों योरुपवासियों के रोटी तथा मांस का खर्च भी कम हो गया है। यहां के जहाजों में यात्रियों के यात्रा के लिये अच्छी सुविधा रहती है। उनके रहने के स्थान भी बड़े सुगम तथा सुन्दर होते हैं। माँस आदि सामान जो लादे जाते हैं, वह भी बड़ी चतुरता के साथ रक्खे जाते हैं और उनमें कुछ भी खराबी नहीं पहुँचने पाती। इन जहाजों की नदी वाले स्टीमरों से ऐसा सम्बन्ध होता है कि यात्रियों को उन पर सवार होने तथा सामान आदि लादने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं होती। संसार के सभी जहाजों के मालिक प्लेट नदी की

गहराई, सामान तथा जहाजी भाड़े को बड़े ध्यान से सोचते विचारते हैं जिसके कारण प्लेट नदी की इतनी उन्नति हुई है।

सर्व प्रथम स्पेन वाले इस एस्चुअरी में आये। १५१५ ई० में जान डी सालिस भारत का मार्ग ढूँढ़ने के लिये स्पेन से चला था। डीसालिस को यूरूग्वे में इन्डियन लोगों ने मार डाला था, जब वह वहां पर उतरा था। उसके बाद सेबेस्चियन कैबट यहां आया दिया। इसी बीच कुछ स्पेन वाले आगे बढ़े और एसन्शन नामक नगर की नींव डाली जो ब्यूनाआयर्स से ८८४ मील की दूरी पर है। स्पेन वाले जो ब्यूना-आयर्स में रहते थे वह वहां से एसन्श चले गये। एसन्श नगर अब पराग्वे प्रजातन्त्र राज्य की राजधानी है। आरम्भ काल में यह नगर रिओ डी लाप्लाटा की राजधानी था जिसमें अर्जेन्टाइना, यूरुग्वे, पेरेग्वे और बोलीविया के प्रान्त सम्मिलित थे। यहाँ पर एक
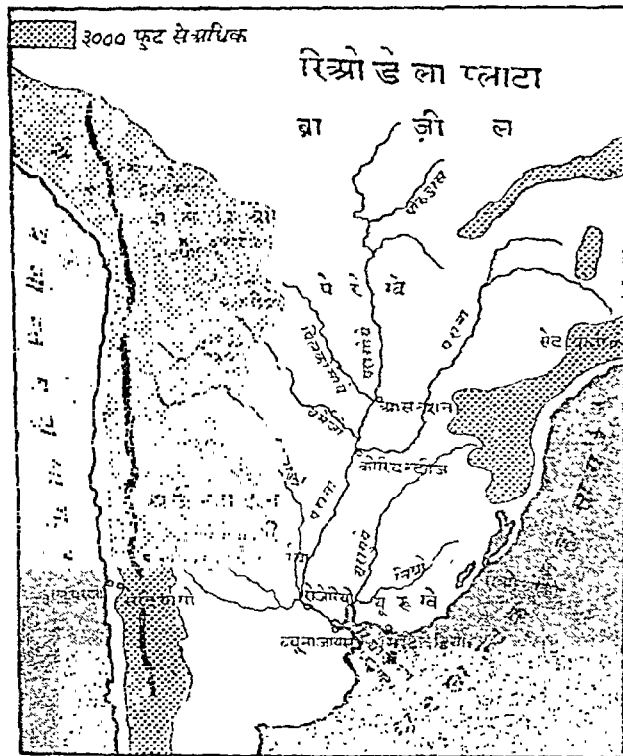
और यहां पर उतरा था। उसके बाद सेबेस्चियन कैबट यहां आया और यहां पर अपनी नई बस्ती बसाने का व्यर्थ प्रयत्न किया। २ फरवरी सन् १५३६ को पेडरो डी मेण्डोजा रिओ चूलो नदी के मुहाने पर जहाज लेकर आया और ब्यूनाआयर्स के नगर की नींव डाली। स्पेन वालों ने भोजन के लिये यहां के निवासियों पर आक्रमण किया। यहां के निवासियों ने भी उनके सवाल का जवाब लड़ाई द्वारा गवर्नर रहता था जो पीरू के वाइसराय के आधीन रहता था। उसके बाद सेन्टा फी नामक नगर बसाया गया। जान डी गैरे १५८० ई० में ब्यूनाआयर्स की ओर गया और नगर को बसाने तथा बनाने का प्रयत्न किया।

पहले स्पेन वाले नदी के इस चौड़े मुहाने को मारडूल्स या स्वच्छ पानी का समुद्र कहते थे। उसके बाद रिओ डी सालिस नाम रक्खा गया। उसके बाद

इसका नाम डी ला प्लाटा या चाँदी की नदी रक्खा गया क्योंकि इसी ओर से स्पेन वाले एंडीज़ की खानों से चाँदी लाते थे। जब स्पेन वाले यहां पहले पहल आये तो यहां के घास के मैदानों में पशु नहीं थे। पेरेग्वे से ७ गाय और एक बैल दो पुर्तगाली (सगे भाई) भाई यहां लाये थे। मेन्डोजा ने जब नगर बसाया तो वह पशुओं को ले आया था। वे घास के मैदानों में घूमते थे। १६०२ ई० से ही जानवरों तथा गाय के मांस का व्यापार होने लगा था। कुछ समय तक जानवरों की हड्डियाँ मांस से अधिक महँगी तथा लाभदायक थीं। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में गाय का माँस साफ किया तथा बनाया जाने लगा। उसके पश्चात् लादने वाले तथा भाड़े वाले जहाजों की उन्नति हुई।

प्लेट नदी वाले राज्यों में अर्जेन्टाइना सब से अधिक उपजाऊ तथा धनी है। ब्यूनाजायर्स बन्दरगाह से यहाँ का व्यापार होता है। प्लेट नदी इतनी कम गहरी है कि सदैव देख भाल रखने की जरूरत होती है। इन बन्दरगाहों पर बड़ी लागत लगाई गई है। पहले यात्री लोग बोटों पर बैठकर पानी के अन्दर खड़ी गाड़ियों पर जाते थे, अब बड़े बड़े समुद्री बन्दरगाहों की भांति यहां पर डाक बने हुये हैं।

निकोलस मिहानोविच नामक एक मल्लाह ने कुछ रुपये बचाकर एक जहाज मोल लिया था। वह इतनी शीघ्रता के साथ धनी हुआ कि उसने "अर्जेन्टाइन नेवीगेशन कम्पनी" स्थापित की। इस कंपनी के पास एक बड़ा जहाजी बेड़ा है। इस कम्पनी में कुछ जहाज ऐसे हैं जो ब्यूनाजायर्स और मांटीविडियो के बीच रात को आते जाते हैं और दूसरे क़िस्म के जहाज हैं जो दुनिया के व्यापार का काम करते हैं। कुछ जहाज देश के भीतर नदियों द्वारा मुसाफिरों और सामान को ले आते तथा ले जाते हैं। राजधानी के दक्षिण-पूर्व ला प्लाटा स्थित है, यह १८८० में ब्यूनाजायर्स प्रान्त की राजधानी तथा बन्दरगाह का काम देने के लिये बनाया गया था।

मांटीविडियो यूरुग्वे की राजधानी है। इसका इतिहास १७२६ से आरम्भ होता है। इस नगर की जनसख्या ६,६७,२०० है। ब्यूनाजायर्स से यह बहुत छोटा है। यहां विदेशियों की भी संख्या कम है। गत शताब्दी के युद्ध के कारण इटली निवासियों ने अर्जेन्टाइना में रहना अधिक अच्छा जान कर वहाँ प्लेट नदी के भाग में बस गये। कुछ समय तक इतने इटली निवासी आते रहे कि उनकी संख्या स्पेन वालों से बढ़ गई। अंग्रेज़ी धन और इटली के मज़दूरों ने वर्तमान अर्जेन्टाइना के बनाने में बहुत बड़ा भाग लिया है। यूरुग्वे का सारा तटीय प्रदेश अर्जेन्टाइना के तटीय प्रदेश से ऊँचा है। अर्जेन्टाइना का तट सपाट और बराबर है। यद्यपि मामूली तौर पर यहां १८ इञ्च ऊँची लहरें उठती हैं किन्तु हवा के जोर का पानी की गहराई पर बड़ा प्रभाव पड़ता है और इसी कारण खाड़ी के पानी की गहराई ६ फुट से १४ फुट तक होती है। प्लेट नदी में बहुधा एकाएक हवा में घट बढ़ हो जाती है, इसलिये बहुत ध्यान रखने की आवश्यकता पड़ती है। पैम्पेरोस हवायें छोटी छोटी नावों के लिये बड़ी भयानक होती हैं।

लगभग सभी जहाज चलाने वाले देश अपने जहाज प्लेट नदी में भेजते हैं। बहुत से इटली के मजदूर इटली के जहाजों पर अर्जेन्टाइना में फसल काटने आये थे और फसल के पश्चात् वापस भी चले गये थे। इन लोगों को उन लोगों से अधिक लाभ हुआ था जो अर्जेन्टाइना में बस गये थे, क्योंकि अर्जेन्टाइना के रहन सहन में खर्च बहुत पड़ता है।

यात्रियों को ले जाने वाले जहाजों में बहुधा लाग डाँट रहती है। अर्जेन्टाइना के धनी निवासी अपनी छुट्टियां योरुप में व्यतीत करते हैं। इसलिये बहुधा अच्छे अच्छे जहाज मार्गों में जाते हुये दिखाई पड़ते हैं। हैम्बर्ग साउथ अमरीकन लाइन का कैंप आर्कोना नामक जहाज का तौल २७५३१ टन है। यह जहाज सभी जहाजों से अधिक तेज जाता है। ब्रिटिश कंपनियों में रायल मेल लाइन कंपनी का नाम प्रमुख है क्योंकि इस का सम्बन्ध प्लेटनदी से लगभग ७५ साल से रहा है। दूसरी कंपनी ब्लूस्टार लाइन है जिसके सुन्दर जहाज लन्दन बन्दरगाह के डाकों में दिखाई पड़ते हैं। इन जहाजों में मांस लद कर आता है।

प्लेट नदी के निवासी अपने गल्लों की संख्या अँग्रेजी भेड़ों तथा पशुओं की नसल से बढ़ाते हैं। ठंडे गौ-मांस की माँग बढ़ जाने के कारण यह वृद्धि कम हो गई है। प्लेटनदी इंगलैण्ड से ६००० मील की दूरी पर है। आस्ट्रेलिया से इसकी दूरी लगभग आधी है। इसलिये गौमाँस, भेड़ और बकरों का मांस, सुअर का मांस और बछड़े आदि का मांस सभी अर्जेन्टाइना से आता है। ऊन और गेहूँ का व्यापार भी प्लेट नदी द्वारा खूब होता है।

ब्यूनाजायर्स, मांटीविडियो और ला प्लाटा के बन्दरगाह साल भर बराबर चलते रहते हैं। फ्रेवेन्टोस और पेसान्डू के बन्दरगाह यूरूग्वे नदी पर स्थित हैं। इन बन्दरगाहों तक समुद्री जहाज पहुँच सकते हैं। यहां से सदैव मांस लद कर बाहर भेजा जाता है। जब ब्रेजील के ऊंचे पर्वतों पर जोरों की वर्षा होती है तो यूरूग्वे नदी में बाढ़ आ जाती है। उस समय जहाज के आने जाने में कठिनाई होती है।

बाढ़ आने से नदी का मार्ग बदल जाता है। नदी के अन्दर बाढ़ वाली मिट्टी तथा दूसरे वस्तुओं के आ जाने से नदी में द्वीप बन जाते हैं। प्लेट नदी के किनारे पर बसे हुये कारमेलो नगर के बाद यूरूग्वे नदी है। यह एक मील चौड़ी है। फ्रेवेन्टास नगर के नीचे नीग्रो नदी यूरूग्वे नदी से आकर मिल जाती है, इस नदी में स्टीमर चल सकते हैं।

पेसाँडू नगर भी यूरुग्वे नदी पर बसा है। यह ब्यूनाजायर्स से १७६ मील की दूरी पर है। साल्टो नगर की दूरी ब्यूनाजायर्स से २२ मील है। यहां पर कभी कभी ४ फुट ऊँचा ज्वार आता है। ऐसी दशा में यदि जहाज चले जाते हैं और नदी का पानी आता है तो उन्हें सूखी भूमि पर महीनों आश्रय लेना पड़ता है। पराना नदी में बहुत कम ज्वार भाटा आते हैं।

निचले भाग के बन्दरगाहों में बहुधा समुद्री जहाज आया करते हैं। रोजेरियो राजधानी से २३ मील (जहाजी) की दूरी पर है। इस नगर की जनसंख्या ५ लाख है। यहां १०,००० टन वाले जहाज जा सकते हैं।

सेन्टाफी नामक नगर ब्यूनाजायर्स से ३१८ मील (जहाजी) की दूरी पर है। यहाँ पर समुद्री जहाजों के ठहरने के लिये डाक हैं। यहाँ इगू आसू नदी पराना नदी में आकर गिरती है। यह नदी अर्जेन्टाइना के मिशन की भूमि की सरहद बनाती है। इगू आसू नदी में दुनिया के प्रसिद्ध झरने हैं। यद्यपि यह झरने ब्यूनाजायर्स से १००० मील की दूरी पर हैं तो भी यात्री सुखदायक जहाजों में बैठ कर वहाँ जाते हैं और झरनों का आनन्द उठाते हैं।

परेग्वे नदी में १८०० मील तक जहाज चल सकते हैं। एसन्शन नगर ब्यूनाजायर्स से ८८३ मील (जहाजी) की दूरी पर है। एसन्शन से उत्तर की ओर नदी का नाम अपर परेग्वे हो जाता है। यहाँ कोरम्बा को स्टीमर जाते हैं। कोरुम्बा माटो ग्रासो का व्यापारिक केन्द्र है। यह ब्यूनाजायर्स से १६१८ मील (जहाजी) की दूरी पर है। कुयाबा नगर माटो ग्रासो की राजधानी है, वहाँ भी स्टीमर जा सकते हैं।

इन नदियों में चलने वाले स्टीमर बड़े तेज होते हैं। इनमें यात्रियों के आराम के लिये हर प्रकार का प्रबन्ध रहता है। इनमें गाने बजाने का कमरा; आमोद-प्रमोद के लिये कमरे, भोजन के लिये सुन्दर कमरे और दूसरे प्रथम श्रेणी के कमरे होते हैं। इसी कारण ब्यूनाजायर्स से लोग रेल द्वारा यात्रा न करके नदियों द्वारा यात्रा करते हैं।

इन नदियों में हर तरह के जहाज, स्टीमर तथा नावें चलती हैं, जिनकी लम्बाई ३४० फुट और चौड़ाई ५८ फुट तक होती है (१ नाट = ६०८० फुट) प्लेट प्रान्त में कोयला नहीं पाया जाता इसलिये यहाँ के जहाज अधिकतर पेट्रोल द्वारा चलते हैं जो अर्जेन्टाइना में मिलता है।

ब्यूनाजायर्स तथा मांटीविडियो की बड़ी बड़ी कम्पनियों के सिवा निजी पानी की बसें तथा लारियाँ भी इन नदियों में चला करती हैं। क्वीब्राको नामक सख्त लकड़ी का व्यापार भी इन नदियों द्वारा होता है। यह लकड़ी अधिकतर चाको प्रान्त से आती है।

महासमर-अंक

"भूगोल" के सत्रहवें वर्ष का विशेषांक

आगामी (सन् १९४०) के जुलाई मास में "भूगोल के सत्रहवें वर्ष के उपलक्ष में मई-जून-जुलाई मास का संयुक्त विशेषांक महासमर-अंक रहेगा। इस बृहदाङ्क में तीन भाग रहेंगे। प्रथम भाग में सन् १९१४ की बड़ी लड़ाई का वर्णन रहेगा। दूसरे भाग में १९१९ से १९३९ तक प्रमुख घटनाओं का परिचय रहेगा।

तीसरे भाग में वर्तमान युद्ध का जून (१९४०) के अंत तक का संक्षिप्त इतिहास रहेगा। यह अंक लड़ाई के कई नक्शों और चित्रों से सुसज्जित रहेगा। प्रत्येक भाग का पृथक मूल्य ॥) होगा। तीनों भागों का एक साथ पेशगी मूल्य १।) रहेगा। जो सज्जन "भूगोल" का वार्षिक मूल्य अप्रैल १९४० तक भेज देंगे उनको यह विशेषांक उनके वार्षिक चन्दे (३) रु०) में ही मिलेगा। काग़ज़ महँगा होने के कारण यह उपयोगी अङ्क परिमित संख्या में ही छपेगा। अतः ग्राहकों को शीघ्र ही वार्षिक मूल्य ३) भेजकर अपनी प्रति सुरक्षित कर लेना चाहिये।

मैनेजर, भूगोल-कार्यालय, इलाहाबाद।

"BHUGOL"

The only Geographical Monthly published in India

Purpose : "Bhugol" aims to enrich the geographical section of Hindi literature and to stimulate geographical instruction in the Hindi language.

Contents : Articles are published on varied topics of geographical interest : Current History, Astronomy, Industry and Trade, Surveys, Travel and Exploration, Fairs and Exhibitions, Plant and Animal Life. Climatic charts, a brief diary of the month, and questions and answers are regular features. Successive numbers contain serial articles on regional and topical subjects so that by preserving file of "Bhugol" any teacher of geography can accumulate invaluable reference material.

Travel Department : The Travel Department of "Bhugol" annually arranges tours which provide an excellent opportunity for geography teachers and students to visit regions of special interest in India, Burma and Ceylon. Full information will be supplied on application (with a stamped and addressed envelope).

Use in Schools : The use of "Bhugol" in connection with the geography instruction in high schools, normal schools and middle schools, is specially sanctioned by the Educational Departments of the United Provinces, the Central Provinces, Berar, the Punjab, Bihar and Orissa, Gwalior, Jaipur, Kotah and Jodhpur.

Remittances : Make all remittances, cheque, money order or British Postal Order, payable to the manager, **"Bhugol"**.

Rates for Advertisements :

Ordinary full one page	...	Rs. 10/-
3rd page of the cover	...	„ 12/-
4th page of the cover	...	„ 15/-

Write to the Manager,

"BHUGOL",

ALLAHABAD.

Published by the Editor (Pt. Ram Narain Misra, B. A.) and Printed by K. P. Misra at the Bhugol Press; 243, Jamuna Road, Allahabad.